मुद्राराक्षसम्

भूमिका

१. पूर्व कथा

प्राचीन काल मे मगध राज्य एक बडा भारी जनस्थान था। इस देश की राजधानी पाटलिपुत्र अथवा पुष्पपुर थी। यहाँ जरासध आदि अनेक पुरुवशी राजा हो गये है। कालान्तर मे नन्दवश ने पौरवो को निकाल कर वहाँ अपनी जयपताका फहराई। नन्दवश का प्रताप सारे भारतवर्ष मे व्याप्त हो गया। इसी वश मे महानन्द का जन्म हुआ। वह बडा वीर और प्रतापी था।

महानन्द के दो मत्री थे। मुख्य मत्री का नाम शकटार और दूसरे का राक्षस था। शकटार शूद्र था और राक्षस ब्राह्मण। दोनो बडे प्रतिभा-सपन्न थे। किन्तु शकटार उद्धत था। इसी से उससे अप्रसन्न होकर महानन्द ने उसे कैदी बना दिया।

शकटार यद्यपि कारागार से छुट गया तथापि अपनी प्रतिष्ठा की हानि और परिवार का नाश उसके मन मे सदा खटकता रहा। प्रतिहिसा की अग्नि सदा उसके हृदय मे धधकती रही। एक दिन वह बाहर भ्रमण करने गया। मार्ग मे उसने एक काले ब्राह्मण को देखा कि वह कुशो को खन खन कर उनकी जडो मे मट्ठा डाल रहा है। शकटार ने उस ब्राह्मण से ऐसा करने का कारण पूछा। उस ब्राह्मण ने अपना परिचय देते हुए कहा कि मै ब्राह्मण हूँ। मेरा नाम विष्णुगुप्त चाणक्य है। मै किसी कार्य से बाहर जा रहा था। ये कुश मेरे पैर मे गड गये जिससे मेरा काम रुक गया। अत मै इन कुशो को उखाड कर इनकी जड मे मट्ठा दे रहा हूँ ताकि इनका सर्वनाश हो जाय।

यह बात सुनकर शकटार ने सोचा कि अगर यह ब्राह्मण किसी प्रकार महानन्द से रुष्ट हो जाय तो उसका सर्वनाश कर सकता है। वह अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। महानन्द के यहाँ एक श्राद्ध था। शकटार ने चाणक्य को श्राद्ध मे निमत्रित

किया और स्वयं कहीं चला गया। क्योकि वह जानता था कि महानन्द काले ब्राह्मण को देखकर नाराज हो जायगा और उसे श्राद्ध के आसन से हटा देगा और ऐसा ही हुआ भी। जब राजा ने श्राद्धभवन मे एक अनिमत्रित काले ब्राह्मण को देखा तो क्रोध से आगबबूला हो गया और उसको वहाँ से निकाल देने की आज्ञा दे दी। इस अपमान से रुष्ट होकर चाणक्य ने नन्द वंश का नाश करने की प्रतिज्ञा की और राजभवन से चल दिया।

महानन्द के नव पुत्र थे। उनमे एक चन्द्रगुप्त भी था जो एक शूद्रा से पैदा हुआ था। उस शूद्रा का नाम मुरा था। इसी से चन्द्रगुप्त को मौर्य और वृषल भी कहते है। चन्द्रगुप्त बडा बुद्धिमान् था। एक तो यह शूद्रा-पुत्र था दूसरे यह प्रतिभाशाली भी था। इसी कारण उसके आठो भाई उससे भीतर ही भीतर जलते थे और महानन्द भी पुत्रो का पक्ष लेकर चन्द्रगुप्त से कुढता था। ज्येष्ठ होने के कारण चन्द्रगुप्त अपने को राज्य का अधिकारी समझता था और इसी से राज-परिवार से उसका पूरा वैमनस्य था। चाणक्य और शकटार ने निश्चय किया कि राज्य का लोभ देकर चन्द्रगुप्त को अपनी ओर मिला ले और नन्दो का नाश करके इसी को राजा बनावे।

जब यह बात निश्चय हो गई तो चाणक्य अपनी कुटी मे जाकर रहने लगा और शकटार महानन्द की एक दासी विचक्षणा और चन्द्रगुप्त को मिलाकर अपनी ओर फोडने लग गया। इधर चाणक्य ने कुछ ऐसे विषैले पकवान तैयार किये जो परीक्षा करने मे न पकडे जायँ पर उनके खाते ही प्राणान्त हो जाय। विचक्षणा ने किसी प्रकार महानन्द को पुत्रो समेत यह विष भरा पकवान खिला दिया जिससे वे सबके सब एक साथ परलोकगामी हो गये। शकटार तो कुछ दिनो बाद मर गया और चाणक्य चन्द्रगुप्त को राजा बनाने का उपाय सोचने लगा। वह पर्वतक नामक एक राजा को आधा राज देने का लालच दिलाकर पटने पर चढाई करने के लिए ले आया। पर्वतक का पुत्र मलयकेतु और भाई वैरोचक था। पर्वतक अपनी सहायता के लिये पाँच और म्लेच्छ राजाओ को साथ ले आया।

इधर राक्षस मत्री राजा के मरने से दु खी होकर उसके भाई सर्वार्थसिद्धि को सिहसान पर बैठाकर राजकाज चलाने लगा। सर्वार्थसिद्धि कुछ दिनो बाद वन मे चला गया और वहाँ चाणक्य ने उसे मरवा डाला। यह देखकर राक्षस मत्री बहुत दु खी हुआ और पर्वतक को मिलाने का प्रयत्न करने लगा। उसको

मिलाकर उसने चन्द्रगुप्त को मारना चाहा। चाणक्य को यह बात मालूम हो गई। उसने एक विषकन्या भेजी। कामी पर्वतक उससे ससर्ग करते ही मर गया और उसका पुत्र मलयकेतु भी भयवश अपने देश को चला गया। अब राक्षस चन्द्रगुप्त का अनिष्ट करने मे पूर्णरूप से उद्यत हो गया। इसके पीछे की घटना का इस नाटक मे वर्णन है। नाटक का आरम्भ तब होता है जब मलयकेतु और राक्षस के आक्रमण का शोर मच रहा था।

२. कथावस्तु का मूलाधार

विष्णुपुराण, भागवत और अन्य पुराणो मे यह कथा मिलती है। इनमे यही कहा गया है कि कौटिल्य (चाणक्य) द्वारा नन्द का वध किया गया और उसके स्थान पर चन्द्रगुप्त राजा बनाया गया। यह भी लिखा मिलता है कि कामन्दक चाणक्य के एक शिष्य ने अभिचार के द्वारा नन्द का नाश किया। दशरूपक मे जो दशवी शताब्दी ई० मे लिखा गया है, यह कहा गया है कि मुद्राराक्षस का कथानक मूलरूप से बृहत्कथा पर आधारित है। बृहत्कथा मे लिखा है—

तत्र बृहत्कथामूल मुद्राराक्षसम्
चाणक्यनाम्ना तेनाथ शकटारगृहे रहः।
कृत्या विधाय सहसा सपुत्रो निहितो नृपः
योगानन्दे यश. शेषे पूर्वनन्दसुतस्ततः।
चन्द्रगुप्तः कृतो राज्ये चाणक्येन महौजसा ।।

यह ग्रथ (बृहत्कथा) अब उपलब्ध नही है। कहा जाता है कि कथासरित्सागर उसका अनुवाद है परन्तु कथासरित्सागर मे भी इतना बृहत् वर्णन नही है। इसमे तो मत्री राक्षस की भी चर्चा नही है। अत यह कहा जा सकता है कि नाटक की घटनाएँ कवि के दिमाग की सूझ है।

३. संक्षिप्त कथावस्तु

मुद्राराक्षस मे सात अङ्क है। नाटक की कथावस्तु बडी सफलता तथा बुद्धिमानी से सगठित की गई है। चाणक्य इसका नायक है और उसका विपक्षी राक्षस प्रतिनायक है। इसमे जो सघर्ष वर्णन है वह विचित्र ही है। राक्षस तो हत्या का बदला लेने का उपाय करता है परन्तु चाणक्य अपनी सारी बुद्धि इसमे लगाता है कि वह किस प्रकार राक्षस को चन्द्रगुप्त का समर्थक बनावे। चाणक्य हृदय से

चाहता है कि यदि राक्षस चन्द्रगुप्त का मत्री बन जाय तो बडा उत्तम हो। चाणक्य की सारी कार्यवाही इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये है।

प्रथम अङ्क

नान्दी के बाद सूत्रधार आकर सूचना देता है कि सामत बटेश्वर दत्त के पौत्र और महाराज पृथु के पुत्र विशाखदत्त कवि का बनाया हुआ नाटक अभिनीत किया जायगा। ऐसा कहकर वह नाटक मे भाग लेने के लिए अपनी पत्नी को बुलाने के लिये अपने घर जाता है। वहाँ उसे पता चलता है कि चन्द्रग्रहण के उपलक्ष्य मे उसकी स्त्री ने ब्राह्मण-भोजन का आयोजन किया है। इतने मे नेपथ्य मे शब्द होता है कि मेरे रहते चन्द्र को कौन बल से ग्रस सकता है। यह शब्द चाणक्य का है। प्रस्तावना के बाद नट और नटी चले जाते है। और अपनी खुली हुई शिखा को फटकारता हुआ चाणक्य रगमच पर प्रवेश करता है। वह राक्षस मत्री को धन्यवाद देता है कि नन्दवशियो के समाप्त हो जाने पर भी वह उनका भक्त बना है। इसी से वह राक्षस को अपनी ओर मिलाना चाहता है। लोगो मे यह किवदन्ती फैला दी गई है कि पर्वतक को राक्षस ने मरवाया है। भागुरायण के द्वारा मलयकेतु को यह समझा दिया गया है कि तुम्हारे पिता को चाणक्य ने मरवाया है अत वह भाग जाता है। चाणक्य ने विष्णुशर्मा नामक ब्राह्मण को जैन सन्यासी बनाकर कुसुमपुर मे भेज दिया है जो राक्षस का विश्वासपात्र बनकर उसके सारे कार्यो का भेद ले रहा है।

इसके बाद यम का चित्र हाथ मे लिये योगी के वेश मे चाणक्य का गुप्तचर निपुणक प्रवेश करता है। वह चाणक्य को बताता है कि चन्द्रगुप्त के विरोधी तथा राक्षस के सहायक तीन व्यक्ति है, वे है—जीवसिद्धि क्षपणक, अमात्य राक्षस का मित्र शकटदास और तीसरा सेठ चन्दनदास जो राक्षस के परिवार को अपने यहाँ शरण दे रहा है। इसके प्रमाणस्वरूप वह राक्षस की अँगूठी चाणक्य को देता है जिसे पाकर चाणक्य प्रसन्न होता है।

इसी बीच चाणक्य को यह सूचना मिलती है कि चन्द्रगुप्त पर्वतक का श्राद्ध करना चाहता है और ब्राह्मणो को दक्षिणा देना चाहता है। यह सूचना पाकर चाणक्य तीन ब्राह्मणो को दान लेने के लिये नियुक्त करता है।

इसके बाद चाणक्य चन्दनदास को बुलवाता है और उससे कहता है कि राक्षस

के परिवार को तुमने अपने यहाँ टिकाया है उसे हमे सौप दो। चन्दनदास कहता है कि राक्षस का परिवार हमारे यहाँ नही है और अगर होता भी तो मै न सौपता। यह उत्तर पाकर चाणक्य बडा अप्रसन्न होता है और उसे कैद करने की आज्ञा देता है और यह भी आदेश देता है कि चन्दनदाम की सम्पत्ति जब्त कर ली जाय।

इतने मे नेपथ्य के कोलाहल से सूचना मिलती है कि शकटदास को वधस्थान से सिद्धार्थक भगा ले गया है। चाणक्य यह सुन कर बडा प्रसन्न होता है। क्योकि उसी के कहने से सिद्धार्थक ऐसा करता है ताकि वह शकटदास को राक्षस के पास ले जाकर यह सिद्ध करे कि उसी ने शकटदास को बचाया है और राक्षस का विश्वासपात्र बनकर उसका भेद लेता रहे।

द्वितीय अङ्क

सर्वप्रथम इस अङ्क मे एक सॅपेरा रगमच पर आता है। इसका नाम जीर्णविष है। यह राक्षस का गुप्तचर विराधगुप्त है। यह राक्षस से मिलना चाहता है।

इसके वाद अपने भवन मे चारपाई पर आसीन चिन्ताग्रस्त राक्षस दिखाई पडता है। वह अनेक बातो को मोच रहा है। इमी बीच मलयकेतु का कञ्चुकी जाजलि राक्षस के पास आता है। वह कहता है कि कुमार मलयकेतु ने अपने आभूषण आपके पहनने के लिये भेजा है, आप उसे पहन ले। राक्षस आभूषणो को स्वीकार करता है। जाजलि चला जाता है।

इसके बाद सॅपेरा आकर अपना परिचय देकर कुसुमपुर का सारा समाचार राक्षस को वताता है। उसके द्वारा यह पता चलता है कि चन्द्रगुप्त को मारने के लिये जो विषकन्या भेजी गई थी उससे पर्वतक मारा गया और चन्द्रगुप्त के धोखे मे बेचारा वैरोचक मारा गया। दारुवर्मा भी मारा गया। फिर राक्षस पूछता है कि वैद्य अभयदत्त का क्या हुआ। विराधगुप्त कहता है उसने ओषधि मे विष तो मिला दिया पर चाणक्य को कुछ सदेह हुआ। इससे उसने वह ओषधि चन्द्रगुप्त को नही पीने दी, प्रत्युत वही ओषधि पिलाकर अभयदत्त को मार डाला। विराधगुप्त ने यह भी बताया कि प्रमोदक और बीभत्सादिक आपके गुप्तचर सभी मारे गये। वह चन्दनदास का पकडा जाना और शकटदास का वध-स्थान मे भेजा जाना तथा जीवसिद्धि क्षपणक का देश से निकाला जाना सब कुछ बताता है।

इसी बीच शकटदास को लेकर सिद्धार्थक आता है। शकटदास बताता है कि

सिद्धार्थक:को ही कृपा से मेरे प्राण बचे। अब सिद्धार्थक राक्षस का विश्वासपात्र बन कर उसके पास रहने लगता है। राक्षस विराधगुप्त को इसी वेश मे कुसुमपुर भेजता है और आदेश देता है कि तुम किसी प्रकार चाणक्य और चन्द्रगुप्त मे फूट पैदा कर दो। तदनन्तर तीन आभूषण खरीदे जाते है और राक्षस करभक को कुछ आदेश देकर कुसुमपुर भेजता है।

तृतीय अङ्क

कचुकी आकर घोषणा करता है कि महाराज चन्द्रगुप्त ने कौमुदी-महोत्सव पर कुसुमपुर को सजाने की आज्ञा दी है। चन्द्रगुप्त अपने महल की छत पर से नगर की शोभा देखना चाहता है पर नगर मे कोई चहलपहल नही। वह चाणक्य को बुलवाता है और चाणक्य से कौमुदी-महोत्सव न मनाने का कारण पूछता है। इसी प्रश्न को लेकर पूर्व निश्चय के अनुसार दोनो मे बनावटी झगडा हो जाता है। राक्षस का गुप्तचर स्तनकलश उसको सच्चा झगडा समझता है। चन्द्रगुप्त भी अपने कञ्चुकी वैहीनरि से कहता है कि जाकर यह घोषणा कर दो कि आज से चन्द्रगुप्त अपना राजकाज स्वय देखेगा। कञ्चुकी भी नही समझ पाता कि यह झगडा बनावटी है।

चतुर्थ अङ्क

घबडाया हुआ करभक आता है। वह मत्री राक्षस से मिलना चाहता है। द्वारपाल कहता है कि "स्वामी, राक्षस रात को ज्यादा जगे थे अत उनका सर दर्द कर रहा है। कुछ समय तक रुको" मौका पाकर द्वारपाल करभक के आने की सूचना राक्षस को देता है। राक्षस करभक को भीतर बुलाता है। उसी समय राक्षस की सिर की पीडा का हाल सुनकर कञ्चुकी, भागुरायण तथा मलयकेतु भी आ जाते है। यह भागुरायण चाणक्य का गुप्तचर है। इसी से रास्ते मे वह कुछ ऐसी बाते करता है जिससे राक्षस और मलयकेतु मे फूट हो जाय।

इस प्रकार भागुरायण और मलयकेतु जब राक्षस के समीप पहुँचते है तो वे छिपकर करभक और राक्षस की बाते सुनते है। करभक राक्षस से कौमुदी-महोत्सव के अवसर पर जो कलह चाणक्य और चन्द्रगुप्त मे हुआ उसका वर्णन करता है। राक्षस को इस बात पर विश्वास नही होता परन्तु शकटदास उसे विश्वास दिलाता है कि यह बात हो सकती है और बहुत सम्भव है कि चाणक्य वन मे तपस्या करने चला जाय।

इन सब बातो का गलत अर्थ लगाकर भागुरायण मलयकेतु के मन मे राक्षस के प्रति सन्देह उत्पन्न करने का प्रयत्न करता है और कहता है कि राक्षस चन्द्रगुप्त से प्रेम करता है। वह इसी प्रतीक्षा मे है कि चाणक्य यदि चला जायगा तो चन्द्रगुप्त का अमात्य बनकर राक्षस सारा कार्य करेगा।

इसके बाद मलयकेतु राक्षस के सामने आता है। वह राक्षस से सिरदर्द का हाल पूछता है। राक्षस कहता है कि "जब तक आप को महाराज पद से सुशोभित नही कर लेता हूँ तब तक चैन कहाँ।" मलयकेतु पूछता है कि अब युद्ध करने मे क्या देर है। इस पर राक्षस कहता है कि इस समय चन्द्रगुप्त और चाणक्य मे अनबन हो गई है और चन्द्रगुप्त सचिव-सकट मे है। अत इस समय चढाई करना ठीक है। इतना सुनकर मलयकेतु भागुरायण के साथ चला जाता है।

उसी समय जीवसिद्धि क्षपणक प्रवेश करता है। राक्षस उससे चढाई करने का शुभ मुहूर्त्त पूछता है। क्षपणक मुहूर्त्त बताता है। पर राक्षस कहता है कि और भी ज्योतिषियो से पूछ लो, क्योकि जो तिथि तुम बता रहे हो वह चढाई करने के लिये ठीक नही है। इस पर क्षपणक रुष्ट होकर चला जाता है और राक्षस के यह पूछने पर कि क्या आप अप्रसन्न हो गये क्षपणक उत्तर देता है मै अप्रसन्न नही हूँ। बल्कि आप से भगवान् ही अप्रसन्न है (न कुपितो युष्माक भदन्त। भगवान् कृतान्त)। इतने मे सूर्यास्त का समय हो जाता है।

पञ्चम अङ्क

सिद्धार्थक जो चाणक्य का गुप्तचर है और राक्षस की सेवा मे रह रहा है मुहर की हुई गहने की पेटी व पत्र हाथ मे लेकर प्रवेश करता है। क्षपणक से उसकी मुलाकात हो जाती है। सिद्धार्थक क्षपणक से पूछता है कि आज बाहर जाने का कैसा मुहूर्त्त है। क्षपणक कहता है कि मुहूर्त्त तो आगे पीछे तुम बिना भागुरायण की मुहर लिये मलयकेतु के कटक से बाहर नही जा सकते। सिद्धार्थक के यह पूछने पर कि यह नियम कब से हुआ वह बताता है कि जब से कुसुमपुर के पास आये है तब से यह नियम हुआ है। इस पर सिद्धार्थक कहता है कि हम तो राक्षस के आदमी है हमे कौन रोक सकता है। फिर वह क्षपणक से काम सिद्ध होने का आशीर्वाद चाहता है। क्षपणक भी आशीर्वाद देकर कहता है कि मै भी पटना जाने के लिये भागुरायण की मुहर लेने जाता हूँ। इसके बाद दोनो चले जाते है। यह प्रवेशक की कथा है।

जिस समय क्षपणक भागुरायण के पास पहुँचता है उसी समय मलयकेतु भी भागुरायण से मिलने के लिये वहाँ पहुँचता है। वह छिपकर भागुरायण और क्षपणक की बात सुनता है। क्षपणक कहता है कि राक्षस ने मेरे द्वारा विषकन्या भेजकर पर्वतेश्वर की हत्या कराई। फिर भागुरायण कहता है कि मै तुमको मुहर तो देता हूँ पर यह बात तुम स्वय कुमार मलयकेतु से कह दो। मलयकेतु यह सब सुनकर बडा क्रोध करता है परन्तु भागुरायण यह स्मरण करके कि आर्य चाणक्य की आज्ञा है "कि राक्षस के प्राणो की सर्वथा रक्षा की जाय" वह मलयकेतु को समझाता है कि जब तक आपको राज्य न मिल जाय आप शान्त रहे।

इसी बीच सिद्धार्थक पकडकर लाया जाता है। उसके पास राक्षस के मुहर का पत्र और वे आभूषण जो मलयकेतु ने राक्षस को भेजा था निकलते है। सिद्धार्थक मलयकेतु से कहता है कि राक्षस ने मुझे इस पत्र के साथ और पेटी के साथ चन्द्रगुप्त के पास भेजा है। मलयकेतु का सदेह अब राक्षस के प्रति बढ जाता है। वह समझता है कि राक्षस वास्तव मे चन्द्रगुप्त से मिला है।

इसके बाद मलयकेतु राक्षस को बुलवाता है। राक्षस मलयकेतु के पास उन आभूषणो मे से एक को पहन कर जाता है जिन्हे उसने खरीदा था। मलयकेतु के पास जब राक्षस पहुंचता है तो शिष्टाचार के बाद वह राक्षस से पूछता है कि युद्ध की योजना आपने क्या की है। राक्षस उसको अपनी योजना बताता है। उसकी योजना सुनकर मलयकेतु को यह सन्देह हो जाता है कि जो मेरे मारने के लिये नियुक्त है वही हमारे रक्षक बनाये गये है। ऐसा सन्देह उसे इसलिये होता है कि सिद्धार्थक ने (जो चाणक्य का गुप्तचर था) उससे यह बताया था कि राक्षस ने चन्द्रगुप्त को गुप्त आदेश दिया है कि आप अमुक अमुक राजाओ को खूब पुरस्कार दे।

फिर मलयकेतु उस पत्र के बारे मे पूछता है जिस पर राक्षस की मुहर पडी थी और उन आभूषणो के विषय मे पूछता है जो राक्षस पहने था। राक्षस के शरीर पर जो आभूषण था वह पर्वतेश्वर का था। राक्षस बहुत सफाई देता है कि मैने उसे खरीदा था पर मलयकेतु को विश्वास नही पडता। फिर मलयकेतु जीवसिद्धि की बात बताता है कि वह कहता है कि विषकन्या का प्रयोग करके तुमने मेरे पिता को मरवाया है। यह सुनकर राक्षस स्तब्ध रह जाता है और

सोचता है कि क्या यह भी चाणक्य का गुप्तचर था। वह शोक प्रकट करके कहता है कि शत्रु ने हमारे हृदय पर भी अधिकार कर लिया। (कथ जीवसिद्धिरपि चाणक्यप्रणिधि हन्त हृदयमपि मे रिपुभि स्वीकृतम्) इसके बाद मलयकेतु शिखरसेन से (जो चाणक्य का ही गुप्तचर था) उन पाँच राजाओ को मरवा डालता है जो वास्तव मे उसकी सहायता करने वाले थे। इसके बाद मलयकेतु राक्षस से कहता है कि जाओ सब तरह से चन्द्रगुप्त का आश्रय लो। (गच्छ समाश्रीयता सर्वात्मना चन्द्रगुप्त) बेचारा राक्षस चित्रवर्मा आदि का भी वध सुनता है। सुनकर दु खी होता है और अपने मित्र चन्दनदास को छुडाने की बात सोचता है।

षष्ठ अङ्क

कपडा व गहना पहने हुए सिद्धार्थक आता है। उसका मित्र सुसिद्धार्थक भी दिखाई पडता है। दोनो आपस मे बात करते हैं। सिद्धार्थक उसको बताता है कि मलयकेतु ने राक्षस को अलग कर दिया है और चित्रवर्मादिक पाँचो राजाओ को मरवा डाला है और चाणक्य के गुप्तचर भद्रभट, पुरुषदत्त, हिगुरात, बलगुप्त आदि ने मलयकेतु को कैद कर लिया है। राक्षस मलयकेतु के शिविर से निकलकर अपने मित्र चन्दनदास की रक्षा के लिये कुसुमपुर आया है। उसके साथ चाणक्य का गुप्तचर उदुम्बर लगा हुआ है। सिद्धार्थक यह भी बताता है कि चन्दनदास को वध-स्थान मे ले जाकर उसे मार डालने की आज्ञा चाणक्य ने दी है। यह प्रवेशक की कथा समाप्त हुई।

हाथ मे फाँसी लिये हुए एक व्यक्ति जो चाणक्य का गुप्तचर है राक्षस के सामने आकर फाँसी लगाने का अभिनय करता है। राक्षस एक स्थान पर बैठा हुआ अपनी तथा नन्द वश की सारी बातो को सोचता है। इतने मे उसकी निगाह उस व्यक्ति के ऊपर पडती है। वह जाकर उससे पूछता है कि तुम्हे क्या कष्ट है जो फाँसी लगा रहे हो। वह बताता है कि सेठ जिष्णुदास हमारे मित्र है और जिष्णुदास के मित्र चन्दनदास है। राक्षस के परिवार को चन्दनदास ने अपने यहाँ छिपाया और चन्द्रगुप्त के माँगने पर भी उनको नही दिया। अत चन्द्रगुप्त ने चन्दनदास को फाँसी देने की आज्ञा दी है। इसलिये मित्र-विनाश के शोक मे जिष्णुदास आग मे जलकर मरना चाहते है और उनके मरने के पूर्व ही मै अपना प्राण दे देना चाहता हूँ क्योकि मित्र का विनाश मै नही सह सकता। यह सुनकर

राक्षस कहता है कि तुम जाकर जिष्णुदास को मरने से रोको। मैं भी चन्दनदास के प्राण बचाने का उपाय करूँगा। यह समझ कर कि शस्त्र-बल से चन्दनदास को बचाना कठिन है, राक्षस अपना शरीर बेचकर उसे बचाना चाहता है—राक्षस का कथन है (औदासीन्य न युक्त प्रियसुहृदि गते मत्कृते चातिघोरा व्यापत्ति ज्ञातमस्य स्वतनुमहमिमा निष्क्रय कल्पयामि)।

सप्तम अङ्क

एक चाण्डाल यह कहता हुआ कि "हटो, दूर हो। जो अपना प्राण, धन व कुल बचाना चाहते हो तो दूर रहो। राजा का विरोध मत करो" आता है। कधे पर सूली रक्खे, मृत्यु का कपडा पहने चन्दनदास, उसकी स्त्री और पुत्र तथा दूसरा चाडाल आते है। वधस्थान मे पहुँच कर चन्दनदास अपनी स्त्री को वापस जाने के लिये आदेश देता है। चन्दनदास अपने लडके से अन्तिम बार मिलता है। उसकी स्त्री चिल्लाती है "लोगो, बचाओ रे बचाओ–(आर्या परित्रायध्वम् परित्रायध्वम्)। इतने मे वेग से राक्षस आता है और जल्लादो से कहता है कि चन्दनदास को मत मारो और दुष्ट चाणक्य से कह दो कि अमात्य राक्षस पकडा गया। वह वध्यशाला मे है।

यह समाचार पाकर चाणक्य आता है। वह राक्षस के पैर छूकर प्रणाम करता है। राक्षस कहता है कि मै चाण्डालो से छू गया हूँ, इससे मुझे मत छुओ। इस पर चाणक्य उसे बताता है कि ये चाण्डाल नही है। एक तो आपका सेवक सिद्धार्थक है, दूसरा राजपुरुष है जिसका नाम सुसिद्धार्थक है और इन्ही दोनो के द्वारा विश्वास उत्पन्न करके उस दिन शकटदास को धोखा देकर मैंने वह पत्र लिखवाया था। इतने मे नौकरो के साथ चन्द्रगुप्त भी वहाँ आता है और राक्षस को प्रणाम करता है। वह उसे विजयी होने का आशीर्वाद देता है। फिर चाणक्य राक्षस से कहता है कि अगर चन्दनदास का प्राण बचाना चाहते हो तो शस्त्र ग्रहण करो। लाचार होकर राक्षस खड्ग ग्रहण करता है। (भो विष्णुगुप्त उपानय खड्गम्। नम सर्वकार्यप्रतिपत्तिहेतवे सुहृत्स्नेहाय। का गति, एष सज्जोऽस्मि) इतने मे कैदी की दशा मे मलयकेतु लाया जाता है। राक्षस के कहने पर वह मुक्त कर दिया जाता है और अपने पिता के राज्य पर प्रतिष्ठित किया जाता है। सेठ चन्दनदास सब नगरो का जगत् सेठ बनाया जाता है। हाथी घोडो को छोडकर

सभी बँधे हुए को बन्धनमुक्त किया जाता है। राक्षस अमात्य बनकर आशीर्वाद देता है। चाणक्य भी पूर्णप्रतिज्ञ होकर अपनी शिखा बाँध लेता है।

४. मुद्राराक्षस की विशेषता

सस्कृत के नाटक साहित्य मे "मुद्राराक्षस" का नाम नही भूला जा सकता। सस्कृत मे बडे-बडे नाटककार हो गये है, जैसे भास, कालिदास और शूद्रक आदि। परन्तु इनके नाटको की विशेषताएँ मुद्राराक्षस को प्रभावित नही कर पायी। मुद्राराक्षस मे जो विशेषताएँ है वे अपनी है जो अन्य नाटको मे नही है।

सर्वप्रथम विशेषता यह है कि यद्यपि इसका लिखने वाला नाट्यशास्त्र का ज्ञाता था फिर भी नाट्यशास्त्र के नियमो का अक्षरश अनुसरण नही करता, बल्कि उस पर अपनी व्यक्तिगत नाट्यप्रतिभा की छाप छोड जाता है। नाट्य-शास्त्र की पुरानी प्रथा के अनुसार नाटक का नायक ख्यात वश मे उत्पन्न कोई राजा होता था पर इस नाटक का नायक भारतीय इतिहास मे सर्वप्रथम सर्वप्रसिद्ध सम्राट् का निर्माता और उसके वश के साम्राज्य का स्थापित करने वाला है। पुरानी प्रणाली के अनुसार नाटको मे रामायण, महाभारत या पुराणो से कथा लेकर नाटक की रचना की जाती थी पर इस नाटक का इतिवृत्त मौर्य साम्राज्य की स्थापना और प्राण-प्रतिष्ठा पर निर्भर है।

इसकी दूसरी विशेषता इतिवृत्त (plot) की वस्तुरचना है। इस नाटक का लिखने वाला एक ऐसा कुशल नाट्य-कलाकार है जिसने नाना प्रकार की घटनाओ से सम्बद्ध एक ऐसी इतिवृत्त-रचना कर दिखाई है जिसमे प्रत्येक घटना मुख्य वृत्त से निकलती और उसी मे अन्त होती हुई दिखाई देती है। इस नाटक के इतिवृत्त-सस्थान की बराबरी सम्भवत किसी भी नाटक का इतिवृत्त नही कर सकता। और नाटको मे इतिवृत्त तो चरित से स्वतत्र भी अपना अस्तित्व रखता है। उदाहरणार्थ "उत्तररामचरित" का इतिवृत्त भवभूति द्वारा उसमे चित्रित राम के चरित से अलग भी अवस्थित है, परन्तु मुद्राराक्षस का इतिवृत्त ऐसा है जो उसके प्रमुख चरित की प्रेरणा से जन्म लेता तथा जीवित-जागृत खडा दिखायी देता है।

तीसरी विशेषता यह है कि यद्यपि इस नाटक मे सर्वत्र युद्ध की चर्चा है और युद्ध के प्रति उत्साह है फिर भी कही युद्ध नही, कही रक्तपात नही और न कही

ऐसा अवसर ही आया है कि युद्ध की लिप्सा को शान्त किया जा सके। अत इस नाटक का वीररस सग्राम मे नही, युद्ध स्थल मे नही बल्कि बडे-बडे सग्रामो को जन्म देने वाली राजनीतिज्ञो की प्रतिभा मे है। नायक चाणक्य और प्रति-नायक राक्षस की लडाई शस्त्रबल की नही बल्कि बुद्धिबल की है।

चरित्रचित्रण की विशदता, असकीर्णता, महाप्राणता इस नाटक की चौथी विशेषता है। मुद्राराक्षस का चरित्रचित्रण आदर्श और यथार्थ की सीमाओ का सम्मेलन है। इस नाटक के पात्र साधारण होते हुए भी विशिष्ट है, आदर्श होते हुए भी यथार्थ है। नाटकीय होते हुए भी वास्तविक है।

इसकी पाँचवी विशेषता यह है कि यह हर प्रकार से नाटक है। इसमे ऐसा नही प्रतीत होता कि कवि कुछ अपनी ओर से कह रहा है जिसे हम सुनने को रुक जायें। नाटककार ने "मुद्राराक्षस" के कथोपकथन के नाटकीय औचित्य की वृद्धि के लिये काव्य-कल्पना का बलिदान तक कर दिया है। और कवियो ने अपने नाटक को काव्यमय बना दिया है, पर इस नाटक मे यह बात नही पाई जाती।

पाँचवी विशेषता इस नाटक की यह है कि इसमे कोई नायिका नही है। इसके पहले का या बाद का कोई ऐसा नाटक नही है जिसमे नायिका न हो। परन्तु इस नाटक मे न तो कोई नायिका है न कोई प्रेम की वार्ता है। इसमे स्त्री पात्र भी नहीं है। जो स्त्री पात्र है भी उनका कोई महत्त्व नही है।

यद्यपि अन्तिम अङ्क मे चन्दनदास की स्त्री रगमच पर आती है, पर वह भी नीरस, कठोर, कर्त्तव्यपालनोन्मुखी तथा स्वार्थत्यागिनी के रूप मे प्रदर्शित है। उसके पास भी करुण रस नही फटकने पाया, तब शृगार की कहाँ पूछ होती है। नाटककार ने लिख ही दिया है (कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च) अर्थात् राजनीतिज्ञ के लिये स्त्रियाँ सुख-दुःख दोनो मे भार सी प्रतीत होती है। इस प्रकार के राजनीति-धुरधर नाटककार के लिखे गये राजनीति विषयक नाटक मे माधुर्य या सौन्दर्य का खोजना व्यर्थ है।

छठवी विशेषता यह है कि इस नाटक का मुख्य विषय राजनीतिक है। इसमे न तो प्रम का वर्णन है और न वियोग का। इसकी सभी घटनाये, सभी पात्र हमको एक लक्ष्य की ओर ले जाते हुए प्रतीत होते है। वह लक्ष्य है कि किसी भी

प्रकार राक्षस चन्द्रगुप्त का मत्री बनना स्वीकार कर ले। और अन्त मे चाणक्य की नीति सफल होती है। राक्षस ऐसी परिस्थिति मे पड जाता है कि उसे चन्द्रगुप्त का मत्रित्व स्वीकार ही करना पडता है।

एक विशेषता इसमे यह भी है कि भास और कालिदास के नाटको मे अक का विभाजन दृश्यो मे नही किया गया है। उनमे मुख्य पात्र अङ्क के आरम्भ से लेकर अत तक रगमच पर रहते है। पर मुद्राराक्षस मे अङ्क का दृश्यो मे विभाजन स्पष्ट प्रतीत होता है। उदाहरणार्थ तृतीय अङ्क मे अनेक दृश्य-परिवर्तनो का स्पष्ट आभास मिलता है।

५. मुद्राराक्षस का मूल्यांकन

यह नाटक सात अङ्को मे है और नाटचकला के सभी लक्षण इसमे पूर्ण रूप से वर्तमान है। इस नाटक मे वीररस प्रधान है। यद्यपि आश्चर्य की मात्रा भी प्रचुर रूप से वर्तमान है पर कर्मवीरत्व या उद्योग ही का प्राधान्य सारे नाटक मे परिलक्षित होता है। प्रथम अङ्क मे चाणक्य का मौर्यराज्य की स्थिरता के लिये राक्षस को चन्द्रगुप्त का मत्री बनाने की दृढ इच्छा प्रकट करना बीज है। राक्षस के मुहर की प्राप्ति और शकटदास से पत्र लिखाकर मुहर करना तथा उसे कपट रूप से मलयकेतु को दिखाना विन्दु है। इसी विन्दु तथा कार्य से नाटक का नामकरण हुआ। विराधगुप्त का राक्षस से उसके प्रयत्नो का निष्फल होने का सदेह करना पताका है। चाणक्य और चन्द्रगुप्त के मिथ्या कलह की बात राक्षस के पास लाना प्रकरी है। राक्षस का मत्रीपद ग्रहण करना कार्य है।

नाटक की कथावस्तु का निर्वाह भी विवेचनीय है। इसका प्रासगिक कथा-वस्तु सर्वदा गौण तथा आधिकारिक कथावस्तु की सौदर्यवृद्धि मे सहायक रहा। इसके दृश्य और घटनाक्रम ऐसी बुद्धिमानी और कुशलता से सगठित किये गये है कि वे कही उखडे-से या असम्बद्ध नही मालूम पडते। प्रथम अङ्क मे चाणक्य का आकर कुछ पहले का इतिहास कहना और नाटक का उद्देश्य बतलाना तथा उसी के साथ ही राक्षस की मुद्रा की प्राप्ति से उसे फँसाने का प्रबध करना, दिखलाकर दर्शको को नाटक की घटना का पूरा ज्ञान करा दिया जाता है। इसके बाद दूसरे अङ्क मे राक्षस के उपायो का निष्फल होना, चौथे मे चाणक्य और चन्द्रगुप्त का बनावटी झगडा दिखाना उद्देश्य पूर्ति का यत्न है। चौथे और पॉचवे अङ्क मे

मलयकेतु का राक्षस के प्रति सन्देह होने से लेकर अन्त मे उन दोनो का सत्यकलह दिखलाना प्राप्त्याशा है। छठे मे राक्षस का वधस्थान को जाना नियताप्ति और सातवे मे मन्त्रित्व ग्रहण करना फलागम है।

इस प्रकार विवेचना करने पर स्पष्ट होता है कि मुद्राराक्षस रूपक का प्रथम भेद नाटक है और नाट्यकला के अनुसार नाटक के सभी लक्षणो से युक्त है।

मुद्राराक्षस की वाक्यरचना-शैली चाहे गद्य की हो अथवा पद्य की न तो हमारे कानो मे संगति सी लगती है न हमारी आँखो मे चित्र सी झलकती है प्रत्युत ऐसी प्रतीत होती है मानो हमारी ही शैली हो और भिन्न भिन्न भावावेशो मे हमारे ही व्यक्तित्व की अभिव्यजना हो। इस नाटक का नाटककार अपने नाट्य जगत् के छोटे से छोटे और बडे से बडे व्यक्ति को समान स्नेहभाव से देखता है और निष्पक्ष भाव से मानता है। इस नाटक का नायक जितना महान् है प्रतिनायक उससे कम नही है। नायक की अन्तिम विजय मे यदि नाटककार अति प्रसन्न होता है तो प्रतिनायक की हार से वह कम दुखित नही होता।

मुद्राराक्षस समग्र सस्कृत साहित्य मे अपने ढग का एक ही नाटक है। यह रसप्रधान न होकर घटनाप्रधान नाटक है। राजनीति की कुटिल चालो और कूटनीति के दाव-पेचो का इसमे बडा ही सजीव और सफल चित्रण हुआ है। अपने पात्रो का चरित्र-चित्रण करने मे विशाखदत्त ने विशेष कौशल दिखाया है। वे नाटक के पात्रो को इस तुलनात्मक ढग से चित्रित करते है कि उनकी विशेषताएँ बिलकुल स्पष्ट हो जाती है। चाणक्य और राक्षस का तुलनात्मक चित्रण पूर्ण सफल हुआ है। चाणक्य यदि स्थिरचित्त, प्रतिक्षण जागरूक, कठोर, शाठ्य-नीति-निपुण और कभी न झुकने वाला है तो राक्षस अस्थिरचित्त, विस्मरणशील, उदार, सज्जन और अन्त मे झुक जाने वाला है।

६. मुद्राराक्षस मे सामाजिक दशा का ज्ञान

विलसन महोदय ने लिखा है—

"Mudra Rakshasam represents a curious state of public morals in which fraud and assassination are the simple means by which inconvenient obligations are aquitted, and trouble-some friends or open enemies removed"

किन्तु आज यदि विलसन साहेब जीते होते तो वे देखते कि सारे ससार मे

राजनीति प्रत्येक काल मे राजनीति ही है, आजकल भी बीमारो की जहाजो पर और ग्रामीण क्षेत्रो मे रात को सोते हुए व्यक्तियो पर बम छोडे जाते है। शत्रुपक्ष के पीने का जल विषाक्त कर दिया जाता है। अणुबम तथा टैको का प्रयोग बेखटके किया जाता है। फिर भी इतना तो विलसन महोदय कहते है—

A redeeming feature of Hindu treachery is devoted fidelity to an employer Although some of the personages cannot help expressing a disgust for the duty they have to discharge, they never intimate any relaxation of purpose, although treated with indignity or blows

नाटककार के समय मे वर्ण-भेद उतना ही प्रबल था जितना मनु के काल मे। विशाखदत्त शूद्रो से घृणा करते थे। शूद्र का कोई आदर नही था। यहाँ तक कि राजा चन्द्रगुप्त शूद्र होने के नाते हमेशा "वृषल" शब्द से सम्बोधित किया जाता है। चाणक्य हमेशा उसे वृषल ही कहता है। (तत् स्थाने खल्वस्य वृषल देवश्चन्द्रगुप्त, अङ्क ३।) वह किसी दूसरे नाम से चन्द्रगुप्त को नही सम्बोधित करता। वृषल चन्द्रगुप्त का नाम नही है जैसा कि कुछ कोषकारो ने लिखा है। कुछ भी हो विशाखदत्त वृषल शब्द व्यक्तिवाचक नही मानने। वह हमेशा शूद्र अर्थ मे ही इस शब्द का प्रयोग करते है।

इस नाटक मे वैश्यो का उल्लेख नही है। श्रेष्ठिन् शब्द बडे-बडे साहूकारो और धनियो के लिये प्रयुक्त हुआ है वह चाहे जिस भी वर्ण के हो। मृच्छकटिक मे श्रेष्ठी चारुदत्त ब्राह्मण है। यदि यह मान लिया जाय कि इस नाटक का श्रेष्ठी वैश्य है तो यह मानना पडेगा कि उनका पतन हो चुका था। वे प्राकृत भाषा का प्रयोग करते है न कि सस्कृत का, जो द्विजातियो को बोलना चाहिये (पाठ्य तु सस्कृत नृणामनीचानाम् कृतात्मनाम्—दशरूपक)। सभवत बहुत काल से व्यापार से सबधित होने के कारण वे कृतात्मा न रहकर अकृतात्मा हो गये।

क्षत्रियो मे अधिक परिवर्तन नही होता। प्राचीन काल के क्षत्रियो जैसे वे अब मृगया और युद्ध के प्रेमी है।

विशाखदत्त कायस्थो को ज्यादा सम्मान समाज मे देते है। कायस्थ मुशी तथा हिसाब-किताब रखने वाले का काम अब भी करते है। चाणक्य स्वय शकटदास को कायस्थ शकटदास कहता है न कि वृषल शकटदास। चन्दनदास का एक मित्र श्रेष्ठी चन्दनदास को राक्षस के सामने केवल चन्दनदास कहता है और कोई आदर-

सूचक शब्द उसके साथ नही लगाता। परन्तु शकटदास के विषय मे बात करते समय वह "आर्य शकटदास" कहता है। (आर्य शकटदासो वधस्थानमानायित.। श्रेष्ठिचन्दनदासस्य वध)।

कायस्थ शकटदास सस्कृत भाषा का प्रयोग करता है जो केवल द्विजातियो (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) की ही भाषा है। परन्तु कायस्थ केवल लिखा पढी करते थे। उनका विशेष महत्त्व नही था। चाणक्य उनको "लघ्वी मात्रा" वाला कहता है।

ब्राह्मणो का इस काल मे वह आदर नही था जो कालिदास के काल मे था। राक्षस ब्राह्मण था तो भी मलयकेतु उसे एक बार मार डालना चाहता था किन्तु (रक्षितव्या राक्षसस्य प्राणा) के कारण उसका वध नही हुआ। इस नाटक मे अनेक उदारहण ऐसे है जो यह बताते है कि प्रजा और राजा का, मित्र-मित्र का, पति-पत्नी का कितना सुन्दर सबध था। समाज मे कर्त्तव्य-पालन का आदर्श था।

७. मुद्राराक्षस राजनीतिशास्त्र का रूपान्तर है

सक्रिय राजनीनि विषय पर लिखा गया यह नाटक अपने ढग का अनूठा ही है। इसमे राजनीति एक कठिन खेल के रूप मे चित्रित की गई है, इसे एक सर्प के रूप मे ही कहा गया है। द्वितीय अङ्क मे प्रारम्भ मे ही आहितुण्डिक नामक सँपेरे का वेष धारण किया हुआ विराधगुप्त कहता है—

'ननु खेलत्येवार्योऽहिना ।'

राक्षस तथा चाणक्य दोनो के लिए अपने लक्ष्य का जितना महत्त्व है, उतना साधन का नही। राजनीति मे इसी प्रकार की स्थिति अपेक्षित भी होती है। यहाँ कर्तव्य-अकर्तव्य, पुण्य-पाप आदि का कोई स्थान नही है, अपितु किस प्रकार लक्ष्यसिद्धि हो—इस योजना का और उसके साफल्य का स्थान अत्यधिक महत्त्व का है।

८. पात्रों का चरित्रचित्रण

कवि विशाखदत्त ने अपने पात्रो का चरित्रचित्रण बडी अच्छी तरह से किया है। इस नाटक के प्रधान पात्र कुटिल राजनीति धुरधर चाणक्य का उपनाम कौटिल्य है। इसका प्रतिद्वन्द्वी नन्दवश का मत्री राक्षस है और चन्द्रगुप्त, मलय-

केतु, चन्दनदास, शकटदास और भागुरायण उल्लेखनीय है। चाणक्य और चन्द्रगुप्त ऐतिहासिक पुरुष है। राक्षस और मलयकेतु की ऐतिहासिकता सभवतः हमारे ऐतिह्यविद् यदि अभी नही सिद्ध कर पाये तो भविष्य मे कर ही दिखायेगे। अन्य पात्र कल्पित है।

सस्कृत के नाटच साहित्य मे जितने भी नायक-चरित चित्रित है उनमे एक भी ऐसा नही जो कि मुद्राराक्षस के चाणक्य के समान प्रभावोत्पादक और शक्तिशाली हो। चाणक्य ही इस नाटक के घटनाचक्र का एकमात्र नियन्ता है। परन्तु वह जो कुछ करता है अपने लिये नही, अपने स्वार्थभाव से नही, अपितु चन्द्रगुप्त के लिए करता है। यह वीतराग निरीह और लोकोत्तर व्यक्ति है। यद्यपि वह इतने बडे साम्राज्य का महामत्री है, फिर भी वह अपने सुख की परवाह नही करता। सादा जीवन बिताने वाला, झोपडी मे रहने वाला, विरागपूर्ण जीवन बिताने वाला व्यक्ति चाणक्य के समान दूसरा न मिलेगा। चन्द्रगुप्त का कञ्चुकी स्वयम् कहता है।

अहो राजाधिराजमत्रिणो गृहविभूतिः। कुतः—
उपलशकलमेतद्भेदक गोमयानाम्
वटुभिरुपहृताना वर्हिषा स्तोम एषः।
शरणमपि समिद्भिः शुष्यमाणाभिराभि-
विनमितपटलान्तम् दृश्यते जीर्णकुड्यम्॥ (३-१५)
निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कारविषयः॥ (२-१६)

वह बुद्धिमान् है। उसे अपनी बुद्धि पर विश्वास है। वह कहता है—

नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमाबुद्धिस्तु मागान्मम॥ (१ २६)

वह अपने पौरुष और पुरुषार्थ मे अटूट और अदम्य विश्वास रखता है। वह दैव मे विश्वास नही करता है। जब वह यह सुनता है कि नन्दवश का नाश दैव ने किया। (नन्दकुलविद्वेषिणा दैवेन) तो वह रुष्ट होकर कहता है—(दैवमविद्वास प्रमाणयन्ति)। वह मूर्त्तिमान् आत्मविश्वास है।

उसमे पक्षपात नाम का भी नही है। वह अपने शत्रु के गुणो की प्रशसा करने मे नही चूकता। वह गुणग्राही है। वह राक्षस की प्रशसा करता हुआ कहता है—

(अहो राक्षसस्य नन्दवशे निरतिशयो भक्तिगुणः। साधु अमात्य राक्षस साधु, साधु श्रोत्रिय, साधु मत्रिबृहस्पते)

उसमे क्रोध, हठ की मात्रा और उग्रता पूर्ण रूप से वर्तमान है—चाणक्य निरन्तर आत्म-निरीक्षण करता और लोकहित के लिये आत्मशुद्धि से भरा रहता है। वह अपने शिष्य से कहता है—

"वत्स कार्याभिनियोग एव अस्मानाकुलयति" इत्यादि।

राक्षस

राक्षस चाणक्य का प्रतिपक्ष है। मुद्राराक्षस का नाटककार राक्षस के जिस व्यक्तित्व का चित्रण करता है उसकी अपनी विशेषताएँ हैं। यदि राक्षस के ऐसा प्रतिनायक मुद्राराक्षस मे न चित्रित होता तो इस नाटक मे कोई आनन्द न मिलता। मुद्राराक्षस के निर्वहण मे राक्षस की जो मुद्रा उसके निग्रह का कारण बनती है वही, उपक्रम मे उसकी प्रबल शक्ति की सूचना देती है। चाणक्य के लिये राक्षस एक महान् शक्ति है।

राक्षस ब्राह्मण-कुलावतस, नन्दो का प्रधानमत्री है। उसमे स्वामिभक्ति कूटकूट कर भरी है। वह चन्द्रगुप्त को राजा नही बनने देना चाहता। "जब तक नन्द वश का एक भी व्यक्ति उसे मिलेगा वह उसी को राजा बनायेगा" ऐसी प्रतिज्ञा राक्षस की है। चाणक्य स्वय उसकी स्वामिभक्ति देखकर कहता है—(अहो राक्षसस्य नन्दवशे निरतिशया भक्ति । स खलु कस्मिश्चिदपि जीवति नन्दान्वयावयवे वृषलस्य साचिव्य ग्राहयितु स शक्यते।) राक्षस की वास्तविक महत्ता का जितना पता चाणक्य को है उतना सभवत उसको (राक्षस) को भी नही है। राक्षस की राजनीतिक महत्त्वाकाक्षा उसी प्रकार नि स्वार्थ है जिस प्रकार चाणक्य की राजनीतिक महत्त्वाकाक्षा। चाणक्य को पता है कि राक्षस का व्यक्तित्व साम्राज्य की कैसी शक्ति है और इस शक्ति को अपने पक्ष मे कर लेने से क्या हो सकता है। चाणक्य की यह चिन्ता (अत एवास्माक त्वत्सग्रहे यत्न कथमसौ वृषलस्य साचिव्यग्रहणेन सानुग्रह स्यादिति) राक्षस के व्यक्तित्व की महत्ता की छाप है।

चाणक्य यदि राक्षस से बुद्धि मे बडा दिखाई देता है तो राक्षस पराक्रम मे चढा-वढा है। राक्षस मे सैन्यसग्रह-शक्ति और स्वय सैन्य-सचालन-शक्ति है। इसी से चाणक्य राक्षस को सग्राम मे जीतने की बात न सोचकर दावपेच मे उसे फँसाकर वश मे करना चाहता है।

राक्षस भावुक व सरलहृदय है। वह मनुष्यो का जल्दी विश्वास कर लेता है। वह जीवसिद्धि और सिद्धार्थक को अपना विश्वासपात्र और प्रिय सुहृत् समझता है। परन्तु चाणक्य केवल अपने पर ही विश्वास करता है। राक्षस के हृदय की भावुकता ही उसके पराजय का कारण होती है।

राक्षस शकुन व अपशकुन का मानने वाला और दैव मे विश्वास करने वाला है। जब चतुर्थ अङ्क मे द्वारपाल करभक के आने की सूचना देता है उस समय राक्षस की बाई आँख फडकती है। उस पर वह कहता है (दुरात्मा चाणक्य-वटुर्जयति अभिसधातु शक्य स्यादमात्य इति वागीश्वरी वामाक्षिस्पन्दनेन प्रस्तावगता प्रतिपादयति)। फिर प्रियवदक के द्वारा यह जानकर कि जीवसिद्धि क्षपणक आया है तो राक्षस कहता है—(स्वगतमनिमित्त सूचयित्वा कथ प्रथममेव क्षपणकदर्शन)। फिर कहता है "अबीभत्सदर्शन कृत्वा प्रवेशय" (अङ्क ४)। जब मलयकेतु को राक्षस के ऊपर सदेह हो जाता है और वह नकली पत्र तथा गहनो की पेटी खोलकर राक्षस से पूछता है कि यह किसने किया तो राक्षस कहता है—दैवेन। देखिए अङ्क ५

मलयकेतु —इदमिदानी किम्।

राक्षस —(सवाष्पम्) विधेर्विलसितमिदम्।

मलयकेतु —केन तर्हि व्यापादितस्तात।

राक्षस.—दैवमत्र प्रष्टव्यम्—

चाणक्य मार्ग की कठिनाइयो को कुचलता हुआ उन्नतमस्तक होकर चलता है पर राक्षस दैव को दोष देकर मन को शान्त कर लेता है। वह कहता है—

दैवं हि नन्दकुलशत्रुरसौ न विप्रः। (६-७)
दैवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा पूर्वं विपर्यस्यति॥ (६-८)

राक्षस अपने मित्र का स्नेही है। मित्र के प्राणो की रक्षा वह अपने को बन्धन मे डालकर भी करता है। जब उसे यह पता चलता है कि चन्दनदास को फाँसी होने वाली है तो वह आत्मसमर्पण करने की बात सोचता है। सोचता ही नही अपितु आत्मसमर्पण कर भी देता है। वह वधस्थान पर यकायक पहुँच कर वधिको से कहता है वध्यमाला मुझको पहना दो।

तस्येयं मम मृत्युलोकपदवी वध्यस्रगाबध्यताम्॥ (७-४)

चन्दनदास के यह कहने पर कि अमात्य क्या कर रहे हो, वह उत्तर देता है —

त्वदीयसुचरितैकदेशस्यानुकरणम् ।

वह चाणक्य से डरता नही । वधस्थान मे आकर वह वधिको से कहता है—(अयमर्थो निवेद्यताम् तावद् दुरात्मने चाणक्याय) । वह चाणक्य से दया नही चाहता । वह चाणक्य को फटकारता ही रहता है—'(भो भो विष्णुगुप्त न मा श्वपाकस्पर्शदूषित स्प्रष्टुमर्हसि ।) वह अपने मित्र के प्राणरक्षार्थ ही चाणक्य के कहने से शस्त्र ग्रहण करता है—(अपीष्यते चन्दनदासस्य जीवितम्) ।

राक्षसः—भो विष्णुगुप्त कुतः सन्देह. ।
चाणक्यः—यदि सत्यमेव चन्दनदासस्य जीवितमिष्यते ततो गृह्यतामिद शस्त्रम् ।
राक्षसः—शस्त्रम् मित्रशरीररक्षणकृते व्यापारणीय मया । (१-१६)

राक्षस का यह उद्गार कितना मर्मस्पर्शी है ।

वह अपने साथ उपकार करने वालो का कृतज्ञ भी है । जब मलयकेतु बन्दी की अवस्था मे चन्द्रगुप्त के सामने लाया जाता है तो राक्षस कहता है कि हम मलयकेतु के आश्रय मे कुछ समय तक रह चुके है । इसलिये उसके प्राणो की रक्षा की जाय । (राजन् विदितमेव यथा वयम् मलयकेतौ किञ्चित् कालान्तरमुषिता तत् परिरक्ष्यन्तामस्य प्राणा ।) राक्षस बाह्य परिस्थितियो की थपेड मे पडा अपने अतीत मे रहना चाहता है, क्योकि वर्तमान उसके लिये बडा कटु है । राक्षस की विषम परिस्थिति मे उसका कवि हृदय ही उसकी एकमात्र सान्त्वना है । यही कारण है कि वह अनुभव करते हुए भी —

पौरैरङ्गुलिभिर्नवेन्दुवदहं निर्दिश्यमानः शनैः
यो राजेव पुरा पुरान्निरगम राज्ञा सहस्रैर्वृत. ।
भूय सम्प्रति सोऽहमेव नगरे तत्रैव वन्ध्यश्रमो ।
जीर्णोद्यानकमेष तस्कर इव त्रासाद्विशामि द्रुतम् ।। (६-१०)

अपने आपको स्वस्थ कर पाता है और भविष्य मे अज्ञात दशाओ का सामना करने को भी तैयार हो जाता है ।

राक्षस और चाणक्य की तुलना

इस नाटक मे इन दोनो पात्रो के जीवन का केवल वही अश दिखाया गया है जो राज्य के षड्यत्रो मे व्यतीत होता था । दोनो ही स्वार्थ-रहित है । चाणक्य

ने इतने परिश्रम से, केवल अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करने के लिये चन्द्रगुप्त को राज्य का अधिकारी बनाया और अत मे उस राज्य को दृढकर मन्त्रिपद न ग्रहण किया, वरन् अपने प्रतिपक्षी राक्षस को मत्री बनाकर चैन लिया। राक्षस भी नि स्वार्थ भाव से ही अपने गत स्वामिवश का बदला लेने को प्राणपण से लगा था। चाणक्य दूरदर्शी, दृढप्रतिज्ञ और कुटिल नीति मे पारगत था। उसे अपने ऊपर विश्वास था। उसकी मेधा शक्ति बलवती थी। उसमे मनुष्यो के पहचानने की शक्ति थी। इसी से वह अपने प्रयत्नो मे सफल होता था। इसके विपरीत राक्षस को अपने ही लोगो से धोखा खाना पडा। राक्षस वीर सैनिक था पर राजनीति के कुटिल मार्गो का पूर्ण ज्ञाता न था। जिससे कभी-कभी भूलकर जाता था। (आ कार्यव्यग्रत्वात् मनस प्रभूतत्वाच्च प्रणिधीना विस्मृतम्, इदानी स्मृतिरुपलब्धा।)

यह स्वभाव से मृदुल होने के कारण सब पर विश्वास कर लेता था पर चाणक्य मे यह वात न थी। जहाँ तक घटनाओ का सम्बन्ध है कोई भी घटना उसकी इच्छा के विपरीत नही होती थी, मानो वह घटनाओ का नियन्ता था। इससे चाणक्य की दूरदर्शिता का पता चलता है। परन्तु राक्षस की सोची हुई सभी वाते उसकी इच्छा के विपरीत होती है।

चन्द्रगुप्त

चन्द्रगुप्त इस नाटक का नायक नही, इसलिये इसका व्यक्तित्व नाटककार ने इस दृष्टि से चित्रित किया है कि नायक चाणक्य की महत्ता पर कोई आँच न आ सके। मुद्राराक्षस का चन्द्रगुप्त चाणक्य की राजनीति का सच्चा होता हुआ स्वप्न है। साम्राज्य की प्रतिष्ठा के लिये चन्द्रगुप्त अपनी भावनाओ का दमन करते हुए चित्रित किया गया है। चाणक्य की कुटिल नीति के कारण उसको अपना पौरुष दिखाने का अवसर नही मिलता। राक्षस भी समझता है कि न तो चन्द्रगुप्त स्वय ही राज्यकार्य सँभालकर मेरी सेना के आक्रमण को रोक सकता है और न दूसरे पर राज्यभार दे सकता है। (चन्द्रगुप्तस्तु दुरात्मा नित्य सचिवायत्तसिद्धावेव स्थितश्चक्षुर्विकल इवाप्रत्यक्षलोकव्यवहार कथमिव स्वय प्रतिविधातु समर्थ स्यात्)। चाणक्य उसको सचिवायत्तसिद्ध कहता है। इसी कारण से चाणक्य उसे हेय दृष्टि से देखता है और उसे "वृषल" कह करके ही सम्बोधित करता है।

इतना होने पर भी चन्द्रगुप्त चाणक्य को आदर की दृष्टि से देखता है और उसके नियत्रण मे रहना चाहता है। उसमे प्रजा को प्रसन्न रखने का सब गुण वर्तमान है। मुद्राराक्षस का चन्द्रगुप्त विजयी मौर्य सम्राट् के रूप मे भले ही न दिखाई दे किन्तु मौर्य साम्राज्य के कुशल शासक के रूप मे दिखाई ही देता है।

मलयकेतु

मलयकेतु के व्यक्तित्व का नाटककार ने ऐसा चित्रण किया है जिससे चन्द्रगुप्त के व्यक्तित्व की विशेषता का ज्ञान स्पष्ट रूप से हो सके। चन्द्रगुप्त गम्भीर और शान्त प्रकृति का है पर मलयकेतु उद्धत और अशान्त प्रकृति का है। वह बिना विचारे काम करता है। राक्षस के ऊपर वह व्यर्थ ही सन्देह करता है और अन्त मे कुछ व्यक्तियो के कहने से उसे निकाल भी देता है। मलयकेतु मे साहस और पराक्रम की कमी नही है। मलयकेतु का धीरोद्धत स्वभाव उसकी इस उक्ति से झलकता है—

विष्णुगुप्त च मौर्य च सममप्यागतौ त्वया।
उन्मूलयितुमीशोऽह त्रिवर्गमिव दुर्नय॰॥ (६-२२)

किन्तु उसकी विवेकशून्यता इतनी भयङ्कर है कि उसका पतन अवश्यभावी है और होकर रहता है (अहो विवेकशून्यता म्लेच्छस्य)।

६. मुद्राराक्षस मे उल्लिखित स्थानों तथा जातियों का विवरण

काश्मीर—पजाब के उत्तर हिमालय पर्वतमाला से घिरा हुआ प्रान्त जो अपनी प्राकृतिक शोभा के लिए प्रसिद्ध है। इस प्रान्त का यह नाम बहुत प्राचीन है। इस देश का प्राचीन इतिहास कल्हणकृत राजतरगिणी मे मिलता है।

काम्बोज—यह निषध पर्वत के दक्षिण मे बतलाया जाता है। यहाँ अर्जुन राजसूय यज्ञ के अवसर पर दिग्विजय करने गये थे। वर्तमान मे इस देश की स्थिति अफगानिस्तान, जो अश्वस्थान का अपभ्रश है, बतलायी जाती है। वहाँ घोडे अधिक होते हैं।

किरात—एक प्राचीन जगली जाति विशेष। इसका उल्लेख महाभारत (आदिपर्व, सर्ग १७७ श्लोक ३), किरातार्जुनीय तथा रघुवश सर्ग ४ श्लोक ७६) मे है। किरातो का देश हिमालय का पूर्व का पार्वत्य प्रान्त था, जिसके

अन्तर्गत आधुनिक नेपाल का कुछ पूर्वीय अश, सिक्किम तथा भूटान माना जाता है।

कुलूत—यह जालन्धर दो-आव के उत्तर-पूर्व और सतलज के दाहिने तट पर स्थित है। इसका आधुनिक नाम कुलू है।

खस—यह भी एक पार्वत्य जाति है। इसका निवास-स्थान गारो तथा खसिया पहाडियाँ लिखा है जो आसाम प्रान्त मे ब्रह्मपुत्र के बाएँ तट की ओर है।

गान्धार—यह देश काबुल के किनारे-किनारे कुनार और सिन्ध नदी के बीच मे है। इसकी राजधानी का नाम पुरुषपुर (आधुनिक पेशावर) था।

चेदि—यह शिशुपाल के राज्य का नाम था। इस राज्य मे आधुनिक बुन्देल-खड का दक्षिणी भाग और जबलपुर का उत्तरी भाग सम्मिलित था।

पारस—फारस या परसिया देश जो हिन्दुस्तान के पश्चिम मे स्थित है।

मगध—बिहार प्रान्त का एक भाग। इसकी प्राचीन राजधानी का नाम गिरिव्रज या राजगृह था। मुद्राराक्षस मे मगध का तात्पर्य मगधवासी से है।

मलय—प्रो० के० एच० ध्रुव ने ह्वेनसाग के यात्रा-विवरण के अनुसार निश्चित किया है कि काश्मीर की पूर्वीय सीमा और कुलूत के मध्य मे मलय जाति का स्थान था।

मालवा—मध्य भारत का एक प्रसिद्ध प्रदेश।

यवन—यूनान देश के निवासी।

वाल्हीक—व्यास और सतलज के बीच का प्रान्त जो केकय देश के उत्तर मे है। वलख को ही वाल्हीक कहते है, जो तुर्किस्तान मे है।

शक—भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर रहने वाली एक ऐतिहासिक जाति का नाम। सीदियन नाम से इस जाति का परिचय परवर्ती इतिहासकारो ने दिया है।

सिन्ध—सिन्ध नदी और झेलम नदी के बीच मे बसा हुआ प्रदेश। आधुनिक पाकिस्तान का एक प्रान्त।

हूण—एक म्लेच्छ जाति जिसने भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर कई बार आक्रमण किया था और जिसे एक बार विक्रमादित्य ने बुरी तरह हराया भी था।

१०. विशाखदत्त—नाटककार

प्राचीन काल के विद्वान् आत्मविज्ञापन करने से दूर रहते थे। वे अपने विषय मे कुछ नही लिखते थे। सभवत प्राचीन काल के लेखक अपने ऊपर अधिक

महत्त्व न देकर ग्रथ को ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझते थे। यही कारण है कि कालिदास, भास तथा विशाखदत्त आदि अपने व्यक्तित्व के परिचय के सबध मे उदासीन दिखाई देते हैं। मुद्राराक्षस के रचयिता के नाम तथा उनके पिता और पितामह आदि के नाम-ज्ञान के लिये साहित्यप्रेमियो को नाटचकला के उन आचार्यो को अनेकानेक धन्यवाद देना चाहिये जिन्होने यह आवश्यक नियम बना दिया है कि प्रस्तावना मे कवि परिचय अवश्य दिया जाय। मुद्राराक्षस के नाटककार ने प्रस्तावना मे जो अपना परिचय दिया है उससे पता चलता है कि इनका नाम विशाखदत्त है, उनके पिता का नाम महाराज पृथु और पितामह का नाम सामत वटेश्वरदत्त था। जर्मनदेशीय प्रोफेसर हिलब्राड ने भारत मे भ्रमण कर मुद्राराक्षस की सभी प्रतियो का मिलान किया है, जिनमे कुछ प्रतियो मे विशाखदत्त के पिता का नाम भास्करदत्त भी मिला है।

सस्कृत के नाटक-साहित्य का ऐतिहासिक काल-निर्णय करने वाले विद्वानो न विशाखदत्त के कार्यकाल के सबध मे अनेक कल्पनाएँ की है। कुछ विद्वानो ने "विशाखदत्त" के आगे 'दत्त' शब्द और साथ ही साथ सामन्त वटेश्वरदत्त के आगे भी दत्त शब्द देखकर यह विचार प्रकट किया है कि इनका वश "दत्तवश" था किन्तु इसका कोई ऐतिहासिक उल्लेख नही मिलता।

प्रोफेसर विलसन ने महाराज पृथु को चौहानवशीय राय पिथौरा या पृथ्वीराज साबित करने का प्रयत्न किया था पर वे स्वय उनकी पदवियो तथा उनके पिताओ के नामो की विभिन्नता का किसी प्रकार मण्डन न कर सके। प्रोफेसर हिल ब्राड की खोज से पृथु का पाठान्तर भास्करदत्त मिलने से यह प्रयत्न निर्मूल हो गया और अब वह उपेक्षणीय है। अत इनके पिता भास्करदत्त थे, इसमे कोई सन्देह नही।

इस नाटककार के कालनिर्णय से सम्बद्ध सभी कल्पनाएँ इस भरत-वाक्य पर केन्द्रित है—

वाराहीमात्मयोनेस्तनुमतनुबलामास्थितस्यानुरूपां
यस्य प्राग् दन्तकोटि प्रलयपरिगतां शिश्रिये भूतधात्री।
म्लेच्छैरुद्वेज्यमाना भुजयुगमधुना संश्रिता राजमूर्त्ते.
स श्रीमद्बन्धुभृत्यश्चिरमवतु महीं पार्थिवश्चन्द्रगुप्तः॥

अर्थात् जिस महाराज चन्द्रगुप्त का निर्देश है उन्ही का समकालीन यह नाटककार भी होगा। किन्तु इस श्लोक मे कही-कही चन्द्रगुप्त के बदले "पार्थिवो दन्तिवर्मा", "पार्थिवोऽवन्तिवर्मा" इत्यादि पाठ मिलते है, पहले पाठ के आधार पर प्रोफेसर शारदारजन राय का कहना है कि "मुद्राराक्षस" मे विशाखदत्त ने गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य (३७५-४१३) की ओर सकेत किया है। वे अपने नाटक मे प्रकारान्तर से चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल का चित्रण करके अपने आश्रयदाता चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की प्रशसा करते है। मुद्राराक्षस का घटना-स्थल पाटलिपुत्र है, जो उस समय एक समृद्ध नगर रहा होगा। फाहियान ने पाटलिपुत्र को मगध की राजधानी बतलाया है। ह्वेनसाग ने उसे भग्नावशेष पाया। इसके अतिरिक्त "मुद्राराक्षस" मे जो बौद्धधर्म की ओर सकेत (७–५) है, उससे प्रतीत होता है कि उस समय बौद्धधर्म का अभ्युदय था। उपर्युक्त श्लोक इस प्रकार है—(बुद्धानामपि चेष्टित सुचरितै क्लिष्ट विशुद्धात्मना—(अङ्क ७ श्लोक ५ तीसरा चरण)। यह दशा फाहियान के भारत आने के समय थी। इन प्रमाणो के आधार पर कुछ विद्वान् "मुद्राराक्षस" को पाँचवी शताब्दी की रचना मानते है। दूसरे 'पार्थिवो दन्तिवर्मा' पाठ के आधार पर मुद्राराक्षस की रचना पल्लव राजा दतिवर्मा (७७९-८३० ई०) के समय मे मानी जा सकती है। किन्तु दक्षिण मे हूणो का (जिनका उल्लेख मुद्राराक्षस मे स्पष्ट है) आतक नही फैला था, अत यह मत मान्य नही है।

तेलग महोदय "पार्थिवोऽवन्तिवर्मा" को प्रामाणिक मानते है। उनके मतानुसार ये अवन्तिवर्मा, राजा हर्ष (६०७-६४८) ई० के बहनोई ग्रहवर्मा के पिता मौखरि राजा अवन्तिवर्मा थे। इस मत के अनुसार मुद्राराक्षस की रचना सातवी शताब्दी मे हुई।

कुछ विद्वान् इस पाठ को नही मानते। प्रोफेसर शारदारजन राय का कथन है कि 'पार्थिव चन्द्रगुप्त' ही पाठ ठीक है। यह भरत-वाक्य राक्षस के मुख से निकला है। जब राक्षस ने चन्द्रगुप्त का मन्त्रित्व स्वीकार कर लिया और चन्द्रगुप्त राजा हो गया और म्लेच्छ मलयकेतु वैभवहीन हो गया तो राक्षस के मुँह से 'पार्थिव चन्द्रगुप्त' का ही निकलना ठीक प्रतीत होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि विशाखदत्त का आश्रयदाता चन्द्रगुप्त ही रहा होगा। उनका कथन है, जैसा कि ऊपर कह आये है कि यह चन्द्रगुप्त वही राजा है, जिसने म्लेच्छो और हूणो को

परास्त किया। यह चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य है, जो मगध का राजा था और जिसकी राजधानी पाटलिपुत्र थी तथा राज्यकाल पाँचवी शताब्दी था।

अत यह कहा जा सकता है कि विशाखदत्त पाँचवी शताब्दी मे हुए थे और चन्द्रगुप्त द्वितीय, जो मगध का राजा था, के आश्रय मे बगाल के एक छोटी-सी रियासत पर राज्य करते थे।

११. जन्म-स्थान

इसके अतिरिक्त नाटककार के जन्म-स्थान, जन्म तथा मृत्यु-काल का भी कुछ पता नही। महामहोपाध्याय प० हरप्रसाद शास्त्री की सम्मति है कि गौडीय रीति की बहुलता से कवि गौडदेशीय ज्ञात होता है। कवि ने गौड देश की ललनाओ के कपोलो का और केशो का जो वर्णन किया है उससे वह गौडदेशीय ही जान पडते है।

गौडाना लोध्रधूलीपरिमलबहलान् धूम्रयन्त कपोलान्
क्लिश्नन्त कृष्णिमान भ्रमरकुलरुच कुञ्चितस्यालकस्य।
पांशुव्यूहा बलाना तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभाः
शत्रूणामुत्तमाङ्गे गजमदसलिलच्छिन्नमूला पतन्तु॥ (५-२३)

प्रस्तावना मे कवि ने लिखा है—

चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषि।
न शाले स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते। (१-३)

इससे प्रतीत होता है कि विशाखदत्त ऐसे स्थान मे पैदा हुए थे जहाँ चावल की खेती अधिक होती थी और चावल विहार और बङ्गाल मे अधिक होता है तथा कुसुमपुर (पाटलिपुत्र) गौडदेश (बगाल) के बहुत समीप है। अत उनको उत्तर भारत का (बगाली) मानना असगत न होगा जैसा कि प्रोफेसर शारदारजन राय लिखते है। प्रोफेसर विधुभूषण गोस्वामी ने भी उनको उत्तरी भारत का निवासी मानते हुए लिखा है कि नाटक मे एक को छोड कर सभी स्थान उत्तरापथ के है।

१२ विशाखदत्त का शास्त्र-ज्ञान

मुद्राराक्षस के अध्ययन करने वाले विद्वानो ने विशाखदत्त को न्यायशास्त्र तथा नाट्यशास्त्र का पण्डित माना है। मुद्राराक्षस के चतुर्थ अङ्क के तृतीय श्लोक

के (कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयन्) के आधार पर तथा पञ्चम अङ्क के दसवें श्लोक (साध्ये निश्चितमन्वयेन) के आधार पर उनको न्यायशास्त्र का पण्डित माना गया है।

विशाखदत्त एक सामत सरदार के पौत्र तथा महाराज के पुत्र होने के नाते कुटिल राजनीति के ज्ञाता थे और स्वय भी उसी प्रकार के समाज मे रहने के कारण राजनीतिक विषय ही पर लेखनी उठायी। वह राजनीति के पूरे ज्ञाता थे। चाणक्य के ही समान वे भी राजनीति के पण्डित थे। राजायत्त, सचिवायत्त, उभयायत्त इन तीन प्रकार की सिद्धियो का भी विवेचन उन्होने किया है। विरक्त व्यक्तियो के अनुग्रह और निग्रह के विषय मे चाणक्य और चन्द्रगुप्त के बीच जो वार्तालाप हुआ, वह भी इन्हे नीतिशास्त्र का विद्वान् सिद्ध करता है। प्रथम अङ्क मे "नानाव्यञ्जना प्रणिधय" कहकर उन्होने गुप्तचरो का लक्षण बताया है। अच्छे और बुरे मत्री का भी उन्होने वर्णन किया है —

अप्राज्ञेन च कातरेण च गुणः स्याद्भक्तियुक्तेन कः
प्रज्ञाविक्रमशालिनोऽपि हि भवेत् किं भक्तिहीनात् फलम्।
प्रज्ञा विक्रमभक्तयः समुदिता येषा गुणा भूतये
ते भृत्या नृपते कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च।। (१-१५)

अत्युच्छ्रिते मत्रिणि पार्थिवे च
विष्टभ्य पादावुपतिष्ठते श्री.।
सा स्त्री स्वभावादसहा भरस्य
तयोर्द्वयोरेकतरं जहाति।।

यह श्लोक भी विशाखदत्त के नीतिशास्त्र का ज्ञाता होना बताता है। विशाखदत्त नाट्यशास्त्र के भी पण्डित थे। यह बात तो यह नाटक ही बता देता है। विशाखदत्त ने नाट्यशास्त्र के सम्प्रदाय के अनुसरण और अपनी वैयक्तिक नाट्यकला-प्रतिभा की स्फूर्ति के सघर्ष की जो अभिव्यञ्जना की है, वह कोई भूल नही सकता।

कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयंस्तस्य विस्तारमिच्छन्
बीजाना गर्भितानां फलमतिगहनं गूढमुद्भेदयंश्च।
कुर्वन् बुद्धचा विमर्शं प्रसृतमपि पुन· संहरन् कार्यजातम्
कर्ता वा नाटकानामिममनुभवति क्लेशमस्मद्विधो वा।। (४-३)

वह ज्योतिषशास्त्र के भी पण्डित थे। प्रस्तावना मे सूत्रधार कहता है—

क्रूरग्रहः स केतु. चन्द्रमसम्पूर्णमण्डलमिदानीम्
अभिभवितुमिच्छति बलात् रक्षत्येन तू बुधयोगः।

आदि वाक्य बताते है कि वे गणित और ज्योतिष के विद्वान् थे। फलित ज्योतिष का ज्ञान भी उनको था। मलयकेतु जब आकर राक्षस से पूछता है कि चढाई का कौन-सा समय रक्खा है तो क्षपणक बताता है—(उपासक, निरूपितो मुहूर्त्त आमध्याह्नात् निवृत्त सप्तशकला शोभना तिथि सम्पूर्णचन्द्र। युष्माकमुत्तरस्या दिशो दक्षिणा दिश प्रस्थितानाम् दक्षिणद्वारिकम् नक्षत्रम्। गमन बुधस्य नक्षत्रे')।

एकगुणा भवति तिथि. चतुर्गुणं भवति नक्षत्रम्।
चतुःषष्टि गुण लग्नमेतद्दृश्यते ज्योतिषमत्रसिद्धान्ते।।

प्रस्तावना मे सूत्रधार कहता है 'आर्ये कृतश्रमोऽस्मि चतु षष्ट्यङ्गे ज्योति - शास्त्रे। चन्द्रोपराग प्रति केनापि विप्रलब्धा।' ये सभी इस बात के प्रमाण है कि विशाखदत्त ज्योतिष के भी विद्वान् थे। इन सभी प्रमाणो से हमे यह मालूम होता है कि विशाखदत्त अनेक शास्त्रो के ज्ञाता और बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थे।

१३. विशाखदत्त की अन्य कृतियाँ

विशाखदत्त के बनाये हुए चार नाटक कहे जाते है —

१—देवीचन्द्रगुप्तनाटकम् है। इसका भी इतिवृत्त राजनीतिक है और चरित्रचित्रण भी राजनीति के दाव-पेचो वाला है। नाट्यदर्पण मे देवीचन्द्रगुप्त नाटक का पाँचवाँ श्लोक उद्धृत है —

एसो सिअकर सत्थप्पणासि आसेस वैरितिमिरोहो
पि णि अविहवएण चन्दो गअणं गहलाघिओ विसई।

२—दूसरा अभिसारिकावञ्चितक या अभिसारिकाबधितक नाटक है।

३—प्रोफेसर ध्रुव ने "सदुक्ति कर्णामृत" मे विशाखदत्त के नाम से निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किया है —

रामोऽसौ भुवनेषु विक्रमगुणैर्यातः प्रसिद्धि परा-
मस्मद्भाग्यविपर्ययाद् यदि परं देवो न जानाति तम्।
बन्दी वैष यशांसि गायति मरुद् यस्यैकबाणाहत-
श्रेणीभूतविशालतालविवरोद्गीर्णै स्वरैः सप्तभिः।।

इस श्लोक के आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि विशाखदत्त का रामचरित-सम्बन्धी कोई अन्य भी नाटक होगा, किन्तु यह केवल अनुमान ही है। सभवत यह राघवानन्द नाटक है, पर यह उपलब्ध नही है।

४—मुद्राराक्षस—यह विशाखदत्त की अन्तिम और सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसका विषय राजनीति है। इस नाटक के नाम की व्युत्पत्ति इस प्रकार है—(मुद्रया गृहीत राक्षसमधिकृत्य कृतो ग्रन्थ, मुद्राराक्षसम्)। ऐसा प्रतीत होता है कि महाकवि शूद्रक के नाटक "मृच्छकटिक" और महाकवि कालिदास के" अभिज्ञान शाकुन्तल" नाम ने विशाखदत्त की कल्पना को अपने नाटक के नामकरण के लिये प्रेरित किया है। इस नाटक मे मुद्रा के द्वारा राक्षस के निग्रह की घटना एक ऐसी घटना है, जिस पर इस नाटक के नायक चाणक्य की समस्त कूटनीति केन्द्रित होती हुई प्रतीत होती है। इससे यह नाम सार्थक है।

१४. विशाखदत्त की शैली

मुद्राराक्षस के वस्तुचरित रसभावादि की दृष्टि से विशाखदत्त की रचना-शैली की जितनी प्रशसा की जाय थोडी है। मुद्राराक्षस की शैली प्रवाह, प्रासादिकता और ओज लिये हुए है। इसके वाक्य छोटे-छोटे और मुहावरेदार हैं। दीर्घ-समासबहुल पदावलि का प्रयोग कम हुआ है। अलकारो का प्रयोग सीमित मात्राओ मे ही किया गया है।

विशाखदत्त ने नाटक की रचना की है और नाटकीय औचित्य की दृष्टि से या तो काव्यकल्पनाओ को दूर ही रक्खा है या नाटक के रग मे रँग दिया है—उदाहरण के लिये मलयकेतु के कञ्चुकी की यह उक्ति—

काम नन्दमिव प्रमथ्य जरया चाणक्यनीत्या यथा
धर्मो मौर्य इव क्रमेण नगरे नीत· प्रतिष्ठां मयि।
तं सम्प्रत्युपचीयमानमपि मे लब्धान्तरः सेवया
लोभो राक्षसवज्जनाय यतते जेतुं न शक्नोति च॥ (२-६)

ऐसी है कि जिसमे नाटककार की कविकल्पना की कोई रूप-रेखा भले ही न दिखायी दे किन्तु नाटकीय वृत्त और चरित की अभिव्यजना बडी सुन्दर प्रतीत होती है। इसी प्रकार शकटदास की यह भावाभिव्यक्ति—

दृष्ट्वा मौर्यमिव प्रतिष्ठितपदं शूलं धरित्र्यास्तले
तल्लक्ष्मीमिव चेतस· प्रमथनीमुन्मुच्य वध्यस्रजम्।

श्रुत्वा स्वाम्युपरोधरौद्रविषमानाध्माततूर्यस्वनान्
न ध्वस्तं प्रथमाभिधातकठिन मन्ये मदीय मन ।। (२–२१)

नाटककार की काव्यकल्पना की उडान का उदाहरण भले ही न हो किन्तु उसके नाटकीय औचित्य की सतर्कता का एक उदाहरण अवश्य है। विशाखदत्त ने पद्यो के वाहुल्य से अपनी नाटकीय शैली को कृत्रिम नही बनाया है। उनका शब्द-विन्यास बडा सशक्त और प्रभावशाली है। पद्य की अपेक्षा उनका गद्य अधिक ओज पूर्ण है। उसमे भावुकता के स्थान पर प्रभविष्णुता अधिक है। कही कही व्यग्यपूर्ण हास्य का भी पुट दिया गया है। नाटककार की भाषा नाटक के व्यक्तित्वो के भावावेग मे कभी स्वभावोक्ति से भरी है तो कभी वक्रोक्ति की ओर उन्मुख है। भाषा यहाँ भावो पर आधिपत्य नही जमाती अपितु भाव ही भाषा पर अपना अधिकार रखते प्रतीत होते है।

नपे-तुले शब्दो मे जोरदार भाषा प्रयुक्त हुई है। कुछ उदाहरण देखिये। (अयमपरो गण्डस्योपरि स्फोट । न प्रयोजनमन्तरा चाणक्य स्वप्नेऽपि चेष्टते। तन्मयास्मिन् वस्तुनि न शयानेन स्थीयते। कीदृश पुन तृणानामग्निना सह विरोध । सर्वज्ञतामुपाध्यायस्य चोरयितुमिच्छसि)।

मुद्राराक्षस मे नाटककार ने श्लेष का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग किया है। यह श्लेष अधिकतर व्यग्यार्थ मे ही प्रयुक्त हुआ है। "पताकास्थानक" का भी श्लेष-गर्भित प्रयोग किया गया है। पताकास्थानक की रचना करने मे विशाखदत्त बडे पटु है। पाश्चात्त्य नाटच साहित्य मे जिसे Dramatic Irony कहते है उसी के लिये भारतीय नाटच-साहित्य मे पताकास्थानक की योजना हुआ करती है— पताकास्थानक-पटुता का उदाहरण देखिये—

कूरग्रहः　　　　　　सकेतुश्चन्द्रमसम्पूर्णमण्डलमिदानीम्
अभिभवितुमिच्छति बलात्.... . ...
आः क ए ष मयि स्थिते चन्द्रमभिभवितुमिच्छति बलात्
.....................रक्षत्येनं तु बुधयोगः ।। (१-६)

मुद्राराक्षस मे "भग्यतर कथन" का भी आश्रय अनेक स्थानो पर लिया गया है। कवि किसी एक ही बात को गद्य मे कहकर उसे पुन पद्य मे दोहराता है। अङ्क दो श्लोक ३ और उसके पहले गद्याश (तदेवमनयो बुद्धिशालित सुसचिवयो विरोधे सशयितेव नन्दकुललक्ष्मी)

विरुद्धयोर्भृशमिह मंत्रिमुख्ययो-
र्महावने वनगजयोरिवान्तरे। (इत्यादि २-३)

विशाखदत्त के गद्य मे जहाँ ओज है वहाँ उनके पद्यो मे स्थल-स्थल पर लालित्यमय प्रवाह है। देखिये—

आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्
सन्ध्यारुणामिव कलाम् शशलांछनस्य।
जृम्भाविदारितमुखस्य मुखात् स्फुरन्ती
को हर्तुमिच्छति हरेः परिभूय दंष्ट्राम्॥ (१-८)

चाणक्य की राजनीति की विचित्रता देखिये—

मुहुर्लक्ष्योद्भेदा मुहुरधिगमाभावगहना
मुहुः सम्पूर्णाङ्गी मुहुरतिकृशा कार्यवशतः।
मुहुर्नश्यद्बीजा मुहुरपि बहुप्रापितफले-
त्यहो चित्राकारा नियतिरिव नीतिर्नयविदः॥ (५-३)

मुद्राराक्षस मे सरल पद्यो मे शिक्षाप्रद बाते भी मिलती है—

शासनमर्हताम् प्रतिपद्यध्वम् मोहव्याधिवैद्यानाम्।
ये प्रथममात्रकटुकं पश्चात्पथ्यमुपदिशन्ति॥ (४-१६)

उनके कथोपकथन और पद्य नाटकीय गुणो से परिपूर्ण है। कथोपकथन स्वाभाविक और रोचक है। देखिये।

मलयकेतुः—एतदार्यम् पृच्छामि।
राक्षसः—कुमार य आर्यस्तं पृच्छ, वयमिदानीमनार्याः संवृत्ताः।
मलयकेतुः—इदमिदानी किम्।
राक्षसः—विधेर्विलसितमिदम्।
मलयकेतुः—केन तर्हि व्यापादितस्तातः।
राक्षसः—दैवमत्र प्रष्टव्यम्।
मलयकेतुः—दैवमत्र प्रष्टव्यम् न क्षपणको जीवसिद्धिः?

कभी-कभी तो एक शब्द के प्रयोग मात्र से ही नाटककार अधिकाधिक अभिप्राय प्रकाशित करने मे समर्थ दिखाई देता हे। उदाहरणार्थ राक्षस की इस उक्ति मे (सत्य नगरान्निष्क्रामतो मम हस्नाद् ब्राह्मण्या उत्कण्ठाविनोदार्थ गृहीता)

ब्राह्मण्या शब्द ग्राम्य प्रतीत होने पर राक्षस के हृदय की समस्त करुणा और वेदना का घनीभूत निष्यन्द सा ही लगता है।

नाटककार ने जो छन्दो योजना की है वह किसी औचित्य की दृष्टि से और किसी औचित्य की सिद्धि के लिये। शार्दूलविक्रीडित का २८ बार प्रयोग, स्रग्धरा का १७ बार प्रयोग किया गया है। जो भाव कवि उन-उन छन्दो के द्वारा प्रकट करना चाहता है वे भाव दूसरे छन्द द्वारा प्रकट नही हो सकते। विषय की दृष्टि से उनका प्रयोगौचित्य सर्वथा श्लाघनीय है।

सक्षेप मे यह कहना असगत न होगा कि विशाखदत्त की नाटक-प्रबध-रचना की सफलता एकमात्र उनकी औचित्य दृष्टि और उसकी प्रबल शक्ति पर निर्भर है।

१५. नाटक के संबंध मे कुछ ज्ञातव्य बातें

नाटक की परिभाषा—सस्कृत साहित्यकारो ने काव्य के दो मुख्य भाग बतलाये है। दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य। दृश्य वह है जो रगमच पर खेलकर दिखाया जाय या जिसका अभिनय हो सके। श्रव्य काव्य वह है जो सुना जा सके। साहित्यदर्पण मे लिखा है —

दृश्यश्रव्यत्वभेदेन पुन· काव्य द्विधा मतम्
दृश्य तत्राभिनेयं तद्रूपारोपात्तु रूपकम्।
नाटकं सप्रकरण भाणः प्रहसनं डिम.
व्यायोगसमवाकारौ वीथ्यङ्केहामृगा दश
वस्तुनेता रसस्तेषा · भेदकः॥

दृश्य काव्य अभिनय के लिए होता है। उसमे नट लोग अनेक राजाओ तथा देवताओ का रूप धारण करके उनके चरित का अभिनय दिखाते है। उस समय हम उनको उसी राजा या देवता के ही रूप मे मानते है। इस आरोप के कारण इस काव्य रचना को रूपक कहते है। सस्कृत मे "रूपक" और "नाटक" दोनो शब्दो का पृथक्-पृथक् अर्थ है। रूपक तो व्यापक अर्थ रखता है—"रूप्यन्तेऽभिनीयन्ते इति रूपकाणि नाटकादीनि" और इसके नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, डिम, ईहामृग, अक, वीथी तथा प्रहसन ये प्रमुख १० भेद है। किन्तु नाटक इन्ही दस प्रकार के रूपको मे सर्वप्रथम तथा सर्वोत्कृष्ट प्रकार है। सत्य और कल्पना दोनो नाट्य के आधार है।

प्रसिद्धकल्पितकृतानुकरणम् नाट्यम् ।

सत्य और काल्पनिक जगत् की अनुकृति नाटच है। नाटक की कथावस्तु कोई प्रसिद्ध पौराणिक या ऐतिहासिक होती है और उसका नायक लोकप्रसिद्ध होता है। रूपक की अधिकाश रचनाएँ इसी भेद का लक्षण लेकर लिखी गई है।

मातृगुप्ताचार्य के अनुसार नाटक की परिभाषा यह है —

प्रख्यातवस्तुविषयं धीरोदात्तादिनायकम् ।
राजर्षिवंशचरितं तथा दिव्याश्रयान्वितम् ।।
शृङ्गारवीरान्यतरप्रधानरससंश्रयम् ।
प्रकृत्यवस्थासंध्यङ्गसन्ध्यन्तरविभूषितम् ।।
सुखदुःखोत्पत्तिकृतं चरितं यच्च भूभृताम् ।
इतिवृत्तम् कथोद्भूतम् किञ्चिदुत्पाद्यवस्तु च ।
नाटकं नाम तज्ज्ञेयं रूपकं नाट्यवेदिभिः ।।

साहित्यदर्पणकार ने नाटक का लक्षण इस प्रकार लिखा है —

नाटकं ख्यावृत्तं स्यात् पंचसंधिसमन्वितम्
विलासमृद्धिर्यादि गुणवद्युक्त नानाविभूतिभिः ।
सुखदुःखसमुद्भूतिनानारसनिरन्तरम् ।
पञ्चाधिकाः दशपरास्तत्राङ्काः परिकीर्तिताः
प्रख्यातवशो राजर्षिर्धीरोदात्तः प्रतापवान् ।
दिव्योऽथ दिव्यादिव्यो वा गुणवान्नायको मतः
एक एव भवेदङ्गी शृङ्गारो वीर एव वा ।
अङ्गमन्ये रसाः सर्वे कार्यो निर्वहणोऽद्भुतः
चत्वारः पञ्च वा मुख्याः कार्यव्यापृतपूरुषा·
गोपुच्छाग्रसमग्र तु बन्धन तस्य कीर्तितम् ।।

नाटक उसे कहते है जिसका कथानक प्रसिद्ध हो और जिसमे पाँचो सधियाँ हो। इसमे विलास, समृद्धि आदि गुण तथा अनेक प्रकार के ऐश्वर्यो का वर्णन होना चाहिए। सुख और दु ख की उत्पत्ति दिखायी जाय और वह अनेक रसो से पूर्ण होना चाहिए। इसमे पाँच से लेकर दस तक अङ्क होते है। इसका नायक प्रसिद्ध वश मे उत्पन्न धीरोदात्त, प्रतापी, गुणवान् राजर्षि होता है। वह दिव्य हो अथवा दिव्य और अदिव्य दोनो प्रकार के गुणो से युक्त हो। इसमे वीर या

शृङ्गार एक रस प्रधान होता है और रस उसके अङ्गभूत होते हैं। निर्वहण सधि मे इसे अद्भुत होना चाहिए। इसमे चार या पाँच कार्यरत पुरुष प्रधान हो और गौ की पूँछ के अग्रभाग की तरह इसकी रचना हो।

१६. नाटक की उत्पत्ति

सस्कृत नाटको की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, यह एक अत्यन्त विवादग्रस्त विषय है। परम्परानुसार "नाट्यवेद" की रचना ब्रह्मा ने की थी तथा भरत मुनि ने उसका प्रचार पृथिवी पर किया। भरत मुनि अपने नाट्यशास्त्र मे लिखते है कि ब्रह्मा जी ने ऋग्वेद से सवाद, सामवेद से सगीत, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस के तत्त्वो को लेकर "नाट्यवेद" का निर्माण किया।

जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च ।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ॥

इसी से इसको पचम वेद भी कहते है। इसका प्रथम प्रयोग इन्द्रध्वज-नामक उत्सव के अवसर पर भरतमुनि ने अपने शिष्यो तथा अप्सराओ की सहायता से किया। इस अभिनय मे देवताओ के द्वारा दानवो का पराजय दिखलाया गया था, जिससे दैत्य अप्रसन्न होकर प्रयोग मे विघ्न डालने के लिये उद्यत हो गये। तब ब्रह्मा ने विश्वकर्मा के द्वारा रङ्गस्थान का निर्माण किया। एक तिकोना, दूसरा चौकोना, तीसरा गोलाकार—इन तीनो का उपयोग भिन्न भिन्न प्रकार के रूपको के अभिनय के लिये किया जाने लगा। भरत मुनि के इस वर्णन से स्पष्ट है कि भारतीय नाटक का उदय वेदो के ही उपकरणो को लेकर हुआ है तथा वह भरत की निजी प्रतिभा का विकास है। हम कह सकते है कि वैदिक साहित्य मे एक प्रकार से नाटक के मूल तत्त्व प्रस्तुत थे और इस अर्थ मे यह कहा जा सकता है कि सस्कृत नाटक की उत्पत्ति वैदिक काल मे हुई। पर वास्तविक नाटक के विकसित रूप का आभास वेदो मे कही लक्षित नही होता।

रामायण-महाभारत काल मे नाटक का कुछ और भी स्पष्ट उल्लेख मिलता है। विराट्पर्व मे रगशाला का उल्लेख पाया जाता है। नट शब्द का भी प्रयोग मिलता है जिसका अर्थ श्रीधर स्वामी के अनुसार "नवरसाभिनयचतुर" है। रामायण मे भी नट, नर्तक, नाटक एव रङ्ग अर्थात् रङ्गमञ्च का कई स्थलो पर वर्णन मिलता है। उसमे "कुशीलव" शब्द का प्रयोग भी नट या अभिनेता

के अर्थ मे हुआ है। यह मत निराधार है कि सस्कृत नाटको की उत्पत्ति कठपुतलियो के खेल से हुई।

पाणिनि ने अपने "पाराशर्यशिलालिभ्याम् भिक्षनटसूत्रयो" इस सूत्र मे "नटसूत्र" अर्थात् नाटचशास्त्र का उल्लेख किया है। स्पष्ट है कि पाणिनि के समय मे या उनके पूर्व ही अनेक नाटक रचे जा चुके होगे। जिनके आधार पर इन नट सूत्रो का निर्माण हुआ, क्योकि लक्षणग्रन्थ की रचना लक्ष्यग्रन्थ के उपरान्त ही होती है।

इसके बाद सस्कृत नाटको की सख्या मे उतरोत्तर वृद्धि और परिष्कार होता गया। चौथी पॉचवी शताब्दी ई० पू० मे जाकर नाटको की बहुसख्यक रचना होने लगी थी जैसा कि भास के उपलब्ध नाटको से प्रकट है। पतजलि के महाभाष्य मे कसवध और बलिबन्ध नामक दो नाटको का स्पष्ट उल्लेख है। सस्कृत नाटको का सर्वश्रेप्ठ परिमार्जन एव परिष्कार प्रथम शताब्दी ई० पू० के कालिदास के नाटको मे जाकर उपलब्ध होता है।

सस्कृत नाटको मे रगमच के पर्दो के लिये कही कही यवनिका शब्द का प्रयोग हुआ है। इसके आधार पर कुछ विद्वान् कहते है कि सस्कृत नाटको की उत्पत्ति ग्रीक नाटको के प्रभाव से हुई। किन्तु यह मत सर्वथा भ्रान्त और आधार-रहित प्रमाणित हो चुका है। "यवनिका" शब्द का प्रयोग केवल इसलिये होता था कि यवन (Ionia) देश से आये हुए वस्त्रो से वे परदे बनाये जाते थे। सस्कृत नाटको की उत्पत्ति तथा विकास स्वतत्र रूप से हुआ है।

उपर्युक्त समीक्षा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सस्कृत नाटक ने अपने क्रमिक विकास मे कुछ तत्त्व वैदिक साहित्य से लिये, कुछ इतिहास पुराणो से तथा कुछ लोकगीतो से। धार्मिक एव सामूहिक उत्सवो से भी उसे प्रेरणा मिली। पतजलि के समय मे तो उसका पूर्ण विकसित रूप मे अभिनय भी होने लगा था। इस प्रकार भारत मे सस्कृत नाटक का पूर्ण विकास कई शताब्दियो मे हुआ और उसकी उत्पत्ति तथा अभ्युदय मे अपने तत्त्वो या उपादानो का उपयोग हुआ।

१७. संस्कृत नाटकों की विशेषताएँ

सस्कृत के नाटक रस प्रधान होते है। उनमे वास्तविकता अथवा कथावस्तु की यथार्थता की ओर उतना ध्यान नही दिया गया, जितना दर्शको अथवा पाठको

के हृदय मे किसी रस-विशेष का सचार करने की ओर। कवि की विदग्धता केवल रसाभिव्यक्ति की पूर्णता मे ही मानी जाती थी। रस ही नाटयकला का प्रधान लक्ष्य माना गया। प्रधान रस शृगार अथवा वीर इन्ही दो मे से कोई एक होता था। पाश्चात्त्य नाटको की तरह चरित्रचित्रण इसका मुख्य अग नही समझा गया। अत नाटको मे प्राय ऐसी ही कथा का आश्रय लिया गया जो प्रसिद्ध होने के कारण प्रेक्षको के मनोनूकूल हो।

सस्कृत नाटको मे पात्रो की सख्या नियत नही रहती। पात्र लौकिक, दिव्य अथवा अर्धदिव्य होते है। कवियो ने व्यक्तिमूलक (individual) पात्रो की अवतारणा की ओर उतना ध्यान नही दिया जितना समुदायगत (typical) चरित्रो की सृष्टि की ओर। कालिदास, शूद्रक प्रभृति कुछ महान् कलाकारो की कृतियो मे भले ही पात्र अपना विशिष्ट व्यक्तित्व रखते हो, किन्तु साधारणतया सस्कृत नाटककारो ने परम्परायुक्त चरित्रो का ही निर्माण किया है। पात्र अपनी स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न भाषाओ का प्रयोग करते है। सस्कृत का प्रयोग केवल नायक अथवा उच्च वर्ग के पात्रो द्वारा होता है, निम्न श्रेणी के लोग और स्त्री पात्र प्राकृत मे ही बोलते है।

सस्कृत नाटको मे समय और स्थान की अन्विति (unities of time and place) भी नही पाई जाती। पाश्चात्त्य नाटको की भाँति सस्कृत नाटको के अको का विभाजन विभिन्न दृश्यो मे नही होता। भाषा गद्य-पद्यमय होती है। नाटक के अन्तर्गत पत्रलेखन, अभिज्ञान (पहचान की निशानी) विदूषक आदि के उपयोगो मे सस्कृत तथा पाश्चात्त्य नाटको मे समानता है।

सस्कृत नाटक प्राय सुखान्त होते है किन्तु यह नही कहा जा सकता कि सस्कृत मे दु खान्त नाटको का नितान्त अभाव है, यदि दु खान्त नाटक का अर्थ नायक के शोक, पराभव और मृत्यु का चित्रण करना है तो इस दृष्टि से कर्णभार, ऊरुभग, वेणीसहार दु खान्त नाटक माने जाने चाहिए। ऊरुभग मे दुर्योधन की मृत्यु रगमच पर हो जाती है और वेणीसहार मे उसकी मृत्यु की सूचना हमे द्वारपाल के द्वारा मिलती है।

प्रत्येक सस्कृत नाटक का आरम्भ "प्रस्तावना" से होता है। प्रस्तावना मे सूत्रधार, नटी, विदूषक अथवा पारिपार्श्वक के साथ बातचीत करता हुआ नाटक की कथावस्तु और कवि का सक्षिप्त परिचय देकर नाटक का आरम्भ कराता है।

अङ्क की समाप्ति तक रगमच कभी खाली नही रहता। प्रथम अङ्क के आरम्भ मे अथवा दो अङ्को के बीच मे "विष्कम्भक" का प्रयोग होता है जिसमे सवाद या स्वागत-भाषण द्वारा दर्शको को ऐसी घटनाओ की सूचना दी जाती है जिनका रगमच पर दिखाना आवश्यक नही किन्तु कथा-सूत्र के निर्वाह के लिए जिनका जानना अनिवार्य है। नाटक की समाप्ति "भरतवाक्य" से होती है। सस्कृत नाटक मे कम से कम पाँच और अधिक से अधिक दस अङ्क होते है।

सस्कृत नाटको मे प्रकृति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध दीख पडता है। प्रकृति की रमणीयता नाटक की सुन्दरता को बढा देती है। उपवन के वृक्ष, लताये, नदियाँ, पशु-पक्षी आदि सभी नाटक के सजीव अग है। भरतमुनि ने कहा है कि नाटक दु ख, परिश्रम अथवा शोक से ग्रस्त लोगो के लिए विश्राम और विनोद का साधन है :—

दु.खार्तानां श्रमार्ताना शोकार्तानां तपस्विनाम् ।
विश्रामजननं लोके नाटचमेतद्भविष्यति ॥

कालिदास ने भी नाटक को भिन्न रुचि वाले लोगो का एक सामान्य मनोविनोद बतलाया है —

देवानामिदमामनन्ति मुनयः कान्तं क्रतुं चाक्षुषम्
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वाङ्गे विभक्तं द्विधा ।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते
नाटचं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम् ॥ (१४)

भवभूति ने अच्छे नाटको के लक्षण इस प्रकार बताये है —

भूम्नां रसानां गहनाः प्रयोगाः सौहार्दहृद्यानि विचेष्टितानि ।
औद्धत्यमायोजितकामसूत्रं चित्राः कथा वाचि विदग्धता च ॥
(मा० मा० १६)

विभिन्न रसो का प्रचुर एव गहन प्रयोग, प्रीतिपूर्ण रुचिर तथा सुन्दर कार्यो का अभिनय, पराक्रम और प्रणय का चित्रण विभिन्न कथावस्तु तथा निपुण सवाद ऐसे लक्षणो से युक्त नाटक ही उत्कृष्ट माने जाते है।

१८. नायक के भेद

साधारण तौर से नायक चार प्रकार के होते है —धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और धीरशान्त। जो नायक शूरवीर हो, उदार हो, चरित्र-बल-युक्त

हो और दृढ हो तथा अन्य साधारण गुणो से युक्त हो वह **धीरोदात्त** कहलाता है। राम और जीमूतवाहन आदि ऐसे नायक है। शक्ति और वीरता के कारण अभिमान, शक्ति की इच्छा, आत्मश्लाघा तथा स्पर्धा इत्यादि गुण जिसमे पाये जायँ वह **धीरोद्धत** नायक है। रावण, परशुराम और भीमसेन आदि ऐसे नायक है। जो नायक चिन्तारहित हो, सुन्दर कलाओ का प्रेमी हो वह **धीरललित** नायक है। जैसे वत्सराज या रत्नावली का नायक। **धीरशान्त नायक** साधारण प्रकृति का नम्रतायुक्त, उदार चित्त का और मृदु होता है, जैसे मालतीमाधव मे माधव। दशरूपक मे नायक का भेद इस प्रकार है —

महासत्त्वोऽतिगभीरः क्षमावानविकत्थन ।
स्थिरो निगूढाहंकारो धीरोदात्तो दृढव्रतः ।।
दर्पमात्सर्यभूयिष्ठो मायाच्छद्मपरायण· ।
धीरोद्धतस्त्वहकारी चलश्चण्डो विकत्थनः ।।
निश्चिन्तो धीरललित· कलासक्तः सुखी मृदु. ।
सामान्यगुणयुक्तस्तु धीरशान्तो द्विजादिकः ।।

सामान्य गुण की परिभाषा दशरूपक मे इस प्रकार दी गई है —

नेताविनीतो मधुरस्त्यागी दक्षः प्रियवदः ।
रक्तलोक. शुचिर्वाग्मी रुढवशः स्थिरो युवा ।।
बुद्ध्युत्साहस्मृतिप्रज्ञाकलामानसमन्वित. ।
शूरो दृढश्च तेजस्वी शास्त्रचक्षुश्च धार्मिकः ।।

नायक का एक अन्य प्रकार से भी विभाजन हो सकता है। शृङ्गार नायक के आधार पर भी चार भेद नायक के होते है। **अनुकूल नायक** अर्थात् जो केवल एक ही स्त्री से अनुराग रखता है। **दक्षिण नायक** वह है जो कई पत्नियो के साथ एक-सा व्यवहार करता है। **धृष्ट नायक** वह है जो उस स्त्री से प्रेम करना चाहता है जो दूसरे मे अनुरक्त है। **शठ नायक** वह है जो गुप्त रूप से दुष्कर्म करता है। यह भेद आगे के श्लोक से स्पष्ट हो जाता है —

एकायत्तोऽनुकूल. स्यात् तुल्योऽनेकत्र दक्षिण ।
व्यक्ताागा गतभीर्धृष्ट. गूढविप्रियकृच्छठ· ।।

राम अनुकूल नायक के उदाहरण है। उत्तर रामचरित का निम्नलिखित श्लोक अनुकूल नायक की परिभाषा के लिए उद्धृत किया जाता है।

अद्वैतं सुखदु:खयोरनुगत सर्वास्ववस्थासु य-
द्विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः ।
कालेनावरणात्ययात्परिणते यत्स्नेहसारे स्थितम्
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येक हि तत्प्रार्थ्यते ।। (१३९)

वत्सराज और अग्निमित्र दक्षिणकोटि के नायक है। मालविकाग्निमित्र का निम्नलिखित श्लोक दक्षिण नायक का परिचय देने के लिए दशरूपक मे उद्धत है—

उचितः प्रणयो वर विहन्तुम् बहव· खण्डनहेतवो हि दृष्टाः ।
उपचारविधिर्मनस्विनीनां ननु पूर्वाभ्यधिकोऽपि भावशून्यः ।। (३-३)

धृष्ट नायक का उदाहरण —

लालालक्ष्मललाटपट्टमभित· केयूरमुद्रा गले
वक्त्रे कज्जलकालिमा नयनयोस्ताम्बूलरागोऽपर· ।
दृष्ट्वा कोपविधायि मण्डनमिदं प्रातश्चिरं प्रेयसो
लीलातामरसोदरे मृगदृशः श्वासाः समाप्ति गताः ।।

शठ नायक के लिए अमरुशतक का निम्नलिखित श्लोक दर्शनीय है —

शठान्यस्याः काञ्चीमणिरणितमाकर्ण्य सहसा
यदा श्लिष्यन्नेव प्रशिथिलभुजग्रथिरभवः ।
तदेतत्क्वाचक्षे घृतमधुमयत्वद्बहुवचो—
विषेणाघूर्णन्ती किमपि न सखी मे गणयति ।।

मालविकाग्निमित्र का नायक दक्षिण नायक है। देखिए —

दाक्षिण्यं नाम बिम्बोष्ठि बैम्बिकाना कुलव्रतम् ।
तन्मे दीर्घाक्षि ये प्राणास्ते त्वदाशानिबंधनाः ।। (४-४१)

१९. नाटकों मे प्रयुक्त होने वाले कुछ शब्दों की परिभाषा

नान्दी·

आशीर्वचनसयुक्ता स्तुतिर्यस्मात्प्रयुज्यते ।
देवद्विजनृपादीनां तस्मान्नान्दीति सज्ञिता ।।
मङ्गल्यशखचन्द्राब्जकोककैरवशंसिनी ।
पदैर्युक्ता द्वादशभिरष्टाभिर्वा पदैरुत ।।

नाटक के आरम्भ मे देवता, ब्राह्मण तथा राजा आदि की आशीर्वादयुक्त जो स्तुति की जाती है वह नान्दी कहलाती है। इसमे माङ्गलिक वस्तु, शङ्ख, चन्द्र, चक्रवाक और कुमुद आदि का वर्णन होना चाहिये और यह बारह या आठ पदों से युक्त होनी चाहिये।

नान्दी दो प्रकार की होती है। एक तो नटकल्पिता, दूसरी नाटककार-रचिता। भास के नाटक मे (नान्द्यन्ते तत प्रविशति सूत्रधार) इस सकेत से 'पूर्वरगनान्दी' 'नटकृता नान्दी' समझना चाहिये। कालिदास के नाटक मे (ततः प्रविशति सूत्रधार) इस सकेत से कविकृत नान्दी समझना चाहिये। पत्रावली उस नान्दी को कहते है जिसमे बीज तथा वर्णनीय वस्तु का विन्यास हो। जैसा कि नाट्यदर्पण मे लिखा है —

यस्यां बीजस्य विन्यासो ह्यभिधेयस्य वस्तुनः ।
श्लेषेण वा समासोक्त्या नान्दी पत्रावली तु सा ॥

सूत्रधार

नाट्योपकरणादीनि सूत्रमित्यभिधीयते ।
सूत्रं धारयतीत्यर्थे सूत्रधारो निगद्यते ॥

बीज सहित नाटक के अनुष्ठान को सूत्र कहते है। उसका सचालन करने वाले तथा रगमच के अधिष्ठाता देव की पूजा करने वाले को सूत्रधार (Stage Manager) कहते है।

मातृगुप्ताचार्य ने सूत्रधार की परिभाषा निम्न प्रकार से दी है —

चतुरातोद्यनिष्णातोऽनेकभूषासमावृतः ।
नानाभाषणतत्त्वज्ञो नीतिशास्त्रार्थतत्त्ववित् ॥
नानागतिप्रचारज्ञो रसभावविशारदः ।
नाट्यप्रयोगनिपुणो नानाशिल्पकलान्वितः ॥
छन्दोविधानतत्त्वज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः ।
तत्तद्गीतानुगलयकलातालावधारण ॥
अवधाय प्रयोक्ता च योक्तॄणामुपदेशकः ।
एवं गुणगणोपेतः सूत्रधारोऽभिधीयते ॥

प्रस्तावना (Prologue) आमुख

स्थापना, प्रस्तावना और आमुख ये सब पर्यायवाची है। प्रस्तावना मे सूत्रधार

नटी या किसी सहायक पात्र से अभिनय की जाने वाली वस्तु के विषय मे वार्तालाप करके दर्शको को सूचित करता है कि कौन सा नाटक खेला जाने वाला है अथवा अभिनेय वस्तु का ज्ञान कराता है।

सूत्रधारो नटी ब्रूते मारिषं वा विदूषकम् ।
स्वकार्यप्रस्तुताक्षेपि चित्रोक्त्या यत्तदामुखम् (प्रस्तावना वा) ।।

कोई कोई प्रस्तावना की परिभाषा निम्न तौर पर करते है —

विदूषकनटीमार्षैः प्रस्तुताक्षेपिभाषणम् ।
सूत्रधारस्य वक्रोक्तिस्पष्टोक्तैर्यत्तदामुखम् ।।

अर्थात् नाटक की सूक्ष्म सूचना देने के लिये सूत्रधार का नटी अथवा मारिष अर्थात् पारिपार्श्वक के साथ यथावसर जो आलाप-सलाप है उसे "आमुख" या "प्रस्तावना" कहा जाता है। दो प्रकार से नाटक की सूचना दी जाती है स्पष्ट रूप से अथवा किसी विचित्रता के साथ नाटकान्तर्गत पात्र के प्रवेश से। पहले का जो नाटक भाग है वह तो प्रस्तावना अथवा "आमुख" है और बाद का "नाटच" अथवा "नाटक"।

प्रस्तावना मे ही प्ररोचना भी अन्तर्भूत है। प्ररोचना की परिभाषा है (पूर्वरङ्गे गुणस्तुत्या सभ्यौन्युख्य प्ररोचना) अर्थात् रगमच पर अवतरित किये जाने वाले नाटक की प्रशसा, नटो की अभिनय-कला की प्रशसा या नाटक के रचयिता की प्रशसा या नाटक के सामाजिको की प्रशसा या इन सबकी प्रशसा को प्ररोचना कहा जाता है।

प्रवेशक अथवा विष्कम्भक

प्रवेशक की परिभाषा दशरूपक मे इस प्रकार दी गई है —

वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशाना निदर्शकः ।
संक्षेपार्थस्तु विष्कम्भो मध्यपात्रप्रयोजितः ।।
तद्वदेवानुदात्तोक्त्या नीचपात्रप्रयोजितः ।
प्रवेशोऽङ्कद्वयस्यान्तः शेषार्थस्योपसूचकः ।।

विष्कम्भक नाटक का वह भाग है जिसमे एक या अधिक मध्यम पात्र आकर भूत या भविष्य की घटना का वर्णन करते है। विष्कम्भक और प्रवेशक दोनो का उद्देश्य एक ही है। दोनो मे अन्तर यही है कि विष्कम्भक मे तो मध्यम श्रेणी के पात्र आते है और प्रवेशक मे अवर श्रेणी के। मुद्राराक्षस के प्रथम अङ्क

के आदि मे जीवसिद्धि और क्षपणक का सवाद प्रवेशक है। इसी प्रकार पचम अङ्क मे भी सिद्धार्थक और सुसिद्धार्थक का सवाद प्रवेशक है। विष्कम्भक दो प्रकार का होता है। शुद्ध और मिश्र। शुद्ध मे केवल मध्यमपात्र ही आते है पर मध्य मे नीचपात्र भी भाग लेते है और वार्तालाप सस्कृत और प्राकृत दोनो मे ही होता है।

पूर्वरङ्ग

यन्नाट्यवस्तुनः पूर्वं रङ्गविघ्नोपशान्तये।
कुशीलवा· प्रकुर्वन्ति पूर्वरङ्गः स उच्यते॥

नाटकीय कथा के आरम्भ के पूर्व रगमच के विघ्नो की शान्ति के लिये नर्तक या अभिनेता जो मङ्गलाचरण करते है उसे पूर्वरङ्ग कहते है।

चूलिका, अङ्कास्य, अङ्कावतार

पर्दे के पीछे बैठे हुए पात्रो द्वारा कथा की सूचना देने को चूलिका कहते है। अङ्क की समाप्ति पर निष्क्रान्त होने वाले पात्रो द्वारा अगले अङ्क की कथा की सूचना अङ्कास्य है। अङ्क समाप्त होने के पूर्व ही आगामी अङ्क की कथा का प्रारम्भ कर देना अङ्कावतार है।

अन्तर्यवनिका सस्थैश्चूलिकार्थस्य सूचना
अंकान्तपात्रैरंकास्य – मुत्तराङ्कार्थसूचना।
यत्र स्यादुत्तराङ्कार्थ. पूर्वाङ्कार्थानुसगत·
असूचिताङ्कपात्र तदङ्कावतरणम् मतम्॥

गर्भाङ्क

अङ्कोदरप्रविष्टो यो रङ्गद्वारामुखादिमान्।
अङ्कोऽपरः स गर्भाङ्कः सबीजः फलवानपि॥

गर्भाङ्क वस्तुत (किसी नाटक के) एक अङ्क के अन्तर्गत रहने वाले दूसरे अङ्क का नाम है। इसमे भी अङ्क की भाँति सूत्रधारकृत मङ्गलाचरण वा प्रस्तावना अनिवार्य है। इसमे बीजरूप इतिवृत्तार्थ किवा नायक के प्रधान प्रयोजन का अशत उपन्यास आवश्यक है।

कञ्चुकी

अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः।
सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते॥

अथवा

ये नित्यं सत्त्वसम्पन्नाः कामदोषविवर्जिताः ।
ज्ञानविज्ञानकुशलाः काञ्चुकीयास्तु ते स्मृताः ॥

कञ्चुकी जाति का ब्राह्मण होता है, वह वृद्ध होता है तथा सर्वगुणसम्पन्न और प्रत्येक कार्य मे कुशल होता है। वह अन्त पुर मे जाने वाला होता है। जो कामादि दोष से रहित हो, सत्त्वशाली हो और ज्ञान-विज्ञान को जानने वाले हो वे कञ्चुकी कहलाते है।

रङ्गमञ्च

यह भी नाट्यशास्त्र का एक प्रमुख अङ्ग है। जैसे वस्तुनायक और सङ्गीत, नृत्य आदि आवश्यक है वैसे ही रङ्गमञ्च भी आवश्यक है। रङ्गमञ्च ही पर पात्र लोग नाटक खेलते हैं। भरत मुनि ने इसकी बनावट के विषय मे बहुत कुछ लिखा है। यहाँ केवल यही कह देना पर्याप्त है कि यह तीन प्रकार का होता है। १—विकृष्ट जो १०८ हाथ लम्बा होता है, २—चतुरस्र जो चौकोर होता है और ६४ हाथ लम्बा और ३२ हाथ चोडा होता है, ३—त्र्यस्र अथवा त्रिकोण जिसमे प्राय आपस के ही लोग बैठकर नाटक का आनन्द लेते थे।

अङ्क

अङ्क इति रुढशब्दो भावै रसैश्च रोहयत्यर्थान् ।
नानाविधानयुक्तो यस्मात् तस्मात् भवेदङ्कः ॥
यत्रार्थस्य समाप्तिर्यत्र च वीजस्य भवति संहारः ।
किञ्चिदवलग्नविन्दुः सोऽङ्क इति सदावगन्तव्यः ॥

अङ्क नाटक का वह अवच्छेद है अथवा अन्तर्विभाग है जिसमे सामाजिकों की दृष्टि नायक-चरित का साक्षात्कार किया करती है और जो भावो और रसो द्वारा अर्थो को प्रस्फुटित करता है, जो अनेक प्रकार के विधान से युक्त होता है और जहाँ एक अर्थ की समाप्ति होती है तथा बीज का उपसहार होता है और अशत विन्दु का सबध बना रहता है। इसमे अनेकानेक घटनाचक्र का वर्णन रहता है। इसमे ऐसी कथा की रचना नही होती जो कई दिन तक चलती रहे जैसा कि साहित्य-दर्पण मे लिखा है—

नानेकदिननिर्वर्त्यः कथया संप्रयोजितः ।
अन्तनिष्क्रान्तनिखिलपात्रोऽङ्क इति कीर्त्तितः ।

अङ्क के अन्त मे सभी पात्र अपना-अपना अभिनय समाप्त कर रङ्गमञ्च से निकलते दिखाई दिया करते है ।

भरतवाक्य

सस्कृत नाटको का आरम्भ नान्दी सगीत से और अन्त भरतवाक्य संगीत से होता है। नान्दी को तो मुखसधि का अङ्ग नही मानते किन्तु भरतवाक्य को निर्वहणसधि का वह अङ्ग माना जाता है जिसे "प्रशस्ति" कहते हैं। प्रशस्ति की परिभाषा है —**'प्रशस्तिः शुभशंसना'** ।

अर्थात् जगत् के कल्याण की आशसा अथवा सद्भावना का प्रकाशन। नाटक का नायक अथवा अन्य कोई पात्र इस "भरतवाक्य" का सगीत के साथ पाठ करता है।

नेपथ्य

जहाँ नाचने वाले, नाटक खेलने वाले नाटकोपयोगी वेशभूषा धारण करते है उसे नेपथ्य कहते हैं —**कुशीलवकुटुम्बस्य गृहं नेपथ्यमुच्यते ।**

रगमच पर प्रदर्शन की दृष्टि से कथावस्तु के दो भेद होते हैं —(१) अभिनेय जो रगमच पर दिखाया जाय, (२) सूच्य वे वस्तुएँ जिनका रगमंच पर प्रदर्शन न होकर केवल पात्रो के सवाद के माध्यम से सूचना दे दी जाती है। कुछ वस्तुएँ रगमच पर नही दिखाई जाती, जैसे—वध, युद्ध, विवाह, भोजन, यात्रा, मृत्यु आदि अशुभ या पीडाजनक व्यापार। साहित्यदर्पण मे लिखा है —

दूराह्वानं वधो युद्धं राज्यदेशादिविप्लवः ।
विवाहो भोजनं शापोत्सर्गो मृत्यूरतं तथा ।
दन्तच्छेद्यं नखच्छेद्यमन्यद् व्रीडाकरं च यत् ।
शयनाधरपानादि नगराद्यवरोधनम् ।
स्नानानुलेपने चैभिर्वर्जितो नातिविस्तरैः ।।

सर्वश्राव्य या प्रकाश

रगमच पर कथोपकथन मे पात्र की कथावस्तु को तीन तरह से व्यवहार मे लाते है (१) जो बात सब के सामने कही जाय उसे **सर्वश्राव्य या प्रकाश** कहते हैं।

(२) जो दूसरे पात्रो के सुनने योग्य न होकर केवल अपने ही सुनने योग्य हो और उसे वह पात्र अपने मन के लिये कहे वह **स्वगत** या **अश्राव्य** है। (३) जो केवल कुछ पात्रो के सामने कही जा सके वह **नियतश्राव्य** है। (४) नियत श्राव्य मे ही जब दो पात्र हाथ की ओट करके बात करते है तो उसे **जनान्तिक** तथा (५) जब कोई पात्र मुँह फेर कर दूसरे पात्र की गुप्त बात कहता है तो उसे **अपवारित**। (६) और जब आकाश की ओर देखकर किसी से बातचीत करने का अभिनय करते हुए कोई अपने प्रश्न-उत्तर दोनो कहता चला जाता है उसे **आकाशभाषित** कहते है।

कथावस्तु

नाटक की सफलता के लिये उसके तीन प्रमुख तत्त्व कथावस्तु, नायक और रस का भली भाँति निर्वाह कवि को करना चाहिये। काव्य के नवो रसो मे शान्तरस को छोडकर आठ रस नाटक मे व्यवहृत होते है। वीर या शृङ्गार रस की प्राय नाटक मे प्रधानता होती है। नायक के चार भेद पहले ही बताये जा चुके है। वे है धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और धीर-प्रशान्त।

कथावस्तु दो प्रकार की होती है—मुख्य कथावस्तु और उसकी अगभूत कथावस्तु। जिससे मुख्य कथा के विकास मे सहायता मिलती है उसको क्रमश **आधिकारिक** और **प्रासङ्गिक** कथावस्तु कहते है। प्रासङ्गिक कथावस्तु भी प्रकार की होती है—एक वह जो मुख्य कथावस्तु के साथ दूर तक चलती रहती है और इसको **पताका** कहते है। दूसरी वह जो स्थान विशेष पर ही मुख्य कथावस्तु की सहायक होती है और इसे **प्रकरी** कहते है।

अर्थप्रकृति, अवस्था और संधियाँ

अर्थप्रकृति पाँच प्रकार की होती है —

बीजं बिन्दुः पताका च प्रकरी कार्यमेव च।
अर्थप्रकृतयः पञ्च ज्ञात्वा योज्या यथाविधि ॥

(१) **बीज**—मुख्य फल का कारणभूत कथाभाग जिसका पहले बहुत सक्षेप मे वर्णन किया जाता है और आगे वह क्रमश विस्तृत होता जाता है।

(२) **बिन्दु**—कारण बनकर आने वाली वह बात बिन्दु कहलाती है जिससे

समाप्त होने वाली अवान्तर कथा आगे बढती है और प्रधान कथा अविच्छिन्न बनी रहती है —

अवान्तरार्थविच्छेदे बिन्दुरच्छेदकारणम् ।

(३) **पताका**—वह प्रासङ्गिक कथावस्तु है जो दूर तक नाटक मे चलती रहे। यह वह प्रासङ्गिक इतिवृत्त है जो व्यापक हुआ करता है और प्रधान फल का महायक बना रहता है। साहित्यदर्पणकार ने लिखा है —

व्यापि प्रासङ्गिकं वृत्तम् पताकेत्यभिधीयते।

जैसे "बेणीसहार" मे भीमसेन सम्बन्धी वृत्तान्त अथवा "अभिज्ञानशाकुन्तल" मे विदूषक सबधी वृत्तान्त।

(४) **प्रकरी**—नाटक मे आये हुए उस प्रासगिक वृत्त को प्रकरी कहते है जो आधिकारिक वृत्त के साथ थोडी ही दूर तक सम्बद्ध हो।

प्रासङ्गिक प्रदेशस्थ चरितं प्रकरी मता ।

मुद्राराक्षस मे "प्रकरी" रूप अर्थ प्रकृति है ही नही। यहाँ यह अनावश्यक है।

(५) **कार्य**—कार्य का अर्थ फल है। जिस फल की प्राप्ति के वास्ते उपाय किया जाता है और जो साध्य होता है वह कार्य है—

अपेक्षितं तु यत्साध्यमारम्भो यन्निबन्धनः ।
समापनं तु यत्सिद्ध्यै तत्कार्यमिति समतम् ॥

अवस्था

फल के उद्देश्य से जो कार्य किया जाता है उसकी स्वभावत पाँच अवस्थाएँ होती है—(१) आरम्भ (२) प्रयत्न (३) प्राप्त्याशा (४) नियताप्ति (५) फलागम। साहित्यदर्पण मे लिखा है —

अवस्थाः पञ्च कार्यस्य प्रारब्धस्य फलार्थिभिः ।
आरम्भयत्नप्रत्याशा नियताप्तिफलागमाः ॥

१—जहाँ कार्य के आरम्भ की सूचना मिले। कार्य की सिद्धि के लिये नायक मे जो उत्सुकता होती है उसे **आरम्भ** कहते है।

भवेदारम्भ औत्सुक्यं यन्मुख्यफलसिद्धये।

२—कार्य को सिद्ध होता भ देखकर उसके वास्ते शीघ्रता से उपाय करना **प्रयत्न** है।

प्रयत्नस्तु फलावाप्तौ व्यापारोऽतित्वरान्वितः ।

३—उपाय और विघ्न दोनो के बीच की अवस्था जब दोनो की खीचातानी मे फलप्राप्ति का निश्चय न किया जा सके उसे **प्राप्त्याशा** कहते है —

उपायापायशङ्काभ्यां प्राप्त्याशा प्राप्तिसंभवः ।

४—**नियताप्ति**—विघ्न के नष्ट हो जाने से जहाँ फल-प्राप्ति का पूर्ण निश्चय हो जाय।

अपायाभावत· प्राप्तिर्नियताप्तिस्तु निश्चितः ।

५—**फलागम** वह कार्यावस्था है जिसे समग्र-फल-लाभ कहा गया है।

सावस्था फलयोगः स्याद्यः समग्रफलोदयः ।

सधियाँ

'अर्थप्रकृतिपञ्चक' रूप भेद के साथ अवस्था पञ्चक की क्रमिक सम्बद्ध योजना के कारण नाटकीय इतिवृत्त के जो पाँच भाग है, उन्हे ही पञ्चसधियाँ कहा करते है, उसके पाँच भेद है।

१—**मुखसंधि**—"आरम्भ" नामक अवस्था और "बीज" अर्थ प्रकृति का जहाँ सयोग होता है उसे **मुखसधि** कहते हैं।

२—**प्रतिमुखसंधि**—रूपक के प्रधान फल का साधक कथानक जिसमे कभी गुप्त और कभी प्रकट होता दिखाई दे उसे **प्रतिमुख संधि** कहते है।

३—**गर्भसंधि**—इस सधि मे प्रतिमुखसधि का कुछ आविर्भूत बीज बार-बार प्रकट, गुप्त और अन्वेषित होता रहता है।

४—**विमर्शसंधि**—वहाँ होती है जहाँ बीज के अधिक विस्तृत होने से उसके फलोन्मुख होने मे विघ्न उपस्थित होते है। इसमे नियताप्ति अवस्था और प्रकरी अर्थप्रकृति होती है।

५—**निर्वहणसंधि**—यह रूपक प्रबन्ध की वह अर्थराशि है, जिसमे उन सधियो मे यत्र तत्र उपन्यस्त बीजादि रूप इतिवृत्ताश प्रधान फल के निष्पादक बनते दिखाई दिया करते है।

साहित्यदर्पण मे पाँचो सधियो का लक्षण इस प्रकार दिया है —

यत्र बीजसमुत्पत्तिर्नानार्थरससम्भवा ।
प्रारम्भेण समायुक्ता तन्मुखं परिकीर्तितम् ॥
फलप्रधानोपायस्य मुखसधिनिवेशिन· ।
लक्ष्यालक्ष्य इवोद्भेदो यत्र प्रतिमुख च तत् ॥

फलप्रधानोपास्य प्रागुद्भिन्नस्य किञ्चन ।
गर्भो यत्र समुद्भेदो ह्रासान्वेषणवान्मुहुः ।।
यत्र मुख्यफलोपाय उद्भिन्नो गर्भतोऽधिकः ।
शापाद्यैः सान्तरायश्च स विमर्श इति स्मृतः ।।
बीजवन्तो मुखाद्यर्था विप्रकीर्णा यथायथम् ।
एकार्थमुपनीयन्ते यत्र निर्वहणं हि तत् ।।

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

चाणक्य—नायक, एक महान् राजनीतिज्ञ, मौर्य साम्राज्य को प्रतिष्ठापित करने वाला।

राक्षस—नन्द साम्राज्य का महामन्त्री, प्रतिनायक।

चन्द्रगुप्त—मौर्यवंश का पहला सम्राट्, चाणक्य का भक्त।

मलयकेतु—महाराज पर्वतक का पुत्र, महत्त्वाकांक्षी योद्धा, राक्षस का सहायक, चन्द्रगुप्त का प्रतिद्वन्द्वी।

चन्दनदास—पाटलिपुत्र का सेठ, महामात्य राक्षस का परम मित्र।

भागुरायण—एक राजकुमार, चाणक्य का गुप्तचर जो मलयकेतु का बनावटी मित्र है।

जीवसिद्धि (क्षपणक)—चाणक्य का मित्र व गुप्तचर, राक्षस का बनावटी मित्र।

सिद्धार्थक—चाणक्य का गुप्तचर, राक्षस का बनावटी सेवक।

सुसिद्धार्थक—सिद्धार्थक का मित्र, चाण्डाल वेष मे वेणुवेत्रक।

निपुणक—चाणक्य का गुप्तचर, राक्षस की मुद्रा को उडाने वाला।

विराधगुप्त—राक्षस का गुप्तचर, सँपेरा।

करभक—राक्षस का गुप्तचर।

भासुरक—कुमार मलयकेतु का अनुचर।

अन्य पात्र कञ्चुकी, दौवारिक आदि।

स्त्री-पात्र

शोणोत्तरा—मौर्य सम्राट् की प्रतीहारी।

विजया—मलयकेतु की प्रतीहारी।

कुटुम्बिनी—चन्दनदास की स्त्री।

श्रीविशाखदत्तप्रणीतम्

मुद्राराक्षसम्

प्रथमोऽङ्कः

धन्या केयं स्थिता ते शिरसि शशिकला किन्नु नामैतदस्या
नामैवास्यास्तदेतत् परिचितमपि ते विस्मृतं कस्य हेतोः ।
नारीं पृच्छामि नेन्दुं कथयतु विजया न प्रमाणं यदीन्दु-
र्देव्या निह्नोतुमिच्छोरिति सुरसरितं शाठ्यमव्याद्विभोर्वः ॥१॥

अन्वय—का इय धन्या ते शिरसि स्थिता ? शशिकला। एतत् अस्या नाम नु किम् ? अस्या नाम एव। तदेतत् ते परिचितमपि कस्य हेतो विस्मृतम् ? नारी पृच्छामि इन्दु न। यदि इन्दु प्रमाण न, विजया कथयतु। इति देव्या सुरसरितम् निह्नोतुमिच्छो विभो शाठ्य व. अव्यात्।

हिन्दी अनुवाद——(पार्वती शंकर से पूछती है) यह कौन सी सौभाग्यशालिनी स्त्री है जो तुम्हारे शिर पर बैठी है ? (शिव का उत्तर) यह तो शशिकला है। (पार्वती) तो क्या उसका वास्तविक नाम चन्द्रकला है। (शिव) क्या तुम भूल गई हो। इसका यह नाम ही है। यह तो तुम्हारा परिचित नाम है ! (पार्वती) मैं स्त्री को पूछ रही हूँ चन्द्रमा को नहीं। (शिव) तो मैं क्या बताऊँ ? यदि तुम्हें इस बात पर कि यह चन्द्रकला है, विश्वास नहीं है तो विजया ही (जो तुम्हारी सखी है) इसका नाम बतावे। इस प्रकार गङ्गा को पार्वती से छिपाने के इच्छुक शंकर का यह (प्रेमपूर्ण) कपट आप लोगो की रक्षा करे।

(*Goddess Parvati*) Who is the fortunate lady sitting on your head ? (*Shiva*) Sashikala (digit of the moon) (*Parvati*) Is it really the name of this lucky one ? (*Shiva*) It is the one well-known to you , have you forgotten her ? (*Parvati*) I ask about the woman not about the moon (*Shiva*) If you do not believe me let Vijaya answer May this craft of Shiva, desirous of concealing the heavenly stream (*Ganga*) from his consort, protect you

व्याख्या—पुरा किल भगीरथेन आकाशात् प्रवर्तिता गङ्गा शिवशिरसि निपतिता देवेन शिवेन पत्नीत्वेन अङ्गीकृता आत्मरूपेण तस्य जटामण्डले एव स्थिता। देवोऽपि तां शिरसि कृत्वा गृहं प्रत्यावर्त्तत। तदा शिरो विभूषयन्तीम् गङ्गामुद्दिश्य ईर्ष्याकवलिताऽन्तरा पार्वती तस्याः कुलशीलादि जिज्ञासमाना शङ्करमपृच्छत् का इयं धन्या सौभाग्यवती स्त्री जगद्गुरो अपि ते तव शिरसि स्थिता वर्त्तते। शिवस्तु इति कथयितुं नैच्छत् यत् "इयम् तव सपत्नी" अतः गङ्गां निह्नोतुकामः स अकथयत् "इयम् शशिकला" चन्द्ररेखा। पुनः सा अपृच्छत्—किमस्याः सुभगायाः नामाभिधानमेवैतत्। ततः शिवः प्रतारयन्नाह अस्याः मम शिरसि स्थितायाः चन्द्रकलायाः शशिकला इति नाम एव। ननु पृच्छामि तत् प्रसिद्धम् नाम ते परिचितमपि सुविदितमपि कस्मात् कारणात् अद्य विस्मृतम्। नारी रमणी पृच्छामि इन्दुं न चन्द्रं न तर्हि प्रियां प्रसादयन् निगूहितगंगाभावो भृशं मनसि प्रहृष्यन् शंकरः कथयति, यदीन्दुः अयं यस्य शशिकलेति मद्वचो न प्रमाणं न विश्वासावहम् तर्हि भवत्याः सखी विजया एव पृच्छ्यताम् सैव कथयतु यत् शशिकलेति इन्दोर्नाम न वा। इति एतत् उक्तरूपम् देव्याः पार्वत्याः सुरसरितं देवनदीं गङ्गां निह्नोतुमिच्छोः गोपयितुकामस्य विभोः शिवस्य शाठ्यं कैतवं वः युष्मान् रक्षतु इति सामाजिकान् प्रति आशीर्वचनम्।

टिप्पणी

(१) **नांदी**—उन आशीर्वादात्मक श्लोकों या पद्यों को नांदी मंगलाचरण कहते हैं जिन्हें सूत्रधार नाटक के आरम्भ करने से पहले पाठ करता है। नांदी चार प्रकार की होती है—नमस्कृति, माङ्गलिकी, आशीः तथा पत्रावली। घटना का कुछ आभास देने के कारण इस नाटक की नान्दी पत्रावली है। (२) **मुद्राराक्षस**—यह नाटक का नाम है। मुद्रा—मुहर seal। राक्षस—नन्द का प्रधान मंत्री है। इस नाटक में मुद्रा के द्वारा राक्षस को फाँसा गया है अतः इसका नाम मुद्राराक्षस हुआ। मुद्रया गृहीतः राक्षसः मुद्राराक्षसः (मध्यमपदलोपी समास)। मुद्राराक्षसम् अधिकृत्य कृतं नाटकम् इति मुद्राराक्षसम् मुद्राराक्षस+अण्। 'नाटकम्' का विशेषण होने के कारण यह नपुंसकलिंग हुआ। (३) **धन्या**—धनं लब्ध्वा। धन+यत्+टाप् स्त्रियाम्। भाग्यशालिनी। टीकाकार ढुण्ढिराज का कथन है कि "धन्या" शब्द ईर्ष्या के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। क्योंकि पार्वती तो शङ्कर जी के बाये भाग में आधे अङ्ग पर विराजती है और उनकी सौत गङ्गा

महादेव जी के सर पर विराजमान है। यह शब्द (धन्या) निन्दा-वाचक भी है, क्योकि पति के सिर पर बैठना स्त्री के लिए सर्वथा अनुचित है। (४) **परिचितमपि**—परि+चि+क्त कर्मणि वर्तमाने। अत यहाँ "ते" का प्रयोग हुआ है। 'क्तस्य च वर्तमाने' इति षष्ठी। (५) **कस्य हेतो**—किस कारण से। 'षष्ठी हेतुप्रयोगे' इति सूत्रेण अथवा 'सर्वनाम्नस्तृतीया च' इति सूत्रेण षष्ठी। (६) **नारी पृच्छामि नेन्दुम्**—इस नारी (जो तुम्हारे शिर पर है) के बारे मे पूछती हूँ न कि चन्द्रमा के विषय मे। (७) **इन्दुः प्रमाणम् न**—मेरी यह बात कि वह चन्द्रमा है अगर मान्य नही है तो (८) **देव्याः निह्नोतुम् इच्छो**—पार्वती मे छिपाने के इच्छक। यहाँ "ध्रुवमपाये" से पञ्चमी है। निह्नोतुम्—छिपाना। नि+ह्नु+तुमुन्। (९) **विभोः शाठ्यम्**—शङ्कर जी का कपट। शङ्कर जी ने गङ्गा को पार्वती से छिपाने के लिए यह व्यवहार किया। (१०) **अव्यात्**—रक्षा करे। अव्+लिङ (आशिषि)। यह स्रग्धरा छन्द है। छन्द का लक्षण—म्रभ्नैर्याना त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्'। इसमे वक्रोक्ति अलकार है।

अपि च—

पादस्याविर्भवन्तीमवनतिमवने रक्षतः स्वैरपातैः
संकोचेनैव दोष्णां मुहुरभिनयतः सर्वलोकातिगानाम्।
दृष्टिं लक्ष्येषु नोग्रां ज्वलनकणमुचं बध्नतो दाहभीते-
रित्याधाराऽनुरोधात् त्रिपुरविजयिनः पातु वो दुःखनृत्यम्॥२॥

अन्वय—आविर्भवन्तीम् अवने अवनति पादस्य स्वैरपातै रक्षत, सर्वलोकातिगाना दोष्णा मुहु सकोचेनैव अभिनयत, दाहभीते लक्ष्येषु ज्वलनकणमुचम् उग्रा दृष्टि न वध्नत, त्रिपुरविजयिन आधारानुरोधात् इति दु खनृत्य व पातु ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—अपने चरणो को स्वच्छन्द चलाने से, पृथ्वी को रसातल में धँस जाने की सम्भावना से सदा बचाते रहने वाले, अपनी भुजाओ को जो समस्त लोको का अतिक्रमण करने वाली है बार-बार संकुचित करके ही अभिनय करने वाले, (ससार के जलने के डर से) दृश्य पदार्थो पर अग्नि-स्फुलिगो को छोडने वाली भयानक दृष्टि को कही एक लक्ष्य पर न रखने वाले त्रिपुर-विजयी शङ्कर का वह ताण्डव जो केवल अभिनय के आधारो की रक्षा करते रहने के कारण स्वयं इस प्रकार कष्टमय बना हुआ है आप (दर्शको) का सदा कल्याण करे।

विशेष—इस दूसरे नान्दी पद मे नाटककार ने त्रिपुर-विजयी शिव के दु खसाध्य ताण्डव मे चरितनायक चाणक्य के नीति-ताण्डव की सूक्ष्म अभिव्यक्ति की है। इस पद मे यह दिखाया गया है कि जिस प्रकार क्रोधित होने पर महादेव जी ने त्रिपुर का नाश कर दिया था उसी प्रकार चाणक्य ने भी क्रोध मे नवनन्दो का नाश कर दिया, पर शान्ति के समय जिस प्रकार महादेव जी सब के रक्षार्थ कष्ट-नृत्य करते है उसी प्रकार क्रोध शान्त होने पर चन्द्रगुप्त के राज्य को दृढ करने के लिए राक्षस को मिलाने के लिए कष्टसाध्य कार्य को चाणक्य ने शान्ति से अपनी कूटनीति द्वारा सफल किया।

May the dance of Shiva uncomfortable due to his regard for the arena, protect you In the dance, the conqueror of Tripura avoided imminent subsidence of the earth by light treads of his feet, acted with the shortening of his arms which outreached all the worlds and did not fix his grim eye, that emitted sparks of fire, on objects that are seen, for he feared that the whole world would be burnt

संस्कृत व्याख्या—आविर्भवन्तीम् उत्पत्स्यमानाम् अवने पृथिव्या अवनति अधोगमन पादस्य स्वैरपातै आत्मकलनया विन्यासै न तु ताण्डवरीत्या पातै रक्षत परिहरत सर्वलोकातिगानाम् सर्वान् लोकान् अतिक्रम्य गच्छताम् जिगमिषता वा दोष्णा भुजानाम् मुहु प्रतिक्षण सकोचेनैव निरुद्धप्रसारेणैव न तु ताण्डवोचितप्रसारेण अभिनयत हस्ताभिनयकार्य कुर्वत लोकान्तरमनुरुन्धानस्य दाहभीते नयनकिरणात् अभिज्वलन् शङ्कया अर्थात् दृष्टिपथमायातानि समग्रभावजातानि मा भूवन् भस्मसात् इति धिया लक्ष्येषु दर्शनविषयेषु ज्वलनकणमुचम् ज्वलनकणान् मुञ्चति या तादृशीम् अतएव उग्राम् घोरा दृष्टि न बध्नत न स्थिर निक्षिपत त्रिपुरविजयिन त्रिपुरान्तकस्य आधारानुरोधात् रङ्गभूमे ब्रह्माण्डोदरस्य अनुरोधात् अपेक्षया ब्रह्माण्डम् पूर्णताण्डवस्य अपर्याप्तमितिहेतो दु खनृत्यम् विकलताण्डव व पातु रक्षतु। शिवस्य रौद्र रसमभिनयत महानटस्य दु खनृत्यम् नियन्त्रिताङ्गहारादिस्वाच्छन्द्य कृच्छ्रसाध्य नटन व सामाजिकान् पातु दौर्मनस्यादिकचिन्तासन्तापाद्रक्षत्विति भाव ।

टिप्पणी

(१) **आविर्भवन्तीम्**—आविस्+भू+'वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा' इति सूत्रण भविष्यदर्थे लट्—शतृ स्त्रिया ङीप्। **जायमानाम्**—उत्पन्न होने वाली। यह अवनतिम् का विशेषण है। (२) **रक्षतः**—रक्षा कुर्वत —रक्षा करने वाले (शकर का) (३) **स्वैरपातैः**—स्व ईर येषु ते स्वैरा तादृशा पाता तै

स्वैरपातै—सभालकर पैर रखने से, या धीरे रखते हुए, "मन्दस्वच्छन्दयो स्वर" इत्यमर । यहाँ पर करणे तृतीया है । (४) **संकोचेन एव**—एव शब्द से ज्ञात होता है कि बाहुओ का पूरा-पूरा फैलाना असभव था । संकोच से ही । जैसा कि एक टीकाकार ने लिखा है—सक्षेपेणैव व्यावर्तनेनैव नतु ताण्डवोचितप्रसारेण असकोचे तु भुजदण्डाभिघातेन विश्वमेव विनश्येदिति भाव । यदि हाथो को सभाल कर अभिनय न करते तो शायद सारा ससार भुजदण्ड के चोट से नष्ट हो जाता । (५) **दोष्णाम्**—बाहुओ का । यह भुजावाची दोष् शब्द के षष्ठी-बहुवचन का रूप है । (६) **अभिनयतः**—अभिनय करते हुए । अभि+नी+शतृ । (७) **दाहभीते**—दाहात् भीति (पञ्चमी तत्पु०) तस्या दाहभीते—जल जाने के भय से । हेतौ पञ्चमी 'विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्' इति सूत्रेण । (८) **सर्व-लोकातिगानाम्**—सर्वे लोका सर्वलोका तानि अतिगच्छन्ति तेषाम् । सर्वलोक +अति+गम+ड कर्त्तरि—सारे ससार को अतिक्रमण करने वाले । यह दोष्णाम् का विशेषण है । (९) **ज्वलकणमुचम्**—यह "दृष्टिम्" का विशेषण है—अग्निकणो को उगलने वाली । ज्वलकण+मुच्+क्विप् कर्त्तरि ताम् । (१०) **त्रिपुर-विजयिनः**—त्रिपुरस्य विजयिन इति त्रिपुरविजयिन । त्रिपुरासुर को विजय करने वाले (शकर का) त्रिपुरासुर स्वर्ग, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी पर तीन नगर बनाकर रहता था । शकर ने इन नगरो को जलाकर त्रिपुर-सहार किया था । (११) **आधारानुरोधात्**—आधारस्य अनुरोधात् । आधार के अनुरोध के कारण । अर्थात् नृत्य के आधारो की रक्षा करते हुए । शकर जी के नृत्य का आधार सारा ब्रह्माण्ड है । आध्रियते अस्मिन् अनेन वा । आ+धृ+घञ् । अनुरोधात् मे "हेतौ पञ्चमी" है (१२) **दुःखनृत्यम्**—दु खयति इति दु खम् । दु ख+णिच्+अच् (पचाद्यच्) दु खम् नृत्यम्—दु ख पूर्ण नृत्य । 'स्वैरपात' शब्द से सूचित होता है कि शकर जी को पादक्षेप करने मे असुविधा है । "सकोच" शब्द से सूचित होता है कि हस्तविक्षेप मे भी "कष्ट" है । "दृष्टेरबन्धनम्" से पता चलता है कि वे पूरी तौर से देखते भी नही । शकर जी को दृष्टिपात करने मे भी सकोच है । अत यह नृत्य हर प्रकार से दु खप्रद है । अमात्य राक्षस का विफल होना दु खनृत्य है । जैसा कि राक्षस स्वय कहता है "विपर्यस्त सौधम्" (६–११) 'द्रव्यम् विजिगीषुमधिगम्य" (७–१४) । आधार मलयकेतु है । कुछ टीकाकार ऐसा भी अर्थ करते है कि आधार राक्षस है और दु खनृत्य चाणक्य का कार्य है,

क्योकि उसे राक्षस की रक्षा करते हुए सब काम करने पडे थे। अत उसका प्रयत्न दु खनृत्य कहा गया है। इस श्लोक मे स्रग्धरा छन्द है। सबधरूपातिशयोक्ति अलकार है।

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः—अलमतिप्रसङ्गेन। आज्ञापितोऽस्मि परिषदा यथा "अद्य त्वया सामन्तवटेश्वरदत्तपौत्रस्य महाराजपदभाक्पृथुसूनोः कवेर्विशाखदत्तस्य कृतिः अभिनवं मुद्राराक्षसं नाम नाटकं नाटयितव्यम्" इति यत्सत्यं काव्यविशेषवेदिन्यां परिषदि प्रयुञ्जानस्य ममापि सुमहान् परितोषः प्रादुर्भवति। कुतः—

हिन्दी अनुवाद—(नान्दी के बाद) सूत्रधार—अधिक विस्तार की आवश्यकता नही है। परिषद से मुझे आज्ञा मिली है कि आज तुम सामन्त वटेश्वरदत्त के पौत्र और महाराज की उपाधि से भूषित पृथु के पुत्र विशाखदत्त कवि की नई कृति मुद्राराक्षस नामक नाटक का अभिनय करो। "सच है जो सभा काव्य के गुण और दोष को (विशेषता को) समझती है उसके सामने अभिनय करते हुये मेरा भी चित्त अति संतुष्ट होता है। क्योकि :—

(After the Nandi)—*Stage Manager*—Enough of excessive talk I have been ordered by the assembly, "The new drama entitled the Mudrarakshas, the work of the poet Vishakhadatta, the son of Vateshwardatta, has to be staged by you today" Really, I find much pleasure in acting before an audience which knows the techniques of poems For—

सस्कृत व्याख्या—नान्द्यन्ते नान्द्या मङ्गलाचरणस्य अन्ते समाप्ते सूत्रधार नटाना नेता आह—अतिप्रसङ्गेन बहुभाषणेन अलम् पर्याप्तम्। परिषदा समागतेन सामाजिकजनेन आज्ञापितोऽस्मि कथितोऽस्मि सामन्तवटेश्वरदत्तस्य पौत्रस्य तथा महाराजपदभाक्पृथुसूनो महाराजोपाधि य भजते तस्य पृथो पृथुनामकस्य सामन्तभूपते य सूनु आत्मज तस्य कवे विशाखदत्तस्य कृति रचना अभिनवम् नवीनम् मुद्राराक्षस नाम नाटकम् नाटयितव्यम् अभिनेतव्यम् यत् सत्यम् तथ्यम् काव्यविशेषवेदिन्या काव्यस्य विशेषम् उत्कर्ष या वेत्ति जानाति तस्या परिषदि सभायाम् प्रयुञ्जानस्य प्रयोक्ष्यमाणस्य ममापि सुमहान् भूयान् परितोष आनन्द **प्रादुर्भवति** जायते कुत यतो हि।

टिप्पणी

(१) **नान्द्यन्ते**—नन्दयतीति नन्द । नन्द एव नान्द नन्द+अण् (स्वार्थे) । नान्द+ङीप् नान्दी । नान्द्या अन्त तस्मिन् नान्द्यन्ते । 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' इति सूत्रेण भावे सप्तमी । नान्दी की परिभाषा भूमिका मे देखिये । नान्दी इसलिए की जाती है कि नाटक की समाप्ति निर्विघ्न हो जाय । यह देवता की स्तुति है । नान्दी का लक्षण है— "देवद्विजनृपादीनामाशीर्वादपरायणा । नन्दन्ति देवता यस्मात्तस्मान्नान्दी प्रकीर्त्तिता" । इसका प्रयोजन है "तथाप्यवश्य कर्त्तव्यम् नान्दी विघ्नोपशान्तये" । (२) **सूत्रधारः**—रगशाला का व्यवस्थापक । सूत्र धारयति इति सूत्र+धृ+णिच्+अण् कर्तरि । (३) **अतिप्रसङ्गेन अलम्**—अधिक विस्तार रहने दो । "अल योगे तृतीया" से तृतीया है । प्रसञ्जनमिति प्रसङ्ग —प्र+सज्+घञ् भावे । अतिशयित प्रसङ्ग अतिप्रसङ्ग (प्रादि तत्पुरुष समास) किसी विषय पर अधिक कहना अतिप्रसङ्ग है । (४) **आज्ञापित**—आ+ज्ञा, पुक्+णिच्+क्त—आदेश दिया गया है । (५) **परिषदा**—परिषद् से । परि+पद्+क्विप् तृतीया—एकवचन । (६) **काव्यविशेषवेदिन्याम्**—काव्य की विशेषता जानने वाली (परिषद्) यह परिषदि का विशेषण है । काव्यस्य विशेष वेत्तीति तस्या काव्यविशेषवेदिन्याम् । विशेष+विद्+णिनि (प्रत्यय)+ङीप् । (७) **प्रयुञ्जानस्य**—नाटक कुर्वत —अभिनय करते हुए (का) । प्र+युञ्ज्+लट्—शानच् ।

चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः ।
न शालेः स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते ।।३।।

अन्वय—बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषि चीयते, शाले स्तम्बकरिता वप्तु गुणम् न अपेक्षते ।

हिन्दी अनुवाद—मूर्ख का भी अच्छे खेत मे डाला हुआ बीज वृद्धि को प्राप्त होता है । घने गुच्छे बन-बन कर उपजने वाले धान के बीज किसान के गुण (या अवगुण) पर नही निर्भर रहते ।

Seeds sown, even by a fool, in a good soil thrive The growth of paddy in clusters does not depend upon the skill of the sower

संस्कृत व्याख्या—बालिशस्यापि मूर्खस्यापि कृषकस्य सत्क्षेत्रपतिता उदारे क्षेत्रे पतिता प्रयुक्ता (सती) कृषि लक्षणया बीज चीयते वर्धते शाले धान्य-

विशेषस्य स्तम्बकरिता स्तोमीभवनयोग्यता निविडभवन वा वप्तु बीजनिक्षेपकर्तु गुण कृषिपाण्डित्यादिक न अपेक्षते नाकाङ्क्षते प्रत्युत स्वयमेव क्षेत्रसम्पदा समृद्धिमती भवतीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **बालिशस्य**—मूर्खस्य अर्थात् कृषि कर्म न जानने वाले किसान का। वाड्+इन्, बाडि श्यति इति बाडि+शो+ड, डलयोरभेद =बालिश, तस्य। (२) **सत्क्षेत्रपतिता कृषि**—उत्तम खेत मे बोई हुई (खेती) अर्थात् बीज। (३) **चीयते**—वर्धते—बढती है। (४) **शाले**—एक प्रकार का (जडहन) धान। (५) **स्तम्बकरिता**—गुच्छे बन-बन कर उपजना। स्तम्ब करोतीति—स्तम्ब+कृ+इनि स्तम्बकरि तस्य भाव स्तम्बकरि+तल्+टाप्। इसमे अर्थान्तिरन्यास अलङ्कार है और पथ्यावक्त्र छन्द है। छन्द का लक्षण—'युजोश्चतुर्थतो येन पथ्यावक्त्र प्रकीर्तितम्'।

तद्यावदिदानीं गृहं गत्वा गृहिणीमाहूय गृहजनेन सह सङ्गीतकमनुतिष्ठामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) इमे नो गृहाः। तद्यावत् प्रविशामि। (नाट्येन प्रविश्यावलोक्य च) अये, तत् किमिदमस्मद्गृहेषु महोत्सव इव दृश्यते। स्वस्वकर्मणि अधिकतरमभियुक्तः परिजनः। तथाहि—

हिन्दी अनुवाद—तो अब मै घर जाकर स्त्री को बुलाकर घर के लोगों के साथ गाने बजाने का आयोजन करता हूँ। (चारो ओर घूमकर और देखकर) यही मेरा घर है। तो इसमें मै प्रवेश करता हूँ। (भीतर प्रवेश करने का अभिनय करके और देख-दाख कर) अहा! आज मेरे घर में यह कैसा बड़ा उत्सव दिखाई पड़ रहा है। सभी परिजन अपने-अपने काम में तल्लीन है। क्योकि—

So I shall go home, summon my wife, and commence music with the house-hold servants (Going home and observing) This is my house, I shall go inside (Acting entry and observation) Oh ! what is this ? It seems that there is a great festival in my house The servants are busily engaged in their respective duties, For—

संस्कृत व्याख्या—तत् तस्मात् इदानी सम्प्रति गृह वेश्म गत्वा गृहिणीम् स्त्रीम् आहूय गृहजनेन परिजनवर्गेण सह सङ्गीतकम् यावत् अनुतिष्ठामि आयोजयामि गीतवाद्यादिकमेव प्रवर्त्तयामीति भाव परिक्रम्य रगमच परित गत्वा अवलोक्य च दृष्ट्वा च इमे न अस्माकम् गृहा भवनानि तत् यावत् प्रविशामि

अन्तर्गच्छामि। (नाट्येन प्रविश्य प्रवेश नाटयित्वा अवलोक्य दृष्ट्वा च आह) अये, तत् किम् इदम् अस्मद्गृहेषु मम वेश्मनि महान् उत्सव· इव दृश्यते यत परिजनः भृत्यवर्ग स्वस्वकर्मणि निजकार्ये अधिकतरम् अत्यन्तम् अभियुक्त. सलग्न तथाहि अभिनिवेशाधिक्यादेव —

टिप्पणी

(१) **गृहिणीम्**—गृहमस्या अस्तीति गृह+इति (मत्वर्थे)+ङीप्=गृहिणी, ताम्—पत्नी को। यह आहूय का कर्म है। (२) **गृहजनेन**—यहाँ "जन मे" जातौ एकवचनम् से एकवचन है। गृहस्थ जन गृहजन "शाकपार्थिवादि" समास है। घर वालो के साथ। (३) **संगीतकम्**—सम्+गै+क्त भावे सगीतम्, सगीतमेव सगीतकम् स्वार्थे कन्। नृत्य, गीत तथा वाद्य को सगीत कहते हैं। 'गीत वाद्य नर्तन च त्रय सगीतमुच्यते'। (४) **गृहाः**—गृह शब्द नपुसक मे एकवचन होता है परन्तु पुलिङ्ग मे बहुवचन होता है। "गृहा पुसि च भूम्न्येव" इत्यमर। (५) **स्वस्वकर्मणि**—अपने-अपने काम मे। यहाँ पर अधिकरणे सप्तमी है। (६) **अभियुक्त.**—सलग्न है—अभि+युज्+क्त कर्त्तरि।

वहति जलमियं पिनष्टि गन्धा-
नियमियमुद्ग्रथते स्रजो विचित्राः।
मुसलमिदमियञ्च पातकाले
मुहुरनुयाति कलेन हुंकृतेन ॥४॥

अन्वय—इय जल वहति इय गन्धान् पिनष्टि इय विचित्रा स्रज उद्ग्रथते इय च पातकाले मुहु· कलेन हुकृतेन इदम् मुसलम् अनुयाति।

हिन्दी अनुवाद—एक (दासी) तो इधर जल ला रही है, दूसरी उधर सुगंधित मसालो को पीस रही है, कोई रंग-बिरगी सुन्दर मालाये गूँथ रही है और उधर कोई मीठी हुंकार सी भरती हुई खल में मूसल के गिरने के साथ-साथ अपनी धुन मे लगी दिखाई दे रही है।

Some one is carrying water, some one is pounding spices, the other is preparing speckled wreaths, and one is always accompanying, with a sweet 'hum' that pestle when it is dropped down.

संस्कृत व्याख्या—इयम् एका जल पानीयम् वहति आनयति इयम् अपरा गधान् पिनष्टि अधिवासद्रव्याणि चूर्णयति इयम् काचित् विचित्रा अनेकवर्णा स्रज पुष्पमाल्यानि उद्ग्रथते उद्ग्रथ्नाति रचयति इयम् च अन्या पातकाले (उलूखले) पतनसमये मुहु वारवार कलेन मधुरास्फुटेन हुङ्कृतेन हुमिति ध्वनिना सह इदम् दृश्यमानम् मुसलम् अनुयाति अनुसरति ।

टिप्पणी

(१) **इयम्**—यहाँ बार-बार इयम् का प्रयोग है । इसका अर्थ है एक, कोई, दूसरी, एक माला बना रही है, दूसरी जल ला रही है कोई सुगधित द्रव्य पीस रही है आदि (२) **गन्धान्**—सुगधित द्रव्य या पदार्थो को । यह पिनष्टि का कर्म है । "गधो गन्धक आमोदे लेशे सबधगर्वयो । स एव द्रव्यवचनो बहुत्वे पुसि च स्मृत" इति विश्व (३) **उद्ग्रथते**—गूँथ रही है । उद्+ग्रथ्+लट् ते (४) **विचित्रा**—अनेकवर्णा—अनेक रग की । (५) **पातकाले**—पतनोत्पतन-काले—(मूसल के ओखरी मे) गिरने के समय । (६) **हुंकृतेन अनुयाति**—हुम्+कृ+क्त भावे=हुकृतम्, तेन । सहार्थे तृतीया । हु शब्द के साथ अनुसरण कर रही है । जब-जब उलूखल मे मूसल गिरता है तब-तब वह भी हु शब्द का उच्चारण करती है । भाव यह है कि हु हु करती हुई कुछ वस्तु कूट रही है । इसमे पुष्पिताग्रा छन्द है और स्वभावोक्ति अलकार है । छन्द का लक्षण —'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा' ।

भवतु । कुटुम्बिनीमाहूय पृच्छामि । (नेपथ्याभिमुखमवलोक्य)

गुणवत्युपायनिलये स्थितिहेतोः साधिके त्रिवर्गस्य ।
मद्भवननीतिविद्ये कार्याचार्ये द्रुतमुपेहि ।।५।।

अन्वय—गुणवति उपायनिलये स्थितिहेतो त्रिवर्गस्य साधिके कार्याचार्ये मद्भवननीतिविद्ये द्रुतम् उपेहि ।

हिन्दी अनुवाद—जो हो (घर से) स्त्री को बुलाकर पूछता हूँ (नेपथ्य की ओर देखकर) हे गुणवती, सब उपायो को जानने वाली, संसार-यात्रा के लिये मेरे त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम) की साधने वाली, मेरे घर की नीति विद्या स्वरूप और कार्य का उपदेश करने वाली शीघ्र आओ ।

However, I shall call my wife and ask her, (Looking towards the tiring room) O, the virtuous one, the store-house of

plans, the giver of the group of three (धर्म, अर्थ, काम) which is the very cause of existence, the adviser of duties, and the science of politics of my house, come quickly

संस्कृत व्याख्या—कुटुम्बिनीम् पत्नीम् आहूय पृच्छामि सैव तथ्य कथयिष्यति नेपथ्यस्य वेषरचनास्थानस्य अभिमुख दृष्ट्वा हे गुणवति दयादाक्षिण्यादिभूषिते, हे उपायनिलये उपायाना गृहकार्यपाटवादीना निलये निवासभूते, स्थितिहेतो गृहस्थाश्रमस्थिते यो हेतु कारणम् तस्य त्रिवर्गस्य धर्मकामार्थरूपस्य साधिके निर्वाहयित्रि, हे कार्याचार्ये कार्यस्य कर्तव्यस्य आचार्ये उपदेष्ट्रि, अतएव हे मद्भवनस्य मद्गृहस्य नीतिविद्ये नयशास्त्रस्वरूपे, द्रुतम् शीघ्रम् उपेहि आगच्छ।

टिप्पणी

नाटककार यहाँ सूत्रधार के द्वारा नटी के बुलाने मे वस्तुत चरितनायक चाणक्य द्वारा उसकी चिरसगिनी कूटनीति को कितनी सुन्दरता से उद्भावित कर रहा है। और आह्वान मे कैसा विचित्र और मार्मिक व्यङग्य छिपा हुआ है। इस नाटक मे चाणक्य की कोई नायिका नही। उसका सबध तो केवल राजनीति से है। उसका गृहस्थ जीवन स्वार्थ-साधन के लिये नही लोक-कल्याण के लिये है। उसकी राजनीति मे सधि, विग्रह, अभियान, आसन, सश्रय और द्वैधीभाव के छ गुण वर्तमान है। साम, दान, दण्ड और भेद के सभी उपाय भरे हैं, धर्म, अर्थ और काम की सभी सिद्धियाँ भरी हुई है। (१) **कुटुम्बिनीम्**—कुटुम्बमस्ति अस्या इति कुटुम्बिनी ताम्। कुटुम्ब+इनि+ङीप्। स्त्री को। (२) **गुणवति**—गुण+मतुप्+ङीप्—गुणवती तत्सम्बोधने। गुणो से युक्त। स्त्री के छ गुण सुभाषित मे इस प्रकार गिनाये है—कार्येषु मत्री, वचनेषु दासी, भोज्येषु माता, शयनेषु रभा। धर्मानुकूला क्षमया धरित्री भार्या च षड् गुण्यवतीह दुर्लभा। राजनीति के भी इसी प्रकार छ गुण है—सधि, विग्रह, आसन, यान, द्वैध और आश्रय। यान-चढाई। आसन—अच्छा मौका पाने या निर्बलता को दूर करने के लिए रुकना। द्वैध-मुख्य उद्देश्य को गुप्त रखकर दूसरा प्रकट करना। आश्रय-प्रबल की सहायता लेना। ये छ गुण राजनीति के है। शरद् मे जल प्रसाद रूपी गुण है। (३) **उपायनिलये**—उप+इ वा अय्+घञ्=उपाया। उपाया निलीयन्ते अस्याम् इति उपाय-नि-ली+अच् अधिकरणे स्त्रियाम्+टाप्=उपायनिलया, तत्सम्बोधने हे उपायनिलये-उपायो की आश्रय

कार्यों के साधन को जानने वाली। नीति विद्या के पक्ष मे चार उपाय है सामन्, दान, दण्ड, भेद। शरद् ऋतु मे जयेच्छा का उत्पन्न होना। (४) **स्थितिहेतोः**—ससार यात्रा के लिए त्रिवर्ग को साधने वाली। अर्थात् सासारिक व्यापार अर्थ, धर्म, और काम को साधने वाली राजनीति। त्रिवर्ग क्षय, स्थान और वृद्धि को कहते है। शरद् ऋतु विजय का अवसर देकर अर्थ तथा उसे पूरा कर धर्म और काम को साधती है। (५) **कार्याचार्ये**—कर्त्तव्यो का उपदेश करने वाली। शरद् पक्ष मे युद्धयात्रादि कार्यों की प्रवर्त्तिका। (६) **मद्भवननीतिविद्ये**—अस्मद्भवनस्य रङ्गमन्दिरस्य या नीतिविद्या अभिनयादिकला तत्स्वरूपभूते। रङ्ग मन्दिर की (हमारे घर की) नीतिविद्या स्वरूप। (७) **द्रुतम्**—जल्दी। (८) **उपेहि**—उप+आ+इण् (गतौ)+लोट् (आज्ञा)। आओ। इस प्रकार भार्या, नीतिविद्या, तथा शरद् तीन पक्षो मे इस श्लोक का अर्थ घटाया गया है। पहले मे सूत्रधार अपनी स्त्री को प्रशसापूर्वक बुलाता है। दूसरे से राक्षस को पकडने की नीतिविद्या का आमत्रण किया जाता है और तीसरे से तृतीय अङ्क मे उल्लिखित शरद् का आगम दिखाया जाता है। यहाँ आर्या छन्द है और अर्थालकार है। छन्द का लक्षण—'यस्या पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या'।

(प्रविश्य)

नटी—अज्ज, इअम्हि। अण्णाणिओएण मं अज्जो अणुगेह्लदु। (आर्य, इयमस्मि। आज्ञानियोगेन मामार्योऽनुगृह्णातु।)

सूत्रधारः—आर्ये, तिष्ठतु तावदाज्ञानियोगः। कथय किमद्य भवत्या तत्रभवतां ब्राह्मणानामुपनिमन्त्रणेन कुटुम्बकमनुगृहीतमभिमता वा भवनमतिथयः सम्प्राप्ता यत एष पाकविशेषारम्भः।

नटी—अज्ज, आमन्तिद मए भअवन्तो बह्मणा। (आर्य, आमन्त्रिता मया भगवन्तो ब्राह्मणाः।)

सूत्रधारः—कथय कस्मिन्निमित्ते।

नटी—उवरज्जदि किल भअवं चन्दो त्ति। (उपरज्यते किल भगवान् चन्द्र इति।)

सूत्रधारः—आर्ये, क एवमाह।

नटी—एवं खु णअरवासि जणो मन्तेदि। (एवं खलु नगरवासी जनो मन्त्रयते।)

हिन्दी अनुवाद (प्रवेश कर)—नटी—आर्य, यह मैं हूँ। आज्ञा देकर आर्य मुझे अनुगृहीत करें।

सूत्रधार—आर्ये, आज्ञा अभी रहने दो। पहले बताओ तो ब्राह्मणो को न्यौता देकर तुमने आज कुटुम्ब के लोगो पर क्यो अनुग्रह किया है या यह तो नही है कि अतिथि लोग घर में पधारे हो जिससे यह नाना प्रकार के भोजन बनाये जा रहे हैं।

नटी—आर्य, आज मैंने ब्राह्मणो को न्यौता दिया है।

सूत्रधार—क्यो? बात क्या है?

नटी—सुना है, चन्द्रग्रहण लगने वाला है।

सूत्रधार—यह तुमसे किसने कहा?

नटी—नगर के सभी निवासी ऐसा कह रहे है।

(Entering) *Nati*—Arya, here I am Let you favour me by giving command for work

Stage Manager—Let command for work be postponed Tell me why you have shown favour to the house-hold by inviting worthy Brahmans, or is it that respectable guests have come and therefore this special preparation for cooking is going on

Nati—Noble Sir, I have invited Brahmans to-day

Stage Manager—Tell me what for ?

Nati—I have heard that the lunar eclipse is to take place

Stage Manager—Dear, who has told you this ?

Nati—All the people, living in the city, say so

संस्कृत व्याख्या—प्रविश्य रङ्गमञ्चमागत्य नटी सूत्रधारगृहिणी प्राह आर्य इयमस्मि एषा अहम् आगता आर्य मान्यो भवान् माम् आज्ञानियोगेन—आज्ञा दत्त्वा अनुगृह्णातु ममोपरि अनुग्रह करोतु। सूत्रधार प्राह आज्ञानियोग तावत् तत्काल तिष्ठतु आस्ता तत्कथा यातु इत्यर्थ। कथय अद्य भवत्या तत्रभवता माननीयाना ब्राह्मणानाम् निमत्रणेन निमत्रणदानेन कुटुम्बकम् पोष्यवर्ग अनुगृहीत किम् अथवा अभिमता आदरयोग्या अतिथय भवन गृह प्राप्ता समागता किम् यत यस्मात्कारणात् एष पाकविशेषारम्भ विशिष्टभोजनस्य रचना दृश्यते।

एना रचना दृष्ट्वा मन्ये ब्राह्मणा निमन्त्रिता अतिथयो वा प्राप्ता कथय कतमदेतयो । उपरज्यते राहुग्रस्तो भविष्यति ।

टिप्पणी

(१) **आर्य**—ऋ+ण्यत् कर्मणि=आर्य । स्त्री अपने पति को आर्य कहती है। पति अपनी पत्नी को आर्या कहता है। यही प्राचीन भारतीय पद्धति रही है। नाटक के नट एव नटी भी परस्पर आर्या तथा आर्य कहकर ही वात करते है। यह आदरसूचक सम्वोधन है। (२) **आज्ञानियोग**—आज्ञाया नियोग तृ० तत्पु० आज्ञा द्वारा काम मे लगाना। नि+युज्+णिच्+घञ् (भावे)। (३) **तत्रभवताम्**—उन (माननीय) लोगो का। आदरसूचक शव्द है। तत्रभवान्। तभवन्तम्—तत्रभवन्त। (४) **कुटुम्बकम्**—पोष्यवर्ग। कुटुम्बाना समूह इति कुटुम्बकम्। (५) **पाकविशेषारम्भः**—पाकस्य विशेष पाकविशेष तस्य आरम्भ पाकविशेषारम्भ—विशेष भोजन की तैयारी। (६) **उपरज्यते**—ग्रहणयुक्त हो रहा है, उपराग—ग्रहण। उप+रञ्ज्+घञ्। 'उपरागस्तु पुसि स्यात् राहुग्रासेऽर्कचन्द्रयो" इति विश्व ।

सूत्रधारः—आर्ये ! कृतश्रमोऽस्मि चतुःषष्ट्यङ्गे ज्योतिःशास्त्रे। तत् प्रवर्त्त्यतां भगवतो ब्राह्मणानुद्दिश्य पाकः। चन्द्रोपरागं प्रति तु केनापि विप्रलब्धासि। पश्य—

हिन्दी अनुवाद—सूत्रधार—आर्ये, मैंने चौसठो अङ्ग समेत ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन किया है। तुम ब्राह्मणो के निमित्त जो भोजन की तैयारी कर रही हो उसे करो। (इसमें मुझे कोई आपत्ति नही) परन्तु चन्द्रग्रहण की बात कह कर किसी न तुम्हें धोखा दिया है। देखो—

Stage Manager—Noble lady, I have studied all the sixty-four branches of astronomy Let the food be cooked for the Brahmans, but as regards the eclipse of the moon, you have been misled by some one For—

क्रूरग्रहः स केतुश्चन्द्रमसम्पूर्णमण्डलमिदानीम् ।
अभिभवितुमिच्छति बलात्—(इत्यर्द्धोक्ते)
आः, क एष मयि स्थिते—

(नेपथ्ये)

सूत्रधारः—रक्षत्येनं तु बुधयोगः ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—क्रूरग्रह केतु चन्द्रमा के अपूर्ण मण्डल को बलात् ग्रास करना चाहता है (इतनी आधी बात कहते ही) । आ मेरे रहते यह कौन है । (नेपथ्य में)
सूत्रधार—बुधयोग उसकी रक्षा कर रहा है ।

That wicked planet Ketu is now trying forcibly to overcome the moon the orb of which is not yet full (When half uttered) Ah, who is that while I am alive ? (in the dressing room) *Sutra*—But conjunction with Mercury (बुध) saves him

संस्कृत व्याख्या—आर्ये माननीये चतु षष्ट्यङ्गे चतु षष्टि अङ्गानि यस्य तादृशे कठिने ज्योति शास्त्रे कृतश्रम अस्मि कृताभ्यास अस्मि मया ज्योति - शास्त्र सम्यक् पठितमिति भाव अत कथयामि यत् चन्द्रोपराग प्रति चन्द्रग्रहण-विषये केनापि विप्रलब्धा प्रतारिता असि चन्द्रग्रहणमद्य नैव भविष्यति । किन्तु भगवतो ब्राह्मणान् उद्दिश्य पाक प्रवर्त्यताम् पाकनिर्माण कुरु ब्राह्मणान् भोजय । ब्राह्मणभोजन मया न निषिध्यते इति भाव ।

अन्वय—स क्रूरग्रह इदानीम् असम्पूर्णमण्डलम् चन्द्रम् बलात् अभिभवितुम् इच्छति, बुधयोग तु एनम् रक्षति ।

संस्कृत व्याख्या—स क्रूरग्रह असौ प्रसिद्ध दुष्टग्रह केतु अङ्गाङ्गिभावाल्ल-क्षणया राहुरित्यर्थ इदानीमद्य असम्पूर्णमण्डलम् असमग्रकलम् चन्द्रम् बलात् हठात् अभिभवितुम् ग्रसितुमिच्छति यतते न तु अभिभवति हि अद्य पौर्णमासी न चन्द्र अपूर्ण चन्द्रग्रहण तु पूर्णिमायामेव भवति । किन्तु बुधयोग बुधग्रहस्य सम्बन्ध एन चन्द्रमस सम्भाव्यमानोपराग रक्षति ग्रासान्मोचयति । पक्षान्तरे क्रूरग्रह चन्द्र-गुप्तम् अभिभवितुम् दुराग्रह मानस यस्य स राक्षस केतुना मलयकेतुना सह सधाय इदानीमस्मिन्नवसरेऽसम्पूर्णमण्डलम् अवशीकृतशेषराजवर्ग चन्द्र चन्द्र-गुप्तम् पराभवितुमिच्छति (एतमर्थमवलम्ब्य) कश्चित् नेपथ्ये अर्धोक्ते एव सूत्र-धारकथने सकोपमाह "आ क एष मयि स्थिते मामनादृत्य चन्द्रगुप्तम् अभि-भवितुमिच्छति" तत सूत्रधार समापयति । बुधयोग नयविद्याविशारदस्य कौटिल्यस्य राजराज्ययो कण्टकशोधनाद्युपायवर्ग एन चन्द्रगुप्त रक्षति त्रायते अर्थात् पराभवान्निस्तारयति । द्वितीयेन अर्थेन कथावस्तु उपक्षिप्त भवति ।

टिप्पणी

चन्द्रग्रहण केवल पूर्णिमा को होता है जब चन्द्रमण्डल पूरा रहता है । अपूर्ण

मण्डल होने के कारण पूर्णमासी को छोडकर अन्य तिथियो मे चन्द्रग्रहण नहीं होता। चन्द्रमा का ग्रहण करने वाला राहु है केतु नही। जिस पूर्णिमा को बुधयोग रहता है उसमे चन्द्रग्रहण नही हो सकता। ऐसी असभाव्य बातें लिख कर कवि यह कहना चाहता है कि केतु जबर्दस्ती असभव को सभव करना चाहता है। इस श्लोक मे श्लेष अलकार है। कवि केतु, असम्पूर्ण चन्द्रमण्डल और बुधयोग शब्दो से नाटक की ओर सकेत करता है। केतु से मलयकेतु, बुधयोग से नीतिविशारद, कौटिल्य और अपूर्णचन्द्रमण्डल से चन्द्रगुप्त जो अभी पूर्ण रूप से राज्य पर अधिकार नही कर पाया है, इगित है। यह अर्थ समझकर "कि राक्षस मत्री मलयकेतु से सधि करके चन्द्रगुप्त को दबाना चाहता है" चाणक्य नेपथ्य से ही बोल उठता है "आ मेरे रहते चन्द्र (गुप्त) को कौन दबा सकता है। इस श्लोक मे श्लेष अलकार है और आर्या छन्द है। (१) **चतुःषष्टिअङ्गे**—चतु षष्टि अङ्गानि यस्य तत् तस्मिन् (ब० व्री०) चौसठ अङ्गवाले। ज्योतिष शास्त्र के मुख्य तीन भेद है—गणित, फलित और होरा। इसके २४ अङ्ग और ४० उपाङ्ग है। परन्तु यहाँ पर अङ्गो और उपाङ्गो के भेद पर ध्यान नही दिया गया है। (२) **प्रवर्त्यताम्**—आयोजन करो। प्र+वृत्+णिच्+लोट्—ताम् कर्मणि कामचारानुज्ञायाम्। (३) **विप्रलब्धा**—प्रतारिता, धोखा दी गई। वि+प्र+लभ्+क्त+टाप्। (४) **क्रूरग्रह** —गृह्णाति रवितेजासि इति ग्रह । ग्रह+अच् कर्त्तरि। क्रूरश्चासौ ग्रहश्चेति क्रूरग्रह पापग्रह । दुष्टग्रह। पक्षान्तर मे इसका अर्थ होगा स राक्षस क्रूरग्रह क्रूर घोर ग्रह आग्रह चन्द्रगुप्तमभिभवितुमाग्रह. यस्य स क्रूरग्रह—दुराग्रही। (५) **सकेतु**—वही प्रसिद्ध केतु। जब समास कर देंगे तो "सकेतु केतुना सहित सकेतु अर्थात् मलयकेतु के साथ (सधि करके) राक्षस। पुराणो मे प्रसिद्ध है कि समुद्र-मथन के बाद अमृत बाँटे जाते समय विष्णु ने राहु को काट डाला क्योकि यह रूप बदल कर देवताओ के बीच मे बैठकर अमृत पी रहा था। पर सूर्य और चन्द्रमा ने यह भेद बता दिया और विष्णु ने उसे अपने चक्र सुदर्शन से काट दिया। पर अमृत पीने के कारण वह मरा नही। उसके दो टुकडे हो गए और शिर राहु कहलाने लगा तथा धड केतु। यही कारण है कि वह अपना बदला लेने के वास्ते समय-समय पर दोनो को ग्रसता है। इसी को ग्रहण कहते है। सूर्यग्रहण अमावस्या को तथा चन्द्रग्रहण पूर्णिमा को होता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस मे लिखा है—

"अजहुँ देत दुख रवि शशिहिं शिर अवशेषित राहु। टेढ जानि शका सब काहू वक्र चंन्द्रमहि ग्रसै न राहू।" (६) **चन्द्रम् असम्पूर्णमण्डलम्**—चन्द्रमा पक्ष मे इसका अर्थ होगा जो पूर्ण मण्डल वाला नही है। अपूर्णमण्डल चाँद मे ग्रहण नही लगता जैसा कि ऊपर की चौपाई भी यही बतला रही है। वक्र चन्द्रमा मे ग्रहण नही लगता। यह जबर्दस्ती कर रहा है। चन्द्रगुप्त पक्ष मे अर्थ होगा "जो पूर्णरूपेण राज्य पर प्रतिष्ठित नही है।" स्वामी, अमात्य, सुहृद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग और दल—ये सात राज्याग या प्रकृतिमण्डल कहलाते हैं। (७) **बुधयोग**—बुध के साथ एक राशि पर स्थित होना। बुधयोग के समय चन्द्रमण्डल अपूर्ण रहता है अत उस समय ग्रहण असभव है। पक्षान्तर मे अर्थ होगा बुध नीतिशास्त्र-विशारद चाणक्य का सयोग। इस श्लोक मे श्लेष अलकार तथा आर्या छन्द है।

नटी—अज्ज ! को उण एसो धरणीगोअरो भविअ चन्दं ग्गहाभिजोआदो रक्खिदुं इच्छदि। (आर्य ! कः पुनरेष धरणीगोचरो भूत्वा चन्द्रं ग्रहाभियोगाद्रक्षितुमिच्छति।)

सूत्रधारः—आर्ये ! यत्सत्यं मयापि नोपलक्षितः। भवतु। भूयोऽभियुक्तः स्वरव्यक्तिमुपलप्स्ये। ('क्रूरग्रहः'—इत्यादि पुनस्तदेव पठति।)

(नेपथ्ये)

आः, क एष मयि स्थिते चन्द्रगुप्तमभिभवितुमिच्छति।

सूत्रधारः—(आकर्ण्य) आर्ये ! ज्ञातम्। कौटिल्यः।

(नटी भयं नाटयति)

सूत्रधारः—कौटिल्यः कुटिलमतिः स एष येन
क्रोधाग्नौ प्रसभमदाहि नन्दवंशः।
चन्द्रस्य ग्रहणमिति श्रुतेः सनाम्नो
मौर्येन्दोर्द्विषदभियोग इत्यवैति ॥७॥

तदित आवां गच्छावः। (इति निष्क्रान्तौ।)

(इति प्रस्तावना।)

हिन्दी अनुवाद—नटी—आर्य, यह कौन है जो पृथिवी पर रहकर चन्द्रमा को ग्रहण से बचाना चाहता है।

सूत्रधार—अरे यह बात तो मेरी भी समझ में न आई। अच्छा, ध्यान से इसकी आवाज सुनूँ (क्रूरग्रह इत्यादि श्लोक का पुनः पाठ)

(नेपथ्य में) अरे किसकी शक्ति है जो मेरे रहते चन्द्रग्रहण कर ले।

सूत्रधार—(सुनकर) आर्ये, मालूम हो गया। यह तो कौटिल्य है।

(नटी भयभीत होने का अभिनय करती है)

सूत्रधार—जिन्होने क्रोध की अग्नि में नन्दवंश को हठात् जला दिया यही वह कूटनीतिज्ञ कौटिल्य है और अभी मेरे चन्द्रग्रहण की बात सुनते ही समान नाम वाले चन्द्रगुप्त पर शत्रु का आक्रमण हो रहा है—ऐसा समझ रहा है। इसलिए हम दोनो यहाँ से चल दें। (दोनो चले जाते हैं) [प्रस्तावना समाप्त]

Nati—Arya, who is that person, who, having the earth for his residence, dares to protect the moon from being eclipsed

Stage Manager—Noble lady, really I too have not been able to notice him However, I will try again, and shall know him by the sound of his voice (Repeats the verse in the dressing room) Ha ! who is it that dares to overcome Chandragupta while I am alive

Stage Manager—(Hearing) I have known Kautilya (when half spoken) (Nati acts to be frightened)

Stage Manager—It is Kautilya, insincere at heart, who consumed the Nanda family in the fire of his anger and who, on hearing of the eclipse of the moon, understands that it is an attack on Chandragupta Maurya, who has a similar name

So let us go away from here (They depart) [End of the prelude]

सस्कृत व्याख्या—धरणीगोचरो भूत्वा धरणी पृथ्वी गोचर. देशो यस्य स अर्थात् भूलोकवासी एष क चन्द्र ग्रहाभियोगात् ग्रहस्य अभियोगात् ग्रासात् रक्षितुम् त्रातुम् इच्छति वाञ्छति। सूत्रधार कथयति आर्ये यत्सत्यम् मयापि न उपलक्षित न निरूपित एष क । भवतु भूय भूय पुन अभियुक्त सावधानो भूत्वा स्वरव्यक्तिम् स्वरस्य कण्ठध्वने व्यक्तिम् निर्णयम् उपलप्स्ये प्राप्स्यामि अर्थात् पुन श्लोक पठिष्यामि सावधानो भूत्वा, तस्य अलक्षितस्य पुरुषस्य वचन श्रुत्वा तस्य कण्ठध्वनिना ज्ञास्यामि अय क क्रूरग्रह इत्यादि पुन भूय पठति। तच्छ्रुत्वा स नेपथ्यस्थित पुरुष पुन क्रोधयुक्त सन् आह—आ, मयि स्थिते क एष चन्द्रगुप्तम् अभिभवितुम् आक्रान्तुमिच्छति। सूत्रधार आकर्ण्य श्रुत्वा कथयति

यत् मया ज्ञात स्वरध्वनिना अयं कौटिल्य ज्ञायते। अर्धोक्ते एव असमाप्ते एव वचसि नटी भयं नाटयति।

अन्वय—येन क्रोधाग्नौ नन्दवश प्रसभमदाहि स एव कुटिलमति कौटिल्य चन्द्रस्य ग्रहणम् इति श्रुते सनाम्न मौर्येन्दो द्विषदभियोग इति अवैति।

संस्कृत व्याख्या—येन पुरुषेण क्रोधाग्नौ कोपवह्नौ नन्दवश प्रसभ शीघ्रम् अदाहि दग्ध स एष नेपथ्यगत जन कुटिलमति दुष्टबुद्धि कौटिल्य चाणक्य चन्द्रस्य इन्दो ग्रहणम् इति श्रुते चन्द्रग्रहण श्रुत्वा सनाम्न समानाख्यस्य मौर्येन्दो इन्दुसदृशस्य चन्द्रगुप्तस्य द्विषदभियोग द्विषता राक्षसेन अभियोगोऽभिभवम् आस्कन्द वेति सभाव्य कोपादेव भाषते।

टिप्पणी

(१) **धरणीगोचर**.—धरणी पृथ्वी गोचर देशो यस्य स.—धरणी पर रहने वाला, जमीन पर बसने वाला। गाव चरन्ति अस्मिन् इति गो+चर्+घ अधिकरणे (सज्ञायाम्)। (२) **अभियुक्तः**—व्यापृत—सावधान। अभि+युज् +क्त। (३) **स्वरव्यक्तिम्**—वि+अञ्ज्+क्तिन् भावे=व्यक्ति, स्वरस्य व्यक्ति ताम्—स्वर का मालूम करना, आवाज की पहचान। (४) **कुटिलमति**—कुटिला मति यस्य स—कुटिल नीति वाला। चाणक्य वस्तुत कुटिलमति है। नन्दवश का विनाश इसका उदाहरण है। यह कुटिलता उस समय पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है जब पर्वतक का विनाश होता है। पर्वतक ने चन्द्रगुप्त को राज्य पर प्रतिष्ठित करने के लिए इसकी सहायता की थी। (५) **प्रसभम्**—शीघ्रता से। (६) **नन्दवंश. अदाहि**—नन्दवश भस्म कर दिया गया। चाणक्य ने नन्द के सभी पुत्रो समेत उसका वध कर दिया था। देखिये भूमिका। अदाहि—जला दिया गया। दह्+लुङ् कर्मवाच्य। (७) **क्रोधाग्नौ**—क्रोध रूपी आग मे। क्रोध एव अग्निरिति तस्मिन्। (८) **सनाम्नः**—समान नाम यस्य सनामा तस्य सनाम्न—समान नाम वाले का। (९) **मौर्येन्दोः**—चन्द्रगुप्त मौर्य का। पुराण की कथा के अनुसार नन्द की मुरा नाम की शूद्रा पत्नी थी। चन्द्रगुप्त उसी से पैदा हुआ था। इसी से वह मौर्य कहलाया। मुराया अपत्य पुमान् इति मुरा+ण्य। (कुर्वादिभ्यं ण्य)। मौर्य इन्दुरिव इति मौर्येन्दु तस्य मौर्येन्दो। (१०) **द्विषदभियोग**.—द्विषदा अभियोग—

शत्रु द्वारा आक्रमण। (११) **अवैति**—जानता है, समझता है। अव+इ+लट्। इस श्लोक मे प्रहर्षिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयति· प्रहर्षिणीयम्'। (१२) प्रस्तावना की परिभाषा भूमिका मे देखिये। नाटक के पूर्व नटी और नट जो प्रस्तावविषयक कथोपकथन करते है उसी को प्रस्नावना कहते है। यह पाँच प्रकार की होती है—उद्घात्यक, कथोद्घात, प्रयोगातिशय, प्रवर्तक और अवगलित। जहाँ पर सूत्रधार की बात को लेकर पात्र प्रवेश करता है वहाँ कथोद्घात नाम की प्रस्तावना होती है—"स्वेति वृत्तसम वाक्यमथवा यत्र सूत्रिण। गृहीत्वा प्रविशेत् पात्रम् कथोद्घातो द्विधैव स" दशरूपक।

(ततः प्रविशति मुक्तां शिखां परामृशंश्चाणक्यः।)

चाणक्यः—कथय क एष मयि स्थिते चन्द्रगुप्तमभिभवितुमिच्छति।

पश्य—आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभां
सन्ध्यारुणामिव कलां शशलाञ्छनस्य।
जृम्भाविदारितमुखस्य मुखात्स्फुरन्तीं
को हर्तुमिच्छति हरेः परिभूय दंष्ट्राम्॥८॥

अन्वय—क जृम्भाविदारितमुखस्य हरे मुखात् आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभा शशलाञ्छनस्य सध्यारुणा कलाम् इव स्फुरन्ती दष्ट्रा परिभूय हर्तुम् इच्छति।

हिन्दी अनुवाद—(अपनी खुली हुई शिखा को हाथ से फटकारते हुए चाणक्य का प्रवेश।) चाणक्य—अरे यह कौन है जो मेरे रहते चन्द्रगुप्त को ग्रसना चाहता है। कौन है जो जँभाई लेते हुए शेर को दबाकर उसके मुँह से उसकी डाढ़ो को, जो सद्यः पिए हुए हाथी के रक्त से लाल हो रही है और जो संध्याकालीन लालिमा से लाल चन्द्रमा की तरह चमक रही है, उखाड़ना चाहता है।

(Feeling the loose tuft of hair on his crest with his hand, enters Chanakya). Who is it that wants to suppress Chandragupta while I am alive Who ventures to extract forcibly, from the mouth of the yawning lion, the fiery tooth, which is red from the elephant's blood just drunk, and hence shining like the digit of the moon made red at dusk

संस्कृत व्याख्या—जृम्भाविदारितमुखस्य क अस्ति स साहसिक य खलु जृम्भया विदारितमुखस्य व्यात्ताननस्य हरे सिहस्य मुखात् आननात् आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम् आस्वादितम् सपीतम् यत् द्विरदशोणित दन्तावलस्य गजराजस्य सद्योनिपातितस्य रक्त तेन शोणा रक्तवर्णशोभा कान्ति द्युतिर्वा यस्यास्ताम् अतएव शशलाञ्छनस्य चन्द्रस्य सन्ध्यारुणाम् सन्ध्यया अरुणाम् रक्ताम् कलाम् इव स्फुरन्तीम् अवभासमानाम् दष्ट्राम् तमेव हरि परिभूय पराजित्य हर्तुमिच्छति समुत्पाटयितुम् इच्छति समीहमान चेष्टते ।

टिप्पणी

(१) **मुक्ताम् शिखाम्**—खुली हुई चोटी को, पहले चन्द्रगुप्त को राज्य दिलाने के लिए चाणक्य ने अपनी शिखा खोलकर प्रतिज्ञा की थी। परन्तु अभी चन्द्रगुप्त की स्थिति सुदृढ नही हुई थी अत चाणक्य ने शिखा नही बाँधी थी। **परामृशन्**—छूते हुए। इससे यह प्रकट होता है कि अब वह दूसरी प्रतिज्ञा करने वाला है। जब चाणक्य कोई प्रण करता था तो वह अपनी शिखा को खोल देता था। जब सूत्रधार की बात उसने सुनी तो स्वभावत. उसका हाथ उसकी खुली हुई शिखा पर पहुँच गया—देखिये "शिखा मोक्तु बद्धामपि भवति कर" ३-२९। यह दृश्य कुसुमपुर मे चाणक्य के घर का है। परा-आ-मृश्+लट्+शतृ कर्तरि=परामृशन्। (२) **आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्**—आस्वादित यत् द्विरदस्य गजस्य शोणितम् रक्तम् तेन शोणा रक्ता शोभा यस्या तादृशीम्—(मारकर)। सद्य पान किए हुए हाथी के रक्त से लाल शोभावाली। यह दष्ट्राम् का विशेषण है। द्वौ रदौ दन्तौ अस्य इति द्विरद (ब० स०)। (३) **जृम्भाविदारितमुखस्य**—जृम्भया विदारित मुखं यस्य स तस्य—जँभाई लेने के कारण खुला है मुख जिसका। यह हरे का विशेषण है। इससे यह द्योतित हुआ कि चाणक्य रूपी सिह नन्दवश रूपी हाथी को मार कर विश्राम कर रहा है। वह मरा नही है। अभी वह जँभाई ले रहा है। मुख चन्द्रगुप्त है। (४) **परिभूय**—दबाकर, अनादर कर। परि+भू+ल्यप्। इसमे उपमा अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है। छन्द का लक्षण—'ज्ञेय वसन्ततिलक तभजा जगौ ग'। **कः एष मयि स्थिते**—प्रस्तावना के अन्त मे इस वाक्य से मुख सधि का आरम्भ होता है। मुख सधि मे "आरम्भ" नामक अवस्था और "बीज" नामक

अर्थप्रकृति का सयोग होता है। राक्षस को वश मे करने की उत्सुकता आरम्भावस्था है। उसे वश मे करना कार्य है। चन्द्रगुप्त को दृढ बनाना कार्य का फल है और चाणक्य की नीति का प्रयोग बीज है।

अपि च

नन्दकुलकालभुजगीं कोपानलबहुलनीलधूमलताम् ।
अद्यापि बध्यमानां वध्यः को नेच्छति शिखां मे ।।६।।

अन्वय—क वध्य नन्दकुलकालभुजगी कोपानलबहुलनीलधूमलता मे शिखाम् अद्यापि बध्यमाना न इच्छति ।।६।।

हिन्दी अनुवाद—मेरी शिखा नन्दकुल की कालसर्पिणी है और क्रोधाग्नि की काली धूम रेखा है। ऐसा कौन मनुष्य है जो अपनी मौत को चाहता हुआ मेरी चोटी को अब भी नही बाँधने देना चाहता।

The tuft of hair on my crest is the snake for the Nanda family and (is) the black line of smoke of the fire of my anger, who is that death deserving person who does not like to see my crest being tied even to-day

संस्कृत व्याख्या—क वध्य हन्तु योग्य जन नन्दकुलकालभुजगी नन्दकुलस्य कालभुजगी कालरूपिणी सर्पिणीमिव स्थिता नन्दकृते सक्षोभे यया हि नन्दान्वय एव दष्ट विनाशितश्च ता तथाभूतामथ च कोपानलबहुलनीलधूमलताम् अनल अग्नि इव यो मे कोप क्रोध तस्य बहुलनीलाम् अतिकृष्णाम् धूमलताम् धूमसततिस्तामिव स्फुरन्ती मे मम शिखाम् अद्यापि नन्दान्वयनाशेऽपि बध्यमाना सयम्यमाना नेच्छति। क जन नन्दवशनाशेऽपि माम् क्रोधयुक्त कृत्वा स्ववधमिच्छतीति भाव

टिप्पणी

(१) **वध्य**—वधम् अर्हतीति वध्य। वध+य। वध करने योग्य। (२) **नन्दकुलकालभुजगीम्**—नन्दकुल की कालसर्पिणी के समान। चाणक्य ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक नन्दकुल का नाश न कर लूँगा तब तक शिखा को नही बाँधूँगा यही कारण है कि वह उसे नन्दकुल को डसने वाली कालसर्पिणी बतला रहा है। (३) **कोपानलबहुलनीलधूमलताम्**—कोपानलस्य बहुलनीलधूमलताम्। क्रोधरूप अग्नि की घनीभूत काली धूमरेखा। बहुल—अधिक।

यह शिखाम् का विशेषण है। (४) अद्यापि—आज भी। अर्थात् नन्दवश के नाश होने पर भी। (५) बध्यमानाम्—बाँधी जाती हुई। ऐसा कौन है जो चाहता है कि मैं आज भी अपनी चोटी न बाँधूं अर्थात् मुझे क्रुद्ध कर दूसरी प्रतिज्ञा करने के लिए बाध्य करता है। बध्+लट्+शानच्+टाप् द्वितीया एकवचन। यहाँ आर्या छन्द है। मालारूपकालङ्कार है।

अपि च——उल्लङ्घयन् मम समुज्ज्वलतः प्रतापं
कोपस्य नन्दकुलकाननधूमकेतोः।
सद्यः परात्मपरिमाणविवेकमूढः
कः शालभेन विधिना लभतां विनाशम् ॥१०॥

अन्वय—क् परात्मपरिमाणविवेकमूढ मम समुज्ज्वलत नन्दकुलकाननधूमकेतो कोपस्य प्रताप शालभेन विधिना उल्लघयन् सद्य विनाश लभताम्।

हिन्दी अनुवाद—और भी—वह कौन है जो पराए तथा अपने बल को न जानता हुआ नन्दवंश की दावाग्नि मेरे देदीप्यमान अग्निरूप क्रोध की भयानक लपटों को लाँघकर कीड़े की मौत मरना चाहता है।

Besides, who is that fellow who, being unable to measure the strength of self and of the adversary, wants to die the death of a moth by crossing the flame of my anger, which is like a fire unto the forest like family of Nanda, and which is blazing brighter

संस्कृत व्याख्या—क असौ परात्मपरिमाणविवेकमूढ परस्य आत्मनश्च यत् परिमाण तारतम्य सामर्थ्यमिति यावत् तस्य यो विवेक विमर्श तत्र मूढो मन्दमति शून्यबुद्धिर्वा मम चाणक्यस्य समुज्ज्वलत दीप्यमानस्य नतु प्रशमितस्य नन्दकुलकाननधूमकेतो नन्दकुलमेव कानन तस्य धूमकेतो दावाग्ने भस्मीकृत-नन्दवशस्य कोपस्य क्रोधस्य प्रतापम् प्रभावम् शालभेन विधिना पतङ्ग इव उल्लङ्घयन् अतिक्रमिष्यन् सद्य झटिति विनाश लभता मरण भजताम्।

य चन्द्रगुप्तम् अभिभवितुमिच्छति स मूढ आत्मन परस्य च बल न जानाति। मया नन्दा हता मम कोपानल शमित न अपितु ज्वलन् अस्ति अस्य क्रोधाग्ने शिखा लघयित्वा क शलभायते इति भाव।

टिप्पणी

(१) **परात्मपरिमाणविमूढ**—अपने और शत्रु के बल को न समझ

सकने वाला। परश्च आत्मा च (द्वन्द्वस०), तयो परिमाणम्, तस्य विवेक. (षष्ठीतत्०), तस्मिन् मूढ (सुप्सुपा स०)। **समुज्ज्वलतः**—जलती हुई; धधकती हुई, यह कोपस्य और धूमकेतो का विशेषण है। धूमकेतो के पक्ष मे इसका अर्थ जलती हुई और कोपस्य के पक्ष मे इसका अर्थ बढता हुआ है। जलती हुई आग और बढता हुआ क्रोध। (२) **नन्दकुलकाननधूमकेतो**—नन्दकुलमेव कानन (मयूरव्यसकादि स०)। तस्य धूमकेतो—नन्दकुलरूपी वन के लिए आग। (३) **शालभेन विधिना**—पतिङ्गे के समान। पतिङ्गा बनकर मेरी क्रोधाग्नि मे जलना चाहता है। यह चाणक्य का भाव है। शलभ+अण् (तस्येद-मित्यण्) तेन शालभेन। (४) **लभताम्**—यहाँ पर 'विधौ लोट्" है न कि आशिषि। विनाश लभताम्—नाश को प्राप्त होवे। इस श्लोक मे परम्परित रूपक अलकार निदर्शना अलकार से ससृष्ट है। यहाँ वसन्ततिलका छद है।

चाणक्यः—शार्ङ्गरव शार्ङ्गरव !

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! आज्ञापयतु ।

चाणक्यः—वत्स ! उपवेष्टुमिच्छामि ।

शिष्यः—उपाध्याय ! नन्वियं सन्निहितवेत्रासनैव द्वार-प्रकोष्ठशाला । तदस्यामुपवेष्टुमर्हत्युपाध्यायः ।

चाणक्यः—वत्स ! कार्याभिनियोग एवास्मान् व्याकुल-यति, न पुनरुपाध्यायसहभूः शिष्यजने दुःशीलता । (नाट्-येनोपविश्यात्मगतम्) कथं प्रकाशतां गतोऽयमर्थः पौरेषु, यथा किल नन्दकुलविनाशजनितरोषो राक्षसः पितृवधामर्षितेन सकलनन्दराज्यपरिपणनप्रोत्साहितेन पर्वतकपुत्रेण मलयकेतुना सह सन्धाय तदुपगृहीतेन च महता म्लेच्छराजबलेन परिवृतो वृषलमभियोक्तुमुद्यत इति (विचिन्त्य) अथवा येन मया नन्दवंशवधं सर्वलोकप्रकाशं प्रतिज्ञाय निस्तीर्णा दुस्तरा प्रतिज्ञा-सरित् सोऽहमिदानीं 'प्रकाशीभवन्तमप्येनमर्थं' न समर्थः किं प्रशमयितुम् ?

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—शार्ङ्गरव, शार्ङ्गरव !

(प्रवेश कर) शिष्य—गुरु जी, आज्ञा दें।

चाणक्य—वत्स, मैं बैठना चाहता हूँ।

शिष्य—गुरुजी, इस दालान में चटाई बिछी है। आप इस पर बिराजें।

चाणक्य—वत्स, केवल कार्य में तत्परता मुझे व्याकुल कर देती है न कि शिष्यजनों के प्रति उपाध्यायों का जन्मजात रूखापन। (बैठने का अभिनय करके मन में) क्या सभी नागरिक यह जान गए हैं कि नन्दवंश के विनाश से उत्पन्न क्रोध वाला राक्षस पिता के वध से क्रुद्ध तथा समस्त नन्दसाम्राज्य के स्वामित्व प्रदान की शर्त से प्रेरित पर्वतक के पुत्र मलयकेतु से संधि करके उससे जा मिला है और उसके द्वारा इकट्ठी की गई म्लेच्छ राजाओं की सेना से युक्त होकर चन्द्रगुप्त पर चढ़ाई करने के लिए तैयार है। (सोचकर) क्या हुआ जब मैं नन्दवंश-वध की भीषण प्रतिज्ञा रूपी नदी से पार उतर चुका हूँ तब क्या मैं इस समय फैलती हुई इस बात को दबा न सकूँगा।

Chanakya—Sarangrava, Sarangrava

(Entering) *Pupil*—Master, order me

Chanakya—My boy, I wish to sit down

Pupil—Master, there is a cane-seat arranged in the shed at the entrance of the gateway My teacher deserves to sit there

Chanakya—My boy, it is the being busy in the work that makes me annoyed and not the inborn rudeness of teachers towards the disciples (Acting sitting to himself) Has this news spread among the citizens, that Rakshas, with his anger excited by the annihilation of the family of Nanda, has entered into a compact with Parvataka's son Malayaketu, who is enraged by the murder of his father, and is incited by being promised the ownership of the entire kingdom of Nanda is preparing to attack Vrishal, being enforced by a vast army of Mlechhas collected by Malayaketu (Thinking) Well, am I, who have successfully crossed the hardly crossable stream of vow of destroying the family of Nanda, not able to suppress this news which is spreading among the people

संस्कृत व्याख्या—सन्निहितवेत्रासना सन्निहित निकटस्थ वेत्रासन यस्या सा समीपस्थवेत्रासना एव द्वारप्रकोष्ठशाला द्वारप्रकोष्ठे या शाला कुटी। तत् तस्मात् कारणात् अस्याम् शालाया वेत्रासने उपाध्याय गुरु उपवेष्टुमर्हति आसन गृह्णातु इति।

वत्स, कार्याभियोग एव कार्य्यसलग्नता एव अस्मान् मा व्याकुलयति न पुन उपाध्यायानामाचार्याणा सहभू जन्मजाता शिष्यजने छात्र प्रति दु शीलता

उपालम्भनशीलता (व्याकुलयतीति) कार्य्यचिन्ता मा व्याकुल करोति त्वयि दु शीलता न। (नाट्येन उपविश्य आत्मगतम् स्वमनसि) कथम् प्रकाशता गतः आश्चयमिदम् यत् अयम् अर्थ वृत्तान्त सर्वे ज्ञात यथा किल नन्दकुलविनाश-जनितरोष नन्दकुलस्य विनाशेन जनित जात रोष क्रोध यस्य स नन्दकुल-विनाशजातक्रोध राक्षस नन्दस्य अमात्य पितृवधामर्षितेन पितु वधेन हेतुना अमर्षितेन जातरोषेण सकलनन्दराज्यपरिपणनप्रोत्साहितेन सकलनन्दराज्यस्य सम्पूर्णनन्दसाम्राज्यस्य परिपणनेन शुल्कत्वेन अवस्थापनेन प्रोत्साहितेन उत्साहं प्राप्नवता पर्वतकपुत्रेण पर्वतकतनयेन मलयकेतुना सह सधाय सधि कृत्वा तदुपगृहीतेन च तेन मलयकेतुना उपगृहीतेन सभृतेन महता अधिकेन म्लेच्छबलेन यवनवाहिन्या परिवृत युक्त वृषल चन्द्रगुप्तम् अभियोक्तुम् आक्रमितुम् उद्यतः सन्नद्ध । (विचिन्त्य विचार्य) अथवा येन मया चाणक्येन नन्दवशवध नन्दकुल-हत्या सर्वलोकप्रकाश सर्वेषु सम्पूर्णेषु लोकेषु जनेषु यथा स्यात्तथा प्रतिज्ञाय दुस्तरा दुरतिक्रमा प्रतिज्ञासरित् प्रणरूपा नदी निस्तीर्णा अतिक्रान्ता स अहम् इदानीम् एतर्हि प्रकाशीभवन्तमपि प्रचार गच्छन्तमपि एनमर्थ राक्षसाक्रमण-वार्ताम् प्रशमयितु निराकर्त्तु न समर्थं किम् अर्थात् शक्त अस्मि ।

टिप्पणी

(१) **उपाध्याय**—उपेत्य अस्मात् अधीयते इति उपाध्याय उप-अधि+इ+घञ् अपादाने सञ्ज्ञायाम् । तस्य सम्बोधने उपाध्याय इति । 'आर्येति ब्राह्मणं ब्रूयान्महाराजेति पार्थिवम् । उपाध्यायेति चाचार्यम्'—। नाटचशास्त्र । (२) **सन्निहितवेत्रासना**—बेत का आसन जिसके पास है, अर्थात् जिसमे चटाई बिछी है। यह शाला का विशेषण है। (३) **द्वारप्रकोष्ठशाला**—द्वारस्य प्रकोष्ठे या शाला। कुटी—द्वार के पास की कुटी। प्रकोष्ठ—आँगन। (४) **कार्य्या-भियोग**—कार्य की अधिकता, काम की चिन्ता। अभि+युज्+घञ् भावे अभियोग । (५) **उपाध्यायसहभूः**—आचार्य की जन्मजात। उपाध्यायाना सहभू । सह+भू+क्विप् । यह दु शीलता का विशेषण है। इससे सूचित होता है कि उपाध्याय लोग स्वभाव से ही विद्यार्थियो के प्रति कठोर होते है। (६) **अर्थ·—बात। प्रकाशता गत· पौरेषु**—नागरिको मे फैल गई। (७) **नन्दकुलविनाशजनितरोषः**—नन्दकुलस्य विनाशेन जनित रोष यस्य स—नन्द कुल के नाश होने से क्रोध पैदा हो गया जिसे वह (८) **पितृवधामर्षितेन**—

पितु वध पितृवध तेन अमर्षित इति पितृवधामर्षित । मर्षण मर्ष मृष्+घञ् भावे। न मर्ष अमर्ष (नञ्तत्०), अमर्ष सञ्जात अस्य इति अमर्ष+इतच्= अमर्षित अथवा अमर्षेण योजित इति अमर्ष+णिच्+क्त कर्मणि+अमर्षित । पिता के वध से क्रोध उत्पन्न हो गया जिसे। (९) **सकलनन्दराज्यपरिपणन-प्रोत्साहितेन**—समास के लिये व्याख्या देखिए। मलयकेतु को उसकी सेवा के बदले मे नन्द का सम्पूर्ण राज्य दिया जाने का प्रलोभन दिया था। सर्वार्थसिद्धि के मरने के बाद नन्द वश मे कोई नही बचा था जो राजा होता। इसी से मलयकेतु को यह लालच दी गई थी। इसी लालच से उसने एक विशाल सेना तैयार की थी जिसमे कई म्लेच्छ राजा शामिल थे। परि+पण् (व्यवहारे)+ल्युट् भावे= परिपणनम्। (१०) **तदुपगृहीतेन**—तेन उपगृहीतेन, उसके द्वारा एकत्रित की गई। उपगृहीत शब्द से सूचित होता है कि यह स्थायी सेना नही थी बल्कि उसी अवसर के वास्ते एकत्रित की गयी थी। **म्लेच्छबलेन**—म्लेच्छ सेना के द्वारा। म्लेच्छन्ति इति म्लेच्छ+अच् कर्तरि=म्लेच्छा । तेषा बलम्, तेन। प्राचीन काल मे आर्य लोग अपने से भिन्न लोगो को म्लेच्छ कहा करते थे। (११) **सर्व-लोकप्रकाशम्**—सब के सामने। (१२) **दुस्तरा प्रतिज्ञासरित्**—मुश्किल से पार की जाने वाली प्रतिज्ञारूपी नदी। (१३) **प्रकाशीभवन्तम्**—फैलता हुआ (समाचार)।

क्रुतः। यस्य मम—

श्यामीकृत्याननेन्दूनरियुवतिदिशां सन्ततैः शोकधूमैः
कामं मन्त्रिद्रुमेभ्यो नयपवनहृतं मोहभस्म प्रकीर्य।
दग्ध्वा सम्भ्रान्तपौरद्विजगणरहितान् नन्दवंशप्ररोहान्
दाह्याभावान्न खेदाज्ज्वलन इव वने शाम्यति क्रोधवह्निः॥११॥

अन्वय—(यस्य मम) क्रोधवह्नि अरियुवतिदिशाम् आननेन्दून् सन्ततै शोकधूमै श्यामीकृत्य मन्त्रिद्रुमेभ्य नयपवनहृत मोहभस्म काम प्रकीर्य सम्भ्रान्त-पौरद्विजगणरहितान् नन्दवशप्ररोहान् दग्ध्वा वने ज्वलन इव दाह्याभावात् शाम्यति न खेदात् ॥११॥

हिन्दी अनुवाद—मेरी क्रोधाग्नि दिशा रूपी शत्रुओ की स्त्रियों के मुखचन्द्रों को शोकरूपी धूम अर्थात् कालिख (पति आदि के मारे जाने के कारण) से काला

कर वृक्ष रूपी मंत्रियों पर नीति रूपी वायु की सहायता से भस्म अर्थात् राख डालकर (उन्हें मोह में डालकर और उनकी आँखो में धूल झोंक कर) नगरवासियो को पक्षियो के समान बिना जलाए (जो वन में उडकर अपनी रक्षा कर लेते हैं) और नन्दवंश रूपी बाँस को समूल नष्ट करके इसलिए शान्त हो गई कि जलने वाली कोई वस्तु उसे ईंधन के समान नही मिली न कि उसकी जलाने की शक्ति कम हो गई है।

भाव यह है कि जैसे दावानल वन में चारों दिशाओ को धुयें से मलिन कर देती है, सजीव वृक्षो पर राख फैलाकर और पक्षियो से परित्यक्त बाँसो या सूखे पेड़ो को जलाकर शान्त हो जाती हैं उसी प्रकार चाणक्य की क्रोधाग्नि ने शत्रुओ का नाश करके उनकी नारियों का मुख दुःख से मलिन कर दिया, नन्द के मंत्रियो को नीति के बल पर किंकर्त्तव्यविमूढ बना दिया, कुछ नागरिको को छोडकर सारे नन्दवश को भस्म कर डाला और अब इतना करके वह क्रोधानल शान्त हो गया है, क्योकि अब कुछ जलाने को बाकी न रहा।

Whence (is this assurance ?) The fire of my anger, like the fire in a forest, after having blackened the moon-like faces of the quarters in the shape of the ladies of my enemies, with the incessant smoke of grief, and having abundantly scattered over the ministers, which are tree-like, the ash of delusion spread here and there by my wind-like diplomacy and after having destroyed the bamboo-like Nanda family and its sprouts which were abandoned by the bird-like frightened citizens, is now extinguished (or inactive) not that it has lost the power to consume but because there is nothing left to burn

संस्कृत व्याख्या—मम क्रोधवह्नि क्रोधाग्नि सन्ततै समन्तात् सर्वं व्याप्नुवानै शोकधूमै अरियुवतिदिशाम् अरीणा रिपूणा नन्दाना नन्दवशीयानाम् या युवतय नार्य ता एव दिश दिग्विभागा तासाम् आननेन्दून् मुखचन्द्रान् श्यामीकृत्य मलिनीकृत्य सततरुदितेन रिपुवनिताना मुखानि मलिनयित्वा इत्यर्थ मन्त्रिद्रुमेभ्य मन्त्रिण अमात्या एव द्रुमा वृक्षास्तेभ्य नयपवनहृत नय अन्योन्यसचरिष्णु षाड्गुण्यप्रयोगरूपो यो राजनयस्स एव पवनो वायुस्तेन हृतम् इतस्तत उह्यमान मोहभस्म अज्ञानरूप भस्म काम यथेच्छ प्रकीर्य विक्षिप्य स्वनीतिवैभवेन नन्दामात्यान् मोहयित्वा इत्यर्थ सम्भ्रान्तपौरद्विजगणरहितान् सम्भ्रान्ता व्याकुलीभूता ये पौरा पाटलिपुत्रीया पौरवर्गा त एव द्विजगणा पक्षिण तै रहितान् सुतरा परित्यक्तान् नन्दवशप्ररोहान् नन्दवश एव वशः वेणु तस्य प्ररोहा एव अङ्कुरा तान् दग्ध्वा वने ज्वलन् इव दावाग्निरिव

सम्प्रति यत् शाम्यति निर्वाति तन्न खेदात् दाहशक्तेरभावात् न अपि तु दाह्या-भावात् अपरस्य दाह्यवस्तुन अप्राप्ते विरमति।

टिप्पणी

(१) **अरियुवतिदिशाम्**—शत्रुओ की स्त्रियो के जो दिशा के समान है। (२) **श्यामीकृत्य**—काला करके। शोकरूपी धुये से मलिन करके। श्याम+च्वि, ईत्व+कृ+क्त्वा—ल्यप्। (३) **सन्ततै**—निरन्तर। सम्+तत। सन्तत **वा** सतत 'समो वा ततहितयो' इति कारिकया विकल्पेन मलोपात्। (४) **मन्त्रि-द्रुमेभ्य**—मन्त्रियो से। यहाँ अपादाने पञ्चमी है। मन्त्रियो को वृक्ष इसलिए कहा है कि वे मारे नही गए थे बल्कि बच गए थे। जगल मे जो पेड जलने से बच जाते है उनके ऊपर हवा से भस्म (राख) पडती रहती है उसी प्रकार मन्त्रियों को नीतिरूपी हवा से मोहरूपी भस्म के द्वारा किकर्त्तव्यविमूढ बना दिया गया था। 'अत्र क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि सम्प्रदानम्' इति वार्तिकेन सम्प्रदानसज्ञा—चतुर्थी। (५) **संभ्रान्तपौरद्विजगणरहितान्**—समास व्याख्या मे देखिए। डरे हुए पुरवासी रूपी पक्षियो से रहित। भाव यह है कि जगल मे आग लगने से जो पक्षी भाग जाते है वे बच जाते है उसी प्रकार डरकर जो लोग भाग गए थे क्रोधानल मे भस्म होने से बच गए। द्विज—पक्षी। यहाँ रूपक अलङ्कार है और स्रग्धरा छन्द है।

अपि च—

शोचन्तोऽवनतैर्नराधिपभयाद् धिक्शब्दगर्भैर्मुखै-
र्मामग्रासनतोऽवकृष्टमवशं दृष्टवन्तःपुरा।
ते पश्यन्ति तथैव सम्प्रति जना नन्दं मया सान्वयं
सिंहेनेव गजेन्द्रमद्रिशिखरात् सिंहासनात् पातितम्॥१२॥

अन्वय—पुरा ये नराधिपभयात् अवनतै धिक्शब्दगर्भै मुखै शोचन्त अवशं माम् अग्रासनत अवकृष्ट दृष्टवन्त, ते जना सम्प्रति सिहेन गजेन्द्रम् अद्रि-शिखरात् इव मया सान्वय नन्द सिहासनात् तथैव पातित पश्यन्ति॥१२॥

हिन्दी अनुवाद—और भी—पहले जिन लोगो ने राजा (नन्द) के डर से सिर झुका कर परन्तु मुँह से बाहर निकलने वाले धिक्कार के शब्दो को मुँह ही

में छिपाकर मुझे विवश किए जाकर प्रधान आसन से हटाए जाते हुए दुःख के साथ देखा था वे इस समय देख रहे हैं कि मैंने कुल समेत नन्द को राजसिंहासन से उसी प्रकार गिराया जिस प्रकार पहाड की चोटी पर से सिंह द्वारा गजराज (बड़ा हाथी) नीचे पटक दिया जाता है।

भावार्थ यह है कि नन्द ने मुझे जब प्रधान आसन से हटाया तो लोगों को इस पर दुःख हुआ और वे मेरे इस अपामन को सहन नहीं कर सके पर राजा के डर से वे चुप रह कर अपना मुंह नीचे कर लिया और धिक्कार का शब्द उनके मुँह से बाहर न निकल कर भीतर ही रह गया। साथ ही चाणक्य के कहने का भाव यह भी है कि यदि कोई हमसे ऐसा बर्ताव फिर करेगा तो उसकी भी यही दशा होगी जो नन्द की हुई है।

Further more—Those people who, with grief, saw me helpless, being dragged down from the prominent seat, but cast down their faces through the fear of the king, and the cry of "Fie" remaining within their mouths, now see Nanda, with his whole family, cast down by me from the (throne) like a big elephant being dragged down by a lion from the mountain-top

संस्कृत व्याख्या—पुरा पूर्वस्मिन् काले ये जना नराधिपभयात् राजभयात् अवनतै नम्रीकृतै धिक्शब्दगर्भै नन्द धिगितिशब्द उत्क्रोशध्वनि गर्भे येषा तस्तथाभूतैर्मुखै शोचन्त मामनुकम्पमाना माम् अवश कृपणम् अग्रासनत मुख्यासनात् अर्थात् यज्ञीयासनात् अवकृष्टम् सनिकारम् उत्थापितम् दृष्टवन्त तथा दृष्ट्वा नतमुखेन धिगिति राजान गर्हयन्त तस्थु सम्प्रति अधुना ते जना सिहेन मृगराजेन गजेन्द्रम् करिराजम् अद्रिशिखरात् पर्वतशिखरात् मया सान्वय सपरिवार नन्द सिहासनात् राजासनात् पातितम् तथैव अवशम् निष्प्रतीकार च पश्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **नराधिपभयात्**—नराधिपात् भयमिति नराधिपभयम् तस्मात् नराधिपभयात् हेतौ पञ्चमी है। राजा (नन्द) के डर से। (२) **धिक्शब्दगर्भैः मुखैः**—धिक् इति शब्द (कर्मधारय) स गर्भे येषा (बहुव्रीहि स०) तानि तै धिक्शब्दगर्भै मुखै —धिक्कार का शब्द जिन मुखो मे छिपा था। लोग नन्द के कार्य पर उसे धिक्कारना चाहते थे पर डर के मारे मुँह से धिक् शब्द निकाल न सके। वह उनके मुँह मे ही रह गया। रामचरितमानस मे गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसी

प्रकार का भाव सीता के लिए बालकाण्ड मे व्यक्त किया है—'लोचन जल रह लोचन कोना। जैसे परम कृपण कर सोना।' (३) **अवकृष्टम्**—घसीटा गया। अव+कृष्+क्त। (४) **सान्वय**—अन्वयेन सहित· सान्वय, 'तेन सह'—इति बहुव्रीहि स०, 'वोपसर्जनस्य' इत्यनेन सहस्य सभाव, तम्। सन्तान समेत। यहाँ पूर्णोपमा अलङ्कार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है। छन्द का लक्षण—'सूर्याश्वैर्यदि म सजौ सततगा शार्दूलविक्रीडितम्'।

सोऽहमिदानीमवसितप्रतिज्ञाभरोऽपि वृषलापेक्षया शस्त्रं धारयामि। येन मया——

समुत्खाता नन्दा नव हृदयरोगा इव भुवः
कृता मौर्ये लक्ष्मीः सरसि नलिनीव स्थिरपदा।
द्वयोः सारं तुल्यं द्वितयमभियुक्तेन मनसा
फलं कोपप्रीत्योर्द्विषति च विभक्तं सुहृदि च ॥१३॥

अन्वय—भुव हृदयरोगा इव नव नन्दा समुत्खाता सरसि नलिनी इव मौर्ये लक्ष्मी स्थिरपदा कृता कोपप्रीत्यो द्वयो सारम् द्वितयम् फलम् अभियुक्तेन मनसा द्विषति च सुहृदि च तुल्य विभक्तम्।

हिन्दी अनुवाद—वह मैं पूर्णप्रतिज्ञ हो चुकने पर भी वृषल (चन्द्रगुप्त) के लिए शस्त्र ग्रहण करूँगा (कर रहा हूँ) जिसमें मैंने——

पृथ्वी के हृदय के रोग के समान नव नन्दो को उखाड़ डाला, सरोवर में कमलिनी के समान चन्द्रगुप्त में राज्यलक्ष्मी को अचल कर डाला है; क्यों न हो अपने शत्रु को अपने क्रोध (निग्रह) और मित्र को प्रेम (अनुग्रह) दोनो को दो प्रकार का न्यायोचित फल बराबर पूरे मनोयोग से बाँट दिया है।

That I, inspite of fulfilling my vow, still handle the weapon out of regard for Vrishala, I by whom, the nine Nandas like the heart-ache of the earth have been uprooted, and Lakshmi has been made to take firm root in Chandragupta, like the lotus in a lake and the proper twofold products of the two, pleasure and anger, have been equally divided, with an attentive mind, between friend and enemy, (That I will now handle the sword, etc)

संस्कृत व्याख्या—येन मया चाणक्येन भुव पृथिव्या हृदयरोगा इव हृदय-पीडा इव नवनन्दा समुत्खाता समुन्मूलिता सरसि सरोवरे नलिनी कमलिनी

इव मौर्य्ये चन्द्रगुप्ते लक्ष्मी राज्यश्री स्थिरपदा कृता निश्चलस्थिति कृता। कोपप्रीत्यो क्रोधप्रसादयो द्वयो समम् सारम् न्याय्य फल निग्रहानुग्रहरूपम् द्वितयम् द्विविधम् फलम् अभियुक्तेन मनसा निविष्टेन चेतसा निपुण निरूप्य इत्यर्थ· द्विषति शत्रौ नन्दे च सुहृदि मित्रे चन्द्रगुप्ते च तुल्यम् सम विभक्तम् स्थापितम् (स अहम् शस्त्र धारयामि इति पूर्वेणान्वय)।

टिप्पणी

(१) **अवसितप्रतिज्ञाभरोऽपि**—अवसित समाप्त प्रतिज्ञाभर व्रतपीडा यस्य तादृश अपि पूर्णप्रतिज्ञोऽपि—पूर्णप्रतिज्ञ होने पर भी। यद्यपि मेरा प्रण पूरा हो गया है तथापि। अव+सो+क्त कर्मणि=अवसित । (२) **कोपप्रीत्योः**—क्रोध और प्रेम का, क्रोध का फल निग्रह अपने शत्रु नन्द को और प्रेम का फल अनुग्रह अपने मित्र चन्द्रगुप्त को बाँट दिया गया। (३) **अभियुक्तेन मनसा**—सावधान चित्त होकर खूब सोच विचार कर। (४) **द्वितयम्**—दो प्रकार का । यहाँ उपमा और उत्प्रेक्षा अलङ्कार है और शिखरिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलाग शिखरिणी'।

अथवा, अगृहीते राक्षसे किमुत्खातं नन्दवंशस्य, किं वा स्थैर्यमुत्पादितं चन्द्रगुप्तलक्ष्म्याः। (विचिन्त्य) अहो! राक्षसस्य नन्दवंशे निरतिशयो भक्तिगुणः। स खलु कस्मिंश्चिदपि जीवति नन्दान्वयावयवे वृषलस्य साचिव्यं ग्राहयितुं न शक्यते। तदभियोगं प्रति निरुद्योगः शक्यः अवस्थापयितु-मस्माभिः इति अनयैव बुद्ध्या तपोवनं गतोऽपि घातितस्तपस्वी नन्दवंशीयः सर्वार्थसिद्धिः। यावदसौ मलयकेतुमङ्गीकृत्य अस्मदुच्छेदाय विपुलतरं प्रयत्नम् उपदर्शयत्येव। (प्रत्यक्ष-वदाकाशे लक्ष्यं बद्ध्वा) साधु, अमात्य राक्षस! साधु! साधु, श्रोत्रिय! साधु! साधु, मन्त्रिबृहस्पते! साधु! कुतः—

हिन्दी अनुवाद—अथवा जब तक राक्षस नही पकडा जाता तब तक नन्द-वंश का नाश करने से क्या और चन्द्रगुप्त को राज्य मिलने से ही क्या लाभ। (सोचकर) अहा राक्षस की नन्दवंश में कैसी दृढ भक्ति है। जब तक नन्दवंश का कोई भी व्यक्ति जीवित रहेगा तब तक वह किसी प्रकार चन्द्रगुप्त का मंत्री

बनना स्वीकार न करेगा। इसीलिये तो नन्दवंश को राज्य पर प्रतिष्ठित करने के प्रति उसे निरुद्यम बनाने के लिये हमने वन में चले जाने पर भी बेचारे सर्वार्थसिद्धि को मरवा डाला। फिर भी वह मलयकेतु का सहारा लेकर हमारी जड खोदने के लिये यत्न करता ही रहता है। (आकाश में दृष्टि दे कर मानों साक्षात् राक्षस को देख रहा हो) वाह राक्षस मंत्री, वाह ! धन्य हो द्विजवर, धन्य हो ! धन्य हो बृहस्पति के तुल्य बुद्धि वाले, तुम धन्य हो !

Or, what is the use of giving permanency to the Lakshmi of Chandragupta so long as Rakshas is not captured (or is unsecured) (Thinking) Oh, the unsurpassable devotion of Rakshas to the race of Nanda He can not be made to accept the office of the minister of Chandragupta so long as any member whatsoever of the race of Nanda is alive So with this idea that he can be made to be indifferent towards an invasion, we got the poor Sarvarthsiddhi killed, though he had retired to the forest But he, taking the help of Malayaketu, is indeed making greater effort to uproot us Bravo minister Rakshas, Bravo, Bravo, Oh Brahman, Bravo, Bravo Oh, Brihaspati like minister, Bravo.

संस्कृत व्याख्या—अथवा पक्षान्तरे अगृहीते अवशीकृते राक्षसे किमुत्खातं नन्दवशस्य नन्दवशस्य नाशेन को लाभ चन्द्रगुप्तलक्ष्म्या स्थैर्यम् उत्पादितम् चन्द्रगुप्तराज्यश्रिया स्थैर्येण किमपि प्रयोजन न सिद्ध्यते। (विचिन्त्य विचार्य) अहो राक्षसस्य नन्दवशे निरतिशय भक्तिगुण अधिकतर भक्तिरूप. गुण राक्षसस्य नन्दवशे भक्ति आश्चर्यजनकेति भाव स राक्षस खलु हि कस्मिन् चित् अपि जीवति विद्यमाने सति नन्दान्वयावयवे नन्दवशस्य अशे वृषलस्य चन्द्र-गुप्तस्य साचिव्यम् अमात्यताम् ग्राहयितु कारयितु न शक्यते। किन्तु तदभियोग प्रति चन्द्रगुप्तस्य आक्रमणमुद्दिश्य निरुद्योग उद्यमहीन, अवस्थापयितुम् उद्यम-हीनता गमयितुम् अस्माभि शक्य इति अनया बुद्धचा अनेनैव विचारेण नन्दवशीय सर्वार्थसिद्धि तपोवन गत अपि घातित हत नाशितो वा। अय भाव एक एव नन्दवशशेष सर्वार्थसिद्धि यदा न भविष्यति तदा राक्षस अवश्य चन्द्रगुप्तस्य साचिव्य करिष्यतीति बुद्धचा सर्वार्थसिद्धिर्हत। किन्तु असौ राक्षस मलयकेतुम् अङ्गीकृत्य मलयकेतो साहाय्यम् गृहीत्वा अस्मदुच्छेदाय अस्मान् उन्मूलयितुम् विपुलतरम् प्रबलतरम् प्रयत्नम् उद्योगम् उपदर्शयति एव करोति एव। साधु अमात्य राक्षस साधु एतत् ते श्लाघ्यम् साधु श्रोत्रिय सुब्राह्मण साधु मन्त्रिबृहस्पते बृहस्पतितुल्य अमात्य साधु सदृशम् एतत् ते।

टिप्पणी

(१) **अगृहीते**—विना वश मे किये। राक्षस को वश मे करना नाटक का प्रधान उद्देश्य है। 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' इति सूत्रेण अत्र सप्तमी। (२) **किमुत्खातम्**—नाश करने से क्या लाभ, नाश करना व्यर्थ है। उद्+खन्+क्त कर्मणि=उत्खातम्। (३) **तपस्वी**—बेचारा। (४) **नन्दान्वयावयवे**—नन्दवश के किमी भी अश के (रहने हुए)। (५) **तदभियोगम् प्रति**—चन्द्रगुप्त के ऊपर आक्रमण करने के प्रनि। (६) **निरुद्योगः अवस्थापयितुम्**—उद्यम-हीन करने के लिये, निरुत्साहित करने के वास्ते। (७) **सर्वार्थसिद्धि॰ घातित**—सर्वार्थसिद्धि मारा गया। चाणक्य के कहने का भाव यह है जब नन्दवश का कोई भी व्यक्ति न बच रहेगा तो राक्षस निराश्रय होकर चन्द्रगुप्त का मत्री बन जायगा। अत बेचारे सर्वार्थसिद्धि के वन मे चले जाने पर भी हमने उसका वध करवाया। (८) **अस्मदुच्छेदाय**—हमारे नाश के लिये। यहाँ "तादर्थ्ये" चतुर्थी है। (९) **अमात्य**—मत्री। अमा सह वसति इत्यर्थे अमा+त्यप्। (१०) **श्रोत्रिय**—वेद जानने वाले ब्राह्मण को कहते है। छन्द अधीते इति छन्दस्+घ, छन्दस् इत्यस्य श्रोत्रादेश। (११) **मंत्रिबृहस्पते**—मत्री बृहस्पतिरिव इति मत्रिबृहस्पति तत्सबुद्धौ (उपमित समास) बृहस्पति के समान मत्री। बृहता वाचा पति बृहस्पति 'तद्बृहतो करपत्यो'—इत्यनेन सुट् तलोपश्च।

ऐश्वर्यादनपेतमीश्वरमयं लोकोऽर्थतः सेवते
तं गच्छन्त्यनु ये विपत्तिषु पुनस्ते तत्प्रतिष्ठाशया।
भर्तुर्ये प्रलयेऽपि पूर्वसुकृतासङ्गेन निःसङ्गया
भक्त्या कार्यधुरां वहन्ति बहवस्ते दुर्लभास्त्वादृशाः ॥१४॥

अन्वय—अय लोक ऐश्वर्यात् अनपेतम् ईश्वरम् अर्थत सेवते। ये पुन॰ विपत्तिषु तमनुगच्छन्ति ते तत्प्रतिष्ठाशया। त्वादृशा कृतिन ये भर्तु प्रलयेऽपि पूर्वसुकृतासङ्गेन नि सङ्गया भक्त्या कार्यधुरा वहन्ति ते दुर्लभा ॥१४॥

हिन्दी अनुवाद—संसार के लोग ऐश्वर्य से युक्त स्वामी की सेवा किसी स्वार्थ से ही करते है और जो लोग विपत्ति मे स्वामी का साथ देते है वे इस आशा से ऐसा करते है कि स्वामी को फिर से राज्य मिलेगा। परन्तु तुम्हारे समान कर्मवीर विरले ही होते है जो स्वामी के मर जाने पर भी पहले किये हुए उपकार का ख्याल करके नि॰स्वार्थ भक्ति से कार्य-भार को वहन करते है (स्वामी का कार्य करते जाते है)।

Why people serve, with selfish motive, the master possessing riches, those who follow him in adversity do so with the hope that he will again come back to power But workers, like you, who out of regard for the past benefits, bear the burden of work without selfish motive, even after the death of the master, are very rare

संस्कृत व्याख्या—अय ससार अत्रत्या जना ऐश्वर्यात् प्रभुत्वात् अनपेतम् अप्रच्युतम् ईश्वरम् स्वामिनम् अर्थत स्वप्रयोजनसिद्ध्यै स्वफलाशायै सेवते भजते ये पुन ये जना विपत्तिषु आपत्सु तमनुगच्छन्ति स्वामिनम् तद्दु खदु खिन. सन्त अनुवर्तन्ते तेऽपि हन्त न नि स्वार्थसेवाभावतया अपितु तत्प्रतिष्ठाशया तस्य स्वामिन. या प्रतिष्ठा पुन राज्यप्राप्ति तत्र गतया स्वेष्टसिद्धिरूपया कामनया तथा कुर्वन्ति त्वादृशा कृतिन कृतकर्माण ये भर्तु स्वामिन प्रलये विनाशेऽपि पूर्वकृतासङ्गेन पूर्वोपकारस्य आसङ्गेन सम्पर्केण पूर्वोपकारस्मरणेन नि सङ्गया फलासक्तिरहितया भक्त्या प्रेम्णा कार्यधुरा वहन्ति कर्त्तव्यभार धारयन्ति ते दुर्लभा दुष्प्रापा ।

टिप्पणी

(१) **अनपेतम्**—युक्तम्, युक्त। (२) **अर्थतः**—प्रयोजन से, स्वार्थ-भाव से। (३) **तत्प्रतिष्ठाशया**—प्रति+स्था+अङ भावे=प्रतिष्ठा, तस्य प्रतिष्ठा तत्प्रतिष्ठा तस्याम् आशा इति तया—उसकी प्रतिष्ठा या अभ्युदय की आशा से। अर्थात् इस आशा से कि शायद उसके अच्छे दिन फिर लौटे। (४) **पूर्वसुकृतासङ्गेन**—पूर्व सुकृतम् पूर्वसुकृतम् (सुप्सुपासमास) तस्य आसङ्गेन इति। हेतौ तृतीया है। पहले के किए हुए उपकार का ख्याल करके। आ+सञ्ज्+घञ् भावे=आसङ्ग । (५) **निस्सङ्गया**—नि स्वार्थ भक्ति से। यहाँ करणे तृतीया है। (६) **कार्यधुराम्**—कार्यस्य धू कार्यधुरा ता कार्यधुरा "ऋक्-पूरब्धू" इससे समासान्त अप्रत्यय हो गया फिर टाप् प्रत्यय लगकर स्त्रीलिङ्ग हो गया। काम के भार को। (७) **कृतिनः**—इसका अर्थ प्राय कृतकार्य (सफल) होता है। पर यहाँ पर "कृतज्ञ" अर्थ ठीक होगा। कृतम् पूर्वोपकार अस्ति एषाम् स्मरणार्थत्वेन इति। कृत+इनि (मत्वर्थे) यह अर्थ "पूर्व सुकृतासङ्गेन" के साथ ठीक-ठीक बैठ जाता है। (८) **दुर्लभाः**—दु खेन लभ्यन्ते इति दुर्लभा दुर्+लभ्+खल् कर्मणि। इसमे शार्दूलविक्रीडित छन्द है और व्यतिरेक अलङ्कार है।

अतएवास्माकं त्वत्संग्रहे प्रयत्नः, कथमसौ वृषलस्य साचिव्यग्रहणेन सानुग्रहः स्यादिति। कुतः—

अप्राज्ञेन च कातरेण च गुणः स्याद्भक्तियुक्तेन कः
प्रज्ञाविक्रमशालिनोऽपि हि भवेत् किं भक्तिहीनात् फलम्।
प्रज्ञाविक्रमभक्तयः समुदिता येषां गुणा भूतये
ते भृत्या नृपते कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च ।।१५।।

अन्वय—भक्तियुक्तेन अप्राज्ञेन च कातरेण च क गुण स्यात् प्रज्ञाविक्रम-शालिन अपि भक्तिहीनात् कि हि फल भवेत्, समुदिता प्रज्ञा-विक्रम-भक्तय येषा गुणा, ते भृत्या नृपते सम्पत्सु च आपत्सु च भूतये, इतरे कलत्रम्।

हिन्दी अनुवाद—इसीलिए तुम्हें वश में करने का उपाय किया जा रहा है कि तुम (राक्षस) किस प्रकार चन्द्रगुप्त का मंत्रित्व स्वीकार कर हमें अनुगृहीत करोगे। क्योंकि—उस स्वामिभक्त राजसेवक ही से क्या लाभ जिसमें न तो बुद्धि हो और न बल। और उस बुद्धि-विक्रम वाले से ही क्या जिसमें भक्ति नहीं है। राजा की विपत्ति व सम्पत्ति में कल्याण करने वाले तो वे ही होते हैं जिनमें बुद्धि, विक्रम और भक्ति तीनों गुणो का समावेश हो। और दूसरे सेवक तो स्त्री के समान हैं जिनका भरण-पोषण राजा को अच्छे और बुरे दोनो दिनो में भी करना ही पड़ता है।

This is why our effort is to secure you, our anxiety is 'how would you (Rakshas) do us a favour by accepting the ministership of Vrishala' For—What is the use of that loyal servant who is unwise or coward ? What is the use of that wise and reliant servant who is without devotion Those servants, who possess wisdom, valour and devotion all the three virtues combined, are for the weal of the king in both adversity and prosperity Others are like so many wives (whom the king has to support even in prosperity and adversity both)

संस्कृत व्याख्या—अतएव अस्मात् कारणात् असौ राक्षस केन विधिना वृषलस्य साचिव्यग्रहणेन सानुग्रह स्यात् इति चिन्ता कुर्वताम् अस्माकम् त्वत्सग्रहे भवद्वशीकरणे यत्न आयास। भक्तियुक्तेन भक्तिमता अप्राज्ञेन स्थूलदर्शिना कातरेण च विक्रमहीनेन च राजसेवकेन क गुण को लाभ न कोऽपि लाभ इति भाव। प्रज्ञाविक्रमशालिन अपि प्रज्ञाविक्रमयुक्तात् भक्तिहीनात् निरनुरागात् कि हि फलम् को लाभ न किमपि प्रयोजनम् किन्तु येषा राजसेवापरायणाना प्रज्ञा

वुद्धि विक्रम शौर्यम् भक्ति अनुराग अस्ति येषु सेवकेषु एते त्रय गुणा सन्ति येषु ते नृपते. सम्पत्सु अभ्युदयेषु विपत्तिषु आपत्सु च भूतये कल्याणाय भवन्ति। इतरे च ये केवल सानुरागा ये वा केवल प्रज्ञाविक्रमशालिन ते सर्वे कलत्रमेव कुटुम्बवत् सर्वासु समविषमदशासु राज्ञैव भरणीया न ते राज्ञ सेवा कुर्वन्ति।

टिप्पणी

(१) **सग्रहे**—वश मे करने के लिए। लाने के लिए। सम्+ग्रह्+अप् भावे। (२) **प्रज्ञाविक्रमशालिनः**—बुद्धि तथा विक्रम से युक्त। प्रज्ञा च विक्रमश्च प्रज्ञाविक्रमौ ताभ्या साधु शालते श्लाघते इति साधुकारिणि णिनि। (३) **भृत्याः**—सेवक। भ्रियन्ते इति भृ+क्यप्। भृत्य का लक्षण—'यस्मिन् कृत्य समावेश्य निर्विशङ्केन चेतसा। आस्यते सेवक स स्यात् कलत्रमिव चापरम्॥' (४) **भूतये**—सम्पत्ति के लिए, सम्पत्ति बढाने (वाले) तादर्थ्ये चतुर्थी। (५) **प्रज्ञाविक्रमभक्तय.**—प्रज्ञा च विक्रमश्च भक्ति च इति प्रज्ञा विक्रमभक्तय —बुद्धि, पराक्रम और भक्ति। (६) **कलत्र**—स्त्री या पोष्यवर्ग। स्त्री का भरण-पोषण हर समय करना ही पडता है इसीलिए ऐसे सेवक जिनमे कोई गुण नही है जो केवल पोष्य है कलत्र कहे गए है। गड्+अत्रन्, गकारस्य ककार, डलयोरभेद =कलत्रम्। 'कलत्र श्रोणिभार्ययो' इत्यमर। व्यतिरेकालकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

तन्मयाप्यस्मिन् वस्तुनि न शयानेन स्थीयते, यथाशक्ति क्रियते तद्ग्रहणं प्रति यत्नः। कथमिव? अत्र तावद् वृषलपर्वतकयोरन्यतरविनाशेनापि चाणक्यस्यापकृतं भवतीति विषकन्या राक्षसेनास्माकमत्यन्तोपकारि मित्रं घातितस्तपस्वी पर्वतक इति सञ्चारितो जगति जनापवादः। लोकप्रत्ययार्थमस्यैवार्थस्याभिव्यक्तये 'पिता ते चाणक्येन घातित' इति रहसि त्रासयित्वा भागुरायणेनापवाहितः पर्वतकपुत्रो मलयकेतुः। शक्यः खलु एष राक्षसमतिपरिगृहीतोऽपि व्युत्तिष्ठमानः प्रज्ञया निग्रहीतुम्। न पुनरस्यै निग्रहात् पर्वतकवधोत्पन्नं राक्षस्यायशः प्रकाशीभवत् प्रमार्ष्टुमिच्छामि।

प्रयुक्ताश्च स्वपक्षपरपक्षयोरनुरक्तापरक्तजनजिज्ञासया बहुविधदेशवेषभाषाचारसञ्चारवेदिनो नानाव्यञ्जनाः प्रणिधयः। अन्विष्यते च कुसुमपुरवासिनां नन्दामात्यसुहृदां निपुणं प्रचारगतम्। तत्तत्कारणमुत्पाद्य कृतकृत्यतामापादिताश्चन्द्रगुप्तसहोत्थायिनो भद्रभटप्रभृतयः प्रधानपुरुषाः। शत्रुप्रयुक्तानां च तीक्ष्णरसदायिनां प्रतिविधानं प्रत्यप्रमादिनः परीक्षितभक्तयः क्षितिपतिप्रत्यासन्नाः नियोजितास्तत्राप्तपुरुषाः। अस्ति चास्माकं सहाध्यायि मित्रमिन्दुशर्मा नाम ब्राह्मणः। स चौशनस्यां दण्डनीत्यां चतुःषष्ट्यङ्गे ज्योतिःशास्त्रे च परं प्रावीण्यमुपगतः। स मया क्षपणकलिङ्गधारी नन्दवंशवधप्रतिज्ञानन्तरमेव कुसुमपुरमुपनीय सर्वनन्दामात्यैः सह सख्यं ग्राहितो विशेषतश्च तस्मिन्राक्षसः समुत्पन्नविश्रम्भः। तेनेदानीं महत्प्रयोजनमनुष्ठेयं भविष्यति।

तदेवमस्मत्तो न किञ्चित् परिहास्यते। वृषल एव केवलं प्रधानप्रकृतिरस्मास्वारोपितराज्यतन्त्रभारः सततमुदास्ते। अथवा यत्स्वयमभियोगदुःखैरसाधारणैरपाकृतं तदेव राज्यं सुखयति। कुतः—

हिन्दी अनुवाद—सो मैं भी इस विषय में कुछ सोता नही हूँ; यथाशक्ति उसी के मिलाने का प्रयत्न करता रहता हूँ। कैसे? (तो सुनो) इस विषय में (पहला प्रयत्न यह है) "चन्द्रगुप्त अथवा पर्वतक इन दोनो में से एक का भी नाश हो जाने पर चाणक्य की हानि होगी" यह सोचकर राक्षस ने विषकन्या के द्वारा हमारे अत्यन्त उपकारी मित्र पर्वतक को मरवा डाला है, यह अपवाद लोगो मे फैला दिया गया है। पर एकान्त में मैंने भी भागुरायण द्वारा मलयकेतु के मन में यह बात बैठा दी है कि तुम्हारे पिता को चाणक्य ने ही मारा है, इससे वह डर कर भाग गया है। राक्षस के कथनानुसार आचरण करता हुआ युद्ध की तैयारी करता हुआ भी यह (मलयकेतु) बुद्धि के द्वारा वश में किया जा सकता है। पर इसको पकड कर मै यह नही चाहता कि राक्षस की यह अपकीर्ति कि "पर्वतक को उसी ने मारा है" दूर हो जाय। और भी नाना प्रकार के छद्मवेषधारी और भिन्न-भिन्न देश-भाषा-भूषा-आचार और प्रचार में सर्वथा निपुण अनेकों गुप्तचरों को यह जानने के लिए नियुक्त कर दिया है

कि कौन हमारा और हमारे शत्रु का साथ देने वाला है और कुसुमपुर निवासी नन्द के मंत्री और संबधियों के ठीक-ठीक वृत्तान्त का अन्वेषण हो रहा है। वैसे ही भद्रभटादिको को बडे-बड़े पद देकर चन्द्रगुप्त के पास रख दिया है। और भक्ति की परीक्षा लेकर बहुत से सतर्कता से काम करने वाले पुरुष भी शत्रु से रक्षा करने के लिए नियत कर दिए गये हैं। मेरे साथ का पढ़ने वाला इन्दुशर्मा नाम का ब्राह्मण है। वह शुक्राचार्य की बनाई हुई दण्डनीति में और चौसठ अङ्गो वाले ज्योतिष-शास्त्र में पारगत है। नन्दवंश के विनाश की प्रतिज्ञा के बाद ही मैंने उसे बौद्ध संन्यासी के वेष में पाटलिपुत्र में लाकर नन्द के सभी मंत्रियो से उसकी मित्रता करा दी। राक्षस उसमे विशेष रूप से विश्वास करता है। इससे यह बडा कार्य अवश्य पूरा हो जायगा। तो इस तरह मैं कुछ उठा न रखूँगा। केवल चन्द्रगुप्त ही हमारे ऊपर राज्य का सारा भार छोडकर उदासीन रहता है। अथवा वही राज्य सच्चा सुख देने वाला होता है जिसमे उसके संचालन का दु.ख नही भोगना पडता। क्योंकि--

Then, I too, am not idle in this matter To the best of my ability, effort is being made to win him over How ? This report has been circulated among the people that our great friend Parvataka, was killed by Rakshas by means of poison-maid, because by this, injury comes to Chanakya by the death of either Chandragupta or Parvataka To create confidence in the people and to make this very thing clear, Parvataka's son Malayaketu, has been frightened away by Bhagurayan secretly saying that "Your father was murdered by Chanakya" This Malayaketu, guided by the advice of Rakshas and making preparations for war, can be checked by wit On the other hand, by arresting him, I do not wish to wipe out the calumny of Rakshasa which is due to the murder of Parvataka and which is spreading among the public Spies also, conversant with the dress, dialect, manners and movements of the people of different countries, have been employed by me under several disguises to find out who are the persons that are faithful to us and to the enemy The movements of the friends of the ministers of Nanda, residing at Kusumpura, are being watched carefully The high officials like Bhadrabhatta, who were Chandragupta's helpers, have been made well satisfied by being offered high posts. Trustworthy agents, whose loyalty has been tried and who are always cautious and remain near the person of the king, have been warned off beforehand to check the giving of poison (to the king) by the enemy Again, there is a Brahman Indushrama, by name, who is my friend and fellow student He is proficient

ın the scıence of polıtıc of Ushanas (शुक्राचार्य) and ın Astrology wıth ıts sıxty four branches, and just after I had taken a vow to kıll Nanda, he was brought by me to Kusumpura under the guıse of a Jaın saınt and (there) he has made frıendshıp wıth the mınısters of Nanda Rakshas has placed specıal confidence ın hım.

So ın thıs matter I shall be leavıng nothıng undone Only Vrıshala, the chıef member, havıng placed the burden of admınıstratıon ın us, remaıns ındıfferent, or that kıngdom alone gıves happıness, whıch ıs devoıd of the trouble of payıng personal attentıon not shared ın common by others For—

संस्कृत व्याख्या—तत् तस्मात् मयापि अस्मिन् वस्तुनि राक्षसग्रहणकर्मणि शयानेन अलसेन न स्थीयते निरुद्यमेन न भूयते किन्तु तस्य राक्षसस्य ग्रहण प्रति यथाशक्ति यत्न क्रियते। कथमिव केन वा प्रकारेण—अत्र तावत् खलु अस्मिन् कार्ये खलु लोके राक्षसो निन्द्यो भवतु इत्यभिप्रायेण लोके जनाना पौराणाम् अपवाद जनश्रुति प्रचारित सचारित वृषलपर्वतकयो चन्द्रगुप्तपर्वत-कयो अन्यतरविनाशेनापि उभयो मध्ये एकस्यापि नाशेन वधेन वा चाणक्यस्य अपकृत भवति अनिष्टमापद्यते इति कृत्वा विषकन्यया राक्षसेन अस्माकम् अत्यन्तोपकारि परमोपकारक मित्र तपस्वी वराक पर्वतक घातित हत, लोकप्रत्ययार्थम् जनाना विश्वासार्थम् अस्यैव अर्थस्य अभिव्यक्तये अर्थात् राक्षसेन पर्वतक हत इति प्रकटीभवनाय ते पिता चाणक्येन घातित हत इति रहसि एकान्ते त्रासयित्वा भयम् उत्पाद्य भागुरायणेन अपवाहित अपसारित पर्वतकपुत्र मलयकेतु शक्य खलु एष मलयकेतु राक्षसमतिपरिगृहीतोऽपि राक्षसस्य उप-देशेन कार्यं कुर्वन् व्युत्तिष्ठमान युद्धार्थ यतमान प्रज्ञया बुद्ध्या निग्रहीतुम् वशीकर्तु शक्य पुनरस्य मलयकेतो निग्रहात् पर्वतकवधोत्पन्नम् पर्वतकवधेन उत्पन्नम् राक्षसस्य अयश अपकीर्त्ति प्रकाशीभवत् प्रचार गच्छत् प्रमार्ष्टुम् प्रक्षालयितु न इच्छामि। यदि मलयकेतुम् इदानी दण्डयामि तर्हि लोको ज्ञास्यति यत् राक्षस. निर्दोष अस्ति तथा च प्रतिज्ञात राज्यार्धदानमनिच्छता चाणक्येन सपुत्र पर्वतक हत। स्वपक्षपरपक्षयो स्वपक्षे आत्मन पक्षे परपक्षे शत्रो. पक्षे च अनुरक्तापरक्तजनजिज्ञासया अनुरक्ता भक्ता अपरक्ता विरक्ता च ये जना तेषा जिज्ञासया परिज्ञानार्थ बहुविधदेशवेषभाषाचारसञ्चारवेदिनः बहुविधाना नानाप्रकाराणा देशाना यो वेष परिच्छद या च भाषा य आचारः

व्यवहार यश्च सञ्चार आवागमन तत् सर्वं विदन्ति जानन्ति ये ते तथाविधा नानाव्यञ्जना बहुरूपधारिण प्रणिधय दूता प्रयुक्ता नियुक्ता कुसुमपुरवासिनाम् पाटलिपुत्रनिवासिनाम् नन्दामात्यसुहृदा नन्दामात्यस्य राक्षसस्य सुहृदा मित्राणा प्रचारगतम् गमनागमनविषयक सर्वं निपुण सावधानतया अन्विष्यते निरीक्ष्यते तै प्रणधिभिरिति। तत्तत्कारणमुत्पाद्य तोषकारणम् उत्पाद्य कृतकृत्यतामापादिता कृतार्थताम् आपादिता गमिता चन्द्रगुप्तसहोत्थायिन चन्द्रगुप्तेन सह उत्थायिन एकनिष्ठ या ये उद्यमपरा बभूवु ते भद्रभटप्रभृतय भद्रभटादय प्रधानपुरुषा। शत्रुप्रयुक्ताना शत्रुणा राक्षसेन प्रयुक्तानां व्यापारितानाम् तीक्ष्णरसदायिनां विषदायिना प्रतिविधान नियमन प्रति अप्रमादिन. सावधाना परीक्षितभक्तय येषा भक्ति परीक्षिता एवविधा क्षितिपतिप्रत्यासन्ना क्षितिपते नृपते चन्द्रगुप्तस्य प्रत्यासन्ना समीपस्थायिन आप्तपुरुषा विश्वस्ता भृत्या नियोजिता नियुक्ता। अस्माक सहाध्यायि मित्रं इन्दुशर्मा नाम ब्राह्मण अस्ति। स च औशनस्याम् शुक्राचार्यनिर्मिताया दण्डनीत्याम् चतुःषष्ट्यङ्गे ज्योतिःशास्त्रे च पर प्रावीण्यम् अतिदक्षताम् चोपगत प्राप्त। स मया क्षपणकलिङ्गधारी क्षपणकस्य बौद्धसन्यासिन लिङ्गधारी वेषभृत् नन्दवशवधप्रतिज्ञानन्तरमेव कुसुमपुरम् उपनीय आनीय सर्वनन्दामात्यै सर्वै समग्रै नन्दामात्यै नन्दमन्त्रिभि सह सख्यम् मित्रता ग्राहित विशेषतश्च तस्मिन् इन्दुशर्मणि राक्षस समुत्पन्नविश्रम्भ जातविश्वास तेन इदानीम् सम्प्रति महत् प्रयोजन गुरुकार्यम् अनुष्ठेयम् साधनीय भविष्यति तत् एवम् अनेन प्रकारेण अस्मत्त मत्त चाणक्यात् न किंचित् किमपि परिहास्यते ऊन भविष्यति। वृषल एव केवल प्रधानप्रकृति मुख्यप्रकृतिस्वामी अस्मासु आरोपितराज्यतन्त्रभार अस्मासु मयि आरोपित न्यस्त राज्यस्य यत् तत्र शासन तस्य भार येन तादृश सततम् निरन्तरम् उदास्ते उदासीन एव तिष्ठति। अथवा यत् स्वयम् अभियोगदु खै स्वयमभियोगस्य आत्मव्यापारस्य यत् दु ख तै असाधारणै अपाकृतम् वर्जित तदेव राज्य सुखयति सुख ददाति कुत कस्मात्।

टिप्पणी

(१) **न शयानेन स्थीयते**—(मैं भी इस विषय मे) असावधान नही हूँ। (२) **वृषलपर्वतकयोः अन्यतरविनाशेनापि**—चन्द्रगुप्त तथा पर्वतक दोनो मे एक का भी नाश होने से। (३) **विषकन्यया**—विषतुल्या वा विषदिग्धा वा

विषसिद्धा कन्या विषकन्या (मध्यमपदलोपी स०), तया। विषाक्त कन्या के द्वारा। पहले किसी कन्या को विषैली बनाने के लिए उसे बचपन से ही थोडा-थोडा विष खिलाया जाता था। इस क्रम से एक ऐसा समय आता था जब कि उसका शरीर सर्पिणी के समान विषैला बन जाता था। उसके साथ जो भी सभोग करता था वह मर जाता था। ऐसी कन्याये बहुत सुन्दरी हुआ करती थी। लोग अपने शत्रु को मारने के लिए ऐसी कन्याओ का प्रयोग किया करते थे। 'लावण्यभूषिता कान्ता योषित क्रमशो विषै । युवती योजयेत् कामिरिपुभूपान्य-घातने ।।' (४) **जनापवाद· जगति सञ्चारित.**—यह बदनामी ससार मे फैला दी गई है। (५) **त्रासयित्वा**—डराकर। लोक मे तो यह प्रसिद्धि करा दी गई कि राक्षस ने पर्वतक को मरवाया और एकान्त मे चाणक्य के गुप्तचर ने मलयकेतु को यह समझा दिया कि "तुम्हारे पिता को चाणक्य ने मारा है" इससे भयभीत होकर मलयकेतु भाग गया। यह है चाणक्य की बुद्धि की प्रखरता। (६) **राक्षस-मतिपरिगृहीत**—राक्षस की बुद्धि के अनुसार काम करने वाला। (७) **व्युत्तिष्ठ-मान**—लडाई के लिये उभडता हुआ। वि+उद्+स्था+शानच्। (८) **प्रज्ञया निग्रहीतुम् शक्य.**—बुद्धिबल से वश मे किया जा सकता है। (९) **अनुरक्तापरक्त-जनजिज्ञासया**—अनुरक्ता अपरक्ता च ये जना तेषा जिज्ञासया—प्रेम तथा दुश्मनी करने वाले लोगो को जानने की इच्छा से। (१०) **बहुविधदेशवेश-भाषाचारसञ्चारवेदिन**—अनेक देशो की वेश-भूषा, भाषा, आचार तथा गति को जानने वाले। (११) **नानाव्यञ्जना**—नाना रूप धारी। (१२) **तत्तत्-कारणम्**—उन सभी कारणो को। (१३) **कृतकृत्यतामापादिताः**—कृतकृत्य कर दिए गए है। (१४) **चन्द्रगुप्तसहोत्थायिन**—चन्द्रगुप्तेन सह उत्थायिन—चन्द्रगुप्त के साथ उठने-बैठने वाले। (१५) **तीक्ष्णरसदायिनां प्रतिविधानं प्रति**—विष देने वालो को रोकने के वास्ते। (१६) **परीक्षितभक्तयः**—परीक्षिता भक्ति येषा ते परीक्षितभक्तय—जिनकी स्वामिभक्ति की परीक्षा कर ली गई है। (१७) **औशनस्याम्**—शुक्राचार्य की बनाई हुई। उशनस्+अण्+स्त्रीलिङ्ग। (१८) **प्रावीण्यम्**—निपुणता। (१९) **क्षपणकलिङ्गधारी**—बौद्ध सन्यासी का रूप धर कर। (२०) **सख्य ग्राहित**—मित्र बनवाया हुआ। यहाँ ग्रहधातु बुद्धचर्थक होने से द्विकर्मक है। (२१) **समुत्पन्नविश्रम्भः**—समुत्पन्न विश्रम्भ यस्य स विश्वास कर लिया है जिसने। यही इन्दुशर्मा जीवसिद्धि या

क्षपणक के नाम से विख्यात है। वास्तव मे यह चाणक्य का गुप्तचर है परन्तु इसने राक्षस के मन मे ऐसा विश्वास पैदा कर दिया जिससे राक्षस इसको अपना परम मित्र मानने लगा। (२२) **परिहास्यते**—कमी पाई जायगी। (२३) **प्रधानप्रकृतिः**—राजा, अमात्य, सुहृत्, कोष, राष्ट्र, सेना और दुर्ग—ये सात राज्य की प्रकृति=अग है। राजा इनमे प्रधान है।

स्वयमाहृत्य भुञ्जाना बलिनोऽपि स्वभावतः।
गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः सीदन्ति दुःखिताः ॥१६॥

अन्वय—स्वयम् आहृत्य भुञ्जाना नरेन्द्राश्च गजेन्द्राश्च स्वभावत. बलिनोऽपि प्राय दु खिता सन्त सीदन्ति।

हिन्दी अनुवाद—स्वभावतः शक्तिशाली हाथी और राजा भी स्वयं साधन सामग्री जुटा-जुटाकर सब सुख भोग करते है तो भी दुःखित और खिन्न ही रहा करते है।

Big elephants and powerful kings, though strong by nature, usually experience unhappiness if enjoying after having personally provided for it

संस्कृत व्याख्या—स्वभावत निसर्गत बलिन अपि शक्तिमन्त अपि गजेन्द्रा हस्तिन राजानश्च नृपतयश्च स्वयमात्मनाहृत्य सगृह्य भुञ्जाना भोग कुर्वाणा दु खिता सर्वदा तत्तदर्थजातसग्रहव्यापृतया तत्तद्दु खमनुभवन्त प्राय सीदन्ति क्लिश्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **भुञ्जाना**—भोग करते हुए, खाते हुए। भुज्+लट्—चानश् 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्' इत्यनेन। (२) **बलिन**—बलवान् (राजा और हाथी)। इस श्लोक मे दीपक अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है। छन्द का लक्षण—'श्लोके षष्ठ गुरु ज्ञेय सर्वत्र लघु पञ्चमम्। द्विचतु पादयोर्ह्रस्व सप्तम दीर्घमन्ययो'॥

(ततः प्रविशति यमपटेन चरः।)

चरः—

पणमह जमस्स चलणे किं कज्ज देवएहिं अण्णेहिं।
एसो खु अण्णभत्ताणं हरइ जीअं चडपडन्तम् ॥१७॥

(प्रणमत यमस्य चरणौ किं कार्यं दैवतैरन्यैः ।
एष खल्वन्यभक्तानां हरति जीवं परिस्फुरन्तम् ।।)

अन्वय—यमस्य चरणौ प्रणमत अन्यै दैवतै किं कार्यम् एष खलु अन्य-भक्ताना परिस्फुरन्त जीव हरति ।

हिन्दी अनुवाद—(यमपट लिए एक गुप्तचर का प्रवेश) चर—लोगो! धर्मराज के चरणो का सहारा लो। और देवताओं से क्या (उनको छोड़ो) ये यमराज दूसरे देवताओ के भक्तो के छटपटाते हुए प्राणो को हर लेते हैं।

(Enters a spy with Yama's board) *Spy*—O people, Bow down to the feet of Yama , what is the use of other gods He (this Yama) takes away the struggling life of the devotees of other gods

सस्कृत व्याख्या—यमस्य कृतान्तस्य चरणौ प्रणमत भजत अन्यै देवै हरिहरादिभि किं कार्यं न किमपि प्रयोजनम् एष खलु यम अन्यभक्ताना अन्य-देवोपासकाना परिस्फुरन्त जीव स्पन्दमान जीवन हरति नाशयति ।

अवि अ

पुरिसस्स जीविदव्वं विसमादो होइ भत्तिगहिआदो ।
मारेइ सव्वलोअं जोतेण जमेण जीआमो ।।१८।।
जावएदं गेहं पविसिअ जमपडं दंसअन्तो गीआइं गाआमि ।

अपि च

पुरुषस्य जीवितव्यं विषमाद्भवति भक्तिगृहीतात् ।
मारयति सर्वलोकं यस्तेन यमेन जीवामः ।।
यावदिदं गृहं प्रविश्य यमपटं दर्शयन् गीतानि गायामि ।
(इति परिक्रामति)

अन्वय—भक्तिगृहीतात् विषमात् पुरुषस्य जीवितव्य भवति य सर्वलोक मारयति तेन यमेन जीवाम ।

हिन्दी अनुवाद—भक्ति के द्वारा वश में किए गए भयंकर (यम) से प्राणियों का जीवन चलता है। जो सारे संसार को मारा करता है, उस यम से हम जीवन धारण करते हैं। तो इस घर में प्रवेश करके यमपट दिखाता हुआ गीत गाता हूँ। (घर की ओर चलता है)

The livelihood of a man comes even from a difficult situation if one is earnest I live by Yama who kills all people Well, I will sing songs entering this house and displaying Yama's board. (Walks round)

संस्कृत व्याख्या—यदि जीवितुम् इच्छथ तथा कुरुत यथा वय कुर्म । यथा वयम् तेन यमेन त यममुपजीव्य तदनुकम्पायामेव च जीवनभार निक्षिप्य जीवाम य सर्वलोक समस्त चराचर जगत् मारयति नाशयति तथा यूयमपि जीवत। नास्त्यन्य उपाय जीवनधारणस्य भक्तिगृहीतात् भक्त्या वशीकृतात् विषमात् क्रूरात् तस्मादेव यमात् पुरुषस्य प्राणिमात्रस्य जीवितव्य जीवनधारणादि सर्व भवति ।

टिप्पणी

(१) **जीवितव्यम्**—जीविका जीव्+तव्य। (२) **विषमात्**—विभिन्नः समेभ्य (प्रादि तत्पुरुष) अपादाने पञ्चमी। कठिन (काम से)। (३) **भक्ति-गृहीतात्**—भक्तिपूर्वक (ईमानदारी से) किया गया (कर्म) भक्ति से पूजा गया (चाणक्य)। इसका भाव यह है कि भक्ति से वश मे किया हुआ चाणक्य बहुत कुछ दे देता है। वह इतना क्रूर नही है जितना लोग उसे समझते है। यहाँ आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार है।

शिष्यः—(विलोक्य) भद्र! न प्रवेष्टव्यम्।

चरः—(विहस्य) हंहो बह्मण, कस्स एदं गेहम्? (अहो ब्राह्मण, कस्येदं गृहम्?)

शिष्यः—अस्माकमुपाध्यायस्य सुगृहीतानाम्न आर्यचाण-क्यस्य।

चरः—(विहस्य) हंहो बह्मण, अत्तकेरकस्स जेव्व मह धम्मभादुणो घरं होदि। ता देहि मे पवेसं जाव दे उवज्झाअस्स जमपडं पसारिअ धम्मं उवदिसामि। (अहो ब्राह्मण, आत्मीयस्यैव मम धर्मभ्रातुर्गृहं भवति। तस्माद्देहि मे प्रवेशं यावत्तवोपाध्यायस्य यमपटं प्रसार्य धर्ममुपदिशामि।)

शिष्यः—(सक्रोधम्) धिङ् मूर्ख, किं भवानस्मदुपाध्या-यादपि धर्मवित्तरः?

चरः—हंहो बह्मण, मा कुप्प। णहि सव्वो सव्वं जाणादि। ता किंवि ते उवज्झाओ जाणादि, किंवि अम्हारिसा जाणादि। (अहो ब्राह्मण, मा कुप्य। नहि सर्वः सर्वं जानाति। तत् किमपि ते उपाध्यायो जानाति, किमप्यस्मादृशा जानन्ति।)

शिष्यः—मूर्ख, सर्वज्ञतामुपाध्यायस्य चोरयितुमिच्छसि ?

चरः—हंहो बह्मण, जइ तव उवज्झाओ सव्वं जाणादि ता जाणादु दाव कस्स चन्दो अणिभिप्पेदो त्ति। (अहो ब्राह्मण, यदि तवोपाध्यायः सर्वं जानाति तर्हि जानातु तावत्कस्य चन्द्रोऽनभिप्रेत इति)।

हिन्दी अनुवाद—शिष्य—(देख कर) अरे भाई, भीतर न आना।

चर—अहा, ब्राह्मण, यह किसका घर है ?

शिष्य—हमारे उपाध्याय प्रातःस्मरणीय आर्य चाणक्य का।

चर—(हँस कर) अच्छा बताया, ब्राह्मण देवता (तब तो) यह मेरे अपने ही धर्म भाई का घर है। इसलिए मुझे भीतर जाने दो ताकि यम-पट फैलाकर तुम्हारे उपाध्याय को धर्म का उपदेश करूँ।

शिष्य—(क्रोध से) धिक्कार है मूर्ख! क्या तू मेरे गुरु से भी बढकर धर्म-ज्ञानी है।

चर—अरे ब्राह्मण, क्रोध मत करो। सब लोग सब कुछ नही जानते। कुछ बातें ऐसी हं जो तुम्हारे आचार्य जानते ह और कुछ बातें ऐसी हं जिसे हमारे ऐसे लोग ही जानते ह।

शिष्य—मूर्ख, तू मेरे आचार्य की सर्वज्ञता को चुराना चाहता है।

चर—हे ब्राह्मण, यदि तुम्हारे आचार्य सब कुछ जानते हं तो बतावें कि चन्द्र को कौन है जो, नही चाहता।

Pupil (seeing)—Good fellow, do not enter.

Spy—Hallo Brahman, whose house is this ?

Pupil—of Arya Chanakya, our preceptor of auspicious name

Spy (*with a laugh*)—Well said, O Brahman, then this is the house of our brother-in-duty, so let me go in, so that, opening the Yama board, I may teach religion to your teacher

Pupil (*Angrily*)—Fie idiot, do you know religion better than my teacher ?

Spy—Oh Brahman, do not be angry Everyone does not know everything So something are known to your preceptor and some are known only to people like me.

Pupil—Fool, do you want to steal away the omniscience of my preceptor ?

Spy—Hallo Brahman, if your preceptor is omniscient, let him say, "To whom is Chandra undesirable ?"

टिप्पणी

(१) **सुगृहीतनाम्न.**—प्रात स्मरणीय। सुष्टु गृहीतम् सुगृहीतम् तादृश नाम यस्य तस्य। 'स सुगृहीतनामा स्यात् य प्रात स्मर्यते जनै'। (२) **धर्म-भ्रातु**—एक ही प्रकार का काम करने के कारण धर्म-भाई कहा गया। छिपा हुआ अर्थ यह है कि चन्द्रगुप्त का सहायक मै भी हूँ और चाणक्य भी है। अत एक ही समान का कार्य करने के कारण हम धर्मभाई है। धर्मेण भ्राता सुप्सुपा। स इव अहमपि चन्द्रगुप्तस्य सेवक इत्याशय। (३) **धर्मवित्तरः**—अधिक धर्म जानने वाला। धर्मं वेत्ति इति। धर्म+विद्+क्विप्। अतिशयेन धर्मवित् इति धर्मवित्तर धर्मविद्+तरप्। (४) **मा कुप्य**—क्रोध मत करो। कुप् (दिवादि)+लोट्—सिप्—हि—लुक्, श्यन्=कुप्य। यहाँ निषेधार्थक मा है। माङ का मा नही है, इसलिए 'मङिलुङ' से लुङ लकार नही हुआ। (५) **अस्मा-दृशा**—हमारे समान। वयमिव पश्यन्ति इति। अस्मद्+दृश्+कञ् "त्यदादिषु दृशोरनालोचने कञ्च"। (६) **अनभिप्रेतः**—न अच्छा लगने वाला, अप्रिय। न अभिप्रेत इति अनभिप्रेत। अभि+प्र+इ+क्त कर्मणि।

शिष्यः—मूर्ख, किमनेन ज्ञातेनाज्ञातेन वा ?

चरः—तव उवज्झाओ एव्व जाणिस्सदि जं इमिणा जाणिदेण होदि। तुमं दाव एत्तिअं जाणासि कमलाणं चन्दो अणभिप्पेदो त्ति। णं पेक्ख—

कमलाणां मणहराणां वि रूआहिन्तो विसंवदइ शीलम्।
संपुण्णमण्डलम्मि वि जाइं चन्दे विरुद्धाइं॥१९॥

तवोपाध्याय एव ज्ञास्यति यदेतेन ज्ञातेन भवति। त्वं तावदेतावद् जानासि कमलानां चन्द्रोऽनभिप्रेत इति। ननु पश्य—

कमलानां मनोहराणामपि रूपाद्विसंवदति शीलम्।
सम्पूर्णमण्डलेऽपि यानि चन्द्रे विरुद्धानि॥२०॥

शिष्य—मूर्ख, इसके जानने अथवा न जानने से क्या ?

चर—यह तो तुम्हारे आचार्य ही समझेंगे कि उसके जानने से क्या होता है। तुम तो केवल इतना ही जानते हो कि कमलों को चन्द्रमा अच्छा नहीं लगता। अच्छा देखो।

Fool, what is the use of knowing or not knowing this?

Spy—It is your preceptor who knows what is the use of knowing it You simply know this that the lotuses do not like Chandra Well then see

अन्वय—मनोहराणामपि कमलाना शील रूपात् विसवदति यानि सम्पूर्ण-मण्डले अपि चन्द्रे विरुद्धानि—

हिन्दी अनुवाद—कमल कितने सुन्दर हुआ करते है। किन्तु उनका स्वभाव उनकी सुन्दरता से बिल्कुल उलटा हुआ करता है और तभी तो पूर्ण मण्डल वाले चन्द्र के भी वैरी बने रहते है।

Though lotuses are so charming, yet their manners are quite contrary to their charms, the lotuses (are) opposed to Chandra even when it is in full orb.

संस्कृत व्याख्या—यानीमानि कमलानि सम्पूर्णमण्डलेऽपि चन्द्रे षोडशकला-समन्वितेऽपि चन्द्रमसि विरुद्धानि नानुरक्तानि प्रत्युत प्रद्वेषभाञ्जि **वा भवन्ति** तत इदमेव निश्चीयते यन्मनोहराणा रम्याकृतीना कमलाना शील स्वभाव रूपाद्वि-सवदति न रूपमनुहरतीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **रूपात्**—यहाँ 'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' से पचमी हुई। 'रूपम-पेक्ष्य' ऐसी विवक्षा है। (२) **विसंवदति**—प्रतिकूल आचरण करता है। वि—सम्+वद्+लट्–तिप्। (३) **सम्पूर्णमण्डलेऽपि चन्द्रे**—चन्द्रमा का मण्डल पूर्ण रहने पर भी। अर्थात् जब चन्द्रमा सोलहो कलाओ से युक्त रहता है तो सब को प्रिय लगता है। पर कमल को पूर्णमण्डल होने पर भी चन्द्रमा अप्रिय लगता है। अपूर्ण मण्डल युक्त होने पर तो बात ही निराली है। 'चन्द्रे' से चन्द्रमा तथा चन्द्रगुप्त दोनो से तात्पर्य है। इस श्लोक का भीतरी अर्थ यह है कि कमल को जैसे चन्द्रमा अच्छा नही लगता उसी प्रकार राक्षस के साथी लोग चन्द्रगुप्त को नही चाहते। इसमे आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार है।

चाणक्यः—(आकर्ण्यात्मगतम्) अये, चन्द्रगुप्तादपरक्तान् पुरुषान् जानामीत्युपक्षिप्तमनेन।

शिष्यः—मूर्ख, किमिदमसम्बद्धमभिधीयते ?

चरः—हंहो बह्मण, सुसंबद्धं जेव्व एवं भवे। (अहो ब्राह्मण, सुसम्बद्धमेवैतद्भवेत्।)

शिष्यः—यदि किं स्यात्।

चरः—यदि सुणिदुं जाणन्तं लहे। (यदि श्रोतुं जानन्तं लभे।)

चाणक्यः—भद्र, विश्रब्धं प्रविश। लप्स्यसे श्रोतारं ज्ञातारं च।

चरः—एसो पविसामि। (एष प्रविशामि)। (प्रविश्योपसृत्य च) जेदु अज्जो। (जयत्वार्यः।)

चाणक्यः—(विलोक्यात्मगतम्) कथमयं प्रकृतिचित्तपरिज्ञाने नियुक्तो निपुणकः। (प्रकाशम्) भद्र! स्वागतम्। उपविश।

चरः—जं अज्जो आणवेदि। (भूमावुपविष्टः।) (यदार्य आज्ञापयति।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(सुनकर मन में) अरे! इसने यह इशारा किया है कि चन्द्रगुप्त के शत्रुओं को जानता हूँ।

शिष्य—मूर्ख! क्या यह बे-सिर-पैर की बात कर रहे हो।

गुप्तचर—ब्राह्मण महाराज! यह उचित ही होती।

शिष्य—यदि क्या होता।

गुप्तचर—यदि सुनने के लिए जानकार (व्यक्ति) मिलता।

चाणक्य—भद्र! बेखटके भीतर आओ। सुनने और समझने वाले को पा जाओगे।

गुप्तचर—यह आया। (प्रवेश करके और समीप जाकर) आर्य की जय हो।

चाणक्य—(देखकर मन में) क्यों, यह तो प्रजा की मनोवृत्ति जानने के वास्ते भेजा गया निपुणक है। (प्रकट) भद्र, स्वागत है। बैठो।

गुप्तचर—आर्य की जैसी आज्ञा (पृथ्वी पर बैठता है)।

Chanakya (Listening to himself)—Ha ! this is hinted by him that he knows the people who dislike Chandragupta

Pupil—Fool, what nonsense are you talking ?

Spy—Hallo Brahman, this would have been very sensible

Pupil—If what ?

Spy—If I get a person who knows how to listen

Chanakya—Gentleman, come in with confidence, you will get one who can listen and understand

Spy—Here I enter (Entering and advancing) victory to your Noble self

Chanakya (Seeing to himself)—Why, this is Nipunaka employed by me to know the minds of the people (Aloud) Welcome gentleman, sit down

Spy—As Noble Sir commands (sits down on the earth)

टिप्पणी

(१) **चन्द्रगुप्तात् अपरक्तान्**—चन्द्रगुप्त से विरोध करने वाले (लोगो को)। अप+रञ्ज्+क्त, द्वितीयाबहुवचने=अपरक्तान्। (२) **उपक्षिप्तम्**—इशारा किया गया, इगित किया गया। उप्+क्षिप्+क्त। (३) **विश्रब्धम्**—विश्वासपूर्वक। यह 'प्रविश' क्रिया का विशेषण है। (४) **असम्बद्धम्**—बे-मतलब की। अनावश्यक। सम्+बन्ध्+क्त। न सम्बद्धम् इति असम्बद्धम्। (५) **कथम्**—आश्चर्यसूचक अव्यय है। आ ज्ञातम्—हाँ समझ गया। किसी-किसी पुस्तक मे यह पाठ है "कथ प्रभूतत्वात् कार्याणा कस्य परिज्ञाने नियुक्त निपुणक इति न ज्ञायते। आ ज्ञातम्। (६) **प्रकृतिचित्तपरिज्ञाने**—प्रजा के मन की बात जानने के वास्ते।

चाणक्यः—भद्र, वर्णयेदानीं स्वनियोगवृत्तान्तम्। अपि वृषलमनुरक्ताः प्रकृतयः?

चरः—अह इं? अज्जेण क्खु तेसु तेसु विराअकारणेसु परिहरिअंतेसु सुगहीदणामहेए देवे चन्दउत्ते दिढं अनुरत्ताओ पकिदिओ। किंदु उण संति एत्थ णअरे अमच्चरक्खसेण सह पढमं समुप्पण्णसिणेहबहुमाणा तिण्णि पुरिसा, जे देवस्स चन्दसिरिणो सिरिं ण सहन्दि। (अथ किम्? आर्येण खलु तेषु तेषु विरागकारणेषु परिह्रियमाणेषु सुगृहीतनामधेये देवे

चन्द्रगुप्ते दृढमनुरक्ताः प्रकृतयः। किन्तु पुनः सन्त्यत्र नगरे अमात्यराक्षसेन सह प्रथमं समुत्पन्नस्नेहबहुमानास्त्रयः पुरुषाः ये देवस्य चन्द्रश्रियः श्रियं न सहन्ते।)

चाणक्यः—(सक्रोधम्) ननु वक्तव्यं स्वजीवितं न सहन्ते इति। भद्र, अपि ज्ञायन्ते नामधेयतः?

चरः—कहं अजाणिअणामहेआ अज्जस्स णिवेदिअन्ति? (कथमज्ञातनामधेया आर्यस्य निवेद्यन्ते?)

चाणक्यः—तेन हि श्रोतुमिच्छामि।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अब अपने कार्य के विषय में बताओ। क्या प्रजा चन्द्रगुप्त को चाहती है या नहीं।

चर—आर्य, आपने पहले ही से ऐसा प्रबंध किया है कि विरक्ति के सभी कारणो को दूर कर दिया है। इस हेतु सारी प्रजा महाराज चन्द्रगुप्त में अनुरक्त है। किन्तु इस नगर मे राक्षस मंत्री के तीन परम मित्र ऐसे है जो महाराज चन्द्रगुप्त की श्री को सहन नही कर सकते।

चाणक्य—(क्रोध से) ऐसा कहो कि वे अपना जीवन नहीं सहन कर सकते। क्या तुम उनका नाम जानते हो?

चर—जो नाम न जानता तो आप के सामने निवेदन क्यो करता?

चाणक्य—तो मैं उनको सुनना चाहता हूँ।

Chanakya—Good man, now tell me the details of your mission Are the people attached to Vrishala?

Spy—What else all the reasons for discontentment have already been removed by your Noble self and so the peoples are attached to king Chandragupta of auspicious name But there are three persons in this city who are fast friends of minister Rakshas and they do not brook the glory of the king (Chandragupta) whose splendour is like that of the moon.

Chanakya (with anger)—You should rather say that they do not tolerate their own life Do you know their names?

Spy—How can be unknown persons be reported to you?

Chanakya—Then, I wish to know (the names)

टिप्पणी

(१) स्वनियोगवृत्तान्तम्—अपने कार्य का समाचार। (२) अथ किम्—स्वीकारवाचक अव्यय है। इसका अर्थ है "हाँ" "और नही तो क्या"। (३) तेषु

विरागकारणेषु परिह्रियमाणेषु—विराग के सभी कारणो को दूर कर देने पर अर्थात् नाराज होने के कारण दूर कर दिये गये है। यहाँ 'यस्य च भावेन भाव-लक्षणम्' सूत्र से सप्तमी हुई। (४) **चन्द्रश्रिय**—चन्द्रमा की श्री के समान श्री है जिसकी। चन्द्रस्य श्री इव श्री यस्य स तस्य। (५) **समुत्पन्नस्नेहबहुमाना**—जिनका (राक्षस मे) स्नेह और आदर पैदा हो गया है। (६) **नामधेयत**—नाम से। अत्र 'प्रकृत्यादिभ्य उपसख्यानम्' इति वार्तिकेन तृतीया। तत तृतीयान्तात् नामधेयशब्दात् तसि स्वार्थे। (७) **अज्ञातनामधेया**—जिनका नाम नही मालूम है।

चरः—सुणादु अज्जो। पढमं दाव अज्जस्स रिपुपक्खे बद्धपक्खवादो खवणओ जीवसिद्धी। (शृणोत्वार्यः। प्रथमं तावदार्यस्य रिपुपक्षे बद्धपक्षपातः क्षपणको जीवसिद्धिः।)

चाणक्यः—(सहर्षमात्मगतम्) अस्मद्रिपुपक्षे बद्धपक्षपातः क्षपणकः! (प्रकाशम्) किंनामधेयो हि सः।

चरः—जीवसिद्धी णाम सो जेण सा अमच्चरक्खसप्प-उत्ता विसकण्णा देवे पव्वदीसरे समावेसिदा। (जीवसिद्धि-र्नाम स येन सा अमात्यराक्षसप्रयुक्ता विषकन्या देवे पर्वतेश्वरे समावेशिता।)

चाणक्यः—(स्वगतम्) जीवसिद्धिरेष तावदस्मत्प्रणिधिः। (प्रकाशम्) भद्र, अथापरः कः?

चरः—अज्ज, अवरो वि अमच्चरक्खसस्स पिअवअस्सो काअत्थो सअडदासो णाम। (आर्य, अपरोऽपि अमात्यराक्षसस्य प्रियवयस्यः कायस्थः शकटदासो नाम।)

चाणक्यः—(विहस्यात्मगतम्) कायस्थ इति लघ्वी मात्रा। तथापि न युक्तं प्राकृतमपि रिपुमवज्ञातुम्। तस्मिन्मया सुहृच्छद्मना सिद्धार्थको विनिक्षिप्तः। (प्रकाशम्) भद्र, तृतीयं श्रोतुमिच्छामि।

चरः—तिदीओ वि अमच्चरक्खसस्स दुदीअं विअ हिअअं पुप्फउरणिवासी मणिआरसेट्ठी चन्दणदासो णाम। जस्स गेहे कलत्तं णासीकदुअ अमच्चरक्खसो णअरादो अवक्कन्तो। (तृतीयोऽपि अमात्यराक्षसस्य द्वितीयमिव हृदयं पुष्पपुरनिवासी मणिकारश्रेष्ठी चन्दनदासो नाम। यस्य गेहे कलत्रं न्यासीकृत्य अमात्यराक्षसो नगरादपक्रान्तः।)

हिन्दी अनुवाद—गुप्तचर—आर्य सुने। पहला तो आपके शत्रुओ का बहुत बड़ा सहायक क्षपणक जीवसिद्धि है।

चाणक्य—(हर्ष के साथ मन मे) हमारे शत्रुओ का सहायक क्षपणक! (प्रकट) उसका नाम क्या है?

चर—उसका नाम जीवसिद्धि है जिसने अमात्य राक्षस द्वारा भेजी गई विषकन्या को महाराज पर्वतेश्वर पर प्रयोग किया।

चाणक्य—(मन मे) अरे यह जीवसिद्धि तो हमारा गुप्तचर है। (प्रकट) अच्छा, दूसरा कौन है।

चर—आर्य, दूसरा अमात्य राक्षस का प्रियमित्र शकटदास कायस्थ है।

चाणक्य—(हँस कर अपने आप) "कायस्थ" यह तो छोटी मात्रा है (अर्थात्) (कोई बडी बात नही है) तथापि क्षुद्र शत्रु की भी उपेक्षा नही करनी चाहिए। इसी हेतु तो मैंने सिद्धार्थक को उसका मित्र बनाकर उसके पास रक्खा है। (प्रकाश) तीसरे को सुनना चाहता हूँ।

चर—तीसरा भी अमात्य राक्षस का ही अभिन्न हृदय पाटलिपुत्र का सबसे बडा जौहरी चन्दनदास है, जिसके घर मे अमात्य राक्षस अपना परिवार सुरक्षित छोडकर नगर से बाहर चला गया है।

Spy—Listen, Noble Sir The foremost supporter of your enemy is the mendicant Jivasiddhi

Chanakya (*To himself, Joyfully*)—The mendicant, the foremost supporter of our enemy (Aloud) What is his name?

Spy—He is Jivasiddhi by name who employed to king Parvateshwar, the poisoned-girl sent by minister Rakshas

Chanakya (*To himself*)—This Jivasiddhi is but my emissary (Aloud) Good man, who is the next?

Spy—Arya, the next is Shakatdas Kayastha who is a dear friend of minister Rakshas

Chanakya (*Laughing to himself*)—A Kayastha is an insignificant thing, still even an ordinary enemy should not be considered to be slight I have set Siddharthak on him in the guise of a friend (Aloud) Gentleman I wish to hear of the third.

Spy—The third is Chandandas, the jeweller-banker, the resident of Kusumpura and who is, as it were, the second self of minister Rakshas, and in whose house, minister Rakshas has left his family and retired from the city

टिप्पणी

(१) **बद्धपक्षपातः**—जिसने मित्रता कर ली है। जो प्रेम करता है। पक्षे पात (सुप्सुपा स०) बद्ध पक्षपात अनेन इति बद्धपक्षपात (ब० स०)। (२) **अमात्यराक्षसप्रयुक्ता विषकन्या**—अमात्येन राक्षसेन प्रयुक्ता इति अमात्यराक्षसप्रयुक्ता। अमात्यराक्षस द्वारा भेजी गई विषकन्या। इस चर को यह पता नही है कि जीवसिद्धि क्षपणक चाणक्य का ही आदमी इन्दुशर्मा है। चाणक्य ने तो यही बात फैला दी थी कि राक्षस ने विषकन्या को जीवसिद्धि के माध्यम से भेजकर पर्वतक को मरवाया है। (३) **समावेशिता**—नियुक्त किया। सम्—आ+विश्+णिच्+क्त कर्मणि। **प्रणिधि**—गुप्तचर। प्रणिधीयन्ते अस्मिन् इति प्र—नि+धा+कि। (४) **कायस्थ इति लघ्वी मात्रा**—कायस्थ तो छोटी चीज है। चाणक्य का मतलब है कि वह तो लिखने-पढने का काम करते है। उनसे लडाई नही हो सकती। अत शकटदास से विशेष भय नही है। (५) **सुहृच्छद्मना**—मित्र के वेष मे। (६) **मणिकारश्रेष्ठी**—सेठ, जौहरी। मणीन् करोतीति मणिकार 'मणिकारश्चासौ श्रेष्ठी च मणिकारश्रेष्ठी। (७) **कलत्रम्**—स्त्री को, परिवार को। (८) **न्यासीकृत्य**—निक्षिप्य। धरोहर रखकर। नि+अस्+घञ् कर्मणि=न्यास। अन्यास न्यास कृत्वा इति न्यास+च्वि+कृ+क्त्वा—ल्यप्। **नगरादपक्रान्त**—नगर से बाहर चला गया है। अप+क्रम्+क्त। अपादाने पञ्चमी है।

चाणक्यः—(आत्मगतम्) नूनं सुहृत्तमः। न अनात्मसदृशेषु राक्षसः कलत्रं न्यासीकरिष्यति। (प्रकाशम्) भद्र, चन्दनदासस्य गृहे राक्षसेन कलत्रं न्यासीकृतमिति कथमवगम्यते ?

चरः—अज्ज, इअं अङ्गुलिमुद्दा अज्जं अवगदत्थं करिस्सदि। (आर्य, इयमङ्गुलिमुद्रा आर्यमवगतार्थं करिष्यति।) (इत्यर्पयति।)

चाणक्यः—(मुद्रामवलोक्य गृहीत्वा राक्षसस्य नाम वाचयति)। (सहर्षं स्वगतम्।) ननु वक्तव्यं राक्षस एवास्मदङ्गुलिप्रणयी संवृत्त इति। (प्रकाशम्) भद्र, अङ्गुलिमुद्राधिगमं विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि।

चरः—सुणादु अज्जो। अत्थि दाव अहं अज्जेण पौरजणचरिदअण्णेसणे णिउत्तो परघरप्पवेसे परस्स अणासंकणिज्जेण इमिणा जमपडेण हिण्डन्तो मणिआरसेट्ठिचन्दणदासस्स गेहं पविट्ठोम्हि। तहिं जमपडं पसारिअ पडत्तोम्हि गीदाइं गाइदुं। (शृणोत्वार्यः। अस्ति तावदहमार्येण पौरजनचरितान्वेषणे नियुक्तः परगृहप्रवेशे परस्यानाशङ्कनीयेन अनेन यमपटेन आहिण्डमानो मणिकारश्रेष्ठिचन्दनदासस्य गृहं प्रविष्टोऽस्मि। तत्र यमपटं प्रसार्य प्रवृत्तोऽस्मि गीतानि गातुम्।)

चाणक्यः—ततः किम्?

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(स्वगत) सचमुच परम मित्र है। (क्योंकि) अपने से भिन्न जनो के पास राक्षस (अपनी) स्त्री को नही रखेगा। (प्रकट) भद्र, यह कैसे जानते हो कि चन्दनदास के घर में राक्षस ने अपनी स्त्री को रखा है?

चर—आर्य, यह अँगूठी आप को बता देगी। (अँगूठी देता है)

चाणक्य—(अँगूठी देखकर) और उसे लेकर राक्षस का नाम पढता है। (हर्ष से अपने मन मे) भद्र, अब तो राक्षस हमारी मुट्ठी में आ गया। (प्रकट) अच्छा, पूरे विस्तार से सुनाओ कि यह अँगूठी तुमको कैसे मिली?

चर—आर्य, सुनिये। मै तो पाटलिपुत्र के लोगो की मनोवृत्ति जानने के लिए आप द्वारा नियुक्त ही किया गया था। लोगो के घरों में इस यमपट के साथ प्रवेश करने में किसी को सन्देह न होने से इधर-उधर ढूँढ़ता-ढाँढता एक बार चन्दनदास के घर मे जा पहुँचा और वहाँ यमपट को फैला कर गीत गाने लगा।

चाणक्य—तब क्या हुआ?

Chanakya (*To himself*)—Really he is his best friend Rakshas will not entrust his wife to one who is not like a second self (Aloud) Good man, how did you know that Rakshas has left his wife in the house of Chandandas

Spy—Noble Sir, this ring will itself tell you (Gives him the ring)

Chanakya—(Seeing the ring and taking it, reads the name of Rakshas and to himself Joyfully) Well, it should be said that Rakshas himself has come in our fingers (Aloud) Good fellow, I wish to hear in detail how you got the ring

Spy—Noble Sir, listen The truth is that employed by you in finding out the minds of the people, I entered the house of the jeweller-banker Chandandas roaming with this board of Yama which cannot create suspicion in entering the house of others There, spreading Yama-board, I began to sing

Chanakya—What next ?

टिप्पणी

(१) **अवगतार्थं करिष्यति**—बतलायेगी। अवगत विदित अर्थ विषय येन तम् अवगतार्थम्। (२) **अस्मदङ्गुलिप्रणयी**—हमारे मुट्ठी मे आ गया। अस्माकम् अङ्गुलय तासु प्रणयी। चाणक्य को राक्षस की अँगूठी पाने से इतना आनन्द हुआ कि उसने यही समझा कि राक्षस हाथ मे आ गया है। (३) **विस्तरेण**—विस्तारपूर्वक। वि+स्तॄ+अप् भावे=विस्तर, तेन। विस्तारशब्दे तु 'प्रथने वावशब्दे' इति सूत्रेण घञ्प्रत्यय। अतएव 'वाक्यस्य विस्तर', 'पटस्य विस्तार' इत्यादि। **चरितान्वेषणे**—चरित का पता लगाने मे। (४) **परस्यानाशङ्कनीयेन**—जिससे दूसरो को शङ्का न हो। (५) **आहिण्डमान**—घूमता हुआ।

चरः—तदो एक्कादो अववरकादो पञ्चवरिसदेसीओ पिअदंसणीअसरीराकिदी कुमारओ बालत्तणसुलहकोदूहलोप्फुल्लणअणो णिक्कमिदुं पउत्तो। तदो हा णिग्गदो हा णिग्गदो त्ति संकापरिग्गहणिवेदइत्तिओ तस्स एव्व अववरकस्स अब्भन्तरे इत्थिआजणस्स उट्ठिदो महन्तो कलअलो। तदो ईसि दारदेशदाविदमुहीए एक्काए इत्थिआए सो कुमारओ णिक्कमन्तो एव्व णिब्भच्छिअ अवलम्बिदो कोमलाए बाहुलदाए। तस्साए कुमारसंरोधसंभमप्पचलिदङ्गुलिदो करादो पुरिसअङ्गुलिपरिणाहप्पमाणघडिआ विअलिआ इअं अङ्गुलिमुद्दिआ देहलीबन्धम्मि पडिआ उट्ठिदा ताए अणवबुद्धा एव्व मम चलणपासं समागच्छिअ पणामणिहुआ कुलबहु विअ णिच्चला

संबुत्ता। मए वि अमच्चरक्खसस्स णामंकिदेत्ति अज्जस्स पादमूलं पाविदा। ता एसो इमाए आअमो। (ततश्च एकस्मादपवरकात्पञ्चवर्षदेशीयः प्रियदर्शनीयशरीराकृतिः कुमारको बालत्वसुलभकौतूहलोत्फुल्लनयनो निष्क्रमितुं प्रवृत्तः। ततो हा निर्गतो हा निर्गत इति शङ्कापरिग्रहनिवेदयिता तस्यैवापवरकस्याभ्यन्तरे स्त्रीजनस्योत्थितो महान्कलकलः। तत ईषद्द्वारदेशदापितमुख्या एकया स्त्रिया स कुमारको निष्कामन्नेव निर्भत्स्यावलम्बितः कोमलया बाहुलतया। तस्याः कुमारसंरोधसंभ्रमप्रचलिताङ्गुलेः करात्पुरुषाङ्गुलिपरिणाहप्रमाणघटिता विगलितेयमङ्गुलिमुद्रिका देहलीबन्धे पतिता उत्थिता तया अनवबुद्धैव मम चरणपार्श्वे समागत्य प्रणामनिभृता कुलवधूरिव निश्चला संवृत्ता। मयापि अमात्यराक्षसस्य नामाङ्कितेति आर्यस्य पादमूलं प्रापिता तस्मादेषोऽस्या आगमः।)

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद देखने में बडा सुन्दर लगभग पाँच साल का एक बालक, जिसकी आँखे बालसुलभ कौतूहल से खिल गयी थी, एक कमरे से बाहर निकलने लगा और उसके निकलते ही भीतर रहने वाली स्त्रियो का "हाय कहाँ गया कहाँ गया" इस प्रकार घबराहट से भरा हुआ बडे जोर का होहल्ला मच गया। उसके बाद एक स्त्री ने दरवाजे से थोडा मुँह निकाल कर झाँका और निकलते हुए उस बालक को डाँटकर कोमल बाँहो से पकड लिया। यह अँगूठी जिसकी गढन पुरुष की अँगुली की नाप की है उस बालक को पकडने में घबराहट के कारण उस स्त्री की ही काँपती हुई अँगुली से निकल गई और चौखट पर गिर पडी और उछल कर उस स्त्री के बिना जाने मेरे पैर के पास चुपके से आकर प्रणाम करती हुई कुलवधू के समान निश्चल हो गई। मैंने भी अमात्य राक्षस का नाम इस पर देखकर आपकी सेवा मे इसे उपस्थित किया। मेरे हाथ में इस अँगूठी के आने की यही कहानी है।

After that a boy, about five years old, of a very lovely complexion, tried to come out of a room, with eyes shining with curiosity natural in a boy At this, there was a great hubble of ladies crying, "Alas, gone out Alas, gone out," which indicated alarm within the room. Then a lady, peeped through the door

and scolding the boy, who attempted to come out, caught him with her tender creeper-like arm This ring, which is made in the size of a man's finger, slipped off from that lady's shaking finger, while she was attempting to catch the boy, and dropped on the threshold, rebounded, and rolled up to the edge of my foot without being seen by her and stopped motionless like a bride while bowing down And, as it bears the name of minister Rakshas, I have brought it to your Noble Sir's foot This is the detail of how it was got

संस्कृत व्याख्या—तत च एकस्मात् अपवरकात् प्रकोष्ठात् पञ्चवर्षदेशीय अतिदर्शनीयशरीराकृति अतिदर्शनीया परममनोहरा शरीराकृति शरीररचना यस्य स कुमारक बालक बालत्वसुलभकौतूहलोत्फुल्लनयन बालत्वसुलभ बालकोचित यत् कौतूहलम् उत्सुकता तेन उत्फुल्ले विकसिते नयने नेत्रे यस्य स निष्क्रमितु बहिरागन्तु प्रवृत्त प्रचक्रमे नतु बहिरागत इति। तत हा निर्गत हा निर्गत हा दु खम् हा कष्टम् अपयात बालक इति शङ्कापरिग्रहनिवेदयिता शङ्कासूचक तस्यैव अपवरकस्य प्रकोष्ठस्य अभ्यन्तरे स्त्रीजनस्य नारीणा महान् कलकल कोलाहल उत्थित अजायत। तत ईषत् किंचित् द्वारदेशदापितमुख्या द्वारदेशे दापित दत्त मुख यया सा तया एकया स्त्रिया नार्या स कुमारक बालक निष्क्रामन् एव बहिरागच्छन् एव निर्भर्त्स्य तिरस्कृत्य कोमलया बाहुलतया निजकरेण अवलम्बित गृहीत निरुद्ध वा तस्या स्त्रिया कुमारसरोधसम्भ्रमचलिताङ्गुले कुमारस्य बालकस्य सरोधे नियमने य सभ्रम शीघ्रता तेन प्रचलिता अङ्गुलय यस्मिन् तस्मात् करात् हस्तात् पुरुषाङ्गुलिपरिणाहप्रमाणघटिता पुरुषस्य अङ्गुले परिणाह माप तस्य प्रमाणेन मात्रया विघटिता निर्मिता इयम् अङ्गुलिमुद्रिका विगलिता पतिता देहलीबन्धे पतिता उत्थिता तथा रमण्या अनवबुद्धा एव अविदिता एव मम चरणपार्श्वं समागत्य प्रणामनिभृता प्रणामे अभिवादनकार्ये निभृता निश्चला कुलवधूरिव निश्चला सवृत्ता गतिरहिता जाता मया अपि अमात्यराक्षसस्य नामाङ्किता नाम्ना अङ्किता चिह्निता इति अस्माद्धेतो आर्यस्य तव चाणक्यस्य पादमूल चरणप्रान्तम् इय प्रापिता आनीता। तत् एष अस्या मुद्राया आगम मुद्राप्राप्तिवृत्तान्त ।

टिप्पणी

(१) **अपवरकात्**—कमरे से, अपव्रियते अनेन अस्मिन् वा इति। अप+

वृ+अप् अधिकरणे करणे वा=अपवर । स एव अपवरक अपवर+कन्, तस्मात् । (२) **पञ्चवर्षदेशीय**—लगभग पाँच वर्ष की आयुवाला । पञ्च वर्षाणि अस्य इति पञ्चवर्ष (ब० स०) । ईषदून पञ्चवर्ष इति पञ्चवर्ष+देशीयर् । (३) **प्रियदर्शनीयशरीराकृति**—जिसके शरीर की आकृति अति प्रिय और सुन्दर थी । प्रिया दर्शनीया च शरीरस्य आकृति यस्य स । (४) **बालत्वसुलभ-कौतूहलोत्फुल्लनयन**—लडको मे स्वाभाविक कुतूहलता के कारण खिले हुए नेत्रवाला । बालत्वसुलभकौतूहलेन उत्फुल्ले नयने यस्य स । उत्फुल्ल—उद्+फल्+क्त कर्तरि 'ति च' इति सूत्रेण उत्वम् 'उत्फुल्लसफुल्लयोरुपसख्यानम्' इति वार्तिकेन लत्वम् । (५) **शङ्कापरिग्रहनिवेदयिता**—भय के आविर्भाव का सूचक, जिससे भय सूचित होता था । यह कोलाहल का विशेषण है । शङ्काया परिग्रह आविर्भाव तस्य निवेदयिता । परि+ग्रह्+अप्=परिग्रह । (६) **ईषद्द्वारदेश-दापितमुख्या**—जो दरवाजे के भीतर से थोडा-थोडा झाँकती हुई थी । ईषत् अल्प द्वारम् एव देश प्रदेश तत्र दापित निहित मुखम् आनन यया सा तया । (७) **कुमारसंरोधसभ्रमप्रचलिताङ्गुलेः**—लडके को (बाहर जाने से) रोकने मे व्याकुलता के कारण काँपती उँगली वाले हाथ से, कुमारस्य सरोध तस्मिन् सभ्रम तेन प्रचलिता अङ्गुलय यस्य स तस्मात् । यह करात् का विशेषण है । (८) **परिणाह**—विशालता, नाप । (९) **अनवबुद्धा**—उसके बिना जाने अर्थात् अँगूठी का गिरना उसे मालूम न पडा । (१०) **प्रणामनिभृता**—प्रणाम करने मे झुकी हुई या नम्र ।

चाणक्यः—भद्र ! श्रुतम्, अपसर । नचिरादस्य परिश्रम-स्यानुरूपं फलमधिगमिष्यसि ।

चरः—जं अज्जो आणवेदि । (यदार्य आज्ञापयति ।) (इति निष्क्रान्तः ।)

चाणक्यः—शार्ङ्गरव ! शार्ङ्गरव !

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! आज्ञापय ।

चाणक्यः—वत्स ! मसीभाजनं पत्रञ्चोपानय ।

शिष्यः—यदाज्ञापयत्युपाध्यायः (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य) उपाध्याय ! इदं मसीभाजनं पत्रञ्च।

चाणक्यः—(पत्रं गृहीत्वा स्वगतम्) किमत्र लिखामि ? अनेन खलु लेखेन राक्षसो जेतव्यः।

(प्रविश्य)

प्रतीहारी—जेदु अज्जो (जयत्वार्यः)।

चाणक्यः—(सहर्षमात्मगतम्) गृहीतो जयशब्दः। (प्रकाशम्) शोणोत्तरे ! किमागमनप्रयोजनम् ?

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—भद्र ! सुन लिया। जाओ बहुत जल्दी ही इस परिश्रम के योग्य पुरस्कार पावोगे।

गुप्तचर—श्रीमान् की जैसी आज्ञा। (बाहर चला जाता है।)

चाणक्य—शार्ङ्गरव ! शार्ङ्गरव !

(प्रवेश करके) शिष्य—गुरुजी, आज्ञा दीजिए।

चाणक्य—वत्स, दावात और कागज तो ले आओ।

शिष्य—आचार्य की जैसी आज्ञा (जाकर फिर आकर) आचार्य, यह दावात और कागज है।

चाणक्य—(कागज लेकर मन ही मन) इसमें क्या लिखूँ। इस लेख से तो राक्षस को जीतना है।

(प्रवेश करके) प्रतीहारी—जय हो महाराज ! जय हो।

चाणक्य—(प्रसन्नता से मन में ही) यह जय तो बडा ही अच्छा है। (जय शब्द तो पा लिया) (प्रकट) शोणोत्तरे, कैसे आना हुआ ?

Chanakya—Good man, I have heard everything, now go, presently you will get a reward befitting this toil of yours

Spy—As Noble Sir orders (Exit)

Chanakya—Sharangrava, Sharangrava

(Entering) *Pupil*—Preceptor, order me

Chanakya—My boy, bring me an inkpot and paper

Pupil—As the preceptor commands, (Going out and re-entering) Preceptor, it is the inkpot and paper

Chanakya (*Looking the leaf to himself*)—What shall I write on it Rakshas has to be conquered with this letter

(Entering) *Door-keeper*—Victory to the Noble Sir

Chanakya (*Joyfully to himself*)—"Victory" has been announced (Aloud) Sonottara, how have you come ?

टिप्पणी

(१) **नचिरात्**—शीघ्र। यहाँ 'न' 'नञ्' से भिन्न निषेधार्थक अव्यय है। 'चिरात्' भी दीर्घकालार्थक अव्यय है। न चिरात् (सुप्सुपा स०) अपवर्गे तृतीया। अव्ययत्वात् सुब्लोप। (२) **"अनेन खलु लेखेन राक्षसो जेतव्यः"** ज्योंही चाणक्य ऐसा सोचता है त्योंही प्रतीहारी आकर "जय हो" ऐसा कहती है। इसको चाणक्य एक शुभ शकुन मानता है और भावी विजय की आशा उसे प्रतीत होने लगती है इसी से वह कहता है "गृहीतो जयशब्द" इसको नाटकीय भाषा मे "गण्ड" कहते है। "गण्ड प्रस्तुतसबधिभिन्नार्थ सहसोदितम्" प्रस्तुतविषय के सम्बन्ध मे कोई बात सहसा पैदा हो जाना "गण्ड" है। यही इस नाटक का पताका स्थान है। (३) **प्रतीहारी**—राजा के पास के द्वार पर रहने वाली स्त्री प्रतीहारी कहलाती है। प्रतीहारी का लक्षण —**'सधिविग्रहसम्बद्धनानाचार-समुत्थितम्। निवेदयन्ति याः कार्य प्रतिहार्यस्तु ताः मताः'**।। प्रति+हृ+घञ्+ ङीप्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घ, तदा प्रतीहारी।

प्रतीहारी—अज्ज! देवो चन्दसिरी सीसे कमलमुउला-आरमञ्जलिं निवेसिअ अज्जं विणवेदि। इच्छामि अज्जेण अब्भणुण्णादो देवस्स पव्वदेसरस्स पारलोइअं कारेदुम्। तेण अ धारिदपुब्बाइं आहरणाइं बह्मणाणं पडिवादेमि त्ति। (आर्य! देवश्चन्द्रश्रीः शीर्षे कमलमुकुलाकारमञ्जलिं निवेश्य आर्यं विज्ञापयति—'इच्छाम्यार्येणाभ्यनुज्ञातः देवस्य पर्वतेश्वरस्य पारलौकिकं कर्तुम्। तेन च धारितपूर्वाण्याभरणानि ब्राह्मणानां प्रतिपादयामीति।)

चाणक्यः—(सहर्षमात्मगतम्) साधु वृषल! ममैव हृदयेन सह संमन्त्र्य सन्दिष्टवानसि। (प्रकाशम्) शोणोत्तरे! उच्यतामस्मद्वचनाद्वृषलः—'साधु वत्स! अभिज्ञः खल्वसि लोकव्यवहाराणां, तदनुष्ठीयतामात्मनोऽभिप्रायः। किन्तु पर्वतेश्वरधृतपूर्वाणि गुणवन्ति भूषणानि गुणवद्भ्य एव ब्राह्मणेभ्यः प्रतिपादनीयानि। तदहं स्वयमेव परीक्षितगुणान् ब्राह्मणान् प्रेषयामि'।

प्रतीहारी—जं अज्जो आणवेदि (यदार्य आज्ञापयति) (इति निष्क्रान्ता ।)

चाणक्यः—शार्ङ्गरव ! उच्यन्तामस्मद्वचनाद्विश्वावसु-प्रभृतयः त्रयो भ्रातरः—'वृषलात् प्रतिगृह्याभरणानि भवद्भिरहं द्रष्टव्य' इति ।

शिष्यः—यदाज्ञापयत्युपाध्यायः । (इति निष्क्रान्तः ।)

हिन्दी अनुवाद—प्रतिहारी—महाराज सम्राट् चन्द्रगुप्त ने कमल के मुकुल के समान प्रणामाञ्जलि को सिर से लगाकर कहा है "कि यदि आप आज्ञा दें तो महाराज पर्वतेश्वर का श्राद्ध कर दूँ और जो आभूषण वे पहले (जीवन-काल में) पहनते थे वे योग्य ब्राह्मणों को दे दिये जायँ।"

चाणक्य—(प्रसन्नता से मन में) धन्य हो वृषल, धन्य हो। मानो मेरे ही मन से सलाह लेकर कहलाया हो। (प्रकट) शोणोत्तरे, जाकर मेरी ओर से वृषल से कह दो "कि तुमको तो लोक-व्यवहार का ज्ञान है ही तो जैसा चाहो वैसा करो। परन्तु पर्वतेश्वर के धारण किए हुए मूल्यवान् आभूषणो को गुणी ब्राह्मणो को ही दिए जायँ। इसके लिए मै खुद ही ऐसे ब्राह्मणो को भेजता हूँ, जिनके गुण की परीक्षा हमने कर ली है।"

प्रतिहारी—जो आर्य की आज्ञा (बाहर निकल जाती है)।

चाणक्य—शार्ङ्गरव, जावो और मेरी तरफ से विश्वावसु आदि तीनो भाइयो से कहो कि वे लोग वृषल के पास जाकर उससे आभूषणो को लेकर मुझसे भेंट कर लें।

शिष्य—जैसी आचार्य की आज्ञा (जाता है)।

Door-keeper—Noble Sir, placing on his head his joined palms like a lotus-bud, the king, having the splendour like that of the moon, has sent this message, "By your order I want to perform the shraddha ceremony of king Parvateshwar and wish to give, in gift to Brahmans, the ornaments previously worn by him"

Chanakya—(*with joy to himself*) Bravo, Vrishala, you have said as if you had consulted my own heart (Aloud) Sonottara, go, tell the Vrishal on my behalf, "You are conversant with the ways of the world, so do as you wish But the valuable ornaments previously worn by king Parvateshwar should be given to the worthy alone, so I shall myself send Brahmans of tested merits"

Door-keeper—As Noble Sir commands (Exit).

Chanakya—Sharangrava, tell, in my name, the three brothers Vishvabasu etc, "Having got the ornaments from Vrishala, you have to see me"

Pupil—As the preceptor commands (Exit)

टिप्पणी

(१) **चन्द्रश्री.**—चन्द्रमा के समान श्री वाला। चन्द्रस्य श्रीरिव श्री शोभा यस्य स (बहु० व्री०)। (२) **कमलमुकुलाकारमञ्जलिम्**—कमल-कलिका की तरह अञ्जलि को। कमलस्य मुकुल कलिका तस्य आकार इव आकार यस्य त तादृशम् अञ्जलिम्। अज्यते अवबोध्यते सौशील्य येन असौ अञ्जलि. अञ्ज्+अलि। (३) **पारलौकिकम्**—श्राद्धकर्म। परलोके प्रयोजनमस्य इति परलोक+ठञ्—इक। अथवा परलोके भवम् इति परलोक+ठञ्। (४) **धारित-पूर्वाणि**—पहने हुए (आभषणो को) पूर्वं धारितानि इति धारितपूर्वाणि। (५) **अभिज्ञः**—जानने वाला। अभि+ज्ञा+क। (६) **परीक्षितगुणान्**—जिनके गुणो की परीक्षा हो चुकी है, अर्थात् गुणी। यह ब्राह्मणान् का विशेषण है। परीक्षिता गुणा येषा ते।

चाणक्यः—उत्तरोऽयं लेखार्थः पूर्वः कथमस्तु? (विचिन्त्य) आः, ज्ञातम्। उपलब्धवानस्मि प्रणिधिभ्यो यथा तस्य म्लेच्छराजबलस्य मध्यात् प्रधानतमाः पञ्च राजानः परया सुहृत्तया राक्षसमनुवर्तन्ते। ते यथा—

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—यह (आभूषण की बात) पत्र का अन्तिम विषय होगा। पहले क्या लिखा जाय। (सोचकर) अच्छा समझ गया। गुप्तचरों से मालूम हुआ है कि उस म्लेच्छराज की सेना में पाँच प्रधान राजा ऐसे हैं जो अत्यन्त मित्रभाव से राक्षस का अनुसरण कर रहे हैं। वे ये हैं:—

Chanakya—Let this be the last item in the letter, what should be the first? (Thinking) Ah, I have thought of it From the spies I have come to know that from among the body of Mlechha kings, five are foremost who follow Rakshas with great devotion They are (as follows)

टिप्पणी

(१) **उत्तर**—पीछे की बात। (२) **म्लेच्छराजबलस्य मध्यात्**—म्लेच्छ-

राज की सेना मे से । म्लेच्छाना राजा म्लेच्छराज तस्य बलस्य म्लेच्छराजबलस्य ।
(३) **परया सुहृत्तया**—बडे मित्रभाव से ।

कौलूतश्चित्रवर्मा मलयनरपतिः सिंहनादो नृसिंहः
काश्मीरः पुष्कराक्षः क्षतरिपुमहिमा सैन्धवः सिन्धुषेणः ।
मेघाख्यः पञ्चमोऽस्मिन् पृथुतुरगबलः पारसीकाधिराजो
नामान्येषां लिखामि ध्रुवमहमधुना चित्रगुप्तः प्रमार्ष्टु ॥२०॥

अन्वय—कौलूत चित्रवर्मा, नृसिह मलयनरपति सिहनाद, काश्मीर. पुष्कराक्ष क्षतरिपुमहिमा सैन्धव सिन्धुषेण पृथुतुरगबल पारसीकाधिराजः मेघाख्य पञ्चम अस्मिन् अहम् ध्रुवम् अधुना एषा नामानि लिखामि चित्रगुप्त प्रमार्ष्टु ।

हिन्दी अनुवाद—उनके नाम ये हैं—कुलूतराज, चित्रवर्मा, मनुष्यो में श्रेष्ठ मलयनरेश, सिहनाद, काश्मीर का राजा पुष्कराक्ष, शत्रुनाशक सिन्धुदेश का राजा सिन्धुषेण और विशाल घोडो की सेना से युक्त पारसीक देश का राजा मेघ। अभी तो इस पत्र में मै इन्ही का नाम लिखता हूँ। चित्रगुप्त अपनी सूची में से इनका नाम हटा दे (अर्थात् जीवितो की सूची में ये अब न रहेगे) ।

They are, Chitravarma, the king of Kuluta, Singhnada, the lion-like king of Malaya, Pushkaraksha, the king of Kashmir, Sindhusena, the king of Sindhu who has destroyed his enemies, and Megh, the king of Persia, with a vast army of cavalry I will surely write their names in my list, let Chitragupta remove them out of his (book)

सस्कृत व्याख्या—इमे ते पञ्च राजान ये राक्षसमनुवर्तन्ते कौलूत कुलूत-देशाधिप चित्रवर्मा प्रथम मलयनरपति मलयमहाराज नृसिह नरश्रेष्ठ सिह-नाद द्वितीय, काश्मीर कश्मीरदेशनाथ पुष्कराक्ष तृतीय, क्षतरिपुमहिमा क्षतः विनाशित रिपूणा शत्रुणा महिमा अभिषेणनशक्ति येन स सैन्धव सिन्धु-देशाधिप सिन्धुषेण चतुर्थ, पृथुतुरगबल प्रभूताश्वादिसैन्य पारसीकाधिराज मेघाख्य पञ्चम । लेखस्य मम पूर्वार्थभूता इम एव ते पञ्च राजान । एषा निश्चितमृत्यूना दैवेनाप्यशक्यरक्षाणाम् नामानि ध्रुवमहमस्मिन् लेखे लिखामि का शक्ति चित्रगुप्तस्य मल्लेखमन्यथाकर्त्तुम् । यद्यस्ति काचित् शक्ति आगच्छतु स प्रमार्ष्टु येषा नामानि अहम् लिखामि तेऽवश्य यमलोक गमिष्यन्ति ।

टिप्पणी

.(१) **कौलूतः**—कुलूत देश का राजा। कुलूताना राजा इति। कुलूत–अञ्। आधुनिक कुल्लू प्रदेश को कुलूत माना जाता है। (२) **पृथुतुरगबलः**—बहुत से घोडो की सेना वाला। तुरगाणा घोटकाना बल सैन्य तुरगबल। पृथु विशाल तुरगबल यस्य स (बहुव्रीहि)। **प्रमार्ष्टु**—मिटा दे। प्र–मृज्–लोट्—ति 'मृजेर्वृद्धि' इत्यनेन वृद्धि। जीवो को मारने-जिलाने का काम यमराज का है। उनका लेखपाल चित्रगुप्त है। वे जिसको मारना चाहते है उसका नाम अपनी पजिका से काट देते है और जिसको जिलाना चाहते है उसका नाम लिख रखते है। चाणक्य की ललकार है कि वह भी मेरे द्वारा विनाश करने के लिए लिखे गये नामो को मिटा नही सकता। इस पद्य मे अर्थापत्ति अलकार है, पाचाली रीति है, ओज गुण है, वीर रस है और स्रग्धरा छन्द है।

(विचिन्त्य) अथवा न लिखामि, पूर्वमनभिव्यक्तमेवास्ताम्। (नाट्येन लिखित्वा) शार्ङ्गरव!

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय! आज्ञापय।

चाणक्यः—वत्स! श्रोत्रियाक्षराणि प्रयत्नलिखितान्यपि नियतमस्फुटानि भवन्ति। तदुच्यतामस्मद्वचनात्सिद्धार्थकः। (कर्णे एवमिव) एभिरक्षरैः केनापि कस्यापि स्वयं वाच्यमिति अदत्तबाह्यनामानं लेखं शकटदासेन लेखयित्वा मामुपतिष्ठस्व न चाख्येयमस्मै चाणक्यो लेखयतीति।

शिष्यः—तथा। (इति निष्क्रान्तः।)

चाणक्यः—(स्वगतम्) हन्त जितो मलयकेतुः।

(प्रविश्य लेखहस्तः)

सिद्धार्थकः—जेदु अज्जो। अज्ज! अअं सो सअडदासेण लिहिदो लेहः। (जयत्वार्यः। आर्य! अयं स शकटदासेन लिखितो लेखः।)

चाणक्यः——(गृहीत्वा) अहो दर्शनीयान्यक्षराणि। (अनुवाच्य) भद्र! अनया मुद्रया मुद्रयैनम्।

सिद्धार्थकः——(तथा कृत्वा) अज्ज! अअं मुद्दिदो लेहः। किं अवरं अणुचिट्ठीअदु? (आर्य! अयं मुद्रितो लेखः। किमपरमनुष्ठीयताम्?)

चाणक्यः——भद्र! कस्मिंश्चिदाप्तजनानुष्ठेये कर्मणि त्वां व्यापारयितुमिच्छामि।

सिद्धार्थकः——(सहर्षम्) अज्ज! अणुग्गिहीदोह्मि। आणवेदु अज्जो किं इमिणा दासजणेण अज्जस्स अणुचिट्ठिदव्वम्। (आर्य! अनुगृहीतोऽस्मि। आज्ञापयत्वार्यः किमनेन दासजनेनार्यस्यानुष्ठातव्यम्।)

हिन्दी अनुवाद——(कुछ सोचकर) अथवा नाम न लिखूँ। पत्र का पूर्वभाग अस्पष्ट ही रहे (लिखने का अभिनय करके) शार्ङ्गरव।

शिष्य——(प्रवेश करके) आचार्य, आज्ञा दीजिए।

चाणक्य——वत्स, श्रोत्रिय के अक्षर बहुत सँभाल कर भी लिखे जाने पर अवश्य ही अस्पष्ट होते हैं तो हमारी तरफ से सिद्धार्थक से कहो (कान में ऐसा ऐसा) इन अक्षरों के द्वारा कोई व्यक्ति किसी से कुछ कहना चाहता है और इस पर बिना बाहर नाम लिखे हुए एक पत्र शकटदास से लिखवाकर मेरे पास आओ और उसको यह न बताना कि यह पत्र चाणक्य लिखवा रहा है।

शिष्य——ऐसा ही सही (चला जाता है)

चाणक्य——(मन में) अब क्या। मलयकेतु को तो जीत लिया।

सिद्धार्थक——जय हो महाराज, जय हो। शकटदास का लिखा हुआ यह लेख है।

चाणक्य——(लेकर) अहा! कितने सुन्दर अक्षर हैं। (बाँचकर) भद्र! इसे लो। इस मुद्रा की इस पर छाप लगा दो।

सिद्धार्थक——(ऐसा करके) आर्य, इस पर छाप लगा दी अब और क्या करूँ?

चाणक्य——भद्र, तुम्हे एक ऐसे काम में लगाना चाहता हूँ जो विश्वासपात्र व्यक्ति ही के द्वारा किया जा सकता है।

सिद्धार्थक——(हर्षपूर्वक) आर्य, बड़ी कृपा है। आज्ञा दीजिए, यह दास आर्य की क्या सेवा कर सकता है?

Chanakya (Thinking)—Or, I will not write the name, let the first part of the letter remain obscure (Acts writing) Sharangrava

Pupil (Entering)—Preceptor, command me

Chanakya—My boy, the letters of a Srotriya, however, carefully written, are always illegible, so tell Siddharthaka on my behalf (In the ear, so and so) some one has to be addressed by some one else in those words, and without writing anything (name) outside, get a letter written by Shakatdas and come to me without telling him that Chanakya is causing this letter to be written

Pupil—Be it so (Exit)

Chanakya (To himself)—Ha ! Now Malayaketu is overcome. (Entering with a letter in hand)

Siddharthaka—Victory to the Noble Sir Here is the letter written by Shakatdasa

Chanakya (Taking it)—Ah ! how beautiful are the letters. (Reading it) good man, seal it with this ring (stamp)

Siddharthaka (Having done so)—Noble Sir, I have stamped it What else should I do ?

Chanakya—Good man, I want to engage you in a work which has to be done by a trustworthy person

Siddharthaka (joyfully)—Noble Sir, I am favoured Noble Sir, may order me what has to be done by this slave ?

टिप्पणी

(१) **पूर्वम्**—पहला भाग। (२) **अनभिव्यक्तम्**—अस्पष्ट। न अभिव्यक्तम् इति+अनभिव्यक्तम् अभि+वि+अञ्ज्+क्त। (३) **श्रोत्रियाक्षराणि.. भवन्ति**—ऐसा कहकर चाणक्य ने शिष्य के मन मे उठने वाली शका का निवारण कर दिया कि चाणक्य क्यो शकटदास से पत्र लिखवाना चाहता है। (४) **प्रयत्नलिखितानि अपि**—बहुत सँभालकर लिखे जाने पर भी। (५) **अदत्तबाह्यनामानम् लेखम्**—वह पत्र जिसके बाहर (पाने वाले का) नाम न लिखा हो। अदत्तम् बाह्यनाम अस्मिन्निति अदत्तबाह्यनामानम्। (६) **उपतिष्ठस्व**—मुझसे मिलो। स्था धातु परस्मैपदी है परन्तु "उपाद्देवपूजा" नामक वार्तिक से इसका आत्मनेपद हो गया। (७) **आप्तजनानुष्ठेये**—विश्वासपात्र व्यक्ति के द्वारा किया जाने वाला। आप्तजनेन अनुष्ठेयमिति तस्मिन्नाप्तजनानुष्ठेये। **व्यापारयितुम्**—नियुक्त करने के लिए। वि+आ+पृ+णिच्+तुमुन्।

चाणक्यः—प्रथमं तावत् वध्यस्थानं गत्वा घातकाः सरोषदक्षिणाक्षिसंकोचसंज्ञा ग्राहयितव्याः । ततस्तेषु गृहीत-संज्ञेषु भयापदेशादितस्ततः प्रद्रुतेषु शकटदासो वध्यस्था-नादपनीय राक्षसं प्रापयितव्यः । तस्माच्च सुहृत्प्राणपरिरक्षण-परितुष्टात् पारितोषिकं ग्राह्यम् । राक्षस एव कञ्चित् कालं सेवितव्यः । ततः प्रत्यासन्नेषु परेषु प्रयोजनमिदमनुष्ठेयम् । कर्णे एवमिव

सिद्धार्थकः—जं अज्जो आणवेदि । (यदार्य आज्ञापयति) ।

चाणक्यः—शार्ङ्गरव ! शार्ङ्गरव ! !

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! आज्ञापय ।

चाणक्यः—उच्यतामस्मद्वचनात्कालपाशिको दण्डपाशि-कश्च यथा वृषलः समाज्ञापयति—'य एष क्षपणको जीवसिद्धि-र्नाम राक्षसप्रयुक्तो विषकन्यया पर्वतकं घातितवान् स एनमेव दोषं प्रख्याप्य सनिकारं नगरान्निर्वास्यताम्' इति ।

शिष्यः—तथा । (इति परिक्रामति ।)

चाणक्यः—वत्स ! तिष्ठ तिष्ठ—'योऽयमपरः कायस्थः शकटदासो नाम राक्षसप्रयुक्तो नित्यमस्मच्छरीरमभिद्रोग्धु-मिह प्रयतते स चाप्येनं दोषं प्रख्याप्य शूलमारोप्यताम् गृह-जनश्चास्य बन्धनागारं प्रवेश्यताम्' इति ।

शिष्यः—तथा । इति (निष्क्रान्तः ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—भद्र, तुम्हे वध्यभूमि मे जाना है और वहाँ वधिकों को यह संकेत समझा देना है कि शकटदास का वध करने के समय ज्योंही तुम उन पर क्रोध करोगे और अपनी दाहिनी आँख को दबाकर इशारा करोगे त्योंही वे (इशारे को समझकर) वहाँ से घबड़ा कर भाग खड़े होंगे। इसके बाद तुम वध्यभूमि से शकटदास को भगाकर राक्षस के पास पहुँचा देना और मित्र की प्राणरक्षा से प्रसन्न राक्षस से इनाम लेना और कुछ दिनों तक उसी की सेवा

करना और जब हमारे शत्रु समीप आ जायें तो यह काम करना (कान मे सब बातें बताता है)।

सिद्धार्थक—जैसी आर्य की आज्ञा।

चाणक्य—शार्ङ्गरव! शार्ङ्गरव!!

(प्रवेश कर) शिष्य—गुरु जी! आज्ञा दीजिये।

चाणक्य—जाकर मेरी ओर से कालपाशिक और दण्डपाशिक से कहो कि सम्राट् चन्द्रगुप्त की आज्ञा है कि जीवसिद्धि नामक क्षपणक जिसने राक्षस द्वारा भेजी गई विषकन्या से पर्वतेश्वर की हत्या करायी वह इसी दोष के कारण अपमान-पूर्वक नगर से निकाल दिया जाय।

शिष्य—अच्छा (जाने लगता है)।

चाणक्य—वत्स! रुको, रुको। दूसरा आदमी जो शकटदास कायस्थ है जो राक्षस का भेजा हुआ है और नित्यप्रति हमारे शरीर (चन्द्रगुप्त) से द्रोह करने का प्रयत्न करता रहता है, वह भी इसी अपराध की घोषणा करके शूली पर चढ़ा दिया जाय और उसके बाल-बच्चो को कारागार में भेज दिया जाय।

शिष्य—ऐसा ही सही (बाहर चला जाता है)।

Chanakya—First of all, go to the execution ground and teach the executioners the meaning of the signal of contracting the right eye in anger, then they will, having understood the signal run away hither and thither, pretending to be afraid Then you will remove Shakatdas from the execution ground and take him to Rakshas, there reward has to be accepted by you from Rakshas, who will be pleased at the saving of his friend's life Then you should serve Rakshas for sometime and when all our enemies have come close to us you have to do this (whispers in the ear)

Siddharthaka—As your Noble Sir commands

Chanakya—Sharangrava, Sharangrava

Pupil (Entering)—Preceptor, order me

Chanakya—Go and tell Kalapashika and Dandapashika in my name that Vrishal orders thus, "He, the mendicant, known as jivasiddhi, who, being employed by Rakshas, had killed Parvateshwara with a poison-girl, be turned out from the city with great insult for this very offence

Pupil—Be it so (Prepares to go)

Chanakya—Stop, my boy, stop And this other, a Kayastha, named Shakatdasa, who, being sent here by Rakshas, always tries to harm our person, be hanged for this offence and the members of his family be sent to the prison

Pupil—So be it. (Exit)

सस्कृत व्याख्या—प्रथमम् आदौ तावत् वधस्थान वधभूमि गत्वा घातका: हिसका सरोषदक्षिणाक्षिसकोचसज्ञा ग्राहयितव्या क्रोधपूर्वक त्व दक्षिण नेत्र किञ्चित् निमीलय तथा स्वसकेतस्यार्थं घातकान् बोधयेति भाव । तत तेषु घातकेषु गृहीतसज्ञेषु ज्ञातसकेतेषु भयापदेशात् भयस्य मिष कृत्वा इत तत प्रद्रुतेषु निर्गतेषु शकटदास वधस्थानात् अपनीय राक्षस प्रापयितव्य नेतव्य । तस्मात् राक्षसात् सुहृत्प्राणपरिरक्षणपरितुष्टात् मित्रप्राणरक्षाप्रसन्नात् पारितोषिक पुरस्कार ग्राह्य । कचित्काल तत्र स्थित्वा राक्षस एव सेवितव्य राक्षसस्य सेवा कुरु । तत तदनन्तर प्रत्यासन्नेषु परेषु शत्रुषु समीपमागतेषु इदम् प्रयोजनम् कार्यम् अनुष्ठेयम् कार्यम् ।

यत् आर्य आज्ञापयति आदिशति । अस्मद्वचनात् मम कथनानुसारेण कालपाशिक दण्डपाशिक उच्यताम् कथ्यताम् यथा वृषल चन्द्रगुप्त समाज्ञापयति आज्ञा करोति य एष क्षपणक बौद्धभिक्षु जीवसिद्धि नाम राक्षसप्रयुक्त राक्षसेन नियुक्त विषकन्यया पर्वतक राजानम् घातितवान् स एनमेव दोषम् अपराधम् प्रख्याप्य घोषयित्वा सनिकारम् अपमानसहितम् नगरात् निर्वास्यताम् बहि क्रियताम् । य अयम् अपर द्वितीय कायस्थ शकटदासो नाम राक्षसप्रयुक्त राक्षसनियोजित नित्य सततम् अस्मच्छरीर राजान वृषलम् अभिद्रोग्धुम् इह अस्मिन्नगरे प्रयतते स चापि एन दोषम् अपराध प्रख्याप्य घोषयित्वा शूलमारोप्यताम् शूलेन हन्यताम् अस्य गृहजन च परिवार बन्धनागारम् कारागृहे प्रवेश्यताम् स्थाप्यताम् ।

टिप्पणी

(१) **सरोषदक्षिणाक्षिसंकोचसज्ञाम्**—क्रोध के साथ दाहिनी आँख के दबाने का इशारा। रोषेण सह वर्तमानम् सरोषम् (बहुव्रीहि) दक्षिणम् अक्षि दक्षिणाक्षि (कर्मधारय) तस्य सकोच । सरोष यथा तथा दक्षिणाक्षिसकोच स एव सज्ञासकेत ताम्। तात्पर्य यह है कि सिद्धार्थक घातको को इस प्रकार पहले से ही सकेत कर दे—'शकटदास को शूली पर चढाये जाने के अवसर पर जब मैं दाहिनी आँख का इशारा करूँ उस समय तुम लोग शकटदास को छोड़कर भाग जाना।' (२) **ग्राहयितव्य**—समझा दिया जाय—बोधयितव्य । ग्रह्+णिच्+तव्य । (३) **तेषु प्रद्रुतेषु**—उनके भाग जाने पर। भावे सप्तमी है। (४) **भयापदेशात्**—डर के बहाने से । भयम् एव अपदेश छलम् भयाप-

देशम् तस्मात्। घातक लोग भी बनावटी भय का बहाना करके। (५) **तस्मात् सुहृत्प्राणपरिरक्षणपरितुष्टात्**—मित्र के प्राण की रक्षा हो जाने के कारण प्रसन्न हुए उस (राक्षस) से। (६) **प्रत्यासन्नेषु परेषु**—शत्रु के समीप आ जाने पर। (७) **कालपाशिकः दण्डपाशिकः**—ये दोनो वधिक हैं। कालपाश प्रहरणमस्य, दण्डपाशौ प्रहणे अस्य इति कालपाश, दण्डपाश+ठञ्—इक। (८) **घातितवान्**—वध किया, हत्या किया या करवाया। हन्+णिच्+क्तवतु। (९) **सनिकारम्**—अपमान के साथ।

चाणक्यः—(चिन्तां नाटयित्वा आत्मगतम्) अपि नाम दुरात्मा राक्षसो गृह्येत ?

सिद्धार्थकः—अज्ज ! गहीदो। (आर्य ! गृहीतः।)

चाणक्यः—(सहर्षमात्मगतम्) हन्त ! गृहीतो राक्षसः। (प्रकाशम्) भद्र ! कोऽयं गृहीतः ?

सिद्धार्थकः—गहीदो मए अज्जस्स सन्देसो, ता गमिस्सं अहं कज्जसिद्धीए। (गृहीतो मया आर्यस्य सन्देशः। तद्गमिष्याम्यहं कार्यसिद्ध्यै।)

चाणक्यः—(साङ्गुलिमुद्रं लेखमर्पयित्वा) गम्यताम्। अस्तु ते कार्यसिद्धिः।

सिद्धार्थकः—तह। (तथा।) (इति निष्क्रान्तः।)

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! कालपाशिको दण्डपाशिकश्च उपाध्यायं विज्ञापयतः—'इदमनुष्ठीयते देवस्य चन्द्रगुप्तस्य शासनम्' इति।

चाणक्यः—शोभनम्। वत्स ! मणिकारश्रेष्ठिनं चन्दनदासमिदानीं द्रष्टुमिच्छामि।

शिष्यः—तथा। (इति निष्क्रम्य चन्दनदासेन सह पुनः प्रविश्य) इत इतः श्रेष्ठिन् !

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य (चिन्ता का अभिनय करके) क्या यह दुष्ट राक्षस अब भी पकडा नही जा सकता (वश में नहीं किया जा सकता)।

सिद्धार्थक—आर्य, पकडा गया।

चाणक्य—(प्रसन्नता से अपने मन नें) बस, अब राक्षस वश में आ गया (प्रकट) वत्स, यह कौन पकड़ा गया ?

सिद्धार्थक—मैंने आर्य का सन्देश समझ लिया। अब मैं अपना काम सिद्ध करने जाता हूँ।

चाणक्य—(अँगूठी के छाप से युक्त पत्र सौंपकर) जाओ। तुम्हारा कार्य सिद्ध हो।

सिद्धार्थक—जैसी आज्ञा। (चला जाता है)

(प्रवेश करके) शिष्य—आचार्य कालपाशिक और दण्डपाशिक आपसे निवेदन करते है कि देव चन्द्रगुप्त की आज्ञा का पालन हो रहा है।

चाणक्य—अच्छा वत्स, अब मैं सेठ जौहरी चन्दनदास को देखना चाहता हूँ।

शिष्य—जैसी आज्ञा (बाहर जाकर फिर चन्दनदास के साथ प्रवेश कर) सेठ जी, इधर आइए, इधर।

Chanakya (*Acts reflecting to himself*)—Would wicked Rakshas be really caught ?

Siddharthaka—Noble Sir, caught

Chanakya (*With joy to himself*)—Ha, is Rakshasa caught ? (Aloud) Good man, who is it that is caught ?

Siddharthaka—Noble Sir, your message is caught by me. Now I go for the success of my mission

Chanakya (*Handing over the letter, bearing seal*)—Go, May you be successful in your mission

Siddharthaka—So be it (Goes away)

Pupil (Entering)—Preceptor, Kalapashika and Dandapashika inform you, "The order of king Chandragupta is being carried out"

Chanakya—Very well My boy, I wish to see the jeweller-banker Chandandasa

Pupil—Very well (Going out and coming with Chandandas)—This way banker, this way

टिप्पणी

अपि—यहाँ सभावनार्थक अव्यय है। 'गर्हासमुच्चयप्रश्नशङ्कासंभावनास्वपि' इत्यमर। ज्यो ही चाणक्य कहता है "अपि राक्षस गृह्येत" त्यो ही आवाज आती है "गृहीत" यह एक दूसरा शकुन (गण्ड) है। **हन्त**—यहाँ हर्ष-सूचक अव्यय है।

चन्दनदासः—(स्वगतम्)

चाणक्कम्मि अअरुणे सहसा सद्दाविदस्स लोअस्स।
णिद्दोसस्स वि सङ्का किं उण मह जाददोसस्स ॥२१॥

ता भणिदा मए धणसेणप्पमुहा णिअणिवेससंठिआ—कदावि चाणक्कहदओ गेहं विचिणावेदि। ता अवहिदा णिव्वहध भट्टिणो अमच्चरक्खसस्स घरअणम्। मह दाव जं होदि तं होदु त्ति।

(चाणक्येऽस्मिन्नकरुणे सहसा शब्दायितस्य लोकस्य।
निर्दोषस्यापि शङ्का किं पुनर्मम जातदोषस्य॥

तस्माद्भणिता मया धनसेनप्रमुखा निजनिवेशसंस्थिता:—कदापि चाणक्यहतको गेहं विचिनोति। तस्मादवहिता निर्वहत भर्तुरमात्यराक्षसस्य गृहजनम्। मम तावत् यद्भवति तद्भवतु इति।)

शिष्यः—भोः श्रेष्ठिन्! इत इतः।

चन्दनदासः—अअं आअच्छामि। (अयमागच्छामि।)

(उभौ परिक्रामतः)

शिष्यः—(उपसृत्य) उपाध्याय, अयं श्रेष्ठी चन्दनदासः।

चन्दनदासः—जेदु अज्जो। (जयत्वार्यः)।

चाणक्यः—(नाट्येनावलोक्य) श्रेष्ठिन्! स्वागतम्। इदमासनमास्यताम्।

अन्वय—अकरुणे अस्मिन् चाणक्ये सहसा शब्दायितस्य लोकस्य निर्दोषस्य अपि शङ्का, जातदोषस्य मम पुन किम्?

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास—(मन में) यह चाणक्य भी कैसा निर्दय है कि निर्दोष व्यक्ति भी अचानक इसके सामने बुलाया जाने पर काँप उठता है। फिर मुझ अपराधी का क्या कहना।

इसलिए अपने घर में रहने वाले धनसेन आदि से मैंने कह दिया है कि कभी भी जब दुष्ट चाणक्य मेरे घर की तलाशी ले तो सावधानी से अमात्य राक्षस के परिवार को हटा देना। मुझ पर जो बीते सो बीते।

शिष्य—ऐ सेठ जी, इधर से, इधर से।

चन्दनदास—यह मैं आता हूँ। (दोनो घूमते हैं)

शिष्य—(पास जाकर) यह सेठ चन्दनदास हैं।

चन्दनदास—महाराज की जय हो।

चाणक्य—(देखने का अभिनय करके) सेठ, स्वागत है। लीजिए इस आसन पर बैठिए।

Chandandas (*To himself*)—Chanakya is cruel and so apprehension arises even in an innocent person when he is summoned all of a sudden, what is to be said of me who am guilty Therefore, I have instructed Dhansena, etc who live in my house, thus "wretched Chanakya may search my house at any time, so remove, with care, the members of the family of our master, minister Rakshas Let come what may unto me"

Pupil—This way, O banker, this way

Chandandas—Here I come (Both go round)

Pupil—(Going near) Preceptor, here is Chandandas, the banker

Chandandas—Victory to Noble Sir

Chanakya—(Acting seeing) Welcome Banker Here is a seat, sit down on it

सस्कृत व्याख्या—अकरुणे दयारहिते चाणक्ये सहसा शब्दायितस्य आहूतस्य निर्दोषस्य अपि दोषरहितस्य अपि जनस्य प्राणिन शङ्का भयम् जायते अर्थात् "न जाने कि करिष्यति" इत्यादिरूप भय जायते मम पुनर्जातदोषस्य राक्षसकलत्र-रक्षणादिना कृतराजापराधिन पुन कथैव का।

तस्मात्कारणात् निजनिवेशसस्थिता मद्गृहनिवासिन धनसेनप्रमुखा मया भणिता कथिता, कदापि चाणक्यहतक क्रूर चाणक्य मद्भवन मम गृह विचिनोति निरूयति तस्मात् अवहिता सावधानतया निर्वहत अपनयत भर्त्तु स्वामिन अमात्यराक्षसस्य गृहजनम् कुटुम्बम् मम तावत् एतेन कर्मणा यद्भवति तद्भवतु।

टिप्पणी

(१) **अकरुणे**—निर्दये। अविद्यमाना करुणा यस्य स अकरुण (नञ्ब-हुव्रीहि), तस्मिन्। (२) **शब्दायितस्य**—बुलाये गए। शब्द+क्यङ+णिच्+

क्त । **जातदोषस्य**—राक्षस के परिवार को अपने घर मे छिपाकर रखने के कारण चन्दनदास अपने को अपराधी समझ रहा है। इस श्लोक मे अर्थापत्ति अलकार तथा आर्या छन्द है। (३) **चाणक्यहतक**—दुष्ट चाणक्य। हत एव हतक. चाणक्यश्चासौ हतकश्चेति चाणक्यहतक, "कुत्सितानि कुत्सनै" इति समास । (४) **विचिनोति**—तलाशी ले। (५) **निर्वहत**—हटा देना।

चन्दनदासः—(प्रणम्य) किं ण जाणादि अज्जो जहा अणुचिदो उवआरो हिअअस्स परिहवादोवि दुःखमुप्पादेदि। ता इह ज्जेव उचिदाए भूमीए उवविसामि। (किं न जानात्यार्यः यथानुचित उपचारो हृदयस्य परिभवादपि दुःखमुत्पादयति। तस्मादिहैवोचितायां भूमावुपविशामि।)

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन्! मा मैवम्। उचितमेवैतत् अस्मद्विधैः भवतः। तदुपविश्यतामासन एव।

चन्दनदासः—(स्वगतम्) उपलक्खिदमणेण दुट्ठेन किंवि। (उपलक्षितमनेन दुष्टेन किमपि।) (प्रकाशम्) जं अज्जो आणवेदि त्ति। (यदार्य आज्ञापयति।) (उपविष्टः।)

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन् चन्दनदास! अपि प्रचीयन्ते संव्यवहाराणां वृद्धिलाभाः।

चन्दनदासः—(स्वगतम्) अच्चादरो संकणीओ। (अत्यादरः शङ्कनीयः)। (प्रकाशम्) अह इं। अज्जस्स प्पसाएण अखण्डिदा मे वणिज्जा। (अथ किम्। आर्यस्य प्रसादेन अखण्डिता मे वणिज्या।)

चाणक्यः—न खलु चन्द्रगुप्तदोषा अतिक्रान्तपार्थिवगुणानधुना स्मारयन्ति प्रकृतीः?

चन्दनदासः—(कर्णौ पिधाय) सन्तं पावम्। सारअणिसासमुग्गएण विअ पुण्णिमाचंदेन चन्दसिरिणा अहिअं णन्दन्ति पकिदिओ। (शान्तं पापम्। शारदनिशासमुद्गतेनेव पूर्णिमाचन्द्रेण चन्द्रश्रियाधिकं नन्दन्ति प्रकृतयः।)

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास—(प्रणाम करके) क्या आर्य यह नहीं जानते कि अनुचित सत्कार तिरस्कार से भी अधिक दु:खदायी होता है। मेरे लिए तो उचित आसन यही जमीन है; तो इसी पर मैं बैठता हूँ।

चाणक्य—सेठ जी, ऐसा न कहिए। हम लोगो के समान लोगो द्वारा आप को यही उचित है। अत. आसन पर ही बैठे।

चन्दनदास—(मन में) इस दुष्ट को कुछ मालूम हो गया है। (प्रकट) जो आर्य की आज्ञा।

चाणक्य—अजी सेठ चन्दनदास! आपका व्यवसाय तो बढ रहा है न?

चन्दनदास—(मन में) बहुत आदर शंका का कारण होता है (अर्थात् मेरा जो इतना आदर हो रहा है, वह शङ्का पैदा कर रहा है)। (प्रकट) हॉ महाराज, आपकी कृपा से मेरा व्यवसाय ठीक-ठीक चल रहा है।

चाणक्य—क्या कभी-कभी चन्द्रगुप्त की त्रुटियाँ प्रजाओं को स्वर्गीय महा-राज के गुणों का स्मरण नही कराती।

चन्दनदास—(कानो पर हाथ रख करके) नही-नही, ऐसा मत कहे। महाराज, जनता तो चन्द्रगुप्त को देखकर ऐसी प्रसन्न है जैसी की शरत्-पूर्णिमा के चन्द्र को देखकर प्रसन्न होती है।

Chandandas (Bowing)—Noble Sir, do not you know that undue honour is more painful than even indignity So I sit here on the ground which is a proper seat for me

Chanakya—Oh Banker, do not do so People like me have thought this to be proper place for you So sit on this seat

Chandandas (To himself)—This rogue has known some thing (Aloud) As your Noble self says (Sits)

Chanakya—Oh banker Chandandas ! is your business prospering ?

Chandandas (To himself)—Too much honour is to be dreaded (Aloud) Through your favour my businesss is un-interrupted

Chanakya—Do the lapses of Chandragupta ever remind the people of the merits of the deceased king

Chandandas (Shuting his ears)—Do not say so, Sir All the subjects are attached to Chandragupta in the same way as they are to the full moon of the Sharat

टिप्पणी

(१) **अनुचित उपचार**—अनुचित सम्मान। उपचार—उपचर्यते अनेन इति उप+चर्+घञ्। (२) **परिभवात्**—अपमान से। परि+भू+अप् भावे= परिभव, तस्मात्। भाव यह है कि जो व्यक्ति जिस सम्मान के योग्य नही है

यदि उस व्यक्ति का वैसा ही सम्मान किया जाता है तो उससे प्रसन्नता के स्थान पर दुःख ही अधिक होता है। चन्दनदास चाणक्य के सामने आसन पर बैठने का अधिकारी नही है। अतः जब चाणक्य उसे आसन पर बैठने के लिए कहता है तो उसे प्रसन्नता के स्थान पर तिरस्कार ही मालूम पडता है। (३) **उपलक्षितम्**—ताड गया है, जान गया है। उप+लक्ष्+क्त। (४) **प्रचीयन्ते**—बढ रहे हैं। (५) **संव्यवहाराणाम् वृद्धिलाभाः**—खरीद और बिक्री के लाभ (मुनाफा)। (६) **वणिज्या**—वणिग्व्यापार। 'वाणिज्य तु वणिज्या स्यात्' इत्यमर। वणिजः कर्म भावो वा इति वणिज्या वणिज्+यत् भावे+टाप् स्त्रियाम्। ('ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ् वाणिज्यम्' इति दीक्षित। माधवस्तु 'वणिज्याशब्द स्वभावात् स्त्रीलिग। भावे एव चात्र प्रत्ययो न तु कर्मणि' इत्याह। **अतिक्रान्तपार्थिवगुणान्**—मृतक राजा (नन्द के) गुणो को। अतिक्रान्त पार्थिव तस्य गुणान्। (७) **स्मारयन्ति**—याद दिलाते है। (८) **शारदनिशासमुद्गतेन इव**—शरद् ऋतु की रात के (चाँद के) समान। शारदी निशा शारदनिशा (कर्मधारय) तत्र समुद्गत शरद्+अण्+ङीप् स्त्रियाम् शारदी।

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन्! यद्येवं प्रीताभ्यः प्रकृतिभ्यः प्रियमिच्छन्ति राजानः।

चन्दनदासः—आणवेदु अज्जो किं कित्तिअं इमादो जणादो इच्छीअदि त्ति। (आज्ञापयतु आर्यः किं कियदस्माज्जनादिष्यत इति।)

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन्! चन्द्रगुप्तराज्यमिदं, न नन्द-राज्यं, यतो नन्दस्यैवार्थरुचेरर्थसम्बन्धः प्रीतिमुत्पादयति, चन्द्रगुप्तस्य तु भवतामपरिक्लेश एव।

चन्दनदासः—(सहर्षम्) अज्ज! अणुग्गहीदोह्मि। (आर्य! अनुगृहीतोऽस्मि।)

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन्! स चापरिक्लेशः कथमाविर्भव-तीति ननु भवता प्रष्टव्याः स्मः।

चन्दनदासः—आणवेदु अज्जो। (आज्ञापयतु आर्यः।)

चाणक्यः—संक्षेपतो राजनि अविरुद्धाभिर्वृत्तिभिर्वर्तितव्यम् ।

चन्दनदासः—अज्ज ! को उण अधण्णो रण्णा विरुद्धो त्ति अज्जेण अवगच्छीअदि । (आर्य ! कः पुनरधन्यः राज्ञा विरुद्ध इति आर्येण अवगम्यते ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—हे सेठ, यदि ऐसी बात है तो अपनी प्रसन्न प्रजा से राजा लोग कुछ प्रिय की आशा करते हैं।

चन्दनदास—आर्य, आज्ञा दें इस जन से क्या और कितनी सेवा आप चाहते हैं।

चाणक्य—हे सेठ, यह राज्य अब चन्द्रगुप्त का है न कि नन्द का। धन के लोभी नन्द को ही धन-सम्पत्ति से आनन्द हो सकता है। चन्द्रगुप्त को तो आप की सुख-समृद्धि ही प्रसन्न कर सकती है।

चन्दनदास—(प्रसन्न होकर) आर्य, यह तो आप की कृपा है।

चाणक्य—हे सेठ, तुमको तो यह हम से पूछना था कि वह दुःख का अभाव (सुख-समृद्धि) कैसे रह सकता है।

चन्दनदास—आर्य, आज्ञा दें।

चाणक्य—संक्षेप में, मुझे यही कहना है कि राजा में हम अनुकूल वृत्ति वाले रहें (उसके प्रतिकूल कोई काम न करें)।

चन्दनदास—वह कौन अभागा है जिसे आप राज्य के प्रतिकूल मानते हैं।

Chanakya—O Banker, if so the king expects pleasure from his pleased subjects

Chandandas—Noble Sir, order, what and how much is expected of this person (me)

Chanakya—O Banker, this kingdom now does not belong to Nanda, it now belongs to Chandragupta The greedy Nanda was pleased with money but Chandragupta is pleased with your want of distress

Chandandas (with joy)—Noble Sir, I am favoured

Chanakya—O Banker, you ought to have asked of me how that absence of trouble can appear

Chandandas—Noble Sir, may tell

Chanakya—In brief, I have to say that we should behave in a manner which is unhostile to the king

Chandandas—Noble Sir, who is that wretched fellow whom you deem to be hostile to the king

टिप्पणी

(१) **प्रीताभ्यः प्रकृतिभ्यः**—प्रसन्न हुई प्रजा से। (२) **कियत्**—कितना। किं परिमाणमस्य इति। किम्+यत्। (३) **अर्थरुचेः**—रुपये का लोभी। अर्थे रुचि यस्य स तस्य अर्थरुचे। यह नन्दस्य का विशेषण है। नन्द धन के लोभी के रूप मे प्रसिद्ध था। उसके विषय मे कहा जाता है कि वह ९९ करोड सोने की मोहरो का अधिपति था (अक ३ श्लोक २७)। अर्थ-सम्बन्ध—धन लाभ—धन की प्राप्ति। (४) **भवताम् अपरिक्लेश एव**—आप (प्रजा) लोगो को कष्ट का न होना। नन्द धन का लोभी था, अत उसे यही अच्छा लगता था कि प्रजा उसे धन दे। परन्तु चन्द्रगुप्त की यह इच्छा रहती है कि प्रजा को कष्ट न हो। यही चाणक्य के कहने का तात्पर्य है। (५) **राज्ञा विरुद्ध**—राजा के खिलाफ। राज्ञा सह कृतविरोध। सहार्थे तृतीया। वि+रुध्+क्त कर्तरि=विरुद्ध।

चाणक्यः—भवानेव तावत्प्रथमम्।

चन्दनदासः—(कर्णौ पिधाय) सन्तं पावं, सन्तं पावम्। कीदिसो तिणाणं अग्गिणा सह विरोहो? (शान्तं पापं, शान्तं पापम्। कीदृशः तृणानाम् अग्निना सह विरोधः?)

चाणक्यः—अयमीदृशो विरोधः यत् त्वमद्यापि राजापथ्यकारिणः अमात्यराक्षसस्य गृहजनं स्वगृहमभिनीय रक्षसि।

चन्दनदासः—अज्ज! अलीअं एदं। केणावि अणभिण्णेण अज्जस्स णिवेदिदम्। (आर्य! अलीकमेतत् केनाप्यनभिज्ञेन आर्यस्य निवेदितम्।)

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन्! अलमाशङ्कया। भीताः पूर्वराजपुरुषाः पौराणामनिच्छतामपि गृहेषु गृहजनं निक्षिप्य देशान्तरं व्रजन्ति। ततस्तत्प्रच्छादनं दोषमुत्पादयति।

चन्दनदासः—एवं ण्णेदम्। तस्सिं समए आसि अह्मघरे अमच्चरक्खसस्स घरअणो त्ति। (एवं नु इदम्। तस्मिन् समये आसीदस्मद्गृहे अमात्यराक्षसस्य गृहजन इति।)

चाणक्यः—पूर्वमनृतमिदानीमासीदिति परस्परविरोधिनी वचने ।

चन्दनदासः—एत्तिअं ज्जेव अत्थि मे वाआच्छलम् । (एतावदेवास्ति मे वाक्छलम् ।)

चाणक्यः—भोः श्रेष्ठिन् ! चन्द्रगुप्ते राजनि अपरिग्रह-श्छलानाम् । तत् समर्पय राक्षसस्य गृहजनम् । अच्छलं भवतु भवतः ।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—सबसे पहले तो आप ही हैं।

चन्दनदास—(कानो को बन्द करके) ऐसा न कहें, ऐसा न कहें। आग के साथ तिनके का कैसा विरोध ?

चाणक्य—यह विरोध ऐसा है कि तुम आज भी राजा का अहित करने वाले अमात्य राक्षस के परिवार को लाकर अपने घर में रख रहे हो (छिपा रहे हो) ।

चन्दनदास—आर्य, यह असत्य है। किसी अनभिज्ञ व्यक्ति ने आपसे कह दिया है।

चाणक्य—सेठ जी, डरिये नही। डरे हुए पहले के राजपुरुष न चाहते हुए भी नागरिको के घर में अपने परिवार को रखकर दूसरे देश को चले जाते हैं। इस हालत मे उनको छिपाना अपराध है।

चन्दनदास—ऐसा है कि उस समय मेरे घर में अमात्य राक्षस का परिवार था।

चाणक्य—चन्दनदास पहले तुम झूठ बोले "नही छिपा था" अब कहते हो "छिपा था" इस प्रकार की परस्पर विरोधी बातो से क्या लाभ।

चन्दनदास—मेरी बातो मे इतना ही दोष (छल) है। अर्थात् कहने में भूल हो गई।

चाणक्य—सेठ जी, चन्द्रगुप्त के राजा रहते हुए छल को स्थान नही है। इसलिए राक्षस के परिवार को सौप दो। और आप छलहीन हो जायें।

Chanakya—You are the first

Chandandas (closing the ears)—Begone sin, begone sin. What enmity can be of straw with fire

Chanakya—The enmity is of this type that even to-day you are, taking over to your house, giving shelter to the family of minister Rakshas who is doing harm to the king

Chandandas—Noble Sir, some one who does not know the truth, must have told you this untruth

Chanakya—O Banker, do not be afraid Terrified servants of the previous king go to other countries after keeping the

members of their family in the house of even unwilling citizens To hide them afterwards amounts to guilt

Chandandas—This is so The members of the family of Rakshas were in my house at that time

Chanakya—At first (you said) "untruth", now (you say) "were" These two statements are self-contradictory

Chandandas—There is only this fraud of words in me

Chanakya—O Banker, there is no place for fraud during the reign of Chandragupta So surrender the members of the family of Rakshas and you become totally fraudless

टिप्पणी

(१) **राजापथ्यकारिण**—राजा का नुकसान करने वाले का। पथोऽनपेतं पथ्यम् पथिन्+यत्। न पथ्यम् अपथ्यम् (नञ्तत्०)। राज्ञ अपथ्यम् (षष्ठी-तत्०)। तत् करोति तच्छील राजापथ्य+कृ+णिनि=राजापथ्यकारी, तस्य। (२) **अलमाशङ्कया**—अत्र 'गम्यमानापि क्रिया कारकविभक्तौ प्रयोजिका' इत्यनेन तृतीया। (३) **अनिच्छतामपि**—न चाहते हुए का भी। चाणक्य के कहने का मतलब है कि तुमने कोई अपराध नही किया है क्योकि राजा के कर्मचारी न चाहने वाले लोगो के घर मे उनकी इच्छा के विपरीत भी अपना परिवार उनके यहाँ छोड जाते है। अत तुम डरो मत। अपराध तो तब होगा जब माँगने पर भी तुम उनको छिपावोगे। (४) **प्रच्छादनम्**—छिपाना। यह अपराध है। (५) **परस्परविरोधिनी**—एक दूसरे के विपरीत। (६) **वाक्छलम्**—वचन से छल। वाचि छलम् (सुप्सुपा स०)। इसका लक्षण यह है—'अविशेषाभिहितेऽर्थे वक्तुरभिप्रायादर्थान्तरकल्पन वाक्छलम्' न्यायसूत्र। (७) **परिग्रहः**—स्थान, शरण। परि+ग्रह्+अप्। (८) **अच्छलम्**—छल का न होना। छलस्य अभाव। अव्ययीभाव स०।

चन्दनदासः—अज्ज! णं विण्णवेमि तस्सिं समए आसि अह्मघरे अमच्चरक्खसस्स घरअणो त्ति। (आर्य! ननु विज्ञापयामि तस्मिन् समये आसीदस्मद्गृहे अमात्यराक्षसस्य गृहजन इति।)

चाणक्यः—अथेदानीं क्व गतः?

चन्दनदासः—ण जाणामि। (न जानामि।)

चाणक्यः—(स्मितं कृत्वा) कथं न ज्ञायते नाम? भोः श्रेष्ठिन्! शिरसि भयमतिदूरे तत्प्रतीकारः।

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास—आर्य, कहता तो हूँ कि उस समय अमात्य राक्षस का परिवार मेरे यहाँ था।

चाणक्य—अब कहाँ गया?

चन्दनदास—मालूम नहीं।

चाणक्य—(मुस्कुराकर) कैसे नहीं मालूम? सेठ जी सिर पर भय है और उसका प्रतीकार बहुत दूर है।

Chandandas—Noble Sir, I say that at that time family of minister Rakshas was (in my house)

Chanakya—Where is it gone ?

Chandandas—I do not know

Chanakya (smiling)—How do you not know ? Oh Banker, the danger is on your head and its remedy is very far

चन्दनदासः—(स्वगतम्)

उवरि घणं घणरडिअं दूरे दइदा किमेददावडिअम्।
हिमवदि दिव्वोसहिओ सीसे सप्पो समाविट्ठो॥२२॥
(उपरि घनं घनरटितं दूरे दयिता किमेतदापतितम्।
हिमवति दिव्यौषधयः शीर्षे सर्पः समाविष्टः॥)

अन्वय—एतत् किम् आपतितम्? उपरि घन घनरटित दूरे दयिता हिमवति दिव्यौषधय शीर्षे सर्प समाविष्ट।

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास (मन में) क्या हुआ (मेरी दशा तो ऐसी है कि) सिर पर साँप सवार हो और संजीवनी बूटी हो हिमालय पर; ऊपर तो बादल गरजता हो और प्यारी दूर हो।

Chandandas (To himself)—What has this happened The snake is sitting on the head and the divine herbs are on the Himalaya , the deep roar of the clouds above and the beloved is away

संस्कृत व्याख्या—एतन् किम् आपतितम् समायातम्। व्याकुलात्माह कर्त्तव्य न जाने। उपरि मस्तकाग्रे घनरटितम् मेघगर्जनम् दयिता स्त्री दूरे, हिमवति

हिमाद्रौ दिव्यौषधय विषहरा ओषधय किन्तु शीर्षे मस्तके सर्प अहि समाविष्ट आरूढ ।

टिप्पणी

शिरसि भयम्......तात्पर्य यह है कि आपको भय है राजा से, जो बिलकुल निकट है और प्रतीकार की आशा है, राक्षस से जो अत्यन्त दूर है। यहाँ अप्रस्तुत-प्रशंसा अलकार है।

चाणक्यः—अन्यच्च नन्दमिव विष्णुगुप्तः—(इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयित्वा) चन्द्रगुप्तममात्यराक्षसः समुच्छेत्स्यतीति मैवं मंस्थाः ।

पश्य—

विक्रान्तैर्नयशालिभिः सुसचिवैः श्रीर्वक्रणासादिभिः
नन्दे जीवति या तदा न गमिता स्थैर्यं चलन्ती मुहुः ।
तामेकत्वमुपागतां द्युतिमिव प्रह्लादयन्तीं जगत्
कश्चन्द्रादिव चन्द्रगुप्तनृपतेः कर्तुं व्यवस्येत् पृथक् ॥२३॥

अपि च । ('आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्'—इति पूर्वोक्तं पठति ।)

चन्दनदासः—(स्वगतम्) फलेण संवादिदं से विकत्थिदम् । (फलेन संवादितमस्य विकत्थितम् ।)

(नेपथ्ये कलकलः ।)

अन्वय—तदानन्दे जीवति मुहु चलन्ती या श्री विक्रान्तै नयशालिभि वक्रणासादिभि सुसचिवै स्थैर्य न गमिता द्युतिमिव एकत्वमुपागता जगत् प्रह्लाद-यन्ती ताम् चन्द्रादिव चन्द्रगुप्तनृपते पृथक् कर्तु क व्यवस्येत् ।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—और भी। नन्द को चाणक्य की तरह (आधा कहकर लज्जा का अभिनय करता है) यह मत समझो कि अमात्य राक्षस चन्द्रगुप्त को नष्ट कर देगा देखो—वह कौन है जो उस राजलक्ष्मी को, जिसे नन्द के जीवित रहने पर उसके बडे-बड़े वक्रनास ऐसे राजनीतिज्ञ शूर महामन्त्री भी उसके साथ स्थिर न बना सके, अब सम्राट् चन्द्रगुप्त से अलग करना चाहता है, जब कि वह

(लक्ष्मी) उससे ऐसी अभिन्न है और सारे ससार को सुख दे रही है जैसे चन्द्रमा से चॉदनी। और भी "आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्" इस पूर्वोक्त श्लोक को पढता है।

चन्दनदास—(मन में) इसकी आत्मप्रशंसा तो (नन्दविनाश रूप) फल के अनुरूप ही है। (नेपथ्य में कलकल)

Chanakya—Moreover as Vishnugupta did Nanda (blushes at this half utterance) so minister Rakshas will annihilate Chandragupta, do not think so See—

Who is it that wants to separate from king Chandragupta, the Sri, which, even the eminent, reliant and diplomatic ministers like Vakranas and others, could not make steady with Nanda, while he was alive,—the Sri which is now delighting the world like moonlight and united with him (Chandragupta)

Moreover—(Recites the verse आस्वादितद्विरदशोणितशोणशोभाम्)

Chandandas (*To himself*)—His bragging is in accordance with the result (Noise in the dressing-room).

संस्कृत व्याख्या—चाणक्य चन्दनदाम तर्जयन्नाह—चन्दनदास, राक्षस चन्द्रगुप्तम् समुत्छेत्स्यति इति मैव मस्था । या श्री राजलक्ष्मी तदा तस्मिन्नैश्वर्यसमये विक्रान्तै विक्रमशालिभि नयज्ञै नीतिनिपुणैर्वा सुसचिवै राजसेवालग्नै अमात्यै वक्रणासादिभि अपि जीवति नन्दे तदन्वये वा कस्मिन् चित् स्थैर्य न गमिता निश्चलस्थिति न प्रापिता अथ च वार वार चलन्ती चञ्चला एव स्थिता ताम् श्रीमद्य समुद्योतमानचन्द्रगुप्तविभवे प्रनष्टे च नन्दैश्वर्ये कोऽस्ति यश्चन्द्रगुप्तनृपतावेकत्वमुपगता जगत् ससार प्रह्लादयन्तीम् प्रजाजनमनोरञ्जनकारिणी चन्द्रात् चन्द्रमस तदभिन्ना द्युति कौमुदीमिव चन्द्रगुप्तनृपते पृथक्कर्तु दूरस्था विधातु शक्नुयादिति न कोऽपीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **मा मस्थाः**—मत समझो। मन्+लुङ—थास् 'माङि लुङ' इत्यनेन भविष्यति लुङ। 'न माङयोगे' इत्यनेन अडागमप्रतिषेध । **विक्रान्तैः**—बलशाली। यह सचिवै का विशेषण है। वि+क्रम्+क्त वर्तमाने। (२) **नयशालिभि**—नीतिज्ञो से। नीतिज्ञै । नयति राजानम् इति नी+अच् कर्त्तरि=नय । तेन शालन्ते तै नयशालिभि । (३) **वक्रणास**—नन्द के मत्री। वक्रा नासा यस्य स वक्रणास (बहुव्रीहि स०), अच्प्रत्यय, नासिकाया नसादेश, णत्वम्।

(४) एकत्वमुपगताम्—चन्द्रगुप्त से जो हिल-मिल गई है। भाव यह है कि जैसे चन्द्रमा से चाँदनी नही अलग की जा सकती उसी प्रकार अब राज्य-श्री चन्द्रगुप्त से नही अलग की जा सकती। इस श्लोक मे उपमा अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है। (५) विकत्थन—आत्मप्रशसा। इसका डीग हाँकना ठीक ही है, क्योकि इसने नन्द-वश का नाश कर दिया है।

चाणक्यः—शार्ङ्गरव ! ज्ञायतां किमेतत्।

शिष्यः—तथा (इति निष्क्रम्य, पुनः प्रविश्य) उपाध्याय ! एष राज्ञश्चन्द्रगुप्तस्य आज्ञया राजापथ्यकारी क्षपणको जीवसिद्धिः सनिकारं नगरान्निर्वास्यते।

चाणक्यः—क्षपणकः, अहह ! ! अथवा अनुभवतु राजापथ्यकारित्वस्य फलम्। भोः श्रेष्ठिन् चन्दनदास ! एवमयं राजापथ्यकारिषु तीक्ष्णदण्डो राजा। तत् क्रियतां पथ्यं सुहृदवचः। समर्प्यतां राक्षसगृहजनः। अनुभूयतां चिरं विचित्रो राजप्रसादः।

चन्दनदासः—णत्थि मे गेहे अमच्चघरअणो (नास्ति मे गेहे अमात्यगृहजनः।)

(नेपथ्ये पुनः कलकलः।)

चाणक्यः—शार्ङ्गरव ! ज्ञायतां किमेतत्।

शिष्यः—तथा। (इति निष्क्रम्य, पुनः प्रविश्य) उपाध्याय ! अयमपि राजापथ्यकारी एव कायस्थः शकटदासः शूलमारोपयितुं नीयते।

चाणक्यः—स्वकर्मफलमनुभवतु। भोः श्रेष्ठिन् ! एवमयं राजा अपथ्यकारिषु तीक्ष्णदण्डो न मर्षयिष्यति राक्षसकलत्रप्रच्छादनं भवतः। तद्रक्ष परकलत्रेण आत्मनः कलत्रं जीवितञ्च।

चन्दनदासः—अज्ज ! किं मे भअं दंसेसि ? सन्तं वि गेहे

अमच्चरक्खसस्स घरअणं ण समप्पेमि, किं उण असन्तम् । (आर्य ! किं मे भयं दर्शयसि ? सन्तमपि गेहे अमात्यराक्षसस्य गृहजनं न समर्पयामि, किं पुनरसन्तम् ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—शार्ङ्गरव, मालूम करो यह क्या है ?

शिष्य—जो आज्ञा (निकल कर और पुन. प्रवेश कर) आचार्य, यह राजा चन्द्रगुप्त की आज्ञा से राजा का अहित करने वाला जीवसिद्धि क्षपणक अपमान के साथ नगर से निकाला जा रहा है।

चाणक्य—अहा ! क्षपणक ! ! अथवा राजद्रोह का फल भोगे। सेठ चन्दनदास जी ! इस प्रकार राजद्रोहियो को राजा कठोर दण्ड देता है। इसलिये मित्र की बात जो हितकारी है मानो। राक्षस के घर वालो को सौंप दो और बहुत दिन तक राजा के अपूर्व अनुग्रह का फल भोगो।

चन्दनदास—मेरे घर में अमात्य (राक्षस) के बाल-बच्चे नही है।

(नेपथ्य में फिर कलकल की आवाज)

चाणक्य—शार्ङ्गरव, पता लगाओ यह क्या है ?

शिष्य—जो आज्ञा (बाहर जाकर और फिर प्रवेश कर) आचार्य जी, यह भी राजा का शत्रु कायस्थ शकटदास शूली पर चढाये जाने के लिये ले जाया जा रहा है।

चाणक्य—अपने कर्म का फल भोगो। सेठ जी इस प्रकार यह राजा द्रोहियों को कठोर दण्ड देने वाला है और आपके द्वारा राक्षस के परिवार का छिपाया जाना वह बर्दास्त नही करेगा। इसलिये दूसरे के परिवार से अपने प्राण और परिवार को बचाओ।

चन्दनदास—आर्य, मुझे डर क्यो दिखा रहे है ? घर में अमात्य राक्षस का परिवार रहते हुए भी समर्पण न करूंगा; फिर न रहने पर तो बात ही निराली है।

Chanakya—Sharangrava, find out what it is ?

Pupil—Very well (Going out and coming back) Preceptor, it is the mendicant Jivasiddhi, who has harmed the king and is being turned out of the city with indignity by the king's order

Chanakya—Oh ho, the mendicant, or let him reap the fruit of his being enemically disposed to the king O banker, Chandandas, thus the king inflicts severe punishment to evil doers; so listen to the wholesome advice of a friend , handover the family of Rakshas and enjoy the unique royal favour for a long time

Chandandas—The famıly of the mınıster ıs not ın my house. (Hubbub agın ın the dressıng room)

Chanakya—Sharangrava, see what ıt ıs ?

Pupıl—So be ıt (Goıng out and comıng back) Preceptor, thıs too ıs an enemy of the kıng—Kayastha Sakatdas ıs beıng led to be hanged

Chanakya—Let hım reap the fruıts of hıs deeds Oh banker, thus a grım punısher of evıl doers, thıs kıng wıll not tolerate your hıdıng of the wıfe of Rakshas, so save your own lıfe and famıly at the cost of another's wıfe

Chandandas—Noble Sır, why do you frıghten me (wıth danger)? I would not hand over the famıly of mınıster Rakshas even ıf ıt were ın my house, what to say when ıt ıs not here (ın my house)

संस्कृत व्याख्या—ज्ञायताम् जानीहि किमेतत् जनरव कस्मात्कारणात् अयम् कोलाहल । उपाध्याय आचार्य, एष राज्ञ नृपते चन्द्रगुप्तस्य आज्ञया राजापथ्यकारी राजापराधी क्षपणको जीवसिद्धि सनिकारम् सापमानम् नगरात् पाटलिपुत्रात् निर्वास्यते बहि क्रियते। राजापथ्यकारित्वस्य राजापराधकरणस्य फलम् परिणाम अनुभवतु गृह्णातु राजापथ्यकारिषु राजद्रोहिषु तीक्ष्णदण्डो राजा कठोरशासन नृपति तत् तस्मात् कारणात् तथ्य हितकारि सुहृद्वच मित्रवचन क्रियताम् पालय। राक्षसगृहजनम् समर्प्यताम् राक्षसस्य परिवारम् देहि। चिर बहुकालं विचित्र अपूर्व राजप्रसाद राजानुग्रह अनुभूयताम्।

एवमयम् राजा नृप अपथ्यकारिषु राजद्रोहिषु तीक्ष्णदण्ड उग्रशासन न मर्षयिष्यति न सहिष्यते भवत तव राक्षसकलत्रप्रच्छादन राक्षसपरिवारगोपनम्। तत् तस्मात् कारणात् परकलत्रेण अन्यकुटुम्बेन आत्मान कलत्र परिवारम् जीवितञ्च प्राणान् च रक्ष। आर्य, कि मे भय दर्शयसि कस्मात् कारणात् माम् भीषयसि। अमात्यराक्षसस्य गृहजन कलत्र सन्तमपि वर्तमानमपि न समर्पयामि न प्रदास्यामि कि पुन असन्तम् अविद्यमानम्।

टिप्पणी

(१) **राजापथ्यकारी**—राजा का अहित करने वाला। राजद्रोही। अपथ्य करोतीति अपथ्यकारी। राज्ञ अपथ्यकारीति राजापथ्यकारी। (२) **सनिकारम्**—बेइज्जती के साथ। (३) **निर्वास्यते**—निकाला जा रहा है। निर्+वस्+णिच्+लट्—ते कर्मणि। प्राचीन काल मे सन्यासी तथा ब्राह्मण

को मृत्युदड के बदले केवल निर्वासन (देश निकाला) दिया जाता था— 'वपन द्रविणादान स्थानान्निष्क्रामण तथा। एष हि ब्रह्मबन्धूना वधो ~~ऽस्ति दैहिक' ।। **तीक्ष्णदण्ड.**—कडा दण्ड देने वाला। (४) **विचित्र· राजप्रसाद.**— हर प्रकार की राजा की कृपा। राज्ञ प्रसाद इति राजप्रसाद । चाणक्य चन्दनदास को लालच दे रहा है ताकि वह राक्षस के कुटुम्ब को सौप दे। (५) **भवतः राक्षस-कलत्रप्रच्छादनम्**—आपका राक्षस के परिवार को छिपाना। (६) **सन्तमपि न समर्पयामि**—(चन्दनदास निर्भयता से कहता है) कि अगर राक्षस का परिवार होगा भी तो मै न दूँगा।

चाणक्यः—चन्दनदास, एष ते निश्चयः ?

चन्दनदासः—बाढं एसो धीरो मे निच्चओ । (बाढ़म् एष धीरो मे निश्चयः) ।

चाणक्यः—(स्वगतम्) साधु चन्दनदास साधु ।

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास क्या यही तुम्हारा निश्चय है ?
चन्दनदास—हाँ, यही मेरा दृढ़ निश्चय है।
चाणक्य—(मन मे) शाबास, चन्दनदास, शाबास।

Chanakya—Chandandas, is that your resolve ?
Chandandas—Certainly this is my firm resolve
Chanakya (*To himself*)—Bravo Chandandas, Bravo

सुलभेष्वर्थलाभेषु परसंवेदने जनः ।
क इदं दुष्करं कुर्यादिदानीं शिविना विना ।।२४।।

अन्वय—इदानी शिविना विना क जन परसवेदने सुलभेषु अर्थलाभेषु इद दुष्कर कुर्यात् ।।२४।।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—इस समय (कलियुग में) महाराज शिवि को छोड़कर तुम्हारे समान कौन ऐसा व्यक्ति है जो अपने स्वार्थ के सिद्ध हो सकने पर भी पराए की रक्षा के लिए ऐसा दुष्कर काम (जैसा तुम राक्षस के परिवार के लिए कर रहे हो) कर सकता है।

Chanakya—Who else, but Shivi, can do this difficult thing now in this Yuga, as you are doing, at another's distress, not minding his own gifts of wealth which is easily accessible

संस्कृत व्याख्या—इदानीम् अस्मिन् काले शिविना विना शिवि राजान विहाय क जन परस्य अन्यस्य सवेदने दु खे सुलभेषु सुप्राप्येषु अर्थलाभेषु राजप्रसादादिलाभेषु समीहितमिद्धयादिषु इद दुष्कर कठिन स्वजीवनस्य सशयापादनादिरूपम् परोपकारकृत्यम् राक्षसकलत्ररक्षणादि कुर्यात् कर्तु शक्नुयात् न कोऽपीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **शिविना विना**—राजा शिवि को छोडकर। सतयुग मे उशीनर देश मे शिवि नाम के एक राजा थे। उनके धर्म की परीक्षा करने के लिए इन्द्र ने बाज का रूप धारण किया और अग्नि ने कबूतर पक्षी का। बाज ने खाने के वास्ते उस पक्षी का पीछा किया। वह पक्षी भागकर राजा शिवि की गोद मे छिप गया। बाज ने राजा से कहा कि मेरा भोजन आप वापिस कर दे। परन्तु राजा ने कहा कि "यह शरणागत है, मै इसे न दूगा, बल्कि इसके बराबर अपना मास तुम्हे दे दूगा"। उस माया के बाज ने यह बात मान ली। राजा अपना मास काटता गया और वह माया का कबूतर वजन मे भारी होता गया। अन्त मे राजा स्वय तुला पर चढ गये। इसके बाद दोनो देवताओ ने अपना रूप प्रकट कर दिया और राजा को आशीर्वाद देकर चले गये। राजा शिवि का इतना महान् त्याग था। यहाँ पर "शिविना" मे तृतीया "पृथक् विना नानाभि तृतीया" से हुई है। (२) **परसवेदने**—पराये के दु ख मे। परस्य सवेदने इति। सम्+विद+ल्युट्। चन्दनदास का यह त्याग स्तुत्य है। वह राजा के अनुग्रह को ठुकराता है और राक्षस के परिवार को समर्पण नही करना चाहता। यहाँ व्यतिरेक अलकार है और अनुष्टुप् छन्द है। 'श्लोके षष्ठ गुरु ज्ञेय सर्वत्र लघु पञ्चमम्। द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्व सप्तम दीर्घमन्ययो'॥

(प्रकाशम्) चन्दनदास! एष ते निश्चयः?

चन्दनदासः—बाढम्।

चाणक्यः—(सक्रोधम्) दुरात्मन्! तिष्ठ दुष्टवणिक्! अनुभूयतां तर्हि नरपतिक्रोधः।

चन्दनदासः—(बाहू प्रसार्य) सज्जोह्मि। अणुचिट्ठदु अज्जो अत्तणो अहिआरसरिसम् (सज्जोऽस्मि। अनुतिष्ठतु आर्यः आत्मनोऽधिकारसदृशम्।)

चाणक्यः—(सक्रोधम्) शार्ङ्गरव ! उच्यतामस्मद्वचनात् कालपाशिको दण्डपाशिकश्च—शीघ्रमयं दुष्टवणिक् निगृह्यताम् । अथवा तिष्ठतु, उच्यतां दुर्गपालो विजयपालश्च—गृहीतगृहसारमेनं सपुत्रकलत्रं संयम्य तावद्रक्ष यावन्मया वृषलाय कथ्यते । वृषल एवास्य प्राणहरं दण्डमाज्ञापयिष्यति ।

शिष्यः—यदाज्ञापयत्युपाध्यायः । श्रेष्ठिन् ! इत इतः ।

चन्दनदासः—अज्ज ! अअमाअच्छामि (स्वगतम्) दिट्टिआ मित्तकज्जेण मे विणासो ण पुरिसदोसेण । (आर्य ! अयमागच्छामि । दिष्ट्या मित्रकार्येण मे विनाशो न पुरुषदोषेण ।) (परिक्रम्य शिष्येण सह निष्क्रान्तः ।)

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(प्रकट) चन्दनदास, क्या यही तुम्हारा निश्चय है ?

चन्दनदास—हाँ ।

चाणक्य—(क्रोध से) दुरात्मा, नीच बनिये, तो राजा के क्रोध का अनुभव करो ।

चन्दनदास—(हाथ फैलाकर) तैयार हूँ । आप अपने अधिकार का प्रयोग करें ।

चाणक्य—(क्रोध से) शार्ङ्गरव, मेरी ओर से कालपाशिक और दण्डपाशिक से जाकर कहो कि शीघ्र यह दुष्ट बनिया कैद कर लिया जाय। अथवा ठहरो दुर्गपाल विजयपाल से कहो कि इसके घर की सारी सम्पत्ति छीन लें और इसे स्त्री-पुत्र सहित तब तक बाँध कर रखें जब तक मैं चन्द्रगुप्त से कहूँ । चन्द्रगुप्त ही इसको मौत की सजा देगा ।

शिष्य—आचार्य की जो आज्ञा । सेठ जी, इधर आइये ।

चन्दनदास—आर्य, लो यह मैं आ रहा हूँ (मन में) मेरा तो सौभाग्य है कि मित्र के कार्य में मेरा प्राण जा रहा है न कि मेरे किसी अपराध में (घूमकर शिष्य के साथ बाहर जाता है ।)

Chanakya (Aloud)—Chandandas, is it your resolve ?

Chandandas—Surely

Chanakya (Angrily)—Evil-hearted, wicked banker, then reap the result of the king's anger

Chandandas (Spreading his arms)—Arya, I am ready Let Noble Sir act as befits his authority

Chanakya (With anger)—Sharangrava, tell Kalpashik and

Dandpashik in my words, "Let this wicked Bania be arrested forthwith," or wait, tell Vijayapal, the keeper of the fort, "Keep this fellow, with his son and wife, bound, and the property of his house be confiscated, until I inform the Vrishal, who will pronounce his death sentence"

Pupil—As preceptor commands This way, Banker, this way

Chandandas—Noble Sir, here I come (To himself) Luckily I am losing my life in the cause of a friend and not for any guilt of mine (Walks round and goes out with the pupil)

टिप्पणी

(१) **दुरात्मन्**—दुष्ट। दुष्ट आत्मा यस्य स दुरात्मा तत्सम्बुद्धौ दुरात्मन्। (२) **अनुतिष्ठतु**—करे। (३) **गृहीतगृहसारम्**—जिसके घर की उत्तम सामग्री (धन आदि) ले ली गई है। गृहीत गृहस्य सार यस्य स तम् (ब० व्री०)। (४) **संयम्य**—बाँधकर, कैद कर। सम्+यम्+क्त्वा—ल्यप्। (५) **सपुत्र-कलत्रम्**—स्त्री और पुत्र के साथ। पुत्राश्च कलत्र च इति पुत्रकलत्राणि तै सह वर्त्तते इति सपुत्रकलत्र (बहुव्रीहि स०), त तथाविधम्। (६) **दिष्ट्या**—भाग्य मे, चन्दनदास को इस बात मे प्रसन्नता है कि उसे मित्र के कार्य के लिए यह सजा मिल रही है न कि अपने किसी अपराध (चोरी आदि) के कारण। **पुरुषदोषेण**—पुरुष के दोष से अर्थात् चोरी या अन्य कोई दुष्कर्म करने से। यहाँ पर करणे तृतीया है। इस वाक्य मे परिसख्या अलकार है।

चाणक्यः—(सहर्षम्) हन्त, लब्ध इदानीं राक्षसः। कुतः—

त्यजत्यप्रियवत्प्राणान्यथा तस्यायमापदि।
तथैवास्यापदि प्राणा नूनं तस्यापि न प्रियाः ॥२५॥

(नेपथ्ये कोलाहलम्)

अन्वय—यथा अयम् तस्य आपदि अप्रियवत् प्राणान् त्यजति तथैव अस्य आपदि तस्यापि प्राणा नूनम् प्रिया न।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(प्रसन्नता से) बड़ी प्रसन्नता की बात है कि अब राक्षस मिल गया।

जैसे यह (चन्दनदास) उस (राक्षस) की विपत्ति में अपने प्राणों को त्याग रहा है उसी प्रकार उसकी विपत्ति में उसके (राक्षस के) भी प्राण निश्चित रूप से प्रिय नही होगे। (नेपथ्य में कोलाहल)।

Chanakya (Joyfully)—Ha, now Rakshas is caught How—As this (Chandandas) is giving up his life like an undesired thing, in the adversity of Rakshas, so he (Rakshas) will give up his life in his adversity (Lit his life will also be not agreeable to him)—(Hubbub in the dressing room)

संस्कृत व्याख्या—यथा अय चन्दनदास तस्य राक्षसस्य आपदि विपदि अप्रियवत् अप्रियान् पदार्थान् इव प्राणान् जीवन त्यजति जहाति तथा एव नून निश्चितमिद यदस्य चन्दनदासस्यापदि विपत्तिकाले तस्य राक्षसस्यापि प्राणा न प्रिया जीवन नाभिलषणीय सम्पत्स्यते इति। अर्थात् चन्दनदास मोचयितु राक्षसोऽप्यवश्यमेवात्मानमर्पयिष्यतीति भाव ।

टिप्पणी

अप्रियवत्—अप्रिय वस्तुओ की तरह। अप्रियै तुल्यम् इति अप्रिय+वति। इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा तथा उपमा अलकार एव अनुष्टुप् छन्द है।

चाणक्यः—शार्ङ्गरव, शार्ङ्गरव !

(प्रविश्य)

शिष्यः—उपाध्याय ! आज्ञापयतु।

चाणक्यः—ज्ञायतां किमेतत्।

शिष्यः—(निष्क्रम्य विभाव्य पुनः प्रविश्य सम्भ्रान्तः) उपाध्याय ! एष खलु शकटदासं वध्यमानं वध्यभूमेरादाय समपक्रान्तः सिद्धार्थकः।

चाणक्यः—(स्वगतम्) साधु सिद्धार्थक ! साधु, कृतः कार्यारम्भः। (प्रकाशम्) प्रसह्य किमपक्रान्तः ? (सक्रोधम्) वत्स ! उच्यतां भागुरायणो यथा त्वरितं सम्भावयेति।

(निष्क्रम्य प्रविश्य च)

शिष्यः—(सविषादम्) उपाध्याय ! हा धिक् कष्टम् । अपक्रान्तो भागुरायणोऽपि ।

चाणक्यः—(स्वगतम्) व्रजतु कार्यसिद्धये । (प्रकाशम् । सक्रोधमिव ।) वत्स ! उच्यन्तामस्मद्वचनाद्भद्रभटपुरुषदत्तहिङ्गुरातबलगुप्तराजसेनरोहिताक्षविजयवर्माणः शीघ्रमनुसृत्य गृह्यतां दुरात्मा भागुरायणः ।

शिष्यः—तथा । (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य सविषादम्) हा धिक् कष्टम् । सर्वमेव तन्त्रमाकुलीभूतम् । तेऽपि खलु भद्रभटप्रभृतयः प्रथमतरमुषस्येवापक्रान्ताः ।

हिन्दी अनुवाद—(नेपथ्य में शोरगुल)

चाणक्य—शार्ङ्गरव, शार्ङ्गरव !

शिष्य (प्रवेश करके)—आचार्य ! आज्ञा दीजिए ।

चाणक्य—मालूम करो, यह कैसा शोरगुल है ।

शिष्य—(बाहर जाकर और पता लगाने पर घबडाया हुआ भीतर आकर) आचार्य, अनर्थ हो गया । वध किए जाने वाले शकटदास को वध्यभूमि से हटाकर सिद्धार्थक कही भाग गया ।

चाणक्य—(मन मे) शाबाश, सिद्धार्थक शाबाश । कार्य का प्रारम्भ हो गया । (प्रकट) क्या जबर्दस्ती भाग गया (क्रोध से) वत्स, भागुरायण से जाकर कहो कि शीघ्रातिशीघ्र इसे पकडने का प्रबंध करे ।

शिष्य (बाहर जाकर और प्रवेश कर)—(दु ख के साथ) आचार्य, बड़े कष्ट की बात है कि भागुरायण भी भाग गया है ।

चाणक्य—(मन में) काम साधने के लिए जाने दो (प्रकट, क्रोध प्रकट करते हुए) वत्स, हमारी ओर से भद्रभट, पुरुषदत्त, हिङ्गुरात, बलगुप्त, राजसेन, रोहिताश्व और विजयवर्मा इत्यादि से कहो कि जल्दी से जल्दी इस दुष्ट भागुरायण का पीछा करे और पकडकर यहाॅ ले आये ।

शिष्य—जैसी आज्ञा (बाहर जाकर, फिर भीतर आकर दुःख के साथ) अनर्थ, महान् अनर्थ, पूरे राजतत्र में गड़बड़ी मच गई है, वे भद्रभट आदि भी बहुत पहले तड़के ही भाग गये ।

Chanakya—Sharangrava, Sharangrava

Pupil (entering)—Preceptor, order me

Chanakya—Find out what it is •

Pupil (Going out, and finding out and re-entering)—

Preceptor, Siddharthaka has run away taking out Shakatadas from the execution ground, when he was to be executed .

Chanakya (To himself)—Bravo Siddharthaka The beginning of the work has been made (Aloud) Has he gone away forcibly ? (Angrily) Tell Bhagurayan to go soon and arrest him

Pupil (Going out and re-entering)—(Sorrowfully) Preceptor, Ah, fie, great sorrow Bhagurayan, too, has run away

Chanakya (To himself)—Let him go for success in the work (Aloud, as if in anger) My boy, tell Bhadrabhatta, Purushdatta, Hingarath, Balagupta, Rajsena, Rohitaksha and Vizayvarman, to march out at once and get hold of the wicked Bhagurayan

Pupil—Be it so (Going out and re-entering sorrowfully) Ah, fie The whole administration is in confusion They also Bhadrabhatta, and others ran away much earlier even at dawn

टिप्पणी

(१) **ज्ञायताम्**—मालूम किया जाय। (२) **विभाव्य**—पता लगाकर। ज्ञात्वा। वि+भू+णिच्+क्त्वा—ल्यप्। (३) **समपक्रान्तः**—भाग गया। पलायित। सम्+अप+क्रम्+क्त। (४) **प्रसह्य**—जबर्दस्ती। यह एक अव्यय है। (५) **सम्भावय**—पकड ले। यहाँ पीछा करके सिद्धार्थक को पकड लाओ—यह प्रकट अर्थ है और तुम भी उसके पीछे-पीछे जाकर अपना कार्य सिद्ध करो—यह गुप्त भाव है। (६) **शीघ्रमनुसृत्य**—जल्दी पीछा करके। (७) **तत्र**—राष्ट्र।

चाणक्यः—(स्वगतम्) सर्वेषामेव शिवाः पन्थानः सन्तु। (प्रकाशम्) वत्स! अलं विषादेन। पश्य—

ये याताः किमपि प्रधार्य हृदये पूर्वं गता एव ते
ये तिष्ठन्ति भवन्तु तेऽपि गमने कामं प्रकामोद्यमाः।
एका केवलमर्थसाधनविधौ सेनाशतेभ्योऽधिका
नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम ॥२६॥

अन्वय—ये हृदये किमपि प्रधार्य याता ते पूर्वम् एव गता। ये तिष्ठन्ति ते अपि काम गमने प्रकामोद्यमा भवन्तु। अर्थसाधनविधौ एका सेनाशतेभ्य अधिका नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा मम बुद्धिस्तु केवल मा गात् ॥२६॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य (मन में) सबका मार्ग कल्याणकारी हो (प्रकट)

बेटा, विषाद मत करो। सबके सब चले जायें। जो अपने मन में कुछ सोच कर पहले ही चले गए वे तो गए ही किन्तु जो नही गए अच्छा है वे भी चले जायें। काम को पूरा करने में सैकड़ों सेनाओं से अधिक तथा नन्दो का विनाश करने में अतिशय प्रभाव दिखाने वाली मेरी बुद्धि केवल रह जाय।

Chanakya (To himself)—May the journey of all be safe (Aloud) My boy, do not be dejected See—those that have gone desiring something at heart are really gone already, but those who have not gone, they too should better go Only that wonderful wit of mine, the majesty of whose power was seen in the destruction of the Nandas and which in fulfilling its aims, alone excels hundreds of armies may remain

संस्कृत व्याख्या—ये जना हृदये मनसि किमपि प्रधार्य चिन्तयित्वा याता गता ते पूर्वम् एव गता अपक्रान्ता । ये तिष्ठन्ति न गता ते अपि काम गमने अस्मत्पक्ष विहाय स्वाभिलषितसाधनाय परस्याश्रयणे प्रकामोद्यमा विपुलोत्साहवन्तो भवन्तु। अर्थसाधनविधौ अर्थस्य समस्तस्यापि राजतन्त्रस्य साधनविधौ सम्पादने एका केवला सेनाशतेभ्य अधिका बहुसेनाभ्य अधिका बहुला नन्दोन्मूलनदृष्ट-वीर्यमहिमा नन्दानाम् उन्मूलने विनाशने दृष्ट अवलोकित वीर्यमहिमा प्रभा-वातिशय यस्या सा मम बुद्धि तु केवल मा गात् तिष्ठतु मा विहाय शत्रून् कथमपि न भजतामिति भाव ।

टिप्पणी

(१) **शिवा**—कल्याणकारी। शिव कल्याणम् अस्ति एषाम् इति शिव+अच् अर्श आदित्वात्। (२) **प्रकामोद्यमा.**—अतिशय उद्यमशील । प्रकाम उद्यम येषा ते। (३) **नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा**—नन्दो का नाश करने मे जिसके वीर्य की महिमा देख ली गई है। नन्दानाम् उन्मूलने दृष्ट वीर्यमहिमा यस्या सा। यह बुद्धि का विशेषण है। चाणक्य के कहने का तात्पर्य है कि सब गए तो गए पर मेरी बुद्धि न जाय। अगर मेरी बुद्धि दुरुस्त रहेगी तो मैं कितने ही बडे काम कर लूँगा। (४) **मा गात्**—इ+लुङ् 'माङि लुङ्' इत्यनेन, लुङस्तिप्, 'न माङ्योगे' इति सूत्रेण अडागमनिषेध । इस श्लोक मे काव्यलिग तथा व्यतिरेक अलकारो की ससृष्टि है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(उत्थाय प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्यं बद्ध्वा) एष खलु दुरा-

त्मनो भद्रभटप्रभृतीनाहरामि । (आत्मगतम्) दुरात्मन् राक्षस ! क्वेदानीं यास्यसि ? एषोऽहमचिरात् भवन्तं,—

स्वच्छन्दमेकचरमुज्ज्वलदानशक्ति-
मुत्सेकिना मदबलेन विगाहमानम् ।
बुद्ध्या निगृह्य वृषलस्य कृते क्रियाया-
मारण्यकं गजमिव प्रगुणीकरोमि ।।२७।।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

।। इति मुद्रालाभो नाम प्रथमोऽङ्कः ।।

अन्वय—उज्ज्वलदानशक्तिम् एकचरम् उत्सेकिना मदबलेन स्वच्छन्द विगाहमानम् आरण्यक गजमिव बुद्ध्या निगृह्य वृषलस्य कृते क्रियाया प्रगुणीकरोमि ।।२७।।

हिन्दी अनुवाद—(उठकर आकाश में सामने उपस्थित की तरह देखते हुए) अभी मै दुष्ट भद्रभट आदि को पकड़ता हूँ। (मन में) दुष्ट राक्षस, अब कहाँ जाओगे। मै तुम्हें अविलम्ब एक जगली हाथी के समान इस प्रकार मनमाना करने वाले निरकुश, राज-विप्लव के लिए धन का अपव्यय करने वाले (अथवा दानशक्ति वाले) और सैन्य-मद से उन्मत्त होकर हमारा अनिष्ट करने वाले तुम्हें चन्द्रगुप्त का काम करने के लिए अपनी बुद्धि से पकड़ मँगाता हूँ।

(सभी पात्र रगमंच पर से चले जाते है)

।। मुद्रालाभ नामक प्रथम अङ्क समाप्त ।।

(Rising and gazing at the sky, as if at someone who is present) Here I bring back vile Bhadrabhatta and others (To himself) Wicked Rakshas where can you go now ? I will without any delay secure you with my wit and make you work for Vrishala—you, who have excellent powers of gift, and are like a wild elephant willfully keeping aloof and roaming proudly here and there (Exeunt all)

[End of the first Act known as getting of ring]

संस्कृत व्याख्या—एष अहम् उज्ज्वलदानशक्तिम् उज्ज्वला प्रशस्या दानशक्ति. वदान्यता मदकारिता च यस्य तादृशम् एकचर परित्यक्तनिजवर्गम् उत्सेकिना गर्वहेतुना मदबलेन दर्पप्रभावेण दानवारिप्रभावेण च स्वच्छन्द यथेच्छ निरंकुशं यथा तथा विगाहमान भ्रमन्तम् भवन्तम् आरण्यकम् वनचरम् गजमिव

बुद्धया बुद्धिबलेन निगृह्य सयम्य वृषलस्य कृते चन्द्रगुप्तार्थे अचिरात् झटिति क्रियायाम् अमात्यकर्मणि भारवहनकर्मणि च प्रगुणीकरोमि व्यापारयामि उद्योगवन्त कारयामि ।

टिप्पणी

(१) **स्वच्छन्दम्**—मनमाना । स्व छन्द यस्मिन् कर्मणि तत् यथा तथा । यह विगाहमानम् का विशेषण है । "निरकुशम् विगाहमानम्" । ढुण्ढिराज ने इसका अर्थ किया है । "स्वपक्षमनाश्रित्य विजातीय परपक्ष कथम् आश्रितोऽसि इति नव कोऽपि नियन्ता नास्ति" इत्यर्थ । राक्षस की उपमा चाणक्य ने एक स्वच्छन्द भ्रमण करने वाले हाथी से दी है । दुष्ट हाथी भी अपने समूह को छोडकर मनमानी इधर-उधर घूमता है । राक्षस भी अपना पक्ष छोडकर परपक्ष को ग्रहण किए है । (२) **विगाहमानम्**—घूमते हुए । वि+गाह्+शानच् कर्तरि, मुगागम । (३) **उज्ज्वलदानशक्तिम्**—(राक्षस-पक्ष मे) जिसकी दानशक्ति प्रकाशमान हो या सब को विदित हो । गज-पक्ष मे दान का अर्थ है मद (वह हाथी जिसकी मदशक्ति खूब हो) । (४) **एकचरम्**—अकेले घूमने वाले को । एक चरतीति एकचर एक+चर्+अच् । भाव यह है कि नन्द से सम्बद्ध हम लोग सभी एक साथ है और तुम ही अकेले ऐसे हो जो अपने परिवार आदि को भी छोडकर इधर-उधर अर्थात् मलयकेतु के पास रह रहे हो । (५) **विगाहमानम्**—घूमते हुए को । वि+गाह्+शानच् । अस्मत्अपकाराय चेष्टमानम् इत्याशय । (६) **उत्सेकिना**—अत्यन्त मदजल बहाने वाले । उद्+सिच्+घञ्=उत्सेक । स अस्ति अस्य इति उत्सेक+इनि=उत्सेकिन् घञ् । (७) **आरण्यकम्**—जगली । अरण्ये भव इति अरण्य+वुञ् । इस श्लोक मे उपमा अलङ्कार है और वसन्ततिलका छन्द है ।

द्वितीयोऽङ्क.

(ततः प्रविशत्याहितुण्डिकः ।)

आहितुण्डिकः—

जाणन्ति तन्तजुत्ति जहट्ठिअं मण्डलं अहिलिहन्ति
जे मन्तरक्खणपरा ते सप्पणराहिवे उवअरन्ति ॥१॥
(जानन्ति तन्त्रयुक्ति यथास्थितं मण्डलमभिलिखन्ति ।
ये मन्त्ररक्षणपरास्ते सर्पनराधिपावुपचरन्ति ॥)

अन्वय—ये तन्त्रयुक्ति यथास्थित जानन्ति मण्डलम् अभिलिखन्ति (च) मन्त्ररक्षणपरा: सर्पनराधिपौ उपचरन्ति ॥१॥

हिन्दी अनुवाद—(सँपेरे का प्रवेश) सँपेरा—जो लोग (साँप की) ओषधि के प्रयोग को भली भाँति जानते हैं और माहेन्द्र आदि मण्डल को ठीक से बनाते हैं और जिसे झाड-फूँक आदि मत्रो की गुप्त सिद्धि है वही साँप की सेवा कर सकता है। (राजा पक्ष में) राजा की सेवा वही कर सकता है जो स्वराष्ट्र चिन्तन के उपायो को जानता है, जो राजमण्डल का मर्म समझता है और जो मंत्रणाओं को गुप्त रख सकता है।

ACT II

(Now enters a snake chaımer) *Snake Chaımer*—Only they can contıol a kıngly snake who know the applıcatıon of herbs, can dıaw magıc cırcles correctly, and rely for safety on Mantras

संस्कृत व्याख्या—ये जनास्तत्रयुक्ति तत्रस्य विषौषधिविशेषस्य प्रयोगस्त जानन्ति विदन्ति मण्डल मण्डलाकारतयालेख्य माहेन्द्रादिदैवत च यथास्थित याथातथ्येनाभिलिखन्ति सर्पग्रहणवशीकरणाद्यर्थम् निर्मान्ति अथ च मत्ररक्षण-परा मत्राणाम् गारुडादि मत्राणाम् रक्षणपरा योग्याऽयोग्यमम्प्रदानाऽसम्प्रदानादि-कर्मनिपुणास्त एव सर्पनराधिपौ अहि राजान सेवितुमर्हन्तीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **आहितुण्डकः—**सँपेरा। यह राक्षस का गुप्तचर है और इसका नाम विराधगुप्त है। अहि सर्प तस्य तुण्डम् मुखम् अहितुण्डम् तेन दीव्यति इति आहितुण्डिक । अहितुण्ड+ठक् (ठस्येक से ठक् का इक् हो गया) यहाँ

तुमं भणासि---'किं एदेसु पेडालसमुग्गएसु' त्ति। अज्ज! जीविआए संपादआ सप्पा। (पुनराकाशे) किं भणासि---'पेक्खिदुमिच्छामि' त्ति। पसीददु अज्जो। अठ्ठाणं खु एदम्। ता जइ कोदूहलं, एहि एदस्सिं आवासे दंसेमि। किं भणासि---'एदं खु भट्टिणो अमच्चरक्खसस्स गेहम्। णत्थि अम्हारिसाणं इह पवेसो' त्ति। तेण हि गच्छदु अज्जो। मम उण जीविआए पसादेण अत्थि एत्थ पवेसो। कधं एसो वि अतिक्कन्तो? (आर्य? किं त्वं भणसि---'कस्त्वम्' इति। आर्य! अहं खलु आहितुण्डिको जीर्णविषो नाम। कि भणसि---'अहमपि अहिना खेलितुमिच्छामि' इति। अथ कतरां पुनरार्यो वृत्तिमुपजीवति? किं भणसि---'राजकुलसेवकोऽस्मि' इति। ननु खेलति एव आर्योऽहिना। कथमिव? अमन्त्रौषधिकुशलो व्यालग्राही मत्तमतङ्गजारोही लब्धाधिकारो जितकाशो राजसेवक इत्येते त्रयोऽप्यवश्यं विनाशमनुभवन्ति। कथं दृष्टमात्रोऽतिक्रान्त एषः। आर्य! किं त्वं भणसि---'किमतेषु पेटकसमुद्गकेषु' इति। आर्य! जीविकायाः सम्पादकाः सर्पाः। किं भणसि---'प्रेक्षितुमिच्छामि इति प्रसीदत्वार्यः। अस्थानं खलु एतत्। तद्यदि कौतूहलम्, एहि एतस्मिन्नावासे दर्शयामि। किं भणसि---'इदं खलु भर्तुरमात्यराक्षसस्य गृहम्। नास्त्यस्मादृशानामिह प्रवेशः। तेन हि गच्छत्वार्यः। मम पुनर्जीविकायाः प्रसादेन अस्तीह प्रवेशः। कथमेषोऽप्यतिक्रान्तः?)

(स्वगतम्। संस्कृतमाश्रित्य) अहो! आश्चर्यम्। चाणक्यमतिपरिगृहीतं चन्द्रगुप्तमवलोक्य विफलमिव राक्षसप्रयत्नमवगच्छामि। राक्षसमतिपरिगृहीतं मलयकेतुमवलोक्य चलितमिवाधिराज्याच्चन्द्रगुप्तमवगच्छामि। कुतः---

हिन्दी अनुवाद---(आकाश में देखकर) महाराज, क्या कहा, "तुम कौन हो" महाराज, मै जीर्णविष नामक सँपेरा हूँ। (फिर आकाश की ओर देखकर)

क्या कहते हो "मै भी सॉप के साथ खेलना चाहता हूँ" अच्छा तो बताइये आप क्या काम करते है। (फिर आकाश की ओर देखकर) क्या कहते हो कि मै राजकुल का सेवक हूँ। तो आप तो सॉप के साथ खेल ही रहे है। (फिर ऊपर देखकर) क्या कहा कि कैसे मंत्र और औषधियो को न जानने वाला सँपेरा और मतवाले हाथी पर चढने वाला व्यक्ति और अधिकार पाकर घमण्ड में चूर रहने वाला राजकर्मचारी ये तीनो अवश्य नष्ट हो जाते है। अरे यह देखते-देखते कहाँ चला गया। (फिर आकाश में) आर्य क्या कहते हो कि इन ढँकी हुई पिटारियो में क्या है। इन पिटारियो में मेरी जीविका चलाने वाले सॉप है। (ऊपर देखकर) "क्या कहा कि मै इनको देखना चाहता हूँ"। महाराज प्रसन्न हो। यह उपयुक्त स्थान नही है। यदि आप को उत्सुकता हो है तो आप इस घर में आइए मै दिखाता हूँ। (फिर आकाश मे देखकर) क्या कहा कि यह स्वामी मंत्री राक्षस का घर है। हम ऐसे लोगो का प्रवेश इसमें नही हो सकता। इसलिए आर्य जायँ। जीविका की कृपा से मेरा प्रवेश यहाँ हो सकता है। अरे क्या यह भी खिसक गया। (चारो ओर देखकर स्वगत संस्कृत में)

बडे आश्चर्य की बात है। एक ओर जब चाणक्य की कूटनीति का अनुसरण करते हुए चन्द्रगुप्त को देखता हूँ तो ऐसा मालूम पडता है कि राक्षस के सारे प्रयत्न असफल हो रहे है। और दूसरी ओर जब राक्षस के कथनानुसार चलने वाले मलयकेतु को देखता हूँ तो ऐसा लगता है मानो चन्द्रगुप्त अब राज्य से भ्रष्ट हो रहा है।

(Looking in the sky) Noble Sir, do you say, "Who I am" Noble Sir, I am a snake-charmer named Jirnavisha (Again in the sky) Do you say that you too wish to play with snakes ? Well, then tell me what your occupation is (Again looking at the sky) Do you say that you are an attendant in the royal household ? Then your Noble Sir is already playing with a snake Do you say "How" A snake-charmer, not conversant with mantras and herbs, the rider of a must (मस्त) elephant without the ankush (अकुश), the king's servant who becomes proud on getting high rank, these three surely perish How he is gone, as soon as seen (Again in the sky) Noble, Sir, do you say, "What do these covered baskets contain ?" They contain the snakes by whom I live (Looking up) Do you say that you wish to see them ? Be kind, Sir, this is not a proper place for it So if you are curious, come, I will show them in this house (Looking at the sky) Do you say that "It is the house of his Lordship, Minister Rakshas, people, like us, are not allowed to enter it" Therefore, let Noble Sir go Through the grace of my profession I can enter here, now, this one too has disappeared (To himself in sanskrit) O wonder, on

seeing Chandragupta following the advice of Chanakya, I think that all the efforts of Rakshas are futile, but when I see Malayaketu acting upon the counsels of Rakshas, I think Chandragupta to be thrown away from his paramount position

सस्कृत व्याख्या—आर्य, किं त्व भणसि कथयसि क अहम् मम कि नाम जीर्णविषो नाम आहितुण्डिक सर्पग्राही कि भणसि अहमपि अहिना सर्पेण खेलितुमिच्छामि क्रीडितुम् इच्छामि अथ कतरा का वृत्ति जीविकाम् भवान् उपजीवति। अर्थात् भवत क व्यवसाय राजकुलसेवक नृपकुलभृत्य आर्योऽहिना कालेन खेलति क्रीडा करोति। अमत्रौषधिकुशल मत्रेषु तथा ओषधिषु अकुशल अदक्ष व्यालग्राही सर्पग्राही मत्तमतङ्गजारोही मत्तहस्त्यारोहणशील लब्धाधिकार जितकाशी जयोद्धत राजसेवक राजकर्मचारी इति एते त्रयोऽपि अवश्य नून विनाशम् अनुभवन्ति प्राप्नुवन्ति। कथ दृष्टमात्र अवलोकित सन् एव अतिक्रान्त गत किमेतेषु पेटकसमुद्गकेषु किम् वर्त्तते जीविकाया वृत्ते सम्पादका साधना सर्पा प्रेक्षितुम् द्रष्टुम् इच्छामि प्रसीदतु आर्य कृपा करोतु। अस्थान खलु एतत् इदम् उपयुक्त स्थान न। तत् यदि कौतूहल दर्शनस्य उत्कटेच्छा वर्तते एहि आगच्छ एतस्मिन् पुरोवर्तिनि आवासे गृहे दर्शयिष्यामि कि भणसि वदसि इद खलु भर्तु स्वामिन अमात्यराक्षसस्य गृहम् निकेतनम् अस्मादृशानाम् पुरुषाणामत्र प्रवेश नास्ति मम प्रवेश अत्र न भविष्यति इति तेन तस्मात् कारणात् गच्छतु आर्य मम पुन जीविकाया वृत्ते प्रसादेन कारणेन इह अत्र प्रवेश अस्ति कथ कुत एषोऽपि अतिक्रान्त गत। (सस्कृतम् आश्रित्य सस्कृतभाषायाम्) अहो आश्चर्यम् चाणक्यमतिपरिगृहीत चाणक्यस्य उपदेशानुसारेण कार्य कुर्वन्त यदा चन्द्रगुप्त पश्यामि विफलमिव राक्षसप्रयत्नम् असफलमिव राक्षसोपाय जानामि। राक्षसमतिपरिगृहीतम् राक्षसस्योपदेशानुसारेण कार्य कुर्वन्त मलयकेतुम् अवलोक्य दृष्ट्वा चलितम् इव भ्रष्टम् इव आधिराज्यात् चन्द्रगुप्तम् अवगच्छामि जानामि।

टिप्पणी

(१) **आकाशे**—इसे 'आकाशभाषित' कहते है। इसमे वक्ता आकाश की ओर देखकर अकेले ही इस प्रकार बात करता है मानो उससे कोई कुछ कह रहा है। इस विधि से एक ही पात्र के द्वारा अनेक पात्रो का काम चल जाता है। (२) **अमंत्रौषधिकुशलः**—मत्र और ओषधि को न जानने वाला। मत्रेषु

ओषधिषु च य कुशल न भवति तादृश । मन्त्राश्च ओषधयश्च इति मन्त्रौषधय (द्वन्द्व स०), तेषु कुशल (सुप्सुपा स०), न मन्त्रौषधिकुशल (नञ्तत्०)। (३) **व्यालग्राही**—सँपेरा। (४) **मत्तमतङ्गजारोही**—मतवाले हाथी पर चढने वाला। (५) **लब्धाधिकार**—अधिकार पाने वाला। लब्ध अधिकार येन स । (६) **जितकाश**—विजय से प्रकाश करने वाला। अर्थात् विजय के कारण अभिमानी। जितेन जयेन काशते दीप्यते स जितकाश । (७) **दृष्टमात्र**—देखते-देखते। (८) **अस्थानम्**—अनुचितस्थान। दिखाने का उचित स्थान नही। (९) **पेटकसमुद्गकेषु**—ढकी हुई पिटारियो मे। पेटक=पिटारी। 'पिटक पेटक पेटा मञ्जूषा' इत्यमर । समुद्गक=ढक्कन। 'समुद्गक सम्पुटक' इत्यमर । **चाणक्यमतिपरिगृहीतम्**—चाणक्य की सलाह के अनुसार काम करने वाला। (१०) **राक्षसमतिपरिगृहीतम्**—राक्षस की सलाह के अनुसार काम करने वाला। (११) **आधिराज्यात्**—बडे राज्य से। अधिष्ठितो राजा अधिराज तस्य भाव कर्म वा आधिराज्यम् अधिराज=ष्यञ् ।

कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्ति मन्ये स्थिरां मौर्यनृपस्य लक्ष्मीम् ।
उपायहस्तैरपि राक्षसेन निकृष्यमाणामिव लक्षयामि ।।२।।

अन्वय—मौर्यनृपस्य लक्ष्मी कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्ति स्थिरा मन्ये, राक्षसेन उपायहस्तै निकृष्यमाणाम् इव लक्षयामि अपि ।।२।।

हिन्दी अनुवाद—मै मानता हूँ कि चाणक्य ने (चञ्चल) मौर्य राजा की लक्ष्मी को स्थिर करने के लिए बुद्धि रूपी डोरी से बाँध दिया है तथापि राक्षस अनेक षड्यंत्र के उपाय रूपी हाथों से उसे (अपनाने को अपनी ओर) खीच रहा है ।

I know that the fortune of kıng Maurya ıs made secure wıth heı person firmly tıed by the rope of Kautılay's wıt, I also see that she ıs beıng dragged along by Rakshasa wıth hıs hands of plans

सस्कृत व्याख्या—मौर्यनृपस्य सम्राज चन्द्रगुप्तस्य लक्ष्मी राज्यश्रिय कौटिल्यधीरज्जुनिवद्धमूर्ति कौटिल्यस्य कुटिलनयमूर्ते चाणक्यस्य धी राजनीतिरेव रज्जुस्तया निवद्धा सुदृढ नियन्त्रिता मूर्ति आकृति यस्यास्ता तथाभूता सती स्थिरा मन्ये (तथापि) राक्षसेन उपायहस्तै उपाया सामदानदण्डभेदास्त एव हस्ता तै विकृष्यमाणाम् इव बलात् कृतश्लथयन्धनामिव लक्षयामि तर्कयामीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **कौटिल्यधीरज्जुनिबद्धमूर्तिम्**—कौटिल्य के बुद्धि रूपी रस्सी से बाँधी गई। कौटिल्यस्य धीरूपा या रज्जु तया निबद्धा सयता मूर्ति यस्या सा ताम्। (२) **उपायहस्तै**—उपाय रूपी हाथो से उपाया एव हस्ता (मयूर-व्यसकादित्वात् समास), तै। उपाय चार है। "भेदोदण्ड सामदानमित्युपाय-चतुष्टयम्" इसमे करणे तृतीया है। (३) **निकृष्यमाणाम्**—खीची जाती हुई। नि+कृष्+शानच्। विराधगुप्त के कहने का भाव यह है चाणक्य के द्वारा बाँधी गई राजलक्ष्मी को राक्षस चार हाथो से खीच रहा है। बाँधने का बधन तो एक ही है पर खीचने वाला चार है। अत लक्ष्मी का मौर्यकुल मे रहना सशययुक्त है। यहाँ इस श्लोक मे निरगरूपक और वाच्योत्प्रेक्षा अलकारो का साकर्य है। इसमे उपजाति छन्द है। छन्द का लक्षण—'अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ता'।

तदेवमनयोर्बुद्धिशालिनोः सुसचिवयोर्विरोधे संशयितेव नन्दकुललक्ष्मीः। कुतः—

विरुद्धयोर्भृशमिहमन्त्रिमुख्ययो-
र्महावने वनगजयोरिवान्तरे।
अनिश्चयाद्गजवशयेव भीतया
गतागतैर्ध्रुवमिव खिद्यते श्रिया ॥३॥

अन्वय—इह महावने वनगजयो इव भृश विरुद्धयो मन्त्रिमुख्ययो अन्तरे अनिश्चयात् भीतया गजवशया इव श्रिया गतागतै ध्रुव खिद्यते इव ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—इन दो महानीतिज्ञ मंत्रियो के विरोध से तो नन्दवंश की राजलक्ष्मी ही खटाई मे पड गई। जिस प्रकार जंगल मे लड़ते हुए दो हाथियों के बीच मे पड़ी हुई हथिनी संशय और डर के साथ इधर-उधर धक्का खाती है उसी प्रकार दोनो विरोधी मत्रियो के बीच में विचलित होकर राजश्री भी खीचा-तानी मे पडी धक्के खा रही है।

So, in the conflict of these two worthy ministers the fortune of the Nanda's race looks undecided Here, as in a thick forest, Fortune, like a female elephant, terrified due to uncertainty, seems to be wavering in loyalty between these two ministers who are fully antagonistic to each other like two wild intoxicated elephants

संस्कृत व्याख्या—इह अस्मिन् राज्ये महावने महाकानने वनगजयो इव कानभमतङ्गजयो इव भृगम् अत्यर्थम् विरुद्धयो विवदमानयो प्रारब्धविरोधयो. वा मत्रिमुख्ययो अमात्यवर्य्ययो चाणक्यराक्षसयो अन्तरे मध्ये अनिश्चयात् जयपराजययो अस्थिरत्वात् भीतया त्रस्तया गजवशया इव करिण्या इव श्रिया लक्ष्म्या गतागतै यातायातै एकदा चाणक्य प्रतिगमनम् अन्यदा तत आगतम् त विहाय राक्षस प्रति उपसर्पणम् इति एव रूप यद् गतागतम् तै ध्रुवम् निश्चितम् खिद्यते इव खेदमनुभवति इव ।

टिप्पणी

(१) **बुद्धिशालिनो**—बुद्धिमानो के। बुद्ध्या शालेते शोभेते इति बुद्धि+शाल्+णिनि। यह मत्रिमुख्ययो का विशेषण है। (२) **संशयिता**—सशय मे। सम्+शी+अच् भावे=सशय । सशय जात अस्या इति सशय+इतच् । (३) **मंत्रिमुख्ययोः**—दो मुख्य मत्रियो का। (४) **वनगजयोः इव**—जगली हाथी के समान। (५) **गजवशया**—हथिनी की तरह। 'वशा नार्या वन्ध्यागव्या हस्तिन्या दुहितर्यपि' इति हैम । वशा गजी गजवशा (कर्मधारय स०) 'पोटा-युवतिस्तोक'—इत्यादिना पुवद्भाव पूर्वनिपातश्च। (६) **भीतया**—डरी हुई। (७) **गतागतै**—आने जाने से। जिस प्रकार दो मतवाले हाथी लडते है और जब विजय अनिश्चित रहती है तो हथिनी कभी इधर कभी उधर आती जाती है और दु ख पाती है उसी प्रकार राजलक्ष्मी लडते हुए दो मत्रियो के बीच अनिश्चित है। वह लक्ष्मी कभी चाणक्य के पास जाती है और कभी राक्षस के पास। यहाँ उत्प्रेक्षा दो उपमा अलकारो से अनुप्राणित अलकार है और रुचिरा छन्द है। "जभौ सजौ गिति रुचिरा चर्तुग्रहै"।

तद्यावदमात्यराक्षसं पश्यामि। (इति परिक्रम्य स्थितः।)

(ततः प्रविशत्यासनस्थः पुरुषेणानुगम्यमानः सचिन्तो राक्षसः।)

राक्षसः—(सवाष्पम्) कष्टं भोः! कष्टम्।

वृष्णीनामिव नीतिविक्रमगुणव्यापारशान्तद्विषां
नन्दानां विपुले कुलेऽकरुणया नीते नियत्या क्षयम्।
चिन्तावेशसमाकुलेन मनसा रात्रिन्दिवं जाग्रतः
सैवेयं मम चित्रकर्मरचना भित्तिं विना वर्तते ।।४।।

अन्वय—वृष्णीनामिव नीतिविक्रमगुणव्यापारशान्तद्विषा नन्दाना विपुले कुले अकरुणया नियत्या क्षय नीते चिन्तावेशसमाकुलेन मनसा रात्रिन्दिव जाग्रतः मम सा एव इय चित्रकर्मरचना भित्ति विना वर्तते ॥४॥

हिन्दी अनुवाद—तो तब तक अमात्य राक्षस से भेंट करता हूँ (घूमकर बैठता है)

(आसन पर आसीन एक अनुचर के साथ चितामग्न राक्षस का प्रवेश)

राक्षस—(आँखो में आँसू भर कर) बड़े कष्ट की बात है कि नीति, पराक्रम और गुणो के प्रयोग से शत्रुओं को नष्ट करने वाले नन्दों के यदुवंशियो के समान महान वंश के निर्दय भाग्य द्वारा विनष्ट कर दिए जाने पर मैं चिन्ताग्रस्त होकर दिन-रात जागरण करता रहता हूँ। ऐसा मालूम पड़ता है कि मेरी सारी क्रिया (उपाय) उसी प्रकार स्तब्ध है जैसे कि किसी आधार (चित्रफलक) के न रहने से किसी चित्रकार की चित्रकला।

Meanwhile I shall see minister Rakshas (goes around and sits) (Now enters Rakshas, seated on a seat, absorbed in meditation and attended by a male servant)

Rakshas (with tears in his eyes)—What a calamity ? Like the vrishnis, the vast family of Nandas which destroyed the enemies by means of policy, virtue and valour, has been driven to extinction by cruel fate and I, with my mind troubled by a touch of care, keep wakeful day and night and it seems, as if all my activities are becoming useless like the painting of a painter without there being a paint-board

सस्कृत व्याख्या—वृष्णीनामिव यदूनाम् इव नीतिविक्रमगुणव्यापारशान्तद्विषाम् नीति मत्रशक्ति विक्रम प्रभुशक्ति गुणा तै शान्ता प्रशमितोपद्रवसजाता द्विष शत्रवो येषा तथाविधाना नन्दानाम् विपुले कुले अकरुणया नियत्या दारुणेन दुर्भाग्यदुर्विलसितेन क्षय नीते प्रणाश प्रापिते चिन्तावेशसमाकुलेन चिन्ताना ये आवेशा आघातास्तै कृत्वा समाकुलेन अत्यर्थमुद्विग्नेन मनसा अन्त करणेन हेतुना रात्रिदिव जाग्रत गतनिद्रस्य मम सा एव इय चित्रकर्मरचना चित्रकर्मण चित्रस्य रचना इव चित्राणामाश्चर्यकारिणाम् कर्मणाम् तत्रावापादीना सविधानप्रतिभा या हि पुरा जीवत्सु नन्देषु कि तद् यन्न कृतवती किन्तु तेषु नष्टेषु अधुना भित्ति विना वर्तते निराधार किमपि कर्तुमसमर्था हृदयमेव अवसीदति इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **वष्णीनाम्**—यदुवशियो का। वृष्णि एक यदुवशी राजा था। यहाँ

लक्षणा से उसके वशजो का ग्रहण किया गया है। इसलिए बहुवचन का प्रयोग हुआ है। जैसे 'रघूणामन्वय वक्ष्ये'—रघुवश। (२) **नीतिविक्रमगुणव्यापार-शान्तद्विषाम्**—नीति, विक्रम और गुणो से शत्रुओ को शान्त करने वालो का। यह नन्दानाम् का विशेषण है। नीति विक्रम गुणाश्च तै शान्ता द्विष येषा ने तेषा। (३) **विपुले कुले**—महान् कुल के (क्षय होने पर) यहाँ "भावे" सप्तमी है। (४) **चिन्तावेशसमाकुलेन**—चिन्ताया आवेश तेन समाकुलम् इति। तेन चिन्तावेशसमाकुलेन। यह मनसा का विशेषण है। (५) **रात्रि-दिवम्**—रात्रौ च दिवा च इति रात्रिदिवम्। (द्वन्द्व स०) 'अचतुरविचतुर'—इत्यादि सूत्रेण निपातनात् सिद्धम्। (६) **जाग्रत**—जागरण करने वाले का। जागृ+शतृ। (७) **चित्रकर्मरचना**—विचित्र कार्य अथवा अनेक प्रकार के उपाय। दूसरा अर्थ इसका है—चित्र खीचना। राक्षस के कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार किसी चित्रकार की चित्ररचना बिना किसी आधार के व्यर्थ हो जाती है उसी प्रकार नन्दकुल के नष्ट हो जाने पर मेरे सब विचित्र उपाय आधारहीन होने मे व्यर्थ हो गये। (८) **भित्ति**—आधार, सहारा। इसमे उपमालकार के साथ विशेषालकार और विभावनालकार की ससृष्टि है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अथवा—

नेदं विस्मृतभक्तिना न विषयव्यासङ्गमूढात्मना
प्राणप्रच्युतिभीरुणा न च मया नात्मप्रतिष्ठार्थिना।
अत्यर्थं परदास्यमेत्य निपुणं नीतौ मनो दीयते
देवः स्वर्गगतोऽपि शात्रववधेनाराधितः स्यादिति ।।५।।

अन्वय—मया परदास्यमेत्य अत्यर्थ निपुण नीतौ मनो दीयते, इद विस्मृत-भक्तिना न, विषयव्यासङ्गमूढात्मना न, प्राणप्रच्युतिभीरुणा न, आत्मप्रतिष्ठार्थिना न, स्वर्गगत अपि देव शात्रववधेन आराधित स्यात् इति ।।५।।

हिन्दी अनुवाद—मै दूसरे (मलयकेतु) की दासता स्वीकार करके भी जो राजनीति में भाग ले रहा हूँ वह इसलिए है कि दिवंगत महाराज नन्द अपने शत्रुओं के वध से किसी प्रकार प्रसन्न हो, इसलिए नही कि नन्दवंश के प्रति मैं अपनी भक्ति भूल गया हूँ, जीवन के सुखभोग की वासनाये भी मुझे मोह

नही रही है। इसलिए भी नहीं कि मुझे प्राणनाश का डर है, इसलिए नही कि मै अपनी प्रतिष्ठा को पुनः पाने का इच्छुक हूँ।

Accepting the slavery of another, I am engaged in politics, not because that I have no devotion to (Nanda), not that I want to enjoy the pleasures of the world, not that I am afraid of losing my life, not that I desire any personal glory, but because I wish that the soul of the king departed to heaven may feel some consolation by the destruction of his enemies

सस्कृत व्याख्या—मया परदास्यमेत्य परस्य मलयकेतोरित्यर्थ दास्यमेत्य मेवामङ्गीकृत्य अत्यर्थ निपुण परमप्रयत्नेन नीतो नयव्यवाहरे उपायप्रयोगे मनोदीयते तत् विस्मृतभक्तिना न नन्दभक्तिम् विस्मृत्य न विषयव्यासङ्गमूढात्मना न विषयेषु भोगेषु यो व्यासङ्ग आसक्ति तेन मूढ विवेकविकल आत्मा यस्य तादृशेन सता न प्राणच्युतिभीरुणा न वा परिरक्षणीया स्वस्य प्रिया प्राणा एव इति समरमुखात् भीतत्रस्तेन वा न मया क्रियते आत्मप्रतिष्ठार्थिना न हन्त पुनरप्यात्मान महामात्यपदे प्रतिष्ठापयेयमिति वा न मनसि कृत्य मया क्रियते किन्तु स्वर्गत अपि लोकान्तरित च देव स्वामी नन्द शात्रववधेन रिपुविनाशेन आराधित स्यात् सेवितो भवेत् इति हेतोरहम् मलयकेतुमाश्रित ।

टिप्पणी

इस श्लोक मे राक्षस बतला रहा है कि नन्दो के नाश हो जाने पर भी वह क्यो राजनीति मे इतना सक्रिय भाग ले रहा है। (१) **विस्मृतभक्तिना न**—नन्दवश की भक्ति को भूल गया हूँ सो भी कारण नही है। विस्मृत भक्ति येन स विस्मृतभक्ति (बहुव्रीहि स०)। यहाँ विग्रहवाक्य मे 'सामान्ये नपुसकम्' से नपुसकलिग हो जाने के कारण 'विस्मृत भक्ति' ऐसा विग्रह किया है। यदि 'विस्मृता भक्ति येन स' ऐसा विग्रह करे तो 'विस्मृताभक्तिना' प्रयोग हो जाएगा। देखिए—'सामान्ये नपुसकम्' इस वार्तिक पर 'दृढ भक्तिर्यस्य स दृढभक्ति। स्त्रीत्वविवक्षाया तु दृढाभक्ति'—सिद्धान्तकौमुदी। (२) **विषयव्यासङ्गमूढात्मना न**—विषयभोग की लालच से नही। (३) **प्राणप्रच्युतिभीरुणा न**—नकि प्राण जाने के भय से। (४) **आत्मप्रतिष्ठार्थिना न**—अपने गौरव के पाने की लालच से नही। आत्मन या प्रतिष्ठा ता कामयते इति तादृशेन न। (५) **परदास्यमेत्य**—दूसरे (मलयकेतु) की गुलामी स्वीकार करके। (६) **स्वर्गगतोऽपि देवः**—स्वर्ग मे जाने पर भी महाराज को शान्ति मिले। (७) **शात्रववधेन**—

शत्रुओ के नाश से। राक्षस का उद्देश्य इस राजनीति मे भाग लेने का यही है कि वह नन्द के शत्रुओ का वध करके स्वर्ग मे नन्द को तृप्ति दिला सके। इसमे परिसख्या अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(आकाशमवलोकयन् सास्रम्) भगवति कमलालये! भृशमगुणज्ञासि। कुतः—

आनन्दहेतुमपि देवमपास्य नन्दं
सक्तासि किं कथय वैरिणि मौर्यपुत्रे।
दानाम्बुराजिरिव गन्धगजस्य नाशे
तत्रैव किं न चपले प्रलयं गतासि ।।६।।

अन्वय—चपले! कथय आनन्दहेतुमपि देव नन्दम् अपास्य वैरिणि मौर्यपुत्रे कि सक्तासि, गन्धगजस्य नाशे दानाम्बुराजिरिव तत्रैव कि न प्रलय गतासि ।।६।।

हिन्दी अनुवाद—(आकाश की ओर देखता हुआ आँख में आँसू भर कर) भगवति लक्ष्मि, तुम बिलकुल गुण का ख्याल नही करती हो। हे चञ्चले, आनन्द के कारण भूत भी महाराज नन्द को छोडकर तुम वैरी चन्द्रगुप्त मे कैसे आसक्त हो गई। गंधगज के नाश (मतवाले हाथी) के मरते ही तुम (उसके) मदजल की धारा की तरह वही क्यो न विलीन हो गई।

(Looking at the sky—with tears in his eyes) Oh the dweller in the lotus, you are totally unregardful of merit How—O fickle one, why, forsaking Nanda, the source of your delight, you have transferred your love to Chandragupta, an enemy? Why did not you perish then and there (with him) like the line of temporal fluid at the death of the scent elephant

सस्कृत व्याख्या—अयि चपले भ्रष्टपातिव्रत्ये स्वैरिणि कथय किमर्थम् कथ वा आनन्दहेतुमपि सर्वविधसुखसभोगदातारमपि देव नन्दम् अपास्य त्यक्त्वा वैरिणि शत्रौ मौर्यपुत्रे चन्द्रगुप्ते रक्तासि प्रेमयुक्ता भूता? अये गन्धगजस्य नाशे उपरते गन्धहस्तिनि दानाम्बुराजिरिव तदीयमदधारा इव तत्रैव नन्दे नष्टे मृते एव कि प्रलय न गतासि तेनैव सह कथ न मृता असि इत्यर्थ।

टिप्पणी

(१) **कमलालये**—लक्ष्मी। कमलानि आलय अस्या इति कमलालया तत्सम्बुद्धौ कमलालये। (२) **अगुणज्ञा**—गुणो का ख्याल न करने वाली।

गुण+ज्ञा+क कर्तरि=गुणज्ञा, न गुणज्ञा अगुणज्ञा (नञ्तत्०)। (३) **आनन्द-हेतुम्**—आनन्द के कारण लोक मे देखा जाता है कि स्त्रियाँ उसी व्यक्ति को अधिक पसन्द करती है, जो उन्हे अधिक आनन्द प्रदान कर सके। राक्षस लक्ष्मी से कह रहा है कि यद्यपि तुम्हारे लिए नन्द अधिक आनन्दप्रद थे तो भी तुम उनके शत्रु के पास चली गई। ऐसा क्यो? यह तो लोक विपरीत बात है। (४) **अपास्य**—छोडकर। अप+अस्+ल्यप्। (५) **सक्ता**—प्रेम करने लगी। (६) **गन्धगज**—वह हाथी जिससे मद चूता है। जब हाथी मर जाता है तो मद चूना भी बन्द हो जाता है। राक्षस के कहने का तात्पर्य यही है कि जिस प्रकार मदगज के मरने पर मदधारा बन्द हो जाती है उसी प्रकार नन्दकुल के क्षय होने पर तू भी (लक्ष्मी) क्यो नही नष्ट हो गई। यहाँ उपमा अलकार परिकर अलकार से ससृष्ट है। इसमे वसन्ततिलका छन्द है।

अपि च अनभिजाते!

पृथिव्यां किं दग्धाः प्रथितकुलजा भूमिपतयः
पतिं पापे मौर्यं यदसि कुलहीनं वृतवती।
प्रकृत्या वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला
पुरन्ध्रीणां प्रज्ञा पुरुषगुणविज्ञानविमुखी ।।७।।

अन्वय—पापे! पृथिव्या प्रथितकुलजा भूमिपतय दग्धा कि (यत त्व) कुलहीन मौर्य पति वृतवती असि। वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला पुरन्ध्रीणा प्रज्ञा प्रकृत्या पुरुषगुणविज्ञानविमुखी (भवति) ।।७।।

हिन्दी अनुवाद—अरी तू कितनी कुलटा है। (तेरा जीवन ही पापमय है) नहीं तो क्या इस इतनी बड़ी धरती पर राजे महाराजे जो प्रतिष्ठित वंश वाले हैं जल मरे थे जो तूने इस कुलहीन मौर्य को वरण कर लिया। (अथवा इसमें तेरा दोष ही क्या है) क्योकि काशपुष्प के अग्रभाग के समान चंचल, रमणियो की बुद्धि स्वभावतः पुरुषो के गुणो के विवेचन से विमुख रहती है।

Besides, oh, ill-born and wicked lady, are all the kings of illustrious family on earth reduced to ashes, that you have chosen the Maurya of the low family for your master? Or (you are innocent for) the mind of woman which is fickle like the end of the kasa flower, is incapable of appreciating the merits of men

संस्कृत व्याख्या—अयि पापे पापाचरे पृथिव्या ससारे प्रथितकुलजा विपुलेषु प्रसिद्धेषु वा राजवशेषु जाता भूमिपतय नृपतय कि दग्धा विनष्टा यत् कुलहीन नीचकुले जात मौर्यं चन्द्रगुप्तम् पति भर्तार वृतवती कृतवती अथवा पुरन्ध्रीणा नारीणा प्रज्ञा बुद्धि प्रकृत्या स्वभावेन काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला काशात्प्रभवो यस्य तस्य कुसुमस्य पुष्पस्य प्रान्त अग्रभाग इव चपला चलायमाना पुरुषगुणविज्ञानविमुखी पुरुषाणा यद् गुणविज्ञान सत्कुलत्वदुष्कुलत्वादिविवेचन तत्र विमुखी नितरा निरपेक्षा खलु भवतीति। नारीणा बुद्धि स्वभावतः एव चपला ता इद ज्ञातुमसमर्था यत् क कुलीन क अकुलीन ।

टिप्पणी

(१) **अनभिजाते**—अकुलीन, कुलटा। (२) **प्रथितकुलजा**—विशाल वश मे पैदा होने वाले। (३) **किं दग्धाः**—क्या नष्ट हो गये। क्या भस्म हो गए। (४) **कुलहीनं मौर्यम्**—चन्द्रगुप्त मुरा से पैदा हुआ था। यह नन्द का अवैध पुत्र था। अत इसे कुलहीन कहा। (५) **काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला**—काश प्रभव यस्य स काशप्रभव तस्य कुसुमस्य प्रान्त इव चपला इति काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला। (६) **पुरन्ध्रीणाम्**—स्त्रियो की। पुर धारयति इत पुर+धृ+णिच्+खच् कर्तरि+ङीष् स्त्रियाम् पृषोदरादित्वात् साधु । (७) **पुरुषगुणविज्ञानविमुखी**—पुरुषो के गुणो को पहचानने मे असमर्थ। इस श्लोक मे उपमा अलकार से ससृष्ट अर्थान्तरन्यास अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

अपि च, अविनीते! तदहमाश्रयोन्मूलनेनैव त्वामकामां करोमि। (विचिन्त्य) मया तावत्सुहृत्तमस्य चन्दनदासस्य गृहे गृहजनं निक्षिप्य नगरान्निर्गच्छता न्याय्यमनुष्ठितम्। कुतः? कुसुमपुराभियोगं प्रति अनुदासीनो राक्षस इति तत्रस्थानामस्माभिः सहैककार्याणां देवपादोपजीविनां नोद्यमः शिथिलीभविष्यति। चन्द्रगुप्तशरीरमभिद्रोग्धुमस्मत्प्रयुक्तानां तीक्ष्णरसदायिनामुपसंग्रहार्थं परकृत्योपजापार्थञ्च महता कोशसञ्चयेन स्थापितः शकटदासः। प्रतिक्षणमरातिवृत्तान्तोपलब्धये तत्संहतिभेदनाय च व्यापारिताः सुहृदो जीवसिद्धिप्रभृतयः। तत् किमत्र बहुना—

हिन्दी अनुवाद—अरी उद्दण्ड, मैं भी तेरा आधार ही नष्ट करके तेरे मनोरथ को चकनाचूर किए देता हूँ। (कुछ सोचकर) नगर से निकलते समय अपने मित्र चन्दनदास के घर मे अपने परिवार को छोड़कर ठीक ही किया। क्योंकि जब हमारे कंधे के साथ कंधा मिलाने वाले महाराज नन्द के भक्त यह जान जायँगे कि राक्षस पाटलिपुत्र पर आक्रमण करने मे उदासीन नहीं है तो उनके भी प्रयत्न ढीले नही पडेंगे। वहाँ विषादिक से चन्द्रगुप्त को नाश करने के लिए और सब प्रकार से शत्रु के दाँव-पेच को व्यर्थ करने के लिए बहुत सा धन देकर शकटदास को छोड दिया है और साथ ही साथ शत्रु के क्षण-क्षण की कार्यगति को जानने के लिए और उनके गुट्ट को तोड़ने के लिए जीवसिद्धि ऐसे लोगों को नियुक्त कर दिया है।

Oh immodest girl, I will make you disappointed by destroying your shelter itself (Thinking) I have done the right thing by keeping my family in the house of my best friend, Chandandas, while coming out of the town Why ? Because, when the dependants of revered sire (Nanda), who are staying there with a common object with us, will come to know that Rakshas is not indifferent to an attack on Kusumpura, their efforts will not be slackened Shakatdasa has been stationed there with a large sum of money to make the measures of the enemy futile and also to win over those who would administer poison to Chandragupta Friends such as Jiwasiddhi and others have been employed to get the full news of the foe every moment and to cause dissension in their (enemies) allies

संस्कृत व्याख्या—अपि च अविनीते विनयरहिते तत् तस्मात् कारणात् अहम् आश्रयोन्मूलनेनैव आश्रयस्य त्वदवलम्बनस्य मौर्यस्य उन्मूलनेन एव विनाशेनैव त्वाम् अकामाम् असफलमनोरथाम् करोमि। नगरात् कुसुमपुरात् निर्गच्छता बहि· आगच्छता मया तावत् सुहृत्तमस्य प्रगाढमित्रस्य चन्दनदासस्य गृहे गृहजनम् परिवारम् निक्षिप्य सस्थाप्य न्याय्यम् उचितम् अनुष्ठितम् कृतम्। कुत कुसुमपुराभियोग प्रति कुसुमपुरोपरि आक्रमण प्रति अनुदासीन न उपायरहित राक्षस इति तत्रस्थानाम् कुसुमपुरस्थितानाम् अस्माभि सह एककार्याणाम् तुल्यप्रयोजनानाम् देवपादाना राज्ञ नन्दस्य ये उपजीविन सेवका तेषाम् उद्यम उपाय न शिथिलीभविष्यति ते प्रयत्नपरा भविष्यन्तीति भाव चन्द्रगुप्तशरीरम् अभिद्रोग्धुम् त विनाशयितुमित्यर्थं, अस्मत्प्रयुक्तानाम् मया नियुक्तानाम् तीक्ष्णरसदायिनाम् विषदायिनाम् उपसग्रहार्थम् वशीकरणार्थम् सम्यग्ग्रहणार्थम् वा परकृत्योपजापार्थं च परस्य शत्रो· कृत्याना कार्य्याणाम् उपजापार्थम् भेदार्थमपि

महता कोषसञ्चयेन अधिकेन धनराशिना अधिक धन दत्त्वेत्यर्थ स्थापित शकटदास प्रतिक्षण सर्वथा अरातिवृत्तान्तोपलब्धये शत्रुसमाचारप्राप्तये तेषा शत्रूणाम् सहते समूहस्य भेदनाय नाशाय व्यापारिता नियुक्ता सुहृद मित्राणि जीवसिद्धिप्रभृतय ।

टिप्पणी

(१) **आश्रयोन्मूलनेन**—आश्रय (सहारा) को नष्ट करके। आश्रयस्य उन्मूलनम् इति तेन। आश्रय—आ+श्री+अच् (आश्रीयते इति)। (२) **अकामाम्**—मनोरथहीन। अनाप्त काम अथवा असिद्ध काम अस्याः इति अकामा (बहुव्रीहि स०), ताम्। (३) **अभियोग**—आक्रमण। (४) **देव-पादोपजीविनाम्**—महाराज (नन्द) के आश्रित लोग। पूज्यो देव देवपादा. नित्यसमास 'प्रशसावचनैश्च' इत्यनेन। गौरवे बहुवचनम्। देवपादान् आश्रित्य वर्तयन्ति इति। देवपाद+उप+जीव्+णिनि। (५) **उपसंग्रहार्थम्**—अपनी ओर मिलाने के लिए। (६) **परकृत्योपजापार्थम्**—शत्रु के कार्यो का पता लगाने के लिए। परस्य शत्रो कृत्याना कार्याणाम् उपजापार्थमिति भेदार्थमिति। (७) **महता कोषसञ्चयेन**—बहुत-सी धनराशि के साथ (बहुत धन देकर)। (८) **अरातिवृत्तान्तोपलब्धये**—शत्रु के वृत्तान्त को जनाने के वास्ते। (९) **तत्संहतिभेदनाय**—उनके समूह (गुट्ट) को तोडने के लिए। अत्र तादर्थ्ये चतुर्थी। सम्+हन्+क्तिन् भावे=संहति। (१०) **जीवसिद्धिप्रभृतय**—जीवसिद्धि आदि। राक्षस को इस विषय मे धोखा हुआ। जीवसिद्धि वास्तव मे चाणक्य का गुप्तचर था पर राक्षस ने गलती मे उसे अपना आदमी समझ लिया था। यह बात प्रथम अङ्क मे आ चुकी है कि जीवसिद्धि चाणक्य का सहपाठी था। वह क्षपणक बनकर राक्षस के पास रहने लगा था।

तत् किमत्र बहुना ?—

इष्टात्मजः सपदि सान्वय एव देवः
शार्दूलपोतमिव यं परिपोष्य नष्टः।
तस्यैव बुद्धिविशिखेन भिनद्मि मर्म
वर्मीभवेद्यदि न दैवमदृश्यमानम् ॥८॥

अन्वय—इष्टात्मज देव शार्दूलपोतमिव य परिपोष्य सान्वय एव सपदि नष्ट तस्य एव मर्म बुद्धिविशिखेन भिनद्मि यदि अदृश्यमान दैव न वर्मीभवेत् ॥८॥

हिन्दी अनुवाद—**यदि अदृश्य दैव (भाग्य) कवच बनकर रक्षा न करेगा तो मैं अपनी नीति रूपी तीर से उस चन्द्रगुप्त का मर्मस्थान छिन्न-भिन्न कर दूँगा जिस (चन्द्रगुप्त) ने एक सिंह-शिशु के समान पालित-पोषित होकर संतान-वत्सल महाराज नन्द और उनके वंश का ही सर्वनाश कर डाला।**

What is the use of saying much in this matter If fate, with its invisible form, will not protect as a shield, I, with the arrow of my wit, will cut the vitals of Chandragupta, who, being brought up like a tiger cub, destroyed the whole family of sire (Nanda), whom the son was dear

सस्कृत व्याख्या—इष्टात्मज इष्टा प्रिया आतमजा सुता यस्येति देव नन्द शार्दूलपोतमिव सिहशावकमिव य चन्द्रगुप्तम् परिपोष्य परिपाल्य सान्वय एव सवश एव सपदि शीघ्रम् नष्ट नाश गत तस्य चन्द्रगुप्तस्य एव मर्म मर्मस्थानीय मत्रदातारम् चाणक्यमेव बुद्धिविशिखेन कूटनीतिव्यापारेण भिनद्मि क्षिप्रम् भेत्स्यामि यदि अदृश्यमान गूढदेह दैव भाग्यम् न वर्मीभवेत् न तस्य रक्षक भवेत् स्यादित्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **इष्टात्मज**.—पुत्रप्रेमी। इष्टा आतमजा यस्येति स । (२) **शार्दूलपोतमिव**—बाघ के बच्चे के समान। 'पोत पाको ऽर्भको डिम्भ पृथुक शावकः शिशु' इत्यमर । बाघ अपने बच्चे को स्नेह से पालता है। वही बच्चा बडा होने पर अपने बाप को ही मारकर खा जाता है। इसी प्रकार नन्द ने चन्द्रगुप्त को प्रेम से पाला था, किन्तु मौका मिलने पर वही चन्द्रगुप्त नन्द के नाश का का कारण बना। (३) **सान्वय**—वश समेत। अन्वयेन सहित सान्वय । (४) **बुद्धिविशिखेन**—बुद्धि रूपी बाणो से। (५) **अदृश्यरूपम्**—जिसका रूप दिखाई नही पडता। (६) **वर्मीभवेत्**—रक्षक न बने। राक्षस के कहने का मतलब है कि मैं अपने बुद्धिबल से चन्द्रगुप्त के मर्म स्थान को अवश्य नष्ट कर दूँगा अगर भाग्य ने उसका साथ न दिया तो। इस श्लोक मे उपमा एव परिणाम अलकार है तथा वसन्ततिलका छन्द है। "उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौग"।

(ततः प्रविशति कंचुकी)

कञ्चुकी—

कामं नन्दमिव प्रमथ्य जरया चाणक्यनीत्या यथा
धर्मो मौर्य इव क्रमेण नगरे नीतः प्रतिष्ठां मयि।

तं सम्प्रत्युपचीयमानमनु मे लब्धान्तरः सेवया
लोभो राक्षसवज्जयाय यतते जेतुं न शक्नोति च ॥६॥

अन्वय—चाणक्यनीत्या यथा जरया नन्दमिव काम प्रमथ्य नगरे मौर्ये इव मयि धर्म क्रमेण प्रतिष्ठा नीत । सम्प्रति सेवया लब्धान्तरो मे लोभ राक्षसवत् उपचीयमान तम् अनु जयाय यतते च जेतु शक्नोति ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—(तब कचुकी प्रवेश करता है) कञ्चुकी—जिस प्रकार चाणक्य की नीति ने नन्द का नाश कर चन्द्रगुप्त को कुसुमपुर में स्थापित किया उसी प्रकार वृद्धावस्था ने मेरी कामवासना का नाश करके मुझ में धर्म स्थापित किया है। यद्यपि अवसर पाकर राक्षस चन्द्रगुप्त को विजय करने जायगा और उसी प्रकार (मेरा) लोभ भी यद्यपि (राजसेवारूपी अवसर पाकर) धर्म को दबाना चाहता है पर शिथिल होने के कारण दोनो ही (राक्षस तथा लोभ) जयी नही हो सकते।

(Now enters Chamberlain) *Chamberlain*—Old age has, by destroying Desire, established Piety (धर्म) in me, just as Chanakya's diplomacy, killing Nanda, placed Chandragupta in the city of (Kusumpura) Now with a foot hold secured through service, Avarice like Rakshas, wants to be successful in conquering it (so Rakshas will also not be able to overthrow Chandragupta)

संस्कृत व्याख्या—चाणक्यनीत्या चाणकस्य कूटनयनैपुण्येन यथा इव जरया वृद्धावस्थया नन्दम् इव नदाख्यराजानमिव काम भोगविलास प्रमथ्य परिभूय नगरे पाटलिपुत्रे मौर्ये चन्द्रगुप्ते इव मयि धर्म क्रमेण प्रतिष्ठाम् नीत प्रतिष्ठापित । सम्प्रति इदानी सेवया राज्ञ सेवया शुश्रूषया लब्धान्तर प्राप्तावकाशः मे लोभ तृष्णा राक्षसवत् राक्षस इव उपचीयमान वृद्धि गच्छन्त त धर्म चन्द्रगुप्त च अनुजयाय जेतु यतते प्रयत्न करोति च पर जेतु न शक्नोति पराभवितु न शक्ष्यतीति भाव ।

यथा पाटलिपुत्रे चाणक्यनीत्या राजमण्डल वशीकृत्य प्रतिष्ठापित चन्द्रगुप्त राक्षस पराभवितु यतते तथैव लोभ मे धर्मम् दूरी कर्तुमिच्छति पर मन्येऽहम् यत् उभावपि स्वप्रयत्ने असफलौ भविष्यत ।

टिप्पणी

(१) कञ्चुकी की परिभाषा भूमिका मे देखिये (२) **जरया**—वृद्धावस्था से। (३) **प्रमथ्य**—नष्ट करके। प्र+मन्थ्+क्तवा—ल्यप्। (४) **सेवया**—

राजा की सेवा से। (५) **लब्धान्तर**—अवसर पाकर। लब्ध अन्तर येन स लब्धान्तर। यहाँ पर चाणक्यनीति की तुलना जरा से, धर्म की तुलना चन्द्रगुप्त से, लोभ की राक्षस से, नन्द की काम से की गई है। जिस प्रकार चाणक्य की राजनीति से साम्राज्य पद पर स्थापित चन्द्रगुप्त को राक्षस मौका पाकर दबाना चाहता है उसी प्रकार वृद्धावस्था के कारण मुझमे आई हुई धर्मभावना को लोभ राजा की सेवा का अवसर पाकर दबाना चाहता है। पर न तो लोभ धर्म को दबा सकता है और न राक्षस चन्द्रगुप्त को जीत सकता है। (६) **जयाय**—अत्र 'तुमर्थाच्च भाववचनात्' इति सूत्रेण चतुर्थी। इस श्लोक मे समासोक्ति तथा उपमा अलंकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(दृष्ट्वा) अयममात्यराक्षसः। (परिक्रम्योपसृत्य च) इदममात्यराक्षसस्य गृहम्। प्रविशामि। (प्रविश्यावलोक्य च) अमात्य! स्वस्ति भवते।

राक्षसः—आर्य जाजले! अभिवादये। प्रियंवदक! आसनम् अत्रभवत उपनय।

पुरुषः—एदं आसणम्। उपविसदु अज्जो। (इदमासनम्। उपविशत्वार्यः।)

कञ्चुकी—(उपविश्य) अमात्य! कुमारो मलयकेतुरमात्यं विज्ञापयति—'चिरात्प्रभृत्यार्यः परित्यक्तोचितशरीरसंस्कार इति पीड्यते मे हृदयम्। यद्यपि सहसा स्वामिगुणाः न शक्यन्ते विस्मर्तुं तथापि मद्विज्ञापनां मानयितुमर्हत्यार्यः (इत्याभरणानि प्रदर्श्य) अमात्य! इमान्याभरणानि कुमारेण स्वशरीरादवतार्य प्रेषितानि, धारयितुमर्हत्यार्यः।

राक्षसः—आर्य! जाजले! विज्ञाप्यतां मद्वचनात् कुमारः। विस्मृता मया स्वामिगुणा भवद्गुणपक्षपातेन। किन्तु—

हिन्दी अनुवाद—(देखकर) यह तो अमात्य राक्षस है। (घूमकर और निकट जाकर) यह तो मंत्री राक्षस का घर है। मै इसमें प्रवेश करता हूँ। (प्रवेश कर और देखकर) अमात्य, आपका कल्याण हो।

राक्षस—आर्य जाजलि, मैं आपका अभिवादन करता हूँ। प्रियंवदक, आर्य जाजलि के लिये आसन लाओ।

पुरुष—यह आसन है। आर्य बैठें।

कञ्चुकी—(बैठकर) अमात्य, कुमार मलयकेतु ने कहा है कि बहुत दिनो से आर्य ने शरीरोचित संस्कार करना छोड दिया है। इससे मेरा हृदय दुःखी हो रहा है। यद्यपि स्वामी (नन्द) के गुण सहसा भुलाये नही जा सकते तथापि आर्य मेरी प्रार्थना मान लें। (आभूषणों को दिखाकर) अमात्य, कुमार ने ये आभूषण अपने शरीर से उतार कर भेजा है, आर्य इन्हें धारण करें।

राक्षस—आर्य जाजले, मेरी तरफ से कुमार से कहो कि आप के गुणों के कारण मैंने स्वामी के गुणो को भुला दिया है। किन्तु

(*Seeing*) It is minister Rakshas (Going round and advancing) This is the house of minister Rakshas I enter (Entering and noticing) Blessings unto you

Rakshas—Noble Jajali, I bow to you Priyamvadak bring a seat (for Noble Jajali)

Servant—This is the seat Let Noble Sir sit down

Chamberlain—(Sitting down) Prince Malayaketu says thus to minister, "Your Noble Sir has renounced from a long time the proper decoration of his person and so it pains me Though master's virtues cannot be forgotten so soon still, Your Noble Sir behoves to accept my request" (Showing the ornaments) These ornaments have been taken off by the prince from his own body and sent (to you) Your Noble Sir, may kindly wear them

Rakshasa—Noble Jajali, let the prince be told on my behalf, "Due to an appreciation of your virtues masters" virtues are indeed forgotten, but—

टिप्पणी

(१) **चिरात् प्रभृति**—बहुत दिनो से। (२) **परित्यक्तोचितसंस्कारः**—उचित शारीरिक संस्कार (सजावट) को छोड दिया है। परित्यक्त उचितः संस्कार येन स (ब० व्री०)। सम्+कृ+घञ् करणे भावे वा, 'सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे' इत्यनेन सुडागम=संस्कार। (३) **शरीरात् अवतार्य**—शरीर से उतार कर। अव+तॄ+णिच्+ल्यप्। (४) **जाजले**—जाजलिन् नाम के एक मुनि थे। उनकी संतान जाजलि कहलाती है। जाजलिन अपत्य पुमान् इति जाजलिन्+अण् जाजल तस्य गोत्रापत्य पुमान् जाजल+इञ्=जाजलिः तत्सम्बोधने जाजले। (५) **विज्ञाप्यताम्**—निवेद्यताम्। वि+ज्ञा+णिच्, पुक्+लोट् कर्मणि। (६) **भवद्गुणपक्षपातेन**—आपके गुणो मे पक्षपात होने के कारण। भवत गुणेषु पक्षपात तेन। यहाँ हेतौ तृतीया है।

न तावन्निर्वीर्यैः परपरिभवाक्रान्तिकृपणै-
र्वहाम्यङ्गैरेभिः प्रतनुमपि संस्काररचनाम् ।
न यावन्निःशेषक्षपितरिपुचक्रस्य निहितं
सुगाङ्गे हेमाङ्कं नृवर तव सिंहासनमिदम् ॥१०॥

अन्वय—नृवर ! यावत् नि शेपक्षपितरिपुचक्रस्य तव हेमाङ्कम् इद सिहासन सुगाङ्गे न निहित तावत् परपरिभवाक्रान्तिकृपणै निर्वीर्यै एभि अङ्गै प्रतनुमपि सस्काररचना न वहामि ॥१०॥

हिन्दी अनुवाद—जब तक समस्त शत्रुसघ का नाश करके कुमार का स्वर्ण सिहासन सुगाङ्गप्रासाद मे स्थापित नही कर दिया जाता तब तक अपने इस निर्वीर्य और शत्रुद्वारा किए गए अपमानो से घायल दीन-हीन शरीर पर किसी प्रकार का आभूषण मै नहीं धारण करूँगा।

O best of men, so long as I do not place your throne of gold in the Suganga Palace, by totally destroying the cricle of enemies, I will not put on any ornament on (or try to decorate) these limbs, which are miserable through the heaping of indignities by the enemy and therefore devoid of courage

सस्कृत व्याख्या—हे नृवर नरश्रेष्ठ, यावत् नि शेषक्षपितरिपुचक्रस्य नि शेष यथा स्यात्तथा क्षपित विनाशितम् रिपुचक्रम् शत्रुमण्डलम् यस्य तस्य तव इद हेमाङ्क सिहासनम् हिरण्मयम् राजासनम् सुगाङ्गे महाराजस्य नन्दस्य प्रासादे न निहित न प्रतिष्ठापितम् तावत् तत्कालपर्य्यन्तम् परपरिभवाक्रान्तिकृपणै परै शत्रुभि कृता या परिभवाक्रान्ति अस्मत्तिरस्क्रियारूपमाक्रमण तेन कृपणै दीनै अत एव निर्वीर्यै शक्तिहीनै अङ्गै प्रतनुमपि स्वल्पामपि सस्काररचनाम् अलङ्कार-विकल्पम् न वहामि नैव धारयामीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **नृवर**—पुरुषो मे श्रेष्ठ। नृषु वर इति नृवर तस्य सम्बोधने। (२) **नि शेषक्षपितरिपुचक्रस्य**—पूर्णरूप से नाश कर दिए गए है शत्रु जिसके। नि शेष क्षपितम् रिपुचक्रम् यस्य स तस्य (ब० व्री०)। (३) **सुगाङ्गे**—सुगाङ्ग प्रासाद। यह नन्द का महल था। (४) **परपरिभवाक्रान्तिकृपणः**—शत्रुओ द्वारा किए गए अपमान के कारण दुखी (शरीर से) परै कृता या परिभवाक्रान्ति तेन कृपणै । आ+क्रम्+क्तिन् भावे=आक्रान्ति । कृपण=दीन।

'कदर्ये कृपणक्षुद्रकिम्पचानमितम्पचा । नि स्वस्तु दुर्विधो दीनो दरिद्रो दुर्गतोऽपि स'।। इत्यमरः । (५) प्रतनुमपि—थोडा सा भी। राक्षस के कहने का तात्पर्य यह है कि मैंने स्वामिभक्ति के कारण आभूषणो को त्यागा नही है बल्कि शत्रुकृत वेदना मुझे पीडा दे रही है। इसलिए मैंने आभूषणो का परित्याग कर दिया है। इसमे परिकर अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

कञ्चुकी—अमात्य ! त्वयि नेतरि सुलभमेतत् कुमारस्य । तत् प्रतिमान्यतां कुमारस्य प्रथमः प्रणयः ।

राक्षसः—आर्य ! कुमार इवानतिक्रमणीयवचनो भवानपि । तदनुष्ठीयते कुमारस्याज्ञा ।

कञ्चुकी—(नाट्येन भूषणानि परिधाप्य) स्वस्ति भवते । साधयाम्यहम् ।

राक्षसः—आर्य ! अभिवादये । (कञ्चुकी निष्क्रान्तः ।) प्रियंवदक ! ज्ञायतां कोऽयमस्मद्दर्शनार्थी द्वारि तिष्ठति ।

प्रियंवदकः—जं अज्जो आणवेदि त्ति । (परिक्रम्याहितुण्डिकं दृष्ट्वा) णं अज्ज ! को तुमं ? (यदार्य आज्ञापयतीति । ननु आर्य ! कस्त्वम्) ?

आहितुण्डिकः—भद्द ! अहं क्खु आहितुण्डिओ जिण्णविसो णाम । इच्छामि अमच्चरक्खसस्स पुरदो सप्पेहिं खेलिदुं । (भद्र ! अहं खल्वाहितुण्डिको जीर्णविषो नाम । इच्छाम्यमात्यराक्षसस्य पुरतः सर्पैः खेलितुम् ।)

प्रियंवदकः—चिट्ठ, जाव अमच्चस्स णिवेदेमि । (राक्षसमुपसृत्य) अज्ज ! एसो क्खु सप्पोवजीवी इच्छदि सप्पेहिं अमच्चस्स पुरदो खेलिदुं । (तिष्ठ, यावदमात्यस्य निवेदयामि । आर्य ! एष खलु सर्पोपजीवी इच्छति सर्पैरमात्यस्य पुरतः खेलितुम् ।)

हिन्दी अनुवाद—कञ्चुकी—अमात्य, आपके महामत्री रहते हुए कुमार के लिए यह सब सुलभ है। इसलिए कुमार की यह प्रथम प्रार्थना तो स्वीकार ही कर लीजिए।

राक्षस—आर्य, मेरे लिए तो जैसे कुमार की आज्ञा मान्य है वैसे ही आप की। लीजिए मैं कुमार की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ।

कञ्चुकी—(आभूषणो के पहनाने का अभिनय करते हुए) आपका कल्याण हो। मैं जाता हूँ।

राक्षस—आर्य, मैं आपका अभिवादन करता हूँ (कञ्चुकी चला जाता है।) प्रियवदक, मालूम करो कि कौन व्यक्ति मुझसे मिलने के लिए दरवाजे पर खडा है।

प्रियंवदक—जैसी आर्य की आज्ञा (जाते हुए सँपेरे को देखकर) आप कौन हैं ?

सँपेरा—मैं जीर्णविष नाम का सँपेरा हूँ। अमात्य राक्षस को मैं कुछ साँप का खेल दिखाना चाहता हूँ।

प्रियंवदक—ठहरो, मैं अमात्य को तब तक सूचित कर दूँ (राक्षस के पास जाकर) आर्य, एक सँपेरा आया है जो आपके सामने साँप का खेल दिखाना चाहता है।

Chamberlain—Minister, while you are the guide, this is easily accomplished unto prince, so let the first request of the prince be accepted

Rakshas—Nobe Sir, to me your words are as acceptable as those of the prince, so the order of the prince is being carried out

Chamberlain—(Acting the putting on of ornaments) Blessings unto thee, now I go

Rakshas—Noble Sir, I bow (Chamberlain goes out) Priyamvadak, see who is waiting at the door desirous of seeing me

Priyamvadak—As your Noble Sir commands (Going round and seeing the snake-charmer) Noble Sir, who are you ?

Snake-Charmer—I am a snake-charmer named Jirnavisha, I wish to play with snakes before the minister

Priyamvadak—Stop till I inform the minister (Going to Rakshas) Noble Sir, here is a snake-charmer who wants to play with snakes in the Minister's presence

टिप्पणी

(१) **प्रतिमान्यताम्**—स्वीकार किया जाय। प्रति+मन्+णिच्+लोट्। (२) **त्वयि नेतरि**—आप के नेता होते। यहाँ पर "यस्य च भावेन भावलक्षणम्" से सप्तमी है। (३) **अनतिक्रमणीयवचन**—जिसकी आज्ञा का उल्लघन न किया जाय। (४) **परिधाप्य**—पहनाकर। परि+धा+णिच्+ल्यप्। मलयकेतु के द्वारा प्रदत्त जिन आभूषणो को राक्षस पहन रहा है, इन्ही आभूषणो को आगे

चलकर वह प्रसन्न होकर सिद्धार्थक को पुरस्कार के रूप मे दे देगा। षष्ठ अक मे इन्ही आभूषणो का प्रयोग किया जाएगा। स्मरण रहे कि सिद्धार्थक चाणक्य का गुप्तचर है और खासकर इसी प्रयोजन से आया भी है। (५) **साधयामि**—जाता हूँ। ण्यन्त साध् धातु गमनार्थक है—'प्रायेण ण्यन्तक साधिर्गमे स्थाने प्रयुज्यते' दर्पण। (६) **सर्पोपजीवी**—सँपेरा। सर्पै उपजीवतीति। सर्प+उप+जीव्+णिनि।

राक्षसः—(वामाक्षिस्पन्दनं सूचयित्वा आत्मगतम्) कथं प्रथममेव सर्पदर्शनम्! (प्रकाशम्) प्रियंवदक! न नः कुतूहलमस्ति सर्पदर्शने। तत् परितोष्य विसर्जयैनम्।

प्रियंवदकः—जं अज्जो आणवेदि। (परिक्रम्याहितुण्डिकमुपसृत्य) भद्द! एसो क्खु दे अमच्चो अदंसणेण प्पसादं करेदि। ण उण दंसणेण। (यदार्य आज्ञापयति। भद्र! एष खलु ते अमात्योऽदर्शनेन प्रसादं करोति न पुनर्दर्शनेन।

आहितुण्डिकः—भद्द। विण्णवेहि मम वअणेण अमच्चं—'ण केवलं अहं सप्पोवजीवी, पाउअकवी क्खु अहं, ता जइ मे दंसणेण अमच्चो प्पसादं ण करेदि, ता एदं पि पत्तअं वाचेदुं प्पसीददु त्ति। (पत्रमर्पयति।) (भद्र! विज्ञापय मम वचनेनामात्यं—'न केवलमहं सर्पोपजीवी, प्राकृतकविः खल्वहं, तस्माद् यदि मे दर्शनेनामात्यः प्रसादं न करोति, तदा एतदपि पत्रकं वाचयितुं प्रसीदतु इति।)

प्रियंवदकः—(पत्रं गृहीत्वा राक्षसमुपसृत्य) अमच्च! एसो क्खु आहितुण्डिओ विण्णवेदि—'ण केवलं अहं सप्पोवजीवी, पाउअकवी क्खु अहं, ता जइ मे दंसणेण अमच्चो प्पसादं ण करेदि, ता एदं पि तअं वाचेदुं प्पसीददु' त्ति। (अमात्य! एष खलु आहितुण्डिको विज्ञापयति—'न केवलमहं सर्पोपजीवी, प्राकृतकविः खल्वहं, तस्माद् यदि मे दर्शनेनामात्यः प्रसादं न करोति, तदा एतदपि पत्रकं वाचयितुं प्रसीदतु' इति।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(बाईं आँख का फडकना देखकर आप ही आप) अरे आज तो पहले ही साँप का दर्शन हुआ। (प्रकट) प्रियंवदक, मेरी साँप देखने की इच्छा नही हो रही है। इसे कुछ देकर बिदा कर दो।

प्रियंवदक—जैसी आर्य की आज्ञा (घूमकर और सँपेरे के पास जाकर), लो, मंत्री तुम्हारा तमाशा बिना देखे ही तुमसे प्रसन्न हैं।

सँपेरा—महाशय, मेरे कहने से अमात्य से कहो कि मैं केवल सँपेरा ही नही हूँ। मै प्राकृत का कवि भी हूँ। इससे अगर मत्री मुझसे भेंट करने की कृपा न करें तो यह पत्र ही बाँचने की कृपा करें।

प्रियंवदक—(पत्र लेकर राक्षस के पास जाकर) मंत्री जी, सँपेरा कह रहा है कि मै केवल सँपेरा ही नहीं हूँ बल्कि प्राकृत कवि भी हूँ। यदि अमात्य मुझे दर्शन नहीं देना चाहते तो कम से कम इस पत्र को ही पढ़ लें।

(Acting the throbbing of the left eye to himself)—How so, the first thing that I see to-day is snake (Aloud) Priyamvadaka I am not feeling inclined to see snakes, so satisfy him and dismiss

Priyamvadaka—As your Noble Sir commands (Going round and approaching the snake-charmer) Gentleman here the minister favours you (with a gift) without seeing you not with a look (at the snakes)

Snake-Charmer—Gentle Sir, inform the minister that I am not only a snake-charmer, but a Prakrit poet also, so if minister will not have the grace of seeing me, let him read this paper

Priyamvadaka (Taking the letter and going to minister Rakshas)—Noble Sir, this man tells minister thus, "I am not merely a snake-charmer but a Prakrit poet also, so if minister will not favour me by seeing me, let him at least read this piece of paper

टिप्पणी

(१) **वामाक्षिस्पन्दनम्**—बायी आँख का फडकना। स्पन्द्+ल्युट्= स्पन्दन। (२) **प्रथममेव**—पहले ही पहल। इससे यह सूचित होता है कि प्रात-काल का समय था और राक्षस के लिए पहले अपशकुन मिला। (३) **परितोष्य**—कुछ देकर उसे सतुष्ट कर। परि+तुष्+णिच्+ल्यप्। (४) **प्राकृतकवि**—प्राकृत भाषा का कवि। काव्यादर्श के अनुसार सस्कृत से निकली हुई अनेक भाषाओ का नाम सामान्यतया प्राकृत है। प्राकृतेषु कवि प्राकृतकवि (सुप्सुपा स०)। (५) **प्रसादं करोति**—कृपा करते है। अथवा इनाम देते है।

(राक्षसः पत्रं गृहीत्वा वाचयति।)

पाऊण णिरवसेसं कुसुमरसं अत्तणो कुसलदाए।
जं उग्गिरेइ भमरो तं अण्णाणं कुणइ कज्जं ।।११।।
(पीत्वा निरवशेषं कुसुमरसमात्मनः कुशलतया।
यदुद्गिरति भ्रमरस्तदन्येषां करोति कार्यम् ।।)

अन्वय—आत्मन कुशलतया निरवशेष कुसुमरस पीत्वा भ्रमर यद् उद्गिरति तत् अन्येषा कार्य करोति ।।११।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस (पत्र लेकर बाँचता है।) "यद्यपि अपनी चतुरता से कुसुमरस का पान भ्रमर स्वयं किया करता है किन्तु उसके उगले हुए मधु की कुछ ऐसी महिमा है जो अन्य जन का ही कार्य सिद्ध किया करती है। इस श्लोक का गुप्त अर्थ यह भी है—यद्यपि अपनी निपुणता से सारे कुसुमपुर का समाचार जानकर गुप्तचर जो कुछ कहता है वह कथन दूसरे का अर्थ सिद्ध करता है।

Rakshas (Taking up the piece of paper reads)—Whatever the black-bee disgorges after having totally drunk, through his skill, the honey of flowers (कुसुम), (that) serves the purpose of others

संस्कृत व्याख्या—भ्रमर इतस्ततः सर्वत्र च गमनशील दूत आत्मन कुशलतया स्वस्य नैपुण्येन निरवशेष समग्र कुसुमरस पुष्परस कुसुमपुरस्य पाटलिपुत्रस्य वा उदन्तसार पीत्वा हृदयेऽवस्थाप्य निर्धार्य वा यदुद्गिरिति वक्ष्यति तदन्येषा मन्त्रिप्रवराणा केषाञ्चन कार्य करोति साधयति शत्रुविजयादिरूप प्रयोजन सम्पादयिष्यतीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **निरवशेषम्**—पूरी तौर से। नास्ति अवशेषो यत्र तत् निरवशेषम्। यह 'पीत्वा' क्रिया का विशेषण है। (२) **भ्रमर**—भौरा अर्थात भौरे की तरह इधर-उधर विचरण करने वाला गुप्तचर। भ्रम्+करन्=भ्रमर भौरा या मधुमक्खी। भ्रमर इव आचरति इति भ्रमरति। तत पचाद्यचि=भ्रमर भ्रमरसदृशाचरणकर्ता गुप्तचर। (३) **उद्गिरति**—कहता है, उगलता है। (४) **अन्येषाम्**—दूसरो का अर्थात् गुप्तचरो को नियुक्त करने वालो का।

गुप्तचर जो कुछ कहेगा उससे मन्त्रियो का काम पूरा होगा। यहाँ आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है।

राक्षसः—(आत्मगतम्) अये कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञः अहं भवत्प्रणधिश्चेति गाथार्थः। आः कार्यव्यग्रत्वात् मनसः प्रभूतत्वाच्च प्रणिधीनां विस्मृतम्, इदानीं विस्मृतिरुपलब्धा। व्यक्तम् आहितुण्डिकच्छद्मना कुसुमपुरादागतेन विराधगुप्तेनानेन भवितव्यम् (प्रकाशम्) प्रियंवदक। प्रवेशय एनम्। सुकविः एषः। श्रोतव्यमस्मात् सुभाषितम्।

प्रियंवदकः—जं अज्जो आणवेदित्ति (आहिततुण्डिकमुपसृत्य) उबसप्पदु अज्जो (यदार्य आज्ञापयतीति। उपसर्पत्वार्यः।)

आहितुण्डिकः—(नाट्येनोपसृत्यावलोक्य च संस्कृतमाश्रित्य स्वगतम्) अये! अयममात्यराक्षस्तिष्ठति। स एषः—

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(आपही आप) "अरे मैं कुसुमपुर का वृत्तान्त जानने वाला आपका गुप्तचर हूँ" यही इस पद्य का अर्थ है। काम मे मन लगा रहने के कारण तथा गुप्तचरो की अधिकता से भूल गया था, अब याद आया। यह सँपेरे के वेश में कुसुमपुर से आया हुआ विराधगुप्त होगा। (प्रकट) प्रियंवदक, इसे अन्दर आने दो। यह अच्छा कवि है। इससे सुन्दर कविता सुननी चाहिये। प्रियंवदक—जैसी आर्य की आज्ञा हो (सँपेरे के पास जाकर) आर्य चलिये।

सँपेरा—(समीप जाने का अभिनय करके और देखकर, संस्कृत भाषा मे आप ही आप।) अरे, यही अमात्य राक्षस है। वही यह

Rakshas (To himself)—The implied meaning of the verse is, "I am your emissary who knows the news of Kusumpura" Due to being absorved in work and because of largeness of the number of spies, I have forgotten all Now I have remembered This must be Viradhgupta in the guise of a snake-charmer, who must have come from Kusumpura (Aloud) Priyamvadaka, admit him He is a good poet, we must hear some of his good sayings

Priyamvadaka—As your Noble Sir, commands (Approaching the snake-charmer) Let Noble Sir proceed

Snake-charmer—(Acts advancing and observing to himself in Sanskrit) He is Minister Rakshas He who—

संस्कृत व्याख्या—कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञ कुसुमपुरस्य समाचारज्ञाता ग्रहम् भवत्प्रणिधि भवत चर इति गाथार्थं गाथाया पद्यस्य ग्रर्थं भाव । मनस· चित्तस्य 'कार्यव्यग्रत्वात् कार्यसलग्नत्वात् प्रभूतत्वाच्च प्रणिधीनाम् ग्राधिक्यात् चाराणाम् विस्मृतम् इदानीम् ग्रधुना स्मृति स्मरणम् उपलब्धा प्राप्ता । व्यक्तम् स्पष्टम् ग्राहितुण्डिकच्छद्मना व्यालोपजीविरूपेण ग्रनेन विराधगुप्तेन कुसुम-पुरेण ग्रागतेन भवितव्यम् ग्रयम् विराधगुप्तनामा चर कुसुमपुरादागत इत्यर्थ । प्रियवदक, एन प्रवेशय, ग्रय सुकवि , ग्रस्मात् सुभाषितम् सुकविता श्रोतव्यम् ।

टिप्पणी

कुसुमपुरवृत्तान्तज्ञः—पाटलिपुत्र का समाचार जानने वाला । कुसुमपुरस्य वृत्तान्त (षष्ठीतत्०), तम् जानाति इति कुसुमपुरवृत्तान्त-ज्ञा+क 'ग्रातोऽनुपसर्गे क' इत्यनेन ।

वामां बाहुलतां निवेश्य शिथिलं कण्ठे निवृत्तानना
स्कन्धे दक्षिणया बलान्निहितयाप्यङ्के पतन्त्या मुहुः ।
गाढालिङ्गनसङ्गपीडितमुखं यस्योद्यमाशङ्किनी
मौर्यस्योरसि नाधुनाऽपि कुरुते वामेतरं श्रीः स्तनम् ।।१२।।

ग्रन्वय—यस्य उद्यमाशङ्किनी श्री वामा बाहुलता कण्ठे शिथिल निवेश्य निवृत्तानना बलात् स्कन्धे निहितया ग्रपि मुहु ग्रङ्के पतन्त्या दक्षिणया गाढा-लिङ्गनसङ्गपीडितमुख वामेतरम् स्तनम् ग्रधुनापि मौर्यस्य उरसि न कुरुते ।

हिन्दी ग्रनुवाद—जिन (राक्षस) के पराक्रमो से राजलक्ष्मी इतनी भयभीत है कि उसकी बाईं बॉह चन्द्रगुप्त के गले में ढीली-ढाली ही डाली गई है, उसका मुँह चन्द्रगुप्त की तरफ से फिरा ही रहता है । ग्रालिङ्गन करने की इच्छा से दाहिने हाथ को भी उसके कधे पर रखती है, पर वह भी नीचे को गिर जाता है । उसका दक्षिण स्तन ग्रभी भी चन्द्रगुप्त के गाढालिङ्गन ग्रौर उसके ग्रानन्द की ग्राशा नही कर सकता ।

He it is in fear of whose rush, Shri has loosely thrown her left arm round the neck of Chandragupta, she (Shri) is always turning away her face from him (Chandragupta) Though being desirous of embracing him, yet she wants to place her right hand on his shoulders, yet it falls down, even now Shri can not lie close to Maurya's chest to enjoy the happiness of his embrace

सस्कृत व्याख्या—यस्य राक्षसस्य उद्यमाशङ्किनी यस्य सधिविग्रहादि-प्रयत्नत्रस्ता सती श्री लक्ष्मी वामा वाहुलता स्वीया वामभुजवल्ली चन्द्रगुप्तस्य कण्ठे शिथिल यथा स्यात्तथा यथा कथचित् निवेश्य सस्थाप्य अपि निवृत्तानना मुख परावृत्त्य एव तिष्ठन्ती तत्कामिना चन्द्रगुप्तेन च बलात् बलपूर्वकमेव ननु-स्वेच्छया स्वस्य चन्द्रगुप्तस्य दक्षिणे स्कन्धे निहितया स्थापितया अपि मुहु वार-वारम् अङ्के पतन्त्या स्खलितया दक्षिणया भुजलतया उपलक्षिता सती मौर्यस्य चन्द्रगुप्तस्योरसि वक्ष स्थले अधुनापि इदानीमपि वामेतर दक्षिण स्तनम् गाढा-लिङ्गनसङ्गपीडितमुख गाढालिङ्गनस्य दृढपरिष्वङ्गस्य सङ्गेन आसक्त्या पीडित मुखम् कुचाग्रम् यस्य तादृश न कुरुते ।

टिप्पणी

यह श्लोक कुछ अश्लील है । यहाँ पर राजलक्ष्मी को एक अविवाहिता स्त्री के रूप मे कल्पित किया गया है। विवाहिता स्त्री का स्थान पति के वाम भाग मे है। नन्दवश की राज्यश्री पर चन्द्रगुप्त का नीतियुक्त अधिकार नही था प्रत्युत उस पर बलात् अधिकार किया गया था। इसलिए वह पत्नी के उपयुक्त वाम स्थान को छोडकर चन्द्रगुप्त के दक्षिण ओर बैठी थी। नन्दराज्य के उद्धारार्थ राक्षस के प्रयत्नो को देखकर लक्ष्मी यद्यपि चन्द्रगुप्त के कण्ठ को बाई बाहु से वेष्टित करती है पर वह हाथ गिर-गिर पडता है। आलिङ्गन करने की इच्छा से दाहिने हाथ को भी उसके कधो पर रखती है पर वह भी गोद मे गिर पडता है और उसकी बुद्धि राक्षस की नीति से सशकित हो रही है। इससे वह अभी तक चन्द्रगुप्त के वक्ष स्थल पर अपनी छाती रखकर गाढ आलिङ्गन नही करती। **बाहुलताम्**—बाहु लता इव इति बाहुलता (उपमित स०), ताम्। लता का वेष्टनधर्म भुजा मे पाया जाता है, इसलिए भुजा मे लतात्व का आरोप करते है। इस श्लोक मे समासोक्ति अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(प्रकाशम्) जअदु जअदु, अमच्चो ! (जयतु जयत्वमात्यः।)

राक्षसः—(विलोक्य) अये विराध ! (इत्यर्धोक्ते) ननु विरूढश्मश्रुः। प्रियंवदक ! भुजंगैरिदानीं विनोदयितव्यम् । तद्विश्रम्यतामितः परिजनेन। त्वमपि स्वाधिकारमशून्यं कुरु।

प्रियंवदकः—जं अमच्चो आणवेदि त्ति। (यदमात्य आज्ञापयतीति।) (सपरिवारो निष्क्रान्तः।)

राक्षसः—सखे विराधगुप्त! इदमासनमास्यताम्।

विराधगुप्तः—यदाज्ञापयत्यमात्य इति। (नाटयेनोपविष्टः।)

राक्षसः—(सखेदं निर्वर्ण्य) अहो! देवपादपद्मोपजीविनो जनस्येयमवस्था। (इति रोदिति।)

विराधगुप्तः—अमात्य! अलं शोकेन। नातिचिरादमात्योऽस्मान् नूनं पुरातनीमवस्थामारोपयिष्यति।

राक्षसः—सखे विराधगुप्त! वर्णय इदानीं कुसुमपुरवृत्तान्तम्।

विराधगुप्तः—अमात्य! विस्तीर्णः कुसुमपुरवृत्तान्तः। तदाज्ञापय कुतः प्रभृति कथयामि।

राक्षसः—सखे! चन्द्रगुप्तस्य तावत् नगरप्रवेशात्प्रभृति अस्मत्प्रयुक्तैस्तीक्ष्णरसदायिभिः किमनुष्ठितमित्यादितः श्रोतुमिच्छामि।

विराधगुप्तः—एष कथयामि। अस्ति तावत् शकयवनकिरातकाम्बोजपारसीकवाह्लीकप्रभृतिभिश्चाणक्यमतिपरिगृहीतैश्चन्द्रगुप्तपर्वतेश्वरबलैरुदधिभिरिव प्रलयकालचलितसलिलैः समन्तादुपरुद्धं कुसुमपुरम्।

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) अमात्य की जय हो।

राक्षस—(देखकर) अरे विराध (आधा कहकर) तुम्हारी दाढी और मूँछ बढ़ी हुई है। प्रियवदक, इस समय साँपो से मनोविनोद करना है। इसलिए परिचारक गण यहाँ से जाकर विश्राम करें। तुम भी अपना काम करो।

प्रियंवदक—जो अमात्य की आज्ञा। (परिजनो के साथ निकल जाता है)।

राक्षस—मित्र विराधगुप्त। यह आसन है, इस पर बैठो।

विराधगुप्त—जो अमात्य की आज्ञा (अभिनय के साथ बैठ जाता है)।

राक्षस—(खेद के सहित देखकर) हा! महाराज नन्द के आश्रित लोगों की यह अवस्था (रोता है)।

विराधगुप्त—आप दु ख न करें। शीघ्र ही अमात्य हम लोगो को पुरानी अवस्था में कर देंगे।

राक्षस—मित्र विराधगुप्त, कुसुमपुर का वृत्तान्त कहो।

विराधगुप्त—अमात्य, कुसुमपुर का वृत्तान्त बहुत लम्बा चौड़ा है। अतः आज्ञा दीजिए, जहाँ से कहिए वहाँ से कहूँ।

राक्षस—मित्र, चन्द्रगुप्त के नगर में प्रवेश करने के बाद हमारे भेजे हुए विष देने वालो ने क्या किया। यह मैं आदि से सुनना चाहता हूँ।

विराधगुप्त—कहता हूँ। चाणक्य की बुद्धि से संचालित चन्द्रगुप्त और पर्वतेश्वर की शक, यवन, किरात, काम्बोज, पारसीक और बाह्लीक आदि सेनाओं ने प्रलयकाल में लहराते हुए जल वाले समुद्रो की तरह चारो ओर से कुसुमपुर को घेर लिया।

(Aloud) victory to minister

Rakshasa (Seeing)—Ha, Viradh (After uttering half) with beards grown indeed Priyamvadaka, I have to amuse (my-self) with snakes, so let the attendants go from here, you too go and do your duty

Priyamvadaka—As the minister commands (Departs with attendants)

Rakshasa—Friend, Viradhagupta, sit down, here is a seat

Viradhagupta—As the minister says (Acts sitting)

Rakshasa—(Observing sorrowfully)—Alas such is the condition of the dependant of the lotus-feet of sire (Weeps)

Viradhagupta—Minister, enough of sorrow Before long minister will restore us to the old condition

Rakshasa—Friend Viradhagupta, now tell me the news of Kusumpura

Viradhagupta—Minister, the story of Kusumpura is long, so tell me from where I should relate

Rakshasa—Friend, I wish to know from the very beginning what has been done by those who were sent by me to administer poison at the entry of Chandragupta into the city

Viradhagupta—Here I narrate, Kusumpura was besieged on all sides by the forces of Chandragupta and Parvateshwar led by the advice of Chanakya by Sakas, Yavanas, Kiratas, Kambojas, Parasikas, Vahlikas and others as by the seas with the waters overflown at the time of universal destruction

टिप्पणी

(१) **विराध**—विकृतो राधो वेषः आकार इति यावत् यस्य स विराध ।

राक्षस के मुँह से विराधगुप्त का नाम निकल ही रहा था कि उसे स्मरण हो आया कि यहाँ प्रियंवदक तथा अन्य परिजन भी है। वे लोग सब कुछ जान जाएँगे। अतः वाक्य बदलकर 'ननु प्ररूढश्मश्रु' ऐसा कहकर समाप्त किया। (२) **विरूढश्मश्रु**—बढ़ी हुई दाढी मूँछवाला। विरूढानि श्मश्रूणि यस्य स। (३) **स्वाधिकारम्**—कार्य का स्थान, अर्थात् दरवाजा। अधिक्रियते व्यापार्यते अस्मिन् इति। अधि+कृ+घञ्। (४) **निर्वर्ण्य**—देखकर, निरूप्य। निर्+वर्ण्+णिच्+ल्यप्। (५) **सपरिवार**—नौकरों के सहित। (६) **देवपादपद्मोपजीविन**—महाराज नन्द के आश्रित। देवस्य पादपद्मम् उपजीवतीति। उप+जीव्+णिनि। (७) **चाणक्यमतिपरिगृहीतै**—चाणक्य की नीति के अनुसार चलने वाले। (८) **प्रलयकालचलितसलिलैः**—प्रलयकाल मे चचल (लहराता) हुआ है जल जिनका, प्रलयकाल मे लहराते हुए जलवाले, यह "उदधिभि" का विशेषण है। प्रलयस्य काल प्रलयकाल प्रलयकाले चलितम् सलिल येषा ते तै। (९) **समन्तात् उपरुद्धम्**—चारो तरफ से घेर लिया गया है। उप+रुध्+क्त।

राक्षसः—(शस्त्रमाकृष्य ससम्भ्रमम्) मयि स्थिते कः कुसुमपुरमुपरोत्स्यति ? प्रवीरक ! प्रवीरक ! क्षिप्रमिदानीम्।

प्राकारं परितः शरासनधरैः क्षिप्रं परिक्रम्यतां
द्वारेषु द्विरदैः प्रतिद्विपघटाभेदक्षमैः स्थीयताम्।
त्यक्त्वा मृत्युभयं प्रहर्तुमनसः शत्रोर्बले दुर्बले
ते निर्यान्तु मया सहैकमनसो येषामभीष्टं यशः ॥१३॥

अन्वय—शरासनधरैः प्राकार परितः क्षिप्र परिक्रम्यताम्। प्रतिद्विपघटाभेदक्षमैः द्विरदैः द्वारेषु स्थीयताम्। येषा यशः अभीष्टम् ते मृत्युभय त्यक्त्वा दुर्बले शत्रोर्बले एकमनसः प्रहर्तुमनसः (सन्त) मया सह निर्यान्तु ॥१३॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस (शस्त्र खीचकर हडबडी के साथ) मेरे रहते हुए कौन कुसुमपुर को घेरेगा। प्रवीरक, प्रवीरक, शीघ्र ही इस समय बुर्जो तथा दीवारो पर धनुर्धारी सेना शीघ्र चलकर चक्कर लगावे, शत्रु के हाथियो को तितर-बितर करने मे समर्थ मस्त हाथियो को फाटको पर खडा कर दो, यश को चाहने वाले, मृत्यु का ख्याल न करने वाले, दुर्बल शत्रु सेना पर एक मन से आक्रमण करने वाले (वीर) मेरे साथ (शत्रु से लडने के लिए) बाहर निकले।

Rakshasa (Drawing his sword in haste)—Who will besiege Kusumpura, while I am alive Praviraka, Praviraka, now quickly let archers patrol round the wall, let big elephants, worthy of destroying the enemy elephants, be placed at the gates, let those warriors, who love fame and are not afraid of death, go out with me with a view to strike with one mind, at the weak forces of the foe

संस्कृत व्याख्या—शरासनधरै धनुर्धरै प्राकार परित प्राचीरस्य समन्तात् क्षिप्र शीघ्रम् परिक्रम्यताम् परिभ्रम्यताम्। द्वारेषु कुसुमपुरस्येति शेष प्रतिद्विपघटाभेदक्षमै प्रतिद्विपघटानाम् शत्रुहस्तिसेनाना भेदे विघाते संहारे वा क्षमै समर्थै द्विरदै गजै स्थीयताम् द्वारसरक्षणाय सनह्यताम्, येषा वीराणा यश कीर्ति अभीष्टम् प्रिय ते मृत्युभय त्यक्त्वा दुर्बले प्रहर्तुमनस परित्यक्तस्वदेहभङ्गभया शत्रुबल च तृणाय मत्वा एकमनस एकचित्ता भूत्वा विरतान्यभावा शत्रुनाशैकपरायणा ते मया सह निर्यान्तु युद्धाय चलन्तु।

टिप्पणी

(१) **प्राकारम**—दीवाल। नगर की सुरक्षा के लिए प्राचीन काल मे उसके चारो तरफ दीवाल बनी रहती थी। प्राकार मे द्वितीया "परित" के योग से हुई है। "अभित परित समया निकषा हा प्रतियोगेऽपि"। (२) **प्रतिद्विपघटाभेदक्षमै**—शत्रुओ की गजघटा को भेदन करने मे समर्थ। प्रतिपक्षिणा द्विपाना घटया भेदने क्षमा तै। (३) **दुर्बले बले**—दुर्बल सेना। दु स्थितानि बलानि अस्य इति दुर्बलम्, तस्मिन्। अपने सैनिको का मनोबल बढाने के लिए शत्रुसेना को दुर्बल कहना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से आवश्यक है। वस्तुत शत्रुसेना दुर्बल नही अतिप्रबल थी। (४) **प्रहर्तुमनस**—प्रहार करने की इच्छा रखने वाले। प्रहर्तु मन एषाम् इति प्रहर्तुमनस। (५) **एकमनस**—एकचित्त होकर। अर्थात् एक साथ। (६) **येषाम् यश. अभीष्टम्**—जिनको यश प्यारा है। यहाँ स्वभावोक्ति तथा काव्यलिग अलकारो की ससृष्टि है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विराधगुप्तः—अमात्य! अलमावेगेन। वृत्तमिदं वर्ण्यते।

राक्षसः—(निःश्वस्य) कष्टं वृत्तमिदम्। मया पुनर्ज्ञातं स एव कालो वर्तत इति। (शस्त्रमुत्सृज्य सास्रम्) हा

देवनन्द ! स्मरामि ते राक्षसम्प्रति प्रसादातिशयम् । यस्तु एवंविधकाले—

यत्रैषा मेघनीला चरति गजघटा राक्षसस्तत्र याया-
देतत् पारिप्लवाम्भःप्लुति तुरगबलं वार्यतां राक्षसेन ।
पत्तीनां राक्षसोऽन्तं नयतु बलमिति प्रेषयन्मह्यमाज्ञा-
मज्ञासीःस्नेहयोगात् स्थितमिव नगरे राक्षसानां सहस्रम् ।।१४।।

अन्वय—यत्र एषा मेघनीला गजघटा चरति तत्र राक्षस यायात्, पारिप्लवाम्भ प्लुति एनत् तुरगबल राक्षसेन वार्यताम्, पत्तीना बल राक्षस अन्तं नयतु इति मह्यम् आज्ञा प्रेषयन् स्नेह-योगात् नगरे राक्षसाना सहस्रम् इव स्थितम् अज्ञासी ।।१४।।

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—अमात्य ! आवेग में न आइये । यह तो मै वृत्तान्त का वर्णन कर रहा हूँ ।

राक्षस—(लम्बी साँस लेकर) यह समाचार कष्टदायक है । मुझे तो मालूम पड़ा कि वही समय है (हथियार छोड़कर आँसू के साथ) हाय, देवनन्द ! राक्षस के प्रति आपकी अत्यन्त कृपा मुझे याद है जो ऐसे समय में (आप ऐसा कहते) जहाँ पर यह ऐसी बादल की सी नीली गजघटा (हाथियो का दल) घूम रही है वहाँ पर राक्षस (उसे नाश करने के लिए जावे); जहाँ पर शत्रुओं की अश्वसेना समुद्र की लहरो की भाँति लहरा रही हो उसे राक्षस रोके; जहाँ कही भी शत्रुओ की पैदल सेना सन्नद्ध खडी हो राक्षस उसे मार भगावे । इस प्रकार मुझे आज्ञा देते हुए प्रेम के कारण राक्षस को एक रूप मे नही बल्कि अनेक रूपो में मानते थे ।

Viradhagupta—Minister do not be agitated, it is the past which is being described

Rakshasa—(Sighing)—This story is very unpleasant I knew that this was the very time (laying down the weapon) Alas ! sire Nanda, Rakshasa remembers the favours you showed to him At the time of fighting you sent out orders to me such as "Rakshasa should hurriedly march where this host of elephants blue like cloud is marching Let Rakshasa check this cavalry which is bounding like rushing water Let Rakshasa destroy this infantry" You, on account of affection, thought as if a thousand of Rakshasa were present in the city Then what

संस्कृत व्याख्या—अत्र सग्रामकाले अस्मिन् युद्धसमये त्व यत्र एषा पुरो दृश्यमाना मेघनीला जलदश्यामला गजघटा हस्तिसमूह चरति धावति तत्र राक्षस-

यायात् गच्छेत् नान्य एतायै समर्थ पारिप्लवाम्भ प्लुति पारिप्लव चञ्चल यत् अम्भ जल तस्य प्लुति उत्प्लवनमिव प्लुति यस्य तादृशम् एतत् दृश्यमानम् तुरगबलम् अश्वसेना राक्षसेन वार्यताम् रुध्यताम् पत्तीना पदातीना बलम् साग्रामिक पराक्रम राक्षस एवान्न नयतु नाशयतु इत्येव रीत्या मह्यम् आज्ञा प्रेषयन् मामेव तत्र तत्र सर्वत्र नियोजयन् स्नेहयोगात् प्रीतिवशात् इह नगरे पाटलिपुत्रे स्थितम् विराजमानम् राक्षसानाम् सहस्रम अज्ञासी सर्वविधकार्यसम्पादक मामेव अमस्था इत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **आवेगेन**—क्रोधेन। (२) **पारिप्लवाम्भ प्लुति**—चञ्चल जल के समान उछल-कूद करने वाली। (घुडसवारो की सेना) यह तुरगबल का विशेषण है। (३) **पत्तीनाम्**—पैदल सेना का। पद्यन्ते इति पद+क्तिच् वा औणादिक क्ति कर्तरि=पत्तय, तेषाम्। 'पदातिपत्तिपदगपादातिकपदाजय' इत्यमर। (४) **अज्ञासी**—मानते थे, समझते थे। राक्षस को कई काम राजा नन्द करने को कह डालते थे, यह उनकी कृपा थी। मानो एक नही हजारो राक्षस वर्तमान है। एक व्यक्ति एक ही काम कर सकता है पर नन्द राक्षस को सभी कार्य करने के लिए कह डालते थे मानो कई राक्षस है। इसमे लुप्तोपमा तथा वाच्योत्प्रेक्षा अलकार है और स्रग्धरा छन्द है।

विराधगुप्तः—ततः समन्तादुपरुद्धं पुष्पपुरमवलोक्य, बहुदिवसप्रभृति महदुपरोधवशसमुपरि पौराणां परिवर्तमानमसहमाने, तस्यामप्यवस्थायां पौरजनापेक्षया सुरङ्गामेत्यापक्रान्ते तपोवनाय देवे सर्वार्थसिद्धौ, स्वामिविरहात् सुशिथिलीकृतप्रयत्नेषु युष्मद्बलेषु, जयघोषणाव्याघातादिसाहसानुमितान्तर्नगरवासिषु, पुनरपि नन्दराज्यप्रत्यानयनाय सुरङ्गया बहिरपगतेषु युष्मासु, चन्द्रगुप्तनिधनाय युष्मत्प्रयुक्तया विषकन्यया घातिते तपस्विनि पर्वतेश्वरे—



हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—पाटलिपुत्र के चारो ओर घिर जाने पर महाराज सर्वार्थसिद्धि के बहुत दिनों तक चलने वाले इस घेरे से अपनी प्रजाओ पर पडने वाली दारुण विपत्ति को न सह सकने पर इसी अवस्था मे पौरजनों का ख्याल करके उनके सुरंग के रास्ते से तपोवन मे भाग जाने पर और स्वामी

के विरह से आप की सेना के शिथिल हो जाने पर नागरिको द्वारा चन्द्रगुप्त की विजय घोषणा में की गई विघ्नबाधाओं से उनके मन का भाव मालूम हो जाने पर और फिर भी नन्द राज्य को वापिस लाने के लिए (पुनः स्थापित करने के वास्ते) सुरङ्ग के द्वारा आप लोगो के बाहर चले आने पर चन्द्रगुप्त के मारने के वास्ते आपकी भेजी हुई विषकन्या के द्वारा तपस्वी पर्वतेश्वर के मारे जाने पर।

Viradhagupta—When Pataliputra was beseiged on all sides, sire Sarvarthsiddhi, being unable to bear the hardships of the people, that was due to the long continuance of the seige, left for the hermitage by reaching a tunnel in the same condition, out of regard for the citizens, and your forces greatly relaxed their effoits due to the absence of their mastei, when you, having guessed the minds of the residents in the city from such darings as obstruction to the proclamation of (Chandragupta's victory) went out by means of the tunnel, to re-establish the kingdom of Nanda, and when poor Parvateshwar was killed by the poison-girl employed by you for the destruction of Chandragupta—

संस्कृत व्याख्या—तत तदनन्तरम् समन्तात् चतुर्दिक्षु उपरुद्धम् आक्रान्तम् कुसुमपुरमवलोक्य दृष्ट्वा बहुदिवसप्रभृति अनेकदिवसान् यावत् पौराणाम् नगर-निवासिनाम् उपरि महत् अधिक परिवर्तमानम् उपरोधवैशसम् आक्रमणकष्टम् असहमाने अमृष्यमाणे तस्यामप्यवस्थायाम् दु खपूर्णायामवस्थाया पौरजनापेक्षया पौरजनेषु या अपेक्षा आदर तया सुरङ्गम् एत्य प्राप्य तपोवनाय देवे सर्वार्थसिद्धौ अपक्रान्ते गते स्वामिविरहात् प्रभुविरहात् सुशिथिलीकृतप्रयत्नेषु मन्दीकृत-उद्योगेषु भवत्सैन्येषु जयघोषणाव्याघातादिसाहसानुमितान्तर्नगरवासिषु जयस्य घोषणा तस्या व्याघात अकरणम् स आदिर्येषा तै साहसै साहसयुक्तकार्यैं अनुमितेषु नन्दानुरक्ता एते इति ज्ञाने जाते अन्तर्नगरवासिषु नगरनिवासिषु पुनरपि भूय अपि नन्दराज्यप्रत्यानयनाय नन्दराज्य पुन स्थापयितु सुरङ्गया बहिरपगतेषु भवत्सु युष्मासु चन्द्रगुप्तनिधनाय चन्द्रगुप्तवधाय युष्मत्प्रयुक्तया भवत्प्रेषितया विषकन्यया तपस्विनि पर्वतेश्वरे घातिते नाशिते सति।

टिप्पणी

(१) **उपरुद्धम्**—घिरा हुआ। उप+रुध्+क्त। (२) **बहुदिवसप्रवृत्तम्**—बहुत दिनो से चलता हुआ। यह उपरोधवैशसम् का विशेषण है। (३) **उपरोध-वैशसम्**—उपरोध (घेरे) का दु ख, नगर के घेरे जाने से होने वाला कष्ट। उपरोधस्य वैशसम् इति उपरोधवैशसम्। उप+रुध्+घञ् भावे=उपरोध।

विशम+अण्=वैशमम् । (४) **पौरजनापेक्षया**—पुरवासियों का ख्याल करके, पुरवासियों के दुःख का विचार करके । पौरजनस्य अपेक्षया । हेतौ तृतीया है । (५) **सर्वार्थसिद्धौ**—सर्वार्थसिद्धि नन्द का अतिनिकट का जातीय था । वह उस समय वृद्ध हो चला था । नन्द की मृत्यु होने पर राक्षस ने उसे ही राजा बनाकर शत्रु सेना का प्रतिरोध करना शुरू कर दिया था । (६) **अपक्रान्ते**—चले जाने पर । (७) **जयघोषणाव्याघातादिसाहसानुमितेषु**—जयध्वनि मे व्याघात (रुकावट आदि) साहस के कामो से अनुमान कर लिए जाने पर । नगरवासियो के मन की परिस्थिति का पता जयघोष मे विघ्न डालने से ही चल गया ।

राक्षसः—सखे ! पश्याश्चर्यम्—

कर्णेनेव विषाङ्गनैकपुरुषव्यापादिनी रक्षिता
हन्तुं शक्तिरिवार्जुनं बलवती या चन्द्रगुप्तं मया ।
सा विष्णोरिव विष्णुगुप्तहतकस्यात्यन्तिकश्रेयसे
हैडिम्बेयमिवेत्य पर्वतनृपं तद्वध्यमेवावधीत् ।।१५।।

अन्वय—कर्णेन इव मया अर्जुनम् इव चन्द्रगुप्तम् हन्तुम् बलवती एक-पुरुषव्यापादिनी शक्ति (इव) या विषाङ्गना रक्षिता, सा विष्णो इव विष्णु-गुप्तहतकस्य आत्यन्तिकश्रेयसे तद्वध्यम् हैडिम्बेयमिव पर्वतनृपम् एव एत्य अवधीत् ।।१५।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—मित्र, देखो कैसे आश्चर्य की बात है—चन्द्रगुप्त को मारने के लिए मैंने विषकन्या को उसी प्रकार सुरक्षित रखा था जिस प्रकार अर्जुन को मारने के लिए कर्ण ने अमोघशक्ति को जो एक ही पुरुष को मार सकती थी सुरक्षित रख छोडा था । परन्तु वह शक्ति अर्जुन को न मारकर विष्णु (कृष्ण) के वध्य हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच को मारने में प्रयुक्त की गई। उसी प्रकार वह विषकन्या चन्द्रगुप्त को न मारकर विष्णुगुप्त चाणक्य के वध्य (पर्वतेश्वर) को मारने में प्रयुक्त हुई।

Rakshasa—See, what a wonder The poison-girl, which could kill a single individual was reserved to kill Chandragupta, like the Javelin by Karna to kill Arjuna, but for the lasting benefit of the wicked Vishnugupta, it was used in killing Parvatak as the Javelin (of Karna) was used in killing Hidimba's son that was but his (Vishnu's or Krishna's) victim

संस्कृत व्याख्या—मया कर्णेनेव चन्द्रगुप्तमर्जुनमिव हन्तु व्यापादयितु या बलवती समर्था चैकपुरुषव्यापादिनी प्रधानतमपुरुषविनाशयित्री विषाङ्गना विष-

कन्या शक्तिरिव इन्द्रप्रदत्तहेतिरिव रक्षिता महता मनोरथेन निपुण निगूढं स्थापिता सा खलु विष्णुगुप्तहनकस्य दुष्टचाणक्यस्य विष्णोरिवात्यन्तिकश्रेयसे महते कल्याणाय चाणक्यपक्षे परिपणितराज्यार्धप्रदानाय कृष्णपक्षे च अर्जुनरक्षणाय तद्वध्य चाणक्यघात्यमेव पर्वतनृप पर्वतक हैडिम्बेयमिव घटोत्कचमिवैत्य प्राप्य अवधीत् विनाशितवतीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **एकपुरुषव्यापादिनी**—एक (प्रधान) पुरुष को मारने वाली। एकः पुरुष एकपुरुष (कर्मधा०) तम् व्यापादयति इति एकपुरुषव्यापादिनी । एक-पुरुष—वि+आ+पद्+णिच+णिनि कर्तरि साधु कारिणि आवश्यके वा। यह विषाङ्गना तथा शक्ति का विशेषण है। (२) **विष्णुगुप्तहतकस्य**—पापी विष्णुगुप्त चाणक्य का। हत एव हतक स्वार्थे कन्। विष्णुगुप्तश्चासौ हतकश्च। 'कुत्सितानि कुत्सनै' इति समास । तस्य विष्णुगुप्तहतकस्य। (३) **आत्यन्तिक**—परम अथवा नित्य। (४) **हैडिम्बेयम्**—हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच को। हिडिम्बाया अपत्य पुमान् इति हिडिम्बा+ढक्। हिडिम्बा भीमसेन की स्त्री थी। उसका पुत्र घटोत्कच था। (५) **तद्वध्यम्**—उसका वध्य, पर्वतक चाणक्य का वध्य था और घटोत्कच कृष्ण का। तेन वध्य अथवा तस्य वध्य पर्वतक को आधा राज्य देने का प्रलोभन देकर चाणक्य ने बुलाया था वह उसे आधा राज्य कभी न देता, बल्कि किसी प्रकार वह उससे छुटकारा पाना चाहता था। अतः विषकन्या का प्रयोग उसने उसी पर करवाया। इसी से पर्वतेश्वर चाणक्य का वध्य था। घटोत्कच राक्षस होने के नाते कृष्ण का वध्य था। इन्द्र ने कर्ण को एक अमोघ शक्ति दी थी। उसमे यह गुण था कि वह जिसके ऊपर चलाई जाती अवश्य वध कर देती कर्ण ने उसे अर्जुन के मारने के वास्ते सुरक्षित रखा था। पर कृष्ण को यह बात मालूम हो गई। उन्होंने घटोत्कच को भेज कर कौरव सेना मे इतना उपद्रव मचाया कि लाचार होकर कर्ण ने वह शक्ति घटोत्कच पर प्रहार किया जिससे घटोत्कच मारा गया और अर्जुन बच गया। उसी प्रकार विषकन्या तो चन्द्रगुप्त के नाश के लिए भेजी गई थी, पर चाणक्य की चातुरी से वह पर्वतेश्वर पर प्रयुक्त की गई जिससे पर्वतेश्वर की हत्या हुई और चाणक्य का परम कल्याण हो गया। क्योंकि उसे पर्वतेश्वर को आधा राज्य नही देना पडा। इस श्लोक मे विषमालकार एव उपमालकार है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विराधगुप्तः—अमात्य ! दैवस्यात्र कामचारः, किमत्र क्रियते ?

राक्षसः—ततस्ततः ?

विराधगुप्तः—ततः पितृवधपरित्रासादपक्रान्ते कुसुमपुरात् कुमारे मलयकेतौ, विश्वासिते च पर्वतकभ्रातरि वैरोचके, प्रकाशिते च चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशे, चाणक्यहतकेनाहूयाभिहिताः कुसुमपुरनिवासिनः सर्वे एव सूत्रधाराः यथा—'सांवत्सरिकवचनादद्यैवार्धरात्रसमये एवाभिमतः चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशो भविष्यतीति, ततः प्रथमद्वारात्प्रभृति संस्क्रियतां राजभवनम्' इति । ततः सूत्रधारैरभिहितम्—'आर्य ! प्रथममेव देवस्य चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशमुपलभ्य सूत्रधारेण दारुवर्मणा कनकतोरणन्यासादिभिः संस्कारविशेषैः संस्कृतं प्रथमराजद्वारम् । इदानीमस्माभिरभ्यन्तरे संस्कारो विधेयः' इति । ततश्चाणक्यवटुना, अनादिष्टेनैव दारुवर्मणा संस्कृतं राजभवनद्वारमिति परितुष्टेनेव, दारुवर्मणः सुचिरं दाक्ष्यमभिनन्द्याभिहितम्—'अचिरादस्य दाक्ष्यस्यानुरूपं फलमधिगमिष्यसि दारुवर्मन् !'

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—अमात्य, यह तो भाग्य की विडम्बना है इसमें किया ही क्या जाय।

राक्षस—तब

विराधगुप्त—तब पिता के वध से भयभीत होकर मलयकेतु के कुसुमपुर से भाग जाने पर, पवतेश्वर के भाई वैरोचक को किसी प्रकार शान्त कर दिए जाने पर, सम्राट् नन्द के प्रासाद में चन्द्रगुप्त के प्रवेश की सूचना दे दिए जाने पर दुष्ट चाणक्य ने सभी कुसुमपुर-निवासी कारीगरों को बुलाकर कहा कि ज्योतिषियो के कथनानुसार आज ही आधी रात को चन्द्रगुप्त का नन्दभवन मे प्रवेश करना इष्ट होगा। अत प्रथम द्वार से लेकर राजभवन को सुसज्जित कर दो। तब कारीगरो ने कहा कि आर्य पहले ही से महाराज चन्द्रगुप्त का नन्दभवन में प्रवेश सुनकर कारीगर दारुवर्मा ने सोने का तोरण आदि स्थापित कर अनेक विशेष सजावटो से राजप्रासाद की पहला दरवाजा सुसज्जित कर दिया है। इस समय भवन का भीतरी भाग सजाना बाकी रह गया है। तदनन्तर बिना कहे

ही दारुवर्मा ने राजभवन के द्वार को सजा दिया। इससे मानो सन्तुष्ट होकर दुष्ट चाणक्य ने बहुत देर तक दारुवर्मा के कौशल की प्रशंसा करते हुए कहा "दारुवर्मा शीघ्र ही इस कौशल के योग्य फल को प्राप्त करोगे"।

Next, Prince Malayaketu having sceded through fright from the murder of his father, Vairochaka the brother of Parvataka, having been lured into confidence, and Chandragupta's intended entry into the palace of Nanda having been made known, all carpenters living at Kusumpura were summoned by cursed Chanakya and informed thus—"As under instruction from the astrologers Chandragupta's entry into the palace of Nanda comes off at mid night so let the palace be decorated commencing with the eastern gate" It was then remarked by the carpenters—"Noble Sir, the first gate of the palace is already decorated by the carpenter Daruvarman by placing golden gateways and the like he having previously known of Sire Chandragupta's entry into the palace of Nanda Decorations have now to be put up by us in the interior." Then the wicked Chanakya, as if pleased that the palace gate had been decorated by the Carpenter Daruvarman even before ordered, long belauding the skill of Daruvarman, said this, "Daruvarman, you will ere long get the reward suiting this keenness"

संस्कृत व्याख्या—तत तदनन्तरम् पितृवधत्रासात् जनकवधभयात् अपक्रान्ते पलायमाने कुसुमपुरात् पाटलिपुत्रात् कुमारे मलयकेतौ विश्वासिते आश्वासिते च पर्वतकभ्रातरि पर्वतकसोदरे वैरोचके, प्रकाशिते प्रख्यापिते च चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य नन्दभवनप्रवेशे नन्दभूपगृहसन्निवेशे, चाणक्यहतकेन आहूय आकार्य अभिहिता कथिता कुसुमपुरनिवासिन पाटलिपुत्रवास्तव्या सर्वे समे एव सूत्रधारा शिल्पिन, सावत्सरिकवचनात् दैवज्ञवाक्यात् अद्यैव अस्मिन्नेव अर्धरात्रसमये निशार्धसमये एव अभिमत अभीष्ट चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य नन्दभवनप्रवेश नन्दगृहसन्निवेश भविष्यति । तत तदनन्तरम् प्रथमद्वारात् प्रभृति पूर्वद्वारमारभ्य राजभवनम् राजप्रासाद सस्क्रियताम् सस्कारयुक्त विधीयताम् । तत तत्पश्चात् सूत्रधारै शिल्पिभि अभिहितम् कथितम्, आर्य पूज्य, प्रथमम् एव प्रागेव देवस्य महाराजस्य चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य नन्दभवनप्रवेशम् नन्दभूपगृहसन्निवेशनम् उपलभ्य ज्ञात्वा सूत्रधारेण शिल्पिना दारुवर्मणा तदाख्येन कनकतोरणन्यासादिभि कनकस्य सुवर्णस्य तोरण बहिर्द्वार तस्य न्यास सन्निवेश स आदि येषा तै सस्कारविशेषै वृषलोपरि बहिर्द्वारपातनोद्योगात्मकैरित्यर्थ, प्रथमराजद्वारम् पूर्वनृपद्वारम्

सम्कृत सस्कारास्पद कृतम्। इदानीम् अधुना अस्माभि शिल्पिभि अभ्यन्तरे अन्तराले सस्कारो परिष्कार विधेय कर्त्तव्य। तत तदनन्तरम् अनादिष्टेनैव आदेशम् अप्राप्तवता एव दारुवर्मणा सस्कृतम् सुसज्जीकृतम् राजभवनद्वारम् भूपगृहवहिर्द्वारम् इति अस्मान् हेतो परितुष्टेन सन्तुष्टेन इव चाणक्यवटुना विष्णुगुप्तेन सुचिर बहुकाल दारुवर्मण दाक्ष्य निपुणताम् अभिनन्द्य प्रशस्य अभिहितम् कथितम् "अचिरात् शीघ्रम् अस्य दाक्ष्यस्य अनुरूप सदृश फलम् अधिगमिष्यसि प्राप्स्यसि हे दारुवर्मन्"।

टिप्पणी

(१) **सावत्सरिक**—ज्योतिषी। सवत्सर कथयन्ति बोधयन्ति वा इति सवत्सर+ठञ् शेषे 'कालात् ठञ्' इति सूत्रेण, तस्य इकादेश। सावत्सरिक ज्योतिषी के लिए साधारण सज्ञा है। 'सावत्सर' पारिभाषिक शब्द है। इस प्रकार "सावत्सरो ज्योतिषिको दैवज्ञगणकावपि। स्यु मौहूर्तिक मौहूर्तज्ञानिकार्त्तान्तिका अपि" इत्यमर। (२) **अर्द्धरात्रसमये**—अर्द्ध रात्रे इति अर्द्धरात्रि+अच् समासान्त अर्द्धरात्र अर्द्धरात्रि। स एव समय इत्यादि अच् का नियम 'अह सर्वैकदेशसख्यातपुण्याच्च रात्रे"। "रात्राह्नाहा पुसि" इत्यनेन पुस्त्वम्। कालाधिकरणे सप्तमी। (३) **प्रथमद्वारात्**—अत्र प्रभृतिअर्थयोगे पञ्चमी। (४) **सस्कारविशेषै**—विशेष प्रकार की सजावटो से। इसका गूढार्थ है—चन्द्रगुप्त के ऊपर तोरण गिराने के प्रयत्नो से। (५) **अभ्यन्तरे संस्कारः**—भीतर मे सजावट। इसका गूढार्थ है—चन्द्रगुप्त को विष देना तथा शयन-कक्ष मे वध करना। विधेय—वि+धा+यत् कर्मणि। (६) **चाणक्यवटुना**—अल्पमति या क्षुद्रबुद्धि चाणक्य के द्वारा। चाणक्यश्चासौ वटुश्च इति चाणक्यवटु तेन। (७) **अनुरूप फलम्**—उचित फल। इसका गूढार्थ है कि 'जैसी करनी वैसी भरनी, अर्थात् बुरे काम का बुरा परिणाम—मृत्यु—मिलेगी।

राक्षसः—(सोद्वेगम्) सखे! कुतश्चाणक्यवटोः परितोषः? अफलमनिष्टफलं वा दारुवर्मणः प्रयत्नमवगच्छामि। यदनेन बुद्धिमोहादथवा राजभक्तिप्रकर्षान्नियोगकालमप्रतीक्षमाणेन जनितश्चाणक्यवटोश्चेतसि बलवान् विकल्पः। ततस्ततः?

विराधगुप्तः—ततश्चाणक्यहतकेनानुकूललग्नवशादद्यार्ध-

रात्रसमये चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशो भविष्यतीति शिल्पिनः पौरांश्च गृहीतार्थान् कृत्वा तस्मिन्नेव क्षणे पर्वतेश्वरभ्रातरं वैरोचकमेकासने चन्द्रगुप्तेन सहोपवेश्य कृतः पृथ्वीराज्यार्ध-भागः ।

राक्षसः—किं वातिसृष्टं पर्वतेश्वरभ्रात्रे वैरोचकाय पूर्व-प्रतिश्रुतं राज्यम् ?

विराधगुप्तः—अथ किम् ?

राक्षसः—(स्वगतम्) नियतमतिधूर्तवटुना तस्यापि तपस्विनः कमप्युपांशुवधमाकलय्य पर्वतेश्वरविनाशजनि-तस्यायशसः परिहारार्थमेषा लोकप्रतिपत्तिरुपचरिता । (प्रकाशम्) ततस्ततः ?

हिन्दी अनुवाद—राक्षस (उद्विग्नता के साथ) मित्र। मंदमति चाणक्य को सन्तोष कहाँ ? मै तो दारुवर्मा के प्रयत्न को व्यर्थ या अनर्थकारी समझता हूँ। जो कि इसने मतिभ्रम के कारण अथवा राजभक्ति की अधिकतावश आदेश के समय की प्रतीक्षा किए बिना दुष्ट चाणक्य के मन में बड़ा सन्देह उत्पन्न कर दिया। इसके अनन्तर।

विराधगुप्त—तब दुष्ट चाणक्य ने शुभ लग्न के कारण आज आधी रात के समय चन्द्रगुप्त का नन्दभवन में प्रवेश होगा—इस बात से कारीगरो और नागरिको को अवगत कराकर उसी समय पर्वतेश्वर के भाई वैरोचक को चन्द्रगुप्त के साथ एक आसन पर बैठाकर पृथ्वी रूपी राज्य का आधा भाग लगा दिया।

राक्षस—क्या उसने पहले का प्रतिज्ञा किया हुआ राज्य पर्वतेश्वर के भाई वैरोचक को दे दिया ?

विराधगुप्त—और क्या ?

राक्षस—(अपने मन में) निश्चय ही उस अत्यन्त दुष्ट (चाणक्य) ने उस बेचारे की भी कोई रहस्यमय हत्या सोचकर पर्वतेश्वर के विनाश से उत्पन्न अपयश को मिटाने के लिए जनता में इस प्रकार की धारणा उत्पन्न कर दी है। (प्रकट) तब इसके अनन्तर क्या हुआ ?

Rakshasa (With anxiety)—Friend, whence could satisfaction come to the wicked Chanakya Methinks Daruvarman's efforts were fruitless or bore bitter (Lit unwelcome) fruits as through delusion or excess of loyalty Strong suspicion had been raised by him in the mind of the wicked Chanakya by not waiting the time for the appointment Next, What next ?

Viradhagupta—Now, by accursed Chanakya, who made the artisans and citizens understand that in subservience to the auspicious moment Chandragupta's entry into the palace of Nanda will come off at the time of mid-night, that very moment (mid-night) a division of the world-empire was made by making Parvataka's brother Vairochaka sit on the same seat with Chandragupta

Rakshasa—Did he really relinquish unto Parvataka's brother Vairochaka the previously promised half share of the kingdom ?

Viradhagupta—What else (Yes)

Rakshasa (To himself)—Surely after having planned some sort of secret murder of that poor fellow too this publicity in the world has been secured by that very wily wicked Chanakya to wipe out the infamy caused by the murder of Parvataka (Aloud) Next, What next

संस्कृत व्याख्या—राक्षस (सोद्वेगम्—उद्वेगेन उत्कण्ठया सहित यथा स्यात् तथा आहेति शेष) सखे मित्र चाणक्यवटो अल्पमतिचाणक्यस्य परितोष सन्तोष कुत कस्मात् ? दारुवर्मण प्रयत्नम् प्रयासम् असफलम् निष्फलम्, वा अथवा अनिष्टफलम् अशुभफलम्, अवगच्छामि जानामि। यत् यस्मात् बुद्धिमोहात् मतिभ्रमात् अथवा राजभक्तिप्रकर्षात् राज्ञि सर्वार्थसिद्धौ भक्त्याधिक्यप्रदर्शनात् नियोगकालम् आदेशसमयम् अप्रतीक्षमाणेन असहिष्णुना अनेन दारुवर्मणा चाणक्यवटो चेतसि मनसि बलवान् प्रबल विकल्प सन्देह जनित उत्पादित । तत तत तत्पश्चात् किम् अभवत्। तत तदनन्तरम्, चाणक्यहतकेन अनुकूल-लग्नवशात् शुभमुहूर्तकारणात् अद्य अर्द्धरात्रसमये चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य नन्दभवन-प्रवेश नन्दगृहानुप्रवेश भविष्यति, इति शिल्पिन , पौराश्च, गृहीतार्थान् अवगताभिप्रायान् कृत्वा विधाय तस्मिन्नेव क्षणे नन्दभवनप्रवेशसमय एवेत्यर्थ पर्वतेश्वरभ्रातर पर्वतकसोदर, वैरोचकम् एतदाख्यम् एकासने एकोपवेशने, चन्द्र-गुप्तेन सह साकम् उपवेश्य संस्थाप्य पृथ्वीराज्यार्धभाग पृथ्वी वसुधा एव राज्य तस्य अर्धभाग कृत विहित । कि वैरोचकाय, पूर्वप्रतिश्रुत प्राक्प्रतिज्ञातम् राज्यम अतिसृष्टम् दत्तम्। अथ किम अवश्यम्। (स्वगतम् स्वमनसि) नियतम् निश्चयम् अतिधूर्तवटुना अतिशठेन चाणक्येन इति शेष , तपस्विन वराकस्य तस्यापि पर्वतेश्वरभ्रातुरपि कमपि अनिर्वचनीयमपि, उपांशुवधम् रहस्यमारणम् आकलय्य अवधार्य पर्वतेश्वरविनाशजनितस्य पर्वतेश्वरहत्योत्पन्नस्य, अयश

अकीर्तेः परिहारार्थम् निवारणार्थम्, एषा लोकप्रतिपत्ति लोकाना जनानाम् प्रतिपत्ति अवबोध उपचरिता परिकल्पिता।

टिप्पणी

(१) **चाणक्यवटो**—वटु का अर्थ होता है—ब्राह्मण ब्रह्मचारी। किन्तु यहाँ 'वटु' का प्रयोग नीच या मन्दमति के अर्थ मे हुआ है। (२) **अफलम्**—अविद्यमानम् फलमस्मिन् 'प्रयत्नम्' की विशेषता प्रकट करता है। (३) **अनिष्ट**—न इष्टम् अनुचितम्, अनिष्ट फलमस्य इति अनिष्टफल बहुव्रीहि स० तम्। अनुकूललग्नवशात्—√लग्+क्त कर्तरि लग्नम्। अनुकूल लग्न कर्मधा०। तस्य वशम्—आयत्तता षष्ठी तत्पु०। तस्मात्। (४) **गृहीतार्थान्**—जिन्हे बात मालूम हो गई हो। गृहीत अर्थ विषय यै ते गृहीतार्था तान्। (५) **प्रतिसृष्ट**—दे दिया। प्रति√सृज्+क्त कर्मणि। (६) **उपांशुवधम्**—एकान्त मे की जाने वाली हत्या को। 'उपांशु' यह एक अव्यय है। 'उपांशुर्जपभेदे स्यादुपांशु विजनेऽव्ययम्' इति विश्वकोश। उपांशु वध सुप्सुपा स०, तम्। उपांशु का अर्थ 'विजने' गुप्त रीति से या गुप्त। (७) **आकलय्य**—आ+कल्+णिच् स्वार्थे+ल्यप्—उपाय करके। (८) **परिहारार्थम्**—दूर करने के लिए। परि+हृ+घञ् परिहार, तस्मै इदम् इति परिहारार्थम् 'अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम्' इति वार्तिकसहकारेण 'चतुर्थी तदर्थार्थ—' इति सूत्रेण चतुर्थी तत्पुरुष स०। (९) **लोकप्रतिपत्तिः**—लोक मे प्रसिद्धि। प्रति√पद्+क्तिन् भावे प्रतिपत्ति लोके प्रतिपत्ति—लोक मे प्रसिद्धि। (१०) **उपचरिता**—फैला दी है। उप√चर्+क्त कर्मणि। यहाँ राक्षस यह समझ रहा है कि वैरोचक को आधा राज्य देकर चाणक्य पर्वतेश्वर की हत्या के कलक को धोना चाहता है, किन्तु राक्षस को यह ज्ञान नही है कि चाणक्य की कूटनीति ने जनता मे यह किवदन्ती प्रसारित कर दी है कि पर्वतेश्वर की हत्या का कारण राक्षस ही है।

विराधगुप्तः—ततः प्रथममेव प्रकाशिते चन्द्रगुप्तस्यार्धरात्रे नन्दभवनप्रवेशे कृताभिषेके च वैरोचके विमलमुक्तागुणपरिक्षेपोपरचितपटवारबाणप्रच्छादितशरीरे मणिमयमुकुटनिविडनियतरुचिरतरमौलौ सुरभिकुसुमदामवैकक्षकाव-

भासितविपुलवक्षः स्थले परिचिततमैरप्यनभिज्ञायमानाकृतौ चाणक्यहतकादेशाच्चन्द्रगुप्तोपवाह्यां चन्द्रलेखां नाम गजवशामारुह्य चन्द्रगुप्तानुयायिना राजलोकेन अनुगम्यमाने जवेन देवस्य नन्दस्य भवनं प्रविशति वैरोचके युष्मत्प्रयुक्तेन सूत्रधारेण दारुवर्मणा चन्द्रगुप्तोऽयमिति मत्वा वैरोचकस्योपरि निपातनाय सज्जीकृतं यन्त्रतोरणम्। अत्रान्तरे बहिर्निगृहीतवाहनेषु स्थितेषु चन्द्रगुप्तानुयायिषु भूमिपालेषु युष्मत्प्रयुक्तेनैव चन्द्रगुप्तनिषादिना वर्वरकेण कनकदण्डान्तर्निहितामसिपुत्रिकामाकर्ष्टुकामेन अवलम्बिता करेण कनकशृंखलावलम्बिनी कनकदण्डिका।

राक्षसः—उभयोरप्यस्थाने यत्नः। ततस्ततः?

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—और जबकि सब लोग अर्द्धरात्रि मे ही चन्द्रगुप्त के नन्द-भवन-प्रवेश से अवगत हो चुके, वैरोचक का राज्याभिषेक कर दिया गया, वह, कुछ तो निर्मल मोतियो की लम्बी लटकती मालाओ से खचित रग-बिरंगे कञ्चुक से सम्पूर्ण शरीर के ढक जाने के कारण या मणियो से बने मुकुट से कसकर जकडे हुए अपने मस्तक की एक विचित्र सुन्दरता के कारण या साथ ही साथ दोनो कन्धो से लटकने वाले सुगन्धित पुष्पहारों से अपन विशाल वक्ष स्थल की एक अद्भुत चमक के कारण, ऐसा लगने लगा कि प्रतिदिन के मिलने-जुलने वाले भी न पहचान सके और जब कि उसने उस दुष्ट चाणक्य की अनुमति से चन्द्रगुप्त की सवारी चन्द्रलेखा नामक हथिनी पर बैठकर चन्द्रगुप्त के ही पीछे-पीछे चलने वाले राजागण के आगे-आगे चलते हुए नन्द-भवन में प्रवेश करना प्रारम्भ किया कि आपके द्वारा नियुक्त शिल्पकार दारुवर्मा ने उसे 'यही चन्द्रगुप्त है' ऐसा समझकर उसी पर गिराने के लिए स्वर्णतोरण रूपी अपने (घातक) यन्त्र को सँभाल लिया और जैसे ही चन्द्रगुप्त के अनुगामी राजागण ने ऐसा देखा तो वे अपने-अपने वाहनों को बाहर ही रोकने लगे कि आपके द्वारा चन्द्रगुप्त को मारने के लिए नियुक्त चन्द्रगुप्त के महावत बर्बरक ने सोने की छडी के भीतर छिपी कटार निकालने के लिए सोने की जंजीर से लटकती उस सोने की छडी की मूँठ पकड ली और—

राक्षस—ओह! दोनों का प्रयत्न अनुचित स्थान पर है। तब तब?

Viradhagupta—Now, Chandragupta's entry into the palace of Nanda at night having been previously announced Vairochaka with coronation performed, with his person covered

by an armour of speckled plates formed of pure pearls and gems set in circles, with his knotted (braitded ?) locks rendered very attractive on being tightly restrained by a crown of jewels, with his broad chest lighted up by two garlands of strings of fragrant flowers laid across, and with his features unrecognizable (Lit. not being recognised) by even the most intimate—going to enter the palace of Sire Nanda, having under instructions from cursed Chanakya, mounted the female elephant Chandralekha which is Chandragupta's mount and being followed by the body of princes that usually follow Chandragupta, the gate-way with the mechanism (of a catch) was held ready by Daruvarman, the carpenter, employed by you to let down on him, thinking that this was Chandragupta At this stage the princes that followed Chandragupta having stopped outside with their mounts checked, the golden staff hanging by the golden chain (from the neck of the elephant was taken up in his hand by Varvaraka the driver of Chandragupta who was really employed by you, with a desire to draw the knife that was secreted within the golden staff

Rakshasa—The attempts of both were in the wrong place

संस्कृत व्याख्या—तत तत्पश्चात्, प्रथममेव पूर्वमेव प्रकाशिते प्रचारिते चन्द्रगुप्तस्य, कृताभिषेके च—विहितराज्यप्राप्तिप्राक्कालिकस्नपने च, वैरोचके, विमलमुक्तागुणपरिक्षेपोपरचितपटवारवाणप्रच्छादितशरीरेविमलाना निर्मलाना मुक्तागुणाना मुक्ताहाराणा य परिक्षेप मण्डलाकारेण विन्यास तेन उपरचित कल्पित य चित्र अनेकविधवर्ण पट तन्निर्मित य वारवाण कञ्चुक तेन प्रच्छादितम् आच्छादितम् शरीर यस्य तादृशे, मणिमयमुकुटनिविडनियतरुचिरतरमौलौ मणिमयेन मुकुटेन निविड यथा स्यात् तथा नियत बद्ध रुचिरतर मनोज्ञ मौलि सयत कच यस्य तादृशे, सुरभिकुसुमदामवैकक्षकावभासितविपुलवक्ष-स्थले सुरभि सुगन्धि यत् कुसुमदाम पुष्पमाल्य तदेव वैकक्षक यज्ञोपवीतवत्तिर्यग्लम्बिस्रक् तेन अवभासित सुशोभित विपुल महत् वक्ष स्थलम् उर स्थल यस्य तादृशे, परिचिततमै अपि—अतिशयेन सस्तुतै अपि, अनभिज्ञायमानाकृतौ—न अभिज्ञायमाना अवगम्यमाना आकृति आकार यस्य तादृशे, चाणक्यहतकादेशात्—निन्दितविष्णुगुप्तनिदेशात् चन्द्रगुप्तोपवाह्या—चन्द्रगुप्त उपवाह्य वहनीय यस्या ताम् चन्द्रगुप्तवाहिनीमिति यावत् चन्द्रलेखा नाम—चन्द्रलेखेत्य-भिधाना, गजवशा—करिणीम्, आरुह्य—तदुपरि स्थित्वा, चन्द्रगुप्तानुयायिना —चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य अनुयायिना अनुगामिना, राजलोकेन भूपजनेन, अनु-

गम्यमाने—अनुस्रियमाणे, वैरोचके, जवेन वेगेन, देवस्य महाराजस्य नन्दस्य, भवन गृह, प्रविशति अभ्यन्तर गच्छनि सति, युष्मत्प्रयुक्तेन—भवत्प्रेरितेन, सूत्रधारेण शिल्पिना, दारुवर्मणा, अयम् एप चन्द्रगुप्त वृषल इति मत्वा इत्यवगत्य वैरोचकस्य उपरि निपातनाय प्रक्षेपणाय, यन्त्रतोरण—तोरणरूपेण निर्मित यन्त्र, सज्जीकृतम् समुद्यतम्। अत्रान्तरे एतस्मिन्नवसरे बहिर्निगृहीतवाहनेषु—बहि निगृहीतानि नियन्त्रितानि वाहनानि अश्वादयो यै तादृशेषु स्थितेषु, चन्द्रगुप्तानुयायिषु, भूमिपालेषु राजसु युष्मत्प्रयुक्तेनैव, चन्द्रगुप्तनिषादिना—वृषलहस्तिपकेन, वर्वरकेण, कनकदण्डान्तर्निहताम्—कनकस्य स्वर्णस्य दण्डो यष्टी तस्य अन्त अभ्यन्तरे निहिता स्थापिताम्, असिपुत्रिकाम् छुरिकाम् आकृष्टुकामेन—वहिर्नि सारणेच्छुना, करेण हस्तेन, कनकश्रृङ्खलावलम्बिनी —कनकस्य सुवर्णस्य श्रृङ्खला बन्धनरज्जु ताम् अवलम्बते तच्छीलेति, कनकदण्डिका सुवर्णयष्टि, अवलम्बिता धृता। उभयो दारुवर्मवर्वरकयो अस्थाने अयुक्तस्थाने यत्न उद्योग।

टिप्पणी

(१) **तत किल**—तब और इसमे एक ऐसी गाँठ थी जिसके खीच लेने पर सम्पूर्ण तोरण गिरकर नीचे बैठे हुए लोगो को नष्ट कर देता। दारुवर्मा ने वैरोचक के ऊपर गिराने के लिए इसे तैयार किया था। क्यो? 'चन्द्रगुप्त अयम् इति मत्वा'। यह गलती कहाँ से हुई? 'प्रथममेव रात्रौ चन्द्रगुप्तस्य नन्दभवनप्रवेशे प्रकाशिते' प्रचारिते सति तत 'वैरोचके देवस्य नन्दस्य भवनं प्रविशति' सति (वह जानता था कि इस समय चन्द्रगुप्त महल मे प्रवेश करेंगे, इसलिए जब उसने वैरोचक को प्रवेश करते देखा, उन्होंने उसे चन्द्रगुप्त समझा।) यह एक भारी गलती थी। 'चाणक्यहतकस्य आदेशात् चन्द्रगुप्त उपवाह्य वहनीय यस्य चन्द्रगुप्तस्य वाहनमित्यर्थ' चन्द्रलेखा नाम गजवशाम् आरुह्य चन्द्रगुप्तस्य अनुयायिना राजलोकेन अनुगम्यमाने' सति वैरोचके। यह सब कार्य चाणक्य ही का था। उसने वैरोचक को चन्द्रगुप्त के वाहन पर सवार कराया और उसके साथ उन राजकुमारो को अनुचर रूप मे लगा दिया जो अक्सर चन्द्रगुप्त के पीछे-पीछे चलते थे। इसी से दारुवर्मा को धोखा हुआ। परन्तु वह वैरोचक और चन्द्रगुप्त दोनो ही को जानता था—'परिचिततमैरपि अनभिज्ञायमाना' अपरिगह्यमाणा 'आकृति' यस्य तादृशे सति वैरोचके। (२) **कृताभिषेके**—

कृत अभिषेक यस्य असौ कृताभिषेक तस्मिन्। (३) **वैकक्षक**—विशिष्ट. कक्ष अस्मात् विकक्षम् (बहुव्रीहि स०)। विकक्षे भवम् इति विकक्ष+अण्+कन् स्वार्थे वैकक्षकम्। जनेऊ की तरह पहिना हुआ हार। (४) **उपवाह्याम्**—सवारी। उप√वह्+ण्यत् कर्मणि। यह गजवशाम्' का विशेषण है। (५) **गजवशाम्**—वशा—स्त्रीलिंग "वशा नार्य्या बन्ध्यगव्या हस्तिन्या दुहितर्य्यपि" इति हैम। वशा गजी गजवशा—हथिनी। जातिवाचक शब्द गजी का पूर्वनिपात पुवद्भाव के साथ कर्मधा०, नियम "पोटायुवतिस्तोक धूर्तजाति"। (६) **यन्त्रतोरणम्**—यन्त्रकलित यन्त्रयुक्त वा तोरणम् मध्यमपदलोपी स०। (७) **वर्वरकेण**—वर्वरक चन्द्रगुप्त के महावत का नाम है। वस्तुत यह राक्षस का खास आदमी था। उसने चन्द्रगुप्त के वध के लिए इसकी नियुक्ति कर रखी थी। **कनकदण्डिका**—दण्ड एव इति दण्ड+कन् स्वार्थे+टाप् स्त्रियाम् दण्डिका—महावनो के द्वारा काम मे लाया जाने वाला छोटा डडा। कनकस्य दण्डिका। तस्या अन्त तस्मिन् निहिता। अथवा अन्त मध्ये निहिता इति अन्तर्+नि+धा—क्त कर्मणि अन्तर्निहित। कनकदण्डिकायाम् अन्तर्निहिता। (८) **अस्थाने**—अनुचित स्थान पर। 'चन्द्रगुप्त' उचित स्थान था।

विराधगुप्तः—अथ जघनाभिघातमुत्प्रेक्षमाणा गजवधूरतिजवनतया गत्यन्तरमारूढवती। ततः प्रथमगत्यनुरोधप्रत्याकलितमुक्तेन प्रभ्रष्टलक्ष्यं पतता यन्त्रतोरणेन आकृष्टकृपाणीव्यग्रपाणिरनासादयन्नेव चन्द्रगुप्तप्रत्याशया वैरोचकं, हतस्तपस्वी वर्वरकः। ततो दारुवर्मणा, यन्त्रतोरणनिपातनादात्मवधमाकलय्य शीघ्रमेवोत्तुङ्गतोरणस्थानमारूढेन, यन्त्रघट्टनबीजलोहकीलकमादाय हस्तिनीगत एव हतस्तपस्वी वैरोचकः।

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—और जैसे ही अपनी जाँघो पर चोट पडने की आशङ्का से उस हथिनी ने बहुत शीघ्रता मे अपनी चाल बढायी कि उसकी पहली चाल के अनुमान से उस पर गिराए जाने वाले उस स्वर्ण-तोरण के यन्त्र ने अपना निशाना चूक कर, चन्द्रगुप्त पर तो दूर रहे वैरोचक पर भी न गिरकर, उस बेचारे वर्वरक के ही प्राण समाप्त कर दिए जिसके दोनो हाथ कटार निकालने और खीचने मे ही फँसे हुए थे। अब दारुवर्मा ने यह सब

देखते सोच लिया कि तोरण-यन्त्र के गिरने के अपराध में प्राण-दण्ड अवश्यंभावी है, उसने शीघ्रता के साथ ऊँचे तोरण के ऊपर पहुँचकर उसकी जड मे लगी लोहे की कील उखाड ली और हाथी पर आसीन बेचारे वैरोचक की ही हत्या कर डाली।

Viradhagupta—Thereat the female elephant, anticipating a heavy blow because of going too fast, adopted a different pace Poor Varvaraka by whom the knife was drawn and whose hand was busy, was, by the gate-way, that was worked by mechanism and was loosened and released with reference to the previous speed and hence fell wide of the mark, was killed even before he reached Vairochaka in expectation of Chandragupta Now Daruvarman, who stood already mounted on the site of the lofty gate-way and expected his own death for letting the gate-way down, killed poor Vairochaka even as he was seated on the very elephant, having taken up the iron bolt which was the key to start the mechanism

सस्कृत व्याख्या—अथ अनन्तरम् अतिजवनतया अतिद्रुतधावनाद्धेतो, जघनाभिघानम्—जघने नितम्बे अभिघानम् आघानम् उत्प्रेक्षमाणा सम्भावयन्ती, गजवधू हस्तिनी, गत्यन्तरम् मन्दगतिम्, आरूढवती अवलम्बितवती। तत तदनन्तरम्, प्रथमगत्यनुरोधप्रत्याकलितमुक्तेन प्रथमा पूर्वा या गति द्रुतगतिरित्यर्थ तस्या अनुरोधेन अपेक्षया प्रत्याकलित विघट्टित मुक्त च, तादृशेन प्रभ्रष्टलक्ष्यम् प्रभ्रष्टम् च्युत लक्ष्य शरव्य यत्र तद्यथा स्यात् तथा पतता, यन्त्रतोरणेन तोरणरूपेण निर्मितयन्त्रविशेषेण, आकृष्टकृपाणीव्यग्रपाणि —आकृष्टा कनकदण्डिकाया मध्यात् निष्कासिता या कृपाणी छुरिका तस्या तया वा व्यग्र व्यापृत पाणि कर यस्य तथाविध, तपस्वी वराक, वर्वरक, चन्द्रगुप्तप्रत्याशया वृषलधिया, वैरोचकम्, अनासादयन्नेव (हननार्थम्) अप्राप्नुवन्नेव, हत विनाशित। तत तत्पश्चात्, यन्त्रतोरणनिपातनात् यन्त्रतोरण-प्रहरणात्, आत्मवध स्वविनाशम्, आकलय्य तर्कयित्वा, शीघ्रमेव झटिति, उत्तुङ्गतोरणस्थानम् उच्चैस्तरबहिर्द्वारस्थलम् आरूढेन प्राप्तवता, यन्त्रघट्टनबीजलोहकीलकम्—यन्त्रस्य यत् घट्टनम् चालन तस्य बीज कारण यत् लोहकीलकम् अय शङ्कु तत्, आदाय गृहीत्वा, हस्तिनीगत एव करिणीपृष्ठसमारूढ एव, तपस्वी वैरोचक हत।

टिप्पणी

(१) **जघनाभिघातम्**—जाँघ पर प्रहार। (२) **उत्प्रेक्षमाणा**—उद्+

प्र+ईक्ष्+शानच् कर्तरि—सम्भावना करती हुई। जानवरों को आने वाले खतरे की पहले से ही जानकारी हो जाती है। अतः वह हथिनी अपने कूल्हे पर तोरण गिरने को पहले ही भाप गयी थी। (३) **अतिजवनतया**—जु+ल्युट् भावे जवनम्—तेज चाल से। अतिशयित जवनमस्या अतिजवनम्—बडी तेज चाल से चलती हुई। सामान्ये नपुंसकम्। तस्य भावः तया। हेतौ तृतीया। अभिघात का कारण—अत्यन्त तेज गति से चलने के कारण उस पर प्रहार किया जायगा। तल् के कारण यहाँ पर पुंवद्भाव नहीं होगा। (४) **गत्यन्तरम्**—अन्या गतिः मयूरव्यंसकादि। यहाँ यह कहना सामान्य है कि उसने अपनी गति बढाई, लेकिन तब द्वार उसके पीछे गिर जायगा और महावत को तनिक भी चोट नहीं लगेगी। (५) **प्रथमगति**—प्रति+आ+कल्+णिच्+क्त+कर्मणि प्रत्याकलित। आकलन का अर्थ है व्यवस्थित करके रखना। आदौ प्रत्याकलित पश्चात् मुक्त प्रत्याकलितमुक्तम्। प्रथमगत्यनुरोधेन प्रत्याकलितमुक्तम्। प्रथमगति—तेजगति। हथिनी की चाल को देखकर दारुवर्मा ने यह अनुमान लगाया था कि इतने क्षणों में हथिनी का कूल्हा—जहाँ राजा बैठा है—इस तोरण के नीचे आ जाएगा। किन्तु ऐसा न हो सका। फलस्वरूप वर्वरक मारा गया न कि राजा (वैरोचक)। (६) **कृपाणौ**—एक छोटी तलवार। (७) **चन्द्रगुप्तप्रत्याशया**—चन्द्रगुप्त-सम्बन्धिनी इत्यर्थः आशा तया। हेतौ तृतीया। चन्द्रगुप्त से सम्बन्धित आशा, उसे मार डालने की आशा। (८) **आकलय्य**—आ+कल्+णिच्+ल्यप्—समझकर। (९) **पूर्वमेव**—द्वार की ओर भीड के प्रस्थान होने के पूर्व ही। (१०) **तोरणस्थलम्**—**तोरणस्य स्थलम्**—वह स्थान जहाँ कि द्वार था।

राक्षसः—कष्टम्! अनर्थद्वयमापतितम्। न हतश्चन्द्रगुप्तो हतौ वैरोचकवर्वरकौ!! (सावेगमात्मगतम्) नैतावुभौ हतौ, दैवेन वयमेव हताः। (प्रकाशम्) अथ स सूत्रधारो दारुवर्मा क्व?

विराधगुप्तः—वैरोचकपुरःसरेण पदातिलोकेन लोष्टघातं हतः।

राक्षसः—(सास्रम्) कष्टम्! अहो! वत्सलेन सुहृदा दारुवर्मणा वियुक्ताः स्मः। अथ तत्रत्येन भिषजाऽभयदत्तेन किमनुष्ठितम्?

विराधगुप्तः—अमात्य ! सर्वमनुष्ठितम् ।

राक्षसः—(सहर्षम्) किं हतो दुरात्मा चन्द्रगुप्तः ?

विराधगुप्तः—अमात्य ! दैवान्न हतः ।

राक्षसः—(सविषादम्) तत् किमिदानीं कथयसि परितुष्टः 'सर्वमनुष्ठितम्' इति ।

विराधगुप्तः—अमात्य ! कल्पितमनेन योगचूर्णमिश्रमौषधं चन्द्रगुप्ताय । तच्च प्रत्यक्षीकुर्वता चाणक्यहतकेन कनकभाजने वर्णान्तरमुपगतमुपलभ्याभिहितश्चन्द्रगुप्तः—'वृषल ! सविषमिवौषधं, न पातव्यम्' इति ।

राक्षसः—शठः खल्वसौ वटुः । अथ स वैद्यः कथम् ?

विराधगुप्तः—स खलु वैद्यस्तदेवौषधं पायित उपरतश्च ।

राक्षसः—(सविषादम्) अहह ! महान् विज्ञानराशिरुपरतः । भद्र ! अथ तस्य शयनाधिकृतस्य प्रमोदकस्य किं वृत्तम् ?

विराधगुप्तः—यत् इतरेषाम् ।

राक्षसः—(सोद्वेगम्) कथमिव ?

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—दुःख की बात है। दो अनर्थ हो गए—चन्द्रगुप्त तो नही मरा, मर गए वैरोचक और वर्वरक। (घबराहट के साथ मन में) वे दोनो नही मारे गए बल्कि भाग्य ने हमें ही मार दिया। (प्रकट) वह कारीगर दारुवर्मा कहाँ है ?

विराधगुप्त—वैरोचक के पीछे पैदल चलने वाले लोगो ने ढेले मार-मार कर उसे मार दिया।

राक्षस—(आँसू भरी आँखों से) ओह ! दारुवर्मा ऐसा परम स्नेही अब कहाँ प्राप्त होगा ? अच्छा, यह बताओ कि वैद्य अभयदत्त ने वहाँ पर पड़े-पड़े कुछ किया अथवा नहीं ?

विराधगुप्त—अमात्य ! सब कुछ किया।

राक्षस—(प्रसन्न होकर) क्या वह नीच चन्द्रगुप्त मार डाला गया ?

विराधगुप्त—अमात्य ! भाग्य से वह नही मारा गया।

राक्षस—(दुःखित होकर) तब क्या इतनी खुशी से कह रहे हो कि सब कुछ कर दिया ?

विराधगुप्त—अमात्य ! इसने तो चन्द्रगुप्त को मारने के लिए ऐसी ओषधि बना डाली थी जिसमे विष ही पड़ा हुआ था; किन्तु उस दुष्ट चाणक्य

ने जैसे ही उस औषधि को देखा और स्वर्ण-पात्र में रखते ही उसका रंग बदलते हुए पाया कि चन्द्रगुप्त से कह दिया कि "चन्द्रगुप्त'! इस विष-भरी औषधि को न पीना।'

राक्षस—वह मूर्ख दुष्ट है। अच्छा, उस वैद्य पर क्या बीती ?

विराधगुप्त—उस वैद्य को ही वह औषधि पिला दी गई और वह वैद्य मर गया।

राक्षस—(दु ख के साथ) ओह ! बडा भारी वैज्ञानिक समाप्त हो गया। अच्छा, महाशय ! शयन-कक्ष के अधिकारी प्रमोदक का क्या हुआ ?

विराधगुप्त—जो दूसरो का हुआ।

राक्षस—(उद्वेग के साथ) कैसे ?

Rakshasa—How hard ! A double misfortune has befallen. Chandragupta is not killed, Vairochaka and Varvaraka are killed by fate How did the carpenter Daruvarman fare ?

Viradhagupta—Hit with brick-bats and killed by the very footmen who preceded Vairochaka

Rakshasa (With tears)—How hard ! Alas ! we are bereft of the loving friend Daruvarman Well, what was done by the physician Abhayadatta of that palace ?

Viradhagupta—All was done

Rakshasa (With joy)—Is the vile-hearted Chandragupta killed ?

Viradhagupta—Minister, through luck he was not killed

Rakshasa (Sorrowfully)—Then why do you say now "All was done"

Viradhagupta—Minister, a draught mixed with a treachaerous powder was offered by him to Chandragupta But Chanakya inspecting it, having noticed change of the colour in a golden cup, said this to Chandragupta, "Vrishala, this medicine is poisoned, it must not be taken"

Rakshasa—The fellow is cunning indeed Well, how did the physician fare ?

Viradhagupta—He was forced to swallow that very draught and died

Rakshasa (Sorrowfully)—Alas ! A vast mass of expert knowledge has disappeared Well, what became of Pramodaka who was employed in his bed-room ?

Viradhagupta—The same as of others

Rakshasa (Anxiously)—How is that ?

संस्कृत व्याख्या—कष्टम् ! अनर्थद्वय द्वौ अनर्थौ आपतितम् सम्भूतम्। न हत चन्द्रगुप्तो मौर्य हतौ वैरोचकवर्वरकौ (सावेगम् सविषादम् स्वमनसि)

न एतो इमो हतौ दैवेन भाग्येन वयम् एव हता नष्टा (प्रकाशम् प्रकटरूपेण) अथ अथ स सूत्रधार शिल्पी दारुवर्मा क्व कुत्र ? वैरोचकपुर सरेण वैरोचकअग्रगामिना पदातिलोकेन पादचारिणा जनेन लोष्टघात लोष्टै हत्वा हत प्राणरहित कृत । (सास्रम् अश्रुभि सह) कष्टम् दु खम् । अहो ! वत्सलेन स्नेहिजनेन सुहृदा मित्रेण दारुवर्मणा वियुक्ता विरहिता स्म । अथ तत्रत्येन तस्य स्थानस्य निवासिना भिषजा वैद्येन अभयदत्तेन इति नाम्ना किम् अनुष्ठितम् कृतम् ? अमात्य मन्त्रिन् ! सर्वम् सम्पूर्ण कार्यम् अनुष्ठितम् सम्पादितम् । (सहर्षम् हर्षेण सह) कि कथ हत दुरात्मा दुष्ट चन्द्रगुप्त ? अमात्य मन्त्रिन् दैवात् भाग्यात् न हत । (सविषादम् विषादेन सहितम्) तत् किम् कथम् इदानीम् अस्मिन् समये कथयसि वदसि परितुष्ट प्रसन्न 'सर्वम् समग्र कार्यम् अनुष्ठितम् कृतम्' इति । मन्त्रिन् ! कल्पितम् निर्मितम् अनेन वैद्येन योगचूर्णमिश्रम् विषचूर्णयुक्तम् औषध भेषज चन्द्रगुप्ताय मौर्याय । तच्च भेषज प्रत्यक्षीकुर्वता विलोकयता चाणक्यहतकेन दुरात्मना चाणक्येन कनकभाजने स्वर्णपात्रे वर्णान्तरम् उपगतम् उपलभ्य ज्ञात्वा अभिहित कथित चन्द्रगुप्त मौर्य 'वृषल सविषम् विषमिश्रितम् औषधम् भेषजम् न पातव्यम् पेयम् शठ दुष्ट खलु निश्चयम् असौ अयम् वटु· दुष्टात्मा अथ स वैद्य भिषक् कथम् ? स खलु वैद्य तद् एव औषध भेषजं पायित· उपरत मृत च । (सविषादम् दु खपूर्वकम्) अहह ! महान् वरीयान् विज्ञानराशि विज्ञानवेत्ता उपरत मृत । भद्र महाशय ! अथ तस्य शयनाधिकृतस्य शयनाधिकारिण प्रमोदकस्य किं वृत्तम् सजातम् । यत् इतरेषाम् अन्येषाम् । (सोद्वेगम् आकुलतापूर्वकम्) कथमिव ?

टिप्पणी

(१) **कथम्**—कथम्भूत क्या हुआ ? (२) **वरोचकपुर.सरेण**—पुरः अग्रे सरति गच्छति इति पुरस्+सृ+ट कर्तरि वैरोचक पुर सर यस्य—बहु० । 'पदातिलोकेन' की विशेषता प्रकट करता है'—वैरोचक जिसके आगे आगे था अर्थात् वैरोचक के पीछे चलने वाले लोगो ने । (३) **पदातिलोकेन**—लोक-समूह—चरणचारिलोकेन—पैदल चलने वाले लोगो ने । पदातीना लोक· षष्ठी त० तेन । (४) **लोष्टघातम्**—ढेलो से मारकर । लोष्टै हत्वा इति लोष्ट √हन् णमुल् भावे । (५) **भिषजा**—वैद्येन—वैद्य के द्वारा । भिषज्यति रोगान् जयति इति भिषज्+यक् स्वार्थे (कण्डादि)+क्विप् कर्तरि भिषक् तेन । अनुक्ते

कर्तरि तृतीया। (६) प्रत्यक्षीकुर्वता—निरीक्षमाणेन—देखने वाले के द्वारा। (७) वटु—ईषद्विद्य—अल्पज्ञ। (८) पायित—पा+णिच्+क्त कर्मणि—पिलाया गया। (९) योगचूर्ण—योग—विश्रम्भघातिन् अर्थात् विश्वास मे पडे हुए को मारने वाले "योगो विश्रम्भघातिनि" इत्यादि हेम। योगश्चासौ चूर्णश्च—एक चूर्ण है जो अहानिकर मालूम पडता है लेकिन मार डालता है—उससे मिला हुआ। "औषधम्" की विशेषता प्रकट करना है। (१०) वर्णान्तरम्—सुवर्ण के पात्र मे जब विषैली चीजे रखी जाती है तब उस पात्र का रग बदल जाता है। इससे उनके विषैली होने की बात आसानी से मालूम हो जाती है। (११) उपरत—उप—रम्+क्त कर्तरि—मर गया है। (१२) शयनाधिकृतस्य—शी+ल्युट् अधिकरणम् शयनम्, शयने अधिकृत। शयन-कक्ष मे नियुक्त।

विराधगुप्तः—स खलु मूर्खस्तं युष्माभिरतिसृष्टं महान्तमर्थराशिमवाप्य महता व्ययेनोपभोक्तुमारब्धवान्। ततः 'कुतोऽयं भूयान् धनागमस्तव' इति पृच्छ्यमानोऽयं यदा वाक्यभेदान् बहूनकथयत् तदा चाणक्यहतकादेशाद् विचित्रेण वधेन व्यापादितः।

राक्षसः—(सोद्वेगम्) कथमत्रापि वयमेवोपहता दैवेन? अथ शयितस्य चन्द्रगुप्तस्य शरीरे प्रहर्तुमस्मत्प्रयुक्तानां नरपतिशयनगृहस्यान्तः सुरङ्गायां निवसतां बीभत्सकादीनां को वृत्तान्तः?

विराधगुप्तः—अमात्य! दारुणो वृत्तान्तः।

राक्षसः—(सावेगम्) कथं दारुणो वृत्तान्तः? न खलु विदिताः ते तत्र निवसन्तः चाणक्यहतकेन?

विराधगुप्तः—अथ किम्?

राक्षसः—कथमिव?

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—उस मूर्ख ने आपकी दी हुई उस महान् धनराशि को पाकर बडे खर्च के साथ उसका उपभोग करना शुरू किया। पीछे जब यह पूछा गया कि तुम्हें इतना अधिक धन कहाँ से प्राप्त हुआ और वह बहुत सी उलटी बाते कहने लगा तब दुष्ट चाणक्य की आज्ञा से विचित्र प्रकार के वध द्वारा मरवा डाला गया।

राक्षस—(घबडाहट के साथ) क्या यहाँ भी हमीं भाग्य द्वारा मारे गए ? अच्छा, सोये हुए चन्द्रगुप्त के शरीर पर चोट करने के लिए हमारे द्वारा नियुक्त किए हुए, राजा के शयन-कक्ष के भीतर सुरंग में निवास करने वाले बीभत्सक आदि का क्या समाचार है ?

विराधगुप्त—मंत्री ! भयानक समाचार है।

राक्षस—(घबडाहट के साथ) कैसा भयानक समाचार है ? वहाँ रहते हुए वे दुष्ट चाणक्य के द्वारा समझ तो नहीं लिए गए।

विराधगुप्त—और क्या ?

राक्षस—कैसे ?

Viradhagupta—Fool as he was, he having come by the vast amount of money given by you, commenced enjoying at great expense Then, on being asked, "whence is this accession of immense wealth" when he made several divergent statements, he was killed by cursed Chanakaya by an indescribable cruel death

Rakshasa (With agitation)—How here too we are hit by fate ? Well, what news of Bibhatsaka and others who were employed by us to strike at the person of Chandragupta when asleep and having previously got in, were living in a hole within the walls of the palace ?

Viradhagupta—Terrible news, minister

Rakshasa (With agitation)—How terrible news ? Really they were not found living there by cursed Chanakya

Viradhagupta—Yes, really it is so

Rakshasa—How ?

संस्कृत व्याख्या—स खलु निश्चयमेव मूर्खः अज्ञानी युष्माभिः अतिसृष्टं दत्तं महान्तम् बहु धनराशिम् अर्थजातम् अवाप्य लब्ध्वा महता भूयसा व्ययेन उपभोक्तुम् आरब्धवान् प्रारभत। ततः तदनन्तरम् 'कुतः' कस्मात् स्थानात् अयम् एष धनागमः सम्पत्तिलाभः तव' इति पृच्छ्यमानोऽयं पृष्टः अयम् यदा यस्मिन् समये वाक्यभेदान् भिन्नानि भिन्नानि वाक्यानि बहूनि अकथयत अवदत् तदा तस्मिन् समये चाणक्यहतकादेशात् दुष्टचाणक्यस्य निर्देशात् विचित्रेण वधेन व्यापादितः हतः। (सोद्वेगम् आकुलतापूर्वकम्) कथम् किम् अत्रापि अस्मिन्नपि विषये वयम् एव उपहता नष्टा दैवेन भाग्येन ? अथ शयितस्य शयानस्य चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य शरीरे काये प्रहर्तुम् हन्तुम् अस्मत्प्रयुक्ताना अस्माभिः नियोजिताना नरपतिगृहस्य अन्तः सुरङ्गाया राज्ञः गृहस्य अन्तः अभ्यन्तरवर्तिबिले निवसताम् तिष्ठताम् बीभत्सकादीनाम् बीभत्सक इत्यादिनाम्ना को वृत्तान्तः समाचारः ? अमात्य

मन्त्रिन् दारुणो कष्टकारक वृत्तान्त समाचार । (सावेगम् सचिन्त) कथ कस्मात् दारुण कष्टकारक वृत्तान्त समाचार ? न खलु निश्चयेन विदिता. ज्ञाता ते तत्र तस्मिन् प्रदेशे निवसन्त तिष्ठन्त चाणक्यहतकेन दुष्टचाणक्येन ? अथ किम् एवमस्तु । कथमिव कस्मात् ?

टिप्पणी

(१) **पृच्छ्यमान**.—प्रच्छ्+कर्मणि लट स्थाने शानच्, चाणक्य के द्वारा पूछे जाने पर। (२) **वाक्यभेदान्**—वाक्यस्य भेदा भिन्नानि वाक्यानि इत्यर्थ । "भावानयने द्रव्यानयनम्" इति न्यायात् । 'अगमत्' का कर्म । बयानो की भिन्नताओ को । उन-उन समयो मे परस्पर विरोधी वयान दिया। (३) **अगमत्**—गम्+लुङ तिप् । पहुँचा, ग्रहण किया । उसने भिन्न-भिन्न समय मे भिन्न-भिन्न बाते कही। (४) **विचित्रवधेन**—विशेषेण चित्र विचित्रो वध । हाथ-पैर एक साथ बाँध देना आदि बहुत ही विशेष प्रकार की मृत्यु। (५) **उपहता** — उप+हन्+क्त कर्मणि—विनाशिता —नष्ट कर दिए गए । (६) **अन्तर्भित्ति**—भित्तौ इति अन्तर्भित्ति—दीवाल मे। अन्तर्भित्ति सुरङ्गा, सुप्सुपा, ताम् । (७) **प्रथममेव**—भीड के बाहर निकलने के भी पहले। (८) खलु—अत्र वाक्यालकारे प्रयुक्त ।

विराधगुप्तः—प्राक् चन्द्रगुप्तप्रवेशात् प्रविष्टमात्रेणैव शयनगृहे चाणक्येन दुरात्मना समन्तादवलोकितः। ततस्तु एकस्माद् भित्तिच्छिद्राद् गृहीतभक्तावयवां निष्क्रामन्तीं पिपीलिकापंक्तिमवलोक्य पुरुषगर्भमेतद् गृहमिति गृहीतार्थेन दाहितं तदन्तः शयनगृहम् । तस्मिंश्च दह्यमाने धूमावरुद्ध-दृष्टयः बीभत्सकादयस्तत्रैव ज्वलनमुपगता उपरताश्च ।

राक्षसः—(सास्रम्) सखे ! पश्य, चन्द्रगुप्तस्य दैवसम्पदा सर्व एव उपरताः। (सचिन्तम्) सखे ! दैवसम्पदं पश्य दुरात्मनश्चन्द्रगुप्तहतकस्य !! कुतः ?—

कन्या तस्य वधाय या विषमयी गूढं प्रयुक्ता मया
दैवात् पर्वतकस्तया स निहतो यस्तस्य राज्यार्धभाक् ।

ये यन्त्रेषु रसेषु च प्रणिहितास्तैरैव ते घातिताः
मौर्यस्यैव फलन्ति पश्य विविधश्रेयांसि मे नीतयः ॥१६॥

अन्वय—मया तस्य वधाय या विषमयी कन्या गूढ प्रयुक्ता तया दैवात् स पर्वतक निहत य तस्य राज्यार्धभाक्। ये यन्त्रेषु रसेषु च प्रणिहिता. ते तै एव घातिता । पश्य, मे नीतय मौर्यस्य एव विविधश्रेयासि फलन्ति ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—चन्द्रगुप्त के प्रवेश करने से पहले दुष्ट चाणक्य ने शयन-गृह मे प्रवेश करते ही चारो ओर देखा। तब दीवार के एक छेद से अन्न के कणो को लिए हुए बाहर निकलती हुई चीटियो की पंक्ति को देखकर इस घर के भीतर '(कुछ) लोग छिपे पडे है'—ऐसा समझकर उस भीतरी शयन-कक्ष को जलवा दिया। जलते हुए उस (घर) मे धुएँ के कारण रुकी हुई दृष्टि वाले बीभत्सक आदि सभी (जन) पहले बद किए हुए बाहर निकलने के रास्ते को न पा करके जलकर मर गए।

राक्षस—(आँसू भरे हुए) मित्र! देखो, चन्द्रगुप्त की भाग्य-सम्पत्ति से सभी मर गए। (चिन्तित होकर) मित्र! दुष्ट पापी चन्द्रगुप्त की भाग्य-विभूति तो देखो। क्योकि मैंने उस (चन्द्रगुप्त) की हत्या के लिए जिस विषकन्या को गुप्त रूप से लगाया था, उसने भाग्यवश उस पर्वतक का वध कर डाला जो उस (चन्द्रगुप्त) के आधे राज्य का अधिकारी था। जो (मनुष्य चन्द्रगुप्त को मारने के लिए) यन्त्रो और विषो के प्रयोग (करने) में लगाए गए थे, वे उन्हीं (यत्रो और विषो) से मारे गए। देखो, नीतियाँ चन्द्रगुप्त के ही अनेक प्रकार के कल्याणो को पैदा कर रही है।

Viradhagupta—Before Chandragupta's entry, the bed-room was caused to be burnt down by the vile-hearted and accursed Chanakya with the truth guessed, that the house had people within On noticing a row of ants issuing through a certain hole in a wall with fragments of boiled rice held (in the mouth) immediately on entering the room and watching closely While it was being burnt, Bibhatsaka and others, with eyes closed (or sight obstructed) by smoke and not having reached the previously constructed door which was the way out, but having got into the fire, all perished there

Rakshasa (with tears)—Terrible O terrible! friend, mark the profusion of luck of the vile-hearted and accursed Chandragupta Whence (do you ask) ? Through fate, Parvataka, claimant to half his kingdom, was killed by the girl of poison whom I secretly employed for his (Chandragupta's) destruction, those who were employed in the matter of weapons and

poisons, were themselves killed by those very things You see my measures mature or bestow blessings of all sorts unto Maurya himself

संस्कृत व्याख्या—चन्द्रगुप्तप्रवेशात् वृषलसन्निवेशात् प्राक् पूर्वम् प्रविष्ट-मात्रेणैव सन्निवेशमात्रेणैव, दुरात्मना दुष्टेन चाणक्येन विष्णुगुप्तेन, समन्तात् चतुर्दिक्षु, अवलोकित दृष्ट । तत तदनन्तरम् एकस्मात् भित्तिच्छिद्रात् कुड्यरन्ध्रात्, गृहीतभक्तावयवा गृहीता मुखे धृता भक्तस्य अन्नस्य अवयवा खण्डा यया तादृशी निष्क्रामन्ती निर्गच्छन्ती पिपीलिकापङ्क्ति पिपीलिकाश्रेणीम् अवलोक्य दृष्ट्वा एतत् गृहम् सदनम् पुरुषगर्भम् पुरुषा गर्भे यस्य तादृशम्, (अस्ति) इति अस्मात् गृहीतार्थेन गृहीत विज्ञात अर्थ तत्त्व येन तादृशेन चाणक्येन इति शेष तदन्त शयनगृहम् तत पूर्वोक्तम् अन्त शयनगृहम् अन्तर्निद्रा-भवन, दाहितम् भस्मसात्कृतम् । तस्मिंश्च शयनगृहे, दह्यमाने भस्मसात्कृते सति, धूमावरुद्धदृष्टय धूमेन अवरुद्धा दृष्टि येषा तथाविधा , बीभत्सकादय , सर्वे एव, प्रथमम् पूर्वम्, अपिहितनिर्गमनमार्गम् निरुद्धबहिर्नि सरणपथम् अनिधगम्य अप्राप्य ज्वलनम् अग्निम्, उपगता प्राप्ता , उपरता मृताश्च । सास्रम् सरोदनम् । सखे मित्र ! पश्य अवलोकय, चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य दैवसम्पदा भाग्यसम्पदा सर्वे एव उपरता मृता । (सचिन्तम् चिन्तया सहितम्) सखे मित्र ! दैवसम्पद भाग्यसम्पत्तिम् पश्य अवलोकय दुरात्मन दुष्टस्य चन्द्रगुप्तहतकस्य मौर्यस्य । कुत कस्मात् ?

मया राक्षसेन तस्य चन्द्रगुप्तस्य वधाय नाशाय, या विषमयी विषनिर्मिता कन्या गूढ गुप्त यथा स्यात् तथा प्रयुक्ता प्रेरिता तया विषकन्यया दैवात् भाग्यवशात् स पर्वतक निहत विनाशित , य तस्य चन्द्रगुप्तस्य राज्यार्धभाक् अर्धराज्यस्य हर्ता । ये जना यन्त्रेषु प्राणविघातसाधनपदार्थेषु रसेषु च विषेषु च प्रणिहिता व्यापारिता ते, तै एव यन्त्रै विषै एव च घातिता. हिंसिता । पश्य—विभावय, मे मम नीतय प्रयोगा मौर्यस्य एव वृषलस्यैव विविधश्रेयासि बहुविधकल्याणानि फलन्ति समुत्पादयन्ति ।

टिप्पणी

(१) **चन्द्रगुप्तप्रवेशात्**—यहाँ 'अन्यारादितरर्ते दिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहि-युक्ते' सूत्र से पचमी हुई । (२) **प्रविष्टमात्रेण**—प्रविष्ट एव इति प्रविष्ट-मात्रम् मयूरव्यंसकादि स०, तेन । (३) **पुरुषगर्भम्**—पुरुषा गर्भे यस्य तत

बहुव्रीहि स०। यहाँ 'सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ' सूत्र के बल से 'गर्भ' का पूर्व प्रयोग होना चाहिए, किन्तु 'गड्वादे परा सप्तमी' इस वार्तिक के बल से उसका पर प्रयोग ही हुआ। (४) **गृहीतार्थेन**—जिसने रहस्य को समझ लिया है। गृहीत अर्थ येन स गृहीतार्थ (बहुव्रीहि स०), तेन। (५) **अपिहितम्**—बद। अपि√धा+क्त कर्मणि 'दधातेर्हि' इत्यनेन धा इत्यस्य हि आदेश। यहाँ भागुरि आचार्य के मत से अपि के अकार का लोप हो जाने पर 'पिहित' भी प्रतिपादित होता है। (६) **निर्गमन**—निकलना। (७) **विषमयी**—विष सर्वथा प्रकृत प्रचुरमित्यर्थ अस्याम् इति विष+मयट्+ङीप्। (८) **दैवसम्पदम्**—दैव—भाग्य। सम्+पद्+क्विप् भावे सम्पद्—समृद्धि। दैवस्य सम्पत् ताम्, 'पश्य' का कर्म है। (९) **गूढम्**—गुह्+क्त कर्मणि गूढम् तत् यथा तथा। गुप्त रीति से। (१०) **राज्यार्द्ध**—राज्यस्य अर्द्धम् ष० तत्पु०—एकदेशिसमास से 'अर्द्धराज्यम्' होता है, तत् भजति इति राज्यार्ध+भज्+ण्वि कर्तरि+राज्यार्धभाक्। (११) **प्रणिहिता**—प्र+नि+धा+क्त कर्मणि', 'नेर्गदनद' नियम से नि का णि हो जाता है। (१२) **तैरेव**—एव 'ते' के साथ जायगा। तै का शस्त्र तथा रस से अभिप्राय है। (१३) **घातिता**—हन्+णिच+क्त कर्मणि। मया तै ते घातिता—अह तै तान् घातितवान्। 'ते' का तात्पर्य है—वर्वरक दारुवर्मा, अभयदत्त, प्रमोदक और बीभत्सक। यह शार्दूलविक्रीडित छन्द है। इस छन्द का लक्षण है—'सूर्याश्वैर्यदि म सजौ सततगा शार्दूलविक्रीडितम्'।

विराधगुप्तः—अमात्य ! तथापि प्रारब्धमपरित्याज्यमेव। पश्यतु—

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तगुणास्त्वमिवोद्वहन्ति ॥१७॥

अन्वय—नीचै विघ्नभयेन न खलु प्रारभ्यते। मध्या प्रारभ्य विघ्नविहताः (सन्त) विरमन्ति। त्वमिव उत्तमगुणा विघ्नै पुन पुन प्रतिहन्यमाना. अपि प्रारब्धम् उद्वहन्ति ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—मत्री जी ! अब तो चाहे जो कुछ भी हो, प्रारम्भ किया हुआ कार्य तो छोड़ने योग्य नही है। देखिए :—नीच पुरुष तो

विघ्नो के भय से कार्य को शुरू ही नही करते, मध्यम श्रेणी के लोग कार्य को प्रारम्भ करके विघ्नो के पडने से (कार्य के बीच में ही) रुक जाते हैं। परन्तु आप ऐसे श्रेष्ठ पुरुष कार्य को प्रारम्भ कर लेने पर विघ्नो से बार-बार परेशान किए जाने पर भी शुरू किए हुए कार्य को पूरा करके ही छोड़ते हैं।

Viradhagupta—Still, Minister, what is begun is not surely to be abandoned See—By people of inferior merit, nothing indeed is begun on account of fear of obstructions Average sort of people leave the work undone after commencing if stopped by obstructions People of high merit like thyself carry to completion what is undertaken even when being hindered again and again by obstructions

संस्कृत व्याख्या—अमात्य मन्त्रिन् तथापि विघ्ने उपस्थिते सत्यपि प्रारब्ध कार्यम् अपरित्याज्यम् एव न त्याज्यम् एव। पश्यतु अवलोकयतु—

नीचै अधमपुरुषै विघ्नभयेन बाधाभीत्या न खलु नैव प्रारभ्यते कर्म प्रस्तूयते। मध्या मध्यमप्रकारपुरुषा प्रारभ्य कार्यं हस्ते गृहीत्वा विघ्नविहता प्रत्यूहै बाधिता सन्त विरमन्ति निवर्तन्ते। त्वमिव भवानिव उत्तमगुणा श्रेष्ठगुणयुक्ता पुरुपा विघ्नै अन्तरायै पुन. पुन वार वार प्रतिहन्यमाना अपि बाध्यमाना अपि प्रारब्ध प्रस्तुत कार्यम् उद्वहन्ति पूर्णरूपेण सम्पादयन्तीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **प्रारब्धम्**—प्रक्रान्तम्, प्रस्तुतम्—प्र—आ√रभ्+क्त कर्मणि। शुरू किया हुआ। (२) **अपरित्याज्यम्**—परि+त्यज्+ण्यत् कर्मणि परित्याज्य—त्याग देने योग्य। न परित्याज्यम् अपरित्याज्यम् (नञ्तत्०)। (३) **विघ्न-भयेन**—वि√हन्+क करणे घञर्थे विघ्न तस्मात् भयम् पचमी तत्पु० तेन। हेतौ तृ०—विघ्न के भय से। (४) **विरमन्ति**—'व्याङ्परिभ्यो रम' नियम से परस्मैपद हुआ। (५) **त्वमिव उद्वहन्ति**—उद्+वह्+लट् अन्ति—पूर्ण करते हैं। तेलग के अनुसार+'परित्यजन्ति' नही छोडते है ऐसा पाठ होना चाहिए। परन्तु 'त्वमिवोद्वहन्ति' ही अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। यह पाठ दशरूपक से लिया गया है। सन्दर्भ के अनुसार दोनो ही पाठ उपयुक्त है। इस श्लोक मे पूर्णोपमा, व्यतिरेक और अप्रस्तुतप्रशसा अलकार है। वसन्ततिलका छन्द है।

अपि च—

किं शेषस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मां न क्षिपत्येष यत्
किं वा नास्ति परिश्रमो दिनपतेरास्ते न यन्निश्चलः।

किन्त्वङ्गीकृतमुत्सृजन् कृपणवच्छ्लाघ्यो जनो लज्जते
निर्व्यूढं प्रतिपन्नवस्तुषु सतामेतद्धि गोत्रव्रतम् ।।१८।।

अन्वय—शेषस्य वपुषि कि भरव्यथा न यदेष क्ष्मा न क्षिपति ? कि वा दिनपते परिश्रमो नास्ति यत् निश्चलो न आस्ते ? किन्तु श्लाघ्यो जनः अङ्गीकृत कृपणवत् उत्सृजन् लज्जते । हि प्रतिपन्नवस्तुषु निर्व्यूढम् एतत् सता गोत्रव्रतम् ।।१८।।

हिन्दी अनुवाद—और भी—क्या शेषनाग के शरीर पर पृथ्वी के भार से क्लेश नहीं होता है जो वे पृथ्वी को अपने सिर से उतार कर नही फेंक देते हैं ? अथवा दिन-रात चलने से सूर्य को क्या परिश्रम नही होता जो ये स्थिर नही होते हैं ? किन्तु उत्तम पुरुष अपने हाथ में लिए हुए कार्य को नीच के समान छोडते हुए शर्माता है। क्योकि स्वीकृत वस्तुओ के सम्बन्ध में निर्वाह करना अर्थात् उसका विधिपूर्वक पालन करना महापुरुषो के कुल का धर्म है।

Moreover, is there no pain of burden in the body of Shesha that he does not throw down the earth ? Or is there no fatigue for the sun that he does not stand motionless ? But (the fact is) a worthy man blushes by throwing up like a coward what is once undertaken Achievement in matters taken up is the family vow of the worthy

संस्कृत व्याख्या—शेषस्य नागराजस्य वासुके वपुषि देहे कि भरव्यथा पृथ्वी-भारवहनपीडा न भवति यत् यस्मात् एष शेष क्ष्मा पृथ्वी न क्षिपति शिरसा न अवतारयति ? अस्ति एव पृथ्वीभारवहनपीडा इत्याशय । कि वा दिनपते सूर्यस्य अविरतगमनात् 'परिश्रमो न' न भवति 'यत' एष 'निश्चल' अचल त्यक्तगमन सन् 'न आस्ते' एकतो न तिष्ठति, अस्त्येव परिश्रम इत्यर्थं । किन्तु वस्तुतस्तु 'श्लाघ्यो जन' प्रशसनीय पुरुष शेष इव सूर्य इव वा स्तुत्यो महापुरुष 'अङ्गी-कृत' स्वीकृत कर्म 'कृपणवत्' कापुरुष इव 'उत्सृजन् परित्यजन्' लज्जते जिह्रेति प्रतिपन्नवस्तुषु अङ्गीकृतवस्तुविषयेषु निर्व्यूढम् निर्वाह (भावे क्त) एतद्धि एतदेव सता साधूना गोत्रव्रतम् कुलधर्म । सन्त प्रारब्धम् अवश्यमेव समापयन्ति इत्यर्थं । तत् यतता भवान् मा भूत्ते विघ्ननिर्वेद ।

टिप्पणी

(१) **शेष**—पाताल मे सर्पो के राजा है जिनके सिर पर पृथ्वी का भार रक्खा हुआ है। यह बात पुराणो से विदित होती है। (२) **दिनपते· परिश्रमः—**

सूर्य को परिश्रम। ऐसा भाव अन्यत्र भी है—'शेषः सदैवाहितभूमिभारो भानुः सकृद् युक्ततुरङ्ग एव'। (३) उत्सृजन्—उद्√सृज्+शतृ हेतौ 'लक्षणहेत्वोः क्रियाया'। (४) श्लाघ्य.—प्रशंसनीय। श्लाघ्+ण्यत् कर्मणि—योग्य पुरुष। (५) निर्व्यूढम्—निर्+वि+वह्+क्त भावे पूर्ण करना। इस श्लोक मे अर्थान्तर-न्यास अलंकार उपमा अलंकार से संकीर्ण है। शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

राक्षसः—सखे! प्रारब्धमपरित्याज्यमिति प्रत्यक्षमेवैतद्भवताम्। ततस्ततः?

विराधगुप्तः—ततः प्रभृति चाणक्यहतकश्चन्द्रगुप्तस्य शरीरे सहस्रगुणमप्रमत्तः, एभ्य एव ईदृशं भवतीत्यन्विष्य निगृहीतवान् कुसुमपुरनिवासिनो युष्मदीयानाप्तपुरुषान्।

राक्षसः—(सोद्वेगम्) वयस्य! कथय कथय के के निगृहीताः?

विराधगुप्तः—अमात्य! आदावेव तावत् क्षपणको जीवसिद्धिः सनिकारं नगरान्निर्वासितः।

राक्षसः—(आत्मगतम्) एतावत् सह्यं, न निष्परिग्रहं स्थानपरिभ्रंशः पीडयिष्यति। (प्रकाशम्) सखे! कमपराधमुद्दिश्य निर्वासित एषः?

विराधगुप्तः—एष दुरात्मा राक्षसप्रयुक्तया विषकन्यया पर्वतेश्वरं घातितवानिति।

राक्षसः—(स्वगतम्) साधु कौटिल्य! साधु।

परिहृतमयशः पातितमस्मासु च घातितोऽर्धराज्यहरः।
एकमपि नीतिबीजं बहुफलतामेति यस्य तव ॥१६॥

अन्वय—अर्धराज्यहर घातित, अयश परिहृतम् अस्मासु पातितम् च। यस्य तव एकमपि नीतिबीजम् बहुफलताम् एति ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—मित्र, आप तो यह प्रत्यक्ष रूप से देख रहे हैं कि शुरू किया हुआ कार्य मेरे द्वारा अपरित्याज्य है अर्थात् मैंने उसे नही छोड़ा है अर्थात् पूरा करके ही रहूँगा।

विराधगुप्त—उसी समय से वह दुष्ट चाणक्य चन्द्रगुप्त की शरीर-रक्षा में इतना सावधान है कि कुछ पूछिये मत। इसीलिए तो इन लोगो से ऐसा-ऐसा हो सकता है—यह समझ कर कुसुमपुर के निवासी आपके विश्वासपात्र पुरुषो को उसने पकड रखा है।

राक्षस—(उद्विग्न होते हुए) मित्र बताओ, कौन-कौन से लोग पकड़ लिए गए हैं?

विराधगुप्त—मत्री! प्रारम्भ में ही तो क्षपणक जीवसिद्धि को लीजिए जो अपमान के साथ पाटलिपुत्र से बाहर निकाल दिया गया है।

राक्षस—(अपने मन में) यह तो किसी प्रकार सहा जा सकता है। बिना बाल-बच्चे वाले जीवसिद्धि को निष्कासन से क्या कष्ट होगा? (सुना कर) किस अपराध के कारण यह देश से निकाल दिया गया है?

विराधगुप्त—इसी ने राक्षस द्वारा नियुक्त की गई विषकन्या से पर्वतेश्वर का वध कराया था।

राक्षस—(अपने मन में) अच्छा, चाणक्य! अच्छा। अपने ऊपर से अपयश हटाकर हम लोगो के ऊपर लाद दिया; दूसरी ओर आधे राज्य के अधिकारी का भी प्राण ले लिया। उसकी कूटनीति के एक ही बीज से अनेक प्रकार के फल निकलते जा रहे हैं।

Rakshasa—Friend, that what is undertaken is not to be abandoned, is indeed before your eyes Next, what next ?

Viradhagupta—Cursed Chanakya, a thousand-fold more vigilant regarding the person of Chandragupta since then, has punished your trusted agents residing in the city, by turning them out, thinking that such things are happening through them alone

Rakshasa (with concern)—Tell me Oh tell me who are punished ?

Viradhagupta—First of all the mendicant Jivasiddhi was expelled from the city with indignities

Rakshasa (To himself)—This much is bearable. Expulsion from residence will not pain one who owns nothing (Aloud) Friend, for what offence is he banished

Viradhagupta—That he killed Parvateshvara with the poison-girl employed by Rakshasa

Rakshasa (To himself)—Bravo ! you Kautilya, Bravo ! You of whom even a single germ of polity attains the capacity to bear many fruits—The sharer of half the kingdom is dispensed with, the infamy odged and cast upon me too

संस्कृत व्याख्या—सखे मित्र प्रारब्धम् अपरित्याज्यम् न त्याज्यम् इति प्रत्यक्षम् चक्षुर्विषयम् एव एतत् इदम् भवताम्। तत. तत' एतस्मिन्नन्तरे किम्

अभवत्। तत प्रभृति तस्मात् कालात् एव चाणक्यहतक दुरात्मा चाणक्यः चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य शरीरे काये सहस्रगुणम् अप्रमत्त सावधान, एभ्य एव ईदृश भवति सजायते इति अन्विष्य ज्ञात्वा निगृहीतवान् दडितवान् कुसुमपुर-निवासिन पाटलिपुत्रजनान् युष्मदीयान् आत्मपुरुषान् विश्वस्तजनान् (सोद्वेगम्) वस्य सखे कथय कथय वद वद के के निगृहीता दण्डिता ? अमात्य मन्त्रिन् आदौ एव प्रारम्भे एव तावत् तु क्षपणक जीवसिद्धि इति नाम सनिकार अपमान-पूर्वकम् नगरात् निर्वासित निष्कासित। (आत्मगतम् स्वमनसि) एतावत् सह्य सहनयोग्यम् न निष्परिग्रह विभवहीन पीडयिष्यति क्लेशयिष्यति (प्रकाशं सर्वान् श्रावयित्वा) कम् अपराधम् उद्दिश्य कस्मात् दोषात् निर्वासित निष्कासित एष क्षपणक जीवसिद्धि। एष अय दुरात्मा दुष्ट राक्षसप्रयुक्तया राक्षस-नियुक्तया विषकन्यया पर्वतेश्वर घातितवान् इति हतवान् इति। (स्वगतम् स्वमनसि) साधु सुष्ठु कौटिल्य चाणक्य! साधु सुष्ठु। परिहृतम् नष्टम् अयश कलङ्क, पातितम् आरोपितम् च अस्मासु। घातित व्यापादित अर्धराज्यहर अर्धराज्यस्य भागी। यस्य तव एकमपि अद्वितीयमपि नीतिबीज जीवसिद्धि-निष्कासनात्मको नीतिहेतु बहुफलताम् एति गच्छति। प्रायश —एकेन प्रयोगेण त्वया त्रीणि फलानि साधितानि वयन्तु बहूनि अपि प्रयुज्य चन्द्रगुप्तवधरूपम् एकमपि न साधयाम। तत् श्लाघ्योऽसि त्व हताश्च वयम् इति निर्वेद।

टिप्पणी

(१) **प्रत्यक्षम्**—अक्ष—इन्द्रिय। अक्षाणि प्रतिगत प्रत्यक्षम् अक्ष्णो· आभिमुख्यम् इत्यर्थे (अव्ययीभाव स०), 'प्रतिपरसमनुभ्यो ऽक्ष्ण' इति सूत्रेण समासान्तटच्प्रत्यय। (२) **सहस्रगुणम्**—सहस्र गुणा यस्मिन् कर्मणि तत् यथा तथा। सहस्र का अर्थ ठीक हजार ही नही है। (३) **युष्मदीयान्**—युष्माकम् इमे इति युष्मद्+छ—ईय। (४) **निष्परिग्रहम्**—परिगृह्यते इति परि+ग्रह्+अप् कर्मणि परिग्रह—सामान। निरस्त परिग्रह अनेन बहु व्री०—जिसके पास कुछ वस्तु न हो। "इदुदुपधस्य" इति षत्वम्। आप्तपुरुषान्—विश्वस्त-जनान्। (५) **अर्धराज्यहर**—आधा राज्य का अधिकारी। अर्द्धञ्च तत् राज्यम् अर्धराज्यम् (कर्म० धा०), हरतीति हर हृ+अच् कर्तरि, अर्धराज्यस्य हर षष्ठी तत्पु०। (६) **बहुफलताम्**—बहूनि फलानि यस्य स बहुफल बहुव्रीहि स०। तस्य भाव तत्ता, ताम्। यहाँ पर चाणक्य की नीति के बीज से

तीन प्रकार के फलो की प्राप्ति हुई। (१) आधे राज्य का पाने वाला मार डाला गया। (२) बदनामी दूर हो गई। (३) बदनामी हम लोगो के ऊपर डाली गई। इस श्लोक मे काव्यलिग अलकार है, और आर्या छन्द है।

(प्रकाशम्) ततस्ततः ?

विराधगुप्तः—ततश्चन्द्रगुप्तशरीरमभिद्रोग्धुमनेन व्यापारिता दारुवर्मादय इति नगरे प्रख्याप्य शकटदासः शूलमारोपितः।

राक्षसः—(सास्रम्) हा सखे! शकटदास! अयुक्तस्तवायमीदृशो मृत्युः!! अथवा, स्वाम्यर्थमुपरतो न शोच्यस्त्वमसि; वयमेवात्र शोच्याः—ये नन्दकुलविनाशेऽपि जीवितुमिच्छामः।

विराधगुप्तः—अमात्य! स्वाम्यर्थ एव साधयितव्य इति प्रयतसे।

राक्षसः—सखे!—

अस्माभिरमुमेवार्थमालम्ब्य न जिजीविषाम्।
परलोकगतो देवः कृतघ्नैर्नानुगम्यते ॥२०॥

अन्वय—अमुमेव अर्थ न जिजीविषाम् आलम्ब्य, कृतघ्नै अस्माभि परलोकगतो देवो न अनुगम्यते ॥२०॥

हिन्दी अनुवाद—(सब को सुनाकर) इसके बाद क्या हुआ?

विराधगुप्त—तब चन्द्रगुप्त की हत्या के लिए दारुवर्मा इत्यादि को ठीक करना इसी का कार्य था, इस प्रकार की ख्याति पाटलिपुत्र भर मे कराकर शकटदास को शूली पर चढा दिया गया।

राक्षस—(आँखो में आँसू भरे हुए) हाय मित्र! शकटदास! तुम्हारी इस प्रकार की मृत्यु उचित नही है। अथवा स्वामी के लिए तुमने अपने प्राण समर्पण कर दिए, तुम शोक करने योग्य नही हो, हम लोग यहाँ शोक करने योग्य हैं, जो नन्दकुल के नष्ट हो जाने पर भी जीवित रहना चाहते हैं।

विराधगुप्त—मत्री! स्वामी का ही प्रयोजन सिद्ध हो, इसलिए आप प्रयत्न कर रहे हैं।

राक्षस—मित्र! जीने की इच्छा से नही बल्कि इसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए अकृतज्ञ हम लोग मरे हुए स्वामी का अनुसरण नही कर रहे हैं।

(Aloud) Next, what next

Viradhagupta—Next, Shakatadas was put to the stake (by Chanakya) proclaiming in the city that Daruvarman and others had been employed by him to injure the person of Chandragupta

Rakshasa (With tears)—Alas ! Friend Shakatadas, such a death is extremely unfit for you Or, dead in master's cause, you are not to be pitied We, who long to live even at the extinction of the Nanda family are alone to be pitied

Viradhagupta—Minister, you are exerting solely because master's cause has to be served

Rakshasa—Friend Si e gone to the other world is not being followed by us ungrateful as we are, clinging not to a desire to live, but to this very object

संस्कृत व्याख्या—(प्रकाशम् सर्वान् श्रावयित्वा) तत तत एतस्मिन्नन्तरे किम् ? तत एतस्मिन्नन्तरे चन्द्रगुप्तशरीरम् मौर्यकायम् अभिद्रोग्धुम् नाशयितुम् अनेन अमुना व्यापारिता नियुक्ता दारुवर्मादय दारुवर्माप्रभृतय इति नगरे नगर्याम् प्रख्याप्य उद्घोष्य शकटदास शूलम् आरोपित स्थापित । (सास्रम् अश्रुभि सह) हा मित्र शकटदास ! अयुक्त अनुचित तव अयम् एषः ईदृश एतादृक् मृत्यु प्राणनाश । अथवा स्वाम्यर्थम् स्वामिकार्यार्थम् उपरतः मृत न शोच्य शोचनीय. त्वम् असि वयम् एव अत्र अस्मिन् संसारे शोच्याः शोचनीया —ये नन्दकुलविनाशेऽपि विनष्टेऽपि नन्दवंशे जीवितुम् प्राणधारण कर्तुम् इच्छाम वाञ्छाम । अमात्य मन्त्रिन् स्वाम्यर्थं स्वामिकार्यम् एव साधयितव्यः सम्पादनीय. इति प्रयतसे प्रयत्न करोषि। सखे मित्र अमुम् एव उक्तरूपमेव अर्थं प्रयोजनम्, न जिजीविषाम् प्राणधारणेच्छाम् आलम्ब्य आश्रित्य कृतघ्नैः कृतोपकारानभिज्ञैः अस्माभि परलोकगत लोकान्तरे प्राप्त देव स्वामी नन्द इत्यर्थं न अनुगम्यते न अनुम्रियते ।

टिप्पणी

(१) **शूलमारोपित**—शूलम् आरोपित—शूली पर चढा दिया गया। (२) **अभिद्रोग्धुम्**—अभिजिघांसितुम्—मारने की इच्छा से। अभि+द्रुह्+तुमुन्। (३) **अयुक्तरूप**—अतिशयेन अयुक्त इति अयुक्त+रूपप् प्रशंसायाम्। (४) **शोच्य.**—अवश्यम् शोचनीय इति शुच्+ण्यत् कर्मणि "ण्य आवश्यक" इति कुत्व न। (५) **स्वाम्यर्थ**—स्वाम्यर्थं साधयितव्य इति एव प्रयतसे—स्वामी का

कार्य सिद्ध होगा इसलिए प्रयत्न कर रहे हो (अन्यथा जीवन त्याग देते)। (६) जिजीविषाम्—जीवितुमिच्छा इति जीव+सन् अ भावे जिजीविषा जीने की इच्छा—नाम्। "आलम्व्य" का कर्म है। (७) कृतघ्नैः—कृ+क्त कर्मणि कृतम्—की गई सेवा अर्थात् किया गया उपकार तत् हन्ति विस्मरणेन इति कृत+हन्+क कर्तरि 'मूलविभुजादिभ्य क' इत्यनेन+कृतघ्ना। उपकार न मानने वाले, अकृतज्ञ। इस श्लोक मे काव्यलिग और परिसख्या अलकारो की ससृष्टि है, अनुष्टुप् छन्द है।

विराधगुप्तः—अमात्य ! नैतदेवम्। (अस्माकममुमेवार्थ-मित्यादि पुनः पठति।)

राक्षसः—सखे ! कथ्यतामपरस्यापि सुहृद्व्यसनस्य श्रवणे सज्जोऽस्मि।

विराधगुप्तः—तत एतदुपलभ्य चन्दनदासेनोपारूढसाध्व-सेनापवाहितममात्यकलत्रम्।

राक्षसः—सखे ! क्रूरस्य चाणक्यवटोः विरुद्धमयुक्तमनु-ष्ठितं चन्दनदासेन।

विराधगुप्तः—ननु अयुक्ततरः सुहृद्द्रोहः।

राक्षसः—ततस्ततः ?

विराधगुप्तः—ततो याच्यमानेनापि यदा न समर्पितम-नेनाऽमात्यकलत्रं ततः कुपितेन चाणक्यवटुना।

राक्षसः—(सोद्वेगं) स खलु व्यापादितः ?

विराधगुप्तः—अमात्य ! न खलु व्यापादितः, किन्तु गृहीतगृहसारः सपुत्रकलत्रः संयम्य बन्धनागारे निक्षिप्तः।

राक्षसः—ततः किं परितुष्टः कथयसि—'अपवाहितमनेन राक्षसकलत्रम्' इति। ननु वक्तव्यं 'संयतः सकलत्रो राक्षसः' इति।

हिन्दी अनुवाद—विराधगुप्त—मंत्री। ऐसी बात नही है। 'अस्माकम-मुमेवार्थमित्यादि' श्लोक फिर पढता है।

राक्षस—बताओ, दूसरे मित्र की भी विपत्ति सुनने को प्रस्तुत हूँ।

विराधगुप्त—तब शकटदास की घटना का समाचार सुनकर चन्दनदास ने भयभीत होकर अमात्य के परिवार को कहीं दूसरी जगह भेज दिया।

राक्षस—चन्दनदास ने उस दुष्ट चाणक्य के विरुद्ध यह अनुचित कार्य किया।

विराधगुप्त—निश्चय ही मित्रता का न निभाना इससे भी अधिक अनुचित होता।

राक्षस—इसके बाद ?

विराधगुप्त—जब इसके द्वारा माँगे जाने पर भी अमात्य का परिवार न सौंपा गया तो दुष्ट चाणक्य ने क्रुद्ध होकर।

राक्षस—(उद्विग्न होकर) क्या वह मार डाला गया ?

विराधगुप्त—मंत्री ! मार तो नही डाला गया, किन्तु उसकी सारी धन-सम्पत्ति छीन ली गई और वह जेल में डाल दिया गया।

राक्षस—तब बहुत खुश होकर क्यो कह रहे हो 'कि इसके द्वारा राक्षस का परिवार दूसरी जगह हटा दिया गया', ऐसा कहना चाहिए कि 'परिवार सहित राक्षस पकड लिया गया' ऐसा।

Minister—(This is not so, gone to Rakshas the other-world to this very object—repeats) Speak, I am prepared to listen to other disasters also to friends

Viradhagupta—Hearing of this, Minister's wife was sent away by Chandandasa

Rakshasa—What is done by him is improper, being adverse to the cruel Chanakya

Viradhagupta—But Minister, injury to a friend is still more improper

Rakshasa—Next, what next

Viradhagupta—Next, when he did not give up minister's wife even on being requested, then by the enraged brat Chanakya, he was—

Rakshasa (In alarm)—Not surely killed !

Viradhagupta—Indeed not, cast into prison with son and wife and with all valuables in the house seized

Rakshasa Then why do you say with satisfaction that Rakshas's wife was sent away ? Really you should say Rakshasa is restrained with wife and children

टिप्पणी

(१) सज्ज·—तैयार। सस्ज्+अच्, विभक्तिकार्यम्। (२) एतदुपलभ्य—एतत् का आशय शूलारोपणम् नही बल्कि शूलारोपणार्थ—ग्रहणम्। (३) अप-वाहितम्—अप+वह्+णिच्, क्त कर्मणि—हटाया गया। (४) सुहृद्द्रोहः—

मित्र के विरुद्ध आचरण। सुष्ठु हृदयमस्य इति सुहृत् (बहुव्रीहि स०), हृदयस्य हृदादेश। तस्मै द्रोह (सुप्सुपा स०)। (५) गृहीतगृहसार —गृहस्य सार श्रेष्ठवस्तु गृहसारम् गृहीत गृहसारमस्य। (६) बन्धनागारे—बन्ध्+ल्युट् अधिकरणे बन्धनञ्च तदगारञ्च (द्वन्द्व स०)। (७) प्रतीहारभूमिम्—फाटक। (८) स्यात् —सम्भावनाया लिङ्। (९) भव्यम्—भवति इति भू+यत् कर्तरि 'भव्यगेय'— इत्यादिसूत्रेण निपातनात् सिद्धम्। (१०) उपारूढसाध्वसेन—उपारूढ समुत्पन्नं साध्वस भय यस्य स उपारूढसाध्वस बहुव्रीहि स० तेन। (११) अयुक्ततर — अतिशयेन अनुचित। (१२) अस्माकममुमेवार्थम्—इसका तात्पर्य है कि स्वामी का कार्य सम्पन्न किए विना उसका अनुगमन करने वाले कृतघ्न होते है, आप तो स्वामी का कार्य सम्पन्न करने के लिए जीवित है, अत आप कृतघ्न नही है।

(प्रविश्य पटाक्षेपेण पुरुषः) जेदु अमच्चो। अज्ज! एसो क्खु सअडदासो पडिहारभूमिमुवत्थिदो (जयत्वमात्यः। आर्य! एष खलु शकटदासः प्रतिहारभूमिमुपस्थितः।)

राक्षसः—प्रियंवदक! अपि सत्यम्?

प्रियंवदकः—किं अलिअं अमच्चपादेसु विणिवेदेमि? (किमलीकममात्यपादेषु विनिवेदयामि?)

राक्षसः—सखे! विराधगुप्त! कथमेतत्?

विराधगुप्तः—अमात्य! स्यादेतदेवं यतो भव्यं रक्षति भवितव्यता।

राक्षसः—प्रियंवदक! यद्येवं, तत् किं चिरयसि? क्षिप्रं प्रवेशय तम्।

प्रियंवदकः—जं अमच्चो आणवेदि त्ति। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्तः।)

(ततः प्रविशति सिद्धार्थकेनानुगम्यमानः शकटदासः।)

शकटदासः—(दृष्ट्वा स्वगतम्)—

दृष्ट्वा मौर्यमिव प्रतिष्ठितपदं शूलं धरित्र्यास्तले
तल्लक्ष्मीमिव चेतसः प्रमथनीमुन्मुच्य वध्यस्रजम्।

श्रुत्वा स्वाम्युपरोधरौद्रविषमानाध्माततूर्यस्वनाद्
न ध्वस्तं प्रथमाभिघातकठिनं मन्ये मदीयं मनः ।।२१।।

अन्वय—मन्ये प्रथमाभिघातकठिन मदीय मन मौर्यमिव धरित्र्यास्तले प्रतिष्ठितपद शूल दृष्टवा तल्लक्ष्मीमिव चेतस प्रमथनी वध्यस्रजम् उन्मुच्य स्वाम्युपरोधरौद्रविषमान् आध्माततूर्यस्वनान् श्रुत्वा न ध्वस्तम् ।।२१।।

हिन्दी अनुवाद—(पर्दे को हटाते हुए एक सेवक का प्रवेश) अमात्य की जय हो, आर्य, यह शकटदास दरवाजे पर उपस्थित है।

राक्षस—प्रियवदक, क्या यह बात सत्य है?

प्रियवदक—क्या अमात्य के आगे असत्य बोलूँगा?

राक्षस—सखे विराधगुप्त, यह कैसी बात है?

विराधगुप्त—अमात्य! सभवत. यह ऐसा हो कि भाग्य ने उन्हे बचा दिया हो।

राक्षम—प्रियंवदक—अगर ऐसी ही बात है तो देर क्यो कर रहे हो? जल्दी अन्दर ले आओ।

प्रियवदक—जैसी अमात्य आज्ञा दें। (ऐसा कहकर बाहर निकलता है) (तब सिद्धार्थक के द्वारा अनुगमन किया जाता हुआ शकटदास अन्दर प्रवेश करता है।)

शकटदास—देखकर (अपने मन मे) मैं समझता हूँ कि पहले की चोटों से कठोर बना हुआ मेरा हृदय चन्द्रगुप्त के समान पृथ्वी के अन्दर गडे हुए मूल भाग वाले शूल-दड को देखकर और उस चन्द्रगुप्त की लक्ष्मी की तरह हृदय को नष्ट करने वाली वध-सूचक माला को पहन कर स्वामी की हत्या के समान भयकर तथा कानों को कठोर लगने वाली बजाई गई तुरही के शब्दो को सुन कर टुकडे-टुकडे नही हो गया।

(Entering) Let minister prosper Here is Shakatadasa come at the site of the gate

Rakshasa—Is that true, my good man ?

Priyamvadak—Should I report an untruth unto revered minister ?

Rakshasa—Friend Viradhagupta, how is this ?

Viradhagupta—Minister, it might be so for fate guards the blessed

Rakshasa—Priyamvadaka if it so, why are you making delay even now ? Bring him in quickly

Priyamvadaka—What orders the minister (exit)

(Now enter Shakatadas followed by Siddharthaka)

Shakatadasa (Seeing, to himself)—I think that my mind, hardened by the previous blows, was not unnerved on seeing

the stake like Maurya with its foot firmly planted on the surface of the earth suspending from the head the garland that takes away sense like the fortune of the same (Maurya), and hearing the beating of the drums of execution grim and discordant like the news of Master's death

सस्कृत व्याख्या—मन्ये तर्कयामि प्रथमाभिघातकठिन प्रथमा पूर्वप्राप्ता ये अभिघाना प्रहारा तै कठिन घनीभूत मदीय मम मन हृदय मौर्यमिव चन्द्रगुप्तमिव धरित्र्या वसुन्धराया नले पृष्ठे प्रतिष्ठितपद बद्धमूल शूल वधार्थलौहदण्ड दृष्ट्वा अवलोक्य नल्लक्ष्मीमिव चन्द्रगुप्तश्रियमिव चेतस हृदयस्य प्रमथनी विदारणी वध्यस्रज वध्यचिह्नभूता रक्तकुसुममाला, उन्मुच्य परिधाय स्वाम्युपरोधरौद्रविषमान् स्वामिन प्रभो नन्दस्य य उपरोध हिसा तदिव रौद्रान घोरान् विषमान् कर्कशान् आध्माततूर्यस्वनान् ताडितडिण्डिमशब्दान् श्रुत्वा आकर्ण्य न विदीर्णम् न द्विधा भूतम् ।

टिप्पणी

(१) **शकटदास**—प्रियवदक राक्षस का प्राचीन सेवक था, जो शकटदास को अच्छी तरह से जानता था। इसीलिए वह यह नाम लेकर सूचित करता है। (२) **प्रतिहारभूमिम्**—दरवाजे पर 'द्वाद्वरि प्रतीहार' इत्यमर । (३) **चिरयसि**—चिर बहुत देर। चिर करोषि इति चिर+णिच् (नाम धातु)+लट् तिप् "चिरायते खलु आवृत्त"। (४) **प्रमथनीम्**—कुचलने वाली। प्रमथ्यते अनया इति प्र+मथ्+ल्युट् करणे प्रमथनी। प्रमथितु शीलम् अस्या इति प्र+मथ्+घिनुण् कर्तरि प्रमाथिनी शुद्ध है, परन्तु इसमे छद भग हो जाता है। मेरा सिर चक्कर खाता है, मौर्य के भाग्य को देखकर मेरी चेतना नष्ट हो जाती है। मुझे इसका प्रतिदिन सामना करना पडता है, इसलिए मृत्यु की माला पहन कर मै प्रतिदिन स्थिर खडा रहता हूँ। (५) **भवितव्यता**—होनी, भाग्य। भू+तव्यत्+क्त+टाप् (६) **सखे विराधगुप्त**—आश्चर्य तथा आनन्द के सागर मे हिलोरें लेता हुआ भावुक राक्षस यह भूल गया है कि जिस प्रियवदक के सामने अभी कुछ क्षण पूर्व विराधगुप्त के असलियत को छिपाने का ढोग किया था उसी के सामने अब सब प्रकट हो जाने दे रहा है। यह है राक्षस की दुर्बलता। (७) **स्रजम्**—वध के पूर्व अपराधी को माला पहना दी जाती है। (८) **स्वाम्युपरोध**—उप+रुध्+घञ् भावे उपरोध—रुकावट, घेरा, यहाँ इसका अर्थ 'हिसा'—

मृत्यु है। विभिन्ना समेभ्य विषमा 'सुविनिर्दुर्भ्यः सुपिसूतिसमा" इति षत्वम्; रौद्र—देखने मे, विषम मे। रौद्राश्च ते विषमाश्च कर्मधा—स्वाम्युपरोधेन रौद्रविषमा—स्वामी की हिंसा से भयकर और विषम। उप√रुध्+घञ् भावे उपरोध। (९) ध्वस्तम्—नष्ट, ध्वस्+क्त कर्तरि (१०) प्रथमाभिघात—पहले की चोटे (११) मौर्यप्रतिष्ठा, मौर्यलक्ष्मीस्थिरता, स्वामिनाश। (१२) आघात—आ सम्यक् हननम् इति आ+हन्+घञ् भावे आघात। तस्य तूर्यं, तस्य स्वनान्, 'श्रुत्वा' का कर्म। इस पद्य मे काव्यलिग, उत्प्रेक्षा और उपमा अलकारो की मसृष्टि है, इसमे शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(नाट्येनावलोक्य सहर्षम्) अयममात्यराक्षसस्तिष्ठति। य एषः,—

अक्षीणभक्तिः क्षीणेऽपि नन्दे स्वाम्यर्थमुद्वहन्।
पृथिव्यां स्वामिभक्तानां प्रमाणे परमे स्थितः ॥२२॥

अन्वय—नन्दे क्षीणेऽपि अक्षीणभक्ति स्वाम्यर्थम् उद्वहन् पृथिव्या स्वामिभक्ताना परमे प्रमाणे स्थित ॥२२॥

हिन्दी अनुवाद—(अभिनय के साथ देखकर प्रसन्नतापूर्वक) यह मंत्री राक्षस है, जो कि नन्द के नष्ट हो जाने पर भी स्वामी के प्रति पूर्ण भक्ति रखते हुए तथा स्वामी के कार्य को करते हुए पृथ्वी पर स्वामिभक्तो के प्रथम श्रेणी में स्थित है।

(Advancing and noticing with joy) Here is Minister Rakshasa who, even at the demise of Nanda, upholding the master's cause with unabated devotion, stands in the world at the supreme measure of those who are devoted to their masters

संस्कृत व्याख्या—य एष नन्दे क्षीणे अपि मृते अपि स्वयम् अक्षीणा 'अपरिहीना भक्ति' यस्य तादृश सन् 'स्वामिनो' नन्दस्य अर्थ कार्यम् 'उद्वहन्' धारयन् 'पृथिव्या' जगति स्वामिनि प्रभौ ये भक्ता अनुरक्ता तेषा परमे सर्वाधिके 'प्रमाणे' मात्राया 'स्थित वर्तमानो दृश्यते'। आत्मदृष्टान्तेन इय हि स्वामिभक्ते· परमा मात्रा इत्युपदिशति इव इत्यर्थ।

टिप्पणी

(१) **अक्षीण**—क्षि+क्त कर्तरि क्षीण—नष्ट हुआ। न क्षीणम् अक्षीणम्, सामान्ये नपुसकम्, तादृश भक्तिर्यस्य। (२) **क्षीणे**—क्षि+क्त कर्तरि क्षीणः

स्थित —मरा हुआ। (३) उद्वहन्—धारण करता हुआ। उद्+वह्+शतृ। (४) प्रमाणे—प्रमीयते अनेन इति प्र+मा+ल्युट् करणे प्रमाणम्। (५) परमे प्रमाणे—सबसे ऊँची कोटि मे, राक्षस प्रथमश्रेणी का स्वामिभक्त था। इस श्लोक मे विभावना अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

(उपसृत्य) जयत्वमात्यः।

राक्षसः—(विलोक्य सहर्षम्) सखे शकटदास! दिष्ट्या कौटिल्यगोचरगतोऽपि दृष्टोऽसि, तत् परिष्वजस्व माम्।

(शकटदासस्तथा करोति)

राक्षसः—(तं परिष्वज्य) इदमत्रासनमास्यताम्।

शकटदासः—यदाज्ञापयत्यमात्यः। (इति नाट्येनोपविष्टः।)

राक्षसः—सखे शकटदास। अथ कोऽयमीदृशस्य मे हृदयानन्दस्य हेतुः?

शकटदासः—(सिद्धार्थकं निर्दिश्य) अमात्य! प्रियसुहृदा सिद्धार्थकेन घातकान् विद्राव्य वधस्थानादपवाहितोऽस्मि।

राक्षसः—(सहर्षम्) भद्र सिद्धार्थक! काममपर्याप्तमिदमस्य प्रियस्य, तथापि गृह्यताम्। (इति स्वगात्रादवतार्य भूषणानि प्रयच्छति।)

सिद्धार्थकः—(गृहीत्वा पादयोर्निपत्य स्वगतम्) अअं क्खु अज्जोबदेसो। होदु। तह करिस्सम्। (प्रकाशम्) अमच्च! एत्थ मे पढमप्प बिट्ठस्स णत्थि कोबि परिचिदा, जहिं पदं अमच्चस्स प्पसादं णिक्खिबिअ णिब्बुदो भविस्सं; ता इच्छामि अहं इमाए मुद्दिआए मुद्दिदं अमच्चस्स ज्जेब भाण्डागारे णिक्खिबिदुं। जदा मे एदिणा प्पओअणं भविस्सदि, तदा गेह्णिस्सं। (अयं खलु आर्योपदेशः। भवतु। तथा करिष्यामि। अमात्य! अत्र मे प्रथमप्रविष्टस्य नास्ति कोऽपि परिचितः,

यत्रेममात्यस्य प्रसादं निक्षिप्य निर्वृत्तो भविष्यामि; तदिच्छाम्यमेतया मुद्रया मुद्रितममात्यस्यैव भाण्डागारे निक्षेप्तुम्। यदा मे एतेन प्रयोजनं भविष्यति, तदा ग्रहीष्यामि।)

हिन्दी अनुवाद—(पास जाकर) मंत्री की जय हो।

राक्षस—(देखकर खुशी के साथ) मित्र शकटदास, भाग्य से चाणक्य की दृष्टि में पड़ जाने पर भी दिखाई पड़े हो, तो मुझे छाती से लगाओ।
(शकटदास वैसा करता है।)

राक्षस—(उसे छाती से लगाकर) यह यहाँ पर आसन है, बैठिए।

शकटदास—मंत्री जी जो आज्ञा देते हैं (इस प्रकार अभिनय के साथ बैठ जाता है।)

राक्षस—मित्र शकटदास! तो यह कौन है जो इस प्रकार मेरे हृदय के आनन्द का कारण है?

शकटदास—(सिद्धार्थक की ओर इशारा करके) अमात्य, प्यारे मित्र सिद्धार्थक ने वधिकों को डरा-धमका कर मुझे वध-स्थान से दूर कर दिया।

राक्षस—(प्रसन्नता के साथ)! महाशय सिद्धार्थक, यद्यपि मेरी खुशी के समान यह जो कुछ तुम्हें दे रहा हूँ, नहीं है, फिर भी इसे ग्रहण कर लो।
(इस प्रकार कहकर अपने शरीर से उतार कर आभूषण देता है)

सिद्धार्थक—(आभूषणों को लेकर, राक्षस के पैर पर गिरकर) (अपने मन में) यह निश्चय ही आर्य चाणक्य की आज्ञा है। अच्छा, वैसा ही करूँगा। (सुनाकर) मंत्री जी, मैं पहिली ही बार यहाँ आ रहा हूँ कोई मेरा परिचित नहीं है, जिस जगह अमात्य का दिया हुआ यह पारितोषिक धरोहर के तौर पर रख दूँ और शान्त हो जाऊँ। मैं तो यही चाहता हूँ कि अमात्य के ही खजाने में यह इस मुद्रा से मुद्रित कर दिया जाय और रख दिया जाय। जब मुझे इसकी जरूरत पड़ेगी तो मैं इसे ले लूँगा।

(Approaching) Let Minister prosper

Rakshasa (Noticing with joy)—Friend Shakatadasa, luckily you are seen again, though you fell into the clutches of Kautilya, so embrace me (Shakatadasa does as told)

Rakshasa (Embracing long)—Here is a seat, sit down (Shakatadasa acts sitting) Well friend Shakatadasa, who is the author of such delight to my heart ?

Shakatadasa (Pointing to siddharthak)—I have been led away from the place of execution by this dear friend Siddharthaka, who put the executioners to flight

Rakshasa (With joy)—Good Siddharthaka, this is not enough for such pleasure ? Still let it be accepted (offers jewellery taking them off from his own person)

Siddharthaka (Accepting and falling down at his feet, to himself)—Such are noble master's instructions Well, I will act accordingly (Aloud) Minister, a new comer here, I have no acquaintance with whom having deposited this gift of minister I may feel relieved So I wish to have it placed in minister's treasury stamped with his seal I shall take back when I need it

टिप्पणी

(१) **परिष्वजस्व**—परि+स्वञ्ज्+लोट्—स्व—"उपसर्गात् सुनोति—इनि षत्वम्"। (२) **कोऽस्य मे**—हेतु—कर्ता है, तुम्हे फिर से देखने के लिए मै किसका ऋणी हूँ। (३) **घातकान्**—घ्नन्ति इति हन्+ण्वुल् कर्तरि घातका—प्राण लेने वाले। (४) **विद्राव्य**—वि+द्रु+णिच्+ल्यप्—भगाकर। (५) **अपहृत**—दूर ले जाया गया। (६) **कौटिल्यगोचरगतः**—कौटिल्यस्य गोचर, त गत—चाणक्यसमीपम् प्राप्त इत्यर्थ—चाणक्य के पास जाकर। (७) **आर्योपदेश**—आर्य (चाणक्य) का उपदेश है। ध्यान रहे कि सिद्धार्थक वस्तुत चाणक्य का मित्र एव गुप्तचर है। इस कथन का सम्बन्ध प्रथम अङ्क मे उस स्थल मे है जहाँ चाणक्य उससे कहता है—'तस्माच्च सुहृत्प्राणपरितुष्टात् पारितोषिक ग्राह्यम्'। (८) **प्रसादम्**—कृपा, प्र+सद्+घञ् भावे+प्रसाद तम्। (९) **निर्वृत्त**—प्रसन्न। निर् वृत्+क्त कर्तरि। (१०) **भाण्डागारे**—खजाने मे, भाण्डस्य आगारम् तस्मिन्।

राक्षसः—भद्र! भवतु, को दोषः? शकटदास! एवं क्रियताम्।

शकटदासः—यदाज्ञापयतीति। (मुद्रां विलोक्य जनान्तिकम्) अमात्य! भवन्नामाङ्कितेयं मुद्रा।

राक्षसः—(विलोक्य सविषादं सवितर्कमात्मगतम्) सत्यं नगरात् निष्क्रामतो मम हस्ताद् ब्राह्मण्या उत्कण्ठाविनोदार्थं गृहीता, तत् कथमस्य हस्तमुपगता? (प्रकाशम्) भद्र सिद्धार्थक! कुतस्त्वयेयमधिगता?

सिद्धार्थकः—अमच्च! अत्थि कुसुमपुरणिवासी मणिआरसेठी चन्दणदासो णाम। तस्स गेहदुआरे भूमिए पड़िदा,

मए समासाहिदा। (अमात्य! अस्ति कुसुमपुरनिवासी मणिकारश्रेष्ठी चन्दनदासो नाम। तस्य गेहद्वारे भूमौ पतिता, मया समासादिता।)

राक्षसः—युज्यते।

सिद्धार्थकः—अमच्च! किं एत्थ जुज्जदि? (अमात्य! किमत्र युज्यते?)

राक्षसः—भद्र! यतो महाधनानां गृहे पतितस्यैवंविध-स्योपलब्धिरिति।

शकटदासः—सखे सिद्धार्थक! अमात्यनामाङ्कितेयं मुद्रा। तदितो बहुतरेणार्थेन भवन्तममात्यस्तोषयिष्यति। तद् दीयतामेषा मुद्रा।

सिद्धार्थकः—अज्ज! एसो मे परितोसो, जं अमच्चो इमाए मुद्दाए परिग्गहप्पसादं करेदि त्ति। (आर्य! एष मे परितोषो, यदमात्योऽस्या मुद्रायाः परिग्रहप्रसादं करोतीति।) (इति मुद्रां समर्पयति।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—महाशय! हाँ, इसमें क्या दोष है? शकटदास, इस प्रकार किया जाना चाहिए।

शकटदास—जो आज्ञा हो। (मुद्रा को देखकर धीरे से कान में) मंत्री, आपके नाम से अंकित की गई यह मुद्रा है।

राक्षस—(देखकर चिन्ता और सन्देह के साथ मन में) सचमुच, नगर से बाहर निकलते हुए मेरे हाथ से ब्राह्मणी ने सान्त्वना के लिए (यह मुद्रा) ले ली थी। तो इसके हाथ में कैसे आ गई? (प्रकट) महाशय, सिद्धार्थक, तुमने इसे कहाँ से प्राप्त किया?

सिद्धार्थक—मन्त्री, पाटलिपुत्र का निवासी सेठ जौहरी चन्दनदास है। उसके घर के दरवाजे पर गिरी हुई थी, मैंने (वही) पाई।

राक्षस—ठीक है।

सिद्धार्थक—मन्त्री, इसमें क्या ठीक है?

राक्षस—महाशय धनसेठों के घर में गिरी हुई ऐसी चीज मिल सकती है।

शकटदास—मित्र सिद्धार्थक! यह मुद्रा मन्त्री के नाम से अंकित है। इसलिए इससे बहुत ज्यादा धन से अमात्य आपको सन्तुष्ट करेंगे। इसलिए यह मुद्रा उन्हें दे दीजिए।

सिद्धार्थक—आर्य, मैं इसी से सन्तुष्ट हूँ कि मंत्री जी इस मुद्रा को स्वीकार करने की अनुकम्पा कर रहे है, (ऐसा कहकर मुद्रा दे देता है)।

टिप्पणी

(१) **जनान्तिकम्**—अन्तिक—समीप। जनानाम् अन्तिकम् तत् यथा तथा—इस प्रकार से कि और जो दूसरे लोग मौजूद हो वे न सुन सके। (क्रिया-विशेषण) इसका लक्षण यह है 'जनान्तिके तु तत्प्रोक्त यत्तृतीयाद्यगोचरम्'। साहित्यदर्पण मे इसकी परिभाषा इस प्रकार है—'त्रिपताककरेणान्यानपवार्यान्तरा कथाम्। अन्योन्यामन्त्रण यत्स्यात्तज्जनान्ते जनान्तिकम्॥' (२) **उत्कण्ठा-विनोदार्थम्**—उद्+कण्ठ्+अ भावे उत्कण्ठा, तस्या विनोद तस्मै इदम्, नित्य चतु० तत्पु० 'अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता च वक्तव्या"—बेचैनी दूर करने के लिए। (३) **अधिगता**—प्राप्ता—मिली। (४) **समासादिता**—प्राप्ता। सम—आ√सद्+णिच्+क्त टाप। (५) **महाधनानाम्**—बहुत अधिक धनी लोगो के। महान्ति धनानि एषाम् इति महाधना बहुव्रीहि स० तेषाम्। (६) **उपलब्धि**—प्राप्ति—उप+लभ्+क्तिन् भावे—उपलब्धि। (७) **इत**—अस्मात् अङ्गुलीयकात्। (८) **बहुतरेण**—इससे ज्यादा।

राक्षसः—सखे शकटदास! अनयैव मुद्रया स्वाधिकारे व्यवहर्तव्यं भवता।

शकटदासः—यदाज्ञापयत्यमात्यः।

सिद्धार्थकः—अमच्च! बिणबेमि किं पि। (अमात्य! विज्ञापयामि किमपि।)

राक्षसः—भद्र! विश्रब्धं ब्रूहि।

सिद्धार्थकः—जाणादि ज्जेब अमच्चो जधा चाणक्कहद-अस्स विप्पिअं कदुअ, णत्थि मे पुणो पाडलिउत्ते प्पवेसो त्ति, ता इच्छामि अहं अज्जस्स ज्जेब सुप्पसणे पादे सेबिदुं। (जानात्येवामात्यो यथा चाणक्यहतकस्य विप्रियं कृत्वा, नास्ति मे पुनः पाटलिपुत्रे प्रवेश इति, तदिच्छाम्यहममात्य-स्यैव सुप्रसन्नौ पादौ सेवितुम्।)

राक्षसः——भद्र ! प्रियं नः, किन्तु त्वदभिप्रायपरिज्ञानेनाऽन्तरितोऽस्माकमनुनयः । तदेवं क्रियताम् ।

सिद्धार्थकः——(सहर्षम्) अणुग्गहिदोह्मि । (अनुगृहीतोऽस्मि ।)

राक्षसः——सखे शकटदास ! विश्रामय सिद्धार्थकम् ।

शकटदासः——यदाज्ञापयत्यमात्यः ।

(इति सिद्धार्थकेन सह निष्क्रान्तः ।)

हिन्दी अनुवाद——राक्षस——मित्र शकटदास, आप इसी मुद्रा के द्वारा अपने अधिकार को प्रयोग मे लावे ।

शकटदास——अमात्य जैसी आज्ञा दे ।

सिद्धार्थक——अमात्य, मै कुछ निवेदन कर रहा हूँ ।

राक्षस——हाँ-हाँ, निश्चिन्त होकर कहो ।

सिद्धार्थक——अमात्य ! आप तो स्वयं जानते है कि इस हत्यारे चाणक्य की बुराई करके मै पाटलिपुत्र मे नही घुस सकता हूँ । तो अब यही अमात्य के आनन्ददायक चरणो की सेवा करना चाहता हूँ ।

राक्षस——हमारे लिए प्रसन्नता की बात है । (मै ऐसा ही चाहता था, किन्तु) तुम्हारे इस अनुरोध से मेरे मन की बात मेरे मन में ही रह गई । तो ऐसा ही किया जाय ।

सिद्धार्थक——(प्रसन्न होकर) मै अनुगृहीत हो गया हूँ ।

शकटदास——मंत्री जी, जैसी आज्ञा (ऐसा कहकर सिद्धार्थक के साथ बाहर निकलता है ।)

Rakshasa—Friend Shakatadasa, with this very seal, business will have to be conducted by you in your own office

Shakatadasa—As minister commands

Siddharthaka—Minister, may I speak (i e make a request) ?

Rakshasa—Speak unreservedly

Siddharthaka—Minister indeed knows that serving an unpleasant turn to the wicked Chanakya, one has no entrance into Pataliputra again, so I wish to serve at Minister's feet

Rakshasa—Good man, this is a pleasure to us But this is our request suppressed through ignorance of your wishes. So do so

Siddharthaka—(With joy)—I am favoured

Rakshasa—Shakatadasa, let Siddharthaka rest

Shakatadasa—Be it so (Departs with Siddharthaka)

टिप्पणी

(१) **स्वाधिकारे**—स्वनियोगे—अपने अधिकार मे, अधिक्रियते अस्मिन् इति अधि+कृ+घञ् अधिकरणे अधिकार—राक्षस के प्रबन्धक का पद है। (२) **व्यवहर्तव्यम्**—व्यवहार कार्य—व्यवहार मे लाया जाय। वि—अव√हृ+तव्य भावे। (३) **विप्रियम्**—विरोधम्, विभिन्न प्रियेभ्य या विरुद्ध प्रियं विप्रियम्। (४) **कृत्वा नास्ति**—यहाँ स्थितस्य का अध्याहार करके 'कृत्वा स्थितस्य जनस्य प्रवेशो नास्ति' ऐसा वाक्य समझना चाहिए, अन्यथा 'समानकर्त्तृकयो पूर्वकाले' सूत्र से कृत्वा मे क्त्वा प्रत्यय नही होगा। (५) **पाटलिपुत्रे**—कुसुमपुर का प्राचीन नाम। (५) **त्वदभिप्रायपरिज्ञानेन**—भाव यह है कि तुम्हारे कथन से पहले ही मुझे तुमसे इस तरह का अनुरोध करना चाहिए था, किन्तु ऐसा मै इसलिए न कर सका कि तुम्हारी भावना मुझे ज्ञात न थी। (७) **विश्रामय**—वि+श्रम्+णिच्+लोट्—आराम दो।

राक्षसः—सखे विराधगुप्त। वर्णयेदानीं कुसुमपुरवृत्तान्तशेषम्। अपि क्षमन्ते कुसुमपुरनिवासिनोऽस्मदुपजापं चन्द्रगुप्तप्रकृतयः?

विराधगुप्तः—अमात्य! बाढं क्षमन्ते, ननु यथाप्राधानमनुगच्छन्त्येवं।

राक्षसः—सखे! किं तत्र कारणम्?

विराधगुप्तः—अमात्य! इदं तत्र कारणम्—मलयकेतोरपक्रमणात् प्रभृति पीडितश्चन्द्रगुप्तेन चाणक्य इति। चाणक्योऽपि जितकाशितयाऽसहमानस्तैस्तैराज्ञाभङ्गैश्चन्द्रगुप्तस्य चेतसः पीडामुपचिनोति, अयमपि ममानुभवः।

राक्षसः—(सहर्षम्) सखे विराधगुप्त! तद्गच्छ त्वम् अनेनैव आहितुण्डिकच्छद्मना पुनः कुसुमपुरमेव। तत्र हि मे सुहृत् वैतालिकव्यञ्जनः स्तनकलसो नाम प्रतिवसति। स त्वया मद्वचनात् वाच्यः, यथा चाणक्येन क्रियमाणेष्वाज्ञाभङ्गेषु चन्द्रगुप्तस्त्वया समुत्तेजनसमर्थैः श्लोकैरुप-

श्लोकयितव्यः इति। कार्यञ्चातिनिभृतं करभकहस्तेन सन्देष्टव्यम् इति।

विराधगुप्तः—यदाज्ञापयत्यमात्यः। (इति निष्क्रान्तः।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—मित्र विराधगुप्त! इस समय कुसुमपुर के शेष वृत्तान्त का वर्णन करो? क्या कुसुमपुरनिवासी चन्द्रगुप्त की प्रजा हमारे द्वारा डाली गयी फूट को सहन करती है?

विराधगुप्त—अमात्य, हाँ सहन करती है। और प्रधान के अनुसार चलती भी है अर्थात् जैसे राजा और मंत्री में फूट है उसी प्रकार प्रजाओं में भी फूट है।

राक्षस—मित्र, राजा और मंत्री में फूट पडने का क्या कारण है?

विराधगुप्त—उसमें यह कारण है कि मलयकेतु के निकल भागने के पश्चात् से लेकर चन्द्रगुप्त चाणक्य को परेशान कर रहा है। चाणक्य भी विजय के गर्व में चूर होने के कारण (चन्द्रगुप्त) को न सहन करता हुआ, विभिन्न आज्ञाओं को न मानकर चन्द्रगुप्त के हृदय में पीड़ा पैदा करता है। ऐसा मेरा भी अनुभव है।

राक्षस—(हर्ष के साथ) मित्र विराधगुप्त, तो तुम इस सँपेरे के वेष में एक बार और पाटलिपुत्र जाओ और वहाँ रहने वाले मेरे मित्र वैतालिक स्तनकलश से मेरी ओर से कहो कि जब-जब चाणक्य के द्वारा चन्द्रगुप्त की आज्ञा न मानी जाय, ऐसी प्रशस्तियाँ चन्द्रगुप्त को सुनाया करे कि वह जोश में आ जाया करे और जो भी बात मुझे बतलानी हो करभक के द्वारा बता दिया करे।

Rakshasa—Friend Viradhagupta, tell the remainder of the story of Kusumpura Do the officers of Chandragupta tolerate our overtuers (Lit whispering) ?

Viradhagupta—Minister they tolerate undoubtedly, as is current, they even follow them like the heads (there is quarrel between the king and the minister)

Rakshasa—What is the cause of the dissension between these two ?

Viradhagupta—Minister, there is this reason, since the desertion of Malayaketu Chandragupta has been angry with Chanakya, Chanakya too, elated by success, intolerant of Chandragupta, by frequent supercession of orders aggravates the mortification of his soul (the wounding of his feelings). Such is my impression too

Rakshasa (With joy)—Friend Viradhagupta, you go back to Kusumpura in this very guise of a snake-charmer There my dear friend Stanakalasa lives in the garb of a bard He has to be told by you this in my words, "Whenever supercession of orders is made by Chanakya, Chandragupta has to be lauded in verses capable of rousing him thoroughly and (the progress of) the work has to be reported very secretly through the hand of Karabhak"

Viradhagupta—As minister commands (Exit)

टिप्पणी

(१) **अस्मदुपजापम्**—अस्माकम् उपजापम्—भेदमन्त्रम्। भेदमन्त्रम्—'अपि क्षमन्ते' सहन्ते किम् ? भेदवचन श्रृण्वन्ति उत न श्रृण्वन्ति। (२) **अपि**—यहाँ प्रश्नवाचक अव्यय है। (३) **बाढम्**—असंशयम् उपजाप क्षमन्ते। (४) **अनुगच्छन्त्येव**—भाव यह है कि चाणक्य ने मलयकेतु की उपेक्षा की। अत चन्द्रगुप्त का प्रजावर्ग उसे कृतघ्न समझने लगा है। परिणामस्वरूप भद्रभट आदि चन्द्रगुप्त को छोडकर मलयकेतु के पास चले आये है। यह हमारे उपजाप का ही परिणाम है। (५) **कि तत्र**—तत्र—कुसुमपुरे। (६) **जितकाशितया**—अत्यन्त गर्वित होने के कारण। जितेन काशते स्पर्धते इति जितकाशी, तस्य भाव जितकाशिता, तया। (७) **अनुभव**—अनु+भू+अप् कर्मणि अनुभव। (८) **वैतालिकव्यञ्जन**—स्तुतिपाठकस्य मागधस्य लिङ्गधारीत्यर्थ। (९) **समुत्तेजनसमर्थैः**—मन्युदीपनयोग्यैः, सम्—उद√तिज्+णिच्+ल्युट्—अन+समुत्तेजनम्, तत्र समर्था सुप्सुपा तैः। (१०) **उपश्लोकयितव्यः**—स्तुति किया जाना चाहिए, उप√श्लोक्+णिच्+तव्य कर्मणि (नामधातु)।

पुरुषः—(प्रविश्य) जेदु अमच्चो। अमच्च ! सअडदासो बिणबेदि, एदे क्खु तिण्णि अलङ्कारबिसेसा बिक्की अन्ति, ता पच्चक्खीकरेदु अमच्चो। (जयत्वमात्यः। अमात्य ! शकटदासो विज्ञापयति, एते खलु त्रयोऽलङ्कारविशेषा विक्रीयन्ते, तत् प्रत्यक्षीकरोत्वमात्यः।)

राक्षसः—(विलोक्यात्मगतम्) अहो ! महार्घाण्याभरणानि। (प्रकाशम्) भद्र ! उच्यतां शकटदासः, परितोष्य विक्रेतारं गृह्यन्तामिति।

पुरुषः––जं अमच्चो आणवेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।)
(इति निष्क्रान्तः)

राक्षसः––(स्वगतम्) यावदहमपि कुसुमपुराय करभकं प्रेषयामि। (उत्थाय) अपि नाम दुरात्मनश्चाणक्याच्चन्द्रगुप्तो भिद्येत, अथवा सिद्धमेव समीहितं पश्यामि। कुतः––

हिन्दी अनुवाद––सेवक (भीतर आकर) जय हो अमात्य की। अमात्य! शकटदास ने कहला भेजा हे कि ये तीन बहुमूल्य आभूषण विकने के लिए आए हैं। अमात्य इन्हें देख लें।

राक्षस––(देखकर अपने मन मे) अरे! ये आभूषण तो सचमुच बहुमूल्य हैं। (सुनाकर) सुनो, जाओ और शकटदास से कहो कि इन्हे ले लिया जाय और बेचने वाले को पूरी तौर से इनाम भी दे दिया जाय।

सेवक––अमात्य की जो आज्ञा (बाहर निकल जाता है।)

राक्षस––(अपने मन में) तब तक मैं भी करभक को कुसुमपुर भेज रहा हूँ। (उठते हुए) क्या ही अच्छा होता यदि उस दुष्ट चाणक्य से चन्द्रगुप्त अलग कर दिया जाता, अथवा अपना कार्य तो सिद्ध हुआ ही देख रहा हूँ।

Servant (Entering in)—Victory to the minister, O minister, Shakatadasa has sent words that these precious ornaments have come for being sold and if the minister sees them—

Rakshasa (seeing, to himself)—These ornaments are really very precious (Aloud) Listen, go and tell Shakatadasa that they should be bought and the seller should be amply rewarded.

Servant—As the minister bids (Exit)

Rakshasa (To himself)—By that time I am sending Karabhak to Kusumpura (Rising up) It would be better if Chandragupta is separated from that rogue Chanakya otherwise I see my object fulfilled

मौर्यस्तेजसि सर्वभूतलभुजामाज्ञापको वर्तते
चाणक्योऽपि मदाश्रयादयमभूद्राजेति जातस्मयः।
राज्यप्राप्तिकृतार्थमेकमपरं तीर्णप्रतिज्ञार्णवं
सौहार्दात् कृतकृत्यतैव नियतं लब्धान्तरा भेत्स्यति ॥२३॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे।)

॥इति राक्षसविचारनामकद्वितीयोऽङ्कः॥

अन्वय—मौर्य सर्वभूतलभुजाम् आज्ञापक तेजसि वर्तते, चाणक्योऽपि मदाश्रयात् अय राजा अभूत् इति जातस्मय, राज्यप्राप्तिकृतार्थम् एक तीर्ण-प्रतिज्ञार्णवम् अपर कृतकृत्यता एव लब्धान्तरा नियत सौहार्दात् भेत्स्यति ॥२३॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—एक तरफ तो चन्द्रगुप्त ऐसा है जो अपने राजतेज के कारण अन्य समस्त राज-गण का एक शासक बन बैठा है और दूसरी ओर चाणक्य ऐसा है जो चन्द्रगुप्त को राजा बनाने के कारण गर्वीला हो गया है। जहाँ एक राज्य पा लेने से कृतार्थ हो रहा है वहाँ दूसरा अपने प्रतिज्ञा-सागर के पार कर लेने से कृतकृत्य हो चुका है। अब तो वह समय आ ही पहुँचा है जब इन दोनो को अपनी-अपनी कृतकृत्यता एक दूसरे से अलग करके शान्त हो सकेगी। (सभी पात्र रङ्गमञ्च से चले जाते हैं)

॥ द्वितीय अङ्क समाप्त ॥

On one hand Chandragupta is so that he has become the ruler of all the kings on account of his royal lustre and on the other hand Chanakya is so that he is mad with pride on account of making Chandragupta the emperor Where one is gratified by attaining kingdom, the other is blessed by crossing his sea of vow Now the time has come when the gratitude of both will be satisfied by separating them from one another (Exeunt)

संस्कृत व्याख्या—मौर्य चन्द्रगुप्त सर्वभूतलभुजाम् आज्ञापकास्सर्वे च ते भूतलभुजश्च तेषा सकलभूपतीना शासनकर्ता स तेजसि वर्तते राजमदपरिपूर्णस्तिष्ठति, यश्चासौ चाणक्य सोऽपि मदाश्रयात् मम साहाय्यादय चन्द्रगुप्त राजाऽभूदिति जातस्मयो जातगर्वो वर्तते, अत एवैक चन्द्रगुप्त राज्यप्राप्तिकृतार्थं साम्राज्यप्रतिष्ठितसुखितमपर चाणक्यञ्च तीर्णप्रतिज्ञार्णवं पूर्णनन्दविनाशप्रतिज्ञमत एव गर्वित कृतकृत्यता कृतार्थता स्वस्वकार्ये सफलतेति यावत् एव हि लब्धान्तरा उभयोस्स्वार्थसिद्धया प्राप्तावसरा सौहार्दात् परस्पर सौमनस्यात् नियत निश्चित यथा स्यात्तथा भेत्स्यति विघटयिष्यतीत्यर्थ । इति राक्षसविचाराख्यो द्वितीयोऽङ्क ।

टिप्पणी

(१) अलङ्कारविशेषा—अलङ्क्रियते एभि इति अलम्√कृ+घञ् करणे+अलङ्कारा, तेषा विशेषा। (२) महार्हाणि—बहुमूल्यानि, बहुमूल्यक। अर्ह्यते पूज्यते इति√अर्ह्+घञ् कर्मणि अर्ह, महान् अर्ह एषाम्—बहुत मूल्य के। (३) कुसुमपुराय—कुसुमपुरम् अभिलक्ष्य—पाटलिपुत्र के लिए, "क्रियार्थोपपदस्य" नियम से चतुर्थी। (४) भिद्येत—वैमनस्य प्राप्नुयात् इति अर्थ.

√भिद्+लिङ ईन कर्मणि। सम्भावना मे लिङ होगा, यहाँ चन्द्रगुप्त और चाणक्य मे फूट पड जाने की मम्भावना करके राक्षम 'आशा बलवती राजन् शल्यो जेष्यति पाण्डवान्' इस न्याय मे चन्द्रगुप्त की हत्या के प्रति प्रयत्नशील हो जाता है। (५) समीहितम्—अभिलषितम्, सम्√ईह्+क्त भावे, 'पश्यामि' का कर्म है। (६) सर्वभूतलभुजाम्—सभी राजाओ का। भूतल भुञ्जन्ति रक्षन्ति इति भूतल√भुज्+क्विप् कर्तरि भूतलभुज मर्वे च ते भूतलभुज, तेषाम् कृद्योगे कर्मणि षष्ठी। (७) आज्ञापक—आज्ञा देने वाला। आ√ज्ञा+णिच्, पुक् आगम+ण्वुल्—अक। (८) कृतकृत्यता—कृतार्थता, निरपेक्षता। कृत कृत्यम् अनन इति कृतकृत्य तस्य भाव इति कृतकृत्य+तल—टाप्। (९) सौहार्दात्—शोभनम् हृदयमस्य इति सुहृत्। सुहृदो भाव इति सुहृत्+अण् "हायनान्त-युवादिभ्य अण्" मुहृद् युवादि की श्रेणी मे है। इसके पश्चात् उभयपदवृद्धि। इस श्लोक मे यथासख्य नामक अलकार है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है। इस प्रकार 'प्राप्त्याशा' अवस्था और 'पताका' अर्थप्रकृति के बीच की स्थिति रूप गर्भसन्धि के बारह अगो का निरूपण हुआ और गर्भसन्धि समाप्त हुई।



तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति कञ्चुकी)

कञ्चुकी—(सनिर्वेदम्)

रूपादीन् विषयान् निरूप्य करणैर्यैरात्मलाभस्त्वया
लब्धस्तेष्वपि चक्षुरादिषु हताः स्वार्थावबोधक्रियाः।
अङ्गानि प्रसभं त्यजन्ति पटुतामाज्ञाविधेयानि ते
न्यस्तं मूर्ध्नि पदं तवैव जरया तृष्णे! मुधा माद्यसि ॥१॥

अन्वय—तृष्णे मुधा माद्यसि आज्ञाविधेयानि ते अङ्गानि प्रसभ पटुता त्यजन्ति। यै करणै रूपादीन् विषयान् निरूप्य त्वया आत्मलाभो लब्ध तेषु चक्षुरादिषु अपि स्वार्थविबोधक्रिया हता। जरया तव मूर्ध्नि एव पद न्यस्तम्।

हिन्दी अनुवाद—(कञ्चुकी का प्रवेश) कञ्चुकी—(निराशा के साथ)—हे तृष्णे! तुम व्यर्थ ही प्रसन्न हो रही हो! तुम्हारी आज्ञा का पालन करने वाली मेरी इन्द्रियाँ काम करने मे असमर्थ हो रही है। जिन इन्द्रियो से उन उन विषयो का आनन्द उठाती हुई तुम पाली-पोषी गई उन उन आँख आदि कर्मेन्द्रियो में भी अपने विषय का ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति कहाँ। हे तृष्णे! इतना ही नही, बुढापे ने तुम्हारे सिर पर ही पैर रख दिया है।

ACT III

(Then enter the Chambeilain) *Chamberlain* (With despondency)—Oh desire, you are in vain being pleased, old age has placed its foot on your head itself, the limbs that obeyed you are rapidly becoming weak, the eyes and the other limbs with which forms and other objects were discriminated have lost the function of perceiving their own objects

संस्कृत व्याख्या—हे तृष्णे! भोगाभिलाष! त्व मुधा व्यर्थम् माद्यसि यतो हि आज्ञाविधेयानि भवन्नियोगानुष्ठानकराणि प्रसभ हठात् द्रुतमित्यर्थ पटुता शक्ति त्यजन्ति जहति भूय भवदाज्ञापालनसामर्थ्यम् भृशम् त्यजन्तीत्यर्थ यै करणै मदीयै चक्षुरादीन्द्रियै हेतुभूतै रूपादीन् विषयान् निरूप्य अवधार्य त्वया आत्मलाभ लब्ध स्वजन्म गृहीतम् तेष्वपि चक्षुरादिषु अपि तत्तद्विषयानुभवशक्तय हता नष्टा एव जरया वृद्धावस्थया तव मूर्ध्नि शिरसि पदम् चरणम् न्यस्तम् स्थापितम त्वमेव वार्धक्येनाक्रान्ता मम कस्यापि वस्तुन इच्छा नास्तीति शेष।

टिप्पणी

(१) **सनिर्वेदम्**—निराशा के साथ। निर्वेदेन खेदेन सहितं यथा स्यात्तथा इति। निर्+विद्+घञ्=निर्वेद। (२) **करणै**—इन्द्रियों द्वारा। जिनसे किया जाय। क्रियते एभिः इति कृ—ल्युट्। ज्ञानेन्द्रियाँ। (३) **आत्मलाभः**—अपने रूप का लाभ। आत्मनः निजरूपस्य लाभः। ईप्सित वस्तु के देखने के बाद ही उस वस्तु के पाने की इच्छा होती है। इसलिए इच्छा की उत्पत्ति "करण" अर्थात् इन्द्रियों से होती है। आँख ने रूप को देखा तो रूप देखने की इच्छा पैदा हो गई। (४) **अङ्गानि**—कर्मेन्द्रियों से तात्पर्य है। (५) **प्रसभम्**—जबर्दस्ती, तेजी से। प्रसभम् त्यजन्ति पटुता—अपनी शक्ति शीघ्रतापूर्वक खो रही हैं। (६) **आज्ञाविधेयानि**—आज्ञाकारी। वि+धा+यत् कर्मणि=विधेयानि। आज्ञाया विधेयानि (षष्ठीतत्०)। (७) **मुधा**—व्यर्थ में। इस पद्य मे विभावना अलङ्कार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है। यहाँ से राक्षस के अभिलषित चाणक्य और चन्द्रगुप्त के बीच के विरोध को दिखलाने के लिए विमर्श संधि का आरम्भ होता है। यह चौथे अंक तक जायगा। राक्षस के अन्य उपायों के निष्फल हो जाने से केवल मौर्य-कौटिल्य-विरोध रूपी उपाय से फल-प्राप्ति की निश्चय आशा अर्थात् नियताप्ति का और कौमुदी-महोत्सव निषेधादि कारणों का वर्णन तृतीय अङ्क में है। चौथे अङ्क मे राक्षस और दूत के संवाद रूप में प्रकरी अर्थात् प्रयोजन सिद्धि के साधन आदि का वर्णन दिया है। पहले चन्द्रगुप्त और चाणक्य के बीच विरोध होने के मुख्य कारण कौमुदी महोत्सव के निषेध का वर्णन कंचुकी के द्वारा कराया गया है। कंचुकी पहले अपनी वृद्धावस्था पर चिन्ता करता है।

(परिक्रम्याकाशे) भो भोः सुगाङ्गप्रासादाधिकृताः पुरुषाः ! सुगृहीतनामा देवश्चन्द्रगुप्तो वः समाज्ञापयति। यथा—'प्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवरमणीयतरं कुसुमपुरमवलोकयितुमिच्छामि, तत् संस्क्रियन्तामस्मद्दर्शनयोग्याः सुगाङ्गप्रासादस्योपरिभूमयः' इति। तत् किं चिरयन्ति भवन्तः? (आकाशे आकर्ण्य) किं ब्रूथ 'आर्य ! किमविदित एवायं देवस्य चन्द्रगुप्तस्य कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधः' इति? आः दैवोपहताः ! किमनेन वः प्राणहरेण कथोद्घातेन? शीघ्रमिदानीम्—

हिन्दी अनुवाद—(इधर-उधर घूमकर आकाश की ओर) अरे सुगाङ्गप्रासाद के अधिकारियो ! सुनो प्रात स्मरणीय महाराज चन्द्रगुप्त की आज्ञा है कि "कौमुदी महोत्सव के अवसर पर मैं कुसुमपुर को परमसुशोभित देखना चाहता हूँ। प्रासाद की ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओ को ऐसा सजा दो कि देखने योग्य हो जायँ।" तब आप लोग देर क्यो कर रहे हैं ? (आकाश की ओर देखकर और सुनकर) क्या कहते हो कि महाराज को पता नहीं है कि कौमुदी महोत्सव का मनाया जाना मना कर दिया गया है। अरे भाग्य के मारे हुए ! तुम्हें इस प्राण-नाशक बात से क्या। जल्दी करो देखो—

(*Going round the stage and looking at the sky*)—Oh, men employed at the Suganga Palace, sire Chandragupta of auspicious name orders you thus, "I want to see Kusumpura more decorated on the eve of Kaumudi festival, so let the upper floors of the Suganga Palace be so decorated that they may be worth seeing" (*Again in the sky*) Do you say "Is the prohibition of the Kaumudi festival unknown to the King" Ah ! you ill-fated fellows what is the use of referring to this subject which may cause instant loss of life

संस्कृत व्याख्या—परिक्रम्य इतस्तत भ्रमण कृत्वा आकाशे गगने दृष्टि दत्त्वाह इति शेष सुगाङ्गप्रासादाधिकृता सुगाङ्गाख्ये गृहे अधिकृता नियुक्ता पुरुषा सुगृहीतनामा देव चन्द्रगुप्त व युष्मान् समाज्ञापयति आदेश ददाति यथा प्रवृत्त-कौमुदीमहोत्सवरमणीयतर प्रवृत्त आरब्ध य कौमुदीमहोत्सव तेन रमणीयतरम् अधिकसुन्दरम् कुसुमपुरम् अवलोकयितुम् द्रष्टुम् इच्छामि तत् तस्मात् कारणात् अस्मद्दर्शनयोग्या मदवलोकनयोग्या सुगाङ्गप्रासादस्य उपरिभूमय सस्क्रियन्ताम् शोभायुक्ता क्रियन्ताम् तत् कि चिरयन्ति विलम्ब कुर्वन्ति भवन्त आकाशे आकर्ण्य श्रुत्वा कि ब्रूथ कथयथ यत् आर्य किम् अविदित अज्ञात एव देवस्य चन्द्रगुप्तस्य कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेध कौमुदीमहोत्सवनिषेध दैवोपहता दैवेन भाग्येन उपहता नष्टा अनेन प्राणहरेण जीवननाशकेन कथोद्घातेन वार्ताकथनेन व किम् न किमपीत्यर्थ यदा राजा इमा वार्ता श्रोष्यति तदा स युष्माकम् प्राणान् हरिष्यति अत इदानीम् अधुना शीघ्रम् द्रुतम्।

टिप्पणी

(१) **सुगाङ्गप्रसादाधिकृताः पुरुषाः**—सुगाङ्गप्रासाद (यह महल का नाम है) मे नियुक्त अधिकारी वर्ग। सुगाङ्गाख्य प्रासाद तत्र अधिकृताः।
(२) **प्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवरमणीयतरम्**—कौमुदी महोत्सव के अवसर पर अधिक

सुसज्जित। यह कार्तिक पूर्णिमा को मनाया जाता था। कौ पृथिव्या मोदते इति कु+मुद्+क कर्त्तरि कुमुदम् तस्य इयम् इति कौमुदी। कुछ लोग कहते है कि यह आश्विन की पूर्णिमा को मनाया जाता था कुछ का कहना है कि यह कात्तिक की पूर्णिमा को मनाया जाता था। (३) **कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेध**—कौमुदी महोत्सव का मना हो जाना। प्रति+सिध्+घञ्=प्रतिषेध। चाणक्य ने कौमुदीमहोत्सव मना कर दिया था। इसी से गाङ्गप्रासाद के लोग कहते है कि क्या चन्द्रगुप्त को यह बात नही मालूम है। कौमुदी महोत्सव का निषेध चाणक्य की कूटनीति है। उसने चन्द्रगुप्त से बनावटी कलह करने की योजना बना रखी है। इससे राक्षस तथा उसके गुप्तचर धोखे मे पडेगे। (४) **दैवोपहता**—अभागे लोग। (५) **सद्य.प्राणहरेण कथोद्धातेन**—प्राण-नाशक की इस बात को कहने से क्या लाभ। अर्थात् राजा यदि यह बात सुन लेगा तो तुरन्त तुम्हे प्राणदण्ड होगा। अत ऐसी बाते मत करो।

आलिङ्गन्तु गृहीतधूपसुरभीन् स्तम्भान् पिनद्धस्रजः
सम्पूर्णेन्दुमयूखसंहतिरुचां सच्चामराणां श्रियः।
सिंहाङ्कासनधारणाच्च सुचिरं सञ्जातमूर्च्छामिव
क्षिप्रं चन्दनवारिणा सकुसुमः सेकोऽनुगृह्णातु गाम् ॥२॥

अन्वय—सम्पूर्णेन्दुमयूखसंहतिरुचा सच्चामराणा श्रिय गृहीतधूपसुरभीन् पिनद्धस्रज स्तम्भान् आलिङ्गन्तु, सकुसुम चन्दनवारिणा सेक सुचिर सिंहाङ्कासनधारणात् सञ्जातमूर्च्छामिव गा क्षिप्रम् अनुगृह्णातु च ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—खंभो में पूर्णचन्द्र की कान्ति वाली मालाये लपेट दी जायँ तथा सुगंधित द्रव्य जलाए जायँ जिससे प्रासाद सुगंधित हो जायँ और पूर्णचन्द्र की कान्ति वाले चंवर भी लटका दो। इतना ही नही फूलो की सुवास से भी चन्दन-जल का छिड़काव ऐसा सर्वत्र हो जाय जैसे सिंह के पंजे की भाँति पडे राजसिंहासन के बोझ से मूर्छित यह गाय सदृश धरती एक बार होश मे आ जाय अर्थात् इसे खूब सुगंधित करो।

Let the glow of fine chowries which shine like the enmassed beams of the full moon quickly be wrapped with the pillars that are scented on account of being fumigated with myrrh and have garlands attached to them, let there be sprinkling of sandal water and supply of flowers so that the ground (floor) which is in a swoon, as it were, by the long upholding of the seat marked with lions, be soothed at once

संस्कृत व्याख्या—सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचा सम्पूर्णेन्दो पूर्णिमाचन्द्रस्य या मयूखसहतय सपिण्डिता किरणकान्तय तासा रुगिव रुक् कान्ति येषामेव भूताना सच्चामरगणा वालव्यजनाना श्रिय शोभासम्पत्तय गृहीतधूपसुरभीन् धूपितसुरभितशरीरान् पिनद्धस्रज पिनद्धा बद्धा स्रज मालिका येपु तान् स्तम्भान् शीघ्रम् आलिङ्गन्तु उपश्लिष्यन्तु चन्दनवारिणा चन्दनजलेन सकुसुम-सेक पुष्पपरिमिलितेन सेक सुचिरम् दीर्घकालात् सिहाङ्कासनधारणात् सिह अङ्क चिह्न यस्य तच्च तदासनम् च तस्य भारवहनात् सञ्जातमूर्च्छामिव सञ्जाता समुत्पन्ना मूर्च्छा वैकल्य यस्या तादृशीम् गा पाटलिपुत्रभुव काचिद् सिहक्रोडीकृताम् धेनुमिव विगतसज्ञा क्षिप्रम् सत्वरम् अनुगृह्णातु सभावयतु इति प्रमादभूमय राजमार्गरथ्यावीथिभूमयश्च जलसेकेन सुमृष्टा नृपसञ्चारयोग्या भवन्तु इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **गृहीतधूपसुरभीन्**—धूपो के सेवन से सुवासित। गृहीता ये धूपा तै सुरभीन्। यह स्तम्भान् का विशेषण है। (२) **पिनद्धस्रज**—बँधी हुई मालाओ वाले, मालाये जिसमे बँधी है। पिनद्धा स्रज येपु ते तान्। अपि+नह्+क्त=अपिनद्ध वा पिनद्ध 'वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयो । आपञ्चैव हलन्ताना यथा वाचा निशा दिशा ।।" इति कारिकया विकल्पेन अपे अकारलोप । (३) **सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचाम्**—पूरे चन्द्रमा की किरण-समूह के समान चमक वाले। यह 'सच्चामराणा' का विशेषण है। सम्पूर्ण य इन्दु तस्य ये मयूखा तेपा या सहति इति सम्पूर्णेन्दुमयूखसहति तस्या रुक् इव रुक् येपा तादृशानाम् सम्पूर्णेन्दुमयूखसहतिरुचाम् । (४) **सिहाङ्कासनधारणात्**—सिहासन के धारण करने से। गाय के पक्ष मे सिह की गोद रूप आसन पर धारण किए जाने से। (५) **गाम्**—पृथ्वी, गाय। जिस प्रकार सिह की गोद मे पडी हुई गाय मूर्च्छित हो जाती है तो उसे पानी का छीटा देकर होश मे लाने का प्रयत्न किया जाता है उसी प्रकार सिहासन के बोझ को धारण करने से पाटलिपुत्र की धरती बेहोश सी हो गई है इससे उसे फूलयुक्त चन्दन जल से सीचा जाय ताकि उसे होश आ जाय।

पूर्वार्ध मे पूर्णेन्दु की किरणो के चामर के साथ साम्य से समासोक्ति अलङ्कार हुआ। सिह के वश मे हुई गाय से श्लेष और मूर्च्छा की सम्भावना से उत्प्रेक्षालकार है। छन्द शार्दूलविक्रीडित है।

(आकाशे) किं कथयन्ति भवन्तः 'एते त्वरामहे' इति। भद्राः! त्वरध्वम्, अयमागत एव देवश्चन्द्रगुप्तः। य एषः,—

सुविश्रब्धैरङ्गैः पथिषु विषमेष्वप्यचलता
चिरं धुर्येणोढा गुरुरपि भुवो याऽस्य गुरुणा।
धुरं तामेवोच्चैर्नववयसि वोढुं व्यवसितो
मनस्वी दम्यत्वात् स्खलति न च दुःखं वहति च ॥३॥

अन्वय—विषमेषु अपि पथिषु अचलता धुर्येण अस्य गुरुणा सुविश्रब्धैः अङ्गैः भुवः गुरुः अपि या चिरम् ऊढा तामेव उच्चैः धुरं नववयसि वोढुं व्यवसितः मनस्वी दम्यत्वात् दुःखं वहति च न स्खलति च ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—(आकाश में) क्या आप लोग यह कह रहे हैं कि "हम लोग जल्दी कर रहे हैं। भद्र पुरुषो? जल्दी करो जल्दी करो। लो यह महाराज चन्द्रगुप्त आ गए हैं जो कि—

विषम परिस्थितियों में भी विचलित न होने वाले तथा भार उठाने में समर्थ इनके पिता ने अपने विश्वासपात्र मन्त्रियों की सहायता से जिस कठिन राज्यभार को धारण किया, उसी भारी बोझ को नई अवस्था में वहन करने के लिए उद्यत मनस्वी चन्द्रगुप्त अनुभव न होने के कारण दुःखों को सह रहा है किन्तु गिरता (डिगता नहीं)। भाव यह है कि अभी चन्द्रगुप्त को राज्य करने का अनुभव नहीं है। उसकी नई जवानी है। कभी-कभी त्रुटियाँ भी हो जाती हैं पर वह मनस्वी उस भार को वहन करने के लिए उद्यत है और डिगता नहीं।

(In the sky) Do you say that we are making haste Gentlemen make haste, Sire Chandragupta has indeed arrived He it is who—In his attempt to bear in young age the very same heavy burden of the earth, which, though heavy, was borne by his father, with the help of well-trusted ministers, bears it with difficulty due to inexperience yet does not falter for he is a man of strong will

संस्कृत व्याख्या—विषमेषु अपि पथिषु उन्नतावनतेषु अपि मार्गसङ्क्रमेषु इव अचलता अनिष्क्रम्यगतिना अतएव धुर्येण धूर्वहनसमर्थेन धुरन्धरेण अस्य चन्द्रगुप्तस्य गुरुणा तातेन महाराजनन्देन सुविस्रब्धैः अङ्गैः विश्वसनीयैः शरीरावयवैः राज्यतन्त्रावयवैः मन्त्रिभिरित्यर्थः भुवः पृथिव्या गुरुः अपि दुःशक्यवहनापि धूः चिरम् बहुकालपर्यन्तम् ऊढा धृता तामेव उच्चैः धुरम् भारम् वोढुम् धारयितुम् नववयसि तारुण्ये एव वयसि उद्यतः मनस्वी महासाहसिकः दम्यत्वात् भारवहनाऽनभ्यस्त-

त्वादेव न तु न्यूनवलप्रकर्षत्वात् दु ख वहति क्लेश प्राप्नोति न स्खलति च भ्रश्यति न। बालत्वादय राज्यरक्षा कर्मणि क्लिश्यते सत्य किन्तु महोत्साहतया किञ्चिदपि नासौ हीयते इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **सुविस्रब्धै**—विश्वासपात्र, वि+स्रम्भ्+क्त। अतिशयेन विस्रब्धा इति। यह अङ्ग का विशेषण है, बलशाली। (२) **अङ्गै**—राज्यकार्य चलाने के लिए आवश्यक अङ्ग—स्वामी, अमात्य, सुहृत्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग, बल"। बैल पक्ष मे शरीर। नन्द राज्य का कार्यभार इसलिए वहन कर सका कि उसके उपरोक्त अङ्ग प्रवल थे। (३) **पथिषु**—मार्ग मे अर्थात् काम करने के मार्ग मे। (४) **विषमेषु**—कठिन, ऊँचा-नीचा। विभिन्ना समेभ्य इति विषमा (सुप्सुपा स०), तेषु। (५) **धुर्येण**—धुरा धारण करने वाले से। धुरि साधुता वहनि वा इति धुर्+यत् तेन धुर्येण। राज्य का भार धारण करने मे अभ्यस्त। वृषभ-पक्ष मे भार वहन करने वाला। (६) **गुरुणा**—पिता से, नन्द के वास्ते यह शब्द आया है। (७) **नववयसि**—नई उम्र (जवानी मे) भाव यह है कि अभी चन्द्रगुप्त को राज्य करने का अनुभव नही है। (८) **व्यवसितः**—उद्यत, तैयार। वि+अव+सो+क्त। (९) **मनस्वी**—महामना, उत्साही। प्रशस्त मन अस्य इति मनस्+विनि। (१०) **दम्यत्वात्**—शिक्षा समाप्त न होने के कारण। चन्द्रगुप्त को दम्य इसलिए कहा गया कि अभी राजकार्य सचालन मे उसकी शिक्षा पूर्ण नही हुई थी। बैल पक्ष मे—नौजवान होने के कारण। चन्द्रगुप्त को अनुभव न होने से कभी-कभी दु ख होता था पर वह मनस्वी होने के कारण डिगता नही था। कार्यभार को वहन करने का प्रयत्न करता था। हेतौ पञ्चमी है। दम्+यत् कर्मणि=दम्य। तस्य भाव इति दम्य+त्व, तस्मात्। हेतौ पञ्चमी। (११) **स्खलति**—गलती करता है। बैल पक्ष मे—इधर-उधर लडखडाता नही।

यह श्लोक दो अर्थ वाला है। चन्द्रगुप्त की तुलना एक बलवान् बैल से की गई है। बलवान् बैल जैसे अपने मजबूत अङ्गो से बोझ को धारण करता है और विषम (ऊँची-नीची) जगहो मे भी नही गिरता। उसी प्रकार चन्द्रगुप्त राज्य-कार्य को सँभाल रहा है और विषम (कठिन) परिस्थितियो मे भी घबडाता नही, क्योकि वह मनस्वी है।

यहाँ पर भारी राज्यभार वहन मे क्लेश आदि का होना नही होता। इसलिए व्यतिरेकालकार हुआ। दृढगात्र के कारण दुर्गम मार्गरूपी राज्यभार वहन के लिए प्रस्तुत युवा चन्द्रगुप्त का अप्रस्तुत नववृषभ के साथ साम्य है, इसलिए समासोक्ति अलङ्कार है। शिखरिणी छन्द है।

(नेपथ्ये) इत इतो देवः।

(ततः प्रविशति राजा प्रतीहारी च)

राजा—(स्वगतम्) राज्यं हि नाम राजधर्मानुवृत्तिपरस्य नृपतेर्महदप्रीतिस्थानम्। कुतः—

परार्थानुष्ठाने रहयति नृपं स्वार्थपरता
परित्यक्तस्वार्थो नियतमयथार्थः क्षितिपतिः।
परार्थश्चेत् स्वार्थादभिमततरो हन्त परवान्
परायत्तः प्रीतेः कथमिव रसं वेत्ति पुरुषः॥४॥

अन्वय—परार्थानुष्ठाने स्वार्थपरता नृप रहयति। परित्यक्तस्वार्थः क्षितिपति नियतम् अयथार्थ। परार्थ स्वार्थात् अभिमततरश्चेत् हन्त परवान्। परायत्त पुरुष प्रीतेः रस कथमिव वेत्ति॥४॥

हिन्दी अनुवाद—(नेपथ्य मे) इधर आवें महाराज!

(प्रतीहारी के साथ महाराज चन्द्रगुप्त का प्रवेश)

राजा—(स्वगत) राजा तो कभी भी स्वतन्त्र नही। राज्यधर्म का पालन उसे परतत्र बनाए है। यह राज्य भी कैसी दु.खद वस्तु है। राजा यदि प्रजा के स्वार्थों को सिद्ध करता है तो स्वार्थपरता उसे त्याग देती है। (अर्थात् वह अपने स्वार्थ से वञ्चित रह जाता है।) वह राजा ही क्या जो अपने स्वार्थ से ही सर्वथा विमुख रहकर नाम का ही राजा कहलाता रहे। यदि दूसरे का हित अपने हित से अधिक वाञ्छनीय है तो दु.ख की बात है कि (वह राजा) पराधीन है। और भला जो पराधीन है उसे कौन-सा सुख कौन-सा आनन्द।

(*In the dressing room*) This way Maharaj, this way (*Then enter the king and the warder*)

King (*to himself*)—A kingdom is indeed a great source of trouble to the king who is always engaged in doing good to the people If the king looks after the interest of other, self-interest forsakes him He is verily not a king in the real sense if self-interest leaves him If others' interest is preferable to self-interest, then alas, he (the king) is not independent How can a man, controlled, by another enjoy pleasure

सस्कृत व्याख्या—परार्थानुष्ठाने स्वव्यतिरिक्तस्य अमात्यजनपदादिप्रकृति-वर्गस्य ये अर्था अभिलषितानि कार्याणि तेषा सम्पादने क्रियमाणे स्वार्थपरता स्वाभिलषितसिद्धि नृपम् राजानम् रहयति परित्यजति। परकार्य्यकरणेन राज्ञ स्वकार्यनाश इत्यर्थ। परित्यक्तस्वार्थ परित्यक्त उत्सृष्ट स्वार्थं येन तादृश क्षितिपति राजा नियतम् अयथार्थ नास्त्येव सत्यभूत राजेति। परार्थ पर-प्रयोजनम् स्वार्थात् आत्मप्रयोजनात् अभिमततर ईप्सिततर अर्थात् यदि परार्थ एव कर्तव्यबुद्ध्या साधनीय हन्त यो वा नृपस्स तु परवान् परवश पराधीन एव न स्ववश स्वतन्त्रो वा, परायत्त पराधीन पुरुष प्रीते सुखस्य रसम् स्वादम् कथमिव केन वा प्रकारेण वेत्ति जानाति अर्थात् न केनापि।

टिप्पणी

(१) **परार्थानुष्ठाने**—दूसरो का काम साधने मे। (२) **रहयति**—त्यजति—त्याग देती है। यदि राजा दूसरे का स्वार्थ साधन करता है तो उसका स्वार्थ नष्ट होता हे। (३) **परित्यक्तस्वार्थ**—जो राजा अपनी स्वार्थसिद्धि का परित्याग कर देता है। परित्यक्त स्वार्थं येन स (ब० व्री०)। (४) **अय-थार्थ**—सुखभिलाषी सासारिक व्यक्ति राजा होने की कामना करते है। उनकी दृष्टि मे राजा का अर्थ है—सुख-भोग करने वाला व्यक्ति। किन्तु कर्तव्यपरायण राजा के जीवन मे सुख कहाँ वह प्रजा के सुख के लिए ही सदा खिन्न रहता है। अत उपर्युक्त अर्थ मे वह वास्तविक राजा नही है। (५) **परवान्**—पराधीन। (६) **परायत्तः**—दूसरे के अधीन। परस्य आयत्त इति परायत्त। इस श्लोक मे काव्यलिग अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

अपि च, दुराराध्या हि राजलक्ष्मीरात्मवद्भिरपि राजभिः। कुतः ?—

तीक्ष्णादुद्विजते मृदौ परिभवत्रासान्न सन्तिष्ठते
मूर्खान द्वेष्टि न गच्छति प्रणयितामत्यन्तविद्वत्स्वपि।
शूरेभ्योऽप्यधिकं बिभेत्युपहसत्येकान्तभीरूनहो
श्रीर्लब्धप्रसरेव वेशवनिता दुःखोपचर्या भृशम् ॥५॥

अन्वय—तीक्ष्णात् उद्विजते परिभवत्रासात् मृदौ न सन्तिष्ठते, मूर्खान् द्वेष्टि, अत्यन्तविद्वत्स्वपि प्रणयिता न गच्छति, एकान्तभीरून् उपहसति, शूरेभ्यो-

ऽपि अधिक विभेति। अहो लब्धप्रसरा वेशवनिता इव श्री भृशम् दुःखोपचर्या (भवति) ।।५।।

हिन्दी अनुवाद—और भी चाहे कैसे भी अपने को सँभाल कर रहे, राज्य-लक्ष्मी को प्रसन्न रखना राजा के लिए असभव है। क्यो न हो? राज्यलक्ष्मी उग्रस्वभाव वाले से उद्विग्न हो जाती है और मृदु स्वभाव वालो के पास अपमानित होने के भय से नही ठहरती, वह मूर्ख से द्वेष करती है और अधिक विद्वान् से भी वह प्रेम नही करती, जो अत्यन्त डरपोक है उनका वह मजाक करती है और अति शूरवीर से डरती है। आश्चर्य है कि आधिपत्य को प्राप्त वेश्या की तरह लक्ष्मी अत्यन्त कष्ट से सेवा के योग्य होती है।

Moreover, Royal Fortune is difficult to serve even by kings who have command over self She suffers anxiety from the stern, she does not live with the mild because she apprehends insult She dislikes the fool, she does not like to be-friend those who are highly educated, she ridicules the timid and is afraid of the mighty ones Fortune, like a public woman, that has gained sway (over one) is very difficult to please

संस्कृत व्याख्या—तीक्ष्णात् उग्रात् वा राज्ञ उद्विजते उद्विग्ना भवति परिभवत्रासात् परिभवात् अवमानात् य त्रास भय तस्मात परिभवत्रासात् मृदौ विगततैक्ष्ण्ये न सन्तिष्ठते न स्थितिमात्मन करोति मूर्खात् अविवेकिन भूपालात् द्वेष्टि न कामयते अत्यन्तविद्वत्स्वपि महाविवेकिषु अपि राजसु प्रणयिता न गच्छति निकाममनुरक्ता न भवति शूरेभ्योऽपि नृपेभ्य अधिक बिभेति भृश त्रस्यति एकान्तभीरून् सदैव ये भीरव भीता तान् उपहसति तिरस्करोति अहो महदाश्चर्यम् श्री राजलक्ष्मीर्लब्धप्रसरा अस्मद्वशीकरणेन प्राप्तप्रागलभ्या वेश-वनिता वाराङ्गना इव भृशम् नितान्तम् दुःखोपचर्या क्लेशेन सेव्या दुराराध्या वा।

टिप्पणी

(१) **दुराराध्या**—दुःख से (कठिनाई से) प्रसन्न होने वाली। आ+राध्+णिच्+यत्=आराध्या। दुःखेन आराध्या दुराराध्या (प्रादिस०)। (२) **आत्मवद्भिः**—दृढ चित्त तथा चरित्र वाले। (३) **तीक्ष्णात्**—कठोर से, (४) **सन्तिष्ठते**—रुकती है, ठहरती। "समवप्रविभ्य स्थ" स्था धातु के साथ यदि सम्, अव, प्र उपसर्ग हो तो उसका आत्मने पद मे रूप हो जाता है। सन्तिष्ठते, प्रतिष्ठिते, अवतिष्ठते। (५) **एकान्तभीरून्**—अति डरपोक। एक अन्त स्वरूप यस्मिन् तत् यथा तथा भीरव (सुप्सुपा समास), तान्। (६) **लब्धप्रसरा**—अधिकार प्राप्त किए हुए। प्र+सृ+अप् भावे=प्रसरः। लब्ध.

प्रसरो यया। (७) वेशवनिता—वेश्या। इस श्लोक मे काव्यलिग एव उपमा अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अन्यच्च, कृतककलहं कृत्वा स्वतन्त्रेण त्वया कञ्चित् कालं व्यवहर्तव्यमित्यार्योपदेशः। स च कथमपि मया पातकमिवाभ्युपगतः। अथवा शश्वदार्योपदेशसंस्क्रियमाणमतयः सदैव स्वतन्त्रा वयम्। कुतः?—

हिन्दी अनुवाद—और भी आर्य चाणक्य का उपदेश है कि ऊपरी (नकली) झगडा करके तुम कुछ समय तक अपने मन की करना। उस उपदेश को मैंने किसी प्रकार पातक के समान स्वीकार किया। अथवा आर्य के उपदेश से सदा शुद्ध बुद्धिवाले हम लोग स्वतत्र ही है।

Moreover, the command of the precepter is that for some time I have to manage affairs independently after making an artificial quarrel with him This I have accepted unwillingly like sin, Or we are always independent, being guided by the preceptor's instruction

इह हि रचयन् साध्वीं शिष्यः क्रियां न निवार्यते
त्यजति तु यदा मार्गं मोहात् तदा गुरुरङ्कुशः।
विनयरुचयस्तस्मात् सन्तः सदैव निरङ्कुशाः
परतरमतः स्वातन्त्र्येभ्यो वयं हि पराङ्मुखाः॥६॥

अन्वय—इह हि शिष्य साध्वी क्रिया रचयन् न निवार्यते, यदा तु मोहात् (स) मार्गं त्यजति तदा गुरु अङ्कुश। तस्मात् विनयरुचय. सन्त. सदैव निरङ्कुशा। अत स्वातन्त्र्येभ्य वय परतर हि पराङ्मुखा ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—अच्छे कार्य को करने वाले शिष्य को गुरु रोकता नही अर्थात् जब तक शिष्य अच्छा कार्य करता है गुरु उसे नही रोकता पर जब वह अज्ञानता के कारण कुमार्ग पर चलने लगता है तो गुरु अंकुशरूपी वचन से उसे निवारण करता है। इसलिए विनय में रुचि रखने वाले सज्जन सदा स्वतत्र ही है। अतः स्वेच्छाचारो से हम सदा पराङ्मुख है।

Here (in this world) a pupil is not checked from doing good work, but, if through ignorance, he quits the right path, the teacher is a check for him Hence the good, with a liking for discipline, are always unrestrained Therefore we are averse to an independence other than this

संस्कृत व्याख्या—इह अस्मिन् जगति शिष्य साध्वीम् क्रियाम् विरचयन् अनिन्द्य कर्म कुर्वन् न निवार्यते न निषिध्यते यदा तु मोहात् मार्ग त्यजति मतिभ्रशात् कुमार्गेण गच्छति तदा गुरुरङ्कुश तत तस्य निवारयिता भवति तस्मादेवं भूताद् गुरुस्वाभाव्याद् विनयरुचय गुरुकृतशिक्षणे बद्धश्रद्धा सन्त सदाचारा शिष्या इति शेष सदैव निरङ्कुशा सर्वदा एव स्वतत्रा न दण्डभागिन गुरूणा भवन्ति, अर्थात् सदाचारमनतिक्रान्ता कदापि न निवार्यन्ते अत अस्मादेव कारणात् वयम् स्वातन्त्र्येभ्य स्वच्छन्दानुवर्तनेभ्य परतरम् हि नितान्तमेव पराङमुखा वितृष्णा । यादृश स्वातत्र्यम् सदाचाररता सन्त. नित्य हि लभन्ते तादृशमेव प्रार्थयामहे नाधिक कञ्चित्कालमपि इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **कृतककलहम्**—बनावटी झगडा। चन्द्रगुप्त और चाणक्य का झगडा दिखावटी था। यह राक्षस को धोखा देने के लिए किया गया था। कृत एव कृतक, तादृश कलह (कर्म० स०)। (२) **आर्य्योपदेशसंस्क्रियमाणमतयः**—गुरु के उपदेश मे जिनकी बुद्धि शुद्ध कर दी जाती है। आर्यस्योपदेशेन सस्क्रियमाणा मति येषा ते आर्योपदेशसस्क्रियमाणमतय। (३) **साध्वीं क्रियां रचयन्**—अच्छा काम करता हुआ। (४) **विनयरुचय**—विनय (शिक्षा) मे रुचि रखने वाले। चन्द्रगुप्त के कहने का भाव यह है अगर शिष्य अच्छा काम करता है तो गुरु मना नही करेगा और यदि वह बुरा कार्य करेगा तो गुरु निवारण करेगा। इसलिए जो शिक्षा चाहने वाले लोग है वे हमेशा इस माने मे स्वतत्र हैं कि अच्छा काम करे। (५) **स्वातंत्र्येभ्य· पराङमुखाः**—स्वतत्रता से विमुख। दूसरे प्रकार की स्वतत्रता हम लोग नही चाहते। इस श्लोक मे परिणाम अलकार तथा हरिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'नसमरसलाग षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता'।

(प्रकाशम्) आर्य वैहीनरे! सुगाङ्गप्रासादमार्गमादेशय।

कञ्चुकी—इत इतो देवः।

राजा—(परिक्रामति।)

कञ्चुकी—(परिक्रम्य) अयं सुगाङ्गप्रासादः। शनैरारोढुमर्हत्यार्यः।

राजा—(नाट्येनारुह्य दिशोऽवलोक्य) अहो! शरत्सम-यसम्भृतशोभाविभूतीनां दिशामतिरमणीयता!! कुतः?—

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) आर्य वैहीनरि, सुगाङ्ग भवन का रास्ता बताओ
कञ्चुकी—इधर से, महाराज इधर से।
राजा—(घूमता है)।
कञ्चुकी—(घूमकर) यह सुगाङ्गप्रासाद है। आप धीरे-धीरे चढे।
राजा—(चढने का अभिनय करके और दिशाओ को देखकर) ओह! जिधर देखता हूँ उधर ही शरद् काल की शोभा छाई दिखाई दे रही है।

(*Aloud*) Noble Vaihinari show me the way to the Sugang Palace

Chamberlain—This way sire, this way (*Acting going round* This is the Suganga Palace Let your honour ascend slowly

King (*Acting ascending and seeing the quarters*)—Oh, how beautiful are the quarters with the beauty of the autumnal season mixed with their beauty

शनैः शान्ता भूताः सितजलधरच्छेदपुलिनाः
समन्तादाकीर्णाः कलविरुतिभिः सारसकुलैः।
चिताश्चित्राकारैर्निशि विकचनक्षत्रकुमुदै-
र्नभस्तः स्यन्दन्ते सरित इव दीर्घा दश दिशः॥७॥

अन्वय—शनै शान्ता भूता सितजलधरच्छेदपुलिना कलविरुतिभि सारस-कुलै समन्नात् आकीर्णा दश दिश चित्राकारै विकचनक्षत्रकुमुदै चिता (सत्य) दीर्घा सरित इव नभस्त स्यन्दन्ते॥७॥

हिन्दी अनुवाद—धीरे-धीरे निर्मल होते हुए श्वेत मेघ-खण्ड रूपी सिकतामय तटो से युक्त, मधुर तथा अव्यक्त ध्वनि करने वाले सारसो से परिव्याप्त और रात्रि के संयोग से विचित्र शोभा देने वाले नक्षत्ररूपी विकसित कुमुदो से अलकृत सुदीर्घ दसो दिशाये आकाश से नदी के समान प्रवाहित होती है। भाव यह है कि शरत्काल की बडी-बडी नदियाँ दिशाओ की भाँति मालूम पड रही है और दसो दिशाये नदियो की भाँति लग रही है। एक ओर तो मधुर स्वर करते हुए सारसो की पक्तियो से भरे हुए बालुकापुञ्ज ऐसे शान्त है मानो सफेद मेघ-खण्ड हो। दूसरी ओर धवल मेघो के टुकडे ऐसे नीरव दिखाई दे रहे है जैसे नदी-पुलिन हो। रग-बिरगे कुमुदो से भरी हुई नदियाँ एसी मालूम पड रही है मानो रग-बिरगे तारो से भरी हुई दिशाये हो। दूसरी ओर आकाश की ये दिशाये ऐसी लग रही है मानो चित्र-विचित्र कुमुदो से भरी नदियाँ हो। दिशाएँ नदी के समान और

नदी दिशाओं के समान होने से पारस्परिक उपमानोपमेय हुआ। इसलिए उपमानोपमालंकार है। पर कुछ लोगों का मत है कि यह उपमा अलंकार ही है।

Gradually [illegible] dry and being crowded all round with flocks of [illegible] sweet [illegible], and being strewn at night with [illegible] stars uncovered, the ten quarters, extend from the [illegible] like so many great rivers, and the masses of white clouds seem [illegible] banks

संस्कृत व्याख्या—शनैः [illegible] शान्ता भूता वर्षामुक्ता सितजलच्छेद-पुलिना सिता शुभ्रा जलधरच्छेदा पुलिनानीव सैकतानीव यासां ताः धवल-जलदच्छेदपुलिनाः कलविरुतिभिः [illegible]ध्वनिभिः सारसकुलैः समन्तात् सर्वत आकीर्णाः व्याप्ता [illegible] ता निशि रात्रौ चित्राकारैः अद्भुत-दर्शनैः विकचनक्षत्रकुमुदैः विकचानि ज्योतिर्मयानि नक्षत्राणि कुमुदानीव तैः प्रफुल्लकुमुदसदृशनक्षत्रैः चिता आकुला समाकीर्णाः सत्यः दीर्घा आयताः सरित इव नद्य इव नभस्तः आकाशात् स्यन्दन्ते प्रसरन्ति।

टिप्पणी

(१) **वैहीनरे**—विहीनो नरः कामभोगात्स्यात् इति विहीनरः पृषोदरादित्वात् नलोपः। विहीनरस्य अपत्यं वैहीनरिः विहीनर+इञ्, तत्सम्बोधने वैहीनरे इति। यह कञ्चुकी का नाम है। (२) **शरत्समयसम्भृतशोभानाम्**—शरद् समय के कारण बढ़ी हुई शोभा के ऐश्वर्य से युक्त। यह दिशाम् का विशेषण है। शरदेव समयः तेन सम्भृता उपचिता शोभा यासाम् ताः तासाम्। (३) **सितजल-धरच्छेदपुलिनाः**—बालुकामय तट के समान उज्ज्वल मेघ-खण्डों से युक्त। जलानां धराः जलधराः तेषां छेदाः जलधरच्छेदाः सिताः जलधरच्छेदाः ते पुलिनानि इव इति सितजलधरच्छेदपुलिनानि तानि सन्ति आसाम् इति सितजलधरच्छेदपुलिन +अच् मत्वर्थे। यह दिशः का विशेषण है। (४) **आकीर्णाः**—व्याप्त। आ+कॄ+क्त। (५) **विकचनक्षत्रकुमुदैः**—विगताः कचाः एषाम् इति विकचानि (जिनके बाल नहीं है अर्थात् बादल के पर्दे से रहित) तादृशानि नक्षत्राणि तानि कुमुदानि इव तैः। नक्षत्र है कुमुद के समान। (६) **नभस्तः**—आकाश से। (७) **स्यन्दन्ते**—निकलती है प्रवाहित हो रही है। इसमें उपमेयोपमा अलंकार है। शिखरिणी छन्द है। पर कुछ लोग इसमें उपमा ही अलंकार मानते है।

अपामुद्वृत्तानां निजमुपदिशन्त्या स्थितिपदं
दधत्या शालीनामवनतिमुदारे सति फले।

मयूराणामुग्रं विषमिव हरन्त्या मदमहो
कृतः कृत्स्नस्यायं विनय इव लोकस्य शरदा ।।८।।

अन्वय—अहो ! उद्वृत्तानाम् अपा निज स्थितिपदम् उपदिशन्त्या शालीना फले उदारे मति अवनति दधत्या मयूराणा विषमिव उग्र मद हरन्त्या शरदा कृत्स्नस्य लोकस्य अय विनय कृत इव ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—आश्चर्य है कि किनारो को तोड कर बहने वाले जलो को स्वाभाविक स्थान का ज्ञान कराती हुई, फल लगने पर (पक जाने पर) धानों को नम्र बनाती हुई और मोरो के तीक्ष्ण विष के समान मद को हरती हुई मानो शरद् ने सारे संसार को इस विनय की शिक्षा दी है।

भाव यह है कि शरद् ऋतु को एक शिक्षक के समान माना है जो सारे संसार को नम्रता का भाव सिखा रही है। वर्षा में नदियाँ उमड कर बहती हैं पर शरद् में उनका जल कम हो जाता है, और बाढ समाप्त हो जाती है। इससे यह बताया कि मनमानी करने वाली प्रजा को मर्यादा में रहना सिखा रही है। एक तरफ भरपूर पके धानो के गुच्छो से लदे हुए धान के खेत धरती पर ऐसे झुके बना दिए गए हैं जैसे मनोवाछित धन-सम्पदा को पाकर प्रजा राजा के सामने झुकने को बाध्य कर दी जाती है। चारो ओर मयूरो की केका-ध्वनि का मद इस प्रकार चूर किया जा रहा है जैसे प्रजाओ में राज-विद्रोह का भयङ्कर विष शान्त किया जाता है।

O, it seems as if the autumn is teaching modesty or manners to the whole world, by pointing out their natural place and location to waters that had overflown the banks (of rivers), by making the paddies stoop when the crop becomes mature, by removing the turbulence of peacoks unbearable like poison

संस्कृत व्याख्या—उद्वृताना वर्षर्तौ जलप्लावेन स्वप्रवाहपथमुत्सृज्य यत्र कुत्रचित् सर्वत्र वा प्रवृत्तानाम् उन्मार्गगामिनाम् अपा जलसम्पदा नन्दानुरक्ताना प्रजानामिति ध्वनि निज स्वाभाविक स्थितिपद प्रवाहस्थान मर्यादामितिध्वनि उपदिशन्त्या बोधयन्त्या शालीना धान्यविशेषाणाम् फले प्रसवे उदारे परिणते सति अथवा सस्यादौ फले प्रभूते सजाते अवनति नम्रता दधत्या धारयन्त्या मयूराणाम् बर्हिणा प्रतिपक्षिवर्त्तिना विशिष्टपुरुषाणामितिध्वनि विषमिव गरलमिव उग्रम् तीक्ष्णम् मद गर्व हरन्त्या दूरीकुर्वन्त्या अनया शरदा कृत्स्नस्य सम्पूर्णस्य लोकस्य चराचरस्य जगत प्रकृतिवर्गस्येति ध्वनि अयम् एष विनय उपदेश कृत इव विहित इव।

टिप्पणी

(१) **उद्वृत्तानाम्**—किनारों को काटकर बहने वाले। अपा का विशेषण है। उद्–वृत्–क्त। वर्षा मे नदी-नाले उमड पडते है पर शरद् मे सब शान्त हो जाते हैं। इसमे यह उत्प्रेक्षा की हे कि शरद् सब को नम्रता सिखाती है। उद–वृत्–क्त कर्तरि=उद्वृत्ता। उत्क्रान्ता वृत्तम् इति उद्वृत्ता 'अत्यादय क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया' इत्यनेन प्रादिसमास। (२) **उपदिशन्त्या**—उपदेश देती हुई। उप–दिश्+शतृ–ङीप् (३) **स्थितिपदम्**—स्वाभाविक स्थान, मर्यादा। (४) **मयूराणाम् मदम्**—वर्षा मे मोर खूब नाचते है, शोर करते है पर शरद् मे वे शान्त रहते है इस प्रकार शरद् मानो नम्रता की शिक्षा दे रही है। इसी प्रकार धान के पौधे भी फलभार मे झुक जाते है वे भी विनीत होने की शिक्षा दे रहे है। यहाँ तीन बातो की ओर सकेत किया गया हे—(१) अत्यन्त उच्छृङ्खल मलयकेतु का भावी निग्रह। (२) राक्षस के, विष के समान अत्यन्त उग्र पराक्रम और नीतिविषयक गर्व का अपहरण। (३) साम्राज्य रूपी फल को प्राप्त करने वाले अत्यन्त उन्नतिशील चन्द्रगुप्त की विनय सम्पत्ति। इसमे शिखरिणी छन्द है। पूर्णोपमा और उत्प्रेक्षालकार का योग है।

अपि च—भर्तुस्तथा कलुषितां बहुवल्लभस्य
मार्गे कथञ्चिदवतार्य तनूभवन्तीम्।
सर्वात्मना रतिकथाचतुरेव दूती
गङ्गां शरन्नयति सिन्धुपतिं प्रसन्नाम्॥९॥

अन्वय—तथा कलुषिता तनूभवन्ती सर्वात्मना प्रसन्ना गङ्गा रतिकथा-चतुरा दूती इव शरत् बहुवल्लभस्य भर्तुर्मार्गे कथञ्चित् अवतार्य सिन्धुपति नयति ॥९॥

हिन्दी अनुवाद—प्रेम की कथाओ में दक्ष दूती जिस प्रकार खंडिता नायिका को बहुपत्नीक स्वामी के पास जाने के मार्ग पर उपस्थित कर उसे प्रसन्नचित्त कर स्वामी से मिलाती है। उसी प्रकार शरद् ऋतु कृशसलिला गंगा को सागरा-भिमुखी कर और उसको निर्मलता तथा कृशता द्वारा प्रसन्न कर समुद्र से मिलाती है। गंगा की उपमा एक खीझी हुई नायिका से दी गई है और शरद्-ऋतु की उपमा एक दूती से दी गई है जो प्रेम कथा कहने में दक्ष हो। नायिका को जैसे दूती उसके अनेक पत्नीवाले स्वामी से मिलाती है उसी प्रकार शरद्

ऋतु गगा का जल निर्मल कर उसे समुद्र से, जिसकी पत्नियाँ नदियाँ है, मिलाती है। इसमे अर्थश्लेषानुप्राणित पूर्णोपमालकार हे।

The autumn, like a female messenger clever at talking of love leads Ganga, clear all over to the sea who is the lord of streams Ganga who is somehow brought down and is now becoming thin is like a lady who is angry with her many-wived husband

सस्कृत व्याख्या—तथा तेन प्रकारेण कलुषिताम् तनूभवन्तीम् सर्वात्मना प्रसन्नाम् इमा गङ्गामपि रतिकथाचतुरा प्रियवार्तानिवेदननिपुणा दूती इव बहुवल्लभस्य अनेकसरिद्भार्यस्य भर्तुः सरितामाने समुद्रस्य मार्गे कथञ्चित् तत्प्रापणपथे अवतार्य नीत्वा सिन्धुपतिं सागरं नयति प्रापयति। प्रावृषि सर्वतः प्रधाविता गङ्गा अधुना शरदि निजप्रवाहाणामुचितेन मार्गेण वहति इति भाव। नायिका पक्षे बहुवल्लभस्य भर्तुः कलुषिता मनोमालिन्यवतीम् अतएव तनूभवन्तीम् अल्पीभवन्तीम् अनुपसर्पणात् दृष्टेरविषयीभवन्तीम् गङ्गामपि नायिका कथचित् मार्गे अवतार्य उन्मार्गगमनात् रक्षित्वा रतिकथाचतुरा दूतीव शरत् सर्वात्मना साकल्येन प्रसन्नाम् इमाम् अकलुषा सिन्धुनायक पति नयति।

टिप्पणी

(१) **कलुषिताम्**—वर्षा मे कीचड की अधिकता से गन्दी (गगा), पति का अनेक पत्नियो मे प्रेम करने के कारण ईर्ष्यालु (नायिका)। (२) **तनूभवन्तीम्**—वर्षा बीतने पर पतली या क्षीण धारावाली (गङ्गा), दुबली पतली (नायिका)। अतनु तनु भवन्ती इति तनु+च्वि, दीर्घ—भू+शतृ (स्त्रियाम्) ङीप्। (३) **रतिकथाचतुरा दूती**—प्रेमवार्ता कहने मे चतुर दूती (के समान शरद्) जैसे चतुर दूती रुष्ट नायिका को पति से मिला देती है उसी प्रकार शरद् गङ्गा को निर्मल कर समुद्र मे मिलाती है। (४) **अवतार्य्य**—उतार कर, ले जाकर। अव+तॄ+णिच्+ल्यप्। (५) **सिन्धुपतिम्**—समुद्ररूपी पति अथवा सिधूनाम् नदीनाम् पति अर्थात् नदियो का पति समुद्र। इस श्लोक मे चन्द्रगुप्त के अभ्युदय की ध्वनि निकलती है। चाणक्य की नीति राज्यलक्ष्मी को चन्द्रगुप्त के पास लाती है। इस श्लोक मे उपमा अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

(समन्तान्नाट्येनावलोक्य) अये कथमप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवम् कुसुमपुरम्। आर्य्य वैहीनरे अथ अस्मद्वचनात् आघोषितः कुसुमपुरे कौमुदीमहोत्सवः।

कञ्चुकी—देव ! अथ किम् ?

राजा—आर्य ! तदेवं किं न परिगृहीतमस्मद्वचनं पौरजनेन ?

कञ्चुकी—(कर्णौ पिधाय) देव ! शान्तं पापं, शान्तं पापं, पृथिव्यामस्खलितपूर्वं देवस्य शासनं कथं पौरेषु स्खलितुमर्हति ?

राजा—आर्य वैहीनरे ! तत् कथमप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सव-मधुनाऽपि कुसुमपुरं पश्यामि ? पश्य—

हिन्दी अनुवाद—(चारो तरफ अभिनय पूर्वक देखकर) अरे ! कुसुमपुर मे कौमुदी महोत्सव क्यो नही मनाया जा रहा है ? आर्य वैहीनरि, क्या मेरी आज्ञा से कुसुमपुर मे कौमुदी-महोत्सव घोषित कर दिया गया था ?

कञ्चुकी—हाँ

राजा—आर्य, तो पुरवासियो ने मेरी बात क्यो नही मानी ?

कञ्चुकी—(कान बन्द करके) महाराज, पाप शान्त हो, पाप शान्त हो। पाटलिपुत्र के लोग भला आप की आज्ञा कैसे न मानेगे जब सारा संसार मान रहा है।

राजा—आर्य वैहीनरि, तो मैं अब भी कुसुमपुर को बिना कौमुदीमहोत्सव के क्यो देख रहा हूँ ? देखो—

(*Acts looking all round*) Ha, how is it that Kaumudi festival is not being celebrated in Kusumpura Noble Vaihinari, was the celebration of Kaumudi festival proclaimed in my name at Kusumpura ?

Chamberlain—Yes

King—Then why my orders were not carried out by the citizens ?

Chamberlain (*closing his ears*)—Begone sir, Begone sir. Why will not the citizens of Pataliputra carry out your orders, when the whole world is carrying it out

King—Noble Vaihinari, how is it that even now Kusumpura has not commenced the Kaumudi festival

टिप्पणी

(१) **अप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवम्**—जहाँ कौमुदी महोत्सव नही मनाया जा रहा है। अप्रवृत्त कौमुदीमहोत्सव यस्मिन् स तम् (ब० व्री०)। (२) **अस्खलित-पूर्वम्**—पहले जो कभी नही खाली गया था या अमान्य था। स्खल्+क्त कर्तरि=

स्खलिनम्, पूर्वं स्खलिनम् (सुप्सुपा स०) 'भूतपूर्वे चरट्' इति निर्देशात् पूर्वशब्दस्य परनिपात । न स्खलितपूर्वम् इति अस्खलितपूर्वम् नञ् समास ।

धूर्तैरन्वीयमानाः स्फुटचतुरकथाकोविदैर्वेशनार्यो
नालङ्कुर्वन्ति रथ्याः पृथुजघनभराक्रान्तिमन्दैः प्रयातैः ।
अन्योन्यं स्पर्धमाना न च गृहविभवैः स्वामिनो मुक्तशङ्काः
साकं स्त्रीभिर्भजन्ते त्रिधिमभिलषितं पार्वणं पौरमुख्याः ।।१०।।

अन्वय—स्फुटचतुरकथाकोविदै धूर्तै अन्वीयमाना वेशनार्यं पृथुजघनभराक्रान्तिमन्दै प्रयातै रथ्या न अलङ्कुर्वन्ति । स्वामिनो मुक्तशङ्का पौरमुख्याश्च गृहविभवै अन्योन्य स्पर्धमाना (सन्त) स्त्रीभि साकम् अभिलषित पार्वण विधि न भजन्ते ।।१०।।

हिन्दी अनुवाद—बातचीत में निपुण धूर्त नागरिकों के साथ भारी नितम्बो के बोझ से धीरे-धीरे चलने वाली वेश्याये राजमार्ग को सुशोभित नही कर रही हैं। ऐश्वर्यशाली नगरवासी भी अपने वैभवो के प्रदर्शन मे पारस्परिक स्पर्धा दिखलाते हुए निश्शक स्त्रियो के साथ इस उत्सव में योग नही दे रहे है ।

Public women, followed by gay lovers versed in free clever conversation, do not adorn the street with slow movements due to the weight of the heavy hips Even the leading citizens, with their fear from the king being removed, do not compete with one another in the decoration of their houses and take part in the celebration of the Kaumadi festival along with their women

सस्कृत व्याख्या—वेशनार्य्य बारवनिता स्फुटचतुरकथाकोविदै स्फुटा स्पष्टा अगूढा इत्यर्थ चतुरा कुशला या कथा वाच तासु कोविदै विचक्षणै धूर्तै विटै अन्वीयमाना अनुगम्यमाना पृथुजघनभराक्रान्तिमन्दै पृथो स्थूलस्य जघनस्य यो भर गुरुता तस्य आक्रान्त्या आरोपणेन मन्दै अलसै प्रयातै स्वगमनागमै रथ्या राजमार्गान् न अलङ्कुर्वन्ति न शोभयन्ति न भूषयन्ति वा । स्वामिन मुक्तशङ्का भूपात् शङ्कारहिता भूत्वा पौरमुख्याश्च नगरवासिप्रमुखा गृहविभवै स्वगृहसम्पत्तिभि अन्योन्य स्पर्धमाना परस्पर विजयैषिण स्त्रीभि साकम् स्वपत्नीभि समम् अभिलषित ईप्सितम् पार्वणम् विधिम् पूर्णिमाचारम् कौमुदीमहोत्सवम् इत्यर्थ न भजन्ते न सेवमाना दृश्यन्ते ।

टिप्पणी

(१) **स्फुटचतुरकथाकोविदै.**—स्पष्ट एव चातुर्यपूर्ण वार्तालाप मे प्रवीण। कौति इति कु (शब्दे)—विच् कर्तरि=को =वेद। वेत्ति इति विद्+क कर्तरि= विद। को विद कोविद (षष्ठीतत्०)। (२) **वेशनार्य्य.**—वेश्याये। (३) **अन्वीयमाना:**—अनुमरण की जाती हुई, अनु+इ+शानच्। (४) **स्वामिनः**— मालिक से, राजा मे। स्व धनमस्तीति अस्य। स्व+आमिन् मत्वर्थे तस्मात्— यह स्वामिन् का पञ्चमी का रूप है। (५) **मुक्तशङ्का:**—निर्भय होकर। चन्द्रगुप्त के राज्य मे यह भय नही था कि राजा उनके धन को छीन लेगा। पर नन्द के राज्य मे धनियो का धन राजा द्वारा ले लिया जाता था, अत वे उसका प्रदर्शन नही करते थे। पर चन्द्रगुप्त के राज्य मे वे शङ्कारहित थे। (६) **पार्वणम्**— कौमुदी महोत्सव। अमावास्या और पूर्णिमा को पर्व कहते है। यहाँ पूर्णिमा से मतलब है। पर्वणिभव इति पार्वण। पर्वन्+अण्। (७) **पृथुजघनभराक्रान्ति-मंदैः प्रयातैः**—मोटे नितम्बो के भार के कारण मद गमनो से। पृथो जघनस्य यो भर तस्य आक्रान्त्या मन्दै प्रयातै गमनै। प्र+या+क्त, तृतीया बहुवचने विभक्तिकार्यम्=प्रयातै। यहाँ स्रग्धरा छन्द है, स्वभावोक्ति अलकार है।

कञ्चुकी—देव! एवमेतत्।

राजा—किमेतत्?

कञ्चुकी—देव! अत इदम्—।

राजा—आर्य! स्फुटमभिधीयताम्।

कञ्चुकी—'देव! प्रतिषिद्धः कौमुदीमहोत्सवः।

राजा—(सक्रोधम्) आः केन?

कञ्चुकी—नातः परमस्माभिर्देवो विज्ञापयितुं शक्यते।

राजा—न खल्वार्येण चाणक्येनापहृतः प्रेक्षकाणामतिशयरमणीयश्चक्षुषो विषयः?

कञ्चुकी—देव! कोऽन्यो जीवितुकामो देवस्य शासनमतिवर्तेत?

राजा—शोणोत्तरे! उपवेष्टुमिच्छामि।

प्रतीहारी—देव ! एदं सिंहासणं । उपबिसदु देवो । (देव ! एतत् सिंहासनम् । उपविशतु देवः ।)

राजा—(नाटयेनोपविश्य) आर्य वैहीनरे ! आर्यचाणक्यं द्रष्टुमिच्छामि ।

कञ्चुकी—यदाज्ञापयति देवः । (इति निष्क्रान्तः)

(ततः प्रविशत्यासनस्थः स्वभवनगतः कोपानुविद्धां चिन्तां नाटयन् चाणक्यः ।)

चाणक्यः—(आत्मगतम्) कथं स्पर्धते मया सह दुरात्मा राक्षसहतकः ! कुतः ?—

हिन्दी अनुवाद—कञ्चुकी—महाराज, यह ऐसा ही है।

राजा—यह क्या है ?

कञ्चुकी—महाराज, इसलिए यह।

राजा—आर्य, साफ-साफ कहिए।

कञ्चुकी—महाराज, कौमुदीमहोत्सव मना कर दिया गया है।

राजा—(क्रोध से) अरे किसके द्वारा ?

कञ्चुकी—इसके आगे मैं महाराज से नही कह सकता।

राजा—क्या आर्य चाणक्य ने देखने वालो को आँखो के इस सुन्दर दृश्य से तो वचित नही कर दिया ?

कञ्चुकी—महाराज, दूसरा अपने जीवन से ममता रखने वाला ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा का उल्लंघन करे।

राजा—शोणोत्तरे, मैं बैठना चाहता हूँ।

प्रतीहारी—महाराज, यह सिहसान है, आप विराजे।

राजा—(बैठने का अभिनय करके) आर्य वैहीनरि, आर्य चाणक्य को देखना चाहता हूँ।

कञ्चुकी—जो महाराज की आज्ञा (बाहर जाता है)।

(तब अपने भवन मे आसन पर विराजमान क्रोधपूर्वक चिन्ता का अभिनय करते हुए चाणक्य का प्रवेश)

चाणक्य—(मन में) दुष्ट राक्षस मेरे साथ क्यो स्पर्धा कर रहा है क्योकि—

Chamberlain—It is indeed so

King—What is it ?

Chamberlain—Sire, therefore this

King—Speak out plainly

Chamberlain—Sire, the Kaumudi festival has been forbidden.

King (With anger)—Ha, by whom ?

Chamberlain—Sire, I cannot tell you anything more than this

King—Really, has this scene delightful to the eyes of onlookers been removed by Noble Chanakya ?

Chamberlain—Sire who else with the desire of living, can over-rule sire's command ?

King—Sonottara I wish to sit down

Warder—Sire here is the throne

King (Acting sitting down)—Noble Vahinari, I wish to see Noble Chanakya

Chamberlain—As Sire commands (*Goes out*)

(Then enter on a seat, in his own house Chanakya acting anxiety mixed with anger)

How so, this wicked Rakshas wants to compete with me

कृतागाः कौटिल्यो भुजग इव निर्याय नगराद्
यथा नन्दान् हत्वा नृपतिमकरोन्मौर्यवृषलम् ।
तथाहं मौर्येन्दोः श्रियमपहरामीति कृतधीः
प्रभावं मद्बुद्धेरतिशयितुमेष व्यवसितः ॥११॥

अन्वय—यथा कृतागा कौटिल्य भुजग इव नगरात् निर्याय नन्दान् हत्वा मौर्यवृषल नृपतिम् अकरोत् तथा अह मौर्येन्दो श्रियम् अपहरामि इति कृतधी एष मद्बुद्धे प्रभावम् अतिशयितु व्यवसित ।

हिन्दी अनुवाद—कृतानिष्ट सर्प के समान अपमानित होकर जिस प्रकार चाणक्य ने नगर से निकल कर नन्दो का नाश करके वृषल मौर्य को राजा बनाया "उसी प्रकार मै भी चन्द्रगुप्त की राज्यलक्ष्मी का अपहरण करूँगा" ऐसा सकल्प कर यह राक्षस मेरी महद्बुद्धि का अतिक्रमण करना चाहता है ।

Has this fellow Rakshasa made up his mind to surpass me in wit with this intention—"I will wrest the fortune of the moon-like Maurya just as Kautilya who, being insulted, went out of the city like a molested snake and, having destroyed all the Nandas, made Maurya a king"

सस्कृत व्याख्या—यथा कृतागा नन्देन कृताप्रिय कौटिल्य चाणक्य भुजग इव पादादिप्रहत सर्प इव नगरात् पाटलिपुत्रात् निर्याय बहि निसृत्य नन्दान् नन्दवंशीयान् हत्वा मौर्यवृषलम् चन्द्रगुप्त राजानमकरोत् तथा एष राक्षस मौर्येन्दो मौर्यवशचन्द्रमस चन्द्रगुप्तस्य श्रियम् राज्यलक्ष्मीम् अपहरामि आत्मसात्

करिष्यामि इति अनेन प्रकारेण कृतधी कृता कल्पिता धी मति येन तादृश कृतसकल्प मद्बुद्धे मदीयाया नीते प्रभावम् सामर्थ्यम् अतिशयितुम् अतिवर्तितु व्यवसित उद्यत । स हि मन्यते मद्बुद्धे अपि आत्मन बुद्धि प्रकृष्टा इति अहो भ्रम इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **कोपानुविद्धाम्**—क्रोध से मिली हुई। कोपेन अनुविद्धाम् इति । अनु+व्यध्+क्त । (२) **भुजग इव**—सर्प के समान । भुजेन कुटिलगत्या गच्छतीति भुज+गम्+ड । पादाहत साँप जैसे क्रुद्ध होकर बदला लेने की सोचता है उसी प्रकार कौटिल्य ने भी बदला लेने को सोच लिया था। (३) **कृतागाः**—जिसका अनिष्ट किया गया हो । नन्दो ने एक बार ब्राह्मणभोज के अवसर पर चाणक्य का अपमान किया था । उन लोगो ने उसे यथोचित आसन नही दिया तथा तिरस्कारपूर्वक वहाँ मे निकाल दिया था । कृतम् आचरितम् आग अपराध यस्मिन् स कृतागा (ब० व्री०) (४) **मौर्येन्दोः**—मौर्यवश के चन्द्रमा का। (५) **प्रकर्षम्**—बडप्पन, श्रेष्ठता । प्र+कृष्+घञ् । (६) **अतिशयितुम्**—बढने के लिए। अति+शी+तुमुन् । (७) **व्यवसित**·—उद्यत । तैयार । वि+अव+सो+क्त । राक्षस मेरी बुद्धि को भी अतिक्रमण करना चाहता है। यह उसका भ्रम है। यहाँ उपमा अलङ्कार और शिखरिणी छन्द है।

(प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्यं बद्ध्वा) राक्षस ! राक्षस ! विरम्यतामस्माद्दुर्व्यवसितात् ।

उत्सिक्तः कुसचिवदृष्टराज्यतन्त्रो
नन्दोऽसौ न भवति चन्द्रगुप्त एषः ।
चाणक्यस्त्वमपि च नैव केवलं ते
साधर्म्यं मदनुकृतेः प्रधानवैरम् ।।१२।।

अन्वय—एष चन्द्रगुप्त उत्सिक्त कुसचिवदृष्टराज्यतन्त्र असौ नन्द न भवति । त्वमपि च नैव चाणक्य । केवल प्रधानवैर ते मदनुकृते साधर्म्यम् ।।१२।।

हिन्दी अनुवाद—(आकाश में प्रत्यक्ष देखते हुए की तरह दृष्टि बाँधकर) राक्षस, राक्षस, इस दुष्प्रयत्न को त्याग दो। चन्द्रगुप्त उद्धत नन्द नहीं है जिसका राजकाज दुष्ट मंत्रियों के ही ऊपर निर्भर था और न तुम चाणक्य ही हो। हमारे और तुम्हारे कामो में यही समता है कि दोनों ने राजाओ से बैर मोल लिया।

भाव यह है कि चाणक्य की बराबरी करना तुम्हारी धृष्टता है। साम्य यही है कि तुम चन्द्रगुप्त के वैसे ही शत्रु बन रहे हो जैसे मैं नन्द का। चन्द्रगुप्त कहाँ और कहाँ तुम्हारे सरीखे विवेकहीन मन्त्रियो पर राज्य-भार छोड़ने वाला नन्द।

(*Looking at the sky*) Rakshasa, Rakshasa, desist from this mad pursuit This is King Chandragupta, not the haughty Nanda whose state-affairs were managed by bad ministers You too are not Chanakya In imitating me the common quality is our enemity with kings (I am enemy of Nanda and you are the enemy of Chandragupta)

संस्कृत व्याख्या—राक्षस ! कि न जानीषे यदेष चन्द्रगुप्त मौर्यवशेन्दु मही विजिगीषु उत्सिक्त गर्वित कुसचिवदृष्टराज्यतत्र कुसिचवै दृष्ट सचालित राज्यतत्र यस्य स तथाविधोऽसौ मृतो नन्दो न भवति। नन्दमौर्ययो महदन्तर-मिति भाव त्वमपि च नैव चाणक्य कौटिल्य केवलम् एकम् प्रधानवैरम् मुख्य-शत्रुता ते तव मदनुकृते ममानुकरणस्य साधर्म्यम् मादृश्यम्। अर्थात् मम इव तवापि राज्ञा विरोध एतन्मात्रम् आवयो समता। चन्द्रगुप्तात् हीन नन्दः त्वम् च चाणक्यात् हीन। तस्मात् विरम्यताम् अस्माद्दुर्व्यसनात्।

टिप्पणी

(१) **दुर्व्यसनात्**—बुरे काम से। "जुगुप्साविराम" आदि से यहाँ पञ्चमी हुई है। (२) **साधर्म्यम्**—समानता। बराबरी। समानो धर्म सधर्म (कर्म० स०), समान इत्यस्य सादेश। स एव इति सधर्म+ष्यञ् स्वार्थे। (३) **प्रधानवैरम्**—राजा से वैर। चाणक्य के कहने का भाव यह है कि हमारी तुम्हारी बुद्धि बराबर नही हो सकती। समानता केवल यही है कि हम और तुम दोनो ने राजा से वैर मोल लिया है। परन्तु चन्द्रगुप्त नन्द से अच्छा है। अत तुम अपने काम से विरत हो जाओ। इसमे परिकर तथा व्यतिरेकालकार है और प्रहर्षिणी छन्द है।

(विचिन्त्य) अथवा नातिमात्रमस्मिन् वस्तुनि मया मनः खेदयितव्यम्। कुतः ?—

मद्भृत्यैः किल सोऽपि पर्वतसुतो व्याप्तः प्रविष्टान्तरै-
रुद्युक्ताश्च नियोगसाधनविधौ सिद्धार्थकाद्याः स्पशाः।
कृत्वा सम्प्रति कैतवेन कलहं मौर्येन्दुना राक्षसं
भेत्स्यामि स्वमतेन भेदकुशलो ह्येष प्रतीपं द्विषः ॥१३॥

अन्वय—स पर्वतसुत अपि प्रविष्टान्तरै मद्भृत्यै व्याप्त किल च सिद्धार्थकाद्या स्पशा नियोगसाधनविधौ उद्युक्ता । सम्प्रति भेदकुशल (अहम्) कैतवेन मौर्येन्दुना कलह कृत्वा प्रतीप राक्षसम् एप स्वमतेन द्विष भेत्स्यामि ॥१३॥

हिन्दी अनुवाद—(सोचकर) अथवा इस विषय मे मुझे अपने मन को अधिक खिन्न नही करना चाहिए। क्योकि—वह पर्वतेश्वर का पुत्र मलयकेतु भी हृदय में पैठे हुए मेरे अनुचरो से घिरा हुआ है और सिद्धार्थक आदि गुप्तचर अपने कर्तव्य पालन मे लगे है। इस समय चन्द्रगुप्त से बनावटी कलह करके भेद नीति मे कुशल मै प्रतिकूल राक्षस को अपनी बुद्धि से शत्रु (मलयकेतु) से अलग कर दूँगा।

(*Thinking*) Or I should not trouble my mind too much in this matter why—He too, the son of Parvatak, is surrounded by my spies that have won his heart, spies like Siddharthaka and others are engaged in doing their duty I, who am expert in the policy of alienation, will alienate the enemical Rakshas from our enemy (Malayaketu) by my wit by picking up an artificial quarrel with Chandragupta

संस्कृत व्याख्या—स पर्वतसुत मलयकेतुरपि प्रविष्टान्तरै आयत्तीकृतशत्रुहृदयै मद्भृत्यै अस्मत्पक्षीयै सेवकै व्याप्त किल च समन्तात् सवृत एव तिष्ठति सिद्धार्थकाद्या सिद्धार्थकप्रमुखा स्पशा चरा नियोगसाधनविधौ अस्मदाज्ञानुष्ठानमहाकर्मणि च उद्युक्ता तत्परा । सम्प्रति इदानीम् भेदकुशल अहम् भेदे पार्थक्ये कुशल चतुर अहम् कैतवेन व्याजेन न तु वस्तुत मौर्येन्दुना चन्द्रगुप्तेन कलह कृत्वा विवाद कृत्वा प्रतीप मन्नीतिप्रभावात् प्रतिकूलतया प्रख्यायमान राक्षसम् एप अहम् स्वमतेन आत्मच्छन्देन द्विष शत्रो मलयकेतोरित्यर्थ भेत्स्यामि पृथक् करिष्यामि ।

टिप्पणी

(१) **प्रविष्टान्तरै.**—अन्त करण मे प्रवेश पाने वालो से अर्थात् जिन लोगो ने हृदय मे विश्वास जमा लिया है। प्रविष्टम् आयत्तीकृतम् अन्त अन्त करण यै ते तै । (२) **उद्युक्ता**—तत्पर है। उद्+युज्+क्त। (३) **स्पशा.**—गुप्तचरा । (४) **कैतवेन**—नकली। (५) **स्वमतेन**—अपनी बुद्धि से। (६) **भेत्स्यामि**—फूट पैदा कर दूंगा अर्थात् राक्षस को मलयकेतु से शत्रुता कराकर अलग कर दूँगा। क्योकि भागुरायण आदि चाणक्य के गुप्तचर है। इन लोगो ने मलयकेतु को अपने वश मे कर रखा है। सिद्धार्थक आदि भी चाणक्य

का ढेर है। चारों ओर छप्पर पर सुखाई जाने वाली समिधा के भार से घर झुका जा रहा है और दीवारें भी टूटी-फूटी हैं।

(*Going round and observing*) This is the house of Noble Chanakya (*Entering and seeing*) Oh, the magnificience of the minister of the king of kings. Thus on one side there is a piece of stone to break the cowdung, on the other side there is the heap of Kusa grass collected by the disciples, the house too is seen with old and broken walls and the corners of the roof are bending with the burden of sacrificial fuel that is being dried.

संस्कृत व्याख्या—शुष्काणाम् गोमयानाम् गोपुरीषपिण्डानाम् भेदकम् चूर्णन-साधकम् एतत् उपलशकलम् प्रस्तरखण्ड दृश्यते वटुभि शिष्यभूतै ब्राह्मणैः उप-हृतानामानीतानाम् बर्हिषा कुशानाम् स्तोम समूह (दृश्यते) शुष्यमाणाभि शुष्य-न्तीभि शुष्काभि च आभि दृश्यमानाभि. समिद्भि काष्ठै विनमितपटलान्तम् भाराधिक्यात् जीर्णशीर्णत्वाद्वा विभग्नतृणच्छादिप्रान्त जीर्णकुड्यम् विशीर्णमिति शरणमपि गृहमपि दृश्यते। अनेन अस्य अनासक्तियोगत्व दृश्यते।

टिप्पणी

(१) **राजाधिराजमन्त्रिणः**—राजाओ के राजा के मन्त्री का। अधिको राजा अधिराज (प्रादितत्०), समासान्तटच्प्रत्यय। राज्ञाम् अधिराज तस्य मन्त्री (षष्ठीतत्०), तस्य। (२) **उपलशकलम्**—पत्थर का टुकडा। (३) **गोमया-नाम् भेदकम्**—कण्डो को तोडने के लिए। (४) **स्तोम**—समूह। (५) **शरणम्**—घर। (६) **विनमितपटलान्तम्**—जिसके छप्पर की ओलती झुक गई है। विनमित पटलान्त यस्य तत्। यह शरणम् का विशेषण है। (७) **जीर्णकुड्यम्**—पुरानी दीवालो वाला। जीर्णं कुड्य यस्य तत् शरणम्। "भित्ति स्त्री कुड्यम्" इत्यमर। इससे चाणक्य के घर की सादगी दिखाकर यह बताया है कि चाणक्य अपने वैभव के लिए कार्य नही कर रहा था। वह चन्द्रगुप्त के लिए कर रहा था। इससे बढकर अनासक्ति योग का क्या उदाहरण हो सकता है। इस श्लोक मे स्वभावोक्ति अलकार तथा मालिनी छन्द है। छन्द का लक्षण—'ननमयययुतेय मालिनी भोगिलोकै'।

तत् स्थाने खल्वस्य वृषलो देवश्चन्द्रगुप्त इति। कुतः—

स्तुवन्त्यश्रान्तास्याः क्षितिपतिसभूतैरपि गुणैः
प्रवाचः कार्पण्याद् यदवितथवाचोऽपि कृतिनः।

प्रभावस्तृष्णायाः स खलु सकलः स्यादितरथा
निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कारविषयः ।।१६।।

अन्वय—अवितथवाच कृतिन अपि यत् कार्पण्यात् प्रवाच (सन्त) अश्रान्तास्या (भूत्वा) अभूतैरपि गुणै क्षितिपनि स्तुवन्ति स खलु तृष्णाया सकल प्रभाव । इतरथा निरीहाणाम् ईश तृणमिव तिरस्कारविषय स्यात् ।।१६।।

हिन्दी अनुवाद—तो चाणक्य का चन्द्रगुप्त को वृषल कहना उचित ही है, क्योकि सत्य वचन बोलने वाले बडे-बड़े विद्वान् भी दीनतावश वाचाल होते हुए, राजा की झूठ ही प्रशंसा करते है जो गुण उसमें नही है उन गुणों का भी वे उसमें आरोप करके धन की लालच से उसकी स्तुति करते हैं। यह अवश्य ही तृष्णा का प्रभाव है। अन्यथा निरीह व्यक्ति के लिए तो राजा तृण के समान तिरस्कार का विषय है।

It is but proper that to him Sire Chandragupta is only a Vrishal For—It is due to greed that even learned men of truthful speech being helpless, flatter and praise a king with mouths untired even for those virtues which are not in him (*king*) But for those who have no desire the king is, like a straw, an object of contempt

संस्कृत व्याख्या—अवितथवाच सत्यवादिन कृतिन यशस्विन अपि यत् कार्पण्यात् दारिद्रचात् प्रवाच वाचाला सन्त अश्रान्तास्या अश्रान्त श्रमरहित आस्यम् मुख येषा बहुभाषणेऽपि श्रमरहिता भूत्वा अभूतैरपि गुणै अविद्यमानैरपि गुणै क्षितिपति भूपाल स्तुवन्ति गायन्ति स खलु निश्चयेन तृष्णाया लोभस्य प्रभाव । इतरथा अन्यथा असति लोभे निरीहाणाम् तृष्णारहितानाम् ईश प्रभु राजा वा तृणमिव तिरस्कारविषय अनादरपात्रम् इति ।

टिप्पणी

(१) **तत्स्थाने खल्वस्य**—शूद्र स्त्री के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण चन्द्रगुप्त को चाणक्य 'वृषल' कहता है। 'वृषल' का अर्थ है—शूद्र। किन्तु अब चन्द्रगुप्त सम्राट् है। उसे वृषल कहना विपत्ति को बुलाना है। परन्तु धन्य है चाणक्य की नि स्पृहता जिससे वह सम्राट् को भी दास के समान वृषल कहकर पुकारता है। (२) **अवितथवाचः**—सत्यवादी लोग। अवितथा वाक् येषा ते। (३) **कृतिन**—विद्वान् लोग। (४) **अश्रान्तास्या**—मुँह थकता नही जिनका। अश्रान्तम् आस्य येषा ते अश्रान्तास्या । प्रशसा करते-करते उनका मुँह थकता

नहीं। (५) **अभूतैरपि गुणै** —जो गुण राजा मे नही है उन गुणो का भी आरोप करके। (६) **इतरथा**—नही तो। यह तृष्णा का ही प्रभाव है कि वडे-बडे सत्यवादी विद्वान् राजाओ की झूठी प्रशसा करते है। एक हिन्दी कवि ने भी कहा है—'दिए लोभ चशमा दृगन लघु पुनि वडो दिखात'। उपमा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

(अवलोक्य सभयम्) तदयमार्यचाणक्यस्तिष्ठति।

यो नन्दमौर्यनृपयोः परिभूय लोक-
मस्तोदयौ प्रतिदिशन्नविभिन्नकालम्।
पर्यायपातितहिमोष्णमसर्वगामि
धाम्नातिशाययति धाम सहस्रधाम्नः ॥१७॥

अन्वय—य लोक परिभूय अविभिन्नकाल नन्दमौर्यनृपयो अस्तोदयौ प्रतिदिशन् सहस्रधाम्न असर्वगामि पर्यायपातितहिमोष्ण धाम धाम्ना अतिशाययति ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—(देखकर भयभीत होकर) **अरे यह आर्य चाणक्य विराजमान है। जो अपने तेज से सहस्र किरण वाले सूर्य के भी तेज को नीचा दिखाते है। कहाँ तो इनका तेज सारे ससार का सहसा आक्रामक और नन्दराज और मौर्यराज का अस्त और उदय करने वाला और कहाँ सूर्य का तेज जो सर्दी और गरमी का क्रमश. करने वाला है।**

(*Observing with awe*) Oh, here is sitting Noble Chanakya who—Simultaneously caused the fall and the rise of the Nandas and the Maurya king respectively defying the world and thus causes his glory to surpass the glory of the thousand-rayed sun, which does not reach everywhere at the same time and imparts heat and cold by turns

सस्कृत व्याख्या—य चाणक्य लोकम् ससारम् परिभूय अगणयित्वा अविभिन्नकालम् युगपत् नन्दमौर्यनृपयो नृपस्य नन्दस्य मौर्यस्य च अस्तोदयौ ह्रासोपचयौ प्रतिदिशन् ददत् सहस्रधाम्न सूर्यस्य असर्वगामि युगपदेव सकल लोक गन्तु यन्न शक्नोति तादृशम् पर्यायपातितहिमोष्णम् पर्यायेण कालक्रमेण पातितम् अवतारितम् हिम शीतम् उष्णम् आतपश्च येन तादृश धाम तेज धाम्ना स्वतेजसा अतिशाययति अतिक्रामयति।

टिप्पणी

(१) **लोकम्**—ससार को। ढुण्डिराज टीकाकार का कहना है कि सूर्य पक्ष मे लोकम् का अर्थ है लोकालोक पर्वत। (२) **पर्यायपातितहिमोष्णम्**—बारी-बारी से गर्मी और शीत का करने वाला। परि+आ+इ+अच् अथवा अय्+घञ् भावे=पर्याय। हिमम् च उष्ण च हिमोष्णे। पर्यायेण पातिते हिमोष्णे येन तत्। यह धाम का विशेषण है। (३) **असर्वगामि**—जो सब जगह नही जा सकता। (४) **अतिशाययति**—अतिक्रमण कर रहा है। भाव यह है कि सूर्य तो बारी-बारी से सरदी और गर्मी देता है पर चाणक्य ने साथ ही साथ नन्दवश का नाश (शीत) और मौर्य-वश का उदय (गर्मी) किया। इसलिए चाणक्य का तेज अधिक हुआ, क्योकि वह साथ ही साथ दोनो वस्तुओ का करने वाला है। यहाँ अतिशयोक्ति अलकार और वसन्ततिलका छन्द है।

(जानुभ्याम् भूमौ निपत्य) जयतु जयत्वार्यः।

चाणक्यः—(नाट्येनावलोक्य) वहीनरे! किमागमन-प्रयोजनम्!

कञ्चुकी—आर्य! प्रणतसम्भ्रमसमुच्चलितभूमिपाल-मौलिमालामाणिक्यशकलशिखापिशङ्गीकृतपादपद्मयुगलः सुगृहीतनामधेयो देवश्चन्द्रगुप्त आर्यं शिरसा प्रणिपत्य विज्ञापयति—'अकृतक्रियान्तरायमार्यं द्रष्टुमिच्छामि' इति।

चाणक्यः—वृषलो मां द्रष्टुमिच्छति? वैहीनरे! न खलु वृषलश्रवणपथगतोऽयं मत्कृतः कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधः?

कञ्चुकी—आर्य! अथ किम्?

चाणक्यः—(सक्रोधम्) आः! केन कथितम्?

कञ्चुकी—(भयं नाटयित्वा) प्रसीदत्वार्यः। स्वयमेव सुगाङ्गप्रासादशिखरगतेन देवेनावलोकितमप्रवृत्तकौमुदीमहोत्सवं कुसुमपुरम्।

चाणक्यः—आः! ज्ञातम्। भवद्भिरेव मदन्तरा प्रोत्साह्य रोषितो वृषलः। किमन्यत्?

कञ्चुकी—(सभयं तूष्णीमधोमुखस्तिष्ठति।)

हिन्दी अनुवाद (घुटनों के बल जमीन पर पडकर) आर्य की जय हो, जय हो।

चाणक्य—(देखने का अभिनय करके) वैहीनरि, किस प्रयोजन से आगमन हुआ ?

कञ्चुकी—प्रातःस्मरणीय महाराज चन्द्रगुप्त ने, जिनके चरणकमल निरन्तर अभिनन्दनार्थ झुककर आने वाले और जाने वाले राजाओ के मौलिमुकुटों के मणि-माणिक्यो की रश्मि-शिखाओ से लाल और पीला बने रहते है, सिर झुकाकर आप से निवेदन किया है कि यदि आर्य के किसी अन्य कार्य में कोई विघ्न न पड़े तो दर्शन करने की इच्छा है।

चाणक्य—क्या वृषल मुझे देखना चाहता है ? वैहीनरि, ऐसा तो नहीं है कि मेरे द्वारा किया गया कौमुदीमहोत्सव का निषेध वृषल के कान तक पहुँच गया हो ?

कञ्चुकी—आर्य, ऐसी ही बात है।

चाणक्य—(क्रोध से) अरे किसने बताया है ?

कञ्चुकी—(भय का अभिनय करके) आर्य प्रसन्न हो। सम्राट् ने स्वयं सुगाङ्गप्रासाद के शिखर से आकर देखा कि कुसुमपुर में कौमुदी-महोत्सव नहीं मनाया जा रहा है।

चाणक्य—अरे, समझ गया। तुम्हीं लोगो ने मेरे विषय में कुछ इधर-उधर की बात कह कर वृषल को नाराज कर दिया। और क्या ?

कञ्चुकी—(डर के मारे सिर नीचे किए खड़ा रहता है।)

(*Touching the ground with the knees*) Victory to the Noble Sir.

Chanakya—Vahinari, what is the purpose of your coming ?

Chamberlain—Noble Sir, king Chandragupta of auspicious name, whose both lotus-like feet are made red and yellow by shoots of lustre of the pieces of gems that are moved on the crest of kings while they are bowing before him, after having saluted Noble Sir, says this, "I wish to see the Noble Preceptor if his other works are not interfered with"

Chanakya—Does the Vrishal wish to see me ? Vahinari, is it not that the prohibition by me of the celebration of Kaumudi festival has reached the ears of the Vrishal ?

Chamberlain—Yes, Noble Sir

Chanakya (*With anger*)—Ah, who told this ?

Chamberlain (*With fear*)—Noble Sir, the king himself came to the Suganga Palace and from there he saw Kusumpura was without the celebration of kaumudi festival

Chanakya—Ah, I understand Then at this occasion you people told something against me and enraged the Vrishal.

Chamberlain—(Stands silent with face downcast and acts to be afraid)

टिप्पणी

(१) **प्रणतसम्भ्रम ··युगल**—जिनके दोनो चरण कमल प्रणामार्थ झुके हुए तथा जल्दी के कारण कॉपते हुए राजाओ की चूडामणि की किरणो से लाल-पीले बने रहते है। प्रणता कृतप्रणामा अतएव सत्वर समुच्चलिता ये भूमिपाला तेषा मौलय चूडा तेषा मालासु यानि माणिक्यशकलानि रत्नखण्डानि तेषा शिखाभि पिशङ्गीकृतम् पादपद्मयुगल यस्य स । (२) **अकृतक्रियान्तरायम्**—जिसके अन्य किसी कार्य मे विघ्न न पडा हो, अकृत क्रियाया अन्तराय यस्य तादृशम्। अन्त मध्ये अयनम् इति अन्तर्+अय्+घञ् भावे=अन्तराय । क्रियाया अन्तराय (प० त०), अकृत क्रियान्तरायो येन यस्य वा (ब० स०), तम्। (३) **अन्तरा**—बीच मे। मौका पाकर, मेरे न रहने पर । (४) **प्रोत्साह्य**—उत्तेजित करके। प्र+उद्+सह्+णिच्+ल्यप्।

चाणक्यः—अहो ! राजपरिजनस्य चाणक्योपरि विद्वेषपक्षपातः। अथ क्व वृषलस्तिष्ठति ?

कञ्चुकी—(भयं नाटयन्) आर्य ! सुगाङ्गप्रासादगतेन देवेनाहमार्यपादमूलं प्रेषितः।

चाणक्यः—(उत्थाय) कञ्चुकिन् ! सुगाङ्गप्रासादमार्गमादेशय ।

कञ्चुकी—इत इत आर्यः। (इत्युभौ परिक्रामतः।)

कञ्चुकी—अयं सुगाङ्गप्रासादः, शनैरारोढुमर्हत्यार्यः।

चाणक्यः—(नाट्येनारुह्यावलोक्य च सहर्षमात्मगतम्।) अये ! सिंहासनमध्यास्ते वृषलः। साधु साधु !—

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—ओह ! चाणक्य के साथ राजा के नौकरों का अतिशय द्वेष है। अच्छा, वृषल कहाँ है ?

कंचुकी—(भय का अभिनय करते हुए) आर्य, सुगाङ्गप्रासाद में गए हुए महाराज ने मुझे आपके पास भेजा है।

चाणक्य—(उठकर) कञ्चुकी, सुगाङ्गप्रासाद का मार्ग बताओ।

कंचुकी—इधर से आर्य, इधर से (दोनों घूमते हैं)।

कंचुकी—यह सुगाङ्गप्रासाद है। आर्य धीरे से (सँभाल कर) चढ़ें।

चाणक्य—(चढने का अभिनय करके, देखकर प्रसन्नता के साथ, स्वगत) अहा, वृषल सिंहासन पर विराजमान है। बहुत अच्छा, बहुत अच्छा।

Oh, the leaning of the king's servants to the side of hatred towards Chanakya Well where is Vrishala ?

Chamberlain (Acting fright)—Noble Sir, I have been sent to you by the king sitting on the Suganga

Chanakya (getting up)—Chamberlain, show me the way to the Suganga

Chamberlain—This way Noble Sir, this way (*both move*)

Chamberlain—This is the Suganga Palace Let Noble Sir, move slowly

Chanakya (Acts ascent and noticing)—Ha, Vrishala is seated on the throne Bravo

टिप्पणी

(१) **राजपरिजनस्य**—राजा के नौकरों का। (२) **विद्वेषपक्षपातः**—द्वेष मे पक्षपात अर्थात् द्वेष करना। पक्षे पातः पक्षपातः (सुप्सुपा स०), विद्वेषे पक्षपातः विद्वेषपक्षपातः (सुप्सुपा स०)। (३) **सिंहासनमध्यास्ते**—सिंहासन पर विराजमान है। "अधिशीङ्स्थासां कर्म" से द्वितीया हुई।

नन्दैर्वियुक्तमनपेक्षितराजवृत्तै-
रध्यासितञ्च वृषलेन वृषेण राज्ञाम्।
सिंहासनं सदृशपार्थिवसङ्गतञ्च
प्रीतिं परां प्रगुणयन्ति गुणा ममैते ॥१८॥

अन्वय—सिंहासनम् अनपेक्षितराजवृत्तैः नन्दैः वियुक्तं, राज्ञां वृषेण वृषलेन अध्यासितं च, सदृशपार्थिवसङ्गतं च—एते गुणा मम परां प्रीतिं प्रगुणयन्ति ॥१८॥

हिन्दी अनुवाद—राजधर्म को न मानने वाले नन्द से वियुक्त और राजाओं में श्रेष्ठ वृषल से सुशोभित तथा अपने अनुरूप राजा से युक्त सिंहासन इन तीनों गुणो को देखकर मुझे बड़ा आनन्द हो रहा है।

The throne has been vacated by the Nanda's who did not carry out the duties of a king, and has been occupied by Vrishala, the best of kings, and is now under a king deserving it—these three virtues give me great pleasure

संस्कृत व्याख्या—सिंहासनम् राजासनम् अनपेक्षितराजवृत्तैः न अपेक्षितम् अनादृतम् राजवृत्तम् राजधर्मं यैः तादृशैः नन्दैः वियुक्तम् रहितम् राज्ञां वृषेण

राजराजेश्वरेण वृषलेन चन्द्रगुप्तेन अध्यासितम् अधिष्ठितम् अनया च आक्रान्त्या इद सदृशेन योग्येन आत्मानुरूपेण पार्थिवेन अद्य सगत च विभूषित च । एते गुणा अभ्युदया मम परा प्रीतिम् आनन्दम् प्रगुणयन्ति जनयन्ति समाहरन्तीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **अनपेक्षितराजवृत्तै**—राजधर्म की उपेक्षा करने वाले नन्द वश के राजा लोग । अनपेक्षित राजवृत्तम् यै तादृशै । (२) **राज्ञा वृषेण**—राजाओ मे श्रेष्ठ । (३) **सदृशपार्थिवसगत च**—उपयुक्त राजा से युक्त होने पर । सदृशेन योग्येन पार्थिवेन सगतमिति (तृ० तत्पु०) । (४) **प्रगुणयन्ति**—पैदा कर रहे है । एते गुणाः—तीन गुणो मे पहला तो नन्द से वियुक्त होना, दूसरा राजाओ मे श्रेष्ठ वृषल से अधिष्ठित होना, तीसरा यह कि सदृश राजा से युक्त होना । सिहासन के योग्य बतलाकर प्रशसा करने से 'सम' नामक अलकार हुआ । सतोष के कारण होने मे समुच्चय अलकार हुआ । वसन्ततिलका छन्द है ।

(उपसृत्य) विजयतां वृषलः ।

(सिंहासनादुत्थाय चाणक्यस्य पादौ गृहीत्वा) आर्य ! चन्द्रगुप्तः प्रणमति ।

चाणक्यः—(पाणौ गृहीत्वा) उत्तिष्ठोत्तिष्ठ वत्स !—

आ शैलेन्द्राच्छिलान्तःस्खलितसुरनदीशीकरासारशीता-
त्तीरान्तान्नैकरागस्फुरितमणिरुचो दक्षिणस्यार्णवस्य ।
आगत्यागत्य भीतिप्रणतनृपशतैः शश्वदेव क्रियन्तां
चूडारत्नांशुगर्भास्तव चरणयुगस्याङ्गुलीरन्ध्रभागाः ॥१६॥

अन्वय—शिलान्त स्खलितसुरनदीशीकरासारशीतात् शैलेन्द्रात् आ, नैकरागस्फुरितमणिरुच दक्षिणस्य अर्णवस्य तीरान्तात् आगत्य आगत्य भीतिप्रणतनृपशतै. तव चरणयुगस्य अङ्गुलीरन्ध्रभागा. शश्वदेव चूडारत्नाशुगर्भा. क्रियन्ताम् ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—(पास जाकर) वृषल की जय हो ।

(सिंहासन से उठकर चाणक्य के पैर पकड़ कर) आर्य, चन्द्रगुप्त प्रणाम करता है ।

चाणक्य—(हाथ पकड़कर) बेटा, उठो, उठो ।

गंगा जी के जलकण से शीतल होने वाले हिमालय के शृंग जहाँ तक है और दक्षिण की ओर जहाँ तक अनेक रंगों वाले रत्नों से रंजित समुद्र बहते हैं, वहाँ तक

के (इन दोनों सीमाओं के बीच के) सभी राजा तुम्हारे आतंक से नम्र होकर आकर तुम्हारे दोनो चरणों की उँगलियो के छिद्र-भाग को मुकुटो में जडे हुए रत्नों की किरणों से सुशोभित करें।

(*Going near*)—Victory to Vrishala

King (*Rising from the seat*)—Noble Preceptor, Chandragupta salutes you (*falls at his feet*)

Chanakya (*Catching him by the hand*)—Arise, arise, child.

May the kings (from all the parts) from the lord of the hills cool with the shower of sprays of Ganga down to the shore of southern ocean having lustres of gems of various colours, ever and anon, come in awe and prostrate before you and in that process may the crevices of your toes be made beautiful with the lustre of gems on their crests

सस्कृत व्याख्या—शिलान्त स्खलितसुरनदीशीकरासारशीतात् शिलान्तेषु शिलाना प्रान्तभागेषु स्खलिता आकाशात् च्युता या सुरनदी गङ्गा तस्या शीकराणा जलकणाना य आसार सम्पात तेन शीतात् शीतलात् शैलेन्द्रात् पर्वतराजात् हिमालयात् आ मर्यादीकृत्येत्यर्थ नैकरागस्फुटितमणिरुच नैकरागा विविधवर्णा स्फुरिता अवभासमाना मणिरुच मणिकान्तयस्सन्ति यस्य तस्य दक्षिणस्यार्णवस्य दक्षिणसागरस्य चातीरात् आनटादागत्य आगत्य भीतिप्रणतनृपशतै भीत्या भयेन नम्रीकृतशिरोभि नृपशतै तव चरणयुगलस्य पादद्वयस्य अङ्गुलीरन्ध्रभागा अङ्गुलिजालरध्रा शश्वदेव सर्वकालमेव चूडारत्नांशुगर्भा. चूडास्थितानाम् रत्नानाम् अंशव किरणा गर्भे मध्ये येषा तादृशा मौलिमणिकिरणपूर्णा क्रियन्ताम् विधीयन्ताम्। सर्वदेशेभ्य नृपतय आगत्य त्वा प्रणमन्तु इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **विजयताम्**—यहाँ 'विपराभ्या जे' सूत्र मे आत्मनेपद हुआ। (२) **शिलान्त.स्खलितसुरनदीशीकरासारशीतात्**—शिलाओ पर गिरती हुई गगा के जल-कणो की वर्षा से शीतल। शिलान्तेषु स्खलिता या सुरनदी तस्या शीकराणाम् आसार तेन शीतात्। यह शैलेन्द्रात् का विशेषण है। (३) **आशैलेन्द्रात्**—हिमालय तक। "पञ्चम्यपाङ्परिभि" से आ के योग मे पञ्चमी हुई है। (४) **नैकरागस्फुरितमणिरुच.**—अनेक वर्ण वाली मणियो की कान्ति वाला। न एक नैक नञर्थेन नशब्देन सुप्सुपा समास । नैकश्च नैकश्च नैकश्च इति

एकशेष । नैके रागा नैकरागा (कर्म० स०) । नैकरागा स्फुरिता मणिरुच: यस्य तस्य । यह अर्णवस्य का विशेषण है। (५) **भीतिप्रणतनृपशतैः**—डर के मारे झुके हुए सैकडो राजाओ से । नृपाणा शतै नृपशतै भीत्या प्रणतै नृपशतै इति भीतिप्रणतनृपशतै । (६) **शश्वदेव**—निरन्तर । (७) **चूडारत्नांशुगर्भा**—(राजाओ के) मुकुटो मे जडे हुए रत्नो की किरणे जिनके ऊपर पडती है। यह अङ्गुलीरन्ध्रभागा का विशेषण है। चूडारत्नानाम् अंशव गर्भे येषा ते।

राजा—आर्यप्रसादादनुभूयत एवैतत्, नाऽऽशास्यते । उपविशत्वार्यः । (इत्युभौ यथासनमुपविष्टौ ।)

चाणक्यः—वृषल ! किमर्थं वयमाहूताः ?

राजा—आर्यस्य दर्शनेनात्मानमनुग्राहयितुम् ।

चाणक्यः—(स्मितं कृत्वा) वृषल ! अलमनेन प्रश्रयेण, न निष्प्रयोजनमधिकारवन्तः प्रभुभिराहूयन्ते; तत् प्रयोजनमभिधीयताम् ।

राजा—आर्य ! कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधस्य किं फलमार्यः पश्यति ?

चाणक्यः—(स्मितं कृत्वा) वृषल ! उपालब्धुं तर्हि वयमाहूताः ।

राजा—आर्य ! नोपालब्धुम् ।

चाणक्यः—किं तर्हि ?

राजा—विज्ञापयितुम् ।

चाणक्यः—वृषल ! यद्येवं तर्हि विज्ञापनीयानामवश्यं शिष्येण रुचयोऽनुरोद्धव्याः ।

राजा—आर्य ! कः सन्देहः ? किन्तु न कदाचिदप्यार्यस्य निष्प्रयोजना प्रवृत्तिरित्यस्ति न प्रश्नावकाशः ।

चाणक्यः—वृषल ! सम्यग्गृहीतवानसि मदाशयम् । न हि प्रयोजनमनपेक्षमाणः स्वप्नेऽपि चाणक्यश्चेष्टते ।

राजा—आर्य ! अतएव मां प्रयोजनशुश्रूषा मुखरयति ।

चाणक्यः—वृषल ! श्रूयताम् । इह खल्वर्थशास्त्रकाराः त्रिविधां सिद्धिमुपवर्णयन्ति । तद्यथा—राजायत्तां, सचिवायत्ताम्, उभयायत्ताञ्चेति । तत् सचिवायत्तसिद्धेर्भवतः किं फलान्वेषणेन ! यतो वयमेवात्र नियुक्ता वेत्स्यामः ।

राजा—(सकोप इव मुखं परावर्तयति ।)

राजा—आर्य की कृपा से इसका अनुभव ही किया जा रहा है न कि आशा की जा रही है । आर्य बैठें (दोनों यथोचित आसन पर बैठ जाते हैं)

चाणक्य—वृषल, मुझे किसलिए बुलाया गया है ।

राजा—आर्य का दर्शन करके अपने को कृतार्थ करने के लिए ।

चाणक्य—(मुस्कुराकर) बस, बस, बहुत हो चुका अनुनय विनय । राजा लोग अधिकारियो को बिना कारण नही बुलाते । अब आप बुलाने का प्रयोजन बताइए ।

राजा—आर्य, कौमुदी महोत्सव का निषेध करके क्या फल सोचा है ?

चाणक्य—(मुस्कुरा कर) वृषल, क्या उलाहना देने को मुझे बुलाया है ?

राजा—आर्य, उलाहना देने के लिए नही ।

चाणक्य—तो क्यो ?

राजा—निवेदन करने के लिए ।

चाणक्य—वृषल, यदि ऐसा है तो शिष्य को निवेदन करने योग्य व्यक्तियों की रुचि का अवश्य ही विचार करना चाहिए ।

राजा—आर्य, इसमें क्या सन्देह ? बिना किसी प्रयोजन के तो आर्य का कोई काम नही होता । केवल इतना ही पूछना है ।

चाणक्य—वृषल, तुमने मेरे आशय को खूब समझ लिया है । बिना किसी प्रयोजन के तो चाणक्य स्वप्न में भी कुछ नही करता ।

आर्य—इसीलिए तो पूछने की इच्छा मुझे कुछ कहने को कहती है ।

चाणक्य—वृषल, सुनो । अर्थशास्त्र के रचयिता लोगो ने तीन प्रकार की सिद्धि का वर्णन किया है । वे ये हैं—राजायत्त (राजा के अधीन), सचिवायत्त (मंत्री के अधीन) और दोनो के अधीन । आप की सिद्धि सचिवायत्त है । इसलिए फल का पता लगाने से तुम्हारा क्या प्रयोजन ? क्योकि इस विषय में नियुक्त हम ही लोग जानेगे ।

राजा—(क्रोध से मुँह फेर लेता है) ।

King—Through the grace of the Noble Preceptor this is being already enjoyed, not only expected Noble Preceptor may sit down (*Both are seated in a befitting way*)

Chanakya—Vrishala, why have I been called ?

King—To favour myself by your sight

Chanakya (*Smiling*)—Enough of this modesty The authorities are not summoned in vain by their masters

King—Noble Sir, what good do you see in prohibiting Kaumudi festival

Chanakya (*With a smile*)—So I have been summoned for being censured

King—No, to tell something

Chanakya—If so, then the wishes of those to whom something is to be told are to be respected by the pupil

King—Noble Sir, no doubt it is so But your actions are never aimless, so I have reason to ask

Chanakya—Vrishala, you have rightly guessed, Chanakya does not do anything even in dream, without any aim

King—Therefore the desire to hear makes me speak

Chanakya—Vrishala, listen Authors of works on politics speak of three kinds of success in the world—resting with the king, resting with the ministers, and the third is resting on both Your success rests on ministers, then of what use is it for you to make search for the aim For, we ourselves, employed in the matter, shall know it

King—(*Turns his face as if in anger*)

टिप्पणी

(१) **अनुग्राहयितुम्**—अनुग्रह कराने के लिए। अनु+ग्रह्+णिच्+तुमुन्। (२) **प्रश्रयेण अलम्**—अब अधिक नम्रता रहने दो। प्र+श्रि+अच्=प्रश्रय तेन। 'अल योगे तृतीया"। (३) **अधिकारवन्त**—अधिकार रखने वाले कर्मचारी। अधिकार +मतुप् (४) **विज्ञापयितुम्**—कहने के लिये। निवेदन करने के लिए। वि+ज्ञा+णिच्+तुमुन्। (५) **विज्ञापनीयानाम्**—जिनसे कुछ कहना है। (६) **रुचय अनुरोद्धव्या**—प्रवृत्ति का आदर (ख्याल) करना चाहिये। (७) **प्रश्नावकाशः**—पूछने का मौका। (८) **प्रयोजनशुश्रूषा**—प्रयोजन जानने (सुनने) की इच्छा। श्रोतुमिच्छा शुश्रूषा श्रु+सन्+अ (भावे) स्त्रीलिङ्ग। (९) **मुखरयति**—बोलने को उत्साहित करती है। मुखमस्तीति महत् इति मुख+र मत्वर्थे=मुखर । त करोतीति मुखर=णिच् (नामधातु)। cf **किरात** III—'मा श्रोतुमिच्छा मुखरीकरोति (१०) **आयत्ता**—अधीन—तीन प्रकार की सफलता बताई गई है। राजा के अधीन, मत्री के अधीन, दोनो के अधीन। चन्द्रगुप्त की सफलता अभी सचिवायत्त है। इसीलिये चाणक्य ने उससे ऐसा कहा कि अभी तुम्हारी सिद्धि हमारे ही हाथ मे है। अत हमारे द्वारा

किये गये कामो का कारण मत पूछो। यह बात केवल ऊपरी तौर से कही गई है ताकि लोग समझे कि दोनो मे वास्तविक कलह है। (११) **नियुक्ता.**—नि+युज्+क्त। (१२) **वेत्स्यामः**—जानेगे। यहाँ 'वेदिष्याम' रूप होना चाहिए।

(ततो नेपथ्ये वैतालिकौ पठतः।) एकः—

आकाशं काशपुष्पच्छविमभिभवता भस्मना शुक्लयन्ती
शीतांशोरंशुजालैर्जलधरमलिनां क्लिन्दती कृत्तिमैभीम्।
कापालीमुद्वहन्ती स्रजमिव धवलां कौमुदीमित्यपूर्वा
हासश्रीराजहंसा हरतु तनुरिव क्लेशमैशी शरद्वः ॥२०॥

अन्वय—काशपुष्पच्छविम् अभिभवता भस्मना आकाश शुक्लयन्ती, शीताशोः अशुजालै जलधरमलिनाम् ऐभी कृत्ति क्लिन्दती, कौमुदीमिव धवला कापाली स्रजम् उद्वहन्ती, हासश्रीराजहसा इति अपूर्वा शरदिव ऐशी तनु व क्लेश हरतु ॥२०॥

हिन्दी अनुवाद—(नेपथ्य में दो वैतालिक पढते है) एक—हे राजन्, काश पुष्प की शुभ्रकान्ति को भी मात करने वाली, भस्म से आकाश को धवल बनाने वाली, चन्द्र के किरण-जाल से सजल मेघ के समान काले गज-चर्म परिधान को गीली करती हुई कलाधर की चाँदनी की भांति कपाल-माला को धारण करने वाली और राजहंसी की शुभ्र छटा के समान अट्टहास की छटा को छिटकाने वाली, महादेव की दिव्य मूर्ति की भाँति यह अद्भुत शरद् आप के संताप को दूर करे। (शरद् पक्ष में) भस्म को तिरस्कृत करने वाली काशपुष्प की कान्ति से आकाश को उज्ज्वल करती हुई चन्द्रमा के किरण-समूहो से गजचर्म के समान मेघ की नीलिमा को दूर करती हुई, मुण्डमाला के समान श्वेतचन्द्रिका को धारण करती हुई और हसी की शोभा के समान राजहंसो से मुक्त होने के कारण विलक्षण शरद् ऋतु आप के दुख को दूर करे।

(*Two bards sing in the dressingroom*)

First—May Lord (*Shiva at his tandava*) remove your troubles—the Lord whose person whitens the sky with ashes that surpass the glow of Kasa flowers and sprinkles the elephant's hide which is dark like cloud, with the mass of rays of the moon (on the head), the person bearing a string of white skulls like moon beam, giving out laughs the glow of which is like that of the swans and which is like a wonderful Autumn

संस्कृत व्याख्या—काशपुष्पच्छविमभिभवता तिरस्कुर्वता आकाश गगन शुक्लयन्ती धवलधवल कुर्वन्ती शीताशो चूडाचन्द्रस्य अशुजालै किरणकलापैः जलधरमलिनाम् मेघनीलाम् ऐभी कृत्ति गजचर्म क्लिन्दन्ती सिञ्चन्ती कौमुदीमिव

चन्द्रिकामिव धवलाम् शुभ्रवर्णां कापाली स्रजम् नरमुण्डमालाम् उद्वहन्ती धारयन्ती हासश्रीराजहंसा राजहंस इव हासश्री ताण्डवोचितस्य हासस्य शोभा अस्ति यस्या तादृशी इति अतएव अपूर्वा नूतना विलक्षणा वा शरदिव ऐशी तनु शाम्भव वपु व युष्माकम् क्लेश हरतु शरत् काशै आकाश शुक्लयति, तनुरिय ततोऽधिकै भस्मभि इत्येका नूतनता, निर्जलत्वात् प्रकृत्या शुभ्रैरभ्रै शोभते शरत् इय तु अभ्रतुल्यमायत नील गजाजिन चन्द्रकान्त्या धवलीकृत धारयन्ती शोभते इत्यपरा नूतनता। कौमुदीशुभ्रा शरत् कपालधवला च तनु राजहंसशुभ्रा शरत् अट्टहास-दर्शितदशनै शुभ्रा तनु । अतएव शरदिव तनु । न च पुन पूर्वदृष्टा इव शरत् ।

टिप्पणी

(१) **वैतालिक**—स्तुति पाठ करने वाले, भाट, चारण। इनमे प्रथम वैतालिक चाणक्य का व्यक्ति है और दूसरा राक्षस का गुप्तचर स्तनकलश है, जिसने वैतालिक का वेश बना रखा है। आदि के दो श्लोक (२०, २१) चाणक्य के वैतालिक द्वारा पढे गये है और शेष दो स्तनकलश के द्वारा। (२) **काशपुष्पच्छविम् अभिभवता**—काश (एक प्रकार की घास जिसमे सफेद फूल लगते है) के फूल की सुन्दरता को तिरस्कृत करने वाली। यह भस्मना का विशेषण है। (३) **शुक्लयन्ती**—सफेद वनाती हुई (४) **शीतांशो**—चन्द्रमा के। (५) **ऐभीम् कृतिम्**—हाथी के चमडे को (जो शङ्कर जी धारण करते है)। **इभ**—(हाथी) तस्येयम् अण्। ऐभी। कहा जाता है कि शङ्कर जी गजासुर को मारकर उसकी खाल को वस्त्र रूप मे धारण करने लगे। of "क्षण क्षणोत्क्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना, स्फुटोपम भूतिसितेन शम्भुना" माघ १-४ (६) **कापालीम् स्रजम्**—नर मुण्ड-माला। कपालानामियम् इति कापाली कपाल+अण्+ङीप् ताम् (७) **हास-श्रीराजहंसा**—राजहंस के समान हँसी की शोभा। हासश्री राजहंस इव इति उपमित कर्मधारय समास। ताण्डव नृत्य के समय शिव जी जो अट्टहास करते है उसकी सफेदी के समान। (८) **ऐशी**—शङ्कर जी की। ईशस्य इयम् इति। ईश्+अण्+ङीप्। इस श्लोक मे उपमालकार है। स्रग्धरा छन्द है। शङ्कर जी के शरीर को शरद् ऋतु के समान बताया है। और अनेक गुण जो शङ्कर जी के शरीर मे है वे शरत् मे भी बताये गये है।

प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा क्षणमनभिमुखी रत्नदीपप्रभाणा-
मात्मव्यापारगुर्वी जनितजललवा जृम्भितैः साङ्गभङ्गैः ।

नागाङ्कं मोक्तुमिच्छोः शयनमुरु फणाचक्रवालोपधानं
निद्राच्छेदाभिताम्रा चिरमवतु हरेर्दृष्टिराकेकरा वः ॥२१॥

अन्वय—फणाचक्रवालोपधानम् उरु नागाङ्क शयन मोक्तुमिच्छो हरे प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा क्षण रत्नदीपप्रभाणाम् अनभिमुखी साङ्गभङ्गै जृम्भितै जनित-जललवा आत्मव्यापारगुर्वी आकेकरा निद्राच्छेदाभिनाम्रा दृष्टि व चिरम् अवतु ॥२१॥

हिन्दी अनुवाद—फण-मण्डल के बने तकिया से सुशोभित अपने नागाङ्क (शेषनाग के देहरूप और सर्प शरीर की अनुकृति पर बनी हुई) शयन को छोडने के इच्छुक भगवान् विष्णु की सद्यः खुलने के कारण अलसाई हुई आँखें आपकी चिरकाल तक रक्षा करें जो (आँखें) सहसा निद्रा-भङ्ग के कारण रत्नदीपों (अर्थात् दीप रूपी नागराज की शिरोमणियो) की शिखा पर नहीं टिक पाती तथा जो अंगडाई के साथ जँभाई लेने से उत्पन्न अश्रु-कणो से भरी हुई इधर-उधर देखने में असमर्थ है और निद्रा भंग के कारण जिसकी लाली कम नहीं होती।

नोट—चार मास सोने पर शरद् के अंत में कार्तिक शुक्ल एकादशी को भगवान् विष्णु की निद्रा भङ्ग होती है। उसी का विचार करके नाटककार ने यह पद शरद्-वर्णन के बाद दिया है। "शेते विष्णुः सदाषाढे कार्तिके च विबुध्यते"।

May the half closed eyes of Hari, that are read at the break of sleep, may guard you for ever Hari desirous of leaving the inside bed of the snakes' body with the circle of hoods for the pillow The eyes of Hari are dull due to his recent waking, and do not face for the moment the light of lamps of the gems and that are unable to see here and there due to the drops of tears coming by yawn with stretching of limbs

संस्कृत व्याख्या—फणचक्रवालोपधानम् फणानाम् चक्रवालमेव मण्डलमेव उपधान शिरोधानम् यस्मिन् तादृशम् उर विशालम् नागाङ्कम् शेषरूपमत एव शेषाङ्कतया प्रख्यातम् शयनम् पर्यङ्कम् मोक्तुमिच्छो हातुकामस्य हरे श्रीविष्णो प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा प्रत्यग्र अचिर य उन्मेष उन्मीलन तेन जिह्मा मन्दा अलसायमाना वा क्षणम् मुहूर्त्तमात्रम् रत्नदीपानाम् समुद्रभवन विद्योतयन्तीनाम् प्रभाणा रत्नदीपकिरणानाम् अनभिमुखी सम्मुखतस्थुपी साङ्गभङ्गै साङ्गत्रोटै जृम्भितै मुखव्यादानै जनितजललवा समुत्पन्नाश्रुविंदुसभृता अत आत्मव्यापार-गुर्वीम् आत्मव्यापारे निजकर्मणि दर्शनकर्मणि गुर्वी अलसा निद्राच्छेदाभिताम्रा

निद्राभङ्गेन भृश लोहितवर्णा अतएव आकेकरा अर्धनिमीलिता दृष्टि· नेत्र व: चिरम् अवतु रक्षतु ।

टिप्पणी

(१) **फणाचक्रवालोपधानम्**—फणमण्डल ही है तकिया जिसमे। फण-समूह की तकिया वाला। फणाना चक्रवालमेव समूह एव उपधान यस्मिन् तादृशम्। (२) **नागाङ्कम्**—नागराज के शरीर या गोद रूप। (३) **प्रत्यग्रोन्मेषजिह्मा**—सद्य खुलने के कारण अलसायी। प्रत्यग्र य उन्मेष तेन जिह्मा। यह दृष्टि. का विशेषण है। तुरन्त सोकर उठने के कारण अलसायी हुई आँखे। (४) **रत्नदीपप्रभाणाम्**—रत्नदीप की प्रभा का। सर्पराज के शिरोमणि की प्रभा से भगवान् विष्णु का सम्पूर्ण शरीर देदीप्यमान रहता है। (५) **अनभिमुखी**—सामने न होती हुई। सामना करने मे असमर्थ अलसायी हुई होने के कारण कुछ देर तक विष्णु की दृष्टि रत्नदीप की प्रभा का सामना नही कर सकती। (६) **साङ्गभङ्गै: जृम्भितै:**—अँगडाई के साथ जँभाई से। (७) **जनितजललवा**—जिनमे थोडा पानी (आँसू) आ जाता है। जनित जललव यस्या तादृशी। (८) **आत्मव्यापारगुर्वी**—अपना काम करने (देखने) मे असमर्थ। (९) **आकेकरा**—अर्धनिमीलित, आधी बद। (१०) **निद्राच्छेदाभिताम्रा**—निद्राभग होने के कारण अत्यन्त लाल। निद्राया भङ्ग तेन अभिताम्र। (११) **अवतु**—रक्षा करे। यह श्लोक कार्तिक-पूर्णिमा को इसलिए पढा जा रहा है कि कार्तिक-शुक्ला एकादशी को भगवान् विष्णु चार मास की निद्रा त्याग कर जो शीघ्र ही उठे है। इस श्लोक मे सोकर उठे हुए विष्णु की आँख की उसी अवस्था का वर्णन है जिसका अनुभव सभी लोग प्रतिदिन करते है। इसमे स्रग्धरा छन्द है और रूपकालकार है।

द्वितीय:—

सत्त्वोत्कर्षस्य धात्रा निधय इव कृता: केऽपि कस्यापि हेतो-
र्जेतार: स्वेन धाम्ना मदसलिलमुचां नागयूथेश्वराणाम्।
दंष्ट्राभङ्गं मृगाणामधिपतय इव व्यक्तमानावलेपा-
नाऽऽज्ञाभङ्गं सहन्ते नृवर नृपतयस्त्वादृशा: सार्वभौमा: ।।२२।।

अन्वय—नृवर! धात्रा सत्त्वोत्कर्षस्य निधय इव कृता व्यक्तमानावलेपा:

केऽपि त्वादृशा मार्वभौमा नृपतय स्वेन धाम्ना मदसलिलमुचा नागयूथेश्वराणां जेनार. मृगाणामधिपतय दष्ट्राभङ्गमिव कस्यापि हेतो आज्ञाभङ्ग न सहन्ते ।।२२।।

हिन्दी अनुवाद—ब्रह्मा ने जिन पुरुषो को संसार का श्रेष्ठतम कार्य दिया है (अर्थात् राजा बनाया है) वे उन सिहो के समान हैं जो सर्वदा बड़े-बड़े मस्त हाथियो पर विजय प्राप्त करते रहते हैं और उनमें जिनको कभी किसी के सामने झुकना नहीं पडता वे नृप श्रेष्ठ ही संसार के शिरोमौलि हैं तथा वे अपनी आज्ञा-भंग को उसी प्रकार सहन नही कर सकते जिस प्रकार सिह अपने दॉतो का उखाड़ना अर्थात् जिस प्रकार सिह अपने दाँतो के उखाड़ने वाले को नष्ट कर डालता है उसी प्रकार राजा लोग अपनी आज्ञा को भंग करने वाले का नाश कर डालते हैं।

O best of men, paramount rulers of men like you, made by the creator as the store-house of the exuberence of power, having pride and self-respect manifested, whoever they are, do not, for any reason whatsoever, tolerate the disobedience of their orders as the lions, who, by their own might, are conquerors of the leaders of herds of big elephants, who are emitting the fluid of ichor, do not tolerate the drawing out of their teeth.

संस्कृत व्याख्या—हे नृवर नरश्रेष्ठ चन्द्रगुप्त धात्रा वेधसा सत्त्वोत्कर्षस्य वलस्य य उत्कर्ष आधिक्य तस्य वलसम्पद निधय इव निधानानीव कृता रचिता मानावलेपा प्रकटीकृतस्वाभिमानस्वगौरवातिशया केऽपि त्वादृशा. भवद्विधा सार्वभौमा चक्रवर्तिन नृपतय राजान स्वेन निजेन धाम्ना तेजसा मदसलिलमुचाम् मदसलिल दानवारि मुञ्चन्ति ये तादृशानाम् नागयूथेश्वराणाम् गजराजाना जेतार विजयिन मृगाणामधिपतय पशुराजा सिहा इव दष्ट्राभङ्ग-मिव दशनत्रुटिमिव कस्यापि हेतो कुतोऽपि कारणात् आज्ञाभङ्ग शासनलघन केऽपि न सहन्ते। यथा सिह दतत्रुटिम् न मर्षयति तथैव मानिन राजान केनापि सत्त्वेन क्रियमाणम् आज्ञाभङ्गम् न मर्षयन्तीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **सत्त्वोत्कर्षस्य**—बल की अधिकता का। (२) **निधयः**—खजाना; आकर। (३) **व्यक्तमानावलेपाः**—स्वाभिमान एव गर्व जिसका प्रकट है। व्यक्त मान अवलेप च येपा ते। (४) **मदसलिलमुचाम्**—मदरूपी जल को बहाने वाला। (५) **सार्वभौमाः**—चक्रवर्ती। सर्वभूमे ईश्वरा इति सर्वभूमि+अण्, 'अनुशतिकादीना च' इति सूत्रेण उभयपदवृद्धि। (६) **दंष्ट्राभंगामिव**—

दाँतो के उखाडे जाने के समान। वैतालिक के वेश मे चन्द्रगुप्त के यहाँ वर्तमान राक्षस के गुप्तचर स्तनकलश ने चन्द्रगुप्त को उत्तेजित करने के लिए २२ वाँ तथा २३ वाँ श्लोक पढा है। इसमे उपमा अलकार और स्रग्धरा छन्द है।

अपि च—भूषणाद्युपभोगेन प्रभुर्भवति न प्रभुः।
परैरपरिभूताज्ञस्त्वमिव प्रभुरुच्यते ॥२३॥

अन्वय—प्रभु भूषणाद्युपभोगेन प्रभु न भवति। त्वमिव परै अपरिभूताज्ञः प्रभु उच्यते।

हिन्दी अनुवाद—राजा केवल आभूषणादि के उपभोग करने से राजा नही होता। वही राजा है जो आप की तरह आज्ञा का उल्लंघन नहीं सह सकता।

The king is not the king by reason of the enjoyment of jewellery etc Rightly is he a king who, like you, can not tolerate his disobedience

सस्कृत व्याख्या—प्रभु राजा भूषणाद्युपभोगेन भूषणादीनाम् अलकरणादीनाम् उपभोगेन हेतुना न प्रभु भवति न राजा भवति, त्वमिव भवानिव परै. अन्यै अपरिभूताज्ञ अपरिभूता नोल्लघिता आदेशो यस्य तादृश प्रभु नृप उच्यते कथ्यते।

टिप्पणी

(१) **अपरिभूताज्ञ.**—जिसकी आज्ञा का उल्लघन न किया गया हो। भाव यह है कि राजा वही है जिसकी आज्ञा का पालन हो। यदि उसकी आज्ञा की अवहेलना हुई तो वह नाममात्र का राजा है। इसमे उपमा अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

चाणक्यः—(आकर्ण्यात्मगतम्) प्रथमं तावद्विशिष्टदेवता-स्तुतिरूपेण प्रवृत्तशरद्गुणप्रख्यापनमाशीर्वचनम्। इदमपरं किमिति नावधारयामि। (विचिन्त्य) आः, ज्ञातम्। राक्षस-स्यायं प्रयोगः। आः दुरात्मन् राक्षसहतक! दृश्यसे, जागर्ति खलु कौटिल्यः।

राजा—आर्य वैहीनरे! दापयाभ्यां वैतालिकाभ्यां सुवर्ण-शतसहस्रम्।

कञ्चुकी—यदाज्ञापयति देवः। (इत्युत्थाय परिक्रामति।)

चाणक्यः—(सक्रोधम्) वैहीनरे! तिष्ठ तिष्ठ, न गन्तव्यम्। वृषल! किमयमस्थाने एव महानर्थोत्सर्गः क्रियते!

राजा—आर्येणैवं सर्वतो निरुद्धचेष्टाप्रसरस्य मम बन्धनमिव राज्यं न राज्यमिव।

चाणक्यः—वृषल! स्वयमनभियुक्तानां राज्ञामेते दोषा भवन्ति। तद्यदि न सहसे, तदा स्वयमेवाभियुज्यस्व।

राजा—एते वयं स्वकर्मण्यभियुज्यामहे।

चाणक्यः—प्रियं नः, वयमपि स्वकर्मण्यभियुज्यामहे।

राजा—यद्येवं, तर्हि कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधस्य प्रयोजनं श्रोतुमिच्छामि।

चाणक्यः—वृषल! कौमुदीमहोत्सवानुष्ठानस्य किं प्रयोजनमित्यहमपि श्रोतुमिच्छामि।

राजा—प्रथमं तावत् ममाज्ञाव्याघातः।

चाणक्यः—वृषल! ममापि खलु त्वदाज्ञाव्याघात एव कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधस्य प्रथमं प्रयोजनम्। कुतः?

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(सुनकर स्वगत) पहला तो देव-विशेषो की स्तुति रूप में प्रस्तुत शरद् ऋतु के गुणो को प्रकट करने वाला आशीर्वाद है। परन्तु दूसरा क्या है यह समझ में नही आता। (सोचकर) अहा! समझ गया। यह राक्षस की चाल है। अरे पापी दुष्ट राक्षस, समझ लिया (तुमको देख लिया) कौटिल्य जाग रहा है।

राजा—आर्य वैहीनरि, इन दोनो वैतालिकों को एक लाख स्वर्ण मुद्रा दिलाओ।

कञ्चुकी—जैसी महाराज की आज्ञा। (उठकर घूमता है)।

चाणक्य—(क्रोध से) वैहीनरि, ठहरो, ठहरो। मत जाओ। वृषल! यह अनुचित स्थान पर इतने धन का त्याग क्यो किया जा रहा है?

राजा—आर्य, आप तो मेरे सभी कामो में रोडा अटकाते है। यह तो राज्य नहीं है, बल्कि बधन है।

चाणक्य—वृषल! यह तो तुम्हारा दोष है जो स्वयं कुछ कर नहीं सकते, तो यदि इसे सहन नहीं कर सकते हो तो स्वय सब कुछ देखो भालो।

राजा—बहुत ठीक। आज से हम सब कुछ करेंगे।

चाणक्य—हमारे लिए अच्छा है। हम भी अपने कार्य में लग जाते है।

राजा—यदि ऐसी बात है तो कौमुदी-महोत्सव के रोकने का कारण सुनना चाहता हूँ।

चाणक्य—वृषल! कौमुदी-महोत्सव मनाने का प्रयोजन क्या है, यह मैं भी सुनना चाहता हूँ।

राजा—पहले तो (न मनाने से) मेरी आज्ञा का उल्लंघन होता है।

चाणक्य—वृषल, तुम्हारी आज्ञा का न पालन होना ही कौमुदी-महोत्सव को मना करने का प्रयोजन है।

Chanakya (*hearing to himself*)—The first is benediction in the shape of eulogy to big gods, descriptive of the virtues of Autumn that has set in I am unable to understand what this other is (*Thinking*) Ah, I see This is a move by Rakshas. Wicked Rakshas, you have been exposed Kautilya is alert

King—Noble Vaihinari, let a hundred thousand gold pieces be given to these bards

Chamberlain—As your Majesty orders (*Rises and goes round the stage*)

Chanakya (*with anger*)—Vaihinari, stop, stop, do not proceed Vrishala, why such a large amount is being spent on an unworthy object

King—Noble Preceptor, you cause hindrance in all my actions, thus this kingdom is a prison to me not a kingdom

Chanakya—These inconveniences are experienced by kings who personally do not attend to their work So, if you cannot tolerate them, then, attend personally to your work

King—Here we attend to our work

Chanakya—That is joy to me I too attend to my work

King—If so, then, I wish to know what the object is in prohibiting the Kaumudi festival

Chanakya—Vrishala, I too, wish to know the utility of celeberating the Kaumudi festival

King—First is the non-carrying out of my orders

Chanakya—Vrishala, my first object in prohibiting the Kaumudi festival is that your orders may not be carried out

टिप्पणी

(१) **विशिष्टदेवतास्तुतिरूपेण**—विशेष देवता (शिव और विष्णु) की स्तुति रूप मे। विशिष्टा देवता तस्या विशिष्टदेवताया स्तुति तस्या रूपेण इति विशिष्टदेवतास्तुतिरूपेण। (२) **प्रवृत्तशरद्गुणप्रख्यापनम्**—शरद् ऋतु जो आ गई है उसके गुणो का कीर्तन। प्रवृत्ता या शरद् तस्या गुणा तेषा प्रख्यापनम्।

(३). **जागर्ति**—जागता है; चौकन्ना है। (४) **दापयाम्याम्**—दापय+आम्याम्, इन दोनो को दिला दो। दा धातु—णिच्+आज्ञा। (५) **अस्थाने**—अनुचित रूप से, (पात्र मे)। (६) **उत्सर्ग**—त्याग, खर्च। उद्+सृज्+घञ्। (७) **निरुद्धचेष्टाप्रसरस्य**—जिसके सभी व्यापार (कार्य) पर प्रतिबध लगा हो। प्र+सृ+अप् भावे=प्रसर, चेष्टाया प्रसर (षष्ठीतत्०), निरुद्ध चेष्टा-प्रसर यस्य स (बहुव्रीहि स०) तस्य। यह 'मे' का विशेषण है। चन्द्रगुप्त के कहने का भाव यह है कि अगर मै काम करने मे स्वतत्र नही हूँ तो यह राज्य मेरा बन्धन है, राज्य नही है। (८) **अनभियुक्तानाम्**—स्वयम् राजकार्य न करने वालो का। (९) **त्वदाज्ञाव्याघात**—तुम्हारी आज्ञा का उल्लघन। वि+आ+हन्+घञ् भावे=व्याघात। तव आज्ञा त्वदाज्ञा, त्वदाज्ञाया व्याघात (षष्ठीतत्०)।

अम्भोधीनां तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनाना-
मा पारेभ्यश्चतुर्णां चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तर्जलानाम्।
मालेवाज्ञा सपुष्पा तव नृपतिशतैरुह्यते या शिरोभिः
सा मय्येव स्खलन्ती प्रथयति विनयालङ्कृतं ते प्रभुत्वम्॥२४॥

अन्वय—तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनाना चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तर्जलाना चतुर्णाम् अम्भोधीना पारेभ्य आ या तव आज्ञा सपुष्पा माला इव नृपतिशतै शिरोभि उह्यते सा मयि एव स्खलन्ती (सती) ते प्रभुत्व विनया-लङ्कृत प्रथयति ॥२४॥

हिन्दी अनुवाद—जिनके तटो पर तमाल वृक्षो के पत्तो से श्यामायमान घोर वन है और जिनके जल बडी मछलियो के सचार से खलबलाते रहते है, ऐसे चारो समुद्रो के प्रातो तक से आए हुए सैकडों राजे तुम्हारी जिस आज्ञा को अवनत मस्तक होकर फूल की माला के समान सिर पर धारण कर लेते है, उसका हमारे द्वारा भग होने से तुम्हारा प्रभुत्व विनय गुण से अलंकृत घोषित होता है।

Your order which is carried on their heads, like a wreath of flowers unfaded, by hundreds of kings upto the shores of the four oceans, the forests on the shores of which are made dark by fresh leaves growing on Tamala trees and whose waters are agitated by big fishes rushing about, has stumbled against me alone and this declares your authority is graced by humility.

संस्कृत व्याख्या—तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनानाम् तमालप्रभवाणि यानि किसलयानि तै श्यामानि नीलानि वेलावनानि तीरवर्त्तिकाननानि येषा

तथाभूतानामथ चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तर्जलाना चटुल चपल यत् तिमिकुलम् महामत्स्यसमूह तेन क्षोभितानि आन्दोलितानि अन्तर्जलानि गभीरतलवर्तीनि सलिलानि येषा तादृशानाम् चतुर्णामम्भोधीना सागराणाम् पारेभ्य. समागतै नृपतिशतै पुष्पमाला इव पुष्पस्रगिव या तव आज्ञा शिरोभि उह्यते धार्यते सा आज्ञा मयि एव स्खलन्ती मत्त एव प्राप्तप्रतिघाता सती ते विनयालङ्कृतम् प्रभुत्वमेव शीलभूषित स्वामित्वमेव प्रथयति प्रख्यापयतीत्यर्थ ।

चाणक्य चन्द्रगुप्त व्याहताज्ञ समाश्वासयन् कथयति राजन् मत्कृत: तवाऽज्ञा-व्याघात नवैव गौरवाय नात किमपि मम समीहितम् सिद्ध्यति । ये भयेन तवाज्ञा शिरसि कुर्वन्ति इत पर ते एव तव विनय ज्ञात्वा भक्त्या मानयिष्यन्ति कदापि नोल्लघयिष्यन्ति इति मम प्रथम प्रयोजनम् ।

टिप्पणी

(१) **तमालप्रभवकिसलयश्यामवेलावनानाम्**—तमाल की पत्तियो से श्याम वर्ण हो रहे है जिन समुद्रो के तटवर्ती जगल । यह अम्भोधीना का विशेषण है । कालिदास—"दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला" (रघु० १३) । समुद्र मे रहने वाली अत्यन्त विशालकाय मछलियो मे 'तिमि' जाति की मछलियाँ अपनी विशालता के लिए प्रसिद्ध है । (२) **चटुलतिमिकुलक्षोभितान्तर्जलानाम्**—चचल मत्स्य-समूहो से आन्दोलित जलवाला । यह भी अम्भोधीना का विशेषण है । चटुलतिमिकुलेन क्षोभितम् अन्तर्जल येषा ते तेषाम् । (३) **आ पारेभ्य:**—यहाँ 'आ' आरम्भिक सीमा (अभिविधि) अर्थ को प्रकट करता है । आङ के साथ होने से 'पारेभ्य' मे पचमी है । **उह्यते**—धारण की जाती है । वह् आत्मनेपदी लट् (कर्मणि) । इसमे उपमा अलकार है, स्रग्धरा छन्द है ।

राजा—अथापरमपि प्रयोजनं यत्तच्छ्रोतुमिच्छामि ।

चाणक्य:—तदपि कथयामि ।

राजा—कथ्यताम् ।

चाणक्य:—शोणोत्तरे ! मद्वचनात् कायस्थमचलदत्तं ब्रूहि, यत् भद्रभटप्रभृतीनां लेख्यपत्रं तत्तावत् दीयतामिति ।

प्रतीहारी—जं अज्जो आणवेदि त्ति (यदार्य आज्ञापयतीति ।) (निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य) अज्ज ! एदं पत्तं । (आर्य ! इदं पत्रम् ।)

चाणक्यः—वृषल ! श्रूयताम् ।

राजा—दत्तावधानोऽस्मि ।

चाणक्यः—(वाचयति) स्वस्ति सुगृहीतनामधेयस्य देवस्य चन्द्रगुप्तस्य सहोत्थायिनां प्रधानपुरुषाणामितोऽपक्रम्य मलयकेतुमाश्रितानां प्रमाणलेख्यपत्रम् । तत्र प्रथमं तावत् गजाध्यक्षो भद्रभटः, अश्वाध्यक्षः पुरुषदत्तः महाप्रतीहारस्य चन्द्रभानोर्भागिनेयो हिङ्गुरातः, देवस्य स्वजनगन्धी महाराजो बलगुप्तः, देवस्यैव कुमारसेवको राजसेनः सेनापतेः सिंहबलस्य कनीयान् भ्राता भागुरायणः मालवराजपुत्रो रोहिताक्षः क्षत्रगणमुख्यतमो विजयवर्मा इति ।

(आत्मगतम्) एते वयं देवस्य कार्येऽवहिताः स्म इति ।

(प्रकाशम्) एतावदेतत् पत्रम् ।

हिन्दी अनुवाद—राजा—अच्छा, दूसरा जो प्रयोजन है, उसे भी सुनना चाहता हूँ।

चाणक्य—उसे भी कह देता हूँ।

राजा—कह डालिए।

चाणक्य—शोणोत्तरे ! मेरी ओर से कायस्थ अचलदत्त से कहो कि भद्रभट आदि का लिखा हुआ जो पत्र है, वह दे दो।

प्रतीहारी—जो आर्य की आज्ञा। (निकलकर पुनः प्रवेश करके) आर्य ! यह पत्र है।

चाणक्य—वृषल, सुनो।

राजा—मैं सुनने में दत्तचित्त हूँ।

चाणक्य—(पढ़ता है) प्रणामादि के बाद यह विदित हो कि प्रातःस्मरणीय महाराज चन्द्रगुप्त के सहोत्थायी (सदा साथ में उठने-बैठने वाले) हम लोगो का जो यहाँ से भागकर मलयकेतु का आश्रय लेने वाले हैं उनका यह पत्र है। उनमें ये लोग हैं—राजसेनापति भद्रभट (२) अश्वसेना का सेनापति पुरुषदत्त, (३) महाप्रतीहार चन्द्रभानु का भाजा हिगुरात, (४) महाराज का आत्मीय महाराज बलगुप्त, (५) महाराज का ही बालसेवक राजसेन, (६) सेनापति सिंहबल का छोटा भाई भागुरायण, (७) मालव का राजकुमार रोहिताक्ष, (८) क्षत्रियो में सर्वश्रेष्ठ विजयवर्मा। (मन में) ये हम सब महाराज के कार्य में सावधान है। (प्रकट) यह पत्र इतना ही है।

King—Now I wish to hear the other purpose also.

Chanakya—That too I will tell you.

King—Then let it be told

Chanakya—Sonottara, tell Kayastha Achaldas in my name, "Give me the letter of Bhadrabhatta and others"

Warder—As the Noble Sir commands (*Going out and coming back again*) Noble Sir, this is the letter

Chanakya—Vrishala, listen

King—I am attentive

Chanakya (*Reads*)—Good to you The letter of the chief persons who always associated themselves with Sire Chandragupta of auspicious name and having deserted from here have joined Malayaketu They are as follows —Bhadrabhatta, the master of elephants, Purushdatta, the master of the horses; Hingurata, the sister's son of Chandrabhan, the chief warder, Maharaj Balagupta, a distant relation of Sire, Rajsena, the attendant of Sire himself, Bhagurayan, the younger brother of the commander-in-chief, Sinhabala, Rohitaksha, the prince of Malawa, Vijayavarman, the chief of the warriors (*To himself*) We are attending to the work of the king (*Aloud*) This much is the letter

टिप्पणी

(१) **लेख्यपत्रम्**—पत्र, चिट्ठी। पत्र लाकर पढने की बात चाणक्य और चन्द्रगुप्त के बीच रचा गया नाटक है। जो व्यक्ति चन्द्रगुप्त के पास से भाग गये है उनके बारे मे गुप्तचरो के द्वारा सुनकर राक्षस और मलयकेतु उन व्यक्तियों पर पूर्ण विश्वास कर ले यह इस नाटक का प्रयोजन है। (२) **सहोत्थायिनाम्**—साथ उठने-बैठने वालो का, जो हमेशा साथ मे रहते थे। (३) **इतः अपक्रम्य**—यहाँ से भागकर। (४) **स्वजनगधी**—सम्बन्धी। स्व· जन, कर्मधा०। तस्य गध लेश स्वजनगध। स अस्ति अस्येति स्वजन+गन्ध+इति। (५) **कुमारसेवकः**—बचपन से सेवा करने वाला।

राजा—आर्य ! एतेषामपरागहेतून् श्रोतुमिच्छामि।

चाणक्यः—वृषल ! श्रूयताम्। अत्र यावेतौ गजाध्यक्षाश्वाध्यक्षौ भद्रभटपुरुषदत्तनामानौ, एतौ खलु स्त्रीमद्यमृगयाशीलौ हस्त्यश्वावेक्षणेऽभियुक्तौ इति स्वाधिकाराभ्यामवरोप्य मया स्वजीवनमात्रेणैव स्थापितावित्यपरक्तौ, गत्वा स्वेन स्वेन चाऽधिकारेण व्यवस्थाप्य मलयकेतुमाश्रितौ। यावेतौ हिङ्गु-

रातबलगुप्तौ, तावत्यन्तलुब्धप्रकृती दत्तं धनमबहुमन्यमानौ 'तत्र बहु लभ्येत' इति मलयकेतुमाश्रितौ। योऽप्यसौ भवतः कुमारसेवको राजसेनः सोऽपि तव प्रसादादतिप्रभूतकोषहस्त्यश्वं सहसैव सुमहदैश्वर्यमवाप्य, पुनरुच्छेदशङ्कया मलयकेतुमाश्रितः। योऽयमपरः सेनापतेः सिंहबलस्य कनीयान् भ्राता भागुरायणः असावपि तत्र काले पर्वतकेन सह समुत्पन्नसौहार्दः तत्प्रीत्या च 'पिता ते चाणक्येन घातितः' इति रहसि त्रासयित्वा मलयकेतुमपवाहितवान्। ततो भवदपथ्यकारिषु चन्दनदासप्रभृतिषु निगृह्यमाणेषु स्वदोषाशङ्कयाव्यक्रम्य मलयकेतुमाश्रितः। तेना 'प्यसौ मम प्राणरक्षक' इति कृतज्ञतामनुवर्तमानेन आत्मनोऽनन्तरममात्यपदं ग्राहितः। यौ तौ लोहिताक्षविजयवर्माणौ, तावप्यतिमानित्वात् स्वदायादेभ्यस्त्वया दीयमानमसहमानौ मलयकेतुमाश्रितौ---इत्येषामपरागहेतवः।

हिन्दी अनुवाद---राजा---आर्य, इनके नाराज होने का कारण सुनना चाहता हूँ।

चाणक्य---वृषल, सुनो। इन लोगो में जो ये गजाध्यक्ष और अश्वाध्यक्ष भद्रभट्ट और पुरुषदत्त हैं वे तो स्त्री, मद्यपान और मृगया मे निरन्तर लगे रहते है और हस्तिबल तथा अश्वबल के संरक्षण-निरीक्षण में सदा असावधान रहते आये है। इसलिए मैंने इनको इनके अधिकारो से अलग कर दिया और केवल जीविका-निर्वाह मात्र पर रहने दिया। इसी से नाराज हो गये और मलयकेतु से मिल गये और वहाँ इनको अपना-अपना अधिकार मिल गया। इनमें से जो हिंगुरात और बलगुप्त है वे दोनो बड़े लोभी है; उन्हें जितना भी दो सब थोडा है। उन्होंने इसलिए मलयकेतु का सहारा लिया कि उनको मनचाहा धन मिलता रहे। अब इनमें जो तुम्हारी बचपन से सेवा करने वाला राजसेन है जिसे तुम्हारी कृपा से अकस्मात् बहुत धन-सम्पत्ति और हाथी-घोडो का वैभव मिल गया वह तो इस भय से मलयकेतु से जा मिला है कि कही यह सब किसी समय उससे छीन न लिया जाय। अब सेनापति सिंहबल का छोटा भाई भागुरायण है वह भी उस समय पर्वतक के साथ मित्रता होने तथा उस (पर्वतक) के स्नेह के कारण "तुम्हारे पिता को चाणक्य ने ही मरवाया है" ऐसा डरा-धमका कर मलयकेतु को यहाँ से भगा ले गया। फिर आप का अहित करने वाले चन्दनदास आदि के पकड़ लिए जाने पर अपने अपराध की आशंका से भागकर वह (भागुरायण) मलयकेतु से जा मिला। उस (मलयकेतु) ने भी "यह मेरा प्राणरक्षक है" इस

प्रकार कृतज्ञता का अनुभव करते हुए अपने सन्निकट अमात्य पद पर उसे नियुक्त कर लिया है। अब इनमें जो विजयवर्मा और लोहिताक्ष बचे वे यहाँ से मलयकेतु के पास इसलिए गए हैं कि उन्हें तुम्हारे द्वारा उनके सम्बन्धियों को जो कुछ दिया जाता रहा, सह्य नहीं होता रहा और अपने अभिमान पर ठेस लगती प्रतीत होती रही। यही सब इनकी विरक्ति के कारण हैं।

King—Noble Sir, I wish to know the cause why they are dissatisfied

Chanakya—Vrishala, listen Bhadrabhatta and Purushdatta, respectively the master of elephants and horses, are addicted to wine, women and hunting and are inattentive to supervision of the elephants and the horses, hence I dismissed them from their office and retained them on only a subsistence allowance, so they became disloyal and went over to the side of Malaya-ketu where they have been kept in their respective capacity As regards Hingurat and Balagupta, these two were very greedy fellows and thought the salary given by you to be too little, so they deserted you and went over to the side of Malayaketu, thinking that they will get more there Regarding your old servant Rajsena, he too, through your favour, suddenly got much wealth, elephants and horses, and fearing that these might be taken away from him, has joined Malayaketu Bhagurayan the younger brother of Simhabala, the commander-in-chief, had contracted friendship with Parvatak in those bad times, and through love for him, had told Malayaketu, "Your father has been killed by Chanakya" and with this invention scared him away Then, when your enemies Chandandas and others were being punished, he, through apprehension due to his own guilt, fled away and joined Malayaketu So, he out of gratitude that he had saved his life, caused him to accept the ministership (*an office next to him in power*) As far those two Lohitaksha and Vijayavarman, these two, through extreme pride, and not tolerating your gifts to their relatives, have gone over to Malaya-ketu These are the reasons of the disaffection of these men.

संस्कृत व्याख्या—एतेषाम् भद्रभटादीनाम् अपरागहेतून् विरागकारणानि श्रोतुम् इच्छामि। अत्र भद्रभटादिषु यौ एतौ भद्रभटपुरुषदत्तनामानौ गजाध्यक्षा-श्वध्यक्षौ हस्तिपालक अश्वपालक च एतौ उभौ स्त्रीमद्यमृगयाशीलौ परस्त्री-गामिनौ मद्यपौ मृगयाशीलौ हस्त्यश्वावेक्षणे गजघोटकरक्षणे अनभियुक्तौ असाव धानौ इति अस्मात् कारणात् स्वाधिकाराभ्याम् गजवाजिरक्षणाभ्याम् अवरोप्य पृथक्कृत्य स्वजीवनमात्रेणैव अल्पात् वृत्तियुक्तौ स्थापितौ इति अस्मात् कारणात्

अपरक्तौ रागरहितौ (सन्तौ) गत्वा स्वेन स्वेन अधिकारेण व्यवस्थाप्य मलय-केतुम् आश्रितौ। मलयकेतुना एकः गजाध्यक्षः कृतः अपरश्च अश्वाध्यक्षः कृतः। यौ एतौ हिङ्गुरातबलगुप्तौ तौ द्वावपि लुब्धप्रकृती अतिलोभयुक्तौ दत्तम् धनम् द्रव्यम् अवहुमन्यमानौ स्वल्पमवगच्छन्तौ तत्र मलयकेतुसेवाया बहु अधिकं लभ्येत प्राप्येत इति मलयकेतुम् आश्रितौ गतौ। योऽपि असौ भवतः कुमारसेवकः बाल्य-सेवकः राजसेनः सोऽपि तव प्रसादात् कृपाया अतिप्रभूतकोपहस्त्यश्वम् अतिप्रचुर-धनगजाश्वम् महत् ऐश्वर्यम् सम्पत् अवाप्य लब्ध्वा पुनः भूयः उच्छेदशङ्कया विनाशभीत्या मलयकेतुम् आश्रितः। योऽयमपरः सेनापतेः सेनाध्यक्षस्य सिंहबलस्य कनीयान् लघुभ्राता भागुरायणः असौ अपि तत्र काले मलयकेतुसामीप्यकाले पर्वतकेन सह समुत्पन्नसौहार्दः समुत्पन्नं जातं सौहार्दं मैत्री यस्य सः तत्प्रीत्या च पर्वतकस्नेहेन च ते पिता चाणक्येन घातितः विनाशितः इति एकान्ते त्रासयित्वा भीतिमुत्पाद्य मलयकेतुम् अपवाहितवान् अस्मात् स्थानात् दूरं नीतवान् ततः भव-दपथ्यकारिषु तवाहितकारिषु चन्दनदासप्रभृतिषु निगृह्यमाणेषु दण्ड्यमानेषु स्व-दोषाशङ्कया स्वापराधभीत्या अपक्रम्य इतो अन्यत्र गत्वा मलयकेतुम् आश्रितः। असौ भागुरायणः मे प्राणरक्षकः इति कृतज्ञताम् प्रत्युपकारिताम् अनुवर्तमानेन अपेक्षमाणेन तेन मलयकेतुना आत्मनः अनन्तरम् अव्यवहितम् अमात्यपदम् मन्त्रि-पदं ग्राहितः दापितः। यौ तौ लोहिताक्षविजयवर्माणौ तौ अपि अतिमानित्वात् अभिमानस्याधिक्यात् स्वदायादेभ्यः निजबन्धुभ्यः त्वया दीयमानम् धनम् असहमानौ सोढुमशक्नुवन्तौ मलयकेतुम् आश्रितौ। इति एतेषाम् अपरागहेतवः विरागकारणानि।

टिप्पणी

(१) **अपराग**—विरक्ति, प्रेम का न होना। अप+रञ्ज्+घञ् भावे। (२) **अनभियुक्तौ**—असावधान। अन्+अभि+युज्+क्त। (३) **स्वजीवन-मात्रेणैव**—केवल जीने भर को वेतन देकर। (४) **दत्तम् धनम् अबहुमन्य-मानौ**—जो कुछ दिया जाता था उसे बहुत थोडा समझते हुए। (५) **उच्छेद-शङ्कया**—छिन जाने के डर से। (६) **तत्र काले**—पाटलिपुत्र के घेरे के समय मे। उस समय पर्वतक चन्द्रगुप्त के साथ रहकर उसकी सहायता कर रहा था। (७) **समुत्पन्नसौहार्दः**—मित्रता करके। (८) **स्वदोषाशङ्कया**—अपने अपराध के डर से। अर्थात् यह समझ कर कि कहीं हमारा अपराध मालूम न हो जाय।

(९) **आत्मनोऽनन्तरम्**—अपने से दूर न था जो। अविद्यमानम् अन्तरम् अस्य अनन्तरम्, आत्मन स्वस्य राजपदस्य अनन्तरम् अदूरम्। (१०) **स्वदायादेभ्यः**—अपने बान्धवों को। दा+घञ् कर्मणि दाय। दायमदन्ति इति दाय+अद्+अण् कर्तरि अथवा दायमाददते इति दाय+आ+दा+क कर्तरि=दायादा। स्वस्य दायादा (ष० त०), तेभ्य।

राजा—आर्य! एवमेतेषु परिज्ञातापरागहेतुषु क्षिप्रमेव कस्मान्न प्रतिविहितमार्येण?

चाणक्यः—वृषल! न पारितं प्रतिविधातुम्।

राजा—किमकौशलात्, उत प्रयोजनापेक्षया?

चाणक्यः—कथमकौशलं भविष्यति, प्रयोजनापेक्षयैव।

राजा—तदप्रतिविधानप्रयोजनमिदानीं श्रोतुमिच्छामि।

चाणक्यः—वृषल! श्रूयतामवधार्यताञ्च।

राजा—उभयमपि क्रियते, कथ्यताम्।

चाणक्यः—वृषल! इह खलु विरक्तानां प्रकृतीनां द्विविधं प्रतिविधानम्—अनुग्रहो निग्रहश्चेति। अनुग्रहस्तावदाक्षिप्ताधिकारयोः भद्रभटपुरुषदत्तयोः पुनः अधिकारारोपणमेव। अधिकारश्च पुनस्तादृशेषु व्यसनयोगादनभियुक्तेषु पुनरारोप्यमाणः सकलमेव राज्यस्य मूलं हस्त्यश्वमवसादयेत्। हिङ्गुरातबलगुप्तयोरत्यन्तलुब्धप्रकृतिकयोः सकलराज्यप्रदानेनाप्यपरितुष्यतोरनुग्रहः कथं कर्तुं शक्य:? राजसेनभागुरायणयोस्तु धनप्रणाशभीतयोः कुतोऽनुग्रहस्यावकाशः? लोहिताक्षविजयवर्मणोरपि दायादमसहमानयोरतिमानिनोः कीदृशोऽनुग्रहः प्रीतिं जनयिष्यतीति परिहृतः पूर्वः पक्षः। उत्तरोऽपि खलु वयमचिरादधिगतनन्दैश्वर्याः सहोत्थायिनं प्रधानपुरुषवर्गमुग्रेण दण्डेन पीडयन्तो नन्दकुलानुरक्तानां प्रकृतीनामविश्वास्या भवाम इत्यतः परिहृत एव। तदेवमनुगृहीतास्मद्भृत्यपक्षो राक्षसोपदेशश्रवणप्रवणो महीयसा म्लेच्छबलेन परिवृतः पितृवधामर्षी पर्वतकपुत्रो मलय-

केतुरस्मानभियोक्तुमुद्यत इति । सोऽयं व्यायामकालो नोत्सवकाल इति । अतो दुर्गसंस्कारे आरब्धव्ये किं कौमुदीमहोत्सवेन ? इति प्रतिषिद्धः ।

हिन्दी अनुवाद—राजा—जब इनके अपराग (विराग) के कारण का पता चल गया तो शीघ्र ही इसका उचित प्रतीकार आर्य ने क्यो नही किया ?

चाणक्य—वृषल प्रतीकार मुझसे न हो सका ।

राजा—किसी असमर्थता के कारण या प्रयोजन विशेष से ।

चाणक्य—असमर्थता के कारण क्यों ? प्रयोजन-विशेष से ही ।

राजा—अब मैं उस प्रयोजन-विशेष को सुनना चाहता हूँ ।

चाणक्य—वृषल, सुनो और समझो ।

राजा—आप कहिए; यहाँ दोनो हो रहे हैं (सुनना और समझना)

चाणक्य—वृषल, जब राज्य के प्रजाओं में विद्रोह हो जाय तो उसके दो ही प्रतीकार है। अनुग्रह और निग्रह। भद्रभट और पुरुषदत्त के ऊपर अनुग्रह करना तो यही होता कि उन्हें पुनः उनके पद पर रख दिया जाता। किन्तु क्या ऐसे दुर्व्यसनी और शासन के अयोग्य व्यक्तियो को उनके पदो पर पुनः नियुक्त करना साम्राज्य की जड, और हस्तिसेना एवं अश्वसेना को कमजोर करना न होता। हिगुरात और बलगुप्त तो बड़े लोभी प्रकृति के हैं; उन्हें तो सारा राज्य देकर भी प्रसन्न नही किया जा सकता तो उनके ऊपर कैसा अनुग्रह ? राजसेन और भागुरायण जो अपने धन और प्राणनाश का भय रखते हैं उन पर भला अनुग्रह का कहाँ अवसर, इसी प्रकार लोहिताक्ष और विजयवर्मा है जिन्हें, अपने कुटुम्बियो की उन्नति से ईर्ष्या है और जिनके अभिमान की सीमा नहीं। वे किस प्रकार के अनुग्रह से प्रसन्न किए जा सकते। इसलिए तो पूर्व पक्ष (अनुग्रह की बात) समाप्त हो गई। अब रहा निग्रह का पक्ष जिसे छोड़ देना इसलिए उचित समझा गया कि नन्द का ऐश्वर्य हस्तगत करने वाले हम लोगो के द्वारा यदि नाम-मात्र को भी साथ देने वाले प्रमुख राजसेवको को कठोर दण्ड दे देकर पीड़ित किया जाय तो नन्दकुल से प्रेम रखने वाली प्रजा हम पर कैसे विश्वास करेंगी। इस प्रकार हमारा भृत्यवर्ग जब उसका साथ दे रहा है और वह (मलयकेतु) राक्षस की शिक्षा सुनने में अनुरक्त है और अपने पिता के मरने के कारण अत्यन्त क्रुद्ध महती सेना से युक्त मलयकेतु हमारे ऊपर आक्रमण करने को उद्यत है तो यह उत्सव का समय नही है बल्कि सेना तैयार करने का समय है।

King—If the reason of the disaffection of these persons was known, why did your Nobleself not try to remove it ?

Chanakya—Vrishala, that could not be done

King—Was it due to inability or there was some motive behind it

Chanakya—How could it be due to incapacity? There was some motive behind it

King—I wish to hear the motive.

Chanakya—Listen and learn There is two-fold remedy for the dissatisfied officers—reward and punishment Re-appointment to their respective posts would have been the only reconciliation of Bhadrabhatta and Purushdatta, who were dismissed from their offices Re-instating such people as are inattentive to their work and are engaged in bad pursuits would ruin the whole of our cavalry and elephant force, the very root of the kingdom As reagrds Hingurata and Balagupta, they cannot be satisfied even by giving the whole kingdom, how then, conciliation can be possible There is no room for conciliation to Rajsen and Bhagurayan, who are afraid of their life and wealth What kind of favour will please Rohitaksha and Vijayavarman who are very proud and are unable to tolerate their king Therefore the first remedy of conciliation was abandoned The last too, indeed, has been out of consideration, because we have acquired the fortune of Nandas recently and if we inflict severe punishment on high officials who made common cause with us, we shall, for ever, become objects of distrust to such subjects as are attached to the family of Nanda Thus, following the advice of Rakshas and showing favour to our servants in this manner, Malayaketu, the son of Parvataka, enraged by the murder of his father, is prepared to attack us with a huge army of Mlechhas This is the time for exertion and not festivities and the forts have to be repaired, so there is no need of Kaumudi festival and hence it was forbidden

संस्कृत व्याख्या—एवम् अनेन प्रकारेण परिज्ञातापरागहेतुषु परिज्ञाता अपरागाणाम् विरक्तीनाम् हेतव कारणानि येषा तासु क्षिप्रम् एव सद्य एव कस्मान्न प्रतिविहितम् प्रतीकार कृत न पारितम् उचितम् प्रतिविधातुम् प्रतिकर्तुम्। किम् अबलात् शक्तेरभावात् वा प्रयोजनापेक्षया प्रयोजनविशेषमुद्दिश्य कथमकौशलम् भविष्यति प्रयोजनापेक्षया एव असामर्थ्यात् न अपि प्रयोजनविशेषेण एव, अवधार्यताम् विचार्यता विरक्ताना रागरहिताना प्रकृतीना प्रजानाम् द्विविधम् द्विप्रकारम् प्रतिविधानम् प्रतीकार । अनुग्रह कृपा निग्रह दण्ड आक्षिप्ताधिकारयो पदच्युतयो अधिकारारोपणम् एव पदे स्थापनमेव व्यसनयोगात् स्त्रीमद्यमृगयासक्तिदोषात् अनभियुक्तेषु अयोग्येषु अवसादयेत् विनाशयेत्, अत्यन्तलुब्धप्रकृतिकयो अतिलोभयुक्तयो सकलराज्यप्रदानेनापि सम्पूर्णराज्यसमर्पणेनापि अपरितुष्यतो

सन्तोषम् न गच्छतो । परिहिन पूर्व पक्ष अनुग्रह त्यक्त । उत्तरेऽपि खलु निग्रहेऽपि अचिरादधिगतनन्दैश्वर्या अवहुकालात् अधिगतम् प्राप्त नन्दैश्वर्यं नन्दराज्य यै तादृशा वयम् महोत्थायिनम् अस्माभि मह एकात्मनया उत्थायिन कृतोदय नन्दराज्यस्य प्रधानपुरुषवर्गम् मुख्याधिकारिणम् उग्रेण कठोरेण दण्डेन निग्रहेण पीडयन्त क्लेश ददन नन्दकुलानुरक्तानाम् नन्दवशेन सह प्रीति कुर्वताम् प्रकृतीना प्रजानाम् अविश्वासा अप्रीतिपात्रम् । अनुगृहीतास्मद्भृत्यपक्षः अनुगृहीत अनुकम्पित अस्मद्भृत्यपक्ष अस्मत्सेवकवर्ग येन तादृश राक्षसोपदेशश्रवणप्रवण राक्षसोपदेशानुरक्त महीयसा महता म्लेच्छबलेन म्लेच्छसेनया परिवृत युक्त पितृवधामर्षी जनकवधक्रुद्ध पर्वतकपुत्र पर्वतकसुत मलयकेतु. अस्मान् अभियोक्तुम् पराभवितुम् उद्यत तत्पर स. अयम् व्यायामकाल सैन्यसंग्रहकाल नोत्सवकाल ननु कौमुदीमहोत्सवसमय । अत अस्मात् कारणात् दुर्गसंस्कारे सैन्यएकत्रीकरणे आरब्धव्ये प्रक्रमितव्ये कौमुदीमहोत्सवेन किम् कौमुदीमहोत्सवस्य का आवश्यकता । इति अस्माद्धेतो महोत्सवः प्रतिषिद्धः निवारित ।

टिप्पणी

(१) **परिज्ञातापरागहेतुषु**—विरक्ति का कारण मालूम हो जाने पर। (२) **न पारितम्**—उचित नही था। (३) **अकौशलात्**—असमर्थता के कारण अथवा योग्यता न होने के कारण। (४) **अप्रतिविधानप्रयोजनम्**—उपाय न करने का प्रयोजन। (५) **श्रूयतामवधार्यताम्**—सुनो और ध्यान मे रक्खो। "श्रूयताम् धर्मसर्वस्व श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम्"। (६) **प्रतिविधानम्**—उपाय। प्रति+वि+धा+ल्युट्। (७) **आक्षिप्ताधिकारयोः**—अपने अधिकार से च्युत किए गए लोग। (८) **अतिलुब्धप्रकृतिकयो**—अति लोभी स्वभाव वालो का। (९) **धनप्रणाशभीतयो**—राजसेन अपने धन के नष्ट हो जाने के भय से इसलिए आक्रान्त था कि शत्रु प्रबल है। कही वह चन्द्रगुप्त को जीतकर हमारा भी धन न छीन ले। भागुरायण को यह भय था कि 'मैने पर्वतक को चाणक्य ने मरवाया है—यह बात फैला दी है और मलयकेतु को भी डराकर भगा दिया है, अत. चन्द्रगुप्त मुझे मरवा देगा'। (१०) **पूर्वपक्ष**—अनुग्रह करना। (११) **अचिरादधिगतनन्दैश्वर्या**—थोडे दिनो मे ही जिन्होने नन्द का ऐश्वर्य प्राप्त किया। (१२) **सहोत्थायिनम्**—अपना साथ देने वाले। (१३) **अनुगृहीतास्मद्भृत्य-**

पक्ष.—हमारे नौकरो के ऊपर जिसने अनुग्रह किया। (१४) **राक्षसोपदेश-श्रवणप्रवण**·—राक्षस के उपदेश मे चलने वाला। (१५) **पितृवधामर्षी**—पिता के वध से रुष्ट। ये दोनो मलयकेतु के विशेषण है। (१६) **व्यायाम-कालः**—परिश्रम करने का समय। (१७) **दुर्गसंस्कारे आरब्धव्ये**—किले की मरम्मत आदि करने का समय।

राजा—आर्य! बहु प्रष्टव्यमत्र।

चाणक्यः—वृषल! विश्रब्धं पृच्छ। ममापि बह्वाख्येयमत्र।

राजा—एष पृच्छामि।

चाणक्यः—अहमप्येष कथयामि।

राजा—योऽयमस्माकमस्य सर्वस्यैवानर्थस्य हेतुर्मलयकेतुः स कस्मादार्येणापक्रामन्नुपेक्षितः?

चाणक्यः—वृषल! मलयकेतोरपक्रमणानुपेक्षणे द्वयी गतिः स्यात्—अनुगृह्येत निगृह्येत वा। अनुग्रहे पूर्वप्रतिश्रुतं राज्यार्धं प्रतिपाद्येत। निग्रहे तावत् पर्वतकोऽस्माभिर्व्यापादित इति कृतघ्नतायाः स्वयं हस्तो दत्तः स्यात्। प्रतिश्रुतार्धराज्यप्रतिपादनेऽपि पर्वतकविनाशः केवलं कृतघ्नतामात्रफलः स्यात् इति मलयकेतुरपक्रामन्नुपेक्षितः।

राजा—अत्र तावदेवम्। राक्षसः पुनरिहैवान्तर्नगरे वर्तमान आर्येणोपेक्षित इत्यत्र किमुत्तरमार्यस्य?

चाणक्यः—राक्षसोऽपि खलु निजस्वामिनि स्थिरानुरागत्वात् सुचिरमेकत्रवासाच्च शीलज्ञानां नन्दानुरक्तानां प्रकृतीनामत्यन्तं विश्वास्यः, प्रज्ञापुरुषकाराभ्यामुपेतः, सहायसम्पदा युक्तः, कोषबलवानिहैवान्तर्नगरे वर्तमानो महान्तं खल्वन्तः कोपमुत्पादयेत्। दूरीकृतस्तु बाह्यकोपमुत्पादयन्नपि न दुःखसाध्यो भविष्यतीत्यतोऽपक्रामन्नुपेक्षितः।

राजा—तत् किमर्थमिहस्थ एवोपायैर्नोपक्रान्तः?

चाणक्यः—अथ कथमपक्रान्तो भविष्यति? ननु उपायै-

रेवासौ हृदयेशयः शङ्कुरिवोद्धृत्य दूरीकृतः। दूरीकरणस्य चोक्तं प्रयोजनम्।

राजा—आर्य! कस्माद्विक्रम्य न गृहीतः?

चाणक्यः—वृषल! राक्षसः खल्वसौ विक्रम्य निगृह्यमाणः स्वयं वा विनश्येत्, युष्मद्‌बलानि वा विनाशयेत्। एवं सत्युभयथापि दोषः। पश्य—

हिन्दी अनुवाद—राजा—आर्य, इस विषय में मुझे बहुत पूछना है।

चाणक्य—बेखटके पूछो। मुझे भी इस विषय में बहुत कहना है।

राजा—पूछता हूँ।

चाणक्य—मैं भी कहता हूँ।

राजा—हमारी सारी विपत्ति की जड़ यह मलयकेतु है। जब वह भागने लगा तो उसकी उपेक्षा क्यों की गई?

चाणक्य—वृषल, मलयकेतु के भागने की उपेक्षा न करने में केवल दो ही बातें हो सकती थीं। पहली उसके अनुग्रह की, दूसरी उसके निग्रह की। अब यदि अनुग्रह की बात होती तो पूर्व संधि के अनुसार उसे आधा राज्य देना पड़ता और यदि उसका निग्रह किया जाता तब पर्वतक की हत्या करने में हमारी जो कृतघ्नता हुई है उसे हमें अपने ही हाथो हाथ स्वीकार कर लेना पड़ता। साथ ही साथ यदि प्रतिज्ञात आधा राज्य दे भी दिया जाता तो पर्वतक का विनाश केवल कृतघ्नता मात्र प्रयोजन रखता। इसीलिए तो भागते हुए मलयकेतु की उपेक्षा की गई।

राजा—इस विषय में तो आपकी यह बात ठीक है। किन्तु राक्षस यहीं नगर के भीतर रहता हुआ आपके द्वारा उपेक्षित कर दिया गया, इस विषय में आपको क्या कहना है?

चाणक्य—राक्षस को भी यहाँ से इसलिए जाने दिया गया कि उसमें अपने महाराज के प्रति दृढ भक्ति थी। बहुत दिनों से उसके यहाँ रहते आने के कारण उसके शील से नन्दानुरक्त प्रजाओ का उस पर विश्वास था, वह बुद्धि और पराक्रम से युक्त था, उसके पास सहायक थे, कोषबल भी उसके पास था, वह यहाँ नगर में रहकर प्रजा में महान् विद्रोह पैदा कर देता। किन्तु अब जब वह यहाँ से बाहर चला गया तब अधिक से अधिक वह बाहरी विप्लव ही मचा सकेगा जिसका प्रतीकार असाध्य न होगा।

राजा—किस कारण से आपने उसे यहाँ रहते हुए उपायो से वश में नहीं कर लिया?

चाणक्य—वह मुझसे भागकर कहाँ जा सकता है? अरे अपनी बुद्धि से

ही तो हमने हृदय में चुभे हुए काँटे के समान उसे निकाल कर बाहर किया और उसे दूर करने का प्रयोजन भी बता चुका हूँ।

राजा—आर्य, वह शक्ति-प्रयोग द्वारा क्यो नहीं पकड़ लिया गया ?

चाणक्य—वह राक्षस यदि शक्ति द्वारा पकड़ा जाता तो या तो वह स्वयं अपने को नष्ट कर देता या तुम्हारी सेनाओ का विनाश कर देता। ऐसा होने पर दोनो प्रकार से हानि होती।

King—Arya, I have to ask much in this matter.

Chanakya—Vrishala, ask freely. I too, have to say much in this matter

King—Here I ask

Chanakya—I also say

King—This Malayaketu is the chief cause of our evil, why did your Noble Sir overlook his escape ?

Chanakya—Vrishala, there would have been only two courses if not overlooked—either he should have been punished or favoured If he would have been favoured, the half of the kingdom that was promised to him should have been given to him Had he been punished, we should have lent our own hand to the treachery and ingratitude that Parvataka was killed by yourselves In giving him half of the kingdom that was promised, the murder of Parvataka would have had treachery and ungratefulness for its only reward Hence, while escaping, Malayaketu was overlooked

King—It is so in this matter, Rakshas was present here in this very city and he was overlooked by your Noble Sir What explanation is there for this ?

Chanakya—Again Rakshas, who is wise and has enterprise, possesses men and money and is backed by a large number of helpers and is by steady devotion to his king and residence together, an object of great confidence to subjects that are still loyal to Nanda and appreciate character, would cause serious internal trouble staying within this very city, but being sent away, he is capable of being forced to subjection, somehow, by expedients though causing disaffection outside.

King—Then why was he not won over by expedients while staying here ?

Chanakya—How can he remain exiled ? It was by expedients that he was extracted and cast off like a plug rankling in the heart, when he was here I have told you the motive in removing him

King—Arya, why was he not seized by force?

Chanakya—Vrishala, had Rakshas been captured by force,

he would have destroyed himself or youi whole army In either cases there would have been evil See—

टिप्पणी

(१) **विश्रब्धम्**—विश्वासपूर्वक। विश्वस्त यथा स्यात् तथा। यह 'पृच्छ' क्रिया का विशेषण है। (२) **अपक्रामन्**—भागते हुए। अप+क्रम्+शतृ। (३) **उपेक्षितः**—उपेक्षा की गयी। नही रोका गया। (४) **अपक्रमणानुपेक्षणे**—भागते समय उपेक्षा न करने मे। अपक्रमणस्य अनुपेक्षणे इति (५) **पूर्वप्रतिश्रुतम्**—पहली शर्त के अनुसार, पहले वादे के अनुसार पर्वतक को आधा राज्य देने का वादा करके ही तो चाणक्य ने नन्द के ऊपर हमला करने के लिए उसे (पर्वतक को) बुलाया था। (६) **कृतघ्नताया. स्वहस्तोदत्तः स्यात्**—कृतघ्नता को अपने ऊपर दृढ करना होता अर्थात् पर्वतक को मरवा कर हमने जो यह समाचार फैला दिया है कि उसको राक्षस ने मरवाया है, यह बात समाप्त हो जाती और उसके वध का अपयश हमारे मत्थे पडता। क्योकि लोग यह सोचते कि यदि इन्होने नही मरवाया है तो उसके पुत्र को क्यो पकड कर दडित किया ? (७) **स्थिरानुरागत्वात्**—दृढ प्रेम होने के कारण। यहाँ हेतौ पञ्चमी है। (८) **सुचिरम् एकत्रवासाच्च**—बहुत दिन तक एक स्थान पर रहने के कारण। (९) **विश्वास्य**—विश्वासपात्र। (१०) **प्रज्ञापुरुषकाराभ्याम् उपेत.**—बुद्धि और पुरुषार्थ से युक्त। (११) **सहायसम्पदा**—सहायको से, साहाय्यकारिणा सम्पत्त्या। (१२) **अन्त कोपम्**—भीतरी झगडा, प्रजाओ मे विद्रोह। (१३) **विक्रम्य निगृह्यमाण.**—बल से पकडे जाने पर। वि+क्रम्+ल्यप्। नि+ग्रह्+शानच्। चाणक्य और चन्द्रगुप्त के इस वार्तालाप मे सारी नीति छिपी हुई है। राजनीति के पक्के खिलाडी कौटिल्य ने अपना सारा दॉव-पेच चन्द्रगुप्त को इस प्रकार बतलाया है।

स हि भृशमभियुक्तो यद्युपेयाद् विनाशं
ननु वृषल वियुक्तस्तादृशेनासि पुंसा।
अथ तव बलमुख्यान्नाशयेत् सापि पीडा
नवगज इव तस्मात् सोऽभ्युपायैर्विनेयः ॥२५॥

अन्वय—ननु वृषल ! भृशम् अभियुक्त स यदि विनाशम् उपेयात् तादृशेन

पुसा वियुक्त असि, अथ तव बलमुख्यान् नाशयेत् सा अपि पीडा। तस्मात् स वनगज इव अभ्युपायै विनेय ॥२५॥

हिन्दी अनुवाद—हे वृषल, यदि हमारे द्वारा बल-प्रयोग किए जाने पर वह अपने को नष्ट कर देता तो तुम वैसे गुणशाली पुरुष को खो बैठते, और यदि तुम्हारे सेनानायको को मार डालता तो भी दु.ख की बात होती। उसे तो उसी प्रकार बुद्धि से वश में करना है जिस प्रकार एक जगली हाथी वश में किया जाता है।

See—Vrishala, if being pressed hard, he destroys himself, you are, in that case, deprived of an incomparably good man, if, on the other hand, he kills your chief warriors, that again is an injury So, he has to be handled by stratagem, like a wild elephant

संस्कृत व्याख्या—वृषल, स हि राक्षस भृशमभियुक्त विक्रम्य निगृह्यमाण: यदि विनाशम् उपेयात् म्रियेत ननु तादृशेन तथाविधेन प्रज्ञाविक्रमशालिना "पुसा" नरेण वियुक्त विरहितो भवसि। सेयमस्माकम् प्रथमा पीडा। अथ यदि समाक्रान्त तव बलमुख्यान् सेनानायकान् नाशयेत् हन्यात् सापि पीडैवास्माकम् महद्दु खमेव। तत उभयथापि दोषे सति विक्रम्य ग्रहणस्य अविषयोऽसौ। अत. वनगज इव वन्यकरीव अभ्युपायै कौशलेन विनयै वशीकरणीय इत्यर्थ।

टिप्पणी

(१) **भृशमभियुक्तः**—अधिक शक्ति का प्रयोग करके। (२) **तादृशेन पुंसा**—इस प्रकार के पुरुष से। (३) **वनगजः**—जगली हाथी। वनचरो गजः वनगज मध्यमपदलोपी स०। (४) **अभ्युपायैः**—साम, दान, दड और भेद रूप उपायो से। यथा—राक्षस को चन्द्रगुप्त के अमात्य बनने का निमन्त्रण देना=साम उपाय। चन्दनदास को नगरश्रेष्ठी बना देना=दान उपाय। चन्दनदास को फाँसी का दण्ड देना=दण्ड उपाय। मलयकेतु से राक्षस को अलग करना=भेद उपाय। गज-पक्ष मे वशीकरण के साधनो से। यहाँ उपमा अलकार है और मालिनी छन्द है।

राजा—न शक्नुमो वयमार्यस्य वाचा वाचमतिशयितुम्। सर्वथाऽमात्यराक्षस एवात्र प्रशस्यतरः।

चाणक्यः—(सक्रोधम्) न भवानिति वाक्यशेषः। भो वृषल! तेन किं कृतम्?

राजा—यदि न ज्ञायते, तदा श्रूयताम् । तेन खलु महात्मना—

लब्धायां पुरि यावदिच्छमुषितं कृत्वा पदं नो गले
व्याघातो जयघोषणादिषु बलादस्मद्बलानां कृतः ।
अत्यर्थं विपुलैः स्वनीतिविभवैः सम्मोहमापादिता
विश्वास्येष्वपि विश्वसन्ति मतयो न स्वेषु वर्गेषु नः ॥२६॥

अन्वय—न गले पद कृत्वा लब्धाया पुरि यावदिच्छम् उषितम्, अस्मद्-बलाना जयघोषणादिषु वलात् व्याघान कृत, विपुलैः स्वनीतिविभवैः अत्यर्थं सम्मोहम् आपादिता न मनय विश्वास्येष्वपि स्वेषु वर्गेषु न विश्वसन्ति ॥२६॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—हम आप की बातों से बात नहीं लड़ा सकते। पर अमात्य राक्षस सब प्रकार श्रेष्ठ है।

चाणक्य—(क्रोध से) "और आप नहीं" इस प्रकार कहकर वाक्य पूरा करो। ऐ वृषल, उसने क्या किया?

राजा—अगर नहीं मालूम है तो सुन लीजिए। उस महात्मा ने शहर के जीते जाने पर भी जब तक चाहा हमारे गले पर पैर रखकर नगर में निवास किया। हमारी सेनाओ की विजय-घोषणा आदि में जबर्दस्ती विघ्न पैदा किया। उसी को नीति के वैभव से हमारी बुद्धि भ्रम में पड़ गई जिससे कि हम अपने विश्वास पात्रों पर भी विश्वास नहीं कर पाते।

King—We cannot argue with your Noble Sir In this matter minister Rakshas is indeed, more praise-worthy by all means

Chanakya (*with anger*)—"Not thyself" is the ending of your sentence Oh Vrishala, what has been done by him ?

King—Listen, by that great man—Residence was made in the city captured by us by planting his foot on our very neck, as it were, as long as he wished, hindrance was caused in the proclamation of victory by our forces, being confused by the great power of his policy, we do not place reliance in even the most trust-worthy of our own helpers

संस्कृत व्याख्या—तेन खलु महात्मना विपुलबुद्धिना पुरुषेण न गले पद कृत्वा पादेन तु गले पीडयित्वा अस्मान् विधूय इत्यर्थ लब्धाया पुरि अस्माभि अधि-कृतेऽपि पाटलिपुत्रनगरे यावदिच्छ यावत्कालं निवसितुमिच्छा तावत्काल यावती वा इच्छेति स्वेच्छानुसारं वा उषितम् स्थितम्। येन अस्मद्बलानाम् अस्मत्-सैन्याना जयघोषणादिषु बलात् व्याघात कृत· प्रत्यूह· कृत·। तेन विपुलैः

सुनीतिविभवै अत्यर्थम् सम्मोहमापादिता किंकर्तव्यविमूढीकृता न अस्माकम् मतय बुद्धय विश्वास्येषु अपि विश्वासयोग्येषु अपि स्वेषु वर्गेषु न विश्वसन्ति, न विश्वास कुर्वन्तीत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **अतिशयितुम्**—उल्लघन करना । आर्यस्य वाचा वाचम् अतिशयितुम्—आर्य की बात से बात नही लडा सकते । (२) **यावदिच्छम्**—जब तक जी चाहा तब तक । यावती इच्छा तावत् उपितम् इति यावदिच्छम् । (अव्ययीभाव समास) । (३) **नः मतयः**—हमारी बुद्धि । यहाँ अतिशयोक्ति, दीपक तथा उदात्त अलकार है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है ।

चाणक्यः—(विहस्य) वृषल, एतत् कृतं राक्षसेन ?

राजा—अथ किम् ? एतत् कृतममात्यराक्षसेन ।

चाणक्यः—वृषल ! मया पुनर्ज्ञातं, नन्दमिव भवन्तमुद्धृत्य भवानिव भूतले मलयकेतुरधिराज्यमारोपितः ।

राजा—अलमुपालभ्य । आर्य ! दैवेनेदमनुष्ठितम् । किमत्रार्यस्य ?

चाणक्यः—हे मत्सरिन् !

आरुह्यारूढकोपस्फुरणविषमिताग्राङ्गुलीमुक्तचूडां
लोकप्रत्यक्षमुग्रां सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घां प्रतिज्ञाम् ।
केनान्येनावलिप्ता नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वरास्ते
नन्दाः पर्यायभूताः पशव इव हताः पश्यतो राक्षसस्य ॥२७॥

अन्वय—केन अन्येन लोकप्रत्यक्षम् आरूढकोपस्फुरणविषमिताग्राङ्गुलीमुक्तचूडाम् उग्रा सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घा प्रतिज्ञाम् आरुह्य अवलिप्ता नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वरा ते नन्दा पर्यायभूता पशव इव पश्यतो राक्षसस्य हता ? ॥२७॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(हँसकर) वृषल, तुमने क्या कहा कि यह सब राक्षस ने किया ?

राजा—हाँ, यह सब काम अमात्य राक्षस ने किया ।

चाणक्य—वृषल, मुझे तो ऐसा लगता है जैसे उसी ने तुमको गद्दी पर से

नन्द की भाँति उठा दिया हो और उस पर मलयकेतु को तुम्हारी भाँति बैठा दिया हो।

राजा—उलाहना देना व्यर्थ है। अरे यह सब तो भाग्य से हुआ है। आपके वश की यह बात कैसी?

चाणक्य—अरे डाह करने वाले, मेरे अलावा ऐसा कौन है जिसने राक्षस के देखते-देखते, सारे संसार की आँखो के सामने अपने शत्रु के नाश करने की वह भयानक प्रतिज्ञा की जिसमें क्रोध के आवेग से काँपते शरीर की टेढी अँगुलियो ने शिखा खोल डाली और जिसके द्वारा (निन्यानबे सौ करोड़) विपुल धन-सम्पत्ति के स्वामी महाभिमानी राजा नन्द और उनके वंशधर बलि के पशुओ की भाँति एक-एक करके मार डाले गए।

Chanakya (smiling)—Vrishala, do you say that all this was done by Rakshas ?

King—Yes, this all was done by Minister Rakshas

Chanakya—Vrishala, I thought that Malayaketu was installed as king like you, you having been uprooted like Nanda

King—Enough of taunting This has been done by fate; What is in it of my Noble preceptor ?

Chanakya—Oh, you jealous (fellow) By whom else the Nandas, masters of ninety-nine hundred kotis of gold, were killed one by one, like beasts of sacrifice, in the presence of Rakshas, after having taken before the eyes of the world the grim vow in which the tuft of the hair was untied with the tips of the fingers that were trembling by the sway of anger which was aroused, and (the vow) which involved the complete annihilation of the entire family of the enemy

संस्कृत व्याख्या—केन अपरेण लोकस्य ससारस्य प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर यथा तथा आरूढकोपस्फुरणविषमिताङ्गुलीमुक्तचूडाम् आरूढ प्रवृद्ध य कोप तस्य यत्स्फुरण तीव्रावेशस्तेन विषमिताभि प्रचलिताभि अग्राङ्गुलीभि अङ्गुल्यग्रभागै मुक्ता श्लथबधनी चूडा शिखा यस्याम् तथाभूताम् उग्राम् कठिना सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घाम् सकलस्य अखिलस्य नि शेषस्येत्यर्थ रिपुकुलस्य शत्रुकुलस्य य उच्छेद विनाश तेन दीर्घाम् दु खसाध्याम् प्रतिज्ञाम् आरुह्य कृत्वा अवलिप्ताः दृप्ता नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वरा महाधनिन महैश्वर्यवन्त ते नन्दा प्रसिद्धाः नन्दवशीया पर्यायभूता क्रमोपस्थिता पशव इव पश्यतो राक्षसस्य पश्यन्त राक्षसमनादृत्य हता विनाशिता।

टिप्पणी

(१) **एतत्कृतं राक्षसेन**—चन्द्रगुप्त के द्वारा राक्षस की प्रशसा मे २६वें

श्लोक मे जो कुछ कहा गया है, उसे अतिसामान्य समझते हुए चाणक्य ने इस बात को व्यग्यपूर्वक कहा है। (२) **आरूढ़कोपस्फुरणविषमिताङ्गुलीमुक्तचूडाम्**—बढे हुए क्रोध के आवेश के कारण टेढी हुई उँगलियो से मुक्त की गई शिखा जिसमे ऐसी प्रतिज्ञा की। यह प्रतिज्ञा का विशेषण है। (३) **सकलरिपुकुलोच्छेददीर्घाम्**—सारे शत्रुओ के नाश करने के कारण से कठोर अर्थात् सारे रिपुकुल के नाश करने की कठिन प्रतिज्ञा। सकलस्य निखिलस्य रिपुकुलस्य उच्छेदेन विनाशेन दीर्घाम् महतीम्। (४) **नवनवतिशतद्रव्यकोटीश्वराः**—निन्यानवे सौ करोड मुद्राओ के स्वामी अर्थात् बडे धनी। (५) **पर्यायभूताः**—एक-एक करके। (६) **पश्यतो राक्षसस्य**—राक्षस के देखते-देखते। पश्यन्त राक्षसमनादृत्येत्यर्थः। यहाँ "अनादरे षष्ठी" है। (७) **अधिराज्यम्**—राज्य मे। राज्ये इति अधि-राज्यम् अव्ययीभाव स०। इस श्लोक मे अर्थापत्ति तथा उपमा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

अपि च,

गृधैराबद्धचक्रं वियति विचलितैर्दीर्घनिष्कम्पपक्षै-
र्धूमैर्ध्वस्तार्कभासां सघनमिव दिशां मण्डलं दर्शयन्तः।
नन्दैरानन्दयन्तः पितृवननिलयान् प्राणिनः पश्य चैतान्
निर्वान्त्यद्यापि नैते स्रुतबहलवसावाहिनो हव्यवाहाः ॥२८॥

अन्वय—पश्य, दीर्घनिष्कम्पपक्षै आबद्धचक्र वियति विचलितै गृध्रै धूमै ध्वस्तार्कभासा दिशा मण्डल सघनमिव दर्शयन्त पितृवननिलयान् एतान् प्राणिन नन्दै आनन्दयन्त एते स्रुतबहलवसावाहिन हव्यवाहा अद्यापि न निर्वान्ति ॥२८॥

हिन्दी अनुवाद—जले मरे (नन्दों की मांस-मज्जा से) श्मशानवासी जीवों को आनन्द देने वाली ये ज्वालायें और नन्द के वंशधरों की पिघलती हुई चर्बियों से युक्त ये आग की लपटें, लम्बे और निश्चल पंखों से मण्डल बनाकर आकाश में उडते हुए गृध्रों के रूप में धुंओं से प्रत्यक्ष प्रतीत होने वाली दिशाओ के समूह को मानों मेघों से आच्छादित दिखलाती हुई तथा सूर्यालोक को नष्ट करती हुई (ज्वालायें) अभी बुझी कहाँ है?

Even today are present the fires which burnt the Nandas, and cause the large amount of fat to flow making happy the creatures that live on the cremation ground, and which cause all the quarters to appear as if clouded, with the sunlight dimmed

by smoke in the shape of Vultures hovering in the sky in circles with wide and steady wings

संस्कृत व्याख्या—पश्य अवलोकय दीर्घनिष्कम्पपक्षै दीर्घा. आयता निष्कम्पा: कम्पनरहिता ये पक्षा तै आबद्धचक्र विरचितमण्डलं यथा स्यात्तथा वियति गगने विचलितै उड्डीयमानै गृध्रै धूमै गृध्ररूपधूमै ध्वस्तार्कभासाम् ध्वस्ता नष्टा अर्कभास सूर्यकिरणा यासु तासा स्थगितरविकिरणनिकराणाम् दिशाम् मण्डलं दिक्चक्रवाल सघनमिव घनान्धकारितमिव दर्शयन्त पितृवननिलयान् श्मशानवासिन एतान् प्राणिन जीवान् नन्दयन्त पीडयन्त एते स्रुतबहलवसावाहिन नन्दानां श्रुता गलिता या बहला प्रचुरा वसा मज्जा ता ये वाहयन्ति स्रोत क्रमेण निस्सारयन्ति तादृशा अर्थात् दह्यमानदेहच्युतमेदोमज्जितास्सन्त हव्यवाहा: अग्नय अद्यापि न निर्वान्ति न प्रशाम्यन्ति ।

टिप्पणी

(१) **दीर्घनिष्कम्पपक्षैः**—लम्बे और न हिलने वाले पखो से । (२) **आबद्ध-चक्रम्**—मण्डल बनाकर । आबद्धानि चक्राणि यस्मिन् कर्मणि तत् यथा स्यात्तथा (अव्ययीभाव) । (३) **गृध्रै. धूमैः**—गिद्ध रूपी धुओ से । यहाँ व्यस्त रूपक है । कई दिन पूर्व जली हुई चिता मे अगारमात्र शेष रह गये है । उनमे अब वास्तविक धूम नही है । अत गृध्रो को धूम के रूप मे वर्णित किया गया है । (४) **ध्वस्तार्कभासाम्**—सूर्य की किरण को छिपाने वाली, यह दिशा का विशेषण है । ध्वस्ता अर्कभास यासु तासाम् ब० व्री० । (५) **पितृवननिल-यान्**—श्मशान घाट पर रहने वाले जीवो को । (६) **स्रुतबहलवसावाहिनः**—निकलती हुई जो प्रचुर मज्जा उसे बहाने वाली । बहल—प्रचुर । वसा—मज्जा, चर्बी । यह हव्यवाहा का विशेषण है । (७) **हव्यवाहाः**—आग । हव्य वहन्ति देवेभ्य प्रापयन्ति इति हव्य+वह्+अण् । इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है ।

राजा—अन्येनैवेदमनुष्ठितम् ।
चाणक्यः—आः केन ?
राजा—नन्दकुलविद्वेषिणा दैवेन ।
चाणक्यः—दैवमविद्वांसः प्रमाणयन्ति ।

एष चरण मदीय पाद अपि पुन प्रतिज्ञाम् आरोढुम् मदवमानिन विनाशयिष्या-मीति प्रतिज्ञापथेनाऽतिमकटेन सञ्चरितुम् पुनरपि चलति अग्रेसरो भवति। कालेन परीन मृत्युवश गन त्वम् नन्दाना प्रणाशात् मरणात् प्रशमम् उपजातम् प्रशान्तं क्रोधदहनम् कोपाग्निम् अधुना सम्प्रति पुन ज्वलयमि प्रदीपयितुमुत्सहसे।

टिप्पणी

(१) **अविद्वासः**—मूर्ख। (२) **अविकत्थना**—डीग न मारने वाले, (३) **मामारोढुम्**—मेरे ऊपर रहना, मुझे तुच्छ समझना। आ+रुह्+तुमुन्= आरोढुम्। (४) **बद्धाम्**—बन्ध्+क्त+टाप्। यहाँ ध्यान रहे कि चाणक्य ने अब तक अपनी शिखा बाँधी नही है। क्योकि वह प्रकरण की समाप्ति पर कहता है—'पूर्णप्रतिज्ञेन मया केवल वध्यते शिखा।' प्रथम अक की प्रस्तावना के वाद भी कहा गया है कि 'तत प्रविशति मुक्ता शिखा परामृशन् कुपित चाणक्य'। अत यहाँ 'वद्धाम्' का अर्थ बद्धप्राय है। (५) **कालेन परीतः**—काल के वशीभूत होकर। इसमे निरगरूपक अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

राजा—(सावेगं स्वगतम्) अये ! तत् कथं सत्यमेव कुपित आर्यः ? तथाहि—

संरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामयापि
भ्रूभङ्गोद्भेदधूमं ज्वलितमिव पुरः पिङ्गया नेत्रभासा।
मन्ये रुद्रस्य रौद्रं रसमभिनयतस्ताण्डवे संस्मरन्त्या
सञ्जातोदग्रकम्पं कथमपि धरया धारितः पादघातः॥३०॥

अन्वय—सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामया अपि पिङ्गया नेत्र-भासा भ्रूभङ्गोद्भेदधूम पुर ज्वलितमिव। मन्ये, ताण्डवे रौद्र रसम् अभिनयत. रुद्रस्य सस्मरन्त्या धरया पादघात कथमपि सञ्जातोदग्रकम्प धारित ॥३०॥

हिन्दी अनुवाद—राजा (आवेग के साथ अपने मन में) तो क्या सचमुच आर्य कुपित हैं? क्योकि—

इनके नेत्रों की पिङ्गल वर्ण कान्ति क्रोध के कारण कम्पायमान पलको से निकलते हुए अश्रुकणों से धोने के कारण क्षीण होने पर भी मानो टेढ़ी भ्रू रूपी धुयें के साथ एकाएक प्रज्वलित हो उठी है। पृथ्वी ने इनके पदाघात को उग्र कम्पन के साथ इस प्रकार सहन कर लिया है मानो ऐसा मालूम पड़ता है कि उसे रौद्ररस के अभिनयकारी भगवान् शङ्कर के ताण्डव का स्मरण हुआ हो।

King (with agitation to himself)—Is then Noble preceptor really angry ? The fiery glow of his eyes, though made weak by the tears dropping from the eyelashes that are quivering in anger, seems to have been ablaze, as it were, and the frowning of the eyebrows appears to be its smoke I think that the stamping of the foot has been tolerated by the earth somehow with great shock felt as she remembered of Rudra displaying the Rudrarasa at his dances (tandawa)

संस्कृत व्याख्या—सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामया सरम्भेण क्रोधावेशेन स्पन्दीनि उत्कम्पवन्ति यानि पक्ष्माणि तेभ्य क्षरत् निस्सरद् यदमल जल क्रोधाश्रु तेन कृत यत् क्षालन तेन क्षामया क्षीणया अपि पिङ्गया अरुणया नेत्रभासा नेत्रदीप्त्या भ्रूभङ्गोद्भेदधूम भ्रुवोर्भङ्गोद्भेद एव धूमो यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा पुर ज्वलितमिव अग्रे प्रदीप्तमिव मन्ये शङ्के ताण्डवेषु विकट-विक्रान्तनृत्येषु रौद्र रसमभिनयत हृद्गत क्रोध कायमनोवाग्व्यापारै प्रकाशयत. रुद्रस्य शिवस्य सस्मरन्त्या स्मृति कुर्वता धरया पृथिव्या पादघात पादप्रहार· कथमपि केनापि प्रकारेण कष्टेन सञ्जातोदग्रम् सञ्जात समुद्भूत उदग्रो विकट· कम्पो यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा धारित सोढ· इत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **सत्यमेवार्यः कुपित.**—चन्द्रगुप्त सोचता है कि मैंने तो आर्य चाणक्य के आदेशानुसार ही यह वाद-विवाद करके उन्हे कृत्रिम रूप से कुपित करने का नाटक किया है। किन्तु प्रतीत होता है कि आर्य चाणक्य यथार्थ मे कुपित हो गये है। (२) **सरम्भस्पन्दिपक्ष्मक्षरदमलजलक्षालनक्षामया**—क्रोध से हिलती बरौनियो से निकलता हुआ जो अश्रु-प्रवाह उससे धुल जाने से क्षीण हो गई है जो (नेत्रकान्ति)। यह नेत्रभासा का विशेषण है। (३) **भ्रूभङ्गोद्भेदधूमम्**—भृकुटी रूप धुएँ से युक्त। भ्रूभगस्य उद्भेद स एव धूमो यत्र तत् यथा स्यात्तथा। (४) **धरया**—पृथ्वी से। धरा शब्द का तृतीया का एकवचन है। (५) **सञ्जातोदग्रकम्पम्**—विशेष उत्कम्पन के साथ। क्रियाविशेषण अव्यय है। सजात उदग्र. कम्प यस्मिन् कर्मणि तत् यथा स्यात्तथा। इसमे रूपक और उत्प्रेक्षा अलकार है तथा स्रग्धरा छन्द है।

चाणक्यः—(कृतकं कोपं संहृत्य) वृषल, वृषल, अलमुत्तरोत्तरेण यद्यस्मत्तो वरीयान् राक्षसोऽवगम्यते

तस्मादिदं शस्त्रं तस्मै दीयतामिति (शस्त्रमुत्सृज्य उत्थाय च आकाशे लक्ष्यं बद्ध्वा स्वगतम्) राक्षस! राक्षस! एष भवतः कौटिल्यबुद्धिविजिगीषोर्बुद्धेः प्रकर्षः।

चाणक्यतः स्खलितभक्तिमहं सुखेन
जेष्यामि मौर्यमिति सम्प्रति यः प्रयुक्तः।
भेदः किलैष भवता सकलः स एव
सम्पत्स्यते शठ तवैव हि दूषणाय ॥३१॥

(इति निष्क्रान्तः।)

अन्वय—शठ! चाणक्यत स्खलितभक्ति मौर्यम् अह सुखेन जेष्यामि इति सम्प्रति भवता य एष भेद किल प्रयुक्तः स सकल एव तवैव दूषणाय सम्पत्स्यते हि ॥३१॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(बनावटी कोप को रोककर) वृषल, वृषल उत्तर-प्रत्युत्तर करना बन्द करो। यदि राक्षस मुझसे श्रेष्ठ समझा जाता है तो यह शस्त्र उसे दे दिया जाय। (शस्त्र का त्याग कर उठकर आकाश की ओर लक्ष्य करके स्वगत) राक्षस, राक्षस, चाणक्य की बुद्धि को जीतने के इच्छुक तुम्हारी इतनी ही बुद्धि है। (अर्थात् यह बुद्धि मुझे जीतने को पर्याप्त नहीं है) जो तुमने यह समझकर कि चाणक्य से शिथिल भक्ति हुए चन्द्रगुप्त को मैं आसानी से जीत लूंगा तुमने भेदनीति का प्रयोग किया है यह (नीति) तुम्हारे ही नाश का कारण बनेगी।

Chanakya (*suppressing the artificial anger*)—Vrishal, Vrishal, enough of expostulation If Rakshas is thought to be worthier than I, let this weapon be given to him (*Throwing down the weapon, rising and fixing his gaze in the sky*) Rakshas, Rakshas, this is the limit of your policy by which you try to outwit Kautilya, you have adopted the policy of estrangement thinking that you will easily overcome Chandragupta whose reverence for Chanakya is shaken, but, know that the same policy will result in your own destruction

संस्कृत व्याख्या—अरे शठ महाधूर्त राक्षस य भेद· भवता भेदपटुना "अहं चाणक्यत चलितभक्तिम् विश्लथानुराग मौर्यं चन्द्रगुप्तं सुखेन विना कष्टेनैव जेष्यामि पराभविष्यामीति ध्याय ध्याय कमपि नीतिप्रयोग सम्प्रति यदा मया पूर्वमेव सर्वोऽय विदित. तदा प्रयुक्त. एष सकलो भेदः तवैव हि दूषणाय तवैव

नाशाय भविष्यतीति भाव । आवयोर्भेदार्थं प्रयुक्ता नीति युवयोर्भेद साधयिष्यति इत्याशय ।

टिप्पणी

(१) **कृतककोपम्**—नकली (ऊपरी) क्रोध। कृत एव कृतक । (२) **उत्तरोत्तरेण**—जवाब-सवाल से उद्+तॄ+अप्=उत्तरम् । उत्तरस्य उत्तरम् उत्तरोत्तरम्, तेन। "अल योगे तृतीया" है। (३) **गरीयान्**—अधिक श्रेष्ठ। अतिशयेन गुरु इति गुरु+ईयसुन। (४) **कौटिल्यबुद्धिविजिगीषो:**—कौटिल्य की बुद्धि को परास्त करने के इच्छुक। एष बुद्धे प्रकर्ष —इतनी ही बुद्धि है। भाव यह है कि क्या तुम्हारी कौटिल्य को जीतने की इतनी ही बुद्धि है। (५) **चलितभक्तिम्**—विचलित भक्ति वाले को। चलिता भक्ति यस्य त। (६) **तव दूषणाय**—तुम्हारे नाश का कारण होगा। दुष्+णिच्+ल्युट् भावे, 'दोषो णौ' इत्यनेन ऊत्वम्=दूषणम्, तस्मै। "क्लृपि सपद्यमाने" से यहाँ चतुर्थी हुई है। यहाँ विषमालकार है और वसन्ततिलका छन्द है।

राजा—आर्य वैहीनरे! अद्य प्रभृत्यनादृत्य चाणक्यं चन्द्रगुप्तः स्वयमेव राज्यकार्याणि करिष्यतीति गृहीतार्थाः प्रकृतयः क्रियन्ताम् ।

कञ्चुकी—(स्वगतम्) कथं निरुपपद एव चाणक्यो नार्य चाणक्य इति। हन्त! सत्यमेव हृतोऽधिकारः। अथवा न खल्वत्र वस्तुनि देवदोषः। कुतः—

स दोषः सचिवस्यैव यदसत् कुरुते नृपः।
याति यन्तुः प्रमादेन गजो व्यालत्ववाच्यताम् ॥३२॥

अन्वय—नृप यत् असत् कुरुते स सचिवस्यैव दोष । यन्तु प्रमादेन गज व्यालत्ववाच्यता याति ॥३२॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—आर्य वैहीनरि, "आज से चाणक्य का अनादर कर चन्द्रगुप्त स्वयं राजकार्य करेगा" यह बात प्रजा में घोषित कर दो।

कञ्चुकी—(अपने मन मे) क्यो बिना किसी आदरसूचक विशेषण के ही "चाणक्य" कहा "आर्य चाणक्य" नही कहा। कष्ट है कि अधिकार छीन लिया गया। अथवा इस विषय में महाराज का दोष नहीं है, क्योकि—यह मंत्री का ही दोष है जो कि राजा अनुचित कार्य करता है। (क्योंकि) महावत की असावधानी से ही हाथी को "दुष्ट हाथी" होने की निन्दा प्राप्त होती है।

King—Arya Vaihinari let it be proclaimed among the people that from today Chandragupta will conduct all the affairs of state ignoring Chanakya

Chamberlain (*to himself*)—How is that he says "Chanakya" without adding any respectful word not "Noble Chanakya" Alas, the rights are taken away Or in this matter the fault is not of the king For—It is through the minister's fault that the king does some wrong action The elephant earns the title of "Rogue" through the carelessness of the keeper

संस्कृत व्याख्या—नृप राजा यत् ग्रमत् अनुचितम् कार्य करोति तत् सचिवस्य एव मत्रिण एव अपराध न तु नृपस्य। यन्तु हस्तिपकस्य प्रमादेन असावधानतया गज करी व्यालत्ववाच्यता दुष्टगजत्वेन वाच्यता निन्दनीयता याति।

टिप्पणी

(१) **अद्यप्रभृति**—आज से। (२) **गृहीतार्थाः प्रकृतयः क्रियन्ताम्**—प्रजावर्ग को अवगत करा दिया जाय। इति अनेन प्रकारेण गृहीत परिज्ञात अर्थ वस्तु याभि (बहुव्रीहि स०), ता। (३) **निरुपपद**—बिना किसी आदर-सूचक शब्द के (लगाए)। (४) **व्यालत्ववाच्यताम्**—दुष्ट हाथी की पदवी। "व्यालो दुष्टगजे सर्पे" इति हैम। व्याल—दुष्ट हाथी। यहाँ दृष्टान्त अलकार और अनुष्टुप् छन्द है।

राजा—आर्य! किं विचारयसि?

कंचुकी—देव! न किञ्चिद्विचारयामि, किन्तु एतद्विज्ञापयामि, दिष्ट्या देव इदानीं देवः संवृत्त इति।

राजा—(आत्मगतम्) एवमस्मासु गृह्यमाणेषु स्वकार्यसिद्धिकामः, सकामो भवत्यार्यः। (प्रकाशम्) शोणोत्तरे! अनेन शुष्ककलहेन शिरोवेदना मां बाधते, तच्छयनगृहमादेशय।

प्रतीहारी—एदु एदु महाराओ। (एतु एतु महाराजः।)

हिन्दी अनुवाद—**राजा**—क्या सोच रहे हो?

कञ्चुकी—कुछ नही महाराज, बस यही कहना चाहता हूँ कि आज महाराज, महाराज हुए।

राजा—(स्वगत) इस प्रकार (लोगो के द्वारा) हम लोगों के (यथार्थ कलह किये हुए) समझ लिये जाने पर अपने कार्य की सिद्धि चाहने वाले आर्य पूर्णकाम

हो। (प्रकट) शोणोत्तरे ! इस व्यर्थ के विवाद से मेरा सिर दर्द कर रहा है, मुझे शयन-गृह में ले चलो।

प्रतीहारी—महाराज, इधर आवें।

King—What are you thinking of ?

Chamberlain—Nothing Sire, I want to say only this that luckily sire, has become a (real) king now

King (*to himself*)—May the desires of Noble Preceptor who expects success in the undertaking, be fulfilled, when people are thinking thus about us (*Aloud*) sonottara, due to this dry wrangle I am feeling headache Show me the bed room

Warder—Come, let sire come

राजा—(आसनादुत्थायात्मगतम्)

आर्याज्ञयैव मम लङ्घितगौरवस्य
बुद्धिः प्रवेष्टुमवनेर्विवरं प्रवृत्ता।
ये सत्यमेव न गुरून् प्रतिमानयन्ति
तेषां कथं नु हृदयं न भिनत्ति लज्जा ॥३३॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे।)

॥ इति तृतीयोऽङ्कः ॥

अन्वय—आर्याज्ञया एव लङ्घितगौरवस्य मम अवने. विवर प्रवेष्टु बुद्धिः प्रवृत्ता। ये सत्यमेव गुरून् न प्रतिमानयन्ति तेषा हृदयं लज्जा कथं नु न भिनत्ति ? ॥३३॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—(आसन से उठकर स्वगत) ओह जब कि आर्य की आज्ञा से उनके गौरव का हमने अतिक्रमण किया तब यदि हमारा हृदय ऐसा अधीर हो उठा है जैसे पाताल में धँस जाना चाहता हो तब भला उन लोगो का हृदय तो लज्जा से फट ही जाना चाहिए जो अपने बड़ो का सचमुच ही अपमान किया करते है। (सभी पात्र बाहर चले जाते है।)

॥ तीसरा अङ्क समाप्त ॥

King (*Rising from his seat to himself*)—I, who have transgressed the bounds of respectfulness by the order of the Noble Preceptor, intend to enter a hole in the earth; how is it that the heart of those, who purposely insult their elders, is not rent as under with shame ? (*all depart*) (End of the third act).

संस्कृत व्याख्या—आर्याज्ञया आर्यस्य गुरोश्चाणक्यस्य आज्ञया आदेशेनैव न

तु निर्ममत्या लघितगौरवस्य लघितम् उत्क्रान्तम् गौरवम् मर्यादा येन तादृशस्य मम अवने पृथिव्या विवर रन्ध्रम् प्रवेष्टुम् बुद्धि प्रवृत्ता मति सञ्जाता ये जना सत्यमेव गुरुन् प्रतिमानयन्ति अवमानयन्ति लज्जा तेषा हृदय कथ न भिनत्ति विदारयति।

टिप्पणी

(१) **स्वकार्यसिद्धिकामः**—अपने काम की सिद्धि चाहने वाला। स्वकार्यस्य सिद्धिम् कामयते तादृश। (२) **शुष्ककलहेन**—सूखा विवाद, व्यर्थ का कलह। (३) **लघितगौरवस्य**—गौरव का लघन करने वाले का, अर्थात् अपमान करने वाले का। (४) **अवनेः विवरम्**—पृथ्वी के छेद मे, अर्थात् पृथ्वी के अन्दर। (५) **प्रतिमानयन्ति**—अपमानित करते है। प्रति—मान्+णिच्+लट्। इस श्लोक मे परिसख्या, काव्यलिंग तथा अर्थापत्ति अलकार है और वसन्ततिलका छन्द है।

चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशत्यध्वगवेषः पुरुषः।)

पुरुषः—हीमाणहे हीमाणहे। (आश्चर्यमाश्चर्यम्।)

जोअणसअं समधिअं को णाम गदागदं इह करेइ।
अत्थाणगमणगुरुई प्पहुणो अण्णा जइ ण होइ ॥१॥
(योजनशतं समधिकं को नाम गतागतमिह करोति।
अस्थानगमनगुरुका प्रभोराज्ञा यदि न भवति ॥१॥)

अन्वय—अस्थानगमनगुरुका प्रभो आज्ञा यदि न भवति को नाम इह समधिक योजनशत गतागत करोति? ॥१॥

हिन्दी अनुवाद—(पथिक के वेष में एक पुरुष का प्रवेश)

पुरुष—आश्चर्य है, आश्चर्य है! यदि स्वामी की महान् आज्ञा न होती तो ऐसा कौन व्यक्ति है जो असमय में सैकडों योजन से भी ज्यादा दूर का आना-जाना करता?

(*Now enters a person dressed as a traveller*) *Traveller*—Oh! wonder, wonder Had there not been the heavy order of the master who would have come and gone back over a hundred yojans and more at this odd time

संस्कृतव्याख्या—अस्थानगमनगुरुका अनवसरे यत् गमन तेन गुरुका गुर्वी प्रभो स्वामिन अमात्यस्य आज्ञा आदेश यदि चेत् न भवति तर्हि को नाम मद्भिन्न इह अस्मिन् लोके समधिक योजनशतम् गतागतम् तत्र ततो वाऽत्र गमनागमन करोति। न कोऽपीति भाव।

टिप्पणी

(१) **अध्वगवेषः**—पथिकवेषधारी। पथिक के वेश मे यह राक्षस का गुप्तचर करभक है। यह राक्षस की आज्ञा से कुसुमपुर मे वैतालिक के वेश मे रहते हुए, राक्षस के ही एक दूसरे गुप्तचर—स्तनकलश को सन्देश देकर और वहाँ का समाचार लेकर वापस आया है। अध्वान गच्छतीति अध्वग तस्य वेष अध्वगवेष इव वेष अस्येति बहुव्रीहि। (२) **समधिकम्**—सङ्गतमधिकेन

ग्रादि तत्पुरुप। समधिक योजनशतम्। सौ योजन से अधिक। (३) अस्थान-गमनगुरुका—असमय मे जाने के कारण महान्। (४) गतागतम्—आना-जाना। गतञ्च आगतञ्च गतागतम् समाहार द्वन्द्व। इस पद्य मे काव्यलिंग अलंकार तथा आर्या छन्द है।

ता जाव अम्मच्चक्खसस्स ज्जेव गेहं गच्छामि (परिश्रान्तवत् परिक्रम्य) भो! को एत्थ दुआरिआणम्? णिवेदेह दाव भट्टिणो अमच्चरक्खसस्स, एसो क्खु करहको करहक विअ कज्जं तुवरन्तो पाडलिपुत्तादो आगदोऽत्ति (तद्यावदमात्यराक्षस्यैव गेहं गच्छामि। भोः! कोऽत्र दौवारिकाणाम्? निवेदय तावत् भर्तुः अमात्यराक्षसस्य। एष खलु करभकः करभक इव कार्यं त्वरयन् पाटलिपुत्रादागतः इति)।

हिन्दी अनुवाद—तो अब अमात्य राक्षस के ही घर जाता हूँ। (थके हुए के समान घूमकर) अरे यहाँ कौन द्वारपाल है? जाकर स्वामी अमात्य राक्षस से निवेदन करो कि करभक हाथी के बच्चे के समान काम को जल्दी से पूरा करके पाटलिपुत्र से आ गया है।

Then meanwhile I shall enter the house of minister Rakshas (*Going round as if tired*) Which of the watchman is here? Inform Minister Rakshas that Karbhak like an elephant cub has come hastily from Pataliputra after performing his function

टिप्पणी

(१) कार्यं त्वरयन्—काम को शीघ्रता से पूरा करके। (२) करभक इव—हाथी के बच्चे के समान। करभक गुप्तचर का नाम भी है। (३) दौवारिकाणाम् क—द्वारपालो मे से कौन।

दौवारिकः—(प्रविश्य) भद्द! मा उच्चं यन्तेहि। एसो अमच्चो भट्टा कज्जचिन्ताजणिदेण जाअरेण समुप्पणसीसवेअणो अज्ज बिदाब ण सअणदलं मुञ्चदि; ता चिट्ठदाव मुहुत्तअं जाव से लद्धावसरो भविअ भवदो आगमणं णिवेदेमि। (भद्र! मा उच्चैर्मन्त्रय। एष खलु भर्ता अमात्यराक्षसः

कार्यचिन्ताजनितेन जागरेण समुत्पन्नशीर्षवेदनोऽद्यापि तावत् न शयनतलं मुञ्चति । तस्मात् तिष्ठ तावन्मुहूर्तं यावत् तस्य लब्धावसरो भूत्वा भवत आगमनं निवेदयामि) ।

पुरुषः—भद्दमुह जधा दे रोअदि (भद्रमुख, यथा ते रोचते)

(ततः प्रविशति शयनगत आसनगतेन शकटदासेन सह चिन्तितः राक्षसः)

राक्षसः—(आत्मगतम्)

हिन्दी अनुवाद—द्वारपाल—(प्रवेश करके) भद्र ! जोर से मत बोलो। स्वामी अमात्य राक्षस को कार्य की चिन्ता से जागरण करने के कारण सिर में पीड़ा हो रही है और उन्होने अब भी शय्या को नही छोड़ा है। इसलिए एक मुहूर्त्त तक रुको। जब तक अवसर पाकर आपका आना मै उनसे निवेदन कर दूं।

पुरुष—भद्रमुख, जैसी तुम्हारी इच्छा।

(तब शयनगत चिन्तामग्न राक्षस शकटदास के साथ प्रवेश करता है)

राक्षस—(मन में)

Door-keeper (*Entering*)—Gentleman, do not talk so loudly Here Minister Rakshas suffering from headache caused by the wakefulness due to anxiety of state affairs, does not leave the bed as yet So wait a moment, getting an opportunity I shall inform him of your arrival

Traveller—Good man, as you like it

(Now seated in his bed enter Rakshas with Shakatdas, engaged in meditation)

Rakshas—(*To himself*)

टिप्पणी

(१) कार्यजनितचिन्ताजनितेन—काम के कारण उत्पन्न चिन्ता से। (२) समुत्पन्नशीर्षवेदनः—सिर मे पीडा युक्त। समुत्पन्ना शीर्षे वेदना यस्य स। (३) दौवारिकः—द्वारपाल। द्वार+ठक्, 'द्वारादीना च' इति सूत्रेण ऐजागम।

मम विमृशतः कार्यारम्भे विधेरविधेयतां
सहजकुटिलां कौटिल्यस्य प्रचिन्तयतो मतिम्।
अथ च विहिते मत्कृत्यानां निकाममुपग्रहे
कथमिदमिहेत्युन्निद्रस्य प्रयान्त्यनिशं निशाः ॥२॥

अन्वय—कार्यारम्भे विधे अविधेयता विमृशन कौटिल्यस्य सहजकुटिला मति प्रचिन्तयन अथ च मत्कृत्याना निकामम् उपग्रहे विहिते 'इह इद कथम्' इति अनिशम् उन्निद्रस्य मम निशा प्रयान्ति ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—कार्य प्रारम्भ करते ही भाग्य की प्रतिकूलता सोचते हुए और कौटिल्य की स्वाभाविक कुटिलनीति पर विचार करते हुए तथा अपने कामो के असफल हो जाने पर मै सोचने लग जाता हूँ कि "यहाँ यह कैसे हुआ" इस प्रकार निरन्तर चिन्ता में लगा रहता हूँ और जागते-जागते ही मेरी राते व्यतीत हो जाती है।

As soon as I undertake some work, fate becomes perverse and I brood over this perversity, then again I weigh cunning designs of Kautilya and, my undertaking being unsuccessful, I begin to think how this happened here, in this way being engrossed in meditation, I pass my nights without any sleep

सस्कृत व्याख्या—कार्यारम्भे कृत्योपक्रमप्रभृत्येव विधे भाग्यस्य अविधेयता प्रतिकूलता विमृशन चिन्तयत अपि च कौटिल्यस्य चाणक्यस्य कुटिला मति वक्र नय प्रचिन्तयन विचारयन अथ च मत्कृत्यानाम् मदीयव्यापाराणा निकामम् सर्वाङ्गीणम् उपग्रहे प्रतीकारे विहिते साधिते इह इद कथ निश्चितसाफल्ये इदमचिन्तित वैफल्य कथ कस्मात्कारणात् इति अनिशम् सर्वदा उन्निद्रस्य निद्रा-रहितस्य मम निशा रात्रय प्रयान्ति व्यतियान्ति। या चिन्ता कार्यारम्भे सा एव आरब्धेऽपि कार्ये इति निद्रा नैव लभे इत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **विधे**—भाग्य की। (२) **अविधेयता**—प्रतिकूलता। (३) **उपग्रह**—विफलता। (४) **उन्निद्रस्य**—जागते हुए का। उद्गता निद्रा यस्य स । इस श्लोक मे समुच्चय अलकार तथा हरिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'नसमरसलागा षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता'।

अपि च

कार्योपक्षेपमादौ तनुमपि रचयंस्तस्य विस्तारमिच्छन्
बीजानां गर्भितानाम् फलमतिगहनम् गूढमुद्भेदयंश्च ।
कुर्वन् बुद्ध्या विमर्श प्रसृतमपि पुनः संहरन् कार्यजातम्
कर्ता वा नाटकानामिममनुभवति क्लेशमस्मद्विधो वा ॥३॥

अन्वय—आदौ तनुमपि कार्योपक्षेप रचयन्, तस्य विस्तारमिच्छन्, गर्भिताना वीजानाम् अतिगहन फल गूढमुद्भेदयश्च, बुद्धया विमर्श कुर्वन् प्रसृतम् अपि कार्यजात पुन सहरन् नाटकाना कर्ता वा अस्मद्विधो वा इम क्लेशम् अनुभवति ।।३।।

हिन्दी अनुवाद—ओह ! कैसा विचित्र कष्ट भोगना पड़ रहा है। यह राजनीति भी कैसा नाटक है। जो कष्ट नाटककार को भोगना पडता है वही कष्ट मुझ जैसे राजनीतिज्ञ को भी भोगना पडता है। प्रारम्भ मे थोडे भी कार्य के उपाय को करता हुआ, उसका विस्तार चाहता हुआ, फलोन्मुख बीजो के अत्यन्त गहन परिणाम को गुप्त रूप मे प्रकट करता हुआ और फैले हुए कार्य-समूह को पुनः इकट्ठा करता हुआ (नाटककार और नीति का प्रयोग करने वाला) कष्ट पाता ही है। नाटककार के लिए कार्यारम्भ मुखसंधि है, उसे फलोन्मुख बनाना प्रतिमुखसधि है, कार्य-समह को इकट्ठा करना गर्भसधि में बीजोद्भेद करना है।

The author of a drama as well as a politician like me has to experience the same trouble, he has to devise means to the end though it is meagre in the beginning and then he has to think of developing it and then secretly the very issues of the impregnated seeds have to be germinated Again he has to think over the result and ultimately all the results, though scattered, have to be focussed

सस्कृतव्याख्या—आदौ प्रारम्भे तनुमपि अल्पमपि कार्योपक्षेपम् प्रतिपक्षोपजापोपग्रहादिरूपस्य कृत्यजातस्य उपन्यास रचयन् प्रणयन् तस्य कार्यस्य विस्तारमिच्छन् हृदयेन समाशसमान गर्भितानाम् बीजानाम् निपुण निगूढाना बीजानाम् प्रसरता प्रयोगानाम् पक्षान्तरे फलप्रधानहेतूनामित्यर्थ अतिगहन फलम् दुरवगमम् गूढम् अनभिव्यक्तम् च फलम् उद्भेदयश्च प्रकटयश्च बुद्धया प्रज्ञया विमर्श कुर्वन् सिद्धयसभावना निरासपूर्वक सिद्धिनिश्चयादि कुर्वन् प्रसृतमपि विस्तृतमपि कार्यजातम् तत्तन्मत्रसम्पत्साध्यानर्थसभारान् सहरन् सगृह्णन् च समापयन् च नाटकानाम् कर्ता वा रचयिता वा अस्मद्विधो वा मादृशश्च राजनीतिप्रयोक्ता जन इम क्लेश दु ख जागरणरूप क्लेशम् अनुभवति भजते। क्लेशमय एवाय राजमार्ग नाटकाभिनयप्रयोग इव द्रष्टृणा यथा सुखावहो न तथा कर्तृणाम् ।

टिप्पणी

(१) **आदौ**—शुरू मे। नाटककार के सबध मे "मुखसधि मे"। (२) **तनुमपि**—थोडा सा भी। (३) **कार्योपक्षेपम्**—शत्रुपराजयरूप साम आदि उपाय

को। कार्यस्य उपक्षेप । कार्य—जो काम किया जाने वाला है। उपक्षेपम्—हेतु, कारण, जो पूरा करे अर्थात् उपाय। (४) **तस्य विस्तारम्**—कार्य (बीज) के विस्तार को। (५) **गर्भितानाम्**—फलोन्मुख। गर्भ सञ्जात एषामिति गर्भ—इतच्। जो बीज बोए जाते हैं उनमे कुछ नाश हो जाते हैं कुछ सूख जाते हैं और थोडे मे ही फलोन्मुख होते हैं। राक्षस का कार्योपक्षेप गर्भित नही है पर चाणक्य का गर्भित है। देखिए अङ्क २ जहाँ आभूषण आदि सिद्धार्थक को दिए जाते है और वे राक्षस के पास जमा करके रक्खे जाते हैं। तृतीय अङ्क मे भी चाणक्य की सिद्धि है जहाँ पर यह बताया गया है कि मलयकेतु ने चाणक्य के ही आदमियो को अपने यहाँ नियुक्त किया है। (६) **प्रसृतमपि**—फैले हुए कार्य-समूह का उपसहार करता हुआ। राक्षस का कार्यजात प्रसृत नही है। चाणक्य का कार्यजात प्रसृत है। उसके कार्य-समूह का उपसहार सप्तम अङ्क मे है "भृत्या भद्रभटादय स च तथा लेख स सिद्धार्थक' अङ्क ७ श्लोक ६। (७) **नाटकाना कर्ता वा**—नाटककार ने राक्षस के इस कथन के माध्यम से नाटक के निर्माण के समय अपने द्वारा अनुभूत कठिनाइयो को वर्णित किया है। (८) **इमम् क्लेशम्**—यह जागने का कष्ट। राजनीतिक नाटको की रचना करना सरल काम नही है। राजनीति के खिलाडी को जो कष्ट उठाने पडते है वही कष्ट नाटककार को उठाना पडता है। यहाँ श्लेष तथा दीपक अलकार और स्रग्धरा छन्द है।

तदपि नाम दुरात्मा चाणक्यवटु:,—'

(उपसृत्य)

दौवारिक:—जेदु जेदु—' (जयतु जयतु—')

राक्षस:—'अभिसन्धातुं शक्य: स्यात्।

दौवारिक:—अमच्चो। (अमात्य:)।

राक्षस:—(वामाक्षिस्पन्दं सूचयित्वात्मगतम्) 'दुरात्मा चाणक्यवटुर्जयति, अभिसन्धातुं शक्य: स्यादमात्य:' इति वागीश्वरी वामाक्षिस्पन्दनेन प्रस्तावगता प्रतिपादयति। तथापि नोद्यमस्त्याज्य:। (प्रकाशम्) भद्र! किमसि वक्तु-काम: ?

दौवारिकः—अमच्च ! एसो क्खु करहओ पाडलिपुत्तादो आअदो, इच्छदि अमच्चं पेक्खिदुं। (अमात्य ! एष खलु करभकः पाटलिपुत्रादागतः, इच्छति अमात्यं प्रेक्षितुम् ।)

राक्षसः—अवारितं प्रवेशयैनम् ।

दौवारिकः—जं अमच्चो आणबेदि । (इति निष्क्रम्य पुरुषमुपसृत्य) भद्द ! एसो क्खु अमच्चो चिट्ठदि, ता उबसप्प णं। (यदमात्य आज्ञापयति। भद्र ! एष खलु अमात्यस्तिष्ठति, तदुपसर्प एनम् ।)

(इति निष्क्रान्तो दौवारिकः।)

हिन्दी अनुवाद—इतना होने पर भी यदि कहीं यह दुष्ट चाणक्य......

द्वारपाल—(पास जाकर) जय हो, जय हो।

राक्षस—वश मे आ सकता।

द्वारपाल—अमात्य !

राक्षस—(बाई आँख का फडकना सूचित कर स्वगत) अरे यह क्या, "दुष्ट चाणक्य की जय हो" और अमात्य वश में आ जाता इस प्रकार की यह अद्भुत वाणी क्या मेरी बाई आँख फडक उठने में इस प्रकार के होने की सूचना देने लगी। फिर भी उद्यम नहीं छोडना चाहिए। (प्रकट) भद्र क्या कहना चाहते हो ?

द्वारपाल—अमात्य ! यह करभक पाटलिपुत्र से आया है और अमात्य से मिलना चाहता है।

राक्षस—बे-रोकटोक के उसे ले आओ।

द्वारपाल—जैसी अमात्य की आज्ञा। (बाहर जाकर उस पुरुष के पास पहुँचकर) भद्र ये अमात्य विराजमान है, आप इनके पास आइए। (द्वारपाल चला जाता है)

Well then, is it likely that the wicked Chanakya—

Warder (*Going near*)—Be victorious

Rakshas—Might be capable of being subdued

Warder—Minister

Rakshas—(*Indicating the throbbing of the left eye to himself*) The divine speech, in the form of the throbbing of the left eye, foretells this, "Let the wicked Chanakya be victorious" "Minister might be capable of being subdued" Still I must not give up my efforts (Aloud) Good man, what do you wish to say ?

Warder—Minister, this Karbhaka has come from Pataliputra, he wishes to see the minister

Rakshas—Let him be admitted without any check

Warder—As the minister orders (*Going out and approaching the man*) Good man, here it is the Minister, approach him (Exit)

टिप्पणी

(१) **अवारितम्**—विना रोक-टोक के। (२) **अभिसंधातुम्**—वश मे करना, धोखा देना। (३) **वामाक्षिस्पन्दनम्**—बाईं आँख का फडकना। पुरुषो की बाईं तथा स्त्रियो की दाईं आँख का फडकना अशुभ माना गया है। (४) वागीश्वरी—वाग्देवता।

करभकः—(राक्षसमुपसृत्य) जेदु जेदु अमच्चो। (जयतु जयत्वमात्यः।)

राक्षसः—(नाट्येनावलोक्य) भद्र करभक! स्वागतम्। उपविश्यताम्।

करभकः—जं अमच्चो आणवेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति भूमावुपविशति।)

राक्षसः—(आत्मगतम्) अथ कस्मिन् प्रयोजने मयाऽयं प्रणिधिः प्रहित इति प्रभूतत्वात् प्रयोजनानां न खल्ववधारयामि। (इति चिन्तां नाटयति।)

(ततः प्रविशति वेत्रपाणिरपरः पुरुषः।)

पुरुषः—ओसलध अज्जा! ओसलध। अवेध माणहे! अवेध। किं ण पेक्खस? (अपसरत आर्याः! अपसरत। अपेत मान्याः! अपेत। किं न पश्यथ?)

हिन्दी अनुवाद—करभक—(राक्षस के पास जाकर) अमात्य की जय हो।

राक्षस—(अभिनय के साथ देखकर) भद्र करभक! स्वागत है, बैठ जाओ।

करभक—अमात्य की जो आज्ञा (पृथ्वी पर बैठ जाता है)।

राक्षस—(मन मे) काम की अधिकता से यह निश्चित नही कर पा रहा हूँ कि किस काम से इस गुप्तचर को भेजा था। (चिन्ता का अभिनय करता है)।

पुरुष—(हाथ मे बेत लिए हुए, दूसरे पुरुष का प्रवेश) हटो आर्यो, हटो। मान्य लोगो! दूर हो जाओ। क्या देखते नही हो?

Karbhak (*Approaching Rakshas*)—Victory to the Minister

Rakshas (*Acts seeing*)—Good man, you are welcome, sit down

Karbhak—As the Minister commands (*Sits on the ground*)

Rakshas (*To himself*)—Due to Multiplicity of engagements I do not remember to what propose this spy was sent by me (*Acts thinking*)

The man—(*Enters another person with a rod in hand*) Away, away Ye people get away, get away Do not you see ?

दूले पच्चासत्ती दंसणमबि दुल्लहं अधण्णेहिं ।
कल्लाणकुलहराणं देवाणं अ मनुस्सदेआणं ॥४॥
(दूरे प्रत्यासत्तिर्दर्शनमपि दुर्लभमधन्यैः ।
कल्याणकुलधराणां देवानाञ्च मनुष्यदेवानाम् ॥४॥)

अन्वय—कल्याणकुलधराणा देवाना मनुष्यदेवाना च दर्शनमपि अधन्यै दुर्लभम्, प्रत्यासत्ति दूरे ॥४॥

हिन्दी अनुवाद—सम्पूर्ण मङ्गलालय देवो के समान बडे,बडे राजाओ का दर्शन भी भाग्यहीनो के लिए दुर्लभ है, उनके पास पहुँचना तो दूर रहा।

Even the sight of kings, the representative of the blessed ones, is hardly available to those without luck, nothing to say of approaching them

संस्कृतव्याख्या—कल्याणकुलधराणाम् स्वहस्तधृतसकललोकमङ्गलाना कृतमेरुवासाना वा देवाना महोदारराजवशप्रभवाणा मनुष्यदेवाना नरपतीना च दर्शनमपि साक्षात्करणमपि दुर्लभम् अधन्यै भाग्यरहितै प्रत्यासत्ति तु सामीप्याप्ति तु दूरे तिष्ठतु उपसर्पणस्य का कथा।

टिप्पणी

(१) **कल्याणकुलधराणाम्**—सकल कल्याणो का धारण करने वाला। कल्याणाना कुल तस्य धरा कल्याणकुलधरा तेषा कल्याणकुलधराणाम्। (२) **मनुष्यदेवानाम्**—नररूपी देवता। मनुष्येषु देवा तेषा मनुष्यदेवानाम् राज्ञा (राजाओ का) (३) **अधन्यै.**—अभागो से। यहाँ 'न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्' सूत्र से षष्ठी का निषेध हो गया है। (४) **प्रत्यासत्तिः दूरे**—पास मे जाना तो दूर रहा। प्रति+आ+सद्+क्तिन्। राजा मनुष्य के रूप मे देवता है

"बालोऽपि नावमन्तव्य मनुष्य इति भूमिप । महती देवता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ।।" इस श्लोक मे दीपक अलकार और आर्या छन्द है ।

(आकाशे) अज्जा ! किं भणाध, किं णिमित्तं एसा ओसालणा करीअदि ? अज्जा ! एसो क्खु कुमालो मलयकेदू समुप्पण्णसीसवेअणं अमच्चरक्खसं पेक्खिदुं इह ज्जेव आअच्छदि । एदिणा कालणेण ओसालणा करीअदि । (आर्याः ! किं भणथ, किं निमित्तमेषाऽपसारणा क्रियते ? आर्याः ! एष खलु कुमारो मलयकेतुः समुत्पन्नशीर्षवेदनममात्यराक्षसं प्रेक्षितुमिहैवागच्छति । एतेन कारणेनापसारणा क्रियते ।) (इति निष्क्रान्तः पुरुषः ।)

(ततः प्रविशति भागुरायणेन कञ्चुकिना चाऽनुगम्यमानो मलयकेतुः ।)

मलयकेतुः—(निःश्वस्यात्मगतम्) अद्य दशमो मासस्तातस्योपरतस्य । न चास्माभिर्वृथा पुरुषकारमुद्वहद्भिस्तमुद्दिश्य तोयाञ्जलिरप्यावर्जितः । अथवा, प्रतिज्ञातमेतत् पुरस्तात् ।

हिन्दी अनुवाद—(आकाश की ओर देखकर) अरे लोगो ! क्या आप जानना चाहते हैं कि किस कारण लोग हटाए व भगाए जा रहे हैं । अरे, आर्य कुमार मलयकेतु यह सुनकर कि अमात्य राक्षस के सिर में पीडा हो रही है, उन्हे देखने के लिए इधर पधार रहे हैं । इसी कारण आप लोगों को हटाया जा रहा है । (पुरुष निकल जाता है)

(भागुरायण तथा कञ्चुकी के साथ मलयकेतु प्रवेश करता है)

मलयकेतु—(साँस खीचकर स्वगत) पिता को मरे हुए आज दस मास हो गए । व्यर्थ के लिए यह सब हमारा बल-पौरुष का अभिमान रहा । अभी तक उनको श्रद्धाजलि भी न अर्पित की जा सकी । अथवा पहले यही प्रतिज्ञा की थी ।

(*Looking at the sky*) Ye people, do you wish to know why you are being removed ? Noble Sir, here, indeed, Prince Malayaketu, hearing that Minister Rakshas is suffering from headache, is coming to see him Hence the clearing is being made (*Exit the man*)

(Now enter Malayaketu followed by Bhagurayan and the Chamberlain)

Malayaketu (*Sighing*)—To-day is the tenth month since father died but even a handful of water has not yet been offered by me, falsely bearing the pride of man, or this was vowed by me previously

टिप्पणी

(१) **अपसारणा**—लोगो का हटाया जाना। अप+सृ+णिच्+अन+टाप्। (२) **समुत्पन्नशीर्षवेदनम् राक्षसम् अमात्यम्**—अमात्य राक्षस को जिनके सिर मे पीडा हो रही है। समुत्पन्ना शीर्षे वेदना यस्य तम् (ब० व्री०) (३) **उपरतस्य**—मरे हुए। उप+रम्+क्त। (४) **दशमः**—दशाना पूरण दशम दशन्+डट्, तस्य मडागम। (५) **आवर्जित**—दत्त। आ+वृज्+णिच्+क्त।

वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलयं भ्रष्टोत्तरीयांशुकं
हाहेत्युच्चरितार्तनादकरुणं भूरेणुरूक्षालकम्।
तादृङ्मातृजनस्य शोकजनितं सम्प्रत्यवस्थान्तरं
शत्रुस्त्रीषु मया विधाय गुरवे देयो निवापाञ्जलिः ॥५॥

अन्वय—मातृजनस्य शोकजनित वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलय भ्रष्टोत्तरीयांशुक भूरेणुरूक्षालक हाहेत्युच्चरितार्तनादकरुण तादृक् अवस्थान्तर सम्प्रति शत्रुस्त्रीषु विधाय मया गुरवे निवापाञ्जलि देय ॥५॥

हिन्दी अनुवाद—मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि माताओ के शोक से उत्पन्न, छाती पीटने के कारण टूटे हुए रत्न कंकणो वाली पृथ्वी से उठी हुई धूल से रूखे बालो वाली और हाय हाय करने से हृदय विदारक दीनस्वर से युक्त ऐसी विपरीत दशा (दुर्दशा) जब तक बैरियो की औरतो की न हो जायगी तब तक पिता का श्राद्धतर्पण न करूँगा।

The handful of oblations has to be given to father, after having at once inflicted on the wives of the enemy the same cruel change of fate through grief as was experienced by my mothers with their upper garments slipped off and with the locks of hair made rough by the dust from the ground, with the gem-bracelets broken to pieces on account of beating the breast, change was painful due to the cry of distress that went up in the shape "Ah, Ah"

संस्कृतव्याख्या—मातृजनस्य मदीयस्यैवाम्बाजनस्य शोकजनित दु खोत्पन्नम् वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलयम् वक्षस उरस यानि ताडनानि तै भिन्नानि त्रुटितानि

खण्डितानि वा रत्नवलयानि यस्मिन्नेव भूत भ्रष्टोत्तरीयांशुकम् भ्रष्टम् स्व-स्थानात्पतितम् उत्तरीयांशुकम् उत्तरीयवस्त्रं यस्मिन् तादृशम् भूरेणुरूक्षालकम् भूरेणुभिः धूलिकणैः रूक्षा धूसरिता मलिनीकृता वा अलकाश्चूर्णकुन्तला यस्मिन् तादृशम् हाहेत्युच्चैरितार्त्तनादकरुणम् हा हा इति अनेन प्रकारेण उच्चरित उद्गत आर्त्तनाद दीनस्वर तेन करुण शोकमयम् अवस्थान्तरम् रिपु-वनितानां दशापरिवर्तन कृत्वा मया गुरवे पित्रे निवापाञ्जलि देय समर्पणीय ।

टिप्पणी

(१) **वक्षस्ताडनभिन्नरत्नवलयम्**—छाती पीटने के कारण रत्न के कंकण गिर गए है जिसमे ऐसी (दशा)। (२) **भ्रष्टोत्तरीयांशुकम्**—शरीर पर के कपडे टूट गए है जिसमे। (३) **भूरेणुरूक्षालकम्**—पृथ्वी की धूल से रूखे बालो वाली। यह तीनो विशेषण अवस्थान्तरम् के हैं। (४) **अवस्थान्तरम्**—दूसरी अवस्था। अन्या अवस्था अवस्थान्तरम्। (मयूरव्यसकादित्वात् त० स०)। (५) **निवापाञ्जलि**—श्राद्धतर्पण। (६) **देयः**—दा-यत् कर्मणि। इस श्लोक मे निदर्शना अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

तत् किमिह बहुना ?

उद्यच्छता धुरमकापुरुषानुरूपां
गन्तव्यमाजिनिधनेन पितुः पथा वा।
आच्छिद्य वा स्वजननीजनलोचनेभ्यो
नेयो मया रिपुवधूनयनानि बाष्पः ॥६॥

अन्वय—अकापुरुषानुरूपा धुरम् उद्यच्छता मया पितु पथा वा आजिनिधनेन गन्तव्यम्, बाष्पो वा स्वजननीजनलोचनेभ्य आच्छिद्य रिपुवधूनयनानि नेय ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—तो इस विषय में बहुत कहने से क्या लाभ? वीर पुरुषों की तरह इस महान् कार्यभार को उठाते हुए या तो मुझे अपनी माताओं की आँखो के आँसुओ को शत्रु-वनिताओ की आँखों में पहुँचा देना चाहिए या समरभूमि मे वीरगति पाकर पिता के मार्ग का अनुगमन करना चाहिए।

Then what is the use of talking much in this matter Bearing the burden of this great undertaking like a brave person I should either tread along the path of my father by giving up my life in battle or transfer the tears to the wives of my enemy by forcibly taking them away from the eyes of my mothers.

संस्कृतव्याख्या—अकापुरुषानुरूपाम् वीरपुरुषोचिता धुर शत्रुप्रणाशादि-कार्यभारम् उद्यच्छता उद्वहता मया पितु पथा वा मार्गेण आजिनिधनेन सग्रामे वीरगतिगमनेन गन्तव्यम् मरण कामयितव्यम् वाष्पो वा नेत्रजल वा स्वजन-नीजनलोचनेभ्य मातृवर्गस्य नेत्रेभ्य आच्छिद्य गृहीत्वा रिपुवधूनयनानि शत्रु-स्त्रीनेत्राणि नेय प्रापयितव्य ।

टिप्पणी

(१) **अकापुरुषानुरूपाम्**—वीरपुरुष के योग्य । रूपम् अनुगता अनुरूपा (सुप्सुपा स०) । कुत्सित पुरुष कापुरुष वा कुपुरुष 'विभाषा पुरुषे' इति सूत्रेण कादेशस्य विकल्पात् । न कापुरुष अकापुरुष तस्य अनुरूपाम् इति । (२) **उद्यच्छता**—धारण करते हुए । उद्+यम्+शतृ । (३) **आजिनिधनेन**—लडाई मे मरकर । (४) **स्वजननीजनलोचनेभ्यः**—अपनी माताओ के नेत्रो से । (५) **आच्छिद्य**—लेकर । आ+छिद्+ल्यप् । यहाँ विकल्प अलकार तथा वसन्त-तिलका छन्द है ।

(प्रकाशम्) आर्य जाजले ! उच्यन्तामस्मद्वचनादनुयायिनो राजानः—'एक एवाहममात्यराक्षसस्यातर्कितागमनेन प्रीति-मुत्पादयितुमिच्छामि, अतः कृतमनुगमनक्लेशेने'ति ।

कंचुकी—यदाज्ञापयति कुमारः । (परिक्रम्याकाशे) भो भो राजानः ! कुमारः समाज्ञापयति—'न खल्वहं केनचिदनु-गन्तव्यः' इति । (विलोक्य सहर्षम्) कुमार ! कुमार ! एते भवदाज्ञासमनन्तरमेव प्रतिनिवृत्ताः सर्व एव राजानः । पश्यतु कुमारः—

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) आर्य जाजलि, हमारी ओर से अनुगामी राजाओ से कह दो कि मै अकेला ही अमात्य राक्षस के पास सहसा जाकर प्रीति उत्पन्न करना चाहता हूँ । इसलिए पीछे-पीछे चलने वाले कष्ट न करें ।

कञ्चुकी—जो कुमार की आज्ञा (परिक्रमा करके आकाश में) ऐ राजाओ, कुमार की आज्ञा है कि "मेरे पीछे कोई न चले" । (देखकर प्रसन्नता से) कुमार, कुमार, ये सभी राजा आप की आज्ञा पाते ही लौट गए । कुमार देखें ।

(*Aloud*) Noble Jajali, in my words tell the princes that are following me, "I wish to give joy to Minister Rakshas unattended by my unexpected visit So away with the trouble of following me"

Chamberlain—As the prince commands (*Going round in the sky*) Oh, kings, the prince commands thus, "I must not be followed by anyone" (*Seeing with joy*) Prince, prince, all the kings have turned back simultaneously with your command. See oh prince

टिप्पणी

(१) **अतर्कितागमनेन**—यकायक पहुँच जाना। सहसोपस्थित्या। तर्क्+णिच् स्वार्थे—क्त कर्मणि=तर्कित=जिसकी पहले मे आशा हो। न तर्कितम् अतर्कितम्। अतर्कित च तत् आगमनम् अतर्कितागमनम्, तेन। unexpected visit। (२) **आज्ञासमनन्तरमेव**—आज्ञा पाते ही।

सोत्सेधैः स्कन्धदेशैः खरतरकविकाकर्षणात्यर्थभुग्नै-
रश्वाः कैश्चिन्निरुद्धाः खमिव खुरपुटैः खण्डयन्तः पुरस्तात्।
केचिन्मातङ्गमुख्यैर्विहतजवतया मूकघण्टैर्निवृत्ताः
मर्यादां भूमिपाला जलधय इव ते देव नोल्लङ्घयन्ति ॥७॥

अन्वय—कैश्चित् खुरपुटै पुरस्तात् ख खण्डयन्त इव अश्वा खरतरकविकाकर्षणात्यर्थभुग्नै सोत्सेधै स्कन्धदेशै। निरुद्धा केचित् विहतजवतया मूकघण्टै मातङ्गमुख्यै निवृत्ता। देव! भूमिपाला जलधय इव मर्यादा न उल्लघयन्ति ॥७॥

हिन्दी अनुवाद—काँटेदार लगामो को अधिक खीचने से अत्यन्त टेढी और ऊँची गर्दन किए हुए अपने खुरो से मानो आकाश को विदीर्ण करने वाले घोडो को कुछ राजाओं ने रोक लिया है और कुछ ने हाथियो को रोक लिया जिससे उनके घण्टे अब नहीं बजते। हे देव, समुद्र के समान ये राजे भी मर्यादा का उल्लघन नही करते।

Some have stopped their horses whose necks are much curved and bulged from a very tight pull of the reins and who (horses) are, as if, pounding with their hoofs the yonder sky Some (kings) have stopped their elephants the bells of which are silent because their speed is hindered Oh Sire, the kings like seas, donot cross the bounds

संस्कृतव्याख्या—कैश्चित् भूमिपालै खुरपुटै शफकोटिभि पुरस्तात् अग्रत खम् गगनम् खण्डयन्त इव वेगनिरोधाऽसहतयाऽऽआकाशाभोगमेव कुट्टयन्त इव अश्वा हया खरतरकविकाकर्षणात्यर्थभुग्नै खरतरम् सम्भ्रमात् अतिकठोरम्

यत् कविकाकर्षणम् खलिनसग्रह तेन अत्यर्थम् अतिशयम् भुग्नै कुटिलै सोत्सेधै समुन्नतीकृतमध्यभागै स्कन्धदेशै ग्रीवाप्रदेशै निरुद्धा अवरुद्धा । केचित् विहत-जवतया विहत अपगत जव वेग धावनवेग इत्यर्थ येषा तथाविधतया निरुद्ध-वेगतया इत्यर्थ मूकघण्टै शब्दरहितघण्टै मातङ्गमुख्यै महागजैस्सह इति भाव निवृत्ता प्रतिगता । हे देव ! जलधय इव सागरा इव भूमिपाला राजान ते तव मर्य्यादा तवाज्ञा वेला वा न उल्लघयन्ति । न अतिक्रामन्ति । सागरा यथा वेला प्राप्य निवर्तन्ते भूपालास्तथा तवाज्ञा श्रुत्वा निवृत्ता ।

टिप्पणी

(१) **खम्**—आकाश को। (२) **खण्डयन्त.**—विदीर्ण करते हुए। घोडे तेजी से भाग रहे थे। एकाएक लगाम खीच कर उन्हे रोक दिया गया। अतः वे पीछे के दो पैरो पर खडे हो गए। उनके अगले दो पैर आकाश मे उठे थे। इससे लगता था मानो वे आकाश को तोड रहे हो। (३) **खरतरकविकाकर्षणात्यर्थभुग्नैः**—अति तीक्ष्ण लगाम को खीचने के कारण अधिक टेढे। यह स्कन्ध देशै का विशेषण है (४) **सोत्सेधैः**—ऊँचा। (५) **निरुद्धाः**—रोके गये (घोडे) नि+रुध्+क्त। (६) **केचित्**—कुछ (राजा लोग)। (७) **विहतजवतया**—वेग के कम होने के कारण। विहत· जव येषा ते विहतजवा तस्य भाव तया। (८) **मूकघण्टैः**—जिनके घटो का बजना बन्द हो गया है वे (हाथी)। यह गजै का विशेषण है। मूका घण्टा येषा ते मूकघण्टा तै. मूकघण्टै । (९) **जलधय इव**—समुद्रो के समान। इनमे स्वभावोक्ति, उपमा और उत्प्रेक्षा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

मलयकेतुः—आर्य जाजले ! त्वमपि सपरिजनो निवर्तस्व। भागुरायण एको मामनुगच्छतु ।

कञ्चुकी—यदाज्ञापयति कुमारः ।

(इति सपरिजनो निष्क्रान्तः)

मलयकेतुः—सखे भागुरायण ! विज्ञापितोऽहमिहागच्छद्भिर्भद्रभटप्रभृतिभिः, यथा—'न वयममात्यराक्षसद्वारेण कुमारमाश्रयणीयमाश्रयामहे, किन्तु कुमारस्य सेनापतिं शिखरसेनमूरीकृत्य दुष्टामात्यपरिगृहीतात् चन्द्रगुप्तादपरक्ताः

सन्तः कुमारमाभिरामिकगुणयोगादाश्रयणीयमाश्रयामह' इति ।
तन्मया सुचिरमपि विचारयता तेषां न वाक्यार्थोऽधिगतः ।

भागुरायणः—कुमार ! 'नायमत्यन्तदुर्बोधोऽर्थः । पश्य, विजगीषुमात्मगुणसम्पन्नं प्रियहितद्वारेणाश्रयणीयमाश्रयेदि' ति ननु न्याय्य एवायम् ।

मलयकेतुः—सखे भागुरायण ! नन्वस्माकममात्यराक्षसः प्रियतमो हिततमश्च ।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—आर्य जाजलि, तुम भी परिजनो के साथ लौट जाओ। अकेला भागुरायण ही मेरे पीछे-पीछे चले।

कञ्चुकी—जैसी कुमार की आज्ञा। (परिजनो के साथ बाहर चला जाता है)

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, यहाँ आते हुए भद्रभटादि ने मुझसे यह कहा कि "हम लोग अमात्य राक्षस के द्वारा आश्रय योग्य कुमार का आश्रय नही ले रहे हैं बल्कि कुमार के सेनापति शिखरसेन को स्वीकार करके (उसकी बात मानकर) दुष्ट अमात्य (चाणक्य) के वशीभूत चन्द्रगुप्त से विरक्त होकर कुमार का आश्रय ले रहे है कि वह (मलयकेतु) राजा के उत्तम गुणो से विभूषित है।" सो मैंने बडी देर तक उनकी बातो पर विचार किया परन्तु उनकी बात का अर्थ न समझा।

भागुरायण—इसका अर्थ समझने में कठिन नही है। देखिए, उचित यही है कि उसी विजिगीषु राजा का आश्रय लो जो आत्मा के गुणो (शूरता, उदारता आदि) से युक्त हो और उसी को बीच मे डालकर आश्रय लो जो प्रिय और हितचिन्तक हो।

मलयकेतु—सखे भागुरायण, पर अमात्य राक्षस तो हम लोगो के बडे प्रिय और हितैषी हैं।

Malayaketu—Noble Jajali, you too retire with the servants, Bhagurayan alone may follow me

Chamberlain—As the prince orders (*Retires with servants*).

Malayaketu—Friend Bhagurayan, while coming here I was thus told by Bhadrabhatta and others, "It is not through Minister Rakshas that we join the Prince, who is worthy of attachment, but having won over Shikharsena, the general of the Prince, we, being dissatisfied with Chandragupta, who is controlled by a wicked minister, attach ourselves to Prince who is worthy of attachment due to possessing attractive qualities".

Now, though I have thought much, yet I am unable to make out the sense of their speech

Bhagurayan—Prince, it is not difficult to understand the sense This is but proper that through a beloved well-wisher one should join the ambitious who are endowed with the quality of heart and are fit for being attached

Malayaketu—Friend Bhagurayan, but minister Rakshas is our most beloved and the greatest well-wisher

टिप्पणी

(१) **भागुरायण एको मामनुगच्छतु**—केवल भागुरायण मेरे पीछे-पीछे आये। यहाँ ध्यान रहे कि भागुरायण चाणक्य का गुप्तचर है। यही वह मलयकेतु के मन मे राक्षस के प्रति सन्देह का बीज बो देगा। भविष्य मे यह सन्देह क्रमश बढता ही जाएगा। परिणामस्वरूप मलयकेतु राक्षस से अलग हो जाएगा। (२) **आश्रयणीयम्**—आश्रय के योग्य। आ+श्रि+अनीयर्। (३) **ऊरीकृत्य**—स्वीकार करके, मान करके। ऊरी+कृ+ल्यप्। (४) **दुष्टामात्यपरिगृहीतात्**—दुष्ट अमात्य के वशीभूत। (५) **आभिरामिकगुणयोगात्**—प्रशस्त गुणो से भूषित होने के कारण। अभि+रम्+णिच्+अच्+कर्तरि। अभिरामम्—सुन्दर। तत् शीलमस्य इति अभिराम+ठक् (आभिरामिकम्)। (६) **अवधारित**—समझा। अव+धृ+णिच्+क्त।

भागुरायणः—कुमार! एवमेतत्, किन्तु अमात्यराक्षसश्चाणक्ये बद्धवैरो न तु चन्द्रगुप्ते, तद्यदि कदाचिच्चन्द्रगुप्तश्चाणक्यमतिजितकाशिनमसहमानः साचिव्यादवरोपयेत्, ततो नन्दकुलभक्त्या नन्दान्वय एवायमिति कृत्वा, सुहृज्जनापेक्षया च, अमात्यराक्षसश्चन्द्रगुप्तेन सह सन्दधीत। चन्द्रगुप्तोऽपि पितृपारम्पर्यागत एवायमिति कृत्वा सन्धिमनुमन्येत। एवं सत्यस्मास्वपि कुमारो न विश्वसेदित्ययमेषां वाक्यार्थः।

मलयकेतुः—युज्यते। सखे भागुरायण! अमात्यराक्षसस्य गृहमार्गमादेशय।

भागुरायणः—इत इतः कुमारः। (इत्युभौ परिक्रामतः।) कुमार! इदममात्यराक्षसस्य गृहं प्रविशतु कुमारः।

मलयकेतुः—एष प्रविशामि। (इत्युभौ प्रवेशनं नाटयतः।)

राक्षसः—(आत्मगतम्) आः स्मृतम्। (प्रकाशम्) भद्र! अपि दृष्टस्त्वया कुसुमपुरे वैतालिकः स्तनकलशः?

करभकः—अमच्च! अध इं? (अमात्य! अथ किम्?)

मलयकेतुः—सखे भागुरायण! कुसुमपुरवृत्तान्तः प्रस्तूयते। तन्नोपसर्पावः, शृणुवस्तावत्—

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—कुमार, ऐसा ही समझिये। इन लोगो के कहने का मतलब यह है कि अमात्य राक्षस की दुश्मनी तो चाणक्य से है न कि चन्द्रगुप्त से। कभी यदि ऐसा हुआ कि चन्द्रगुप्त चाणक्य के गर्व से ऊबकर उसे मन्त्रिपद से अलग कर दिया तो हो सकता है कि अमात्य राक्षस अपनी नन्दवंश की भक्ति के कारण और अपने मित्रो की रक्षा के लिए यह सोच कर चन्द्रगुप्त से जा मिले कि वह भी तो नन्दवंश का ठहरा और चन्द्रगुप्त भी यह जानकर कि यह तो परम्परागत अमात्य ही ठहरा उससे मिल जायँ तो कुमार हम लोगो पर भी न विश्वास करेंगे, यही इन लोगो के कहने का तात्पर्य है।

मलयकेतु—ठीक है। मित्र भागुरायण, अमात्यराक्षस के घर का रास्ता बताओ।

भागुरायण—कुमार इधर आइए। (दोनों चलते हैं) कुमार यही अमात्य-राक्षस का घर है। चलिए भीतर चलें।

मलयकेतु—तो भीतर चलता हूँ। (दोनो भीतर जाने का अभिनय करते हैं)।

राक्षस—(मन में) अच्छा। याद हो गया। भद्र, क्या तुमने कुसुमपुर में वैतालिक स्तनकलश को देखा था?

करभक—अमात्य, हाँ, मिला।

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, यहाँ तो कुसुमपुर की बात हो रही है। तो अभी न चले। सुने (क्या बात हो रही है)

Bhagurayan—It is so Minister Rakshas has enmity with Chanakya, not with Chandragupta So, if he (Chandragupta), not tolerating Chanakya, who is too much elated with success, removes him from ministership, then Rakshas might make treaty with Chandragupta for the good of his friends and through devotion to the Nanda-family for after all he (Chandragupta) is the son of Nanda Chandragupta, too, may like this alliance, because Rakshas is connected with him by ancestral succession And if this happens the prince may not have faith in us This is what they mean

Malayaketu—This is reasonable Show me the way to the minister's house

Bhagurayan—This way, Prince, this way (*Both go round the stage*) This is Minister's house Prince may enter .

Malayaketu—Here I enter

Rakshas (*To himself*)—Yes, now I remember (*Aloud*) Gentleman, did you see Stankalash in Kusumpura ?

Karbhaka—Yes, Minister

Malayaketu—Friend Bhagurayan, the affairs of Kusumpura are being discussed We must not go, in the meantime we will listen For—

सत्त्वभङ्गभयाद्राज्ञां कथयन्त्यन्यथा पुरः ।
अन्यथा विवृतार्थेषु स्वैरालापेषु मन्त्रिणः ।।८।।

अन्वय—मन्त्रिण राज्ञा पुर सत्त्वभङ्गभयात् अन्यथा कथयन्ति, विवृतार्थेषु स्वैरालापेषु अन्यथा ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—अपने प्रभाव के नष्ट हो जाने के भय से मत्री लोग राजाओं के सामने दूसरे ही ढग से बात करते हैं और उसी बात को अपने इष्ट मित्रो के साथ किए जाने वाले वार्तालाप मे दूसरे ढग से बताते हैं।

Ministers speak differently before the kings, fearing loss of prestige but speak otherwise in easy chats in which the real facts are spoken of

संस्कृतव्याख्या—मत्रिण अमात्या राज्ञा नृपतीनाम् पुर अग्रे सत्त्वभङ्ग-भयात् स्वप्रभावनाशशङ्कया अन्यथा अन्येन प्रकारेण कथयन्ति किन्तु विवृतार्थेषु विवृता विस्पप्ट प्रकटीकृता अर्था तत्तद्विवक्षितविषया येषु तेषु स्वैरालापेषु मित्रैस्सह कृतेषु सभाषणेषु तदेवान्यथाऽन्येनैव प्रकारेण कथयन्ति भाषन्ते ।

टिप्पणी

(१) **एवमेतत्**—यह ऐसा ही है। बात तो ठीक है पर। स्मरण रहे कि यह भागुरायण चाणक्य का गुप्तचर है। वह राक्षस और मलयकेतु को लडवाना चाहता है। इसीलिए उसने ऐसी बात कही। (२) **बद्धवैरः**—वैर बाँधने वाला, वैरी। बद्ध वैर येन स (बहुव्रीहि स०)। (३) **अतिजितकाशिनम्**—अत्यन्त अभिमानी। अतिगर्वितम्। अतिजितेन अतिजयेन काशते तच्छील इति अति-जित+काश्+णिनि। तम्। (४) **अवरोपयेत्**—अलग कर दे। अव+रुह्+

णिच्, ह्रस्य प, +लिङ—यात्। मन्त्रिपदात् मे अपादाने पञ्चमी। (५) सुहृज्जनापेक्षया—मित्रो के कल्याण का ख्याल करके। (६) स्वैरालापेषु—स्वच्छन्द बातचीत मे। स्वैरा. आलापा तेषु (कर्म धा०)। इस श्लोक मे काव्यलिग अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

भागुरायणः—यदाज्ञापयति कुमारः।

राक्षसः—भद्र! अपि तत् कार्यं सिद्धम्?

करभकः—अमच्चस्स प्पसाएण सिद्धम्। (अमात्यस्य प्रसादेन सिद्धम्।)

मलयकेतुः—सखे भागुरायण! किं तत् कार्यम्?

भागुरायणः—कुमार! गहनः खलु सचिववृत्तान्तो नैतावता परिच्छेत्तुं शक्यते। अवहितस्तावच्छृणु।

राक्षसः—विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि।

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—जो कुमार की आज्ञा।

राक्षस—भद्र! क्या वह काम सिद्ध हो गया?

करभक—अमात्य की कृपा से पूरा हो गया।

मलयकेतु—मित्र भागुरायण! वह काम क्या है?

भागुरायण—कुमार, मंत्रियो का वृत्तान्त बडा गूढ़ होता है। इतने से ही समझ मे नही आ सकता। ध्यान देकर सुनिए।

राक्षस—विस्तार से सुनना चाहता हूँ।

Bhagurayan—As the prince orders

Rakshas—Good man, is the work complete?

Karbhaka—Through Minister's grace it is done

Malayaketu—Friend Bhagurayan, what work is that?

Bhagurayan—Prince, the affairs of the ministers are very secret This cannot be known duly by so much Listen attentively

Rakshas—Good man, I wish to hear it in detail

टिप्पणी

परिच्छेत्तुम्—नापने के लिए, जानने के लिए। परि+छिद्+तुमुन्। अवहितः—सावधान। अव+धा+क्त, हि आदेश।

करभकः—सुणादु अमच्चो, अत्थि दाव अहं अमच्चेणा-

णत्तो, जधा—'करभअ ! कुसुमपुरे गच्छिअ भणिदव्वो मम वअणेण तुए वैआलिओ त्थणकलसो, जधा—'चाणक्कहदएण तेसुं तेसुं अण्णाभङ्गेसुं अणुचिट्ठीअमाणेसुं चन्दउत्तो समुत्तेअणसमत्थेहिं सिलोएहिं उबलिसोअइदव्वो' त्ति। (शृणोत्वमात्यः, अस्ति तावदहममात्येनाज्ञप्तो यथा—'करभक ! कुसुमपुरं गत्वा मम वचनेन त्वया भणितव्यो वैतालिकः स्तनकलशः, यथा—'चाणक्यहतकेन तेषु तेषु आज्ञाभङ्गेषु अनुष्ठीयमानेषु चन्द्रगुप्तः समुत्तेजनसमर्थैः श्लोकैरुपश्लोकयितव्यः' इति।)

राक्षसः—ततस्ततः ?

हिन्दी अनुवाद—करभक—अमात्य, सुनिए। आपकी आज्ञा हुई थी "करभक, पाटलिपुत्र जाओ और वहाँ वैतालिक स्तनकलश से मेरी ओर से जाकर कहो कि जब-जब दुष्ट चाणक्य चन्द्रगुप्त की बात टाले तब तब ऐसी कवितायें (श्लोक) कही जाँय कि चन्द्रगुप्त उत्तेजित हो जाय।"

राक्षस—तब, इसके बाद ?

Karbhaka—Let Minister hear I was ordered by Minister. "Karbhaka, go to Kusumpura and tell the bard Stankalasa in my words that at each and every transgression of orders by cursed Chanakya, Chandragupta should be praised by verses capable of rousing him".

Rakshas—What next ?

टिप्पणी

अस्ति—यहाँ 'अस्ति' एक अव्यय है। उपश्लोकयितव्यः—स्तोतव्य। प्रशंसा किये जाने के योग्य है।

करभकः—तदो मए पाडलिउत्तं गच्छिअ सुणाविदो अमच्चस्स सन्देशं वैआलिओ त्थणकलसो। (ततो मया पाटलिपुत्रं गत्वा श्रावितोऽमात्यस्य सन्देशं वैतालिकः स्तनकलशः।)

राक्षसः—ततस्ततः ?

करभकः—एत्थन्तरे णन्दकुलबिणासदुम्मणस्स पोरजणस्स

परिओसं सम्मुप्पाअन्तेण चन्दउत्तेण आघोसिदो कुसुमउरे कौमुदीमहोसवो। सोबि चिरआलपवत्तमाणो जणिदपरिओसो अहिमदबन्धुजणसमागमो बिअ, ससिणेहं बहुमणिदो णअरजणेण। (अत्रान्तरे नन्दकुलविनाशदुर्मनसः पौरजनस्य परितोषं समुत्पादयता चन्द्रगुप्तेनाघोषितः कुसुमपुरे कौमुदी-महोत्सवः। सोऽपि चिरकालप्रवर्तमानो जनितपरितोषः अभिमतबन्धुजनसमागम इव सस्नेहं बहुमानितो नगरजनेन।)

हिन्दी अनुवाद—करभक—तब मैं पाटलिपुत्र गया और अमात्य का सन्देश वैतालिक स्तनकलश से कहा।

राक्षस—तब, आगे कहो।

करभक—इसके बाद नन्दकुल के विनाश से दुखी नागरिको को प्रसन्न करने के लिए चन्द्रगुप्त ने कुसुमपुर में कौमुदी महोत्सव के मनाए जाने की घोषणा कर दी। नागरिको ने भी चिरकाल से चले आते हुए और आनन्द उत्पन्न करने वाले उस महोत्सव का अभीष्ट बंधु के आगमन के समान बड़े प्रेम से अभिनन्दन किया।

Karbhaka—Then, going to Pataliputra I apprised the bard, Stankalash, of the Minister's command

Rakshas—Then waht ?

Karbhaka—In the meantime the great Kaumudi festival was proclaimed by the king to the great joy of the citizens who were grieved by the annihilation of the family of Nanda, and this was affectionately welcomed by the towns-men like union with desired Kinsmen for it (festival) had become familiar by recurring for a long time

टिप्पणी

(१) **श्रावित**—सुना दिया गया। श्रु+णिच्+क्त कर्मणि। (२) **नन्दकुल-विनाशदुर्मनस**—नन्दकुल के नाश से दुःखी (पुरवासियो का) नन्दाना कुलस्य विनाशेन दुष्ट खिन्नम् मनो यस्य स नन्दकुलविनाशदुर्मना तस्य। (३) **चिरकाल-प्रवर्तमान**—बहुत दिनो से मनाए जाने के कारण। चिर काल। चिरकाल प्रवर्तमान (द्वितीयातत्०)। अत्र 'कालाध्वनोरत्यन्तसयोगे' इत्यनेन द्वितीया, 'अत्यन्तसयोगे च' इत्यनेन समास। (४) **जनितपरितोषः**—सतोष देने वाला, सुखदायी। जनित परितोष येन स।

राक्षसः—(सवाष्पम्) हा देव नन्द ! —
कौमुदी कुमुदानन्दे जगदानन्दहेतुना ।
कीदृशी सति चन्द्रेऽपि नृपचन्द्र त्वया विना ॥६॥

अन्वय—नृपचन्द्र ! कुमुदानन्दे चन्द्रे सति अपि जगदानन्दहेतुना त्वया विना कौमुदी कीदृशी ? ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(आँखो में आँसू भरकर) हा देव नन्द, हे नृपचन्द्र, कुमुदो को आनन्दित करने वाले चन्द्रमा के रहते हुए भी संसार को आनन्द देने वाले तुम्हारे बिना कौमुदी कैसी (अर्थात् व्यर्थ है) ।

Rakshas (with tears)—Alas ! Sire Nanda, the moon among kings, what like will Kaumudi be inspite of there being the moon, the delighter of lilies, when you, the source of joy to the world, are not present

संस्कृतव्याख्या—हे नृपचन्द्र चन्द्रतुल्य नृप राजन् कुमुदानन्दे कुमुदाना कैरवाणाम् आनन्दे हर्षवर्द्धने विकाशके इत्यर्थ चन्द्रे विधौ सति अपि वर्तमानेऽपि जगदानन्दहेतुना सर्वजनरञ्जनसमर्थेन त्वया विना नन्देन विना कौमुदी कीदृशी महोत्सव किंविध आनन्दकर कस्यापि भवितेति भाव ।

टिप्पणी

(१) **नृपचन्द्र**—राजाओ मे चन्द्रमा । नृप चन्द्र इव उपमित स । (२) **कुमुदानन्दे**—कुमुदो को आनन्द देने वाला । कुमुदानि आनन्दयति इति कुमुद+आ+नन्द्+णिच्+अण् कर्तरि=कुमुदानन्द , तस्मिन् । (३) **जगदानन्दहेतुना**—जगत् के आनन्द देने वाले (आप के बिना) "विना योगे" तृतीया है। अनुष्टुप् छन्द है। श्लेष अलकार है ।

भद्र ! ततस्ततः ?

करभकः—अमच्च ! तदो सो लोअलोअणाणन्दभूदो अणिच्छन्तस्स ज्जेब तस्स णिबारिदो चाणक्कहदकेण कौमुदी-महोस्सवो । एत्थन्तरे त्थणकलसेण पवट्टिदा चन्दउत्तस्स समुत्तेअणसमत्था सिलोअपरिबाटी । (अमात्य ! ततः स लोकलोचनानन्दभूतोऽनिच्छत एव तस्य निवारितश्चाणक्य-

हतकेन कौमुदीमहोत्सवः। अत्रान्तरे स्तनकलशेन प्रवर्तिता चन्द्रगुप्तस्य समुत्तेजनसमर्था श्लोकपरिपाटी।

राक्षसः—कीदृशी सा ?

करभकः—('सत्त्वोत्कर्षस्य' इत्यादि पूर्वोक्तं पठति।)

राक्षसः—(सहर्षम्) साधु सखे स्तनकलश ! साधु। काले भेदबीजमुप्तम् अवश्यमेव फलमुपदर्शयिष्यति। यतः—

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—भद्र, फिर क्या हुआ ?

करभक—अमात्य, इसके बाद चन्द्रगुप्त के न चाहते हुए भी लोकों के नेत्रों को आनन्द देने वाले उस कौमुदी महोत्सव को दुष्ट चाणक्य ने रोक दिया। इसी बीच मे स्तनकलश ने चन्द्रगुप्त को उत्तेजित करने मे समर्थ स्तुति प्रारम्भ कर दी।

राक्षस—वह कैसी है ?

करभक—(सत्वोत्कर्षस्य इत्यादि पूर्वोक्त श्लोक को पढता है)।

राक्षस—(प्रसन्नता से) मित्र स्तनकलश, धन्य हो, धन्य हो। समय पर बोया हुआ भेदबीज अवश्य ही फल देगा क्योंकि—

Rakshas—Good man, what then ?

Karbhaka—This joy to the eyes of the people was forbidden by the wicked Chanakya At this stage some verses that were to rouse Chandragupta were read out by Stankalash

Rakshas—How can they ?

Karbhaka—(*Recites the verse* सत्वोत्कर्षस्य *as recited before*)

Rakshas (*With joy*)—Bravo Stankalash, bravo Seed of enmity has been sown in time and it will surely bear fruit For—

सद्यः क्रीडारसच्छेदं प्राकृतोऽपि न मर्षयेत्।
किमु लोकाधिकं धाम बिभ्राणः पृथिवीपतिः ॥१०॥

अन्वय—प्राकृत अपि सद्य क्रीडारसच्छेद न मर्षयेत्, लोकाधिक धाम बिभ्राण पृथिवीपति किमु ॥१०॥

हिन्दी अनुवाद—साधारण लोग भी सहसा अपने मनोरंजन का भग होना नही सह सकते तो लोकाधिक तेज धारण करने वाले राजा कैसे सहेगे ?

Even an ordinary person cannot brook the stopping of the pleasures, how then, the lord of the world bearing all-transcending power can tolerate it ?

सस्कृतव्याख्या—प्राकृत अपि साधारण अपि जन मनुष्य सद्य प्रसभं क्रीडारसच्छेद क्रीडारसस्य खेलास्वादस्य छेद भग न मर्षयेत् न क्षमेत छेदे सति क्रोध करोति र्तीह लोकाधिक जनातिग धाम तेज बिभ्राण धारयन् पृथिवीपति राजा किमु मर्पयेत् न सहेत इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **लोकलोचनानन्दभूत**—लोगो के नेत्रो को आनन्द देने वाला। लोकाना लोचनानि, तेषाम् आनन्द (षष्ठीतत्० स०), तेन भूत तुल्य (सुप्सुपा स०)। (२) **अनिच्छत. तस्य**—चन्द्रगुप्त के न चाहते हुए भी। चन्द्रगुप्त नही चाहता था कि कौमुदीमहोत्सव बन्द हो जाय। यहाँ पर "अनादरे षष्ठी" है। चन्द्रगुप्तमनादृत्य इत्यर्थ । (३) **समुत्तेजनसमर्था**—उत्तेजना देने मे समर्थ। उत्तेजना देने वाली। (४) **क्रीडारसच्छेदम्**—खेल के रग मे भग। क्रीडाया रसच्छेदम्। (५) **लोकाधिकम्**—अलौकिक। लोकात् अधिकम् (सुप्सुपा स०)। **बिभ्राण.**—धारण करने वाला। भृ+लट्—शानच् कर्तरि। यहाँ अर्थापत्ति अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

मलयकेतुः—एवमेतत् ।

राक्षसः—ततस्ततः ?

करभकः—तदा चन्दउत्तेण आणाभङ्गकलुसिदहिअएण सुइरं अमच्चगुणं प्पसंसिअ प्पब्भंसिदो अहिआरादो चाणक्कहदओ। (ततश्चन्द्रगुप्तेनाज्ञाभङ्गकलुषितहृदयेन सुचिरममात्यगुणं प्रशस्य प्रभ्रंशितोऽधिकारात् चाणक्यहतकः।)

मलयकेतुः—सखे भागुरायण ! गुणप्रशंसया दर्शितश्चन्द्रगुप्तेन राक्षसे भक्तिपक्षपातः।

भागुरायणः—कुमार ! न तथा गुणप्रशंसया यथा चाणक्यवटोर्निराकरणेन ।

राक्षसः—भद्र ! किमयमेवैकः कौमुदीमहोत्सवप्रतिषेधश्चन्द्रगुप्तस्य चाणक्यं प्रति कोपकारणमुतान्यदप्यस्ति ?

मलयकेतुः—सखे भागुरायण ! चन्द्रगुप्तस्य अपरकोपकारणान्वेषणे किं फलमेष पश्यति ?

भागुरायणः—कुमार ! एतत् फलं पश्यति—'अतिमतिमान् चाणक्यो निष्प्रयोजनमेव किमिति चन्द्रगुप्तं कोपयिष्यति ? न च कृतवेदी चन्द्रगुप्त एतावता गौरवमुलङ्घयिष्यति। सर्वथा चाणक्यचन्द्रगुप्तयोः पुष्कलात् कारणाद् यो विश्लेष उत्पद्येत, स आत्यन्तिको भविष्यति' इति ।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—ठीक है।

राक्षस—हाँ, फिर क्या हुआ ?

करभक—तब आज्ञा-भग से रुष्ट होकर चन्द्रगुप्त ने अमात्य के (आपके) गुणो की प्रशंसा करके दुष्ट चाणक्य से अधिकार ले लिया।

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, गुणो की प्रशसा करके चन्द्रगुप्त ने राक्षस में अपनी भक्ति दिखाई ।

भागुरायण—कुमार, गुण-प्रशंसा से उतनी नही जितनी कि दुष्ट चाणक्य का अधिकार लेने से।

राक्षस—भद्र, क्या यही एक कौमुदी-महोत्सव का रोका जाना चन्द्रगुप्त का चाणक्य के प्रति क्रोध का कारण है ?

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, चन्द्रगुप्त के क्रोध के अन्य कारण के अन्वेषण से इनका क्या मतलब है ?

भागुरायण—कुमार, यह फल निकला है कि चाणक्य बड़ा बुद्धिमान् है, वह निरर्थक चन्द्रगुप्त को अप्रसन्न न करेगा। कृतज्ञ चन्द्रगुप्त भी इतने से ही चाणक्य की प्रतिष्ठा का उल्लंघन नही करेगा। इसे उन लोगों में परिपुष्ट कारण होने से जो झगड़ा पड़ेगा वह स्थायी होगा।

Malayaketu—Right it is

Rakshas—What next ?

Karbhaka—Then Chandragupta, being enraged at the disobedience by wicked Chanakya, extolled the virtues of Minister and removed Chanakya from his office

Malayaketu—Friend Bhagurayan, by praising the qualities, Chandragupta has shown a bias towards Rakshas through respect

Bhagurayan—Not so much by extolling virtues as by the removal of the wicked Chanakya

Rakshas—Good man, is the stopping of the celebration of Kaumudi festival the only reason of the anger of Chandragupta towards Chanakya or is there anything else also ?

Malayaketu—Friend, what good does he expect in finding out the other cause of Chandragupta's anger

Bhagurayan—Prince, he sees this good—Chanakya is very wise He will not enrage Chandragupta for nothing Chandragupta, too, is grateful and will not overstep reverence for this petty affair The discord between them will be lasting which wil result due to a variety of sufficient causes

टिप्पणी

(१) **आज्ञाभंगकलुषितहृदयेन**—आज्ञा भङ्ग होने के कारण रुष्ट। कलुष कृतम् इति कलुष+णिच् (नामधातु)+क्त कर्मणि=कलुषित। (२) **निराकरणेन**—निकालने से। निष्काशनेन। निर्+आ+कृ+ल्युट्। (३) **कृतवेदी**—कृतज्ञ। कृतम् उपकृतम् वेत्तीति। कृत+विद्+णिनि। (४) **आत्यन्तिकः**—पक्का, स्थायी। अतिगतम् अन्तम् अत्यन्तम्, अत्यन्ते भव। अत्यन्त+ठञ्।

करभकः—अमच्च! अत्थि अण्णदपि चन्दउत्तस्स कोबकारणं चाणक्के। (अमात्य! अस्त्यन्यदपि चन्द्रगुप्तस्य कोपकारणं चाणक्ये।)

राक्षसः—किं किम्?

करभकः—जधा पढमं दाव उवेक्खिदो अणेण अवक्कमन्तो कुमारो मलयकेदू अमच्चरक्खसो अ। (यथा प्रथमं तावदुपेक्षितोऽनेन अपक्रामन् कुमारो मलयकेतुः अमात्यराक्षसश्च।)

राक्षसः—(सहर्षम्) सखे शकटदास! हस्ततलगतो मे चन्द्रगुप्तो भविष्यति। इदानीं चन्दनदासस्य बन्धनान्मोक्षः तव च पुत्रदारैः सह समागमः, जीवसिद्धिप्रभृतीनां क्लेशच्छेदः।

भागुरायणः—(आत्मगतम्) जातः सत्यं जीवसिद्धेः क्लेशच्छेदः

मलयकेतुः—सखे भागुरायण! 'हस्ततलगतो मे सम्प्रति चन्द्रगुप्तो भविष्यति' इति व्याहरतः कोऽयमस्याभिप्रायः?

भागुरायणः—किमन्यत्? चाणक्यादपकृष्टस्य चन्द्रगुप्तस्योद्धरणान्न किञ्चित्कार्यमवश्यं पश्यति।

राक्षसः—भद्र! हृताधिकारः साम्प्रतं क्वासौ वटुः?

करभकः—तर्हि ज्जेव पाडलिपुत्ते प्पडिवसदि। (तस्मिन्नेव पाटलिपुत्रे प्रतिवसति।)

राक्षसः—(सावेगम्) भद्र! तत्रैव प्रतिवसति, न तपोवनं गतः, प्रतिज्ञां वा न पुनः समारूढवान्?

करभकः—अमच्च! तबोवणं गमिस्सदि त्ति सुणीअदि। (अमात्य! तपोवनं गमिष्यतीति श्रूयते।)

राक्षसः—(सावेगम्) शकटदास! नेदमुपपद्यते। पश्य—

हिन्दी अनुवाद—करभक—अमात्य चाणक्य के ऊपर क्रोध करने का चन्द्रगुप्त को दूसरा भी कारण है।

राक्षस—वह क्या है?

करभक—यह कि कुमार मलयकेतु और अमात्य राक्षस को भागते हुए देखकर क्यो उपेक्षा की गई।

राक्षस—(प्रसन्नतापूर्वक) मित्र शकटदास, चन्द्रगुप्त मेरे हाथ में आ जायगा। अब चन्दनदास बंधन से मुक्त हो जायगा। और तुम भी पुत्र और स्त्री से मिल जाओगे और जीवसिद्धि आदि के दुःखो का अन्त होगा।

भागुरायण—(मन में) जीवसिद्धि का कष्ट-शमन तो अवश्य ही हो गया।

मलयकेतु—सखे भागुरायण, "अब चन्द्रगुप्त मेरे हाथ में आ जायेगा" इससे इनका क्या अभिप्राय है?

भागुरायण—यह कि जब चन्द्रगुप्त चाणक्य से अलग हो गया तो उसके उन्मूलन से कोई लाभ नही।

राक्षस—भद्र, अधिकार से वंचित यह वटु चाणक्य कहाँ है?

करभक—उसी पाटलिपुत्र मे रहता है।

राक्षस—(आवेग के साथ) भद्र, वहीं रह रहा है; तपोवन नही गया अथवा कोई प्रतिज्ञा नहीं की?

करभक—सुना जाता है कि तपोवन में चला जायगा।

राक्षस—शकटदास यह बात युक्तिसंगत नही है। देखो—

Karbhaka—Chandragupta has other reason to be angry with Chanakya Malayaketu and Minister Rakshas were overlooked by him while escaping

Rakshas (*with joy*)—Friend Shakatdas, now Chandragupta will be in my hands Chandandas also shall be released from prison and you will be united with your son and wife; and Jivasiddhi and others will be relieved of their grief

Bhagurayan (*To himself*)—Jivasiddhi is certainly relieved

Malayaketu—Friend Bhagurayan, what does he mean by saying "Now Chandragupta will be in my hands"

Bhagurayan—What else ? He sees no good in overthrowing Chandragupta who is separated from Chanakya

Rakshas—Gentleman, where is that wicked fellow now when he is devoid of authority

Karbhaka—He is still staying in Pataliputra itself

Rakshas (*With concern*)—Gentleman, he is staying there, has not gone to penance-forest, nor undertaken a fresh vow ?

Karbhaka—It is heard that he will go to hermitage

Rakshas—Shakatdas, this is not consistent

टिप्पणी

(१) **अपक्रामन्**—भागता हुआ । (२) **क्लेशच्छेदः**—दु ख नाश । (३) **अपकृष्टस्य**—अलग हुए का, दूर हुए का । दूरीभूतस्य । (४) **उद्धरणात्**—नाश से । (५) **हृताधिकारः**—अधिकार-रहित । हृत अधिकार यस्य स । (६) **सावेगम्**—आवेग के साथ । राक्षस को आवेग इसलिए हुआ कि पाटलिपुत्र मे रहता हुआ चाणक्य सभव है कि चन्द्रगुप्त पर विपत्ति आ पडने पर उसकी सहायता के लिए तैयार हो जाय । (७) **न इदम् उपपद्यते**—यह युक्तिसगत नही है ।

देवस्य येन पृथिवीतलवासवस्य
स्वाऽग्रासनापनयजा निकृतिर्न सोढा ।
सोऽयं स्वयङ्कृतनराधिपतेर्मनस्वी
मौर्यात्कथं नु परिभूतिमिमां सहेत ॥११॥

अन्वय—येन पृथिवीतलवासवस्य देवस्य स्वाग्रासनापनयजा निकृति न सोढा, स अय मनस्वी स्वयङ्कृतनराधिपते मौर्यात् इमा परिभूति कथ नु सहेत ? ॥११॥

हिन्दी अनुवाद—जिसने पृथिवी के ऊपर इन्द्र के समान महाराज नन्द के द्वारा किए गए अग्रासन से हटाए जाने के रूप में अपमान का सहन नही किया वह मनस्वी स्वयम् अपने द्वारा बनाए हुए राजा से किए गए इस अपमान को कैसे सहेगा ?

The dishonour of removal from the front seat by sire (Nanda) who was virtually like Indra on the earth was not

tolerated by this supersensitive man, how can he now tolerate this disgrace from Chandragupta, who was made king by himself.

संस्कृतव्याख्या—येन चाणक्येन पृथिवीतलवासवस्य भूलोकमहेन्द्रस्य देवस्य नन्दस्य स्वाग्रासनापनयजा स्वस्य आत्मन यत् अग्रासनम् श्रेष्ठासन तस्मात् य अपनय निष्कासन तस्माज्जाता उत्पन्ना निकृति अपमान न सोढा न मर्षिता स अय मनस्वी तथाविधस्वाभिमानी स्वयङ्कृतनराधिपते स्वयमात्मना कृतश्चासौ नराधिपति च तस्मात् मौर्यात् इमाम् परिभूतिम् अवमानना कथ नु सहेत केन वा प्रकारेण मर्षयेत् ।

टिप्पणी

(१) **परिभूति**—पराभव, अपमान । (२) **स्वाग्रासनापनयजा**—अपने अग्रासन से उठाए जाने के कारण की गई । (३) **निकृतिः**—अपमान । (४) **स्वयङ्कृतनराधिपतेः**—अपने द्वारा बनाए गए राजा से । यहाँ अर्थापत्ति अलकार और वसन्ततिलका छन्द है ।

मलयकेतुः—सखे भागुरायण ! चाणक्यस्य तपोवनगमने पुनः प्रतिज्ञारोहणे वा काऽस्य स्वार्थसिद्धिः ?

भागुरायणः—कुमार ! नात्यन्तदुर्बोधोऽयमर्थः यावद्यावत् चाणक्यहतकश्चन्द्रगुप्ताद् दूरीभवति तावत्तावदस्य स्वार्थ-सिद्धिः ।

शकटदासः—अमात्य ! अलमत्यन्तविकल्पितेन, एतदुप-पद्यत एव । कुतः ? पश्यत्वमात्यः—

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—मित्र भागुरायण, राक्षस की इसमें कौन सी स्वार्थसिद्धि है कि चाणक्य तपोवन मे चला जाय या और कोई प्रतिज्ञा करे ।

भागुरायण—कुमार, यह बड़ी कठिन बात नही है। चन्द्रगुप्त से चाणक्य जितना ही दूर चला जाय उतना ही राक्षस का काम बन जायगा।

शकटदास—अमात्य, इसमे ज्यादा सोच-विचार न करे। इसमे कोई सन्देह नही। आप ऐसा क्यो नही सोचते कि—

Malayaketu—Friend Bhagurayan, what purpose of Rakshas is served by Chanakya's going to a forest or taking fresh vow ?

Bhagurayan—It is not very difficult to understand The more Chanakya is away from Chandragupta the more his purpose is served

Shakatdas—Minister, enough of much thinking. This is consistent Why ? Let minister consider

राज्ञां चूडामणीन्दुद्युतिखचितशिखे मूर्ध्नि विन्यस्तपादः
स्वैरेवोत्पाद्यमानं किमिति विषहते मौर्य आज्ञाविघातम् ? ।
कौटिल्यः कोपनोऽपि स्वयमभिचरणज्ञातदुःखः प्रतिज्ञां
दैवात् पूर्णप्रतिज्ञः पुनरपि न करोत्यायतिज्यानिभीतः ।।१२।।

अन्वय—राज्ञा चूडामणीन्दुद्युतिखचितशिखे राज्ञा मूर्ध्नि विन्यस्तपाद मौर्य स्वैरेव उत्पाद्यमानम् आज्ञाविघात किमिति विषहते ? स्वयमभिचरणज्ञातदु ख दैवात् पूर्णप्रतिज्ञ कौटिल्य कोपनोऽपि आयतिज्यानिभीत (सन्) पुनरपि प्रतिज्ञा न करोति ।।१२।।

हिन्दी अनुवाद—**अब चन्द्रगुप्त के चरण राजा-महाराजाओ के चूडामणियो की चन्द्रतुल्य कान्तियो से युक्त केशो वाले मस्तको पर पडने लग गए हैं। भला वह अब अपने ही लोगो के द्वारा किए गए आज्ञा के उल्लघन को कैसे सहन कर सकता है ? और चाहे कितना ही क्रोधी क्यो न हो यह जानकर कि शत्रुहत्या करने के लिए अभिचार कर्म कितना कठिन होता है और यह भी जानकर कि एक बार की प्रतिज्ञा तो किसी प्रकार भाग्य से पूरी हुई अब यह समझ कर कि कही यह प्रतिज्ञा विफल न हो जाय क्यो कर दूसरी प्रतिज्ञा करेगा ?**

Now the foot of Maurya is planted on the head of kings, the tuft of hair of which is glowing with the lustre of Moon-like gems on their crests, so how can he tolerate the non-carrying out of his orders by those very men who are his own Kautilya, though full of anger by nature, somehow or other has got his personal incantation realised and his vow has been fulfilled, is afraid of taking a fresh vow for he apprehends a future failure.

संस्कृतव्याख्या—राज्ञाम् भूपतीनाम् चूडामणीन्दुद्युतिखचितशिखे चूडाया मौलिमुकुटादिषु प्रत्युप्ता ये मणय ते एव इन्दव चन्द्रकला तद्द्युतिभि कान्तिभि. खचिता चर्चिता शिखा यस्य तथाभूते मूर्ध्नि शिरसि विन्यस्तपाद विन्यस्तौ स्थापितौ पादौ चरणौ येन तादृश मौर्य चन्द्रगुप्त स्वैरेव आत्मीयैरेव जनैरिति शेष उत्पाद्यमानम् क्रियमाणम् आज्ञाविधातम् अनुशासनभङ्गम् किमिति विषहते कथ सोढु शक्नुयात्। स्वयमभिचरणज्ञातदु ख स्वयमेवाभिचरणे कृत्यादि-विधानकर्मणि ज्ञातम् अनुभूत तत्र दु ख तेन स दैवात् भाग्यवशात् येन केन प्रकारेण पूर्णप्रतिज्ञ सफलप्रतिज्ञ कौटिल्य कोपनोऽपि प्रकृत्या क्रोधी सन्नपि आयतिज्या-

निभीत आयतौ उत्तरे काले या ज्यानि हानि निष्फलतेत्यर्थ तस्या भीतः शङ्कित पुनरपि भूयोऽपि प्रतिज्ञा न करोति चन्द्रगुप्त नाशयितु न प्रतिज्ञामारोहेदिति। तत् चाणक्यस्य सत्यपि कोपकारणे औदासीन्येनावस्थानम् उपपद्यते एव।

टिप्पणी

(१) **राज्ञा चूडामणीन्दुद्युतिखचितशिखे**—चन्द्रमा के समान चूडामणि की कान्तियो से खचित राजाओ के (मस्तक पर)। (२) **विन्यस्तपादः**—पैर रखने वाला। (३) **उत्पाद्यमानम्**—किया जाता हुआ। उत्+पद्+णिच्+शानच्। (४) **अभिचरणज्ञातदुःखः**—अभिचरण के दु ख को जो भोग चुका है। अभिचार तन्त्रोक्त मोहन, मारण, उच्चाटन आदि अनुष्ठान। "हिंसाकर्माभिचार स्यात्" इत्यमर। चाणक्य इस बात को अनुभव कर चुका है कि अभिचार मे कितना दु ख व परिश्रम होता है। पर्वतक के ऊपर विषकन्या का प्रयोग करके चाणक्य इस कष्ट का अनुभव कर चुका है। अपने नीतिसार के प्रारम्भ मे कामन्दक चाणक्य के लिए कहता है—'यस्याभिचारवज्रेण' इत्यादि। (५) **आयतिज्यानिभीतः**—भविष्य मे होने वाली असफलता की आशङ्का से। (अब चाणक्य दूसरी प्रतिज्ञा करने नही जा रहा है।) इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

राक्षसः—शकटदास! एवमेतत्। तद् गच्छ, विश्रामय करभकम्।

शकटदासः—यदाज्ञापयत्यमात्य इति। (करभकेण सह निष्क्रान्तः।)

राक्षसः—अहमपि कुमारं द्रष्टुमिच्छामि।

मलयकेतुः—अहमेवार्यं द्रष्टुमागतः।

राक्षसः—(नाट्येनावलोक्य) अये! कुमार एवागतः। (आसनादुत्थाय) इदमासनमुपवेष्टुमर्हति कुमारः।

मलयकेतुः—अहमुपविशामि। उपविशत्वार्यः। (इत्युभौ यथासनमुपविष्टौ) आर्य! अपि सह्या शिरोवेदना?

राक्षसः—कुमारस्याधिराजशब्देनातिरस्कृते कुमारशब्द कुतः शिरोवेदनायाः सह्यता?

मलयकेतुः——स्वयमुरीकृतमेतदार्येण, न दुष्प्रापं भविष्यति। तत् कियन्तं कालमस्माभिरेवं सम्भृतबलैरपि शत्रुव्यसनमवेक्षमाणैरुदासितव्यम्।

राक्षसः——कुमार! कुतोऽद्यापि कालहरणस्यावकाशः? प्रतिष्ठस्व रिपुजयाय।

मलयकेतुः——अमात्य! अपि किञ्चिच्छत्रुव्यसनमुपलब्धम्।

राक्षसः——बाढमुपलब्धम्।

मलयकेतुः——कीदृशम्?

राक्षसः——सचिवव्यसनं, किमन्यत्? अपकृष्टश्चाणक्याच्चन्द्रगुप्तः।

मलयकेतुः——अमात्य! सचिवव्यसनमेव?

राक्षसः——कुमार! अन्येषां भूपतीनां कदाचिदमात्यव्यसनमव्यसनमपि स्यात्, न पुनश्चन्द्रगुप्तस्य।

हिन्दी अनुवाद——राक्षस——शकटदास, ऐसा ही सही। जाओ, करभक को विश्राम कराओ।

शकटदास——अमात्य की जैसी आज्ञा। (करभक के साथ चला जाता है।)

राक्षस——मै भी कुमार से मिलना चाहता हूँ।

मलयकेतु——मै ही आर्य से मिलने आया हूँ।

राक्षस——(देखने का अभिनय करके) अरे, यह तो कुमार स्वयं ही आ गये है। (आसन से उठकर) कुमार इस आसन पर बैठे।

मलयकेतु——मै बैठता हूँ। आर्य बैठे। (दोनो आसन पर बैठ जाते है)। आर्य, क्या सिर का दर्द कुछ कम है?

राक्षस——कुमार, इस सिर का दर्द तब तक नहीं छूट सकता जब तक कुमार का नाम 'राजाधिराज" पद से सुशोभित न हो जाय।

मलयकेतु——जब आप स्वयं ऐसा कह रहे है तब तो मै इसे हुआ ही समझता हूँ। अब हम लोग सेना इकट्ठी करके भी कितने समय तक शत्रुव्यसन की प्रतीक्षा में बैठे रहेगे।

राक्षस——कुमार, अब देरी करने की क्या आवश्यकता है? शत्रुविजय के लिए प्रस्थान कर दिया जाय।

मलयकेतु——तो क्या कोई सूचना मिली है कि शत्रु संकट में है?

राक्षस—हाँ, मिली है।

मलयकेतु—कैसी ?

राक्षस—सचिव-व्यसन समझिए और क्या। चाणक्य से चन्द्रगुप्त अलग हो गया है।

मलयकेतु—तो क्या केवल सचिव-व्यसन ही है ?

राक्षस—कुमार, अन्य राजाओ के लिए सचिव-व्यसन चाहे कोई व्यसन न हो परन्तु चन्द्रगुप्त के लिए ऐसी बात नही है (अर्थात् उसके लिए मन्त्रि-संकट बहुत बड़ा संकट है।

Rakshasa—So it is Shakatdas Go and let Karbhaka rest.

Shakatdas—Be it so (*Goes out with Karbhaka*)

Rakshasa—I too wish to see the prince

Malayaketu—I myself have come to the Noble Sir

Rakshasa (*Acts looking*)—Ha, the prince himself has come (*Rising from the seat*) This is the seat Let Prince sit down

Malayaketu—Here I sit down Let Noble Sir sit down (*All are seated on Proper seats*) Noble Sir, is the headache bearable ?

Rakshasa—Prince, how can it be bearable unless the title "Prince" is overshadowed by that of "Emperor"

Malayaketu—Undertaken by Noble Sir, it will not be difficult to attain How long shall we wait, inspite of a well equipped army, looking for the enemy's disaster

Rakshasa—There is no need of waiting Start to conquer the enemy

Malayaketu—Has any news of the enemy's disaster been received ?

Rakshasa—Yes, it has been received

Malayaketu—What is that ?

Rakshasa—What else, except loss of minister Chandragupta is separated from Chanakya

Malayaketu—Only the loss of minister ?

Rakshasa—Prince, the loss of minister may be no disaster to other kings but to Chandragupta it is

टिप्पणी

(१) **अहमपि कुमारं द्रष्टुमिच्छामि**—यह वाक्य शकटदास के निकल जाने पर भी राक्षस बोलता रहा। (२) **सह्या**—सहन करने योग्य। सह्+यत्+टाप्। (३) **अधिराजशब्देनातिरस्कृते कुमारशब्दे**—जब तक 'कुमार' शब्द के आगे 'महाराजाधिराज' शब्द नही लग जाता। राक्षस के कहने का भाव

यह है कि जब तक आप 'महाराज' नही हो जाते तब तक सिर की पीडा कैसे शान्त हो सकती है। (४) **सम्भृतबलैरपि**—सेना इकट्ठी करने पर भी। (५) **शत्रु-व्यसनम्**—शत्रु के सकट को।

मलयकेतुः—आर्य ! ननु विशेषतश्चन्द्रगुप्तस्येति।

राक्षसः—किं कारणं यदस्यामात्यव्यसनमव्यसनम् ?

मलयकेतुः—चन्द्रगुप्तप्रकृतीनां हि चाणक्यदोषा एव विरागहेतवः। तस्मिन्निराकृते प्रथममपि चन्द्रगुप्तानुरक्ताः प्रकृतयः इदानीं पुनः सुतरामेव तत्रानुरागं दर्शयिष्यन्ति।

राक्षसः—कुमार ! नैतदेवं, इह द्विप्रकाराः प्रकृतयः—चन्द्रगुप्तसहोत्थायिन्यो नन्दकुलानुरक्ताश्च। तत्र चन्द्रगुप्त-सहोत्थायिनीनां प्रकृतीनां चाणक्यदोषा एव विरागहेतवः, न नन्दकुलानुरक्तानाम्। तास्तु खलु नन्दकुलमनेन पितृकुल-भूतं कृत्स्नं कृतघ्नेन घातितमित्यपरागामर्षाभ्यां विप्रकृताः सत्यः स्वाश्रयमलभमानाश्चन्द्रगुप्तमेवानुवर्तन्ते। त्वादृशं पुनः प्रतिपक्षोद्धरणे सम्भावितशक्तिमभियोक्तारमासाद्य क्षिप्रमेनं परित्यज्य त्वामेवाश्रयिष्यन्ते इति। अत्र कुमारस्य वयमेव निदर्शनम्।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—आर्य, विशेष करके चन्द्रगुप्त के लिए (ही ऐसी बात है)।

राक्षस—क्या कारण है कि इसके लिए अमात्य-व्यसन कोई व्यसन (संकट) नही है ?

मलयकेतु—चन्द्रगुप्त की प्रजा तो चाणक्य के दोष से उससे विरक्त रहती है। उस (चाणक्य) के अलग हो जाने पर लोग जो उससे अनुरक्त है वे (उस) (चन्द्रगुप्त) से और अधिक प्रेम करेंगे।

राक्षस—कुमार ऐसा नही है। क्योकि वहाँ दो प्रकार की प्रजा है। एक तो चन्द्रगुप्त के साथी दूसरी नन्दकुल से प्रेम करने वाली। उनमे जो चन्द्रगुप्त के साथी है वे ही चाणक्य के कारण विरक्त होगे न कि नन्दकुल से अनुरक्त लोग। नन्दकुलानुरक्त प्रजा यह सोच कर कि चन्द्रगुप्त के पितृवंश रूप नन्द-वश का समुन्मूलन करने वाला चाणक्य ही है उसके प्रति क्रोध और द्वेष से विक्षुब्ध होकर अपना कोई सहारा न पाकर चन्द्रगुप्त को ही अपना सब कुछ

मान बैठे हैं। परन्तु आपके समान आक्रमणकारी को पाकर वे निश्चय ही चन्द्रगुप्त को छोड़कर आप से आ मिलेंगे। इस विषय मे कुमार के लिए तो हम ही प्रमाण हैं।

Malayaketu—Noble Sir, not so to Chandragupta specially.

Rakshasa—What is the reason that loss of minister is no loss to him ?

Malayaketu—The faults of Chanakya are the cause of dissatisfaction of the people of Chandragupta The people who were already attached to him will show greater affection to him now, when Chanakya is dismissed

Rakshasa—Prince, not so There are two kinds of people, those who made common cause with Chandragupta and those who are attached to Nanda The faults of Chanakya are the cause of dissatisfaction of those only who are devoted to Chandragupta and not of those who are devoted to the family of Nanda They again being goaded by anger and discontent for the reason that Nanda's family, which was like his parental family, was assassinated by this ungrateful man, follow Chandragupta, because they do not find any other person worthy of giving them shelter But finding an invader like you, whose power to destroy the foe may be estimated, those people will leave this man at once and come to you for shelter In this matter I myself am an instance to the Prince

टिप्पणी

(१) **सुतराम्**—अधिक। (२) **चन्द्रगुप्तसहोत्थायिनीनां प्रकृतीनाम्**—चन्द्रगुप्त का साथ देने वाली प्रजाओ का। (३) **नन्दकुलानुरक्तानाम्**—नन्दकुल से प्रेम करने वाले। (४) **पितृकुलभूतम्**—पिता के कुल के समान। पितृवशतुल्यम्। कृत्स्नम्—सम्पूर्ण। (५) **अपरागामर्षाभ्याम्**—विराग और क्रोध से। विरागक्रोधाभ्याम्। (६) **विप्रकृताः**—तिरस्कृत, आहत। वि+प्र+कृ+क्त कर्मणि। (७) **त्वादृशम्**—आप के समान। भवत्सदृशम्। (८) **प्रतिपक्षोद्धरणे**—शत्रु के नाश करने मे, शत्रुनाशकरणे। (९) **सम्भावितशक्तिम्**—जिसकी शक्ति का अनुमान किया गया है। निश्चितसामर्थ्यम्। सभाविता शक्ति यस्य तम्। (१०) **अभियोक्तारम्**—आक्रमण करने वाला। शत्रुविजयिनम्। (११) **निदर्शनम्**—उदाहरण। नि+दृश्+णिच्+ल्युट् करणे।

मलयकेतुः—अमात्य ! किमेतदेवैकं सचिवव्यसनमभियोगकारणं चन्द्रगुप्तस्य ? आहोस्विदन्यदप्यस्ति ?

राक्षसः—कुमार ! किमन्यैः बहुभिरपि ? एतद्धि तत्र प्रधानतमम् ।

मलयकेतुः—अमात्य ! कथं प्रधानतमं नाम ? किमिदानीं चन्द्रगुप्तः स्वराज्यकार्यधुरामन्यत्र मन्त्रिणि आत्मनि वा समासज्य स्वयं प्रतिविधातुमसमर्थः स्यात् ?

राक्षसः—वाढम्, असमर्थ एव ।

मलयकेतुः—किं कारणम् ?

राक्षसः—स्वायत्तसिद्धिषु उभयायत्तसिद्धिषु वा भूमिपालेषु कदाचिदेतत् सम्भवति, न तु चन्द्रगुप्ते । चन्द्रगुप्तस्तु दुरात्मा नित्यं सचिवायत्तसिद्धावेवावस्थितस्चक्षुर्विकल इवाप्रत्यक्षसर्वलोकव्यवहारः कथमिव स्वयं प्रतिविधातुं समर्थः स्यात् ? कुतः—

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—अमात्य, क्या चन्द्रगुप्त के ऊपर आक्रमण करने का यही एक कारण है कि उसे मन्त्रिसकट है या कोई और भी ?

राक्षस—कुमार, अन्य कारणो के होने न होने से क्या ? यही प्रधान कारण है ।

मलयकेतु—अमात्य, यह कैसे प्रधान कारण है ? क्या इस समय चन्द्रगुप्त अन्य मन्त्रियो के ऊपर कार्य-भार डाल कर या स्वय कार्य-भार अपने ऊपर लेकर हमसे लडने मे असमर्थ है ?

राक्षस—हाँ, असमर्थ ही है ।

मलयकेतु—क्या कारण है ?

राक्षस—यह बात तो उस राजा के लिए सभव है जो स्वायत्त सिद्धि वाला हो या उभयायत्त सिद्धि वाला, परन्तु चन्द्रगुप्त के लिए यह सम्भव नही । वह दुष्ट चन्द्रगुप्त तो सचिवायत्त सिद्धि वाले अधे के समान विकल तथा समस्त लोक-व्यवहार से अनभिज्ञ है । भला, वह कैसे स्वय सब प्रकार का प्रतीकार कर सकता है ? क्योकि—

Malayaketu—Minister, is this loss of minister the only reason for waging a war against Chandragupta or is there any other reason also ?

Rakshasa—What have we to do with other reasons ? This indeed is the most important

Malayaketu—Noble Sir, how is this the most prominent one Is Chandragupta personally unable to fight all the evils

after having entrusted the affairs to another minister or to himself ?

Rakshasa—Yes unable

Malayaketu—What is the reason ?

Rakshasa—This can be possible for one whose success is in his own hands or in the hands of both the minister and the king but not for Chandragupta He is wicked and always depends for his success on his minister alone and is like a person destitute of eyes and does not know the ways of the world, how can he be able to counteract this himself For—

अत्युच्छ्रिते मन्त्रिणि पार्थिवे च विष्टभ्य पादावुपतिष्ठते श्रीः ।
सा स्त्रीस्वभावादसहा भरस्य तयोर्द्वयोरेकतरं जहाति ।।१३।।

अन्वय—श्री अत्युच्छ्रिते मन्त्रिणि पार्थिवे च पादौ विष्टभ्य उपतिष्ठते । स्त्रीस्वभावात् भरस्य असहा सा तयो द्वयो एकतर जहाति ।।१३।।

हिन्दी अनुवाद—अति उन्नत मंत्री और राजा दोनो के ऊपर पैर जमाकर लक्ष्मी रहती है (अर्थात् जब राजा और मत्री मे मेल रहता है तभी लक्ष्मी टिकती है) स्त्री स्वभाव के कारण भार को न सह सकती हुई वह दोनो मे से एक को छोड देती है। (अर्थात् जब मंत्री और राजा मे मतभेद हो जाता है तो वह लक्ष्मी टिक नही पाती। चली जाती है)

Shri stays after having placed her foot in the minister and the king who grow very high But due to the feminine nature, unable to balance herself, she leaves one of them

संस्कृतव्याख्या—पार्थिवे नृपे मन्त्रिणि सचिवे अत्युच्छ्रिते अतिउन्नते श्री· राजलक्ष्मी पादौ चरणौ (प्रभुशक्तिमन्त्रशक्तिरूपौ) विष्टभ्य व्यवस्थाप्य उपतिष्ठते तयो समीपवर्तिनी भवतीत्यर्थ । स्त्रीस्वभावात् नारीप्रकृत्या स्त्रीजनोचित-दुर्बलतया भरस्य स्वदेहभरस्य असहा अक्षमा सा तयो अन्यतर जहाति परित्यजति । ऐकमत्य विहाय वैमत्येन वर्तमानयोश्चन्द्रगुप्तचाणक्ययोरवश्यमेवास्माक कार्य-सिद्धिरित्यभिप्राय ।

टिप्पणी

(१) **स्वायत्तसिद्धिष्वित्यादि**—राक्षस के कहने का तात्पर्य यह है कि तीन प्रकार के राजा होते हैं—(१) अपने ही हाथो मे सब अधिकार रखने वाले, (२) मत्री की सहायता से अपने हाथो मे अधिकार रखने वाले तथा (३) मत्री

के हाथो मे सम्पूर्ण अधिकार दे देने वाले। **अप्रत्यक्षसर्वलोकव्यवहार:**—लौकिक व्यवहार को न जानने वाला। अप्रत्यक्ष अगोचर सर्वलोकव्यवहारो यस्य स। (२) **स्वकार्यधुरम्**—अपने काम के भार को। (३) **अत्युच्छ्रिते**—अत्यन्त उच्च। (४) **विष्टभ्य**—रखकर, स्थापयित्वा। वि+स्तम्भ+ल्यप्। यहाँ समासोक्ति अलकार और उपजाति छन्द है। राक्षस के कहने का मतलब है कि जब राजा और मत्री मे मतैक्य होता है तो राज्यलक्ष्मी टिकती है। और दोनो मे मतैक्य न होने पर वह चली जाती है। इस समय चाणक्य और चन्द्रगुप्त मे झगडा है अत हम लोगो की अवश्य विजय होगी। परन्तु राक्षस को यह क्या मालूम कि यह झगडा बनावटी है। इस श्लोक मे समासोक्ति अलकार तथा उपजाति छन्द है।

अपि च—

नृपोऽपकृष्टः सचिवात्तदर्पणः स्तनन्धयोऽत्यन्तशिशुः स्तनादिव।
अदृष्टलोकव्यवहारमन्दधीर्मुहूर्तमप्युत्सहते न वर्तितुम् ॥१४॥

अन्वय—सचिवात् अपकृष्ट तदर्पण अदृष्टलोकव्यवहारमन्दधी नृप स्तनात् (अपकृष्ट) स्तनधय अत्यन्तशिशु इव मुहूर्त्तमपि वर्तितु न उत्सहते ॥१४॥

हिन्दी अनुवाद—और भी—मंत्री से पृथक् हुआ, उसी के आश्रित रहने वाला और लोक-व्यवहार को न देखने के कारण मंद बुद्धि वाला राजा (माँ के) स्तन से अलग किये हुए दुधमुँहे बच्चे के समान एक क्षण भी नहीं ठहर सकता।

This dull king (*Chandragupta*) having entrusted all the affairs to the minister and being separated from the (same) minister, and not knowing the ways of the world, cannot survive even for a moment like a young suckling weaned from the breast

संस्कृतव्याख्या—सचिवात् मन्त्रिण अपकृष्ट पृथग्भूत तदर्पण तस्मिन् अमात्ये एव अर्पण राज्यभारसमर्पण यस्य स तथाभूत अदृष्टलोकव्यवहारमन्दधी न दृष्टो लोकव्यवहार येन स अत एव मन्दा किञ्चित् प्रतिविधातुमसमर्था धी बुद्धि यस्य स नृप राजा स्तनात् मातु स्तनात् (अपकृष्ट) अत्यन्तशिशु अतिबाल स्तनधय इव स्तनपायी इव मुहूर्तमपि क्षणमात्रमपि वर्त्तितु न उत्सहते स्थातु न क्षमते।

टिप्पणी

(१) **अपकृष्टः**—अलग किया हुआ। अप+कृष्+क्त। (२) **तदर्पणः**—उसको (मत्री को) भार सौपने वाला। तस्मिन् अर्पण यस्य स तदर्पण। (३) **अदृष्टलोकव्यवहारमन्दधीः**—ससार के व्यवहार को न जानने वाला तथा मन्दमति। (४) माता का स्तन पीने वाला **दुधमुँहा;** स्तन धयति पिबति इति स्तन+धे+खश् मुमागम। इसमे उपमा अलकार और वशस्थविलनामक छन्द है। छन्द का लक्षण—'जतौ तु वशस्थमुदीरित जरौ'।

मलयकेतुः—(आत्मगतम्) दिष्ट्या न सचिवायत्ततन्त्रोऽस्मि। (प्रकाशम्) अमात्य! यद्यप्येवं तथापि खलु बहुष्वभियोगकारणेषु सत्सु सचिवव्यसनमभियुञ्जानस्य शत्रुमभियोक्तुः नैकान्तिकी सिद्धिर्भवति।

राक्षसः—ऐकान्तिकीमेव सिद्धिमवगन्तुमर्हति कुमारः। कुतः—

त्वय्युत्कृष्टबलेऽभियोक्तरि नृपे नन्दानुरक्ते पुरे
चाणक्ये चलिताधिकारविमुखे मौर्ये नवे राजनि।
स्वाधीने मयि'—(इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयन्)
'—मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे।
त्वद्वाञ्छान्तरितानि सम्प्रति विभो! तिष्ठन्ति साध्यानि नः ॥१५॥

अन्वय—विभो! सम्प्रति उत्कृष्टबले नृपे त्वयि अभियोक्तरि पुरे नन्दानुरक्ते चाणक्ये चलिताधिकारविमुखे राजनि मौर्ये नवे मयि स्वाधीने मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे न साध्यानि त्वद्वाञ्छान्तरितानि तिष्ठन्ति ॥१५॥

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—(मन में) भाग्यवश मैं सचिवायत्त (मंत्री के वश में सिद्धि वाला) नही हूँ। (प्रकट) अमात्य, यद्यपि यह बात है तो भी अनेक कारणो के रहते हुए केवल मंत्री के संकट का पता लगाकर आक्रमण करने वाले को निश्चित सिद्धि नही मिलती।

राक्षस—निश्चित सिद्धि समझें। क्योंकि इस समय उत्कृष्ट शक्तिसम्पन्न आप के समान आक्रमणकारी होने पर, नन्द में प्रजा के अनुरक्त होने पर, चाणक्य के अधिकारच्युत होने पर, चन्द्रगुप्त के नये राजा होने पर और मेरे स्वाधीन

रहने पर (ऐसी आधी बात कह कर लज्जा का अभिनय करता है) तथा मार्ग-दर्शन और कर्त्तव्याकर्त्तव्य के निर्देश में सतत उद्युक्त हमारे रहते हुए हमारी उद्देश्य-सिद्धि आप की इच्छा से व्यवहित है (अर्थात् आप की आज्ञा की देरी है)।

Malayaketu (To himself)—Fortunately I am not one whose affairs are entrusted to the minister (*Aloud*) Minister, though it is so yet lasting success does not come when an attack is made only when the enemy is without minister, if several other reasons are present for the invasion

Rakshasa—It behoves the prince to consider the success as lasting indeed For—

The invader being yourself, a king with a good army, the people being attached to Nanda, Chanakya being adverse because of being dismissed, Maurya being a new king, I being independent (*Acts modesty after uttering half*) with efforts consisting merely in the application of energy in leading, our objects now stand hidden by your wish

संस्कृतव्याख्या—हे विभो सम्प्रति इदानीम् उत्कृष्टनृपबले सन्नद्धसर्वप्रकार-सैन्येऽभियोक्तरि प्रतिपक्षे सति पुरे नन्दानुरक्ते पाटलिपुत्रे च नन्दभक्ते निष्ठति सति चाणक्ये चलिताधिकारविमुखे चलिताधिकार च्युतपद च असौ अतएव विमुखो निरपेक्षश्चेति तथाविधे सजायमाने राजनि भूपतौ मौर्य्ये नवे अज्ञातराज्यतत्रसचालने मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे मार्गमात्रस्य युद्धपथस्य एव कथने उपदेशे यो व्यापारयोग प्रयत्नघटना स एव उद्यम व्यवसायो यस्य तादृशे मयि स्वाधीने राक्षसे स्वतत्रे सति न अस्माकम् साध्यानि कार्याणि त्वद्वाञ्छान्तरितानि तव या वाञ्छा इच्छा तया अन्तरितानि व्यवहितानि तिष्ठन्ति वर्तन्ते। सैन्यानि त्वदाज्ञा प्रतीक्षन्ते, यदैवाज्ञापयसि तदैव सिद्ध सर्वमित्यभि-प्राय ।

टिप्पणी

(१) **दिष्टया**—भाग्य से। (२) **सचिवायत्ततंत्र**—मत्री के बल पर जो राज्यकार्य चलाता है। सचिवे आयत्तम्—सुप्सुपा स०। (३) **अभियोग-कारणेषु सत्सु**—आक्रमण के कारण रहते हुए। (४) **सचिवव्यसन शत्रुम्**—वह शत्रु जिसे मत्रि-सकट आ पडा हो। (५) **ऐकान्तिकी सिद्धिः**—निश्चयात्मक सफलता। (६) **चलिताधिकारविमुखे**—अधिकार के छिन जाने से विमुख (होने पर)। (७) **लज्जा नाटयन्**—लज्जा का अभिनय करते हुए। अपने

स्वामी नन्द के भक्त राक्षस को अपनी स्वतन्त्रता पर प्रसन्न होना शोभा नही देता। अत मुँह से उक्त वाक्य के निकल जाने पर वह लज्जित होता है। **मार्गमात्रकथनव्यापारयोगोद्यमे**—मार्गदर्शन और कर्त्तव्याकर्त्तव्य के निर्देश मे लगा हुआ। राक्षस का कहना है कि मै मार्ग-प्रदर्शन मे लगा हुआ हूँ (ऐसी हालत मे) (८) **साध्यानि**—काम। (९) **त्वद्वाञ्छान्तरितानि**—तुम्हारे इच्छा के अन्दर छिपे है। अर्थात् तुम्हारे कहने मात्र की देरी है। इसमे समुच्चयालकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

मलयकेतुः—अमात्य ! यद्येवमभियोगकालममात्यः पश्यति, तत्किमास्यते ? पश्य—

उत्तुङ्गास्तुङ्गकूलं स्रुतमदसलिलाः प्रस्यन्दिसलिलं
श्यामाः श्यामोपकण्ठद्रुमममलिमुखराः कल्लोलमुखरम् ।
स्रोतः खातावसीदत्तटमुरुदशनैरुत्सादिततटाः
शोणं सिन्दूरशोणा मम गजपतय पास्यन्ति शतशः ।।१६।

अन्वय—मम उत्तुङ्गा स्रुतमदसलिला अलिमुखरा उरुदशनैरुत्सादिततटा श्यामा सिन्दूरशोणा शतश गजपतय तुङ्गकूल प्रस्यन्दिसलिल कल्लोलमुखर स्रोत खातावसीदत्तट श्यामोपकण्ठद्रुम शोण पास्यन्ति ।।१६।।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—अमात्य, यदि आप ऐसा आक्रमण का समय देख रहे है तो क्यो बैठा जाय। देखिए—

मेरे सैकडो हाथी है जो अति ऊँचे है, जिनसे मदजल टपक रहा है। जिनके ऊपर भँवरे मँडरा रहे है, जो अपने विशाल दाँतो से तटों को उखाडने वाले है और काले परन्तु सिन्दूर से लाल वर्ण हो रहे है। ये मेरे हाथी शोण नद को जिसके ऊँचे कगार है, जिसका जल धारा-प्रवाह से बह रहा है, जो लहरो से शब्दायमान है और जिसके किनारे प्रवाह से टूटकर गिर रहे है और जिसके किनारे पर काले वृक्ष उगे है, पी डालेगे।

Malayaketu—If Noble Sir thinks this to be the proper time for attack why should we sit here See—

I have huge elephants, whose fluid of ichor is coming out, round whom black bees are humming, and which are demolishing the bank with their huge tusks, black but crimson with vermilion, and whose number is in hundreds those (elephants) will drink up the Sona (river) with high banks, with a rushing current, and which has green trees in the vicinity, and the

billows of which are roaring and whose banks are falling down due to being undermined by the current

सस्कृतव्याख्या—मम मलयकेतो उत्तुङ्गा विशाला स्रुतमदसलिला स्रुत क्षरित मदसलिल दानवारि येषा ते तादृशा मदश्राविण इत्यर्थं अलिमुखरा अलिभि भ्रमरै मुखरा शब्दायमाना उरुदशनै विशालदतै उत्सादिततटा उत्सादित विनाशित तट रोध यै ते विदारिततीरा श्यामा कृष्णवर्णा सिन्दूर-शोणा सिन्दूरै शोणा रक्तवर्णा शतश गजपतय गजेन्द्रा तुङ्गकूल उन्नततट प्रस्यन्दिसलिलम् प्रक्षरज्जलम् कल्लोलमुखरम् तरङ्गध्वनिवाचालम् स्रोत खाता-वसीदत्तटम् स्रोतसा प्रवाहेण खातम् विशीर्णम् अतएव अवसीदत् पतत् तट तीर यस्य तथाविधम् श्यामोपकण्ठद्रुमम् श्यामायमानतटवृक्षमाल शोण शोणनामानम् महानदम् पास्यन्ति पाय पाय शोषयिष्यन्ति।

टिप्पणी

(१) **स्रुतमदसलिला**—मदरूपी जल को चुआने वाले। (२) **उरुदशनैः**—बडे-बडे दाँतो से। (३) **सिन्दूरशोणा**—सिन्दूर (लगाने) से लाल वर्ण। (४) **तुङ्गकूलम्**—ऊँचे किनारे वाले (शोण को)। (५) **स्रोतः खातावसीदत्तटम्**—प्रवाह से कटकर गिरने वाले किनारे है जिसके स्रोतसा खातम् अवसीदत् पतत् तटम् यस्य तम्। (६) **श्यामोपकण्ठद्रुमम्**—किनारे पर स्थित हरित (नील) वर्ण के वृक्षो वाले। उपगत कण्ठम् उपकण्ठ। तत्र द्रुमा (सुप्सुपा स०)। श्यामा उपकण्ठद्रुमा (कर्मधारय स०)। यहाँ पर श्लेषानुप्राणित उपमा अलकार तथा सुवदना छन्द है। छन्द का लक्षण—'अश्वैरश्वैश्च षड्भिर्मरभनयमला ग स्यात् सुवदना'।

अपि च—

गम्भीरगर्जितरवाः स्वमदाम्बुमिश्र-
मासारवर्षमिव शीकरमुद्गिरन्त्यः।
विन्ध्यं विकीर्णसलिला इव मेघमाला
रोत्स्यन्ति वारणघटा नगरं मदीयाः॥१७॥

(इति भागुरायणेन सह निष्क्रान्तः मलयकेतुः)

अन्वय—गम्भीरगर्जितरवा स्वमदाम्बुमिश्र शीकरम् आसारवर्षमिव

उद्गिरन्त्य मदीया वारणघटा विकीर्णसलिला मेघमाला विंध्यमिव नगर रोत्स्यन्ति ।।१७।।

हिन्दी अनुवाद—गंभीर गर्जन करने वाली, मद-जल से मिश्रित जलकण-राशि की वर्षा करने वाली, मेरे हाथियो की सेना नगर (पाटलिपुत्र) को उसी प्रकार घेर लेगी जैसे कि मूसलाधार पानी बरसाती जलाप्लावन करती घनघटायें विन्ध्याचल को घेर लेती हैं।

(भागुरायण के साथ मलयकेतु बाहर चला जाता है)

My cloud-like elephants, with deep roar and emitting, like a torrential downpour, sprays mixed with their ichoral fluid, will besiege the city, as a row of clouds that is raining water and whose cry is its deep roar, invests the Vindhya mountain

(Malayaketu goes out with Bhagurayan)

सस्कृतव्याख्या—मदीया मामकीना गम्भीरगर्जितरवा गम्भीरा गर्जित-रवा गर्जध्वनयो येषा तथाविधा स्वमदाम्बुमिश्रम् शीकरम् निजमदजलमिश्रित जलकणौघमासारवर्षमिव धारासम्पातमिव उद्गिरन्त्य उद्वमन्त्य वारणघटा गजपङ्क्तय विकीर्णसलिला विक्षिप्तजला मेघमाला घनघटा विन्ध्यम् इव तदाख्यगिरिम् रोत्स्यन्ति आवरिष्यन्ति समन्तात्। परिवृत्त्यापरोधवैशसेन पीड-यिष्यन्तीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **वारणघटाः**—हाथियो की पङक्तियाँ। (२) **उद्गिरन्त्यः**—वमन करती हुई। उद–गॄ–शतृ। हाथियो का यह स्वभाव होता है कि वे अपनी सूँड से जल के कणो को श्वासवायु के साथ बाहर निकालते रहते है। उनकी यह क्रिया उस समय बढ जाती है जब वे जल पिये होते है। श्लोक १६ मे शोण के जल को हाथियो के द्वारा पीने की चर्चा आ चुकी है। (३) **आसारवर्षम् इव**—मूसलाधार जल वृष्टि के समान। यहाँ पर पूर्णोपमा अलकार है और वसन्त-तिलका छन्द है।

राक्षसः—कः कोऽत्र भोः ?

पुरुषः—(प्रविश्य) आणवेदु अमच्चो। (आज्ञापयत्व-मात्यः ।)

राक्षसः—प्रियंवदक ! ज्ञायतां सांवत्सरिकाणां द्वारि कस्तिष्ठति ।

प्रियंवदकः—जं अमच्चो आणबेदि। (इति निष्क्रम्य क्षपणकं दृष्ट्वा पुनः प्रविश्य च) अमच्च! एसो क्खु संवत्सरिओ क्खबणओ। (यदमात्य आज्ञापयति। अमात्य! एष खलु सांवत्सरिकः क्षपणकः।)

राक्षसः—(स्वगतमनिमित्तं सूचयित्वा) कथं प्रथममेव क्षपणकदर्शनम्?

प्रियंवदकः—जीवसिद्धो। (जीवसिद्धिः।)

राक्षसः—(प्रकाशम्) अबीभत्सदर्शनं कृत्वा प्रवेशय।

प्रियंवदकः—जं अमच्चो आणबेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्तः।)

(ततः प्रविशति क्षपणकः।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—यहाँ कोई है जो?

पुरुष—(प्रवेश करके) अमात्य आज्ञा दें।

राक्षस—प्रियवदक, मालूम करो कि दरवाजे पर ज्योतिषियो में कौन है?

प्रियवदक—जो अमात्य की आज्ञा (बाहर जाकर क्षपणक को देखकर फिर से प्रवेश कर) अमात्य, ज्योतिषी क्षपणक यहाँ पर है।

राक्षस—(मन मे, अशकुन सूचित करके) अरे यह क्या, पहले ही क्षपणक का दर्शन हुआ।

प्रियवदक—जीवसिद्धि।

राक्षस—(प्रकट) निन्दित वेष से रहित करके भीतर ले आओ।

प्रियवदक—जैसी अमात्य की आज्ञा। (बाहर जाता है)

(तब क्षपणक प्रवेश करता है)

Rakshasa—Who is here, Ho, why?

Servant (*Entering*)—Let Minister order

Rakshasa—Priyamvadaka, find out which of the astrologers is at the door

Priyamvadaka—As the Minister orders (*Goes out and seeing Kshapanaka, re-enters*) Minister it is Kshapanaka

Rakshasa—(*Acting the presentation of a bad omen-to himself*) Oh, a Kshapanaka is seen at the very out set

Priyamvadaka—Jivasiddhi.

Rakshasa (*Aloud*)—Let him come in making him stripped of his hateful garment

Priyamvadaka—As the Minister orders (*Goes out*)
(*Enters the Kshapanaka*)

क्षपणकः—

सासणमलिहन्ताणं प्पडिवज्जह मोहवाहिवेज्जाणं ।
जे पढममेत्तकडुअं पच्छा पत्थं उबदिसन्ति ।।१८।।
(शासनमर्हतां प्रतिपद्यध्वं मोहव्याधिवैद्यानाम् ।
ये प्रथममात्रकटुकं पश्चात् पथ्यमुपदिशन्ति ।।१८।।)

अन्वय—मोहव्याधिवैद्यानाम् अर्हता शासन प्रतिपद्यध्वम् ये प्रथममात्र-कटुक पश्चात् पथ्यम् उपदिशन्ति ।।

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—मोहरूपी रोग के वैद्य जैन संन्यासियों के उपदेश का पालन करो जो ऐसे उपदेश करते हैं जो कि पहले तो कटु होता है पर पीछे लाभकारी होता है ।

Kshapanaka—Follow the advice of Arhats, who are the curers of the sickness of delusion, whose advice is bitter in the beginning but wholesome in the end

संस्कृतव्याख्या—मोहव्याधिवैद्यानाम् मोह अज्ञानम् एव व्याधि रोग तस्य ये वैद्या चिकित्सका तेषाम् अर्हताम् जैनसन्यासिनाम् शासनम् शिक्षाम् प्रतिपद्यध्वम् प्रतिपालयत ये सन्यासिन प्रथममात्रकटुकम् आदावेव तिक्तम् । पश्चात् परिणामे पथ्यम् हितम् उपदिशन्ति कथयन्ति ।

टिप्पणी

(१) **क्षपणकः· · ·जीवसिद्धि**—यहाँ 'क्षपणक' सुनकर राक्षस को अरुचि हुई, क्योकि यात्राकाल मे क्षपणक का दर्शन अशुभसूचक है। किन्तु 'जीवसिद्धि' सुनकर राक्षस ने उसे भीतर आने की अनुमति दे दी। क्योकि यह शब्द शुभार्थक है और जीवसिद्धि राक्षस का प्रिय पात्र भी बना हुआ है। (२) **सांवत्सरिकाणाम्**—ज्योतिषियो (मे), दैवज्ञानाम्। (२) **अबीभत्सदर्शनम्**—घृणित वेष से रहित। अर्थात् सौम्य वेष से युक्त करके भीतर ले आओ। (३) **अनिमित्तम्**—अशकुन। (४) **प्रथममात्रकटुकम्**—पहले ही कडुआ परन्तु (बाद मे पथ्य यानी हितकारी)। यहाँ आर्या छन्द है और अप्रस्तुतप्रशंसा तथा रूपक अलकार है।

(उपसृत्य) धम्मलाहो साबका! भोदु। (धर्मलाभ उपासक! भवतु।)

राक्षसः—भदन्त! निरूप्यतां तावदस्मत्प्रस्थानयोग्य-दिवसः।

क्षपणकः—(नाट्येन चिन्तयित्वा) साबका! णिलूविदे मुहुत्ते। आ मज्झणादो णिब्बुत्तसत्तसकला सोहणा तिही संपुणचन्दा पुण्णमासी तुह्माणं उत्तलाए दिसाए दक्खिणां दिसं प्पत्थिदाणं दक्षिणदुबालिओ णक्खत्तओ। (उपासक! निरूपितो मुहूर्तः। आ मध्याह्नात् निवृत्तसप्तशकला शोभना तिथिः सम्पूर्णचन्द्रा पौर्णमासी, युष्माकमुत्तरस्या दिशो दक्षिणां दिशं प्रस्थितानां दक्षिणद्वारिकं नक्षत्रम्।)

हिन्दी अनुवाद—(पास जाकर) उपासक! धर्म का लाभ करो।

राक्षस—भिक्षु, हमारे प्रस्थान योग्य मुहूर्त्त को बताइए।

क्षपणक—(सोचने का अभिनय करते हुए) उपासक! मुहूर्त विचार लिया गया। मध्याह्न काल से सम्पूर्ण चन्द्रमा वाली तिथि हो रही है बड़ी शोभन और सप्तमी के अंश से रहित है और उत्तर की ओर से दक्षिण प्रस्थान करते हुए आप का नक्षत्र भी दक्षिणवर्त्ती है।

(*Approaching*) May your religion increase

Rakshasa—Mendicant, tell me a day for our march

Kshapanaka (*Acts thinking*)—Well believer, the full moon day with complete moon, which is auspicious from mid-day, with the seventh Karana over, is selected by me The नक्षत्र too is favourable for you to proceed from north to south.

अबि अ—(अपि च—)

अत्थाहिमुहे सूले, उदिदे संपुण्णमण्डले चन्दे।
गमणं बुहस्स लग्गे, उदिदत्थमिदे केदुम्मि ॥१९॥
(अस्ताभिमुखे शूरे, उदिते सम्पूर्णमण्डले चन्द्रे।
गमनं बुधस्य लग्ने, उदितास्तमिते च केतौ ॥१९॥)

अन्वय—शूरे अस्ताभिमुखे सम्पूर्णमण्डले चन्द्रे उदिते केतौ च उदितास्तमिते बुधस्य लग्ने गमनम् ॥१९॥

हिन्दी अनुवाद—और भी—सूर्य के अस्ताचल पर जाने पर और पूर्ण मण्डल वाले चन्द्रमा के उदय होने पर और जब केतु उदय होकर अस्त हो जाय तब बुध के लग्न में गमन करना उत्तम है। यह श्लोक द्व्यर्थक है—पक्षान्तर में इसका अर्थ होगा बलवान् (राक्षस) के विनाश होने पर सम्पूर्ण राष्ट्र वाले चन्द्रगुप्त के उत्थान होने पर और मलयकेतु के उत्थान के साथ ही पतन होने पर चाणक्य के सम्पर्क में जाना ठीक है।

It is auspicious to march in the Buddha Lagna, when the sun is about to set and the moon has arisen with the whole of her curb and the Ketu has appeared and (then) disappeared

संस्कृत व्याख्या—शूरे रवौ अस्ताभिमुखे अस्ताचल गच्छति सम्पूर्णमण्डले पूर्णविम्बे चन्द्रे सहस्रांशौ उदिते प्रकटिने केतौ उदितास्तमिते आविर्भूय तिरोभूते सति बुधस्य लग्नौ कन्यालग्ने इत्यर्थ गमनम् यात्रा कार्या व्यङ्ग्यार्थस्तु—शरे भवति राक्षसे अस्ताभिमुखे मौर्ये साचिव्यस्वयग्राहसत्वरे सभूते सति चन्द्रे चन्द्रगुप्ते वशीकृतसर्वराजमण्डले भूते सति बुधस्य कौटिल्यस्य सम्बन्धे (लग्ने) केतौ मलयकेतौ उदितास्तमिते गमन समीचीनम्।

टिप्पणी

(१) **भदन्त**—बौद्धसन्यासी। भन्द्+झच् कर्तरि, झस्य अन्तादेश। अथवा भदन्त ज्योतिषी को कहते है। भानि नक्षत्राणि दन्ता अस्य इति भदन्त। (२) **सावका**—विश्वास करने वाले, सुनने वाले श्रोतार। (३) **आमध्याह्नात्**—दोपहर से प्रारम्भ होकर 'आ' के योग मे पञ्चमी होती है। (४) **निवृत्तसप्तशकला**—सप्तमी तिथि का अश जिसमे भद्रा होती है बीतने पर। (५) **उत्तरस्याः**—उत्तर मे अपादाने पञ्चमी है। (६) **उदितास्तमिते केतौ**—केतु के उदय होकर अस्त होने पर। राहु और केतु का शरीर एक ही है। सिर भाग को राहु कहते हैं और पुच्छ भाग को केतु। सिर जब उदित होता है तब पुच्छ अस्त होता है और पुच्छ भाग के उदित होने पर सिर अस्त होता है। इसीलिए उदितास्तमिते केतौ कहा है। यहाँ आर्या छन्द तथा श्लेष अलकार है।

राक्षसः—भदन्त! तिथिरेव तावन्न शुध्यति।

क्षपणकः—सावका! (उपासक!)—

एक्कगुणा होइ तिही चउग्गुणे होइ णक्खत्ते।
चउसत्तिगुणे लग्गे एसे जोइसतन्तसिद्धं ते ॥२०॥

(एकगुणा भवति तिथिश्चतुर्गुणं भवति नक्षत्रम् ।
चतुःषष्टिगुणं लग्नमेतद्दृश्यते ज्यौतिषतन्त्रसिद्धान्ते ।।२०।।)

अन्वय—ज्यौतिपतन्त्रसिद्धान्ते एतत् दृश्यते (यत्) तिथि एकगुणा भवति नक्षत्र चतुर्गुण भवति, लग्न चतुःषष्टिगुण (भवति) ।।२०।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—भदन्त, पहले तो तिथि ही नही शुद्ध है।
क्षपणक—उपासक ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्त पर देखा गया है कि तिथि एक गुना फल देती है नक्षत्र का फल चौगुना होता है और लग्न का फल चौंसठ गुना होता है।

Rakshasa—Mendicant, first of all the date (or day) is not auspicious

Kshapanaka—Well believer, according to the principle of Astrology the day is a single measure, mansion is fourfold and the Lagna is sixtyfour fold

सस्कृत व्याख्या—ज्योतिषतन्त्रसिद्धान्ते एतत् इदम् दृश्यते अवलोक्यते यत् तिथि एकगुणा फलदायिनी भवति नक्षत्र चतुर्गुणम् फलद भवति लग्न चतु-षष्टिगुण फलद भवति।

टिप्पणी

तिथिरेव न शुध्यति—यहाँ राक्षस कहना चाहता है कि पहले तो तिथि ही हमारी यात्रा के लिए उपयुक्त नही है, नक्षत्र आदि की बात तो दूर रही। क्योकि पूर्णिमा को यात्रा करना वर्जित है—'विनाशदाथ पूर्णिमा यश क्षय करोत्यमा'।

ता। लग्गे होइ सुलग्गे कूलग्गहं पलिहलिज्जासु ।
पाविहि दीहं लाहं चन्दस्य बलेण गच्छन्ते ।।२१।।
(तस्मात्। लग्नं भवति सुलग्नं क्रूरग्रहं परिहर आशु ।
प्राप्नुहि दीर्घं लाभं चन्द्रस्य बलेन गच्छन् ।।२१।।)

अन्वय—आशु क्रूरग्रहम् परिहर, लग्न सुलग्न भवति, चन्द्रस्य बले गच्छन् दीर्घं लाभ प्राप्नुहि ।।२१।।

हिन्दी अनुवाद—हीन लग्न भी शुभ हो जाती है, शीघ्र ही क्रूरग्रह को छोड़ दो (अर्थात् यदि क्रूरग्रह से सम्बन्ध न रहेगा तो अशुभ लग्न भी शुभ होती है)

चन्द्रमा के बल से जाते हुए तुम चिरस्थायी सिद्धि प्राप्त करो। इसका दूसरा अर्थ भी है—हे राक्षस! हठ छोड दो चन्द्रगुप्त की सेना में जाते हुए (तुम) लाभ प्राप्त करो। ऐसा करने से अशुभ लग्न भी शुभ फल देगी।

• Give up the Kruigrah soon, even a bad Lagna (touch) will become auspicious Marching on the strength of the moon you will attain lasting success

संस्कृत व्याख्या—आशु शीघ्र क्रूरग्रह नीचग्रहसम्बन्ध त्यज चन्द्रस्य बलेन गच्छन् चन्द्रसवशेन प्रस्थानुकाम त्वम् दीर्घ लाभम् प्राप्नुहि यदि एतत् करिष्यसि तदा लग्न हीनमपि सुलग्न फलदायक भविष्यति।

टिप्पणी

लग्नं भवति सुलग्नम्—अशुभ लग्न भी यदि बुध से अधिष्ठित हो तो शुभ हो जाता है। यहाँ श्लेष अलकार है।

राक्षसः—भदन्त! अपरैः सांवत्सरिकैः सार्धं संवाद्यताम्।

क्षपणकः—संबादेहु साबके। अहं णिअं गेहं गमिस्सं। (संवादयतु उपासकः। अहं निजं गेहं गमिष्यामि।)

राक्षसः—न खलु कुपितो भदन्तः?

क्षपणकः—ण कुबिदे तुह्माणं भदन्ते। (न कुपितो युष्माकं भदन्तः।)

राक्षसः—कस्तर्हि?

क्षपणकः—भअबं कअन्तो। जेण अत्तणो पक्खं उज्झिअ परपक्खं प्पमाणीकलेसि। (भगवान कृतान्तः। येन आत्मनः पक्षमुज्झित्वा परपक्षं प्रमाणीकरोषि।) (इति निष्क्रान्तः क्षपणकः।)

राक्षसः—प्रियंवदक! ज्ञायतां का वेला वर्तत इति।

प्रियंवदकः—जं अमच्चो आणबेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य च) अत्थाहिलासी भअबं सुले। (अस्ताभिलाषी भगवान् सूर्यः)।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—भदन्त, अन्य ज्योतिषियों से भी इस पर राय ले लें।

क्षपणक—उपासक, आप सलाह लेते रहे। मै तो अपने घर जाऊँगा।

राक्षस—क्या भदन्त अप्रसन्न हो गये ?

क्षपणक—आप के भदन्त अप्रसन्न नही हैं।

राक्षस—तब कौन ?

क्षपणक—भगवान् यमराज (अप्रसन्न है) जो कि अपना पक्ष त्याग कर शत्रुपक्ष ग्रहण कर रहे हो। (क्षपणक चला जाता है)

राक्षस—प्रियंवदक, मालूम करो, क्या समय है।

प्रियवदक—जैसी अमात्य की आज्ञा (बाहर जाकर पुनः प्रवेश कर) भगवान् सूर्य अब अस्ताचल पर जाने वाले हैं।

Rakshasa—Mendicant, let other astrologeis be also consulted

Kshapanaka—Let believer consult, I will go home

Rakshasa—Is mendicant angry ?

Kshapanaka—Your mendicant is not angry

Rakshasa—Who then ?

Kshapanaka—The God of Death Because you are accepting others as guide and avoiding your own men (*Exit Kshapanaka*)

Rakshasa—Priyamvadak, see what the time is

Priyamvadaka—As the Minister commands (*Going out and re-entering*) The sun desires to set

राक्षसः—(आसनादुत्थाय विलोक्य च) अये ! अस्ताभिलाषी भगवान् सहस्रदीधितिः। सम्प्रति हि—

आविर्भूतानुरागाः क्षणमुदयगिरेरुज्जिहानस्य भानोः
पत्रच्छायैः पुरस्तादुपवनतरवो दूरमाश्वेव गत्वा।
एते तस्मिन्निवृत्ताः पुनरपरककुप्प्रान्तपर्यस्तबिम्बे
प्रायो भृत्यास्त्यजन्ति प्रचलितविभवं स्वामिनं सेवमानाः॥२२॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे।)

॥ इति चतुर्थोऽङ्कः ॥

अन्वय—एते उपवनतरव क्षणम् आविर्भूतानुरागा उदयगिरे उज्जिहानस्य भानो पुरस्तात् पत्रच्छायै आशु एव दूर गत्वा तस्मिन् अपरककुप्प्रान्तपर्यस्तबिम्बे सम्प्रति पुनर्निवृत्ता हि सेवमाना भृत्या प्रचलितविभवं स्वामिन प्राय. त्यजन्ति।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(आसन से उठकर और देखकर) अरे भगवान् सहस्रांशु अस्त होना चाहते हैं। इस समय भगवान् सूर्य के उदय होने पर क्षणभर में जो उपवन के वृक्ष लाल रग के हो गये थे और अपने पत्रों की प्रभूत छाया से दूर तक आगे मानो स्वागत के लिए खडे दिखाई देते थे वे अब सूर्य के पश्चिम दिशा में चले जाने पर लौट आये हैं। (क्योकि) प्रायः सेवा करते हुए भृत्यगण ऐश्वर्यहीन स्वामी को छोड़ देते हैं। (सभी चले जाते हैं)

चौथा अङ्क समाप्त

Rakshasa (*Rising from his seat and looking*)—Aha, the sun wishes to set These garden trees, which for a moment had become red, and with the shades of foliage, had gone in front of the sun, that was moving away from the rising hill, have, indeed, turned back now, when the sun has gone to the other direction (viz the west) Usually the serving servants leave the master whose wealth is gone (*Exit all*) (The fourth Act ends)

संस्कृत व्याख्या—एते अमी उपवनतरव आरामपादपा क्षणम् मुहूर्त्तमात्रम् आविर्भूतानुरागा आविर्भूत सञ्जात अनुराग अनुरञ्जनमिति येषा तादृशा प्रीतिरक्तास्सन्त उदयगिरे उदयाचलात् उज्जिहानस्य उदयमानस्य भानो सूर्यस्य पुरस्तात् सूर्याभिमुख पत्रच्छायै छायाबाहुल्येन आशु एव शीघ्रमेव दूर गत्वा सूर्यस्य स्वागताय पुरश्छाया प्रसारयन्त स्थिता इत्यर्थ। तस्मिन् भानौ अपर-ककुप्प्रान्तपर्यस्तविम्बे पश्चिमाशावलम्बिनि सति अस्तोन्मुखे सभूते सम्प्रति अधुना निवृत्ता पृष्ठत अपसृता एव। यावत् प्रताप तावत् पुरस्तात् उपसर्पणम् प्रतापक्षये तु पश्चादपसर्पणम् इति एषा कृतघ्नता। सेवमाना उपचरन्त भृत्या सेवका प्रचलितविभव धनरहित स्वामिन प्राय त्यजन्ति जहति।

टिप्पणी

(१) **संवाद्यताम्**—सलाह ले ली जाय। सम्+वद्+णिच्+लोट्। (२) **सवादयतु श्रावक**—श्रावक सलाह ले। इससे प्रतीत होता है कि जब राक्षस ने दूसरे ज्योतिषियो से पूछने के लिए कहा तो क्षपणक रुष्ट हो गया। (३) **कृतान्त**—यमराज। क्षपणक के कहने का भाव यह है कि मै नही कुपित हो रहा हूँ, वल्कि यमराज कुपित है, जो तुम अपने लोगो (चन्द्रगुप्त) को छोड कर शत्रुपक्ष का सहारा ले रहे हो। (४) **अस्ताभिलाषी**—अस्तम् अभिलपितु शीलमस्य इति अस्त+अभि+लष्+णिनि कर्तरि ताच्छील्ये। (५) **आविर्भूतानुरागाः**—लालिमा (अथवा प्रेम) प्रकट किया जिसने। आविर्भूत अनुरागः

येषा ते। सूर्योदय होने पर वृक्ष लाल हो जाते है, क्योकि उन पर सूर्य की छाया पडती है। (६) **उज्जिहानस्य**—चलता हुम्र।, निकलता हुम्रा। उद+हा+शानच्। (७) **पत्रच्छायै**—छाया की बहुलता से। (७) **म्रपरककुप्प्रान्त-पर्यस्तबिम्बे**—दूसरी (पश्चिम) दिशा मे चले जाने पर। जब सूर्य पश्चिम दिशा को चला जाता है तो वृक्षो की छाया भी छोटी हो जाती है उसी को कवि कह रहा है कि क्षीणविभव स्वामी को सेवक लोग छोड देते है। इसमे म्रर्थान्तरन्यास तथा उत्प्रेक्षा म्रलकार म्रौर स्रग्धरा छन्द है।

पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति लेखमलङ्करणस्थगिकाञ्च मुद्रितामादाय सिद्धार्थकः)

सिद्धार्थकः—ही हीमाणहे ! हीमाणहे ! ! (आश्चर्यम् ! आश्चर्यम् ! !)

बुद्धिजलणिज्झरेहिं सिच्चन्ती देशकालकलसेहिं ।
दंसइस्सदि कज्जफलं गुरुअं चाणक्कणीदिलदा ।।१।

(बुद्धिजलनिर्झरैः सिच्यमाना देशकालकलसैः ।
दर्शयिष्यति कार्यफलं गुरुकं चाणक्यनीतिलता ।।१।।)

अन्वय—देशकालकलसै बुद्धिजलनिर्झरै सिच्यमाना चाणक्यनीतिलता गुरुक कार्यफल दर्शयिष्यति ।।१।।

हिन्दी अनुवाद—(सिद्धार्थक का राक्षस की मुद्रा से मुद्रित लेख तथा आभूषण वाली पेटी के साथ रगमच पर आगमन) ।

सिद्धार्थक—आश्चर्य, बडा भारी आश्चर्य ।

देशकाल रूपी घडे से (उपयुक्त देश और काल का विचार करके) बुद्धि रूपी जल से सीची गई (बुद्धिपूर्वक विचार करके) चाणक्य की नीतिलता बहुत फल देगी ।

विशेष—इस अङ्क से फलागम संबंधी निर्वहण संधि का आरम्भ होता है । इस श्लोक से यह सूचना दी गई है कि चाणक्य का फैलाया हुआ नीतिजाल अब फलदायक होने वाला है । सिद्धार्थक के पास का पत्र और मुहर वही है जिसे चाणक्य ने उसे सौपा था (अक १ देखिए) और गहनो की पेटी वह है जिसे चाणक्य के कथनानुसार उसने शकटदास से बचाने के पुरस्कार में राक्षस से पाया था तथा उसी के मुहर से अकित कराया था । (अङ्क २) ।

(Now enter Siddharthaka with a sealed letter and a box of ornaments)

Siddharthaka—Wonder, wonder The creeper of Chanakya's policy watered by the jug of time and place with a flow of the water of wisdom will give great fruits

सस्कृत व्याख्या—देशकालकलसै देशश्च कालश्च देशकालौ तावेव कलसास्सेचनघटा तै बुद्धिजलनिर्झरै बुद्ध्या जलानि इव तेषा निर्झरा प्रवाहा. तै तथाभूतै सिच्यमाना आर्द्रीक्रियमाणा चाणक्यनीतिलतिका चाणक्यस्य नीतिः एव लतिका इति चाणक्यनीतिलतिका गुरुक महत् फल परिणाम दर्शयिष्यति लोकेभ्य प्रकटीकरिष्यति ।

टिप्पणी

(१) **अलंकरणस्थगिकाम्**—गहनो की पेटी को। अलकरणाना स्थगिका इति (ष० तत्पु०)। स्थग्+णिच्+अच् कर्तरि=स्थग स एव स्थगक स्वार्थे कन्—स्त्रिया स्थगिका। (२) **कार्यफलम्**—चाणक्य ने राक्षस को वश मे करने के लिए ही चारो ओर अपनी नीति का जाल बिछा रखा है। राक्षस का चाणक्य के वश मे हो जाना ही कार्यरूप फल है। यहाँ रूपक अलकार तथा आर्या छन्द है।

गहीदो गए अज्जचाणक्केण पढमलेहिदो लेहो, अमच्चरक्खसस्स मुद्दालंच्छिदो। तस्स ज्जेव्व मुद्दालंच्छिदा इअं आहरणपेड़िआ। चलिदेह्मि किल पाड़लिउत्तं, ता जाव गच्छह्मि। (परिक्रम्यावलोक्य च) कहं क्खवणओ आअच्छदि? जाव मे असउणभूदं इमस्स दंसणं, ता आदित्तदंसणेण पडिहणामि। (गृहीतो मयाऽऽर्यचाणक्येन प्रथमलेखितो लेखः; अमात्यराक्षसस्य मुद्रालाञ्छितः। तस्यैव मुद्रालाञ्छितेयमाभरणपेटिका। चलितोऽस्मि किल पाटलिपुत्रं, तद्यावत् गच्छामि। कथं क्षपणक आगच्छति? यावन्मेऽशकुनभूतमस्य दर्शनं, तस्मादादित्यदर्शनेन प्रतिहन्मि।)

हिन्दी अनुवाद—आर्य चाणक्य द्वारा लिखवाया गया वह लेख जिस पर अमात्य राक्षस की मुहर लगी है मैंने पहले ही से ले लिया है। उसी की मुद्रा से मुद्रित यह गहनो की पिटारी है। पाटलिपुत्र के लिए अब चलूँ। अब चल ही दिया जाय। (चलकर और देखकर) अरे, यह क्षपणक आ रहा है। इसका दर्शन तो अशकुन है अतः सूर्य का दर्शन करके इस अशकुन का फल मिटा दूँ।

I have taken with me this letter previously caused to be written by Noble Chanakya and stamped with the seal of

Minister Rakshas This box of ornaments is also sealed with the same seal I have started for Pataliputra, now I (must) go (*Going round and seeing*) Oh, how is it that a Kshapanaka (mendicant) is seen His sight is inauspicious to me, so I shall remove the inauspiciousness by looking at the sun.

टिप्पणी

(१) **प्रथमलेखितः**—चाणक्य ने कपटपूर्वक इस लेख को सिद्धार्थक के हाथो भेजकर शकटदास से लिखवाया था। इसका प्रसग प्रथम अक मे आ चुका है। (२) कही **यावन्मे—प्रतिहन्मि** के स्थान पर यह पाठ है "यावदस्य अशकुनभूतम् दर्शनम् मम सम्मतमेव तस्मात् न परिहरामि।" इसका अर्थ है कि इस क्षपणक का अमङ्गलकारी दर्शन मुझे अभीष्ट है अत उसका त्याग न करूँगा।

(ततः प्रविशति क्षपणकः।)

क्षपणकः—अलिहन्ताणं प्पणमामो जे दे गंभीलदाए बुद्धिए।
लोउत्तलेंहि लोए सिद्धिं मग्गेहि मग्गन्ति ॥२॥
(अर्हतां प्रणमामो ये ते गम्भीरतया बुद्धेः।
लोकोत्तरैर्लोके सिद्धिं मार्गैर्मार्गयन्ति ॥२॥)

अन्वयः—अर्हतां प्रणमाम, ये ते बुद्धे गम्भीरतया लोके लोकोत्तरै मार्गै सिद्धिं मार्गयन्ति ॥२॥

हिन्दी अनुवाद—(क्षपणक प्रवेश करता है) हम बौद्ध संन्यासियों को प्रणाम करते है जो बुद्धि की गंभीरता से संसार में अलौकिक मार्ग से सिद्धि प्राप्त करते है।

(*Now enter Kshapanaka*) I bow to Arhatas, who, through their sharp intelligence, attain success in this world by means of extraordinary methods

संस्कृत व्याख्या—अर्हतां बौद्धभिक्षूणां प्रणमाम नमस्कुर्म ये ते अर्हन्त बुद्धे गम्भीरतया धीरतया लोके ससारे लोकोत्तरै अलौकिकै मार्गै पथिभ्य सिद्धिं सफलता मोक्ष वा मार्गयन्ति अन्वेपयन्ति।

टिप्पणी

(१) **अर्हताम्**—बौद्ध भिक्षुओ को। अर्ह् + शतृ=अर्हन्त, तेषाम्। "कर्मण. शेषत्वविवक्षाया" षष्ठी हुई है। (२) **लोकोत्तरैः**—अलौकिक।

लोकानिगा प्रशस्ता नै इत्यर्थ । इस पद्य मे अप्रस्तुत प्रशसा अलकार तथा आर्या छन्द है।

सिद्धार्थकः—भदन्त ! प्पणामि (भदन्त ! प्रणमामि)

क्षपणकः—साअका ! धम्मलाहो ते होदु (सिद्धार्थकं निर्वर्ण्य) साबका ! पत्थाणसमुब्बहणो किदब्बबसाअं बिअदे हिअअं पेक्खामि) (उपासक ! धर्मलाभस्ते भवतु। उपासक ! प्रस्थानसमुद्वहने कृतव्यवसायमिव ते हृदयं पश्यामि।)

सिद्धार्थकः—कहं भदन्तो जाणादि ? (कथं भदन्तो जानाति ?)

क्षपणकः—साबका ! किं एत्थ जाणिदब्बं ? एसो दे मग्गादेसकुसलो सउणो करगदो लेहो अ सूचेदि। (उपासक ! किमत्र ज्ञातव्यम् ? एष ते मार्गादेशकुशलः शकुनः करगतो लेखश्च सूचयति।)

सिद्धार्थकः—जाणिदं भदन्तेण देसन्तलं चलिदोह्मि। ता कधेदु भदन्तो कीदिसो अज्ज दिअसो ? (ज्ञातं भदन्तेन देशान्तरं चलितोऽस्मि। तत कथयतु भदन्तः कीदृशोऽद्य दिवसः ?)

क्षपणकः—(विहस्य) साबका ! मुण्डिअमुण्डो तुमं णक्खत्ताइं पुच्छसि ? (उपासक ! मुण्डितमुण्डस्त्वं नक्षत्राणि पृच्छसि ?)

सिद्धार्थकः—भदन्त ! सम्पदं पि किं जादं ? ता कधेहि, जइ अत्तणो अणुऊलं भविस्सदि, ता गमिस्सं, अण्णधा णिवत्तिस्सं (भदन्त ! साम्प्रतमपि किं जातम् ! तत कथय, यद्यात्मनोऽनुकूलं भवेत्, तदा गमिष्यामि, अन्यथा निवर्त्तिष्ये।)

क्षपणकः—साबकाणं सम्पदं एदस्सिं मलयकेदुकडए अणणुऊलेण बा किं ? अगहीदमुद्देण ण गच्छीअदि।

(उपासकानां साम्प्रतमेतस्मिन् मलयकेतुकटके अनुकूलेनाऽननुकूलेन वा किम्? अगृहीतमुद्रेण न गम्यते।)

सिद्धार्थकः—भदन्त! कहेहि, कुदो क्खु अअं। (भदन्त! कथय, कुतः खल्वयम्?)

हिन्दी अनुवाद—सिद्धार्थक—भदन्त, प्रणाम करता हूँ।

क्षपणक—उपासक, तुम्हे धर्म का लाभ हो (सिद्धार्थक को अच्छी तरह देखकर) मै देख रहा हूँ कि तुम्हारा हृदय यात्रा की तैयारी मे कृतनिश्चय है।

सिद्धार्थक—भदन्त, कैसे जानते है?

क्षपणक—उपासक, इसमे जानने की क्या बात है? तुम्हारे मार्ग की सूचना देने मे निपुण शकुन तथा तुम्हारे हाथ का पत्र यह बता रहा है।

सिद्धार्थक—तो क्या भदन्त ने जान लिया कि मै परदेश जा रहा हूँ। तो भदन्त बतावें कि आज का दिन कैसा है।

क्षपणक—(हँसकर) उपासक, सिर मुडा कर तुम नक्षत्र पूछ रहे हो।

सिद्धार्थक—भदन्त, तो अभी क्या हो गया। बताइए, यदि दिन अपने अनुकूल होगा तो जाऊँगा नही तो लौट जाऊँगा।

क्षपणक—उपासको को इस समय मलयकेतु के कटक मे अनुकूल अथवा प्रतिकूल होने से क्या? बिना मुद्रा के नही जा सकते।

सिद्धार्थक—भदन्त, कहिए, ऐसा क्यो?

Siddharthaka—Mendicant, I bow to you

Kshapanaka—Well believer, may you attain piety (*Looking at him carefully*) Believer, you seem to be like one whose mind has decided to accomplish a journey

Siddharthaka—How does the mendicant know ?

Kshapanaka—Believer, what is there to know ? This letter in your hand and the auspiciousness which is the indicator of the way tell this

Siddharthaka—Has mendicant known that I am going on a journey Then let the mendicant tell how the day is today

Kshapanaka (*Laughing*)—Believer, having got the head shaved already you ask about the stars

Siddharthaka—Mendicant, nothing has happened as yet Speak if it is favourable for a journey I may go or I shall return

Kshapanaka—What is the use of being favourable or unfavourable at this time in the camp of Malayaketu ? None is allowed to go without a seal

Siddharthaka—Mendicant, tell me, how so ?

टिप्पणी

(१) **प्रस्थानसमुद्वहने**—यात्रा करने के लिए। (२) **कृतव्यवसायम्**—तैयारी की है जिसने। कृत व्यवसायो येन तम्। (३) **मार्गादेशकुशल**—प्रस्थान करने का विशेष समय। मार्गस्य आदेश, तस्मिन् कुशल। (४) **शकुन**—यात्रा आरम्भ करने के समय मस्तक पर लगाई गई हल्दी-अक्षत आदि कोई वस्तु। (५) **मुण्डितमुण्ड**—मूड मुडाकर नक्षत्र पूछते हो। अर्थात् यात्रा की तैयारी कर अब मुहूर्त पूछते हो। यह तो पहले ही कर लेना था। (६) **साम्प्रतम् किं जातम्**—अभी बिगडा ही क्या है।

क्षपणकः—साबका! णिसामेहि पढमं दाव एत्थ मलअकेदुकडए लोअस्स अणिबालिअणिक्कमणप्पवेसो आसी। दाणीं इदो पच्चासण्णे कुसुमउरे ण कोबि अमुद्दालंच्छिदो णिक्कमिदुं प्पबिसेदुं वा अणुमोदीअदि। ता जइ भाउराअणस्स मुद्दालंच्छिदोसि, तदो गच्छ बीसत्थो, अण्णाधा णिब्बत्तिअ णिउक्कण्ठं चिट्ठ। मा तुमं गुम्मट्ठाणाधिवेहिं संजमिदकलचलणो राअउलं प्पबेसीअसि। (उपासक! निशमय, प्रथमं तावदत्र मलयकेतुकटके लोकस्यानिवारितनिष्क्रमणप्रवेशावास्ताम्। इदानीमितः प्रत्यासन्ने कुसुमपुरे न कोऽप्यमुद्रालाञ्छितो निष्क्रमितुं प्रवेष्टुं वाऽनुमोद्यते। तद् यदि भागुरायणस्य मुद्रालाञ्छितोऽसि, तदा गच्छ विश्वस्तः, अन्यथा निवृत्य निरुत्कण्ठं तिष्ठ। मा त्वं गुल्मस्थानाधिपैः संयमितकरचरणो राजकुलं प्रवेश्यसे।)

सिद्धार्थकः—किं ण आणादि भदन्तो, जधा अमच्चरक्खसस्स केलिअरो अन्तिओ सिद्धत्थओ अहं त्ति? ता अमुद्दालंच्छिदं पि मं णिक्कमन्तं कस्स सत्ती णिबारेदुं? (किं न जानाति भदन्तः, यथा अमात्यराक्षसस्य केलिकरोऽन्तिकः सिद्धार्थकोऽहमिति? तद् अमुद्रालाञ्छितमपि मां निष्क्रामन्तं कस्य शक्तिर्निवारयितुम्?)

क्षपणकः—साबका ! रक्खसस्स पिसाचस्स बा केलिअरो होहि । णत्थि उण दे अमुद्दालंच्छिदस्स इदो णिक्कमणोबाओ । (उपासक ! राक्षसस्य पिशाचस्य वा केलिकरो भव । नास्ति पुनस्ते अमुद्रालाञ्छितस्येतो निष्क्रमणोपायः ।)

सिद्धार्थकः—भदन्त ! ण कुप्य, भण मे कज्जसिद्धी होदु त्ति (भदन्त ! न कुप्य भण मे कार्यसिद्धिर्भवतु इति ।)

क्षपणकः—साबका ! गच्छ, होदु दे कज्जसिद्धी । अहंपि भागुराअणादो पाडलिउत्तं गन्तुं मुद्दं पडिच्छेमि । (उपासक ! गच्छ, भवतु ते कार्यसिद्धिः । अहमपि भागुरायणात् पाटलिपुत्रं गन्तुं मुद्रां प्रतीच्छामि ।) (इत्युभौ निष्क्रान्तौ ।)

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—उपासक, सुनो, पहले तो मलयकेतु की सेना में बिना रोकटोक के लोगों का आना-जाना होता था । अब इस समय पाटलिपुत्र के करीब आ जाने पर कोई भी बिना मुद्रा के चिह्न दिखाए नही आ-जा सकता । यदि भागुरायण की मुद्रा से चिह्नित होगे तो बेखटके जा सकते हो अन्यथा लौट जाओ, और उत्कण्ठाहीन होकर रहो । कही ऐसा न हो कि शिविर के रक्षक तुम्हारा हाथ-पैर बाँधकर (कैदकर) तुम्हें राजा के दरबार में ले जायें ।

सिद्धार्थक—क्या भदन्त को नही मालूम है कि अमात्य राक्षस के समीप रहने वाला मैं उसका विनोदी सेवक हूँ । तो किसकी शक्ति है कि बिना मुद्रा से चिह्नित होने पर भी मुझको बाहर जाने से रोके ।

क्षपणक—उपासक ! तुम चाहे राक्षस के चाहे पिशाच के निकटवर्ती सेवक रहो, परन्तु बिना मुद्रा-चिह्न के तुम्हारे लिए यहाँ से बाहर जाने का कोई उपाय नही है ।

सिद्धार्थक—भदन्त, अप्रसन्न न हो । कहिए, मेरा काम सफल हो जाय ।

क्षपणक—उपासक ! जाओ, तुम्हारी कार्य-सिद्धि हो जाय । मैं भी भागुरायण से पाटलिपुत्र जाने के लिए मुद्रा की प्रतीक्षा कर रहा हूँ । (दोनो निकल जाते है)

(प्रवेशक समाप्त)

Kshapanaka—Listen believer Formerly all were allowed to go out and come in without any check But now as Kusumpura is near, no one is allowed to go in or come out unmarked by a stamp If you are marked with the seal of Bhagurayan, you may proceed on without any fear, otherwise stay without any eagerness, last the guards may tie you by the hands and feet and take you to the royal camp

Siddharthaka—Does mendicant not know that I am an attendant of Minister Rakshas So who has the power to stop me from going out even unmarked by a stamp

Kshapanaka—Believer, whether you are the attendant of a Rakshas or Pishach, you have no means to go out if you are not marked by a signet

Siddharthaka—Mendicant, do not be angry, say that I may succeed in my mission

Kshapanaka—Believer go You may succeed in your work I am also waiting for a seal from Bhagurayan to go to Pataliputra

टिप्पणी

(१) **निशामय**—सुनो। नि+शम्+णिच्+लोट्। see दुर्गा सप्तसती—'निशामय तदुत्पत्ति विस्तराद्वदतो मम'। (२) **अनिवारितनिष्क्रमणप्रवेशौ**—आना-जाना बिना रोकटोक के होता था। (३) **अमुद्रालाञ्छितः**—विना मुद्रा के चिह्न से चिह्नित। न मुद्रया लाञ्छित इति अमुद्रालाञ्छित (नञ् समास)। (४) **गुल्मस्थानाधिपै**—रखवालो से। (५) **सयमितकरचरण.**—हाथ-पैर बाँधकर, कैद कर। करौ च चरणौ च इति करचरणम् (द्वन्द्व स०) प्राण्यङ्गत्वादेकवद्भाव नपुसकत्व च। सयमित करचरण यस्य स। (६) **केलिकर**—विनोदप्रिय। अन्तिक—समीपवर्ती चाकर। (७) **प्रवेशक**—दो अको के बीच के एक प्रकार के अक को प्रवेशक कहते है। देखिए भूमिका। प्र+विश्+णिच्+ण्वुल् कर्तरि।

(ततः प्रविशति पुरुषेणानुगम्यमानो भागुरायणः।)

भागुरायणः—(आत्मगतम्) अहो! विचित्रतार्यचाणक्यनीतेः। कुतः—

मुहुर्लक्ष्योद्भेदा मुहुरधिगमाभावगहना
मुहुः सम्पूर्णाङ्गी मुहुरतिकृशा कार्यवशतः।
मुहुर्भ्रश्यद्बीजा मुहुरपि बहुप्रापितफले-
त्यहो! चित्राकारा नियतिरिव नीतिर्नयविदः ॥३॥

अन्वय—मुहु लक्ष्योद्भेदा, मुहु अधिगमाभावगहना, मुहु सम्पूर्णाङ्गी, मुहु कार्यवशात. अतिकृशा, मुहु भ्रश्यद्बीजा, मुहु बहुप्रापितफला अपि इति अहो नियतिः इव नयविद नीति चित्राकारा ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—(एक पुरुष के साथ भागुरायण का प्रवेश) भागुरायण—(मन में) अहो (ओह) आर्य चाणक्य की नीति कैसी विचित्र है :—कभी तो ऐसा लगता है कि इसका लक्ष्य प्रकट हो गया है और कभी इतनी गहन हो जाती है कि किसी की बुद्धि मे ही नही आ सकती। कभी-कभी परिपुष्ट अङ्गों वाली और कभी कार्य के अनुरोध से अति क्षीण हो जाती है। कभी ऐसा मालूम पडता है कि वह बीज से नष्ट हो रही है और कभी विविध फलों को देती हुई प्रतीत होती है। इसकी विविधरूपता कैसी विचित्र है। जैसी नियति की चाल बहुरगी, वैसी चाणक्य की कूट चाल बहुरगी।

(*Enter Bhagurayan followed by an attendant*) *Bhaguiayan*—(*To himself*) Oh, the wonderfulness of Noble Chanakya's policy Sometimes it seems that its aim is visible, sometimes it is inscrutable in the absence of trace, sometimes it is full in its part, often subtle on purpose, sometimes it seems that its very basis is disappearing, often again it seems leading to great success Thus like fate is the policy of diplomats of striking character

संस्कृत व्याख्या—अहो आश्चर्य महाश्चर्य यन्नयविद नयज्ञाननिधेराचार्य-चाणक्यस्य नीति कूटराजनीति नियतिरिव प्रकृतिशक्तिवैचित्री या चित्रकारा विस्मयजननी मुहु वार वार लक्ष्योद्भेदा लक्ष्य अनुमेय उद्भेद आविर्भाव यस्या तादृशी मुहु वार वार अधिगमाभावगहना अधिगमस्य उपलब्धे अभावात् विग्रहात् अतिगहना दुर्बोधा मुहु सम्पूर्णाङ्गी प्रचितावयवा मुहु कदाचित् कार्यवशत आवश्यकतानुसारम् अतिकृशा अतिक्षीणा मुहु भ्रश्यद्बीजा भ्रश्यन् विनाश गच्छत् बीज कारण यस्या सा तादृशी मुहु वार वार बहुप्रापितफला प्रचुरफलदायिनी अपि इति एव नियति इव भाग्यम् इव नयविद नीति नीतिज्ञस्य नीति चित्राकारा बहुप्रकारा।

टिप्पणी

(१) **लक्ष्योद्भेदा**—लक्ष्य अनुमेय उद्भेद आविर्भाव यस्या सा। जिसका आविर्भाव समझ मे आने लगता है अर्थात् गूढ चाले कुछ-कुछ प्रकाश मे आने लगती है। भागुरायण जब प्रथम बार पाटलिपुत्र मे आया और मलयकेतु के यहाँ नौकरी करने लगा तब उस समय चाणक्य की सफलता की कुछ-कुछ आशा हो गई कि जो कुछ मलयकेतु को राक्षस समझावेगा उसके विपरीत भागुरायण उसे समझाने का प्रयत्न करेगा। (२) **अधिगमाभावगहना**—कोई फल न होने से गूढ (समझ मे न आने वाली)। अधिगमस्य अभावात् गहना इति।

जब से भागुरायण आदि मलयकेतु की सेवा मे आये तब से बहुत दिनो तक कोई घटना नही घटित हुई। इसी से वह ऐसा कह रहा है कि कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि राजनीति का कुछ प्रभाव होता ही नही जान पडता। (३) **सम्पूर्णाङ्गी**—चाणक्य की नीति के सभी अग इस प्रकार है—(१) भद्रभट आदि का मलयकेतु की सेना मे आना, (२) शकटदास का पहुँचना, (३) सिद्धार्थक का राक्षस का प्रिय बनकर उसके पास रहना, (४) सिद्धार्थक को आभूषणो का पुरस्कार मिलना तथा (५) राक्षस के ही पास आभूषणो को रखना। (४) **नश्यद्बीजा**—जिसका बीज नष्ट होता दिखाई पडता है। (५) **बहुप्रापितफला**—बहुत फल देने वाली। इसका तात्पर्य यह है कि भागुरायण ने मलयकेतु के साथ जाकर करभक और राक्षस की बातचीत सुन ली थी जिससे उसे राक्षस और मलयकेतु के बीच फूट डालने का अवसर प्राप्त हुआ। भर्तृहरि ने भी लिखा है—'वाराङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपा'। यहाँ उपमा, काव्यलिग तथा अप्रस्तुतप्रशसा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

(प्रकाशम्) भद्र भासुरक! न मां दूरीभवन्तमिच्छति कुमारः। अतोऽस्मिन्नेवास्थानमण्डपे विन्यस्यतामासनम्।

पुरुषः—एदं आसनं, उपबिसदु अज्जो। (एतदासनम्, उपविशत्वार्यः।)

भागुरायणः—(उपविश्य) भद्र भासुरक! यः कश्चिन्मुद्रार्थी मां द्रष्टुमिच्छति, स त्वया प्रवेशयितव्यः।

पुरुषः—जं अज्जो आणबेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्तः)

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) भद्र भासुरक, कुमार नहीं चाहते कि मैं दूर रहूँ। इसलिए इसी सभामण्डप में आसन लगा दो।

पुरुष—यह आसन है, आर्य बैठें।

भागुरायण—(बैठकर) भद्र भासुरक, जो कोई मुद्रा चाहने वाला मुझसे मिलने आवे उसे तुम भीतर लिवा लाना।

पुरुष—जैसी आर्य की आज्ञा। (निकल जाता है)

(*Aloud*) Noble Bhasuraka, the prince does not want to see me go far So let my seat be placed in the pavilion of the court itself.

Attendant—This is the seat, let Noble sire sit down

Bhagurayan (*Sitting*)—Noble Bhasuraka, whoever, desirous of getting a permit, wants to see me, should be admitted by you

Attendant—As Noble Sire commands (*Exit*)

भागुरायणः—(स्वगतम्) कष्टमेवमप्यस्मासु स्नेहवान् कुमारो मलयकेतुरतिसन्धातव्य इत्यहो दुष्करम्। अथवा—

कुले लज्जायाञ्च स्वयशसि च माने च विमुखः
शरीरं विक्रीय क्षणिकधनलाभाद्धनवति।
तदाज्ञां कुर्वाणो हितमहितमित्येतदधुना
विचारातिक्रान्तः किमिति परतन्त्रो विमृशति ॥४॥

अन्वयः—क्षणिकधनलाभात् लज्जाया माने च स्वयशसि च कुले च विमुखः (भूत्वा) धनवति शरीर विक्रीय विचारातिक्रान्त परतन्त्र अधुना तदाज्ञा कुर्वाण. इति हितम् एतत् अहितम् इति कि विमृशति ? ॥४॥

भागुरायण—(अपने मन में) खेद की बात है मुझसे इस प्रकार स्नेह करने वाले कुमार (मलयकेतु) को भी धोखा दिया जाय। यह बड़ा कठिन तथा आश्चर्यजनक है। अथवा—

क्षणिक धन पाने के कारण, लज्जा तथा अपने यश और अपने कुल से भी विमुख होकर धनवान् के हाथ शरीर बेचकर विवेकहीन होकर परतंत्र हुआ और इस समय उस (धनवान्) की आज्ञा पालन करता हुआ मेरे समान व्यक्ति यह क्यों सोचे कि यह हित है और यह अहित है।

Bhagurayan (*To himself*)—Oh, woe, even Prince Malayaketu who is kind to me has to be deceived Alas, this is very difficult and strange Or—

Due to getting transient wealth, regardless of fame, shame, family, and self-respect, having sold the self to the rich, being devoid of self determination, and being the slave of another, why should a person like me think whether this is proper or improper, while carrying out his orders

संस्कृत व्याख्या—क्षणिकधनलाभात् अस्थिरसुखसम्पदा प्राप्य लज्जाया माने च कस्माच्चनापि कर्मणोऽपत्रपे स्वयशसि च स्वात्मकीर्तौ च कुले च वंशे च विमुख (भूत्वा) विरक्तीभूत धनवति धनयुक्ते पुरुषे शरीरम् स्वदेह विक्रीय विचारातिक्रान्त विरहितसदसद्विवेक परतत्र पराधीन अधुना इदानी तदाज्ञा

कुर्वाण स्वामिन नियोगमेव निकाम परिपालयन् इति हितम् इति अहितम् कि विमृशनि चिन्तयति।

टिप्पणी

(१) **आस्थानमण्डपे**—दरवार के मण्डप मे। आ+स्था+ल्युट्। (२) **अतिसघातव्य**—धोखा दिया जाने योग्य। (३) **क्षणिकधनलाभात्**—क्षणिक सम्पत्ति पाने के कारण। (४) **विचारातिक्रान्त**—जो बुरा और भला के विवेक करने से भी वचित है, अर्थात् जो बुरे और भले का विचार करने का अधिकारी नही है (क्योकि उसने अपना शरीर बेच दिया है और वह उस धनी के आश्रित है)। इस श्लोक मे काव्यलिग अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

(ततः प्रविशति प्रतीहार्यनुगतो मलयकेतुः।)

मलयकेतुः—(स्वगतम्) अहो! राक्षसं प्रति मे विकल्पबाहुल्यादाकुला बुद्धिर्न निश्चयमधिगच्छति। कुतः—

भक्त्या नन्दकुलानुरागदृढया नन्दान्वयालम्बिना
किं चाणक्यनिराकृतेन कृतिना मौर्येण सन्धास्यते।
स्थैर्य भक्तिगुणस्य वा विगणयन् किं सत्यसन्धो भवे-
दित्यारूढकुलालचक्रमिव मे चेतश्चिरं भ्राम्यति ॥५॥

अन्वय—कृतिना चाणक्यनिराकृतेन नन्दान्वयालम्बिना मौर्येण नन्दकुलानुरागदृढया भक्त्या सन्धास्यते किम्, वा भक्तिगुणस्य स्थैर्यम् विगणयन् सत्यसन्धो भवेत् किम् इति मे चेत आरूढकुलालचक्रम् इव चिर भ्राम्यति ॥५॥

हिन्दी अनुवाद—(प्रतीहारी के साथ मलयकेतु का प्रवेश)

मलयकेतु—(मन में) ओह राक्षस के सम्बन्ध में इतने संशय मन में उठ खडे हुए हैं कि कुछ पता नही चलता कि क्या होगा। क्योकि क्या नन्दवश के दृढ अनुराग से उत्पन्न भक्ति के कारण नन्दवशी चन्द्रगुप्त से, जो चाणक्य से परित्यक्त है, वह (राक्षस) संधि कर लेगा अथवा स्वामिभक्ति ही पर दृढ़ रह कर अंत तक सच्चा रहेगा। (यही बात सोचते हुए) मेरा चित्त कुम्हार के चक्र पर चढ़े हुए के समान चिरकाल से घूम रहा है।

(Enter Malayaketu followed by the warder)

Malayaketu (*To himself*)—Oh, so many doubts have arisen about Rakshas, that I do not reach any certainty about him. For—Due to the devotion from attachment to the family of

Nanda he may join Chandragupta who is abandoned by Chanakya or being loyal he may be true to his promise upto the end Thinking this my mind whirls ceaselessly like one mounted on a potter's wheel

संस्कृत व्याख्या—कृतिना कुशलेन चाणक्यनिराकृतेन चाणक्येन परित्यक्तेन नन्दान्वयालम्बिना नन्दवंशपुच्छभूतेन नन्दकुलवर्तिना मौर्येण चन्द्रगुप्तेन नन्दकुलानुरागदृढया नन्दकुले य अनुराग स्नेह तेन दृढा स्थिरा भक्त्या सेवया सधास्यते मयि करिष्यति किम् (माम् च मध्ये समुद्र परित्यक्ष्यति किम्) वा भक्तिगुणस्य स्थैर्यम् भक्ति अनुराग एव गुण तस्य स्थैर्यम् स्थिरताम् विगणयन् विचारयन् सत्यसन्ध सत्यप्रतिज्ञ भवेत् किम् इति अनेन प्रकारेण मे चेत. मन आरूढकुलालचक्रम् आरुढ कुलालचक्रम् कुम्भकारचक्रम् येन तादृशम् इव बहुकाल चिरात् भ्राम्यति सन्देहयुक्त भवति अर्थात् अनिशम् निश्चय न लभते।

टिप्पणी

(१) **विकल्पबाहुल्यात्**—अनेक विचारो (सन्देहो) के कारण से। (२) **कृतिना**—बुद्धिमान्। (३) **चाणक्यनिराकृतेन**—चाणक्य से परित्यक्त। यह विशेषण इस बात की ओर सकेत करता है कि चन्द्रगुप्त के यहाँ से चाणक्य के चले जाने के कारण राक्षस मत्री बन जाने की अभिलाषा से चन्द्रगुप्त से सन्धि कर सकता है। चाणक्येन निराकृत इति तेन। (४) **नन्दकुलान्वयालम्बिना**—नन्दकुल से सबध रखने वाला, यह इसलिए कहा कि चन्द्रगुप्त नन्द का ही पुत्र था जो कि शूद्रा माता से पैदा हुआ था। नन्दान्वयम् आलम्बते य स तेन। (५) **नन्दकुलानुरागदृढया भक्त्या**—नन्दकुल से अनुराग होने के कारण दृढ भक्ति से। (६) **सत्यसंधः**—सच्ची प्रतिज्ञा वाला, सत्या सधा प्रतिज्ञा यस्य स। (७) **आरूढकुलालचक्रम्**—कुभार के चाक पर चढे हुए के समान। जैसे कुभार के चक्र पर रक्खी हुई वस्तु घूमती है वैसे ही मेरा मन घूम रहा है। किसी निश्चय पर नही आ रहा है। उत्प्रेक्षा अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(प्रकाशम्) विजये! क्व भागुरायणः!

प्रतीहारी—कुमार! एसो क्खु कड़आदो णिक्कमिदुकामाणं मुद्दासंपदाणं अणु चिट्ठति। (कुमार! एष खलु कटकान्निष्क्रमितुकामानां मुद्रासम्प्रदानमधितिष्ठति।)

मलयकेतुः—विजये! मुहूर्त्तं निभृतपदसञ्चारा भव, यावदस्य पराङ्मुखस्यैव पाणिभ्यां नयने पिदधामि।

प्रतीहारी—जं कुमारो आणबेदि। (यत कुमार आज्ञापयति।)

भासुरकः—(प्रविश्य) अज्ज! एसो क्खु क्खवणओ मुद्दाणिमित्तं अज्जं पेक्खिदुमिच्छदि। (आर्य! एष खलु क्षपणको मुद्रानिमित्तमार्यं प्रेक्षितुमिच्छति।)

भागुरायणः—प्रवेशय।

भासुरकः—जं अज्जो आणबेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्तः।)

क्षपणकः—(प्रविश्य) साबकाणं धम्मबिद्धी होदु। (उपासकानां धर्मवृद्धिर्भवतु।)

भागुरायणः—(नाट्येनावलोक्य स्वगतम्) अये! राक्षसस्य मित्रं जीवसिद्धः। (प्रकाशम्) भदन्त! न खलु राक्षसस्य प्रयोजनमेव किञ्चिदुद्दिश्य गम्यते?

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) विजये, भागुरायण कहाँ है?

प्रतीहारी—कटक से बाहर जाने वालो को वे इस समय मुद्रा दे रहे है।

मलयकेतु—विजये, क्षण भर के लिए अपने पैरो की आवाज बन्द कर दो, जब तक मैं इनके बिना जाने इनकी आँखे बन्द कर दूँ।

प्रतीहारी—जैसी कुमार की आज्ञा।

भासुरक—(प्रवेश कर) क्षपणक मुद्रा लेने की इच्छा से आर्य को देखना चाहता है।

भागुरायण—बुलाओ।

भासुरक—जैसी आर्य की आज्ञा (बाहर चला जाता है)।

भासुरक—(प्रवेश कर) उपासकों के धर्म की वृद्धि हो।

भागुरायण—(देखने का अभिनय करके स्वगत) अरे यह तो राक्षस का मित्र जीवसिद्धि है। (प्रकट) भदन्त राक्षस के ही किसी प्रयोजन के उद्देश्य से तो नही जा रहे हो।

(*Aloud*) Vijaya, where is Bhagurayan?

Warder—He is at this time issuing pass to those who wish to go out of the camp.

मलयकेतुः—(स्वगतम्) मम च।

भागुरायणः—श्रोतुमिच्छामि।

मलयकेतुः—(स्वगतम्) अहमपि।

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—(कानो को बन्द कर) पाप शान्त हों, पाप शान्त हो। मैं वहाँ जाऊँगा जहाँ राक्षस या पिशाच का नाम भी न सुना जाता हो।

भागुरायण—मित्र के ऊपर आप का बड़ा भारी क्रोध है। तो राक्षस ने भदन्त का क्या अपराध किया है?

क्षपणक—उपासक, राक्षस ने मेरा कुछ नही बिगाडा, मैं अभागा स्वय अपने काम से लज्जित हूँ।

भागुरायण—भदन्त, तुम मेरे कुतूहल को बढा रहे हो।

मलयकेतु—(स्वगत) मेरा भी।

भागुरायण—सुनना चाहता हूँ।

मलयकेतु—(स्वगत) मैं भी।

Kshapanaka (Shutting his ears)—Begone Sin, Begone Sin Believer I will go to that place where even the name of Rakshas or Pishach is not heard

Bhagurayan—Mendicant, your anger against your friend is very great What harm has he done to the mendicant

Kshapanaka—Believer, Rakshas has done me no harm, I myself am ashamed of my deeds

Bhagurayan—Mendicant, you increase my curiosity

Malayaketu (To himself)—And mine too

Bhagurayan—I wish to hear

Malayaketu (To himself)—I too

टिप्पणी

(१) **प्रणयकोपः**—प्रेम के कारण क्रोध, बनावटी कोप, नाज-नखरो से भरा कोप। प्रणयकृत कोप प्रणयकोप (मध्य० स०)। (२) **अपराद्धम्**—अनिष्ट किया। अप+राध्+क्त भावे वा कर्मणि।

क्षपणकः—साबका! किं एदिणा असुणिदव्बेण सुदेण? (उपासक! किमेतेनाश्रोतव्येन श्रुतेन?)

भागुरायणः—भदन्त! यदि रहस्यं, तदा तिष्ठतु।

क्षपणकः—साबका! ण हि रहस्सं। (उपासक! न हि रहस्यम्।)

भागुरायणः—तर्हि कथ्यताम् ।

क्षपणकः—साबका ! णत्थि एदं, तधावि ण कधइस्सं अदिणिसंसं । (उपासक ! नास्तीदं, तथापि न कथयिष्याम्यतिनृशंसम् ।)

भागुरायणः—भदन्त ! अहमपि मुद्रां न दास्यामि ।

क्षपणकः—(स्वगतम्) युक्तमिदानीमर्थिने कथयितुम् । (प्रकाशम्) का गदी ? एसे णिवेदेमि सुणादु साबको । अत्थि दाव हगे अधण्णो पढ़मं पाड़लिउत्ते णिबसमाणो रक्खस्स मित्तत्तणं उबगदे । तहिं अवसले रक्खसेण गूढं बिसकण्णाप्पओअं समुप्पादिअ घादिदे देवे पब्बदीसले । (का गतिः ? एष निवेदयामि शृणोतु उपासकः । अस्ति तावदहमधन्यः प्रथमं पाटलिपुत्रे निवसन् राक्षसस्य मित्रत्वमुपगतः । तस्मिन्नवसरे राक्षसेन गूढं विषकन्याप्रयोगं समुत्पाद्य घातितो देवः पर्वतेश्वरः ।)

मलयकेतुः—(सवाष्पमात्मगतम्) कथं राक्षसेन घातितस्तातो न चाणक्येन ?

भागुरायणः—भदन्त ! ततस्ततः ?

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—उपासक, उस न सुनने योग्य बात के सुनने से क्या लाभ ?

भागुरायण—यदि गोपनीय हो तो न कहिये ।

क्षपणक—उपासक गोपनीय नही है ।

भागुरायण—तो कहिये ।

क्षपणक—उपासक, यह गोपनीय नही है फिर भी यह कठोर बात है । मै न कहूँगा ।

भागुरायण—भदन्त, तो मै भी मुद्रा (पारपत्र) न दूँगा ।

क्षपणक—(मन में) इस समय इस प्रार्थी को सुनाना उचित होगा । (प्रकट) क्या चारा है, लो बताता हूँ, सुनिये । मै अभागा पाटलिपुत्र में रहता हुआ राक्षस का मित्र बन गया । उसी समय राक्षस ने विषकन्या का प्रयोग करके देव (महाराज) पर्वतेश्वर को मरवा डाला ।

मलयकेतु—(आँसू के साथ मन में) क्या राक्षस ने पिता जी को मरवाया चाणक्य ने नही ?

भागुरायण—भदन्त, तब क्या हुआ ?

Kshapanaka—Believer, what is the use of hearing what should not be heard

Bhaguirayan—If it is a secret, do not tell

Kshapanaka—It is not a secret

Bhagurayan—Then tell me

Kshapanaka—It is not confidential, yet I shall not relate this cruel event

Bhagurayan—Then I too will not give you the passport

Kshapanaka (*To himself*)—It is proper that I should tell it at request (*Aloud*) What alternative is there Now I tell, let believer hear it Formerly I, the unlucky one, lived in Pataliputra and befriended Rakshas During that period Parvataka was caused to be killed by Rakshas by devising the means of the poison-girl

Malayaketu (*With tears, to himself*)—Oh, was father done to death by Rakshas and not by Chanakya

Kshapanaka—Mendicant, what next ?

क्षपणकः—तदो हगे रक्खसस्स मित्तं कदुअ चाणक्कहदएण सणिकालं णअरादो णिव्वासिदो। दाणीं पि रक्खसेण अणेकअकज्जकुसलेण किंपि तादिसं आलहीअदि, जेण हगे जीअलोआदो णिक्कासिज्जेमि। (ततोऽहं राक्षसस्य मित्रं कृत्वा चाणक्यहतकेन सनिकारं नगरान्निर्वासितः। इदानीमपि राक्षसेनानेकाकार्यकुशलेन किमपि तादृशमारभ्यते, येनाहं जीवलोकान्निष्कासिष्ये।)

भागुरायणः—भदन्त ! प्रतिश्रुतराज्यार्धमयच्छता चाणक्यहतकेनेदमकार्यमनुष्ठितं न राक्षसेनेति श्रुतमस्माभिः।

क्षपणकः—(कर्णौ पिधाय) सन्तं पावं। सावका ! चाणक्को बिसकण्णाए णामपि ण जाणादि। तेण ज्जेव दुट्टबुद्धिणा रक्खसेण एसा अकज्जसिद्धी किदा। (शान्तं पापम्। उपासक ! चाणक्यो विषकन्याया नामापि न जानाति। तेनैव दुष्टबुद्धिना राक्षसेनैषाऽकार्यसिद्धिः कृता।)

भागुरायणः—भदन्त ! कष्टमिदमियं मुद्रा दीयते, एहि कुमारं संश्रावयावः।

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—तब मैं राक्षस का मित्र होने के कारण दुष्ट चाणक्य के द्वारा अपमानपूर्वक नगर से बाहर निकाल दिया गया। अभी भी अनेक प्रकार के कुकर्मों में निपुण राक्षस ने कुछ ऐसा काम प्रारम्भ कर दिया है, जिससे मैं संसार से निकाल दिया जाऊँगा।

भागुरायण—भदन्त, हम लोगों ने सुना है कि आधा राज्य देने का वादा करके दुष्ट चाणक्य ने, जो अब राज्य नहीं देना चाहता, यह कुकर्म करवाया है।

क्षपणक—(कानों को बन्द कर) पाप शान्त हो, पाप शान्त हो। उपासक, चाणक्य तो विषकन्या का नाम भी नहीं जानता। उसी दुष्ट बुद्धि वाले राक्षस के द्वारा यह कुकर्म किया गया।

भागुरायण—भदन्त, यह तो दुःख की बात है, यह मुद्रा देता हूँ। चलो, हम दोनों यह बात कुमार को सुनावें।

Kshapanaka—Then I was turned out of the city with insult by the wicked Chanakya, for I was a friend of Rakshas Even at this time, Rakshas, who is clever at misdeeds of all kinds, has begun such deeds as to drive me out of the world

Bhagurayan—Mendicant, this has been heard by us that this evil deed was done by wicked Chanakya, who did not wish to give the promised half of the kingdom, and not by Rakshas

Kshapanaka (*Shutting his ears*)—Begone Sin Chanakya did not know even the name of the poison-girl This evil deed was performed by wicked Rakshas

Bhagurayan—Mendicant, this is very sad The pass is being issued Let us both inform the prince

टिप्पणी

(१) **घातितः पर्वतेश्वरः**—चाणक्य ने वह बात प्रसिद्ध करा दी थी कि पर्वतेश्वर का वध राक्षस ने विषकन्या द्वारा कराया है। यह बात राक्षस को मालूम थी पर मलयकेतु को नहीं मालूम थी। जीवसिद्धि चाणक्य का गुप्तचर है और वह राक्षस का मित्र बनकर उसके साथ रहता था। वह इसी अवसर की ताक में था कि मलयकेतु के कानों में यह बात पहुँचा दे कि पर्वतक की हत्या राक्षस ने कराई है ताकि राक्षस और मलयकेतु में वैमनस्य हो जाय। अब उसे ऐसा करने का अवसर मिल गया। (२) **घातित**—हन् णिच् । क्त। (३) **मित्रम् कृत्वा**—मित्र समझ कर, पहले अंक में यह संकेत आ चुका है कि जीवसिद्धि

राक्षस का विश्वासपात्र मित्र बन गया था। (४) **सनिकारम्**—अपमान के साथ। (५) **किमपि तादृशम्**—भाव यह है कि गुप्त रूप से विषकन्या का प्रयोग करके राक्षस ने पहले पर्वतक को मरवाया था। अब वह मलयकेतु के पीछे पड़ा हुआ है। वह उसे (मलयकेतु को) भी मरवाना चाहता है। (६) **प्रति-श्रुतराज्यार्धम्**—वादा किए हुए आधे राज्य को। (६) **अयच्छता**—न देकर।

मलयकेतुः—(उपसृत्य)

श्रुतं सखे श्रवणविदारणं वचः सुहृन्मुखाद्रिपुमधिकृत्य भाषितम्।
पितुर्वधव्यसनमिदं हि येन मे चिरादपि द्विगुणमिवाद्य वर्धते ॥६॥

अन्वय—सखे रिपुमधिकृत्य भाषित श्रवणविदारण वच सुहृन्मुखात् श्रुतम् येन इद मे पितुर्वधव्यसन चिरादपि अद्य द्विगुणमिव वर्धते।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—(आगे बढकर) मित्र, शत्रु को लक्ष्य करके कानो को विदीर्ण करने वाला वचन उसके (राक्षस) के मित्र के मुँह से सुना जिससे मेरा पितृवध (पिता के मरने) का दु.ख बहुत दिन बीतने पर भी आज मानो दूना हो रहा है।

Malayaketu (*Advancing*)—Friend, I have heard the earsplitting words, spoken with reference to the enemy from the mouth of his (*Rakshas*') friend The sorrow of the murder of father, even after such a long time, has been doubled, as if it were, to-day

संस्कृत व्याख्या—सखे मित्र रिपुम् शत्रुम् अधिकृत्य उद्दिश्य भाषितम् उक्तम् श्रवणविदारणम् कर्णभेदक वच सुहृन्मुखात् राक्षसस्य सुहृद मित्रस्य जीवसिद्धे-रित्यर्थ आननात् श्रुतम् कर्णगोचरम् अभूत् येन कारणेन इदम् अनुभूयमानम् मे मम पितुर्वधव्यसनम् जनकस्य विनाशजन्यदु खम् चिरादपि चिरकालजातमपि अद्य अस्मिन् दिने द्विगुणमिव अधिकमिव वर्धते वृद्धि गच्छति।

टिप्पणी

(१) **श्रवणविदारणम्**—कानो को विदीर्ण करने वाला। वि+दॄ+णिच्+ल्युट् कर्तरि बाहुलकात्=विदारणम्। श्रवणयो विदारणम्। (२) **सुहृन्मुखात्**—मित्र के मुख से। अर्थात् यह बात मैंने राक्षस के मित्र क्षपणक के मुख से सुनी है। अत अविश्वास करने का कोई कारण नही है। इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा अलकार तथा रुचिरा छन्द है।

क्षपणकः—(स्वगतम्) अये श्रुतं मलयकेतुहतकेन ! ! कृतार्थोऽस्मि । (इति निष्क्रान्तः ।)

मलयकेतुः—(प्रत्यक्षवदाकाशे लक्ष्यं बद्ध्वा) राक्षस ! युक्तमिदम् ।

मित्रं ममायमिति निर्वृतचित्तवृत्ति
विश्रम्भतस्त्वयि निवेशितसर्वकार्यम् ।
तातं निपात्य सह बन्धुजनाक्षितोयै-
रन्वर्थतोऽपि ननु राक्षस ! राक्षसोऽसि ॥७॥

अन्वय—ननु राक्षस ! अय मम मित्रम् इति विश्रम्भत त्वयि निवेशित-सर्वकार्यम् निर्वृतचित्तवृत्ति तात बन्धुजनाक्षितोयै सह निपात्य अन्वर्थतोऽपि राक्षसोऽसि ॥७॥

हिन्दी अनुवाद—क्षपणक—(मन में) अभागे मलयकेतु ने सुन लिया। मेरा तो काम बन गया। (बाहर चला जाता है)

मलयकेतु—(आकाश की ओर देखता हुआ मानो राक्षस ही की ओर देख रहा है) राक्षस, ठीक है ! मेरे पिता यह समझकर कि तुम उनके मित्र हो और तुम पर विश्वास करके सारा कार्य भार तुम्हे सौंपकर वे निश्चिन्त हो गए थे। उन पिता को बन्धुओ के आँसुओ के साथ धराशायी करके तुम नाम के ही नही बल्कि वास्तव मे भी राक्षस हो।

Kshapanaka (*To himself*)—The wretched Malayaketu has heard it My purpose is served (*Exit*)

Malayaketu—(*Fixing his gaze in the sky as if on some thing visible*) Rakshas, Rakshas, this is befitting indeed Oh Rakshas, you are literally Rakshas by letting my father fall down on the ground along with the tears of the kindred, the father, who had entrusted all affairs to you in the confidence that you were his friend and had his mind's care ceased

सस्कृत व्याख्या—ननु आर्य भो राक्षस अयम् मम मित्रम् एष राक्षस मम सुहृत् इनि विश्रम्भत एवविधात् विश्वासात् त्वयि राक्षसे निवेशितसर्वकार्यम् निवेशितम् समर्पितम् सर्वकार्य्यम् निखिल राज्यतत्रम् येन तादृशम् अतएव निर्वृतचित्तवृत्तिम् निर्वृता स्वस्था चित्तवृत्ति यस्य स तम् तात जनक बन्धु-जनाश्रुतोयै बन्धुजनानाम् स्वगणानाम् अश्रुतोयै नेत्रजलै सह निपात्य धरा

शायिन कृत्वा अन्वर्थत अपि अभिधेयधारणेन च राक्षस असि न केवल नाम्ना त्व राक्षस परन्तु अनेन कर्मणा यथार्थत राक्षस सवृत्तोऽसि।

टिप्पणी

(१) **कृतार्थोऽस्मि**—कृतकृत्योऽस्मि। चाणक्य ने प्रथम अक मे इमी क्षपणक के लिए कहा है कि 'तेनेदानी महत्प्रयोजनमनुष्ठेय भविष्यति।' वह प्रयोजन अव सिद्ध हो गया। मलयकेतु इस समय राक्षस का प्रबल शत्रु वन गया है। इसीलिए क्षपणक कहता है—'कृतार्थोऽस्मि'। (२) **विश्रम्भत**—विश्वास के कारण। (३) **निवेशितसर्वकार्य्यम्**—सारा कार्य्य (तुमको) सौप दिया था जिमने (उसके)। (४) **बंधुजनाक्षितोयैः**—कुटुम्बियो के आँसू के साथ। (५) **निपात्य**—हननकर, मार कर। (६) **अन्वर्थतः**—यथार्थ मे। कहने का मतलब है कि नाम तो तुम्हारा राक्षस था ही कर्म भी तुमने राक्षस का कर दिया। अनुगत अर्थम् अन्वर्थ तेन। यहाँ "तृतीयायास्तसि" सूत्र से तसि प्रत्यय होने पर अन्वर्थत बना। इसमे सहोक्ति अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

भागुरायणः—(स्वगतम्) रक्षणीया राक्षसस्य प्राणा इत्यार्यादेशः। भवत्वेवं तावत्। (प्रकाशम्) कुमार! अलमावेगेन। आसनस्थं कुमारं किञ्चिद्विज्ञापयितुमिच्छामि।

मलयकेतुः—(उपविश्य) सखे! किमसि वक्तुकामः?

भागुरायणः—कुमार! खल्वर्थशास्त्रव्यवहारिणामर्थवशादरिमित्रोदासीनव्यवस्था न लौकिकानामिव स्वेच्छावशात्। यतस्तस्मिन् काले सर्वार्थसिद्धिं राजानमिच्छतो राक्षसस्य चन्द्रगुप्तादपि बलीयस्तया सुगृहीतनामा देवः पर्वतेश्वर एवार्थपरिपन्थी महानरातिरासीत्। तस्मिंश्च काले राक्षसेनेदमनुष्ठितमिति नातिदोषमत्र पश्यामि। पश्यतु कुमारः।

भागुरायण—(मन में) आर्य (चाणक्य) का आदेश है कि राक्षस के प्राणो की रक्षा की जाय। तब तक ऐसा हो। (प्रकट) कुमार क्रोध न करें। आप आसन पर बैठ जायँ तो कुछ कहना चाहता हूँ।

मलयकेतु—(बैठकर) मित्र, क्या कहना चाहते हो?

भागुरायण—नीति शास्त्र को मानने वाले साधारण जनों की भाँति किसी को अपना मित्र या शत्रु अथवा तटस्थ नहीं बनाते। उनकी व्यवस्था मनमानी

नही होती बल्कि प्रयोजन वश होती है, क्योकि उस समय सर्वार्थसिद्धि को राजा बनाने की इच्छा करते हुए राक्षस के लिए चन्द्रगुप्त से भी बलवान् प्रातः-स्मरणीय महाराज पर्वतक ही स्वार्थ मे बाधक लग रहे थे। उस समय राक्षस ने यह (पर्वतेश्वर का वध) किया। अत इसमे उसका कोई ज्यादा दोष नही है। कुमार देखे।

Bhagurayan (*To himself*)—The Noble Sire (*Chanakya*) has commanded that the life of Rakshas should be saved So let it be (*Aloud*) Prince do not be excited I wish to say something to you when you are seated

Malayaketu (*Sitting down*)—Friend what do you wish to say

Bhagurayan—Those, who are diplomats, make friends foes, or neutrals according to consideration of interest and not from the sway of personal inclination as the ordinary people do At that time Rakshas wanted to make Sarvarthsiddhi the king and Sire Parvateshwar of blessed name, who was stronger even than Chandragupta, was a great bar in his purpose and so Rakshas did this (*murdered him*) I think that Rakshas is not to blame in it Prince, mark—

टिप्पणी

(१) **अर्थशास्त्रव्यवहारिणाम्**—नीतिशास्त्र के मानने वालो का। अर्थस्य धनस्य अत्र राजनीते शास्त्रम्, तेन व्यवहरन्तीति अर्थशास्त्र+वि+अव=हृ+णिनि कर्तरि ताच्छील्ये। (२) **अर्थवशात्**—प्रयोजन वश (न कि मनमानी स्वेच्छावशात्)। (३) **अरिमित्रोदासीनव्यवस्था**—शत्रु, मित्र और उदासीन की व्यवस्था अरयश्च मित्राणि च, उदासीनाश्च इति (द्वन्द्व), तेषा व्यवस्था। (४) **अर्थपरिपथी**—काम का बाधक। परिपथी—शत्रु।

मित्राणि शत्रुत्वमिवानयन्ती मित्रत्वमर्थस्य वशाच्च शत्रून्।
नीतिर्नयत्यस्मृतपूर्ववृत्तं जन्मान्तरं जीवत एव पुंसः॥८॥

अन्वय—अर्थस्य वशात् नीति अस्मृतपूर्ववृत्त मित्राणि शत्रुत्व शत्रून् च मित्रत्वम् इव आनयन्ती जीवत एव पुस जन्मान्तर नयति॥८॥

हिन्दी अनुवाद—नीति शास्त्र के नियमानुसार प्रयोजन वश होकर मित्र शत्रु हो जाते है और शत्रु मित्र बन जाते है तथा वे इस जन्म की पूर्व स्मृतियो को इस प्रकार भूल जाते हैं मानो इन्होने काया पलट कर ली है।

According to principles of policy due to self-interest, friends become enemies and enemies become friends and they (*people*) forget the previous doing of this very life as if the whole thing is changed completely

संस्कृत व्याख्या—अर्थस्य कार्यस्य वशात् अनुरोधात् नीति नयव्यवहार अस्मृतपूर्ववृत्तम् न स्मृत पूर्ववृत्त पूर्वकृततत्तत्कार्य येनैवम्भूतम् मित्राणि सुहृद शत्रुत्व शत्रून् न अरीन् च मित्रत्वम् सुहृत्त्वम् इव आनयन्ती कुर्वन्ती जीवत एव अमृतान् एव पुम पुरुषान् जन्मान्तरम् अन्यज्जन्म नयति प्रापयति। अर्थात् नयजीवी प्रयोजनानुरोधात् मित्रस्य मित्रत्व विस्मृत्य शत्रुमिव त पश्यति। तत् यदि तदानी राक्षस मित्रे एव पर्वतेश्वरे अमित्रवदाचरितवान् स दोषो नय-प्रयोगस्य न राक्षसस्य इति पश्यतु कुमार ।

टिप्पणी

(१) **अस्मृतपूर्ववृत्तम्**—जिसमे पूर्व वृत्तान्त का स्मरण नही रह जाता। जिस प्रकार पूर्वजन्म का वृत्तान्त दूसरे जन्म मे स्मरण नही रहता उसी प्रकार राजनीति मे पहले के किए हुए उपकार और अपकार सब भूल जाते है। इसी से शत्रु को लोग मित्र बना लेते है और मित्र को शत्रु। अस्मृत पूर्ववृत्तम् यस्मिन् तत्। (२) **जन्मान्तरम्**—अन्यज्जन्म जन्मान्तरम्। दूसरा जन्म। इसमे विषमालकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है। छन्द का लक्षण—'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ ग ।

तदत्र वस्तुनि नोपालभ्यो राक्षसः, आ नन्दराज्यलाभा-दनुग्राह्यश्च। परतस्तस्य परिग्रहे परित्यागे वा कुमारः प्रमाणम्।

मलयकेतुः—एवं भवतु। सखे! सम्यक् दृष्टवानसि। अमात्यस्य वधे प्रकृतिक्षोभः स्यात् एवञ्च सन्दिग्धो विजयः स्यात्।

पुरुषः—(प्रविश्य) जेदु कुमारो। अअं अज्जस्स गुम्म-ट्ठाणाधिकिदो दीहचक्खू अज्जं विण्णवेदि—एसो क्खु अह्मेहिं कड़आदो णिक्कमन्तो अग्गहीदमुद्दो सलेहो पुरिसो गहीदो, ता पच्चक्खीकरेदु णं अज्जो त्ति। (जयतु कुमारः।

अयमार्यस्य गुल्मस्थानाधिकृतो दीर्घचक्षुरार्यं विज्ञापयति—एष खल्वस्माभिः कटकान्निष्क्रामन्नगृहीतमुद्रः सलेखः पुरुषो गृहीतस्तत् प्रत्यक्षीकरोत्वेनमार्य इति)

भागुरायणः—भद्र ! प्रवेशय ।

पुरुषः—जं अज्जो आणवेदि । (यदार्य आज्ञापयति ।)

(इति निष्क्रान्तः।)

हिन्दी अनुवाद—तो इस विषय मे राक्षस को भला-बुरा न कहना चाहिए। जब तक नन्द का राज्य नही मिल जाता तब तक तो उसे मिलाकर ही रखना ठीक है। इसके बाद उसे रखना या निकालना कुमार की इच्छा पर है।

कुमार—ऐसा ही सही। मित्र, अच्छा सोचा। अमात्य के वध करने से प्रजा में विद्रोह उठ खडा हो जायगा और हमारी विजय भी सदेह युक्त हो जायगी।

नौकर—(प्रवेश कर) कुमार की विजय हो। आर्य के प्रधान शिविरपाल दीर्घचक्षु आर्य से निवेदन करते है कि बिना मुद्रा (पास) के कटक से निकलते हुए, पत्र के सहित इस व्यक्ति को हम लोगों ने पकडा है। इसलिए आर्य इसको देखें।

भागुरायण—भद्र, उसे अन्दर ले आओ।

नौकर—जैसी आर्य की आज्ञा (चला जाता है)।

So in this matter Rakshas is not to blame, but has to be favoured so long as the kingdom of Nanda is not acquired Thereafter the prince may either retain him or dismiss him

Malayaketu—Let it be so Friend you have well thought. The execution of the minister may lead to discontentment among the people and our victory would be doubtful

Attendant (Entering)—Let Prince prosper Noble Sir, Dirghachakshu, in-charge of the piquet-station thus reports This man, with a letter, was arrested by us while going out of the camp without a pass, so let Noble Sir see him

Bhagurayan—Good man, bring him in

Attendant—As the Noble Sir commands (*Exit*)

टिप्पणी

(१) **प्रकृतिक्षोभ**—प्रजा मे खलबली। यहाँ उस प्रजावर्ग की ओर सकेत है जो नन्द और राक्षस मे अनुरक्त है। (२) **अगृहीतमुद्र**—बिना मुद्रा (पास) के। न गृहीता मुद्रा येन स अगृहीतमुद्र ब० व्री०। (२) **गुल्मस्थानाधिकृतः**—शिविर का मुख्य द्वारपाल। गुल्मस्थाने अधिकृत इति गुल्मस्थानाधिकृत ।

(ततः प्रविशति पुरुषेणानुगम्यमानः संयतः सिद्धार्थकः ।)

सिद्धार्थकः—(स्वगतम्)

तिप्पन्तीए गुणेसुं दोसेसु परंमुहं करन्तीए ।
अह्मारिसजणणीए प्पणमामो सामिभत्तीए ॥६॥
(तृप्यन्त्यै गुणेषु दोषेषु पराङ्मुखं कुर्वन्त्यै ।
अस्मादृशजनन्यै प्रणमामः स्वामिभक्त्यै ॥६॥)

अन्वय—गुणेषु तृप्यन्त्यै दोषेषु पराङ्मुख कुर्वन्त्यै अस्मादृशजनन्यै स्वामिभक्त्यै प्रणमाम ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—(नौकर के साथ बँधा हुआ सिद्धार्थक प्रवेश करता है) सिद्धार्थक—(मन में) गुणो से संतुष्ट और दोषो से विमुख करने वाली हम लोगों की माता के समान स्वामिभक्ति को प्रणाम है।

(Then enter Siddharthaka fettered and followed by an attendant)

Siddharthaka (*To himself*)—We bow to the devotion to our master which is like a mother and draws us towards her virtues and causes us to shut our eyes to her faults

संस्कृत व्याख्या—गुणेषु स्वामिभक्तिरूपाया जनन्या आत्मगुणेषु विषये तृप्यन्त्यै सतुष्टायै दोषेषु तस्या एव आत्मदोषेषु अवगुणेषु पराङ्मुखम् कुर्वन्त्यै विदधत्यै अस्मादृशजनन्यै अस्मादृशानाम् मद्विधानाम् जनन्यै अन्नदानपोषणकर्मभिः मातृरूपायै स्वामिभक्त्यै प्रभुपरायणतायै प्रणमाम नमस्कुर्म । अर्थात् यथा जनन्या गुणा एव ग्राह्या दोषा उपेक्ष्या जननीरूपाया मे राजभक्तेरपि तथा। तत् राजभक्त्या प्रेरित सदोषमपि अद्य राक्षसवञ्चनकर्म करिष्ये।

पुरुषः—(उपसृत्य) अज्ज ! अअं सो पुरिसो। (आर्य ! अयं स पुरुषः।)

भागुरायणः—(नाट्येनावलोक्य) भद्र ! किमयमागन्तुकः, आहोस्विदिहैव कस्यचित्परिग्रहः ?

सिद्धार्थकः—अज्ज ! अहं क्खु अमच्चरक्खसस्स सेवओ। (आर्य ! अहं खल्वमात्यराक्षसस्य सेवकः।)

भागुरायणः—भद्र ! तत् किमर्थमगृहीतमुद्रः कटकान्निष्क्रामसि ?

सिद्धार्थकः—अज्ज ! कज्जगोरबेण तुवराबिदोह्मि । (आर्य ! कार्यगौरवेण त्वरायितोऽस्मि ।)

भागुरायणः—कीदृशं तत्कार्यगौरवं, यद्राजशासनमुल्लङ्घयसि ?

मलयकेतुः—सखे भागुरायण ! लेखमुपानय ।

सिद्धार्थकः—(भागुरायणाय लेखमर्पयति ।)

भागुरायणः—(सिद्धार्थकहस्ताल्लेखं गृहीत्वा मुद्रां दृष्ट्वा) कुमार ! अयं लेखः, राक्षसनामाङ्कितेयं मुद्रा ।

मलयकेतुः—मुद्रां परिपालयन्नुद्घाट्य दर्शय ।

भागुरायणः—(तथा कृत्वा दर्शयति ।)

पुरुष—(समीप जाकर) आर्य, यह वही व्यक्ति है ।

भागुरायण—(देखने का अभिनय करके) भद्र, (आप कौन है) क्या आप कोई आगन्तुक है या यही किसी के सेवक हैं ?

सिद्धार्थक—आर्य, मैं अमात्य राक्षस का सेवक हूँ ।

भागुरायण—तब तुम बिना मुद्रा के शिविर के बाहर क्यो जा रहे हो ?

सिद्धार्थक—आर्य, कार्य की गुरुता के कारण जल्दी मे था ।

भागुरायण—वह कैसा आवश्यक कार्य है, जिसके कारण राजशासन का उल्लंघन कर रहे हो ?

मलयकेतु—मित्र भागुरायण, लेखपत्र तो ले आओ ।

सिद्धार्थक—(भागुरायण को लेखपत्र देता है ।)

भागुरायण—(सिद्धार्थक के हाथ से लेख लेकर और मुद्रा देखकर) कुमार, यह पत्र तो राक्षस की मुहर से अंकित है ।

मलयकेतु—मुद्रा (मुहर) ज्यों का त्यो रहे और पत्र खोलो और दिखाओ ।

भागुरायण—(वैसा करके दिखाता है)

Attendant (*Approaching*)—Noble Sir, this is the man

Bhagurayan (*Acting observation*)—Noble Sir, are you a new arrival or the servant of some one in this very place ?

Siddharthaka—Noble Sir, I am the servant of Minister Rakshas

Bhagurayan—Gentleman, why do you go out of the camp without a pass ?

Siddharthaka—Noble Sir, I am being hastened by the gravity of my work

Bhagurayan—What kind of gravity is it which makes you disobey the royal command

Malayaketu—Friend, Bhagurayan, bring the letter to me

Siddharthaka—(*Hands over the letter to Bhagurayan*)

Bhagurayan—(*Taking the letter from Siddharthaka's hand and seeing the seal*)—Prince, this is the letter and it is marked with the seal of Rakshas

Malayaketu—Show me having opened it without breaking the seal

Bhagurayan—(*Shows the letter doing as was directed*)

मलयकेतुः——(गृहीत्वा वाचयति ।) 'स्वस्ति, यथास्थानं कुतोऽपि, कोऽपि, कमपि, पुरुषविशेषमवगमयति । अस्मद्विपक्षं निराकृत्य दर्शिता कापि सत्यता सत्यवादिना । साम्प्रतमेषामपि प्रथममुपन्यस्तसन्धीनामस्मत्सुहृदां, पूर्वप्रतिज्ञातसन्धिपरिपणवस्तुप्रतिपादनप्रोत्साहनेन सत्यसन्धः, प्रीतिमुत्पादयितुमर्हति । एते ह्येवमनुगृहीताः सन्तः स्वाश्रयविनाशेनैवोपकारिणमाराधयिष्यन्ति । अविस्मृतमप्येतत्——सत्यवतः स्मारयामः । एतेषां मध्ये केचिदरेः कोषदन्तिभ्यामर्थिनः, केचिद् विषयेणेति । अस्मान् प्रत्यलङ्कारत्रयञ्च, यत् सत्यवताऽनुप्रेषितं तदुपगतम् । अस्माभिरपि लेखस्याशून्यार्थं किञ्चिदनुप्रेषितं तदुपगमनीयं, वाचिकञ्चाप्ततमात् सिद्धार्थकाच्छ्रोतव्यम्' इति ।

हिन्दी अनुवाद——मलयकेतु——(पत्र लेकर पढ़ता है) यथा स्थान कही से भी कोई भी, किसी भी विशिष्ट पुरुष से निवेदन करता है कि हमारे शत्रु को निकाल कर आपने, जो सत्यवादी है, सत्यता का परिचय दिया है । अब हमारे इन मित्रो को भी, जिनके साथ पहले से ही संधि हो चुकी है, पहली प्रतिज्ञात संधि के मूल्य स्वरूप वस्तु देने के प्रोत्साहन के द्वारा सत्य प्रतिज्ञा वाले आप प्रसन्न करने योग्य है । जब इनके ऊपर इस प्रकार का अनुग्रह हो जायगा तो अपने आश्रय के विनाश होने के कारण उपकार करने वाले आप की सेवा करने लगेंगे । सत्यवक्ता आप को हम यह बात भी स्मरण करा रहे है, यद्यपि वह भुलाई नहीं गई है । इनमें तो कुछ ऐसे है जो शत्रु के हाथी व धन के इच्छुक है और

कुछ राज्य के। आप सत्यवादी ने हमारे लिए जो तीन आभूषण भेजे थे, वे मिल गये। हमने भी पत्र की रिक्तता को हटाने के लिए कुछ भेजा है। उसे स्वीकार करिये और जो मौखिक सदेश है वह आप विश्वासपात्र सिद्धार्थक से सुन लें।

Malayaketu (*Takes and reads the letter*)—May good come to you Some one from somewhere tells a certain impoitant person in the propei place in this way —Your truthful self has shown great honesty by removing our enemy True to your promise as you aie, it is proper for you now by encouragement regarding the piice for peace which was alieady promised to please these friends of mine to whom peace was foimerly suggested Being thus favoured, they will serve you, the benefactor, due to their present shelter being destroyed Though your truthful self has not forgotten, yet it is reminded that among these there are some who aie desirous of the elephants and the treasure of the enemy, some want his territories The three ornaments sent by your truthful self have been received I too am sending a trifing accomplishment to the letter and it should be accepted Verbal message has to be heard from the most trustworthy Siddharthaka

संस्कृत व्याख्या—स्वस्ति कल्याण भूयात् यथास्थान स्थानमनतिक्रम्य उचितस्थानात् इत्यर्थ कुतोऽपि कस्मादपि स्थानात् कमपि पुरुषविशेषम् विशिष्ट जनम् अवगमयति निवेदयति। अस्मद्विपक्षम् मम शत्रु निराकृत्य निष्कास्य सत्यवादिना भवता कापि महती सत्यता दर्शिता प्रकटीकृता। साम्प्रतम् इदानीम् एषामपि प्रथममुपन्यस्तसधीनाम् प्रथमम् प्राक् उपन्यस्त कृत सधि यै तेषाम् अस्मत्सुहृदाम् मम मित्राणाम् पूर्वप्रतिज्ञातसन्धिपरिपणवस्तुप्रतिपादनप्रोत्साहनेन पूर्वमादौ प्रतिज्ञातस्य सधे परिपण मूल्यभूत यत् वस्तु तस्य प्रतिपादन समर्पणम् तेन प्रोत्साहनम् तेन अर्थात् पूर्वप्रतिज्ञातसन्धिमूल्यभूतवस्तुप्रतिदानेन प्रोत्साहन कृत्वा सत्यसध सत्यप्रतिज्ञ भवान् प्रीतिम् आनन्दम् उत्पादयितुम् जनयितुम् अर्हति योग्यो भवति। एते उपर्युक्ता एवमनेन प्रकारेण अनुगृहीता अनुकम्पिता सन्त भवन्त स्वाश्रयविनाशेन एव स्वाश्रयनाशात् उपकारिणम् हितकारकम् त्वाम् आराधयिष्यन्ति पूजयिष्यन्ति। अविस्मृतमपि विस्मृतिम् न गतमपि एतत् इदम् सत्यवत सत्यवादिन भवत, स्मारयाम स्मृतिपथ कुर्म। एतेषा मध्ये केचित् अरे शत्रो कोषदन्तिभ्याम् धनहस्तिभ्याम् अर्थिन धनिन केचिद् विषयेण इति राज्येन। अस्मान् प्रति अलकारत्रय त्रीणि अलकरणानि

यत् यानि अनुप्रेषित प्रहितानि तत् तानि अलङ्करणानि उपगतानि। अस्माभि अपि लेखस्य अशून्यार्थम् किचित् किमपि वस्तु अनुप्रेषित प्रहित तत् उपगमनीयम् स्वीकर्तव्यम्। वाचिकम् च मौखिक सन्देशम् आप्ततमात् अतिविश्वासपात्रान् सिद्धार्थकात् श्रोतव्यम् आकर्णनीयम्।

टिप्पणी

(१) **परिग्रहः**—सेवक। परिगृह्यते इति परिग्रह परि+ग्रह्+अप् कर्मणि। भागुरायण और सिद्धार्थक दोनो चाणक्य के गुप्तचर है और एक दूसरे को जानते भी है फिर भी भागुरायण अपरिचित के समान व्यवहार कर रहा है ताकि मलयकेतु उनकी चाल समझ न सके। (२) **उद्घाटच**—खोलकर, उद्+घट्+णिच्+ल्यप्। (३) **सत्यवतः स्मारयामः**—आप सत्यवादी को स्मरण कराते है। यहाँ पर "अधीगर्थदयेशा कर्मणि" से षष्ठी हुई है। (४) **अस्मत्सुहृदाम्**—प्रथम अक के २० वे श्लोक मे कहे गये कौलूत आदि की ओर सकेत है। (५) **अशून्यार्थम्**—शून्य हाथ न करने के लिये अर्थात् राजा को खाली हाथ पत्र न भेजना चाहिए अत पत्र के साथ कुछ भेज रहा हूँ। लिखा भी है "रिक्तपाणिर्न पश्येत्तु राजान देवता गुरुम्"। (६) **वाचिकम्**—जबानी सदेश। वाच्+ठक् (ठक् का इक आदेश हो गया) "ठस्येक" इस सूत्र से।

मलयकेतुः—भागुरायण! कीदृशो लेखः?

भागुरायणः—भद्र सिद्धार्थक! कस्यायं लेखः?

सिद्धार्थकः—अज्ज! ण आणामि। (आर्य! न जानामि।)

भागुरायणः—हे धूर्त! लेखो नीयते, न च ज्ञायते कस्यायमिति। सर्वं तावत्तिष्ठतु। वाचिकं त्वत्तः केन श्रोतव्यम्?

सिद्धार्थकः—(भयं नाटयन्) तुह्मेहिं। (युष्माभिः।)

भागुरायणः—किमस्माभिः?

सिद्धार्थकः—मिस्सेहिं गहीदो, ण आणामि, किं भणामित्ति। (मिश्रैर्गृहीतो न जानामि किं भणामीति।)

भागुरायणः—(सक्रोधम्) एष ज्ञास्यसि। भद्र भासुरक! बहिर्नीत्वा ताड्यतां तावत्, यावत् सर्वमनेन कथितं भवेत्।

भासुरकः—जं अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति सिद्धार्थकेन सह निष्क्रान्तः)

(पुनः प्रविश्य) अज्ज ! इअं तस्स ताडीअमाणस्स कक्खादो णाममुद्दालंच्छिदा आहरणपेडिआ णिवडिदा ।
(आर्य ! इयं तस्य ताड्यमानस्य कक्षतः नाममुद्रालाञ्छिता-ऽऽभरणपेटिका निपतिता ।)

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—भागुरायण, कैसा पत्र है ?

भागुरायण—भद्र सिद्धार्थक, यह किसका लेख है ?

सिद्धार्थक—आर्य, नही जानता ।

भागुरायण—अरे धूर्त्त, लेख तो ले जा रहे हो और यह नही जानते कि किसका लेख है । और सब रहने दो बताओ तो मौखिक संदेश किसको सुनाना है ?

सिद्धार्थक—(भय का अभिनय करते हुए) आप लोगो को ।

भागुरायण—क्या हमको ?

सिद्धार्थक—आप के द्वारा पकडा हुआ मै नही जानता कि क्या कह रहा हूँ ।

भागुरायण—(क्रोध के साथ) अभी जानोगे । भद्र भासुरक, बाहर ले जाकर इसे तब तक पीटो जब तक यह सब कुछ न बता दे ।

भासुरक—आर्य की जैसी आज्ञा (सिद्धार्थक के साथ बाहर चला जाता है) (फिर प्रवेश कर) आर्य, जब वह पीटा जा रहा था तो उसकी कॉख से यह नाम की मुहर से मुद्रित यह गहनो की पेटी गिर पड़ी ।

Malayaketu—Bhagurayan, what kind of letter is it ?

Bhagurayan—Noble Siddharthaka, whose letter is it ?

Siddhathaka—Noble Sir, I do not know

Bhagurayan—You know, you are carrying the letter but do not know whose it is Let all this alone (*Tell me*) who has to hear the verbal message from you ?

Siddharthaka (*Acting fright*)—By you

Bhagurayan—How by us ?

Siddharthaka—Being arrested by you, I do not know what I am saying

Bhagurayan (*With anger*)—You shall know presently. Noble Bhasuraka take him out and beat him till he discloses everything

Bhasuraka—As the Noble Sir commands (*Goes out with Siddharthaka and coming back*) Noble Sir, this basket of ornaments, marked with a seal, has dropped from his arm-pit as he was being beaten

टिप्पणी

(१) **भद्र सिद्धार्थक**—भागुरायण ने पीछे पकड कर लाये गये पुरुष को देखकर कहा है—'किमयमागन्तुक, आहोस्विदिहैव कस्यचित् परिग्रह'। और यहाँ नाम लेकर पूछना है। यह नाटकीय दृष्टि से उचित तो नही कहा जा सकता, किन्तु पत्र मे 'वाचिकञ्चाप्ततमात् सिद्धार्थकाच्छ्रोतव्यम्' इस उल्लेख मे भागुरायण ने अनुमान लगाया कि इस आगन्तुक का नाम सिद्धार्थक है। इसी आधार पर उसने नामोच्चारण किया। ऐसा कहकर हम नाटककार के प्रमाद का परिमार्जन कर सकते है। **मिश्रै.**—पूज्यै। भवद्भि, आदरणीय आप लोगो से। (२) **ताड्यमानस्य**—मारे जाते हुए के। ताड्+शानच्। (३) **कक्षतः**—काँख से।

भागुरायणः—(विलोक्य) कुमार! इयमपि राक्षसमुद्राङ्कितैव।

मलयकेतुः—अयं लेखस्याशून्यार्थो भविष्यति। इमामपि मुद्रां परिपालयन्नुद्घाट्य दर्शय।

भागुरायणः—(तथा कृत्वा दर्शयति।)

मलयकेतुः—(विलोक्य) अये! तदिदमाभरणं यन्मया स्वशरीरादवतार्य राक्षसाय प्रेषितम्। व्यक्तं चन्द्रगुप्तस्यायं लेखः।

भागुरायणः—कुमार! एष निर्णीयते संशयः। भद्र! पुनरपि ताड्यताम्।

पुरुषः—जं अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य च) अज्ज! एसो क्खु ताड़ीअमाणो विण्णवेदि—कुमारस्स स्सअं ज्जेब णिवेदेमि त्ति। (आर्य एष खलु ताड्यमानो विज्ञापयति—कुमारस्य स्वयमेव निवेदयामीति।)

मलयकेतुः—प्रवेशय।

पुरुषः—जं कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रम्य सिद्धार्थकेन सह पुनः प्रविशति ।)

सिद्धार्थकः—(पादयोर्निपत्य) अभएण मे कुमालो प्पसादं करेदु । (अभयेन मे कुमारः प्रसादं करोतु ।)

मलयकेतुः—भद्र ! भद्र !! अभयमेव परायत्तजनस्य, तन्निवेद्यतां यथाऽवस्थितम् ।

सिद्धार्थकः—णिसामेदु कुमालो, अहं क्खु अमच्चरक्खसेण इमं लेहं देइअ, चन्दउत्तसआसं प्पेसिदोह्मि । (निशामयतु कुमारः अहं खल्वमात्यराक्षसेनेमं लेखं दत्त्वा चन्द्रगुप्त-सकाशं प्रेषितोऽस्मि ।)

मलयकेतुः—भद्र ! वाचिकमिदानीं श्रोतुमिच्छामि ।

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण (देखकर) कुमार, इस पर भी राक्षस की मुहर लगी है ।

मलयकेतु—यह इस पत्र की रिक्तता को पूरा करने वाला उपहार होगा। मुहर को बचाते हुए इसे भी खोल कर दिखाओ ।

भागुरायण—(वैसा करके दिखाता है) ।

मलयकेतु—(देखकर) यह तो वही आभरण है जो मैंने अपने शरीर पर से उतार कर राक्षस के लिए भेजा था। निश्चय ही यह पत्र चन्द्रगुप्त के लिए है।

भागुरायण—कुमार, अभी यह संदेह दूर कर लिया जाता है। भद्र, इसे फिर मारो।

पुरुष—जैसी आर्य की आज्ञा (बाहर जाकर और फिर प्रवेश कर) आर्य, मारे जाने पर वह कह रहा है कि मैं कुमार को खुद ही बताऊँगा ।

मलयकेतु—(उसे अन्दर) ले आओ—

पुरुष—जैसी कुमार की आज्ञा । (बाहर जाकर फिर से सिद्धार्थक के साथ प्रवेश करता है)

सिद्धार्थक—(पैरो पर पड़कर) कुमार, मुझे अभयदान दे ।

मलयकेतु—भद्र, पराधीन पुरुष के लिए अभयदान ही है। इसलिए जो बात है उसे बताओ।

सिद्धार्थक—कुमार सुने। यह लेख देकर अमात्य राक्षस ने मुझे चन्द्रगुप्त के पास भेजा है।

मलयकेतु—भद्र, अब वह मौखिक संदेश सुनना चाहता हूँ।

Bhagurayan (Seeing)—Prince, this too is stamped with Rakshas's seal

Malayaketu—This might be the present to accompany the letter Open it too and show me without breaking the seal. (*Bhagurayan does so and shows*)

Malayaketu (*Observing*)—This is the same ornament which I sent to Rakshas by taking off from my body Indeed, this letter is for Chandragupta

Bhagurayan—Prince, the doubt is here confirmed Noble man beat him again

Attendant—As the Noble Sir commands, (*Going out and re-entering*) Noble Sir, on being beaten he says that he will himself tell it to the Prince

Malayaketu—Let him be admitted

Attendant—As says the Prince (*Going out, re-enters with Siddharthaka*)

Siddharthaka (*Falling at his feet*)—May Prince favour me with impunity

Malayaketu—Good man, a dependent has always impunity Tell me as it is

Siddharthaka—Prince may hear I was sent to Chandragupta by Minister Rakshas who gave me this letter

Malayaketu—Now I wish to hear the verbal message

टिप्पणी

व्यक्तं चन्द्रगुप्तस्यायं लेखः—स्पष्ट है कि चन्द्रगुप्त के लिए यह पत्र लिखा गया है। कारण, राजा के धारण करने योग्य जो आभूषण मैंने राक्षस के लिए भिजवाया था, वही आभूषण उसने चन्द्रगुप्त के लिए भेजा है। **अभयेन**—भयस्य अभाव अभयम् (अव्ययीभाव स०), तेन। **यथावस्थितम्**—ठीक-ठीक सब समाचार। अवस्थितमनतिक्रम्य यथावस्थितम् (अव्ययी भाव स०)।

सिद्धार्थकः—कुमाल ! संदिट्ठोह्मि अमच्चरक्खसेण, जहा—'एदे मम प्पिअबअस्सा पञ्च राआणो तुए सह प्पढ़मसमुप्पण्णसन्धाणा। जहा—कुलूदाहिबो चित्तबम्मा, मलअजणबदाहिबो सिंहणादो, कस्सीरदेसणाहो पुक्खरक्खो, सिन्धुराओ सिन्धुसेणो, पारसीआधिबदी मेहक्खो त्ति। एत्थ ज्जेब पढ़मभणिदा तिण्णि राआणो मलअकेदुणो बिसअं अहिलसन्ति, इदरे दुबे कोसं हत्थिबलं अ त्ति। ता जहा चाणक्कं णिराकरिअ महाराएण, मम प्पीदी उप्पादिआ,

तहा एदाणं पि प्पढ़मभणिदो अत्थो संपादइदव्वो' त्ति एत्तिओ बाआसन्देसो त्ति। (कुमार! सन्दिष्टोऽस्त्यमात्यराक्षसेन, यथा—'एते मम प्रियवयस्याः पञ्च राजानस्त्वया सह प्रथमसमुत्पन्नसन्धानाः। यथा—कुलूताधिपश्चित्रवर्मा, मलयजनपदाधिपः सिंहनादः, काश्मीरदेशाधिपः पुष्कराक्षः, सिन्धुराजः सिन्धुसेनः, पारसीकाधिपतिर्मेघाक्ष इति। अत्रैव प्रथमभणितास्त्रयो राजानः मलयकेतोर्विषयमभिलषन्ति, इतरौ द्वौ कोषं हस्तिबलञ्चेति। तद्यथा चाणक्यं निराकृत्य महाराजेन मम प्रीतिरुत्पादिता, तथैतेषामपि प्रथमभणितोऽर्थः-संपादयितव्यः' इत्येतावान् वाक्सन्देश इति।)

मलयकेतुः—(स्वगतम्) कथं चित्रवर्मादयोऽपि माम-भिद्रुह्यन्ति, अत एवैतेषां राक्षसे निरतिशया प्रीतिः। (प्रकाशम्) विजये! अमात्यराक्षसं द्रष्टुमिच्छामि।

प्रतीहारी—जं कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्ता।)

(ततः प्रविशत्यासनस्थः स्वभवनगतः पुरुषेणानुगम्यमानः सचिन्तो राक्षसः)

राक्षसः—(स्वगतम्) सम्पूर्णमस्मद्बलं चन्द्रगुप्तबलैरिति यत सत्यं न मे मनसः शुद्धिरस्ति। कुतः?—

हिन्दी अनुवाद—सिद्धार्थक—कुमार, अमात्य राक्षस ने संदेशा भेजा है। ये मेरे प्रियमित्र पाँच राजा तुम्हारे साथ पहले ही संधि कर चुके हैं। जैसे (उनके नाम ये) हैं—कुलूत देश का राजा चित्रवर्मा, मलय जनपद का राजा सिंहनाद, काश्मीर देश का राजा पुष्कराक्ष, सिन्धु देश का राजा सिंधुसेन, फारस देश का राजा मेघाक्ष। इनमें पहले कहे हुए तीन राजा मलयकेतु का राज्य चाहते हैं और दूसरे दो खजाना और हाथी चाहते हैं। तो जैसे चाणक्य को निकाल कर महाराज ने मुझे प्रसन्न किया उसी प्रकार इन लोगों का उपर्युक्त मनोरथ पूरा कर देना चाहिए। बस, इतना ही मौखिक संदेश है।

मलयकेतु—(मन में) तो चित्रवर्मा आदि भी मुझसे द्वेष करते हैं। इसी लिए राक्षस से इनका इतना प्रेम है। (प्रकट), विजये, अमात्य राक्षस को देखना चाहता हूँ।

प्रतीहारी—जैसी कुमार की आज्ञा (बाहर चली जाती है)।

(तदनन्तर अपने भवन मे आसन पर विराजमान चितामग्न राक्षस एक पुरुष के साथ प्रवेश करता है)

राक्षस—(मन मे) हमारी सम्पूर्ण सेना चन्द्रगुप्त की सेनाओ से भर चुकी है, यह सत्य बात है। इसलिए मेरे मन में शान्ति नही है। क्योकि;

Siddharthaka—Prince, Minister Rakshas has sent the message, "These five kings who are my friends and have already entered into alliance with you are—Chitravarman, the ruler of Kuluta, Sinhanada, the chief of the city of Malaya, Pushkaraksh, the lord of Kashmir, Sindhusena, the king of Sindhu, and Meghaksha, the king of Persia Of these the first three want the kingdom of Malayaketu and the rest two want his force of elephants and treasure So just as your Majesty has caused my pleasure by dismissing Chanakya, in the same way the wishes of these should also be accomplished" This much is the oral message

Malayaketu (*To himself*)—How so, Chitravarman and others also are hostile to me, and so they show excessive love to Rakshas (*Aloud*) Vijaya, I wish to see Minister Rakshas

Warder—As the Prince commands (*Exit*)

(Now enter with an attendant, Rakshas, seated in his own house meditating)

Rakshas (*To himself*)—My whole army is full of the warriors of Chandragupta, hence peace of mind really does not come to me For—

टिप्पणी

(१) **प्रथमसमुत्पन्नसधानाः**—जो पहले से ही सधि कर चुके है। (२) **प्रियवयस्याः**—प्रियमित्र। वयसा तुल्या इति वयस्या वयस्+यत्। प्रिया वयस्या· प्रियवयस्या (कर्मधारय स०)। (३) **मामभिद्रुह्यन्ति**—मुझसे द्रोह करते है। यहाँ पर 'क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयो कर्म' से अभिपूर्वक द्रुह् धातु के कर्म मे द्वितीया हुई है। नही तो उपसर्ग रहने पर चतुर्थी होती। ध्यान रहे कि यह सिद्धार्थक चाणक्य का गुप्तचर है और इसीलिए ऐसी मिथ्या बाते कह रहा है, ताकि राक्षस का और मलयकेतु का विरोध तो हो ही जाय साथ ही साथ मलयकेतु के साथी पाँच राजाओ के भी ऊपर उसका सदेह हो जाय, जिससे वह उनका विनाश कर दे और शक्तिहीन हो जाय।

साध्ये निश्चितमन्वयेन घटितं बिभ्रत् सपक्षे स्थितिं
व्यावृत्तञ्च विपक्षतो भवति यत् तत् साधनं सिद्धये ।
यत् साध्यं स्वयमेव तुल्यमुभयोः पक्षे विरुद्धञ्च यत्
तस्याङ्गीकरणेन वादिन इव स्यात् स्वामिनो निग्रहः ॥१०॥

अन्वय—यत् साधन निश्चितम् सपक्षे स्थिति बिभ्रत् अन्वयेन घटित विपक्षतो व्यावृत्त च तत् सिद्धये भवति । यत् स्वयमेव साध्यम् उभयो तुल्यम्, यच्च पक्षे विरुद्ध तस्य अङ्गीकरणेन वादिन इव स्वामिन निग्रह स्यात् ॥१०॥

हिन्दी अनुवाद—सग्राम मे वही सेना जीत सकती है जो ठीक शास्त्रार्थ में वादी के हेतु (तर्क के समान) हो। सर्वथा अपने पक्ष का पूर्ण तौर से तैयार प्रत्येक अवस्था मे समन्वित और अनुकूल, अपने समान पक्ष मे भी अवस्थित और साथ ही साथ विपक्ष से सर्वथा प्रतिकूल। ऐसी सेना से तो हमारे जैसे विजयाकाक्षी की पराजय ही अवश्यंभावी है जो कि किसी वादी के ठीक उस तर्क जैसी हो जिसे बार-बार सँभालना पडे जिसे अपने और पराये दोनो पक्षो मे लागू होता देखा जाय और वस्तुतः अपने पक्ष से ही सर्वथा विरुद्ध पड़ा करे।

विशेष—यह श्लोक द्व्यर्थक है—भाव यह है कि जो हेतु साध्य है तथा सपक्ष और विपक्ष में समान है और जो हेतु पक्ष मे विपरीत है उस हेतु को स्वीकार करने मे स्वामी की तरह वादी की पराजय होती है। जो सेना अपने पक्ष से विपरीत है और अपने पक्ष तथा शत्रु पक्ष से बराबर प्रेम रखती है उस सेना से हार अवश्य होगी।

That army of a king leads to success which, brought together by lineal succession maintains stay with its own side (पक्ष) and has no sympathy for the foe, but defeat may come from the incorporation of such as are themselves to be won over or are opposed to the king (स्वामी) himself, like that reason of a disputant (वादी) undoubtedly seen in the subject becomes suitable for a conclusion, which maintaining presence in similar cases is attended by succession and is not found in dis-similar cases, (while) by the assumption of that which is itself to be proved (साध्य) or is equally true to both sides (स्वपक्ष and परपक्ष) or what is opposed to the subject, error might creep into the argument

संस्कृत व्याख्या—यदिद साधन सैन्यादिसाध्ये शत्रुविजयकृत्ये निश्चित निर्णीत परसैन्यनिवारणशक्तिनिर्धारिविभव वेति यदिद साधनमन्वयेन घटित

मभृतमौलबल यदिद साधन सपक्षे स्थिति बिभ्रत् श्रेणीबलाटवी बलमित्रवलादि-रूपबलसमुद्दानाऽविरोधि यदिदञ्च साधन विपक्षतो व्यावृतञ्च भवति तदेव साधन सिद्धये अभियानकर्मण निर्विघ्ननिष्पत्तये विजयाय च भवति सञ्जायते। किन्तु यत् खलु साधनम् चतुरङ्गमपि स्वयमेव साध्य वशीकार्यम् यद्धि वस्तुन उभयो सपक्षविपक्षयो तुल्यम् समानम् यच्च पक्षे विरुद्धम् विपरीतम् साध्यधर्मा मत्त्वेऽपि स्वय सदित्यर्थ तस्य तथाविधस्य साधनस्य बलममुद्दानस्य अङ्गीकरणेन स्वीकरणेन स्वामिन राजविजिगीषोर्वादिन इव वादविजिगीषोरिव निग्रह पराभव अवश्यमेव स्यात्। तात्पर्य तु यथा कश्चित् वादी कञ्चन प्रतिज्ञानमर्थम् साधयितुकाम पक्षव्यापकत्वधर्मयुक्त हेतुम् उपाददान सिद्धप्रतिज्ञ भवति तथैव विजिगीषुरपि परोपजापादिविरहित वल प्रयुञ्जान निश्चितविजयो भवति। किन्तु विपरीतदशाया तस्य पराजयो भवति।

टिप्पणी

(१) **साधनम्**—साधन, जिससे कोई पक्ष सिद्ध किया जाय, स्वामी के पक्ष मे सेना अर्थ है। साध्यते अनेन इति साधनम् साध्+ल्युट्। (२) **साध्ये**—साध्य मे। साध्+यत् कर्मणि। साध्य उसे कहते है जो बात सिद्ध करना है, यह न्याय शास्त्र का पारिभाषिक शब्द है। जैसे कि "पर्वतोऽयम् वह्निमान् धूमात्" अर्थात् इस पर्वत मे आग है धूम होने के कारण यहाँ पर यह साध्य है कि वह्निमान् है, स्वामी पक्ष मे इसका अर्थ है "कार्य मे"। (३) **सपक्षे**—पक्षेण सह वर्तमान इति सपक्ष। निश्चितसाध्यवान् 'सपक्ष' जिसमे साध्य का विषय हो, एक ही पक्ष का, समान पक्ष का। (४) **अन्वयेन घटितम्**—तत्सत्त्वे तत्सत्त्वम्। उस हेतु के रहने पर उस (साध्य) की सत्ता निश्चित है, हेतु और साध्य का साहचर्य, पक्षान्तर मे लब्ध (प्राप्त वस्तु)। अनु+इ+अच् भावे=अन्वय। पक्षान्तरे—अनु+इ+अच् अधिकरणे=अन्वय +वश। (५) **सिद्धये**—सिद्धि के लिए (आग की अनुमिति) पक्षान्तर मे—विजयादि की प्राप्ति। (६) **विपक्षतः**—विपक्ष से, भिन्न वस्तु (जलाशय आदि से) स्वामि पक्ष मे शत्रु से। (७) **व्यावृत्तम्**—हटा हुआ। (८) **तुल्यमुभयोः**—वह हेतु जो पक्ष और विपक्ष दोनो मे लागू हो। जो दोनो पक्ष मे लागू होता है उस हेतु से कोई परिणाम (Conclusion) नही निकलता; पक्षान्तर मे वह सेना जो दोनो (शत्रु और अपनी) ओर मिली हो। राक्षस के कहने का तात्पर्य है कि जैसे कोई

वादी किसी पक्ष को सिद्ध करना चाहता हो और ऐसे हेतुओ (Reasonings या arguments) का प्रयोग करता है जो उसके पक्ष और विपक्ष दोनो मे समान लागू है तो वह किसी परिणाम पर नही पहुँच पाता उसी प्रकार जो सेना दोनो ओर मिली है उससे विजय पाना असम्भव है। हमारी सेना मे विपक्ष (चन्द्रगुप्त) के लोग भी वर्तमान है, अत विजय असभव है। इसमे श्लेष और उपमा अलकार है तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अथवा तैस्तैर्विज्ञातापरागहेतुभिः प्राक्परिगृहीतोपजापैरापूर्णमिति न विकल्पयितुमर्हामि। (प्रकाशम्) प्रियंवदक! उच्यन्तामस्मद्वचनात् कुमारानुयायिनो राजानः—सम्प्रति दिने दिने प्रत्यासीदति कुसुमपुरम्। अतः परिकल्पितविभागैर्भवद्भिः प्रयाणे प्रस्थातव्यम्। कथमिति?

प्रस्थातव्यं पुरस्तात् खसमगधगणैर्मामनुव्यूह्य सैन्यै-
र्गान्धारैर्मध्ययाने सयवनपतिभिः संविधेयः प्रयत्नः।
पश्चाद् गच्छन्तु वीराः शकनरपतयः संवृताश्चेदिहूणैः
कौलूताद्यश्च शिष्टः पथि परिवृणुयाद्राजलोकः कुमारम्॥११॥

अन्वय—पुरस्तात् व्यूह्य मामनु खसमगधगणै सैन्यै प्रस्थातव्यम्। मध्ययाने सयवनपतिभि गान्धारै प्रयत्न सविधेय। पश्चात् चेदिहूणै सवृता वीरा शकनरपतय गच्छन्तु। शिष्ट च कौलूताद्य राजलोक पथि कुमारम् परिवृणुयात्॥११॥

हिन्दी अनुवाद—अथवा हमे यह सन्देह नही करना चाहिए; क्योकि हो सकता है कि हमारी सेना के सैनिक ऐसे निकले जो हमारी भेदनीति से हमारे ही बने रहे जैसा कि शत्रु-पक्ष से उनके विच्छेद के कारणों से स्पष्ट है। (प्रकट) प्रियवदक, हमारी ओर से कुमार के अनुयायी राजाओ से कहो कि इस समय धीरे-धीरे पाटलिपुत्र करीब आता जा रहा है और विभागो की रचना करके प्रयाण मे चलना चाहिए। क्योकि—सामने (आगे-आगे) व्यूह बनाकर मेरे पीछे खस और मगध की सेना चले। मध्यभाग मे यवन सैनिको के साथ गाधार सैनिको को चलना चाहिए। इसके पीछे चेदि और हूणों के साथ वीर शक राजा लोग चले और बाकी कौलूत आदि राजाओ का समूह मार्ग में कुमार को घेर कर चले।

Or I should not have any doubt, for ıt (*army*) ıs filled by such as have sufficıent cause of theır dısloyalty (*To Chandragupta*) known and had prevıously consented to abıde by the terms of peace that was made wıth them (*Aloud*) Prıyamvadak let the Kıngs followıng the prınce be told ın my name that "Patalıputra ıs comıng nearer and nearer, day by day, so you should march by makıng dıvısıons of the army" For The army of Khas and Magadh waıııors should follow me ın the van, Gandhar wıth the yavan chıefs should maıch ın the centre, and the brave Saka kıngs along wıth Chedıs and Huns should march ın the ıear The rest of the Kıngs ıncludıng the Kıng of Kuluta and others should march surroundıng the prınce

सस्कृत व्याख्या—पुरस्तात् अग्रे व्यूह्य व्यूह रचयित्वा माम् अनु मम पृष्ठत खसमगधगणै खसाश्च मगधाश्च तेषा गणा खसमगधगणा ते येषा सैन्याना तै सैन्यै वलै प्रस्थातव्यम् पुरोयान करणीयमित्यर्थ मध्ययाने सैन्यमध्यगमने सयवनपतिभि यवनसेनानायकै सम गान्धारै गान्धारदेशवासिभि सैन्यै प्रयत्न मविधेय व्यामिश्रव्यूह विधाय योद्धव्यमित्यर्थ पश्चात् अनन्तरम् चेदिहूणा सवृता सम्मिलिता वीरा पराक्रमशालिन शकनरपतय शकदेशीयराजान गच्छन्तु शिष्ट च अवशिष्ट च कौलूताद्य कुलूतराजप्रमुख राजलोक नृपवर्ग पथि मार्गे कुमार मलयकेतुम् परिवृणुयात् चित्रवर्मराजप्रभृतिराजवर्ग परित रक्षणार्थम् सव्यूह्य यायादित्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **विज्ञातापरागहेतुभि**·—जिनके विराग के कारण को जान लिया गया है (उनसे)। विज्ञाता अनुमिता अपरागहेतव विरागकारणानि येषा ते तथोक्ता तै । यहाँ राक्षस के कहने का तात्पर्य यह है कि इन भद्रभट आदि की चन्द्रगुप्त के प्रति विरक्ति वास्तविक थी। इस बात की जाँच-पडताल कर ली गई थी। अत इनके अलग होने की आशा पहले से ही थी। (२) **प्राक्परिगृहीतोपजापै**—पहले से जिन लोगो ने भेद को समझ लिया है। प्राक् पूर्वम् परिगृहीत ज्ञात उपजाप भेद यै ते तथोक्ता तै । भाव यह है कि इन लोगो को चन्द्रगुप्त से विरक्त जानकर हमने इनके सामने अपने पक्ष मे आने का प्रस्नाव रखा और उन्होने स्वीकार कर लिया तथा चले भी आये। अत इनके ऊपर यह सोचकर सन्देह नही करना चाहिए कि ये चन्द्रगुप्त के व्यक्ति है। (३) **प्रत्यासीदति**—समीप आता जा रहा है। (४) **परिकल्पितविभागैः**—विभागो की

रचना करके। परिकल्पित आरचित विभाग सैन्यविभाग यै ते तथोक्ता तैः। (५) व्यूह्य—व्यूह बनाकर। व्यूह+णिच्+ल्यप्।

प्रियंवदकः—जं अमच्चो आणवेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्तः।)

प्रतीहारी—(प्रविश्य) जेदु जेदु अमच्चो। अमच्च! इच्छदि तुमं कुमालो प्पेक्खिदुं। (जयतु जयत्वमात्यः। अमात्य! इच्छति त्वां कुमारः प्रेक्षितुम्।)

राक्षसः—भद्रे! मुहूर्त्तं तिष्ठ। कः कोऽत्र भोः?

पुरुषः—(प्रविश्य) आणवेदु अमच्चो। (आज्ञापयत्वमात्यः।)

राक्षसः—भद्र! उच्यतां शकटदासः, यथा परिधापिता वयमाभरणं कुमारेण, तन्न युक्तमिदानीमस्माभिरनलंकृतैः कुमारदर्शनमनुभवितुम्, अतो यदलङ्करणत्रयं क्रीतं तन्मध्यादेकं दीयतामिति।

पुरुषः—जं अमच्चो आणवेदि। (यदमात्य आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य च) अमच्च! इदं तं अलङ्करणं। (अमात्य! इदं तदलङ्करणम्।)

राक्षसः—(नाट्येनावलोक्यात्मानमलंकृत्योत्थाय च) भद्रे! राजकुलगामिनं मार्गमादेशय।

प्रतीहारी—एदु एदु अमच्चो। (एतु एत्वमात्यः।)

राक्षसः—(स्वगतम्) अधिकारपदं नाम निर्दोषस्यापि पुरुषस्य महदाशङ्कास्थानम्। कुतः—

हिन्दी अनुवाद—प्रियंवदक—जैसी अमात्य की आज्ञा (निकल जाता है)

प्रतीहारी—(प्रवेशकर) अमात्य की जय हो। आपको कुमार देखना चाहते हैं।

राक्षस—भद्रे, क्षणभर रुको। अरे, यहाँ कौन है?

पुरुष—(प्रवेशकर) अमात्य आज्ञा दें।

राक्षस—भद्र, शकटदास से कहो कि कुमार ने जो आभूषण हमें पहना दिया

है सो इस समय बिना आभूषण पहने हमे कुमार का दर्शन करना उचित नहीं। इसलिए जो तीन अलकार खरीदे गए है उनमे से एक दे दो।

पुरुष—जो अमात्य की आज्ञा। (बाहर जाकर और फिर प्रवेशकर) अमात्य, यह वह आभूषण है।

राक्षस—(देखने का अभिनय करके, अपने को अलकृत कर और उठकर) भद्रे, राजा के पास जाने का मार्ग बताओ।

प्रतीहारी—अमात्य, आइये।

राक्षस—(मन मे) अधिकार का स्थान निर्दोष पुरुष के वास्ते भी महान् आशंका का स्थान होता है। क्योकि—

Priyamvadak—As Minister orders (*Goes out*)

Warder (*Entering*)—Victory to Minister The Prince wishes to see you

Rakshas—Good lady, wait a moment Oh who is here ?

Attendant (*Entering*)—Let Minister command

Rakshas—Let Shakatdas be told that as the prince has made me wear ornament, it is therefore not proper that I should enjoy the sight of the prince undecorated So, one of the three ornaments that have been purchased, be handed over to me

Attendant—As the Minister orders (*Going out, re-entering*) Minister, this is the ornament

Rakshas—(Acting the seeing of the ornament, and the decoration of the person and rising) Good woman, show me the way leading to the royal presence

Warder—Let Minister come

Rakshas (*To himself*)—Verily, this thing which is called office is source of great apprehension even to an innocent Person For—

टिप्पणी

(१) **परिधापिता.**—पहनाये गये। परि+धा+णिच्, पुक्+क्त। (२) **यदलङ्करणत्रयं क्रीतम्**—जो तीन आभूषण खरीदे गये है। इन आभूषणो की चर्चा पीछे आ चुकी है। आगे के कथानक को विकसित करने के लिए इनका प्रसग यहाँ उपस्थित किया गया है।

भयं तावत् सेव्यादभिनिविशते सेवकजनं
ततः प्रत्यासन्नाद् भवति हृदयेष्वेव निहितम्।
ततोऽध्यारूढानां पदमसुजनद्वेषजननं
मतिः सोच्छ्रायाणां पतनमनुकूलं कलयति ॥१२॥

अन्वय—सेवकजन तावत् भय सेव्यात् अभिनिविशते। तत. प्रत्यासन्नात् हृदयेषु निहितमेव भवति । तत अध्यारूढाना पदम् असुजनद्वेषजननम् । सोच्छ्रायाणा मति अनुकूल पतन कलयति ॥१२॥

हिन्दी अनुवाद—सबसे प्रथम तो सेवक के हृदय मे स्वामी का भय स्थान पा जाता है और बाद में (राजा के) निकटवर्ती लोगो के कारण हृदय में वह बना ही रहता है। तदनन्तर उच्च पद प्राप्त (अधिकारियों) का पद दुष्टो के लिए द्वेष उत्पन्न करता है। इसलिए ऊँचे पदाधिकारी जो पतन की बात सोचते रहते हैं वह ठीक ही है (अर्थात् ऊँचे पदाधिकारी इसी चिन्ता मे पड़े रहते हैं कि अब गये, तब गये)।

Verily suspicion comes to the server from the served; then it takes its root in the heart from his (master's) intimates, besides the office of those that are highly placed excites enmity in bad people, hence those who are highly placed always think of their fall.

संस्कृत व्याख्या—तावत् सर्वप्रथम सेव्यात् स्वामिन भय सेवकजनम् अभिनिविशते समन्तात् हृदयम् अभिव्याप्य स्थिति करोति तत तदनन्तरम् प्रत्यासन्नात् स्वामिसहोत्थायिन जनात्तदेव भय हृदयेषु एव निहित भवति निरन्तरम् अधिष्ठितहृदयमेव विभाव्यत इति। तत तस्मादेव कारणात् अध्यारूढानाम् पदम् महाधिकारवता पदम् असुजनद्वेषजननम् यो वाऽधिकारस्य दुर्जनासूयित दुष्टजनक्रोधोद्दीपक एव भवतीति शेष । सोच्छ्रायाणा मति॰ अत्युन्नताना पुरुषाणा मति बुद्धि अनुकूलम् उचितम् पतनम् अधिकाराच्च्यवनमेव कलयति अवगच्छति विचिकित्सते इत्यभिप्राय ।

टिप्पणी

(१) **सेव्यात्**—स्वामी से। (२) **अभिनिविशते**—अधिकारी के हृदय मे अपने स्वामी की ओर से कई तरफ से भय प्रवेश करता है। 'नेर्विश' अर्थात् नि उपसर्ग पूर्वक विश् धातु मे आत्मनेपद होता है। (३) **प्रत्यासन्नात्**—स्वामी के के पास सदा उठने-बैठने वालो से। (४) **अध्यारूढानाम्**—उच्च पद प्राप्त वालो का। (५) **असुजनद्वेषजननम्**—दुष्टो के मन मे द्वेष पैदा करने वाला। इसमे काव्यलिङ्ग और अर्थान्तरन्यास अलकार है और शिखरिणी छन्द है।

प्रतीहारी—(परिक्रम्य) अमच्च ! अअं कुमालो चिट्ठदि,

ता उपसप्पदुणं अमच्चो। (अमात्य! अयं कुमारस्तिष्ठति, तदुपसर्पत्वेनममात्यः।)

राक्षसः--(नाट्येनावलोक्य) अये! अयं कुमारस्तिष्ठति। य एषः--

पादाग्रे दृशमवधाय निश्चलन्तीं
शून्यत्वादपरिगृहीततद्विशेषाम्।
वक्त्रेन्दुं वहति करेण दुर्वहाणां
कार्याणां कृतमिव गौरवेण नम्रम् ॥१३॥

अन्वय--शून्यत्वात् अपरिगृहीततद्विशेषाम् निश्चलन्ती दृश पादाग्रे अवधाय दुर्वहाणा कार्याणा गौरवेण इव नम्र कृत वक्त्रेन्दु करेण वहति ॥१३॥

हिन्दी अनुवाद--प्रतीहारी--(घूमकर) अमात्य, यह कुमार बैठे है। अतः अमात्य इनके पास जॉय।

राक्षस--(अभिनय के साथ देखकर) अरे; यह कुमार है। जो ये अपने पैरो के आगे अपनी निश्चल किंवा मन के सूनेपन से सभी दृष्टिगोचर वस्तुओं से विमुख आँखें गडाये महान् कार्यों की गुरुता से मानो झुके हुए मुखचन्द्र को हाथ से धारण कर रहे है।

Warder (*Going round*)—Minister, the prince is here, let Minister approach him

Rakshas (*Acting observation*)—Ho, here sits the Prince This one who, fixing his motionless eye on the forepart of his feet with its different parts unseen due to vacancy, supports in his hand his moon-like face which is as if bowed down by the weight of heavy tasks

सस्कृत व्याख्या--शून्यत्वात् मनोव्यापारहीनत्वात् अपरिगृहीततद्विशेषाम् न परिगृहीता न अवबुद्धा तस्य पादाग्रस्य विशेषा तत्तद्भागा यया तादृशी निश्चलन्ती स्थिरा दृश दृष्टिम् पादाग्रे चरणाङ्गुलीषु दौर्मनस्यात् अवधाय सस्थाप्य दुर्वहाणा वोढुमशक्यानाम् महाभाराणाम् कार्याणाम् गौरवेण गुरुत्वेन इव नम्रम् आननम् कृतम् विहितम् वक्त्रेन्दुम् मुखचन्द्रम् करेण हस्तेन वहति।

टिप्पणी

(१) **शून्यत्वात्**--अन्यमनस्क होने के कारण। जब चित्त कही अन्यत्र रहता है तो सामने की चीजे नही दिखाई पडती। (२) **निश्चलन्तीम् दृशम्**--

निश्चल दृष्टि। (३) अपरिगृहीततद्विशेषाम्—उस (पैर के) अग्रभाग के विशेषो को (अँगूठा, आदि) को न जानने वाली। (४) वक्त्रेन्दुम्—वक्त्रम् मुखम् इन्दुरिव अथवा वक्त्रमिव इन्दु इति वक्त्रेन्दु (उपमित स०)। मुखरूपी चन्द्रमा को। इस श्लोक मे चिन्ताग्रस्त मलयकेतु का वर्णन है। यहाँ रूपक एवम् उत्प्रेक्षा अलकार तथा प्रहर्षिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'त्र्याशाभिर्मनजरगाः प्रहर्षिणीयम्'।

(उपसृत्य) विजयतां विजयतां कुमारः।

मलयकेतुः—आर्य! अभिवादये। इदमासनमास्यताम्।

(राक्षसः—उपविशति)

मलयकेतुः—अमात्य! चिरदर्शनेनार्यस्य वयमुद्विग्नाः।

राक्षसः—कुमार! प्रयाणे प्रतिविधानमनुतिष्ठता मया कुमारादयमुपालम्भोऽधिगतः।

मलयकेतुः—अमात्य! प्रयाणे कथं प्रतिविहितमिति श्रोतुमिच्छामि।

राक्षसः—कुमार! एवमादिष्टाः कुमारस्यानुयायिनो राजानः।

(प्रस्थातव्यमित्यादिश्लोकं पुनः पठति।)

मलयकेतुः—(स्वगतम्) विज्ञायते, कथं य एव मद्विनाशेन चन्द्रगुप्तमाराधयितुमुद्यताः त एव मां परिवृण्वन्ति (प्रकाशम्) आर्य! अस्ति कश्चित् यः कुसुमपुरं प्रति गच्छति तत आगच्छति वा?

राक्षसः—कुमार! अवसितमिदानीं गतागतप्रयोजनम्। ननु पञ्चषैरहोभिर्वयमेव तत्र गन्तास्मः।

मलयकेतुः—(स्वगतम्) विज्ञायते। (प्रकाशम्) यद्येवं, तत् किमयमार्येण सलेखः पुरुषः कुसुमपुरं प्रस्थापितः?

हिन्दी अनुवाद—(पास जाकर) कुमार की विजय हो।
मलयकेतु—आर्य, प्रणाम करता हूँ। यह आसन है। बैठिये।
(राक्षस—बैठता है।)

मलयकेतु—अमात्य बहुत दिन के बाद आर्य का दर्शन होने से हम व्याकुल हैं।

राक्षस—कुमार, चढ़ाई की तैयारी करते हुए, मुझे कुमार से यह उलाहना मिला है।

मलयकेतु—अमात्य, प्रयाण के लिए कैसी तैयारी की है, यह मै जानना चाहता हूँ।

राक्षस—कुमार, कुमार के अनुयायी राजाओ को इस प्रकार आदेश दे दिया गया है। (प्रस्थातव्यम् आदि श्लोक को पुनः पढता है)

मलयकेतु—(मन में) समझता हूँ, जो मेरा विनाश करके चन्द्रगुप्त की सेवा करना चाहते ह वे ही मुझे घेर कर चलेंगे। (प्रकट) आर्य, क्या कोई ऐसा है जो कुसुमपुर से आ रहा हो या वहाँ जाता हो ?

राक्षस—कुमार, अब जाने-आने का प्रयोजन समाप्त हो गया है। पाँच या छः दिन में हमी लोग वहाँ पहुँच जायगे।

मलयकेतु—(मन मे) समझ गया। (प्रकट) यदि ऐसी बात है तो पत्र देकर (इस) पुरुष को पाटलिपुत्र क्यों भेजा है ?

(*Advancing*) Victory to the Prince

Malayaketu—Noble Sir, I bow to you This is the seat. Please take it

(*Rakshas—Sits*)

Malayaketu—Noble Sir, we are uneasy due to seeing you after a long time

Rakshas—Prince, being engaged in the preparation of the march, I have become the object of censure from the Prince

Malayaketu—Minister, I wish to hear what preparation for the march has been made

Rakshas—Prince, the kings following you have been instructed thus

(*Repeats the verse*) *Malayaketu* (*To himself*)—I understand Those very men who want to serve Chandragupta by ruining me will surround me (*Aloud*) Noble Sir, is there any one who is going to or coming from Kusumpura ?

Rakshas—The object of coming and going is now achieved, we ourselves will go there in five or six days

Malayaketu (*To himself*)—I know (*Aloud*) If so, then why was this man sent there with a letter by Noble Sir ?

टिप्पणी

(१) **प्रतिविधानम्**—व्यवस्था, तैयारी। यहाँ मलयकेतु के द्वारा किये गये प्रश्न के गूढ आशय को न समझते हुए राक्षस उत्तर दे रहा है। वस्तुतः

राक्षस निष्कपट एव सन्देह-रहित है। वह मलयकेतु के प्रश्नो का उत्तर सीधे-सादे भाव से दे रहा है। किन्तु उधर मलयकेतु के मन मे कुछ दूसरी ही बात राक्षस के प्रति घर कर चुकी है। वह राक्षस के प्रत्येक बात को अपनी गलत व्याख्या के साथ ले रहा है। (२) **अवसितम्**—समाप्त। (३) **पञ्चषैः**—पाँच या छ। पञ्च षट् वा परिमाणम् येषा तानि पञ्चषानि तै। (४) **विज्ञायते**—मलयकेतु के कहने का भाव यह है कि तुम्हारी पोल मालूम हो गई। वह यह समझ रहा है कि राक्षस पाँच या छ दिन मे मुझे कैदी बनाकर स्वय चन्द्रगुप्त का मत्री बनकर कुसुमपुर जायगा।

राक्षसः—(विलोक्य) अये सिद्धार्थकः, भद्र, किमिदम्?

सिद्धार्थकः—(सबाष्पं लज्जां नाटयन्।) प्पसीददु प्पसीददु अमच्चो अमच्च! अतिताड़ीअन्तेण मए ण पारिदं अमच्चस्स रहस्सं धारिदुं। (प्रसीदतु प्रसीदत्वमात्यः। अमात्य! अतिताड्यमानेन मया न पारितममात्यस्य रहस्यं धारयितुम्।)

राक्षसः—भद्र! कीदृशं तत् रहस्यम्? न खल्ववगच्छामि।

सिद्धार्थकः—ननु बिण्णबेमि, ताड़ीअन्तेण मए'—। (ननु विज्ञापयामि, ताड्यमानेन मया—') (इत्यर्धोक्ते सभयमधोमुखस्तिष्ठति)।

मलयकेतुः—भागुरायण! स्वामिनः पुरस्ताद् भीतो लज्जितश्च नैष कथयिष्यति, अतः स्वयमेवार्याय कथय।

भागुरायणः—यदाज्ञापयति कुमारः। अमात्य! एष कथयति, यथा—'अहममात्यराक्षसेन लेखं दत्त्वा वाचिकञ्च सन्दिश्य चन्द्रगुप्तसकाशं प्रेषितः' इति।

राक्षसः—भद्र, सिद्धार्थक! अपि सत्यम्?

सिद्धार्थकः—(लज्जां नाटयन्) ······एब्बं अतिताड़ीअन्तेण मए णिबेदिदं। (··· एवमतिताड्यमानेन मया निवेदितम्।)

राक्षसः—कुमार! अनृतमेतत् ताड्यमानः किं न ब्रूयात्?

मलयकेतुः—भागुरायण ! दर्शय लेखं, वाचिकञ्चायमस्मै स्वभृत्यः कथयिष्यति ।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(देखकर) अरे सिद्धार्थक, भद्र ! यह क्या ?

सिद्धार्थक—(आँसू के साथ लज्जा का अभिनय करता है) अमात्य, प्रसन्न हो, प्रसन्न हो। अमात्य, जब मैं बहुत पीटा गया तो अमात्य के रहस्य को न छिपा सका।

राक्षस—भद्र, वह कैसा रहस्य है, समझ में नही आ रहा है।

सिद्धार्थक—कह तो रहा हूँ कि पीटा जाता हुआ मैं (ऐसा आधा कहकर भयपूर्वक मुँह नीचे करके खडा हो जाता है)।

मलयकेतु—भागुरायण, स्वामी के आगे लज्जित और भयभीत यह नहीं कहेगा। अतः स्वयम् आर्य को बता दो।

भागुरायण—कुमार की जैसी आज्ञा। अमात्य, यह कह रहा है कि अमात्य राक्षस ने लेख देकर और जबानी संदेश देकर चन्द्रगुप्त के पास भेजा है।

राक्षस—सिद्धार्थक, क्या यह सत्य है ?

सिद्धार्थक—(लज्जा का अभिनय करके) बहुत मारे जाने पर मैंने ऐसा कहा है।

राक्षस—कुमार, यह असत्य है। पीटा जाता हुआ व्यक्ति क्या नहीं कह देगा ?

मलयकेतु—भागुरायण, वह लेख दिखा दो, मौखिक संदेश तो इनका यह भृत्य कहेगा।

Rakshas (seeing)—Oh Siddharthaka, Gentleman, what is this ?

Siddharthaka (With tears acts to be ashamed)—Minister be pleased, be pleased When I was severly beaten, I could not conceal the Minister's secret

Rakshas—Gentleman, what is that secret ? I do not understand

Siddharthaka—I say that being beaten I (*saying only half stands with face down cast with fear*)

Malayaketu—Bhagurayan, frightened or ashamed before the master, he will not say, you tell it yourself to the Noble Sir.

Bhagurayan—As the Prince commands Minister he says that "Minister sent me to Chandragupta giving me a letter and speaking a verbal message

Rakshas—Siddharthaka, is it true ?

Siddharthaka—Being beaten seriously I told so

Rakshas—This is false On being beaten what would not a man say ?

Malayaketu—Bhagurayan, show (him) the letter The verbal message will be told by the servant himself

टिप्पणी

(१) **न पारित रहस्य धारयितुम्**—इस कथन से सिद्धार्थक ने सत्यता को स्वीकार कर लिया है। (२) **अतिताड्यमानेन** · —इसका भाव यह है कि मार पडने पर प्राण बचाने के खयाल से मैंने जो कुछ कहा है वह सत्य नही है।

भागुरायणः—अमात्य, अयं लेखः।

राक्षसः—(वाचयित्वा) कुमार, शत्रोः प्रयोग एषः।

मलयकेतुः—लेखस्याशून्यार्थमार्येणेदमाभरणमनुप्रेषितमिति तत कथं शत्रोः प्रयोग एष स्यात् ? (इत्याभरणं दर्शयति।)

राक्षसः—(आभरणं निर्वर्ण्य) कुमार! नैतन्मयानुप्रेषितम्, एतद्धि कुमारेण मह्यं दत्तं; मया च परितोषस्थाने सिद्धार्थकाय दत्तम्।

भागुरायणः—भो अमात्य! ईदृशस्याभरणविशेषस्य, विशेषतः कुमारेण स्वगात्रादवतार्य दत्तस्येयं परित्यागभूमिः ?

मलयकेतुः—वाचिकमप्याप्ततमात्सिद्धार्थकाच्छ्रोतव्यमिति लिखितमार्येण।

राक्षसः—कुतो वाचिकम् ? कस्य वा लेखः ? अयमेवास्मदीयो न भवति।

मलयकेतुः—इयं तर्हि कस्य मुद्रा ?

राक्षसः—कुमार ! कपटमुद्रामप्युत्पादयितुं शक्नुवन्ति धूर्ताः।

भागुरायणः—कुमार ! सम्यगमात्यो विज्ञापयति। सिद्धार्थक ! केनायं लिखितो लेखः ?

सिद्धार्थकः—(राक्षसमुखमवलोक्य तूष्णीमधोमुखस्तिष्ठति।)

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—अमात्य, यह लेख है।

राक्षस—(पढकर) कुमार यह शत्रु की चाल है।

मलयकेतु—पत्र को पूरा करने के लिये आर्य ने यह आभूषण भेजा है। तब यह शत्रु की चाल कैसे है? (आभूषण दिखाता है)।

राक्षस—(आभरण देखकर) कुमार, मैने नही भेजा है। यह तो कुमार ने मुझे दिया था और मैंने पारितोषिक के रूप मे सिद्धार्थक को दे दिया था।

भागुरायण—ऐ अमात्य, ऐसे विशिष्ट आभूषण का विशेष करके कुमार के द्वारा अपने शरीर से उतार कर दिए हुए का यह देने का स्थान है?

मलयकेतु—आर्य ने यह भी लिखा है कि अति विश्वासपात्र सिद्धार्थक से मौखिक सदेश भी सुनना चाहिए।

राक्षस—कहाँ से जबानी संदेश या किसका पत्र। यह पत्र ही मेरा नही है।

मलयकेतु—तो यह किसकी मुहर है?

राक्षस—कुमार, धूर्त लोग जाली मुद्रा भी बना सकते है।

भागुरायण—कुमार, अमात्य ठीक कहते है। सिद्धार्थक, यह पत्र किसने लिखा है?

सिद्धार्थक—(राक्षस का मुँह देखकर चुपचाप मुँह नीचा करके खड़ा रहता है)।

Bhagurayan—Minister, this is the letter

Rakshas (*Reading*)—This is a plot of the enemy

Malayaketu—This jewellery too is sent by Noble Sir, as an accompaniment to the letter, how then is it a move of the enemy?

Rakshas (*observing the jewellery*)—Prince, this was not sent by me, it was given to me by Prince and I gave it to Siddharthaka as reward

Bhagurayan—Minister, is this the place to part with such jewellery specially what has been gifted by the prince after taking off from his own person?

Malayaketu—Noble Sir, has also written that the oral message has to be heard from Siddharthaka who is trustworthy

Rakshas—From whom is the oral message? To whom is the oral message? The letter itself is not mine

Malayaketu—Then whose seal is this?

Rakshas—Prince, the wily can make forged seals too

Bhagurayan—Prince, the Minister says the truth Siddharthaka, by whom was this letter written?

Siddharthaka—(Keeps silence with head down cast after having looked at Rakshas's face)

टिप्पणी

परित्यागभूमिः—मलयकेतु के कहने का भाव यह है कि कुमार ने जो आभूषण आपको दिये वे बहुमूल्य है। वे राजाओ के ही धारण करने योग्य है। अत आपने सिद्धार्थक को तो दिया न होगा। निश्चय ही वे आभूषण चन्द्रगुप्त के पास भेजे जा रहे है।

भागुरायणः—अलं पुनरात्मानं ताडयित्वा। कथय।

सिद्धार्थकः—अज्ज सअडदासेण। (आर्य शकटदासेन।)

राक्षसः—कुमार, यदि शकटदासेन लिखितस्तर्हि मयैव लिखितः।

मलयकेतुः—विजये, शकटदासं द्रष्टुमिच्छामि।

प्रतीहारी—जं कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।)

भागुरायणः—(स्वगतम्) न [illegible] खल्वनिश्चितार्थमार्यचाणक्यप्रणिधयोऽभिधास्यन्ति। आगत्य शकटदासो वा 'सोऽयं लेखः' इति प्रत्यभिज्ञाय पूर्ववृत्तं प्रकाशयेत्। एवं सति सन्दिहानो मलयकेतुरस्मिन् प्रयोगे श्लथादरो भवेत्। (प्रकाशम्) कुमार! न कदाचिदपि शकटदासोऽमात्यराक्षसस्याग्रतो 'मया लिखितः' इति प्रतिपत्स्यते, अतोऽन्यलिखितमस्यानीयतां, यतो वर्णसंवाद एवैतत् सर्वं विभावयिष्यति।

मलयकेतुः—विजये! एवं क्रियताम्।

भागुरायणः—कुमार! मुद्रामप्यानयत्वियम्।

मलयकेतुः—उभयमप्यानीयताम्।

प्रतीहारी—जं कुमालो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।) (इति निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य) कुमाल! इदं क्खु तं सअडदासेण स्सहत्थलिहिदं पत्तअं मुद्दा अ। (कुमार! इदं खलु तत् शकटदासेन स्वहस्तलिखितं पत्रं मुद्रा च।)

मलयकेतुः—(उभयमपि नाट्येनावलोक्य) आर्य ! संवदन्त्यक्षराणि ।

राक्षसः—(स्वगतम्) संवदन्त्यक्षराणि, शकटदासस्तु मम मित्रमिति च विसंवदन्त्यक्षराणि, तत् किं शकटदासेन लिखितम् ?

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—बोलो, क्यो मार खाते हो ?

सिद्धार्थक—आर्य, शकटदास ने।

राक्षस—कुमार, यदि शकटदास ने लिखा है तो मेरा ही लिखा हुआ है।

मलयकेतु—विजये, शकटदास को बुलाओ।

प्रतीहारी—जैसी कुमार की आज्ञा।

भागुरायण—(मन में) आर्य चाणक्य के दूत तो बिना सोचे समझे कुछ कहेंगे नही। आकर शकटदास यदि पहचान कर यह कह दे कि "यह वही लेख है" और सभी पुरानी बातें खोल दे तो इस चाल का मलयकेतु पर प्रभाव नष्ट हो जायगा। (प्रकट), कुमार, अमात्य राक्षस के सामने शकटदास यह कभी नही कहेगा कि यह मेरा लेख है। इसलिए उसकी कोई दूसरी लिखावट मँगा लें और उससे सब बातों का पता चल जायगा।

मलयकेतु—विजये, ऐसा ही करो।

भागुरायण—कुमार, मुद्रा भी मँगा लीजिए।

मलयकेतु—दोनो चीजे लाई जॉय।

प्रतीहारी—जैसी कुमार की आज्ञा। (जाकर और फिर प्रवेशकर) कुमार, यह रहा शकटदास का हस्तलिखित पत्र और यह रही मुद्रा।

मलयकेतु—(दोनो को देखने का अभिनय करके) अमात्य, लिखावट तो दोनो की मिलती-जुलती है।

राक्षस—(मन मे) अक्षर तो मिलते-जुलते है, पर यह सोचकर कि शकटदास मेरा मित्र है भला कैसे मिल सकते है, तो क्या सचमुच शकटदास ने लिखा है—

Bhagurayan—Speak, do not get beaten?

Siddharthaka—Noble Sir, by Shakatdasa

Rakshas—Prince, if it is written by Shakatdasa, then it is written by me

Malayaketu—Vijaya, I wish to see Shakatdasa

Warder—As Prince commands

Bhagurayan (*To himself*)—The spies of Noble Chanakya will not say anything without verifying it Shakatdasa, on coming and recognising the letter might disclose past events.

Then Malayaketu, who is becoming suspicious, might shake his faith in the plot (*Aloud*) Prince, Shakatdasa will never admit in the presence of Minister, that this was written by him So let some others of his writing be produced and resemblance of the characters will enable us to guess everything

Malayaketu—Vijaya, do it

Bhagurayan—Prince, let the seal too be brought

Malayaketu—Let both the things be brought

Warder—As the Prince orders (*Going out and re-entering*) This is the letter written by Shakatdasa and this is the seal

Malayaketu—(*Acting the inspection of both*) Noble Sir, characters agree (are similar)

Rakshas (*To himself*)—The characters agree, but the letters do not agree with the fact that Shakatdasa is a friend Then was it written by Shakatdasa ?

टिप्पणी

(१) **ततो मयैव लिखित**—राक्षस का यह कथन उसकी शकटदास के साथ अति घनिष्ठ मित्रता को सूचित करता है। उसका विश्वास है कि शकटदास ऐसा लेख कभी भी नही लिखेगा। यही कारण है कि वह बिना सोचे-समझे भी उक्त बात कह डालता है। (२) **सवदन्ति**—मिलते-जुलते है। राक्षस के मन मे शकटदास के प्रति कुछ सन्देह उत्पन्न हो रहा है। वह कहता है कि अक्षर तो मिलते है पर मित्र होने के नाते क्या शकटदास ऐसा पत्र लिखेगा, या हो सकता है कि उसने लिखा होगा। राक्षस का मन कुछ निश्चय नही कर पाता।

स्मृतं स्यात् पुत्रदाराणां विस्मृताः स्वामिभक्तयः।
चलेष्वर्थेषु लुब्धेन न यशःस्वनपायिषु ॥१४॥

अन्वय—चलेषु अर्थेषु लुब्धेन न अनपायिषु यश सु (लुब्धेन) स्वामिभक्तय. विस्मृता, पुत्रदाराणा स्मृत स्यात् ॥१४॥

हिन्दी अनुवाद—अरे क्षणिक लाभ के लोभी, चिरस्थायी यश को खो देने वाले क्या बाल-बच्चो की स्मृति तुझे हो आयी, क्या सारी स्वामिभक्ति यकायक भूल गये ?

Could it be that (*Shakatdasa*) greedy after fleeting wealth and not desirous of ever-lasting fame, thought of his wife and children and ignored his loyalty to master

संस्कृत व्याख्या—चलेषु अर्थेषु नश्वरेषु धनेषु लुब्धेन लोभयुक्तेन न अनपा-

यिषु चिरस्थायिषु राजभक्तिमहाफलेषु कीर्तिलाभेषु स्वामिभक्तय विस्मृता त्यक्ता पुत्रदाराणा पुत्रकलत्राणा स्मरण कृत स्यात् अर्थात् शकटदासेनैव पत्र-मिद लिखित भवेत् पुत्रकलत्रवित्तादिषु अर्थनीयेषु वस्तुषु गर्धावता तेन राजद्रोहिणा शकटदासेन लिखितम् इति उपपद्यते ।

टिप्पणी

राक्षस यह सोच रहा है कि अपने लडके बच्चो व स्त्री का ख्याल करके कि वे बधनमुक्त हो जायेगे शकटदास ने स्वामिभक्ति त्याग कर चन्द्रगुप्त के लिए यह पत्र लिखा हो। (१) **चलेषु**—नाशवान्, (२) **अनपायिषु**—स्थायी (यश) स्वामिभक्ति से स्थायी यश की प्राप्ति है। धन और पुत्र-कलत्र तो अस्थायी है। इस श्लोक मे परिसख्या अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

अथवा, कः सन्देहः ?

मुद्रा तस्य कराङ्गुलिप्रणयिनी सिद्धार्थकस्तत्सुहृत्
तस्यैवापरलेख्यसूचितमिदं पत्रं प्रयोगाश्रयम् ।
सुव्यक्तं शकटेन भेदपटुभिः सन्धाय सार्द्धं परै-
र्भर्तृस्नेहपराङ्मुखेन कृपणं प्राणार्थिना चेष्टितम् ।।१५।।

अन्वय—प्राणार्थिना भर्तृस्नेहपराङ्मुखेन शकटेन भेदपटुभि परै सार्द्धं सन्धाय कृपण चेष्टितम् (इति) सुव्यक्तम्। (यतो हि) मुद्रा तस्य कराङ्गुलि-प्रणयिनी, प्रयोगाश्रयम् अपरलेख्यसूचितम् इद पत्र तस्यैव, सिद्धार्थक तत्सुहृत् ।।१५।।

हिन्दी अनुवाद—अथवा अब सन्देह कहाँ रह गया। यह अङ्गुलीयक मुद्रा निरन्तर उसकी उँगलियो के साथ रहने वाली, यह सिद्धार्थक उसका परम मित्र, यह कपटपत्र उसकी लिखावट से मिलती लिखावट वाला। संदेह अब कहाँ, अरे यह तो हमारे भेद-पटु शत्रुओ से सर्वथा मिले, स्वामिभक्ति से विमुख, अपने और अपने बाल-बच्चो के प्राणो के ही एकमात्र मोही इस नीच शकटदास का ही काम है।

Or what doubt can be in this matter ? This writing, the root of this plot, is indeed his, for it is identified by another writing, the seal is a companion of his fingers, Siddharthaka is his friend Indeed Shakatdasa desirous of (saving the life of his wife and children) and being disloyal to the master, has thus meanly acted entering into intrigue with the enemies that are clever in causing a discord

संस्कृत व्याख्या—प्राणार्थिना पुत्रदारादिजीवनाभिलाषिणा भर्तृस्नेहपराङ्मुखेन भर्तु. स्वामिनः स्नेह प्रेम तस्मात् पराङ्मुखेन विमुखेन शकटेन शकटदासेन भेदपटुभि उपजापचतुरै परै शत्रुभि सार्धम् सह सन्धाय सधि कृत्वा कृपण महाकदर्य चेष्टितम् आचरितम् इति सुव्यक्तम् स्पष्टम् मुद्रा तस्य अङ्गुलिमुद्रा तस्य शकटदासस्य कराङ्गुलिप्रणयिनी राज्यकार्यकरणाय मदर्पितत्वात्सदा तदङ्गुलिवर्तिनी एव इति प्रयोगाश्रयम् शत्रोरस्मत्सधिभेदनौपयिककूटनयव्यवहारविदानाम् अपरलेख्यसूचितम् अपरेण अन्येन लेख्येन सूचितम् सवादितम् इद दृश्यमान पत्र तस्यैव सिद्धार्थक तत्सुहृत् तस्य मित्रम् ।

टिप्पणी

(१) **प्राणार्थिना**—स्त्री-पुत्र के जीवन को बचाने की इच्छा से। (२) **भर्तृस्नेहपराङ्मुखेन**—स्वामिभक्ति से विमुख। परा अञ्चति इति परा+अञ्च्+क्विप् कर्तरि=पराच्। पराक् मुखम् अस्य इति पराङ्मुख, तेन। (३) **भेदपटुभिः**—भेद डालने मे चतुर। (४) **कृपणम्**—बुरा। (५) **कराङ्गुलिप्रणयिनी**—हमेशा हाथ की उँगलियो मे रहने वाली। (६) **प्रयोगाश्रयम्**—शत्रुकृत भेद का मूल। प्रयोग शत्रुकृतभेदोपाय तस्य आश्रय आलम्ब यस्य तथाभूतम्। प्रयोग चार प्रकार का होता है—साम, दान, दण्ड, भेद। (७) **अपरलेख्यसूचितम्**—दूसरी लिखावट से मिलता हुआ। इसमे काव्यलिग तथा समुच्चय अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

मलयकेतुः—आर्य! 'अलङ्कारत्रयं श्रीमता यदनुप्रेषितं, तदुपगतम्' इत्यार्येण यल्लिखितं, तन्मध्यादेकं किमिदम्? (निर्वर्ण्यात्मगतम्) कथं तातेन धृतपूर्वमिदमाभरणम्? (प्रकाशम्) आर्य, कुतोऽयमलङ्कारः?

राक्षसः—वणिग्भ्यः क्रयादधिगतः।

मलयकेतुः—विजये! अपि प्रत्यभिजानाति भवती भूषणमिदम्।

प्रतीहारी—(निर्वर्ण्य सवाष्पम्) कुमाल! कहं ण पच्चभिआणिस्सं? इमं क्खु सुगिहीदणामधेएण देएण पब्बदी-

सरेण धारिदपुब्बं । (कुमार ! कथं न प्रत्यभिज्ञास्यामि ? इदं खलु सुगृहीतनामधेयेन देवेन पर्वतेश्वरेण धारितपूर्वम् ।)

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—आर्य, आपने लिखा है कि "श्रीमान् ने जो तीन आभूषण भेजे थे वह मिले" सो क्या उन्ही में से यह एक है ? (अच्छी तरह देख कर मन मे) पहले पिता जी के द्वारा धारण किए गए ये ही आभूषण है। (प्रकट) आर्य, अलङ्कार आपको कहाँ से मिला ?

राक्षस—बनियो से खरीद कर प्राप्त किया।

मलयकेतु—विजये, क्या तुम इस आभूषण को पहचानती हो ?

प्रतीहारी—(भली-भाँति देखकर आँसू के साथ) कुमार, कैसे न पहचानूँगी। प्रातःस्मरणीय देव पर्वतेश्वर पहले इसको धारण करते थे।

Malayaketu—Noble Sir, you have written "The three ornaments which were sent by you have been received" Is it one of them (*Observing carefully, to himself*) How so, this ornament was previously put on by father (*Aloud*) Noble Sir, how did you get this ornament ?

Rakshas—Got by purchasing from merchants

Malayaketu—Vijaya, do you recognise this ornament ?

Warder (*Looking carefully with tears*)—How can I not recognise it It was previously worn by Parvateshwara of auspicious name

टिप्पणी

(१) **प्रत्यभिजानाति**—पहचानती है। प्रति+अभि+ज्ञा+लट्। अत्र 'सम्प्रतिभ्यामनाध्याने' इति सूत्रेण नात्मनेपदम् अभिना व्यवधानात्। (२) **निर्वर्ण्य**—ध्यान से देखकर। निर्+वर्ण्+णिच्+क्त्वा—ल्यप्।

मलयकेतुः—(सवाष्पम्) हा तात !—

एतानि तानि तव भूषणवल्लभस्य
गात्रोचितानि कुलभूषण ! भूषणानि ।
यैः शोभितोऽसि मुखचन्द्रकृतावभासो
नक्षत्रवानिव शरत्समयप्रदोषः ॥१६॥

अन्वय—कुलभूषण ! भूषणवल्लभस्य तव गात्रोचितानि एतानि तानि भूषणानि यैः शोभितः मुखचन्द्रकृतावभासः नक्षत्रवान् शरत्समयप्रदोषः इव असि ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद---मलयकेतु---(आँसुओं के साथ) हा तात, हा कुलभूषण! आभूषण के प्रेमी आपके शरीर के योग्य ये आभूषण है, जिनसे सुशोभित होकर (अपने) मुखचन्द्र से प्रकाशमान ताराखचित शरत्कालीन सांध्य समय की भाँति कभी आप चमक उठते थे।

Malayaketu (with tears)—Alas father, the ornament of your race and the lover of ornaments, these are the ornaments befitting your body decorated with which you seemed to be like dusk in the autumn season decorated with stars, with light of your moon-like face

संस्कृत व्याख्या—अयि कुलभूषण अस्मद्राजवशमहाविभूषण अस्मत्पूज्य-पितृदेव! भूषणवल्लभस्य प्रियभूषणस्य तव महाराजस्य गात्रोचितानि शरीर-योग्यानि एतानि तानि भूषणानि प्रसिद्धानि महार्घाणि भूषणानि अलङ्काराणि यै शोभित अलकृत मुखचन्द्रकृतावभास स्वमुखचन्द्रभूषित विद्योतितस्व-मुखेन्दुस्तथाभूत नक्षत्रवान् शरत्समयप्रदोष इव सतारकशारदीयसाध्यसमय इव शोभितोऽसि किमप्यद्भुत रामणीयक प्रकाशितवानसीति।

टिप्पणी

(१) **एतानि तानि भूषणानि**—यद्यपि राक्षस ने एक ही आभूषण पहन रखा है तथापि शोकविह्वल मलयकेतु उसको देखकर अपने पिता के कई आभूषणो का स्मरण करके यहाँ बहुवचन का प्रयोग कर रहा है। (२) **भूषणवल्लभस्य**—भूषण प्रिय है जिसको। भूषणानि वल्लभानि यस्य स तस्य। (२) **मुखचन्द्र-कृतावभासः**—मुखचन्द्र से प्रकाश करने वाला। मुखचन्द्रेण कृत अवभास येन तादृश। इसमे रूपक एवम् उपमा अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

राक्षसः---(स्वगतम्) कथं पर्वतेश्वरधृतपूर्वाणीत्याह? (प्रकाशम्) व्यक्तमेतान्यपि तेन चाणक्यप्रयुक्तेन वणिग्जने-नास्मासु विक्रीतानि।

मलयकेतुः---आर्य! तातेन धृतपूर्वाणामाभरणविशेषाणां विशेषतश्चन्द्रगुप्तहस्तगतानां वणिग्भ्यः क्रयादधिगम इति न युज्यते, अथवा युज्यत एवैतत्---

हिन्दी अनुवाद---राक्षस---(अपने मन मे) यह कैसे कहा कि पहले पर्वतेश्वर इसे धारण करते थे। (प्रकट) स्पष्ट है कि ये आभूषण भी चाणक्य द्वारा नियुक्त बनियो ने हमारे हाथ बेच दिया।

मलयकेतु—आर्य पिता जी द्वारा पहले धारण किए गए और विशेष करके चन्द्रगुप्त के हाथ में गए हुए विशिष्ट आभूषणो का बनियों से खरीदना ठीक नहीं है। अथवा यह ठीक ही है।

Rakshas (*To himself*)—How so, he says they were formerly put on by Parvateshwara (*Aloud*) It is quite clear that these ornaments too were sold to me by the merchants set on by Chandragupta

Malayaketu—Noble Sir, it is not proper to purchase from merchants the ornaments worn by father specially which fell into the hands of Chandragupta or perhaps it is proper

टिप्पणी

इति न युज्यते—मलयकेतु के कहने का तात्पर्य है कि इन आभूषणो को चन्द्रगुप्त ने किसी अन्य के हाथ मे बेचा हो और उसने पुन आपके हाथो बेचा हो—यह बात जँचती नही है।

चन्द्रगुप्तस्य विक्रेतुरधिकं लाभमिच्छतः।
कल्पिता मूल्यमेतेषां क्रूरेण भवता वयम् ॥१७॥

अन्वय—अधिक लाभम् इच्छत विक्रेतु चन्द्रगुप्तस्य क्रूरेण भवता वयम् एतेषा मूल्य कल्पिता ॥१८॥

हिन्दी अनुवाद—अधिक लाभ चाहने वाले विक्रेता चन्द्रगुप्त के लिए निर्दयी आपने मुझे ही इन आभूषणो का मूल्य बनाया है (अर्थात् मुझे उसके हाथो में सौप दिया है)।

You, the cruel one, have offered myself as the price of these ornaments, to Chandragupta the seller who desires a big profit

संस्कृत व्याख्या—अधिक लाभम् इच्छत वाञ्छत विक्रेतु विनिमयकामस्य चन्द्रगुप्तस्य क्रूरेण दयारहितेन भवता त्वया राक्षसेन वयम एतेषामाभूषणानाम् मूल्यम् कल्पिता निरूपिता।

टिप्पणी

वयम्—यहाँ 'अस्मदो द्वयोश्च' सूत्र से बहुवचन हुआ है। इस श्लोक मे परिवृत्ति अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

राक्षसः—(आत्मगतम्) अहो! सुश्लिष्टोऽयमभूच्छत्रु-प्रयोगः। कुतः?—

लेखोऽयं न ममेति नोत्तरमिदं मुद्रा मदीया यतः
सौहार्दं शकटेन खण्डितमिति श्रद्धेयमेतत् कथम् ? ।
मौर्ये भूषणविक्रयं नरपतौ को नाम सम्भावयेत् ?
तस्मात् सम्प्रतिपत्तिरेव हि वरं न ग्राम्यमत्रोत्तरम् ।।१८।।

अन्वय—अय लेखो मम न इति इद न उत्तरम् यत मुद्रा मदीया। शकटेन सौहार्द खण्डितम् इति एतत् कथ श्रद्धेयम् ? नरपतौ मौर्ये को नाम भूषणविक्रयं सम्भावयेत् ? तस्मात् अत्र सम्प्रतिपत्तिरेव हि वर, ग्राम्यम् उत्तर न ।।१८।।

हिन्दी अनुवाद—**राक्षस—(मन में) ओह शत्रुओ की चाल कैसी सफल हो गई। क्योकि यह तो कोई उत्तर नही है कि लेख मेरा नही है क्योकि मुहर तो मेरी ही है। और यह कैसे मान लूँ कि शकटदास ने विश्वासघात किया। यह कौन मानेगा कि मौर्य सम्राट् (चन्द्रगुप्त) आभूषण बेचता होगा। अतः अपराध स्वीकार कर लेना ही ठीक है। इधर-उधर का उत्तर देना ठीक नही।**

Rakshas (*To himself*)—Ha, the enemy's plot has been fully successful "This letter is not mine" is no answer, because the seal is mine, and how should I believe that Shakatdas has severed friendship (*has decieved me*) Who would indeed think that the Maurya king sells ornaments, so in this matter it is better to admit the guilt than to give a reply

सस्कृत व्याख्या—अय लेख मदीय न इदम् पत्रम् मम न इति उत्तरम् न (उचितमिति) यत मुद्रा मदीया मामकीना। शकटेन शकटदासेन सौहार्दम् मित्रता खण्डितम् त्यक्तम् इति कथम् श्रद्धेयम् केन प्रकारेण विश्वासयोग्यम्। नरपतौ राजनि मौर्ये चन्द्रगुप्त को नाम क जन भूषणविक्रय अलकारपणन सम्भावयेत् विश्वास कुर्यात् अर्थात् चन्द्रगुप्त भूषणानि विक्रीणीते यानि राक्षस. क्रीणानि इति कोऽपि न कथयिष्यति। तस्मात् सम्प्रतिपत्ति एव दोषस्वीकरणम् एव वरम् निर्दोषताघोषणम् न वरम्।

टिप्पणी

(१) **सौहार्दम्**—मित्रता। सुहृद भाव इति सौहार्दम् सुहृद+अण्, 'हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च' इत्युभयपदवृद्धि। (२) **मौर्ये भूषणविक्रयम्**—यह कौन मानेगा कि चन्द्रगुप्त भूषण बेचता है और जो आभूषण राक्षस पहने था वह उसने खरीदा है। यह आभूषण तो पर्वतेश्वर पहनता था। अत लोग

यही समझेगे कि उसे मरवाने के उपलक्ष्य मे इन्हे राक्षस ने पाया है। इसलिए राक्षस सोचता है कि अपराध अपने ऊपर ले लेना ही ठीक है, सफाई देना ठीक नही। इसमे काव्यलिग अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

मलयकेतुः—एतदार्यं पृच्छामि।

राक्षसः—(सवाष्पम्) कुमार य आर्यस्तं पृच्छ, वयमिदानीमनार्याः संवृत्ताः।

मलयकेतुः—

मौर्योऽसौ स्वामिपुत्रः परिचरणपरो मित्रपुत्रस्तवाहं
दाता सोऽर्थस्य तुभ्यं स्वमतमनुगतस्त्वन्तु मह्यं ददासि।
दास्यं सत्कारपूर्वं ननु सचिवपदं तत्र ते स्वाम्यमत्र
स्वार्थे कस्मिन् समीहा पुनरधिकतरे त्वामनार्यं करोति ।।१६।।

अन्वय—तव असौ मौर्य स्वामिपुत्र, अह परिचरणपर मित्रपुत्र। स तुभ्यम् अर्थस्य दाता, त्व तु स्वमतमनुगत मह्य ददासि। तत्र ते सचिवपद सत्कारपूर्व दास्य ननु, अत्र स्वाम्यम्। पुन अधिकतरे कस्मिन् स्वार्थे समीहा त्वाम् अनार्य करोति ? ।।१६।।

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—आर्य से यह पूछता हूँ।

राक्षस—(आँसू के साथ) कुमार, जो आर्य हो उससे पूछो। मै तो इस समय अनार्य हो गया हूँ।

मलयकेतु—पर मौर्य तुम्हारे स्वामी का लडका है। मै परिचर्या में लगा हुआ मित्र का पुत्र हूँ। वह तुमको द्रव्य देगा यहाँ तुम जो चाहते हो वह मुझे देते हो। वहाँ तुम्हारा मंत्री होना भी दासता है और यहाँ तो तुम स्वामी हो। फिर इससे बढ़कर आप को कौन सी कामना है जो तुम्हें अनार्य बना रही है।

Malayaketu—I ask Noble Sir, this

Rakshas (*with tears*)—Prince, ask him who is noble I am now ignoble

Malayaketu—This Maurya is your master's son I am the son of your friend who is always attending you He is the giver of wealth to you, but to me you give according to your wishes, there, though you are minister yet your office is of slavery, here this (office) is of a master, then for what more is your desire that makes you ignoble

संस्कृत व्याख्या—तव असौ अयम् मौर्य चन्द्रगुप्त स्वामिपुत्र प्रभो तनयः अहम् परिचरणपर सततसेवालग्न मित्रपुत्र सुहृत्तनय स मौर्य तुभ्यम् अर्थस्य धनस्य दाता त्व स्वयमनुगत स्वेच्छानुरूप मह्यम् ददासि अर्थात् यद् वाञ्छसि तत् ददासि• तत्र ते सचिवपदम् साचिव्याधिकारग्रहणम् नतु सत्कारपूर्वम् दास्यम् समानितभृत्यकर्मेव केवलम् किन्तु अत्र मत्सकाशे स्वाम्य प्रभुता। पुन भूयः अधिकतरे कस्मिन् स्वार्थे प्रयोजने समीहा इच्छा त्वामनार्य करोति विदधाति। भूय विचार्यापि तव मन पार नैव प्राप्त शक्नोमीति महाकृतघ्नस्त्वमिति भाव ।

टिप्पणी

मलयकेतु के कहने का भाव यह है कि वहाँ तो तुम चन्द्रगुप्त के अधीन ही रहोगे और यहाँ तो स्वय मालिक हो। फिर अब क्या चाहते हो जो अपने को अनार्य कहते हो। इस श्लोक मे यथासख्य अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

राक्षसः—कुमार! एवमयुक्तव्याहारिणा भवतैव मे निर्णयो दत्तः। कुतः?—('मौर्योऽसौ स्वामिपुत्रः' इति युष्मदस्मदोर्व्यत्ययेन पठति।)

मलयकेतुः—(लेखमलङ्करणस्थगिकाञ्च विनिर्दिश्य) इदमिदानीं किम्?

राक्षसः—(सबाष्पम्) विधेर्विलसितमिदं, कुतः?

भृत्यत्वे परिभावधामनि सति स्नेहात् प्रभूणां सतां
पुत्रेभ्यः कृतवेदिनां कृतधियां येषामभिन्ना वयम्।
ते लोकस्य परीक्षकाः क्षितिभृतः पापेन येन क्षता-
स्तस्येदं विपुलं विधेर्विलसितं पुंसां प्रयत्नच्छिदः ॥२०॥

अन्वय—कृतधिया कृतवेदिना येषा सता प्रभूणा वय परिभावधामनि भृत्यत्वे सति स्नेहात् पुत्रेभ्य अभिन्ना, ते लोकस्य परीक्षका क्षितिभृत येन पापेन क्षता तस्य पुसा प्रयत्नच्छिद विधे इद विपुल विलसतिम् ॥२०॥

राक्षस—इस प्रकार अनुचित बात कह करके आपने ही मेरा निर्णय कर दिया है; क्योकि (मौर्योऽसौ स्वामिपुत्रः) इस श्लोक मे युष्मत् और अस्मत् शब्दो को एक दूसरे से बदल कर पढता है।

मलयकेतु—(लेख और गहनो की पेटी को बता कर) अब यह क्या है?

राक्षस—(आँसू के साथ) यह भाग्य की लीला है; क्योंकि यह तो उस भाग्य का फेर है जो मनुष्य के पुरुषार्थ का शत्रु है यदि ऐसा न होता तो वे न्यायपरायण राजराजेश्वर क्यों नष्ट हो जाते जिनके लिए, जिन प्रभुत्वशालियो के लिए, जिन परोपकारपरायणो के लिए और जिन सदसद्विवेककर्त्ताओ के लिए, सेवक होने पर अपमान का पात्र होकर भी केवल उनके स्नेहवश हम निरन्तर पुत्रवत् रहते आये।

Rakshas—speaking so ignobly you yourself have given decision about me. For (Repeats मौर्योऽसौ) with an interchange of युस्मद् and अस्मद्

Malayaketu—(*Pointing at the letter and the box of ornaments*) What then is this ?

Rakshas (*with tears*)—This is the play of Fate For This is the play of Fate which is the enemy of human efforts, Fate by whom those kings who could see through men, were slain, who, being of trained intellect, were appreciators of services and were good masters and to whom we were like sons through kindness, whom we served inspite of insults

संस्कृत व्याख्या—कृतधियाम् कृता समाहिता धी बुद्धि येषा ते तेषा समाहित-चित्तानाम् कृतवेदिनाम् कृत कर्म विदन्ति जानन्ति ये तादृशानाम् गुणज्ञानाम् येषा सता प्रभूणाम् नृपोत्तमानाम् वयम् अहम् परिभावधामनि परिभावस्य अव-मानस्य यत् धाम आस्पदम् तस्मिन् भृत्यत्वे सेवकत्वे सति स्नेहात् पुत्रेभ्य अभिन्ना पुत्रवदाहृता ते तथाविधा लोकस्य परीक्षका पुरुषस्य परीक्षका निर्णायका क्षितिभृत राजान येन पापेन दुराचारेण विधिना क्षता नाशिता तस्य भाग्यस्य पुसाम् जनानाम् प्रयत्नच्छिद उद्योगनाशिन विधे दैवस्य इदम् दृश्यमानम् विपुल विलसितम् महती किल लीला।

टिप्पणी

(१) **अयुक्तव्याहारिणा**—अनुचित बात कह करके। अयुक्त व्याहरति इति अयुक्त+वि+आ+हृ+णिनि। (२) **युष्मदस्मदोर्व्यत्ययेन**—युस्मद् और अस्मद् शब्द के व्यत्यय से (उलट-पुलट करके यह श्लोक बनता है)—मौर्योऽसौ स्वामिपुत्र परिचरणपरो मित्रपुत्रो मम त्वम् दाता सोऽर्थस्य मह्य स्वमतमनुगतोऽह तु तुभ्य ददामि। दास्य सत्कारपूर्व ननु सचिवपद तत्र मे स्वाम्यमत्र स्वार्थे कस्मिन् समीहा पुनरधिकतरे मामनार्य करोति॥

(३) **विलसितम्**—काम। लीला। (४) **कृतधियाम्**—सयतचित्तवाले।

(५) **कृतवेदिनाम्**—उपकार को मानने वाले, कृतज्ञ। ये सब विशेषण प्रभूणा (नन्दानाम्) के लिए आया है। इससे राक्षस मलयकेतु के प्रति यह भाव व्यक्त कर रहा है कि तुम असज्जन हो, कृतघ्न हो और साथ ही मूर्ख भी हो। (६) **परिभावधामनि**—अपमान का घर। नौकरी अपमान का घर है। (७) **प्रयत्नच्छिदः**—उपायो को नष्ट करने वाले (का) प्रयत्न छिनत्ति इति प्रयत्न+छिद्+क्विप्। (८) **क्षताः**—नाश कर दिये गए। भाग्य के आगे पराक्रम नही काम करता। इसी से इसको प्रयत्नच्छिद कहा है। इस पद्य मे अतिशयोक्ति एव परिसख्या अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

मलयकेतुः—(सक्रोधम्) कथमद्यापि निह्नूयते विधेर्विलसितमिदं, न ममेति? अनार्य!

कन्यां तीव्रविषप्रयोगविषमां कृत्वा कृतघ्न! त्वया
विस्रम्भप्रवणः पुरा मम पिता नीतः कथाशेषताम्।
सम्प्रत्याहितगौरवेण भवता मन्त्राधिकारे रिपोः
प्रारब्धाः प्रणयाय मांसवदहो! विक्रेतुमेते वयम्॥२१॥

अन्वय—कृतघ्न! पुरा त्वया तीव्रविषप्रयोगविषमा कन्या कृत्वा विस्रम्भप्रवण मम पिता कथाशेषता नीत। सम्प्रति अहो रिपो मन्त्राधिकारे आहितगौरवेण भवता प्रणयाय एते वय मासवत् विक्रेतु प्रारब्धा॥२१॥

हिन्दी अनुवाद—मलयकेतु—(क्रोध से) क्यो अब भी छिपा रहे हो और कहते हो कि यह सब भाग्य का किया हुआ है और मैंने कुछ नही किया। अनार्य, कृतघ्न, तुमने पहले अपने ऊपर विश्वास करने वाले मेरे पिता के ऊपर विषकन्या का प्रयोग करके उनकी हत्या की। अब भी हमारे शत्रु के महासचिव के पद पर अपनी आँखें लगाए हुए तुम यही चाहते हो कि हम तो मांस के टुकड़े के समान बिक जॉय और तुम उसकी कृपा का प्रसाद प्राप्त कर लो।

Malayaketu (*Angrily*)—What, even now you are concealing by saying that it was done by fate not by me Ignoble man, previously you, the ungrateful one, caused the death of my father by using the poisoned girl—my father who had placed confidence in you Now your eyes are set (*lit esteem has been placed by you*) on the office of Maha Mantri and to please the Maurya we are going to be sold by you like meat

संस्कृत व्याख्या—अरे कृतघ्न महापकार, महापचार राक्षस, पुरा प्रथमं त्वया

तीव्रविषप्रयोगविषमाम् तीक्ष्णरसदानेन जीवहत्री कन्याम् विषकन्या कृत्वा विस्रम्भ-प्रवण कृतभवद्विश्वास मम पिता जनक पर्वतेश्वर कथाशेषता नीत घानिन इत्यर्थ । सम्प्रति इदानीम् अहो आश्चर्यम् रिपो शत्रो मत्राधिकारे महामन्त्रिपदे आहितगौरवेण कृतनमस्कारेण प्राप्तमाहात्म्येन वा भवता एते वयम् प्रणयाय मौर्य प्रमादयितुम् मासवत् विक्रेतुम् पणायितु प्रारब्धा प्रक्रान्ता ।

टिप्पणी

(१) **निह्नूयते**—छिपाया जाता है। (२) **विस्रम्भप्रवणः**—विश्वास करने वाला। (३) **कथाशेषता नीतः**—मार डाला गया। ध्यान रहे कि 'राक्षस ने विषकन्या के माध्यम से पर्वतक को मार डाला था' यह सूचना अभी-अभी जीवसिद्धि के द्वारा मलयकेतु को मिली है। इसके पूर्व वह यही जानता था कि चाणक्य ने पर्वतक का विषकन्या के माध्यम से वध कराया था। (४) **मत्राधिकारे**—महामत्री के पद मे। (५) **आहितगौरवेण**—आँख लगाए हुए। चाहने वाले। (६) **प्रणयाय**—चन्द्रगुप्त को प्रसन्न करने के लिए। इसमे शार्दूल-विक्रीडित छन्द और पूर्णोपमा अलकार है।

राक्षसः—(स्वगतम्) अयमपरो गण्डस्योपरि विस्फोटः। (प्रकाशं कर्णौ पिधाय) शान्तं पापं, शान्तं पापम्। नाहं विषकन्यामारोपितवानपापोऽहं पर्वतेश्वरे।

मलयकेतुः—केन तर्हि व्यापादितस्तातः?

राक्षसः—दैवमत्र प्रष्टव्यम्।

मलयकेतुः—(सक्रोधम्) दैवमत्र प्रष्टव्यं, न क्षपणको जीवसिद्धिः?

राक्षसः—(स्वगतम्) कथं जीवसिद्धिरपि चाणक्य-प्रणिधिः? हन्त! हृदयमपि मे रिपुभिः स्वीकृतम्।

मलयकेतुः—(सक्रोधम्) भासुरक! आज्ञाप्यतां शिखर-सेनः सेनापतिः—'ये एतेन राक्षसेन सह सौहार्दमुत्पाद्यास्म-च्छरीरद्रोहेण चन्द्रगुप्तमाराधयितुकामाः पञ्च राजानः, तद्यथा—'कौलूतः चित्रवर्मा, मलयनरपतिः सिंहनादः, काश्मीरः पुष्कराक्षः, सिन्धुराजः सुषेणः, पारसीकाधिराजो

मेघाक्ष इति। तेषु त्रयः प्रथमा मदीयां भूमिं कामयन्ते, ते गम्भीरश्वभ्रमुपनीय पांशुभिः पूर्यन्ताम्, इतरौ तु द्वौ हस्तिबलकामौ हस्तिनैव घात्येतामि' ति।

पुरुषः—जं कुमारो आणवेदि। (यत् कुमार आज्ञापयति।) (इति निष्क्रान्तः।)

मलयकेतुः—(सक्रोधम्) राक्षस! राक्षस! नाहं विस्रम्भघाती राक्षसो, मलयकेतुः खल्वहं, तद गच्छ, समाश्रीयतां सर्वात्मना चन्द्रगुप्त इति,—

विष्णुगुप्तञ्च मौर्यञ्च समसम्प्यागतौ त्वया।
उन्मूलयितुमीशोऽहं त्रिवर्गमिव दुर्नयः ॥२२॥

अन्वय—त्वया समम् अपि आगतो विष्णुगुप्त च मौर्य च अह त्रिवर्ग दुर्नय इव उन्मूलयितुम् ईश ॥२२॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) यह मर्मस्थान के फोडे पर दूसरा फोडा है। (अर्थात् विपत्ति पर विपत्ति) (प्रकट, कानों को बन्द कर) पाप शान्त हो, पाप शान्त हो, मैंने पर्वतेश्वर पर विषकन्या का प्रयोग नही किया। मै पर्वतेश्वर का अपराधी नही हूँ।

मलयकेतु—तो पिता को किसने मारा?

राक्षस—भाग्य से पूछो।

मलयकेतु—(क्रोध से) दैव से पूछा जाय न कि इस क्षपणक जीवसिद्धि से।

राक्षस—(मन मे) ओह! तो क्या जीवसिद्धि भी चाणक्य का गुप्तचर निकला। हाय! तब तो शत्रुओ ने मेरे हृदय पर भी अधिकार कर लिया।

मलयकेतु—(क्रोध से) भासुरक, सेनापति शिखरसेन को आज्ञा दो कि ये जो मेरे शरीर से द्रोह करने वाले राक्षस के साथ मित्रता करके चन्द्रगुप्त की सेवा करने के इच्छुक पॉच राजा है जिनके नाम ये है—कुलूत का चित्रवर्मा, मलयदेश का राजा सिंहनाद, काश्मीर का पुष्कराक्ष, सिन्धुराज सुषेण, फारस का राजा मेघाक्ष—इनमे पहले तीन मेरी भूमि चाहते है उन्हे गहरे गड्ढे में ले जाकर मिट्टी से तोप दो और गजसेना चाहने वाले अन्य दो को हाथी से ही मरवा डालो।

पुरुष—जैसी कुमार की आज्ञा (चला जाता है)।

मलयकेतु—(क्रोध से) राक्षस, राक्षस, मै विश्वासघाती राक्षस नही हूँ, मै मलयकेतु हूँ। इसलिए जाओ और हर प्रकार से चन्द्रगुप्त का सहारा लो। तुम्हारे साथ आये हुए विष्णुगुप्त चाणक्य को और मौर्य को विनष्ट करने में मै उसी तरह समर्थ हूँ जैसे दुर्नीति धर्म, अर्थ और काम को नष्ट कर देती है।

Rakshas (*To himself*)—This is another boil on the corbuncle. (*Aloud, blocking the ears*) Begone sin, Begone sin, I did not set the poison girl on Parvateshwar I am not guilty of killing Parvateshwar

Malayaketu—Then who is it that killed the father ?

Rakshas—In this matter fate should be asked

Malayaketu (*With anger*)—Fate should be asked in this matter and not Jiwasiddhi, the mendicant

Rakshas (*To himself*)—Oh, is Jiwasiddhi also a spy of Chanakya ? Alas, my heart too has been owned by the enemies

Malayaketu (*With anger*)—Let Shikharasena, the commander in-chief be ordered thus—of these five kings, Chitravarman of Kuluta, Sinhanada, the king of Malawa, Pushkaraksha of Kashmir, Sushen, the king of Sindha, Meghanada the lord of Parasika, who having entered in agreement with Rakshas are desirous of serving Chandragupta by injuring my person, the first three want my lands, let them be taken to a deep hole and covered with sand, let the other two who greed after my force of elephants, be killed by an elephant

The servant—As Prince commands (*Exit*)

Malayaketu (*With anger*)—Rakshas, Rakshas, I am not Rakshas, the murderer of the tursting, I am Malayaketu, go and take shelter of Chandragupta in every way See I alone am able to destroy Vishnugupta, and the Maurya advancing with you, as bad policy is (*capable of destroying*) the group of three (piety, prosperity and propensity)

संस्कृत व्याख्या—(श्लोक २२) त्वया राक्षसेन समम् अपि सार्धम् अपि आगतौ आयातौ विष्णुगुप्तम् चाणक्य मौर्य च वृषल चाह् मलयकेतु त्रिवर्गम् धर्मार्थ-कामान् दुर्नय इव कुनीतिरिव उन्मूलयितुम् विनाशयितुम् ईश समर्थ अस्मि।

टिप्पणी

(१) **गण्डस्योपरि विस्फोट**—मर्मस्थान के फोडे (गण्ड) के ऊपर दूसरा फोडा (विस्फोट) अर्थात् चन्द्रगुप्त के साथ मिलकर षड्यन्त्र करने का आरोप तो लगा ही था अब पर्वतक को मारने का भी दोष मढा गया। यह सस्कृत की कहावत है। जैसे हिन्दी मे कहते है कि गरीबी मे आटा गीला। (२) **अस्मच्छरीर-द्रोहेण**—हमारे शरीर से द्रोह करके अर्थात् हमको नुकसान पहुँचा कर। (३) **कामयन्ते**—चाहते है। (४) **श्वभ्रम्**—गड्ढा। (५) **पांसुभिः**—मिट्टी

से। (६) **हस्तिबलकामौ**—(मेरी) हस्तिसेना को चाहने वाले। (७) **विश्रम्भघाती**—विश्वासघाती, अथवा विश्वास करने वाले की हत्या करने वाला। (८) **त्रिवर्ग**—धर्म, अर्थ, काम—त्रिवर्गो धर्मकामार्थैश्चतुर्वर्ग समोक्षकै। (९) **दुर्नयः**—बुरी नीति। यहाँ मलयकेतु ने राक्षस, चाणक्य और चन्द्रगुप्त को क्रमश धर्म, अर्थ और काम तथा अपने आपको दुर्नीति के समान बतलाया है। इस प्रकार क्रोध के आवेग मे उसने अपनी ही बुराई की। इस श्लोक मे उपमा अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

भागुरायणः—कुमार! कृतं कालहरणेन। शीघ्रमेव कुसुमपुरोपरोधाय प्रतिष्ठाप्यन्तामस्मद्बलानि,—

गौडीनां लोध्रधूलीपरिमलबहलान् धूम्रयन्तः कपोलान्
क्लिश्नन्तः कृष्णिमानं भ्रमरकुलरुचः कुञ्चितस्यालकस्य।
पांशुव्यूहा बलानां तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभाः
शत्रूणामुत्तमाङ्गे गजमदसलिलच्छिन्नमूलाः पतन्तु ॥२३॥

(इति सपरिजनो निर्गतो मलयकेतुः।)

अन्वय—बलाना तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभा पाशुव्यूहा गजमदसलिलच्छिन्नमूला (सन्त) गौडीना लोध्रधूलीपरिमलबहलान् कपोलान् धूम्रयन्त भ्रमरकुलरुच कुञ्चितस्य अलकस्य कृष्णिमान क्लिश्नन्त शत्रूणाम् उत्तमाङ्गे पतन्तु ॥२३॥

हिन्दी अनुवाद—भागुरायण—कुमार! समय बिताना व्यर्थ है। शीघ्र ही हमारी सेना पाटलिपुत्र को घेरने के लिए प्रयाण कर दें। हमारी सेनाये ऐसी धूल उडा दें— कि सेना के घोडों के खुरों से उठती हुई तथा हाथियों के मदजल से सिंची हुई धूल उड़कर गौड़ देश के रमणियों के लोध्रपुष्प के पराग से सुगंधित कपोलों को मलिन करती हुई और उनके भ्रमरो के समान काले बालो को सफेद बनाती हुई शत्रुओ के शिर पर पडे।

Bhagurayan—Prince! let us not waste time Let our army now march to siege Kusumpura Let the columns of dust, rising from the hoofs of the cavalry and whose bases are detached by the ichoral water of our elephants, fall on the heads of our enemies, making dark the cheeks of the Gauda Women which are decorated with the pollens of Lodhra flowers and (dust) mitigating the darkness of their curly hairs that are bright as the black bees

संस्कृत व्याख्या—बलानाम् अस्मच्चतुरगसेनासघातस्य तुरगखुरपुटक्षोद-लब्धात्मलाभा तुरगाना खुरपुटा अश्वाना खुरपुटा तै य क्षोद चूर्णन तेन लब्ध प्राप्त आत्मलाभ जन्म यैस्तथाभूता पाशुव्यूहा धूलिराशय गजमद-सलिलच्छिन्नमूला गजानाम् अस्मत्सेनागजानाम् मदा एव सलिलानि दानवारय तै छिन्न विनाशितम् मूल येषा तथाभूता गौडीना गौडदेशनारीणाम् लोध्रधूली-परिमलबहलान् लोध्ररजोविलेपनसुरभीन् कपोलान् गण्डभागान् धूम्रयन्त धूसिरतान् कुर्वन्त भ्रमरकुलरुच भ्रमरकुलाना मधुपवृन्दानाम् रुक् कान्तिरिव रुक् यस्य तादृशस्य कुचितस्य कुटिलस्य अलकस्य केशपाशस्य कृष्णिमान कृष्णराग क्लिश्नन्त विनाशयन्त शत्रूणाम् रिपूणाम् उत्तमाङ्गे शिरसि पतन्तु अवरोहन्तु।

टिप्पणी

(१) **प्रतिष्ठाप्यन्ताम्**—भेजी जाँय। (२) **गौडीनाम्**—गौड देश की स्त्रियाँ। (३) **तुरगखुरपुटक्षोदलब्धात्मलाभा**—घोडो की टाप से उठी हुई। तुरगाणा खुरपुटै लब्ध आत्मलाभ यै ते तादृशै। (४) **पाशुव्यूहाः**—धूलि-समूह। (५) **गजमदसलिलच्छिन्नमूला.**—हाथियो के मदरूपी जल से जिनका (धूलि का) मूल (पृथ्वी से) सम्पर्क नष्ट कर दिया गया है। अर्थात् हाथियो के मद से वह धूलि दब गई। (६) **लोध्रधूलीपरिमलबहलान्**—लोध्र पुष्प के परिमल से सुगधित। लोध्राणा धूली पराग तस्या परिमल आमोद तेन बहलान् व्याप्तान्। (७) **धूम्रयन्त**—धूसरित करते हुए। धूम्र+णिच्+लट्—शतृ। (८) **भ्रमरकुलरुच.**—भौरे की-सी कान्ति वाले (का)। अलकस्य का विशेषण है। (९) **कृष्णिमानम्**—श्यामलता को। कृष्ण+इमनिच्। '(१०) **क्लिश्नन्तः**—दबाते हुए, कम करते हुए। (११) **उत्तमाङ्गे**—शिर पर—शत्रुओ के शिर पर धूलि पडे। इस श्लोक मे तद्गुण, लुप्तोपमा, रूपक, पर्याय और स्वभावोक्ति अलकार है तथा स्रग्धरा छन्द है।

राक्षसः—(सावेगम्) हा धिक् कष्टम्! तेऽपि हतास्त-पस्विनश्चित्रवर्मादयः!! तत् कथं सुहृन्नाशाय राक्षसश्चेष्टते, न रिपुविनाशाय? तत् किमिदानीं करवाणि मन्दभाग्यः?

किं गच्छामि तपोवनम्? न तपसा शाम्येत् सवैरं मनः
किं भर्तृननुयामि जीवति रिपौ? स्त्रीणामियं योग्यता।

किं वा खड्गसखः पताम्यरिबले ? नेदं न युक्तं भवेत्
चेतश्चन्दनदासमोक्षरभसं रुन्ध्यात् कृतघ्नं न चेत् ।।२४।।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

।। इति पञ्चमोऽङ्कः ।।

अन्वय—तपोवनम् गच्छामि किम् ? सवैर मन तपसा न शाम्येत् । रिपौ जीवति भर्तॄन् अनुयामि किम् ? इय स्त्रीणा योग्यता । वा खड्गसख अरिबले पतामि किम् ? न इद युक्त न भवेत्, चन्दनदासमोक्षरभस चेत्, रुन्ध्यात्, चेत न कृतघ्न भवेत् ।।२४।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(उद्विग्नता के साथ) ओह ऐसा अनर्थ, ऐसा संकट, अब तो बेचारे चित्रवर्मा आदि भी मारे गए । ऐसा लगता है मानो राक्षस मित्रो के नाश के लिए कार्य कर रहा है न कि शत्रु के नाश के लिए । तो मै अभागा अब क्या करूँ । क्या मै तपोवन मे चला जाऊँ । परन्तु वहाँ भी तो बदला लेने की इच्छा से भरा हुआ मन शान्त नही होगा । क्या शत्रु के जीते हुए ही अपने दिवगत स्वामी का अनुगमन करूँ । यह तो स्त्रियो को ही शोभा देता है । क्या तलवार लेकर शत्रुदल मे कूद पडॅ, परन्तु यह ठीक न होगा (क्योकि) चन्दनदास को छुडाने मे (व्यग्र) मेरा मन ऐसा न होने देगा । यदि वह ऐसा नही करता तो कृतघ्न होगा । (सभी चले जाते है)

पाँचवाँ अक समाप्त

Rakshas (*With agitation*)—Oh fie, oh woe Now they too poor Chitravarman and otheis are killed It seems as if Rakshas's all efforts are foi the destruction of the friends not foi the enemies Ill fated, as I am, what should I do now Should I go to the penance forest ? But a revengeful mind would not be pacified there Should I follow my (*dead*) masteis while my enemy is alive, this befits only women Should I fall upon the enemy forces with swoid in hand ? No This would not be propei thing if my heart eager to get Chandandas free did not check my ungiateful self (Exeunt all) End of the Fifth Act

सस्कृत व्याख्या—तपोवनम् तप कर्तुम् गच्छामि किम् सवैर मन प्रति-शोधमिच्छन्मन तपसा न शाम्येत् शान्ति प्राप्स्यति रिपो शत्रौ जीवति प्राण-धारण कुर्वति भर्तॄन् मृतान् स्वामिन अनुयामि किम् अनुगच्छामि किम । [illegible]

एषा स्त्रीणाम् नारीणाम् योग्यता कार्यम् वा खड्गसख करे खड्ग नीत्वा अरिबले शत्रुसेनाया पतामि प्रविशामि न इदम् एतत् युक्तम् उचितम् न भवेत् न स्यात् (यत) चन्दनदासमोक्षरभस चन्दनमोक्षेच्छुक चेत मन रुन्ध्यात् प्रतिबध्नीयात् चेत् यदि न एव कुर्यादिति अर्थ (तदा मम मन) कृतघ्न भवेत् अकृतज्ञ स्यात् ।

टिप्पणी

(१) **सुहृद्विनाशाय**—भाव यह है कि अब तक किये गये मेरे कार्यो का परिणाम शत्रुनाश के स्थान पर अपने ही व्यक्तियो का विनाश हुआ है। (२) **सवैरम्**—बदला लेने का इच्छुक। (३) **खड्गसखः**—तलवार है मित्र जिसका, तलवार लेकर, खड्ग सखा यस्य स । (४) **चन्दनदासमोक्षरभसम्**—चन्दनदास को छुडाने का इच्छुक, चन्दनदासस्य मोक्षे रभस यस्य तादृशम् चन्दनदासमोक्षरभसम्। इस श्लोक मे दीपक तथा काव्यलिग अलकार है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

षष्ठोऽङ्कः

(ततः प्रविशत्यलङ्कृतः सहर्षः सिद्धार्थकः ।)

सिद्धार्थकः—

जअदि जलदणीलो केसवो केसिघादी
जअदि अ जणदिठ्ठे चन्दमा चन्दउत्तो ।
जअदि जअणसज्जं जा अकाऊण सेण्णं
पड़िहदपरपक्खा अज्जचाणक्कणीदी ॥१॥

(जयति जलदनीलः केशवः केशिघाती
जयति च जनदृष्टेश्चन्द्रमाश्चन्द्रगुप्तः ।
जयति जयनसज्जं या अकृत्वा च सैन्यं
प्रतिहतपरपक्षा आर्यचाणक्यनीतिः ॥१॥)

अन्वय—जलदनील केशिघाती केशव जयति । जनदृष्टे. चन्द्रमा चन्द्रगुप्तश्च जयति । आर्यचाणक्यनीतिश्च जयति या जयनसज्ज सैन्यम् अकृत्वा प्रतिहतपरपक्षा (विद्यते) ॥१॥

छठवाँ अङ्क

(अलंकारो से सजा हुआ प्रसन्नचित्त सिद्धार्थक प्रवेश करता है)

हिन्दी अनुवाद—मेघ के समान नीलवर्ण वाले, केशी राक्षस के वध करन वाले कृष्ण की जय हो ! लोगो की दृष्टि के लिए चन्द्र तुल्य चन्द्रगुप्त की जय हो ! आचार्य चाणक्य की नीति की, जो युद्धार्थ उद्यत सेना के बिना ही शत्रुपक्ष को नष्ट करने वाली है, जय हो !

ACT VI

(Now enter Siddharthaka with joy and decorated with ornaments)

Victory to Krishna, who is cloud-blue and is the slayer of Kesin, Chandragupta, too, the moon to the eyes of the people, may prosper, victory to the diplomacy of Noble Chanakya, which has done all the work of conquest without any army, and has suppressed the enemy

संस्कृत व्याख्या—जलदनील मेघश्याम केशिघाती केशिनामराक्षसनाशक केशव कृष्ण विष्णु वा जयति जनदृष्टे लोकलोचनस्य चन्द्रमा चन्द्रगुप्त जयति आर्यचाणक्यनीतिश्च माननीयकौटिल्यनीति जयति विजय प्राप्नोति या जयनसज्ज जयन युद्धसभार तस्य सज्जा सनाहो यस्य तथाविभ्रमकृत्वैव विना युद्धम् विनारक्तपातमिति शेष प्रतिहतपरपक्षा प्रतिहत विनाशित प्रतिपक्ष शत्रुवर्गो यया इति विजितशात्रवा विराजते।

टिप्पणी

(१) **जलदनील**—बादल के समान नीलवर्ण। जलदवत् नील उपमित कर्मधारय। (२) **केशिघाती**—केशी नामक राक्षस को मारने वाले। केशिन हन्तु शीलमस्य इति केशिन्=हन्+णिनि कर्तरि ताच्छील्ये। (३) **केशव**—विष्णु। 'हिरण्यगर्भ क प्रोक्त ईश शकर एव च। सृष्ट्यादिना वर्तयति तौ यत केशवो भवान्॥' (हरिवश)। (४) **जयनसज्जम्**—जीतने की तैयारी। जीयतेऽनेनेति जयन (करणे ल्युट्)। (५) **प्रतिहतपरपक्षा**—शत्रुपक्ष का नाश करने वाली। प्रतिहत परपक्ष यया तादृशी। इसमे मालिनी छन्द है। लुप्तोपमा तथा विभावना अलकारो का मिश्रण है।

ता जाव चिरस्स कालस्स प्पिअवअस्सं सुसिद्धत्थअं पेक्खामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) अअं उण प्पिअवअस्सओ सुसिद्धत्थओ इदो ज्जेब आअच्छदि, ता जाव उबसप्पामि। (तद्यावच्चिरस्य कालस्य प्रियवयस्यं सुसिद्धार्थकं पश्यामि। अयं पुनः प्रियवयस्यः सुसिद्धार्थक इत एवागच्छति, तद्यावदुपसर्पामि।)

हिन्दी अनुवाद—तो बहुत दिनों के बाद प्रियमित्र सुसिद्धार्थक को देखूँगा। (घूम कर और देखकर) अरे, प्रिय मित्र सुसिद्धार्थक तो इधर ही आ रहा है। तो इसके पास चलूँ।

. I see my deaı frıend Susıddharthaka after a long tıme Oh, my dear frıend Susıddharthaka ıs comıng thıs very way Let me approach hım

(ततः प्रविशति सुसिद्धार्थकः ।) सुसिद्धार्थक :—

सन्ताबेन्ता आबाणेसुं महूसबेसुं रुआबेन्ता ।
हिअअच्छिआ अबि विहबा बिरहे मित्ताणं दुम्मणाअन्ते ।।२।।
(सन्तापयन्तः आपानेषु महोत्सवेषु रुजायन्तः ।
हृदयस्थिता अपि विभवा विरहे मित्राणां दुर्मनायन्ते ।।२।।)

अन्वय—मित्राणा विरहे विभवा हृदयस्थिता अपि आपानेषु सन्तापयन्तः महोत्सवेषु रुजायन्त दुर्मनायन्ते ।।२।।

हिन्दी अनुवाद—(सुसिद्धार्थक का प्रवेश) सुसिद्धार्थक—मित्रो के वियोग में हृदयस्थित विभव भी पानगोष्ठियो मे टीस उत्पन्न करते हुए और महोत्सवों मे रोग उत्पन्न करते हुए आनन्द-रहित हो जाते हैं।

(Now enter Susiddharthaka) *Susiddharthaka*—In the absence of friends riches, though dwelling in the heart, give pain in pleasure-parties, and during festivals trouble by causing disease

संस्कृत व्याख्या—मित्राणा सुहृदा विरहे अभावे विभवा धनानि हृदयस्थिता. अपि अन्त करणस्थितानि अपि आपानेषु पानगोष्ठीषु सन्तापयन्त दु खं जनयन्त महोत्सवेषु नृत्यगीतादिषु सभारम्भेषु रुजायन्त मनोरोग समुत्पादयन्त. केवल दुर्मनायन्ते निरानन्दवन्त भवन्ति ।

टिप्पणी

(१) **आपानेषु**—पानगोष्ठी आदि मे। (२) **रुजायन्तः**—रुजा कुर्वन्तः इति रुजा+णिच्+लट्—शतृ । (३) **दुर्मनायन्ते**—अदुर्मनस दुर्मनस भवन्ति इति दुर्मनस्+क्यङ सलोप। इस पद्य मे दीपक तथा काव्यलिग अलकार और आर्या छन्द है।

सुदञ्च मए जधा—मलयकेदु कडआदो प्पिअबअस्सओ सिद्धत्थओ आअदोत्ति। ता जाव णं अण्णेसाम्मि (परिक्रम्योपसृत्य च) एसो सिद्धत्थओ। (श्रुतञ्च मया यथा—मलयकेतुकटकात्प्रियवयस्यः सिद्धार्थक आगत इति । तद्यावदेनमन्विष्यामि । एष सिद्धार्थकः)

सिद्धार्थकः—(विलोक्य) कधं इदो ज्जेब प्पिअबअस्सओ सुसिद्धत्थओ। (उपगम्य) अबि सुहं प्पिअबअस्सस्स ? (कथमित एव प्रियवयस्यः सुसिद्धार्थकः। अपि सुखं प्रियवयस्यस्य ?) (उभावन्योन्यमालिङ्गतः)

हिन्दी अनुवाद—मैंने सुना है कि मलयकेतु के कटक से प्रिय मित्र सुसिद्धार्थक आ गया है। तो अब उसे खोजूं। (परिक्रमा करके और पास जाकर) अरे, सिद्धार्थक तो यह है।

सिद्धार्थक—(देखकर) अरे प्रिय मित्र सुसिद्धार्थक तो इधर ही आ रहा है। (समीप जाकर) प्रिय मित्र, कुशल तो है। (दोनो एक दूसरे को गले लगाते हैं)

I have heard that dear friend Susiddharthaka has come back from the camp of Malayaketu. I will search for him (*Going round and seeing*) Here is Susiddharthaka

Siddharthaka (*Observing*)—Ha, dear friend, Susiddharthaka is coming this way (*Approaching*) Dear friend, are you quite well ? (Both embrace each other)

सुसिद्धार्थकः—अह बअस्स, कुदो मे सुहं, जस्स तुमं चिरआलप्पवासपच्चागदोबि अआणिअ बुत्तन्तं अण्णदो गदोसि ? त्ति (अहो वयस्य, कुतो मे सुखम्, यस्य त्वं चिर-प्रवासप्रत्यागतोऽप्यज्ञापयित्वा वृत्तान्तमन्यतो गतोऽसीति।)

सिद्धार्थकः—प्पसीददु प्पिअबअस्सो। अहं खु दिट्ठमेत्तो ज्जेब्ब अज्जचाणक्केण आणत्तो जधा। "सिद्धत्थअ, गच्छ, एदं प्पिअं बुत्तन्तम् प्पिअदंसणस्स देअस्स चन्दसिरिणो णिबेदेहि" त्ति। तदा तस्स तं णिबेदिअ एब्बं अणुभूदपात्थिब-प्पसादो अहं प्पिअबअस्सं प्पेक्खिदुं तुह गेहं चलिदोह्मि। (प्रसीदतु प्रियवयस्यः। अहं खलु दृष्टमात्र एवार्यचाणक्ये-नाज्ञप्तो यथा—"सिद्धार्थक! गच्छ, इमं प्रियं वृत्तान्तं प्रियदर्शनस्य देवस्य चन्द्रश्रियो निवेदयेति"। ततस्तस्य तन्नि-वेद्य एवमनुभूतपार्थिवप्रसादोऽहं प्रियवयस्यं प्रेक्षितुम् तव गेहं चलितोऽस्मि।)

सुसिद्धार्थकः—वअस्स ! जदिमए एदं सुणिदव्वं भोदि तां मं पि सुणावेहि, किं ते प्पिअं प्पिअदंसणस्स चन्दसिरणो णिवेदिदं त्ति । (वयस्य ! यदि मयेदं श्रोतव्यं भवति, तन्मामपि श्रावय, किं तत् प्रियं प्रियदर्शनस्य चन्द्रश्रियः निवेदितमिति ।)

हिन्दी अनुवाद—सुसिद्धार्थक—अहो मित्र, मुझे सुख कहाँ से (हो सकता है) जिसके तुम चिरकाल के प्रवास से लौटकर बिना हालचाल बताये दूसरी ओर चले गए।

सिद्धार्थक—प्रिय मित्र, प्रसन्न हो। मुझे तो देखते ही आर्य चाणक्य ने आज्ञा दी कि "सिद्धार्थक जाओ और यह प्रिय समाचार प्रियदर्शन वाले महाराज चन्द्रगुप्त को बता दो"। तब वह समाचार उनको देकर और इस प्रकार राजा की कृपा का अनुभव करके मैं प्रियमित्र को देखने के लिए तुम्हारे घर की ओर चल पड़ा हूँ।

सुसिद्धार्थक—मित्र, मेरे सुनने योग्य हो तो मुझे भी सुनाओ कि वह कौन प्रिय समाचार है जो प्रियदर्शन वाले चन्द्रगुप्त को सुनाया है।

Susiddharthaka—Oh friend, whence can I get happiness as you, after coming from outside after a long time, went away to another place without telling me any news

Siddharthaka—Dear friend, be appeased As soon as seen, I was ordered by Noble Chanakya thus, " Siddharthaka go and report this happy news to king Chandrashri" Then having reported to him and enjoyed the king's favour thus, I am going to your house to see you (*my dear friend*)

Susiddharthaka—Friend, if it is fit to be heard by me, tell me what happy news you have reported to Chandrashri of charming presence

टिप्पणी

(१) **चिरप्रवासप्रत्यागतोऽपि**—बहुत दिनो के बाद परदेश से लौटा हुआ। (२) **वृत्तान्तम् अज्ञापयित्वा**—बिना हालचाल बताये हुए। (३) **दृष्ट-मात्र एव**—ज्योही दिखाई पडा। (४) **प्रियदर्शनस्य**—प्रिय सुखकारक दर्शनम् अवलोकन यस्य स, तस्य। शेषत्वविवक्षया षष्ठी। **अनुभूतपार्थिवप्रसादः**—राजा की कृपा का अनुभव करके। अनुभूत पार्थिवस्य नृपस्य प्रसादो येन स। (५) **श्रावय**—सुनाओ। श्रु+णिच्+लोट् मध्यमपुरुष आज्ञा।

सिद्धार्थकः—प्पिअवअस्स ! तुह वि किं असुणिदव्वं

अत्थि ? ता णिसामेहि । अत्थि दाव, अज्जचाणक्कणीति-मोहिदमदिणा मलअकेदुहदएण णिराकरिअ रक्खसं, हदा चित्तबम्मप्पमुहा प्पहाणा पंच पात्थिवा; तदो असमिक्ख-कारी एसो दुराआरो त्ति कदुअ, उज्झिअ मलअकेदुकड़अ-भूमिं, णिअभूमिकुसलदाए भअबिलोलसेण्णतणूकिदसेसपरि-बारेसुं सकं सकं बिसअं अभिप्पत्थिदेसु, पात्थिबेसु भद्रभट-पुरुदत्तहिङ्गुरात- बलउत्त – राअसेण-भागुरायअण- रोहिदक्ख-बिजअबम्मप्पमुहेहिं संजमिदो मलअकेदू । (प्रियवयस्य ! तवापि किमश्रोतव्यमस्ति ? तन्निशामय––अस्ति तावदार्य-चाणक्यनीतिमोहितमतिना मलयकेतुहतकेन निराकृत्य राक्षसं, हताश्चित्रवर्मप्रमुखाः प्रधानाः पञ्च पार्थिवाः । ततोऽस-मीक्ष्यकारी एष दुराचार इत्युज्झित्वा मलयकेतु-कटकभूमिं निजभूमिकुशलतया भयविलोलसैन्यतनूकृतशेषपरिवारेषु स्वकं स्वकं विषयमभिप्रस्थितेषु पार्थिवेषु, भद्रभट-पुरुषदत्त-हिङ्गु-रात-बलगुप्त-राजसेन-भागुरायण-रोहिताक्ष-विजयवर्मप्रमुखैः संयमितो मलयकेतुः ।

हिन्दी अनुवाद––सिद्धार्थक––प्रिय मित्र, क्या कोई ऐसी भी बात है जो तुम्हारे सुनने योग्य न हो । तो सुनो, आर्य चाणक्य की नीति से किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर अभागे मलयकेतु ने राक्षस को निकाल कर चित्रवर्मा प्रभृति पाँच मुख्य राजाओ को मरवा डाला । तब अन्य राजाओ ने यह समझकर कि यह मलयकेतु दुराचारी और बिना विचार कर काम करने वाला है मलयकेतु की सेना को छोड दिया और अपने-अपने अधिकार की रक्षा करने लगे और भय से व्याकुल होकर सेना के अल्प हो जाने पर वे (राजा) अपने-अपने देश को चले गये । तब भद्रभट, पुरुषदत्त, हिङ्गुरात, बलगुप्त, राजसेन, भागुरायण, रोहिताक्ष, विजयवर्मा आदि ने मलयकेतु को कैद कर लिया ।

Siddharthaka—Dear friend, is there anything which even you can not hear. The wretched Malayaketu's mind was deluded by the diplomacy of Noble Chanakya and he having dismissed Rakshas, got the five leading kings, with Chitravarman at their head, killed Then all the other kings, thinking Malayaketu to be a miscreant acting thoughtlessly, deserted

his camp and in order to save themselves went to their respective kingdoms, for their army was rendered small due to the soldiers being afraid. Then Malayaketu was chained by Bhadrabhatta, Purushdatta, Hingurata, Balgupta, Rajsen, Bhagurayan, Rohitaksh and Vijayavarman and others

टिप्पणी

(१) **किमश्रोतव्यमस्ति**—क्या तुम्हारे भी न सुनने के योग्य कुछ है अर्थात् तुम सब कुछ सुन सकते हो। (२) **चाणक्यनीतिमोहितमतिना**—चाणक्य की नीति से किंकर्तव्यविमूढ। चाणक्यस्य नीत्या मोहिता मतिः यस्य स तेन। (३) **निराकृत्य**—अलग कर। (४) **असमीक्ष्यकारी**—बिना विचार कर काम करने वाला। असमीक्ष्य कर्त्तुं शीलमस्य इति। असमीक्ष्य+कृ+णिनि। (५) **उज्झित्वा**—छोडकर। (६) **भयविलोलसैन्यतनूकृतशेषपरिवारेषु**—भय से व्याकुल सैनिको के कारण कम हो गई है सेना जिनकी। भयेन विलोलानि सैन्यानि तैः तनूकृता शेषा परिवारा येषा ते तेषु। (७) **विषयम्**—देश। 'देशविषयौ तूपवर्तनम्' इत्यमर। (८) **संयमितः**—पकड लिया गया। सम्+यम्+णिच्+क्त।

सुसिद्धार्थकः—बअस्स! भद्दभटप्पमुहा किल देअस्स चन्दसिरिणो अबरत्ता मलअकेदुं समास्सिदा त्ति लोए मन्तीअदि। ता किं णिमित्तं एदं कुकबिणाडअस्स बिअ अण्णं मुहे अण्णं णिब्बहणे त्ति? (वयस्य! भद्रभटप्रमुखाः किल देवस्य चन्द्रश्रियोऽपरक्ता मलयकेतुं समाश्रिता इति लोके मन्त्र्यते। तत् किं निमित्तमेतत् कुकविनाटकस्येवान्यन्मुखेऽन्यन्निर्वहण इति?)

सिद्धार्थकः—बअस्स! सुणु दाव, दैवगदीए बिअ असुणिदगदीए णमो अज्जचाणक्कणीदीए। (वयस्य! शृणु तावत्, देवगत्यै इवाश्रुतगत्यै नम आर्यचाणक्यनीत्यै।)

सुसिद्धार्थकः—बअस्स! तदो तदो? (वयस्य! ततस्ततः?)

सिद्धार्थकः—बअस्स! तदो प्पहुदि, सारसाहणसमुदएण इदो णिक्कमिअ अज्जचाणक्केण पड़िबण्णं अराअलोअं

असेसराअबलं। (वयस्य ! ततः प्रभृति, सारसाधनसमुदयेनेतो निष्क्रम्य आर्यचाणक्येन प्रतिपन्नमराजलोकमशेषराजबलम्।)

सुसिद्धार्थकः—बअस्स ! कहिं ? (वयस्य ! कुत्र ?)

हिन्दी अनुवाद—सुसिद्धार्थक—मित्र, सुना जाता है कि भद्रभट आदि सम्राट् चन्द्रगुप्त से रुष्ट होकर मलयकेतु से मिल गये हैं। तो क्या कारण है कि किसी कुकवि के बनाए हुए नाटक की तरह मुखसंधि (अर्थात् प्रारम्भ) में कुछ और तथा निर्वहण संधि (अन्त) मे कुछ और होता जा रहा है।

सिद्धार्थक—अरे मित्र, सुनते जाओ। यह सब तो आर्य चाणक्य की नीति की महिमा है जो ब्रह्मा की गति-विधि के समान अगम्य है। उस गति को नमस्कार है।

सुसिद्धार्थक—मित्र, तो क्या हुआ ?

सिद्धार्थक—इसके बाद उत्कृष्ट सेना के साथ आर्य चाणक्य ने निकलकर राजाओ से रहित सारी सेना को वश मे कर लिया।

सुसिद्धार्थक—मित्र, कहाँ ?

Susiddharthaka—Friend, it is heard that Bhadrabhatta and others, being disgusted of Chandragupta, have gone over to the side of Malayaketu Why then is it, as in a drama written by a bad poet, one thing is in the beginning and another is in the end

Siddharthaka—Friend, listen Salutation be to the diplomacy of Chanakya, the course of which is unheard or (*ununderstandable*) like that of Fate

Susiddharthaka—Friend, what next ?

Siddharthaka—Then the entire army, which was without kings, was captured by noble Chanakya, going out from here, with a large army

Susiddharthaka—Friend, where ?

सिद्धार्थकः—बअस्स ! जहिं एदे,—(वयस्य ! यत्रैते,—)

अदिसअगुरुएणं दाणदप्पेण दन्ती
सजलजलदलीलां उव्वहन्तो णदन्ति।
कसप्पहरभएणं जादकम्पा तुरन्तो
गहिदजअणसज्जा संपदन्ते तुलंगा ॥३॥

(अतिशयगुरुकेण दानदर्पेण दन्तिनः
सजलजलदलीलामुद्वहन्तो नदन्ति।

कशाप्रहारभयेन जातकम्पास्त्वरयन्तः
गृहीतजयनसज्जाः सम्पद्यन्ते तुरङ्गाः ॥३॥)

अन्वय—गृहीतजयनसज्जा दन्तिन अतिशयगुरुकेण दानदर्पेण सजलजलद-लीलामुद्वहन्त नदन्ति । तुरङ्गा कशाप्रहारभयेन जातकम्पा त्वरयन्त सम्पद्यन्ते ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—सिद्धार्थक—मित्र, जहाँ ये—युद्ध के वेश को धारण किए हुए हाथी अत्यन्त बढे हुए मद के अभिमान से जल से भरे हुए बादल की लीला करते हुए चिग्घाड रहे है और घोड़े चाबुक की मार की डर से काँपते हुए शीघ्रता करते हुए दिखाई दे रहे हैं।

Siddharthaka—Friend, where the war elephants, due to their excessive ichoral water, are trumpeting like clouds full of water and the horses from fear of being whipped by (*the riders*) are shaking their body and seem to run fast

संस्कृत व्याख्या—यत्र अतिशयगुरुकेण भृश प्रवृद्धेन दानदर्पेण मदजलजनितेन दर्पेण उद्दामेन गृहीतजयनसज्जा गृहीत परिहित जयनस्य युद्धस्य सज्ज वेश यै तादृशा दन्तिन गजा सजलजलदलीलाम् सजला जलभरिता ये जलदा मेघास्तेषा लीलामिव लीला विलासम् उद्वहन्त धारयन्त नदन्ति उच्चै शब्द कुर्वन्ति । तुरङ्गा अश्वा कशाप्रहारभयेन कशाना प्रहारा आघाता तेभ्य भय तेन हेतुना जातकम्पा जात उत्पन्न कम्प कम्पन येषा तादृशा (अतएव) त्वरयन्त (स्वारोहिण) त्वरावत विदधत सम्पद्यन्ते सन्नद्धा सन्तीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **चन्द्रश्रियः अपरक्ता**—चन्द्रगुप्त से अलग हो गये है। (२) **कुकवि-नाटकस्य इव**—खराब (अयोग्य) कवि के नाटक के समान। (३) **अन्यत् मुखे अन्यत् निर्वहणे**—मुख सधि मे कुछ और निर्वहण सधि मे कुछ। अर्थात् पहले कुछ बाद मे कुछ। नाटक का अन्त प्रारम्भ के अनुसार होना चाहिए। उसी प्रकार मनुष्य को जैसा पहले रहे वैसा ही रहना चाहिए। रहे कुछ दिखावे कुछ यह ठीक नही है। (४) **नम आर्यचाणक्यनीत्यै**—आचार्य चाणक्य की नीति को नमस्कार है। "नम" के योग मे चतुर्थी होती है। (५) **अश्रुतगत्यै**—जिसकी गति सुनी नही गई है, अर्थात् जिसकी गति जानी नही जाती। अश्रुता गति यस्या सा तस्यै। कहने का तात्पर्य यह है कि चाणक्य की नीति समझ मे

नही आती। काम हो जाने पर ही उसकी वास्तविकता का पता लगता है। सिद्धार्थक के कहने का भाव यह है कि जो तुमने सुना था कि भद्रभट आदि मलयकेतु से मिल गए है वह गलत है। (६) **सारसाधनसमुदयेन**—साधनो को लेकर यानी सेना के साथ। सार साधन तस्य समुदयेन समूहेन। साध्यते अनेन इति साधनम्। साध्+ल्युट। सार—वरम्—श्रेष्ठ। सारसाधन—उत्तम साधन (सेना।) (७) **प्रतिपन्नम्**—अधिकार कर लिया। (८) **अशेषराजबलम्**—राजाओ की सारी सेना। (९) **अराजलोकम्**—राजाओ से रहित। नृपजन-रहितम्। (१०) **गृहीतजयनसज्जा**—लडाई का वेश धारण किए। (११) **अतिशयगुरुकेण**—अत्यन्त प्रबल। गुरुरेव गुरुक गुरु+कन् स्वार्थे। अतिशयश्चासौ गुरुक अतिशयगुरुक (कर्मधारय), तेन। (१२) **सजलजलदलीलाम्**—जलपूर्ण बादलो की लीला को। (१३) **कशाप्रहारभयेन**—चाबुक की मार के डर से। यहाँ उपमा तथा रूपक का सन्देहसकर अलकार और मालिनी छन्द है।

सुसिद्धार्थकः—बअस्स! एदं सब्बं दाबं चिटठदु, तहा सब्बलोअप्पच्चक्खं उज्झिआहिआरो भबिअ कहं अज्ज-चाणक्को पुणो बि तं ज्जेब मन्तिपदं आरूढो? (वयस्य! एतत् सर्वं तावत् तिष्ठतु। तथा सर्वलोकप्रत्यक्षमुज्झिताधिकारो भूत्वा कथमार्यचाणक्यः पुनरपि तदेव मन्त्रिपदमारूढः?)

सिद्धार्थकः—बअस्स! अदिमुद्धो दाणीं सि तुमं, जो अमच्चरक्खसेण अणबगाहिदपुब्बं अज्जचाणक्कबुद्धिं अब-गाहिदुं इच्छसि? (वयस्य! अतिमुग्ध इदानीमसि त्वं, योऽमात्यराक्षसेनानवगृहीतपूर्वामार्यचाणक्यबुद्धिमवगाहितुमि-च्छसि।)

सुसिद्धार्थकः—बअस्स! अथ अमच्चरक्खसो दाणीं कहिं? (वयस्य! अथाऽमात्यराक्षस इदानीं कुत्र?)

सिद्धार्थकः—बअस्स! सोक्खु तस्सिं प्पलअकोलाहले बढ्ढमाणे मलअकेदुकडआदो णिक्कमिअ उन्दुरणामहेएण चरेण अणुसरन्तो इमं ज्जेब कुसुमउरं आगदो त्ति अज्ज-

चाणक्कस्स णिवेदिदं। (वयस्य ! स खलु तस्मिन् प्रलय-कोलाहले वर्धमाने मलयकेतुकटकात् निष्क्रम्योन्दुरनामधेयेन चरेणानुस्त्रियमाण इदमेव कुसुमपुरमागत इत्यार्यचाणक्यस्य निवेदितम्।)

हिन्दी अनुवाद—सुसिद्धार्थक—मित्र, यह सब बातें रहने दो। बताओ तो सबके सामने चाणक्य ने अधिकार का त्याग कर फिर मंत्री का पद किस प्रकार ग्रहण किया ?

सिद्धार्थक—मित्र, इस समय तुम नितान्त अनभिज्ञ हो जो कि आर्य चाणक्य की बुद्धि को, जिसे पहले अमात्य राक्षस भी न समझ पाए, समझना चाहते हो।

सुसिद्धार्थक—मित्र, अमात्य राक्षस इस समय कहाँ है ?

सिद्धार्थक—मित्र, जब प्रलयकालीन कोलाहल (मलयकेतु के शिविर में) बढने लगा तो वह वहाँ (मलयकेतु की कटक) से निकल कर उन्दुर नामक गुप्तचर से पीछा किया जाता हुआ इसी कुसुमपुर में आया है। यह बात आर्य चाणक्य को बता दी गई है।

Susiddharthaka—Friend, let this go (*Tell me now*) Why has Chanakya accepted the office of the minister when previously he renounced it in the presence of the whole world ?

Siddharthaka—You are quite ignorant that you are trying to understand the policy of Arya Chanakya which even Minister Rakshas could not comprehend

Susiddharthaka—Friend, where is Minister Rakshas at present ?

Siddharthaka—Friend, when there was terrible convulsion in the camp of Malayaketu, he slipped out of it and being shadowed by a spy named Undura, has come here to Pataliputra and Chanakya has been informed of it

टिप्पणी

(१) **उज्झिताधिकार**—अधिकार त्याग कर देने वाले, अधिकार का परित्याग किये हुए। (२) **अतिमुग्धः**—बिलकुल अबोध। (३) **अनवगृहीत-पूर्वाम्**—जिसे पहले (अमात्य राक्षस भी) न समझ सके। पूर्वमज्ञाताम्। (४) **अनुस्त्रियमाण**—पीछा किया जाता हुआ।

सुसिद्धार्थकः—वअस्स ! तहा णाम अमच्चरक्खसो णन्दरज्जप्पच्चाअअणे किदव्ववसाओ णिक्कमिअ सम्पदं

अकिदत्थो पुणो बि कहं इमं ज्जेब कुसुमउरं आअदो ? (वयस्य ! तथा नाम अमात्यराक्षसो नन्दराज्यप्रत्यानयने कृतव्यवसायो निष्क्रम्य साम्प्रतमकृतार्थः पुनरपि कथमिदमेव कुसुमपुरमागतः ?)

सिद्धार्थकः---बअस्स ! तक्केमि, चन्दणदासस्स सिणेहेण त्ति। (वयस्य ! तर्कयामि, चन्दनदासस्य स्नेहेनेति।)

सुसिद्धार्थकः---बअस्स ! सच्चं चन्दणदासस्स सिणेहेण त्ति ? अध चन्दणदासस्स मोक्खं प्पेक्खसि ? (वयस्य ! सत्यं चन्दनदासस्य स्नेहेनेति ? अथ चन्दनदासस्य मोक्षं प्रेक्षसे ?)

सिद्धार्थकः---बअस्स ! कुदो से अधण्णस्स मोक्खो ? सो क्खु सम्पदं अज्जचाणक्कस्स आणत्तीए दुबेहिं पि अह्मेहिं बज्झट्ठाणं प्पबेसिअ बावादइदब्बो। (वयस्य ! कुतोऽस्याधन्यस्य मोक्षः ? स खलु साम्प्रतमार्यचाणक्यस्याऽऽज्ञप्त्या द्वाभ्यामप्यावाभ्यां वध्यस्थानं प्रवेश्य व्यापादयितव्यः।)

सुसिद्धार्थकः---(सक्रोधम्) बअस्स ! किं अज्जचाणक्कस्स घादअजणो अणो णत्थि, जेण अह्मे ईदिसे णिसंसे कम्मे णिजुज्जीअदि ? (वयस्य ! किमार्यचाणक्यस्य घातकः जनोऽन्यो नास्ति, येनावामीदृशे नृशंसे कर्मणि नियुज्यावहे ?)

सिद्धार्थकः---बअस्स ! को जीवलोए जीविदुकामो अज्जचाणक्कस्स आणत्तिं पडिऊलेदि ता एहि, चंडालबेसधारिणा भबिअ चन्दणदासं वज्झट्ठाणं णेह्म। (वयस्य ! को जीवलोके जीवितुकामः आर्यचाणक्यस्याज्ञप्तिं प्रतिकूलयति ? तदेहि चण्डालवेशधारिणौ भूत्वा चन्दनदासं वध्यस्थानं नयावः।) (इत्युभौ निष्क्रान्तौ।)

प्रवेशकः

हिन्दी अनुवाद---सुसिद्धार्थक---मित्र, यह भला कैसे हो सकता है कि जो अमात्य राक्षस नन्दराज्य की पुनः स्थापना में इतना प्रयत्नशील रहा है

वह निष्फल प्रयत्न होने पर इसी पाटलिपुत्र में चला आवेगा जहाँ से वह चला गया था।

सिद्धार्थक—मित्र, मै समझता हूँ कि चन्दनदास के प्रेम से वह यहाँ आया है।

सुसिद्धार्थक—तो क्या यह सच है कि चन्दनदास का स्नेह उसे यहाँ खीच लाया है? क्या तुम चन्दनदास के छुटकारा की आशा कर रहे हो?

सिद्धार्थक—मित्र, उस अभागे का छुटकारा कहाँ? उसे तो इस समय आर्य चाणक्य की आज्ञा से हम दोनो वध्यस्थान मे ले जाकर मार डालेंगे।

सुसिद्धार्थक—(क्रोध से) मित्र, क्या आर्य चाणक्य को दूसरा वधिक नही मिला जो हम लोगो को ऐसे क्रूर कर्म मे लगा दिया?

सिद्धार्थक—मित्र, इस संसार में ऐसा कौन व्यक्ति है जो कि जीने की इच्छा रखता हुआ आर्य चाणक्य की आज्ञा का उल्लंघन करे। तो आओ, चाण्डाल का वेष बनाकर चन्दनदास को वध्य भूमि मे ले चलें। (दोनो चले जाते हैं) प्रवेशक समाप्त।

Susiddharthaka—Friend, how can Minister Rakshas, who made an attempt to restore the sovereignty of Nanda and left Pataliputra, come back to the city with his object unrealised

Siddharthaka—Friend, I presume that it is through the love of Chandandas

Susiddharthaka—Is it true that he has come here through the love of Chandandas ? Do you expect the release of Chandandas ?

Siddharthaka—Friend, whence is the release of that unlucky fellow By the command of Noble Chanakya, he has to be led by both of us to the place of execution and killed

Susiddharthaka (With anger)—Friend, has Chanakya no other executioner that we have been employed in such a cruel task ?

Siddharthaka—Friend, who, in the world of the living desirous of life, can oppose the command of Noble Chanakya So come and being clad in the garb of Chandal, let us take Chandandas to the place of execution (Exeunt both) (Praveshaka)

टिप्पणी

(१) **नन्दराज्यप्रत्यानयने**—नन्द के राज्य को वापस ले लेने मे। (२) **कृतव्यवसाय**—प्रयत्नशील। कृतोद्यम। (३) **अकृतार्थ**—असफल मनोरथ होकर। (४) **अधन्यस्य**—अभागे का। (५) **आज्ञप्त्या**—आज्ञा से। आ+ज्ञप्+णिच्+क्तिन् भावे आज्ञप्ति, तया। (६) **प्रतिकूलयति**—उल्लघन करेगा। प्रतिकूल

णिच्+लट्—तिप्। (७) **प्रवेशक**—दो अको के बीच के एक प्रकार के अक को प्रवेशक कहते है। इसमे नीच पात्र भावी या न दिखाई हुई घटनाओ की सूचना देते है। "वृत्तवर्तिष्यमाणाना कथाशाना निदर्शक । प्रवेशकस्तु नाट्येऽङ्के नीचपात्रप्रयोजित"।

(ततः प्रविशति रज्जुहस्तः पुरुषः।) पुरुषः—
छग्गुणसंजोअदिढा उवाअपरिवाडिघडिदपासमुही।
चाणक्कणीदिरज्जू रिउसंजमणउजुआ जअदि ॥४॥
(षड्गुणसंयोगदृढा उपायपरिपाटीघटितपाशमुखी।
चाणक्यनीतिरज्जू रिपुसंयमनऋजुका जयति ॥४॥)

अन्वय—षड्गुणसयोगदृढा उपायपरिपाटीघटितपाशमुखी रिपुसयमनऋजुका चाणक्यनीतिरज्जु जयति ॥४॥

हिन्दी अनुवाद—(रस्सी हाथ में लिए हुए पुरुष का प्रवेश) (संधि विग्रह आदि) छः गुणो के सयोग से सुदृढ़ और साम, दान आदि उपाय-चतुष्टय से सर्वथा संगठित पाश रूपी मुख वाली और शत्रु के बाँधने से सीधी चाणक्य की नीति रूपी रस्सी विजयी होती है। जैसे रस्सी ६ गुनी बटी होने के कारण टूटना नही जानती वैसे ही साम, दान आदि उपायो से तथा संधि विग्रह आदि छः गुणो से युक्त चाणक्य की नीति कभी असफल नही होती।

(Enter a man with a rope in hand)

Man—The rope of Chanakya's policy is successful, being strong by the union of six threads-like expedients having at one end a noose made of succession of devices and straight with the entrapping of the enemy

सस्कृत व्याख्या—षड्गुणसयोगदृढा षण्णा गुणाना सयोगेन दृढा दुर्भेद्या उपायपरिपाटीघटितपाशमुखी उपायाना सामादिचतुष्टयाना परिपाट्या क्रमसमावेशेन घटित रचित य पाश जाल स मुखे प्रान्ते यस्या तादृशी रिपुसयमनऋजुका रिपो शत्रो यत् सयमन बन्धन तेन ऋजुका ऋज्वी सरला चाणक्यनीतिरज्जु जयति विजयिनी भवति।

टिप्पणी

(१) **षड्गुणसयोगदृढा**—छ गुनी बटी होने से मजबूत (रस्सी) और सधि विग्रह यानासन द्वैधाश्रयात्मक छ गुण वाली चाणक्य की नीति। नीति

और रस्सी की समानता दिखाई गई है। चाणक्य की नीति शत्रुओ को वैसे ही बाँधती है जैसे रस्सी अपने फन्दे मे वस्तुओ को बाँधती है। (२) **पाशमुखी**—वस्तुत चाणक्य की नीतिरूपी रस्सी का सम्पूर्ण अग कार्य कर चुका है। अब पाशरूपी मुख का कार्य होना है। इसी पाश (फन्दे) मे राक्षस (शत्रु) बँधेगा। रूपक और श्लेष अलकार है। आर्या छन्द है।

(परिक्रम्यावलोक्य च) एसो सो अज्जचाणक्कस्स उन्दुरण्ण चरेण कधिदो प्पदेसो, जहिं मए अज्जचाणक्काणत्तीए अमच्चरक्खसो प्पेक्खिदव्वो। (विलोक्य) कहं एसो क्खु अमच्चरक्खसो किदसीसावगुण्ठणो इदो ज्जेव आअच्छदि। ता जाव इमेहिं जिण्णु ज्जाणपादवेहिं अवबारिदसरीरो प्पेक्खामि, कहिं आसणपरिग्गहं करेदि। (एष स आर्यचाणक्यस्योन्दुरकेण चरेण कथितः प्रदेशः यत्र मयाऽऽर्यचाणक्याज्ञप्त्याऽमात्यराक्षसः प्रेक्षितव्यः। कथमेष खल्वमात्यराक्षसः कृतशीर्षावगुण्ठन इत एवागच्छति। तद्यावदेभिर्जीर्णोद्यानपादपैरपवारितशरीरः प्रेक्षे, कुत्रासनपरिग्रहं करोतीति।) (इति परिक्रम्य तथा स्थितः।)

(घूमकर और देखकर) अरे यह तो वही स्थान है जिसके विषय में गुप्तचर उन्दुरक ने आर्य चाणक्य को बताया है। यही पर आर्य चाणक्य की आज्ञा से मुझे राक्षस से भेंट करना है। (देखकर) अरे तो क्या अमात्य राक्षस यही हैं जो सिर को ढके हुए इधर ही आ रहे हैं। अच्छा इस पुराने बगीचे के पेड़ो की झुरमुट में छिप कर देखूँ कि यह कहाँ बैठते हैं। (घूमकर पेडों की झुरमुट में खड़ा हो जाता है)।

(Going round and seeing) This is the same place which was described by Undurak to Noble Chanakya and where I have to see Minister Rakshas (*Seeing*) Oh! is it Minister Rakshas who is coming this way with his head covered Well, screening myself behind these old garden trees, I shall watch where he sits (*Stands after going round*)

टिप्पणी

(१) **कृतशीर्षावगुण्ठन.**—सिर को ढककर। अव+गुण्ठ्+ल्युट् भावे=

अवगुण्ठनम्। कृत शीर्षस्य अवगुण्ठन येन स । (२) **अपवारितशरीरः**—अपने को छिपाकर। अपवारित तिरोहित शरीर यस्य स ।

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टः सशस्त्रो राक्षसः।)

राक्षसः—(सबाष्पम्) कष्टं, भोः कष्टम्!!

उत्सन्नाश्रयकातरेव कुलटा गोत्रान्तरं श्रीर्गता
तामेवानुगता गतानुगतिकास्त्यक्तानुरागाः प्रजाः।
आप्तैरप्यनवाप्तपौरुषफलैः कार्यस्य धूरुज्झिता
किं कुर्वन्त्वथवोत्तमाङ्गरहितैर्नागैरिव स्थीयते ॥५॥

अन्वय—श्री उत्सन्नाश्रयकातरा कुलटा इव गोत्रान्तर गता। गतानुगतिका प्रजा त्यक्तानुरागा ताम् एव अनुगता। अनवाप्तपौरुषफलै आप्तै अपि कार्यस्य धू उज्झिता। अथवा कि कुर्वन्तु, उत्तमाङ्गरहितै नागै इव स्थीयते ॥५॥

हिन्दी अनुवाद—(शस्त्र हाथ मे लिए हुए उपर्युक्त वर्णित अवस्था मे राक्षस का प्रवेश)। राक्षस—(आँसू के साथ) बड़े कष्ट की बात है।—आश्रय के नष्ट हो जाने पर लक्ष्मी व्याकुल होकर कुलटा स्त्री की तरह दूसरे गोत्र मे चली गई। लकीर की फकीर प्रजा (पहले के स्वामी का) अनुराग छोडकर उसी लक्ष्मी के पीछे- पीछे चली गई। पुरुषार्थ का फल न पाकर विश्वासपात्रो ने भी कार्य भार छोड़ दिया। अथवा वे क्या करे (वे तो) सिर रहित हाथियो की तरह जीवन बिता रहे है ।

(Then enter Rakshas as described with arms in hand) *Rakshas* (*With tears*)—Oh, it is a matter of great sorrow upset by the death of her supporter, Lakshmi has passed on to another race like a bad-charactered woman (*Harlot*) The people, accustomed to follow those who have gone before, giving up their allegiance to (*the previous master*) have followed her (लक्ष्मी) Even the trusted persons not getting the reward of their effort, have thrown down the burden of work Or what should they do They are living like head-less elephants

संस्कृत व्याख्या—श्री लक्ष्मी उत्सन्नाश्रयकातरा उत्सन्न नष्ट आश्रय अवलम्बो नन्द पतिरिव यस्या सा चासो कातरा किंकर्त्तव्यविमूढा च कुलटा इव पुश्चली इव गोत्रान्तर नन्दभिन्नराजवशम् अन्यत् गोत्रमिव गता प्राप्ता गतानुगतिका गतस्य प्राक् प्रस्थितस्य यत् अनुगमनम् तच्छीला प्रजा प्रकृतय त्यक्ता-

नुरागा त्यक्त परिहृत अनुराग स्नेह याभि तथाभूता ताम् लक्ष्मीम् अनुगता अनुसृता । अनवाप्नपौरुषफलै अनवाप्तम् अप्राप्तम् पौरुषस्य पुरुषार्थस्य फलम् यै तादृशै आप्तै विश्वस्तै अपि कार्यस्य धू भार उज्झिता त्यक्ता । अथवा आप्ता अपि किं कुर्वन्तु उत्तमाङ्गरहितै शीर्षवियुक्तै नागै गजै इव स्थीयते भूयते ।

टिप्पणी

(१) **उत्सन्नाश्रयकातरा**—आश्रय के नष्ट होने के कारण कातर। (२) **कुलटा**—दुश्चरित्रा स्त्री। कुलात् कुलमटतीति या सा। (३) **गतानुगतिका**—पहले गए हुए लोगो के पीछे चलने वाली, लकीर की फकीर। (४) **आप्तैरपि**—विश्वस्त व्यक्तियो ने सामान्य प्रजाओ की भाँति चन्द्रगुप्त से जाकर मेल नही किया। हाँ, उन लोगो ने चन्द्रगुप्त का विरोध करना अवश्य छोड दिया। इस तरह के व्यक्ति है—विराधगुप्त आदि। (५) **नागैः इव**—हाथियो की तरह। जिस प्रकार सिर रहित हाथी या सर्प कुछ नही कर सकता उसी प्रकार नेता न रहने पर आप लोग ही क्या करेगे। कही-कही पर ऐसा पाठ है "उत्तमाङ्गरहितैरङ्गैरिव स्थीयते" अर्थात् बिना सिर के शरीर के समान। इसमे उपमा अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

पतिं त्यक्त्वा देवं भुवनपतिमुच्चैरभिजनं
गता च्छिद्रेण श्रीर्वृषलमविनीतेव वृषली ।
स्थिरीभूता चास्मिन् किमिह करवाम स्थिरमपि
प्रयत्नं नो येषां विफलयति दैवं द्विषदिव ॥६॥

अन्वय—श्री उच्चैरभिजन भुवनपति पति देव त्यक्त्वा अविनीता वृषली इव छिद्रेण वृषल गता अस्मिन् स्थिरीभूता च। इह कि करवाम येषा न स्थिरमपि प्रयत्न द्विषदिव दैव विफलयति ॥६॥

हिन्दी अनुवाद—राजलक्ष्मी महाकुलीन सम्राट् नन्द जैसे पति को छोडकर दुश्चरित्रा शूद्रा के समान छल से मौर्य के पास चली गई और उसमे स्थिर हो गई। इस विषय मे क्या करे। हमारे बडे-बडे उपायो को भी भाग्य शत्रु के समान व्यर्थ बना देता है।

Abandoning her husband, the king of high birth, who was the ruler of the earth, Shri, like an immodest harlot, has gone to the sudra, in the time of distress and become permanent in

him In this matter what can we do, whose efforts, though steady, have been baffled by fate like an enemy

संस्कृत व्याख्या—श्री लक्ष्मी उच्चैरभिजनम् उच्चकुलोत्पन्न भुवनपति राजानम् पति देव स्वामिन नन्द राजानम् त्यक्त्वा उज्झित्वा अविनीता विनयरहिता कुलटा इति यावत् वृषली इव शूद्रा इव छिद्रेण महताच्छलेन वृषल चन्द्रगुप्त गता प्राप्ता अस्मिन् वृषले चन्द्रगुप्ते स्थिरीभूता च। इह किं करवाम अस्मिन् प्रयतितेऽपि अप्रतीकार्ये विषये किं करवाम विदधाम येषा न स्थिरमपि दृढमपि प्रयत्नम् प्रयासम् द्विषदिव शत्रुरिव दैव दुर्भाग्य विफलयति निष्फलम् कुर्वदेव सतत वर्त्तते।

टिप्पणी

(१) **उच्चैरभिजनम्**—उच्चकुल मे उत्पन्न। इससे नन्द की कुलीनता सूचित की गई है। अभिजायते अस्मिन् इति अभिजन। अभि+जन्+क। उच्चै अभिजनो यस्य स तम्। (२) **वृषलम्**—चन्द्रगुप्त। वृषल कहकर चन्द्रगुप्त को हीन वश का बतलाया गया है। **विफलयति**—व्यर्थ (असफल) कर रही है। (३) **द्विषद्**—शत्रु। इसमे उपमा तथा अतिशयोक्ति अलकार और शिखरिणी छन्द है।

मया हि—देवे गते दिवमतद्विधमृत्युयोग्ये
शैलेश्वरं तमधिकृत्य कृतः प्रयत्नः।
तस्मिन् हते तनयमस्य तथाप्यसिद्धि-
र्दैवं हि नन्दकुलशत्रुरसौ न विप्रः॥७॥

अन्वय—अतद्विधमृत्युयोगे देवे दिव गते त शैलेश्वरम् अधिकृत्य प्रयत्न कृत। तस्मिन् हते अस्य तनयम् (अधिकृत्य प्रयत्न कृत) तथापि असिद्धि। दैव हि नन्दकुलशत्रु असौ विप्र न॥७॥

हिन्दी अनुवाद—महाराज नन्द, जो उस प्रकार की मृत्यु के योग्य नही थे, के स्वर्ग चले जाने पर उस पर्वतेश्वर का आश्रय लेकर प्रयत्न किया गया। उस (पर्वतेश्वर) के मर जाने पर उसके पुत्र (मलयकेतु) का सहारा लेकर प्रयत्न किया गया फिर भी असफलता मिली। नन्दकुल का शत्रु तो उसका भाग्य है न कि वह (दरिद्र) ब्राह्मण (चाणक्य)।

When King (*Nanda*) who suffered a death that did not befit him, went to heaven, effort was made by winning over Parvateshwar and after his (*Parvateshwar's*) death help was taken from his son Still there was no success It is really Fate that is the enemy of Nanda's race, not that Brahman

संस्कृत व्याख्या—अतद्विधमृत्युयोगे अतद्विध आत्माननुरूप मृत्युयोग विनाशघटना यस्य तादृशे अराजोचितमरणे देवे महाराजे नन्दे दिवगते स्वर्गाभिमुख प्रस्थिते त शैलेश्वरम् पर्वतेश्वरम् अधिकृत्य समाश्रित्य प्रयत्न कृत उपाय विहित नन्दराजपुनरुद्धरणरूप उपाय कृत । तस्मिन् शैलेश्वरे हते चाणक्येन घातिते तस्य तनयम् पुत्रम् अधिकृत्य प्रयत्न कृत तथापि असिद्धि असफलता । तत् मन्ये दैव हि भाग्य हि नन्दकुलशत्रु अरि असौ विप्र चाणक्य न ।

टिप्पणी

(१) **अतद्विधमृत्युयोगे**—जो उस प्रकार की मृत्यु के योग्य नही था । तस्य विधा प्रकार इव विधा अस्य इति तद्विध । तद्विध मृत्यु तस्य योग्यो न भवति तस्मिन् । भाव यह है कि महाराज नन्द की मृत्यु पामर लोगो की मृत्यु के समान हुई । उनको युद्ध मे मरना था । (२) **अधिकृत्य**—आश्रय बनाकर । अधि+कृ+क्त्वा—ल्यप् । (३) **असिद्धि**—असफलता । इस श्लोक मे काव्यलिग, परिसख्या तथा अतिशयोक्ति अलकारो की ससृष्टि है । और वसन्ततिलका छन्द है ।

यो नष्टानपि जीवनाशमधुना शुश्रूषते स्वामिन-
स्तेषां वैरिभिरक्षतः कथमसौ सन्धास्यते राक्षसः ।
इत्थं वस्तुविवेकमूढमतिना म्लेच्छेन नालोचितं
दैवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा पूर्वं विपर्यस्यति ।।८।।

अन्वय—य अधुना अपि जीवनाश नष्टान् स्वामिन शुश्रूषते असौ राक्षस अक्षत (सन्) तेषा वैरिभि कथ सन्धास्यते ? इत्थ वस्तुविवेकमूढमतिना म्लेच्छेन न आलोचितम्, अथवा दैवेन उपहतस्य बुद्धि पूर्व विपर्यस्यति ।।८।।

हिन्दी अनुवाद—जो अब भी पूर्णरूप से नाश को प्राप्त स्वामियों की सेवा कर रहा है, वह राक्षस कुशल से रहते हुए उन (स्वामियो) के शत्रुओ के साथ कैसे मिल सकता है । यवन (मलयकेतु) ने, जिसकी बुद्धि विषयों को समझने में असमर्थ है, यह नही सोचा । अथवा भाग्य से मारे हुए की बुद्धि पहले ही से विपरीत (उलटी) हो जाती है ।

How can Rakshas, who even now serves his masters, who are totally destroyed, side with the enemies The Mlechha, (मलयकेतु) whose mind was devoid of discrimination, did not think this Or the intellect of one, who is struck by Fate, becomes entirely perverse

संस्कृत व्याख्या—य राक्षस अधुना अपि इदानीमपि जीवनाश समूलघातम् नष्टान् घातितान् स्वामिन नन्दनृपतीन् शुश्रूषते न केवल सेवते किन्तु सेवितु-मिच्छति च असौ राक्षस अमात्य अक्षत सन् स्वस्थगात्र सन् तेषा स्वामिना वैरिभि शत्रुभि सह कथ सधास्यते सधि करिष्यति । इत्थम् एतत् वस्तुविवेक-मूढमतिना वस्तुन विवेको विमर्श तत्र मूढा मोहम् उपगता मतिर्बुद्धिर्यस्य तेन म्लेच्छेन न आलोचितम् न समीक्षितम् अथवा कथ विचारयतु स वराक इति भाव दैवेन भाग्येन उपहतस्य विनाशितस्य बुद्धि धी पूर्व प्राक् विपर्यस्यति विपरीता भवति ।

टिप्पणी

(१) **अधुना अपि**—अब भी अर्थात् स्वामी के नष्ट हो जाने पर भी। (२) **जीवनाशम्**—समूल । जीव + नश् + णमुल् प्रत्यय । समूलघातम् । (३) **शुश्रूषते**—सेवा करना चाहता है। (४) **कथ संधास्यते**—किस प्रकार सधि कर सकता है। (५) **वस्तुविवेकमूढमतिना**—वस्तु (यथार्थ बात) के जानने मे मूढ मति वाला। वस्तुन विवेके मूढा मति यस्य स तेन। इस श्लोक मे अर्थान्तरन्यास अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

तदिदानीमपि तावदरातिहस्तगतो विनश्येद्राक्षसो, नतु चन्द्रगुप्तेन सह सन्धिं कुर्यादिति; अथवा मम काममसत्य-सन्ध इति वरमयशः न पुनः शत्रुवञ्चनपरिभूतिः (समन्ताद-वलोक्य सास्रम्) एतास्ता देवस्य पादक्रमणपरिचयपवित्री-कृतरथ्याः कुसुमपुरोपकण्ठभूमयः ।

हिन्दी अनुवाद—इस समय भी शत्रु के हाथ मे पड़कर राक्षस नष्ट हो जायगा परन्तु चन्द्रगुप्त के साथ संधि न करेगा। अथवा यह अपकीर्ति कि "मै प्रतिज्ञा को पूरा करने वाला नही हूँ" ठीक है परन्तु शत्रु के दल से पराजित होना (अथवा अपमानित होना) ठीक नहीं है। (चारों तरफ देखकर आँसू भर

कर) ओह पाटलिपुत्र के वही ये प्रान्त भाग है जिनके रास्ते कभी महाराज नन्द के चलने-फिरने से अनेको बार पवित्र किए जा चुके है—

Thus even to-day Rakshas would die, having fallen in the hands of his enemies, but he would not make alliance with Chandragupta, or this infamy that 'I am not true to my promise' is better than my being defeated (*beaten*) by the enemy's strategy (*Looking round, with tears*) These are the suburban grounds of Kusumpura, whose streets were made sacred by the footsteps of Sire

इह हि—

शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेणात्र देशे
देवेनाकारि चित्रं प्रजविततुरगं बाणमोक्षश्चलेषु।
अस्यामुद्यानराजौ स्थितमिह कथितं राजभिस्तैर्विनेत्थं
सम्प्रत्यालोक्यमानाः कुसुमपुरभुवो भूयसा दुःखयन्ति ॥९॥

अन्वय—अत्र देशे शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेण देवेन चलेषु प्रजविततुरग चित्र बाणमोक्ष अकारि, अस्याम् उद्यानराजौ स्थितम्, इह राजभि कथितम्, सम्प्रति तै विना इत्थम् आलोक्यमाना कुसुमपुरभुव भूयसा दु खयन्ति ॥९॥

यहाँ पर कभी महाराज नन्द धनुष की डोरी मे फँसे हुए ढीली बागडोर दौडते हुए घोडो पर, भागते हुए निशाने पर आश्चर्यजनक ढग से बाण मारा करते थे। यह वह उपवन श्रेणी है जहाँ पर वे कभी बैठते थे। यही पर वह राजाओ से बैठ कर बाते करते थे। पर अब तो उनके बिना इस प्रकार देखी जाती हुई पाटलिपुत्र की भूमियाँ अत्यन्त क्लेश पहुँचा रही है।

Here formerly the King (*Nanda*) effected to lodging of arrows into the moving mark Sometimes his reins in the bit got slack being dropped while drawing the bow and the horse was running very fast He stopped in these rows of gardens, here he spoke to princes, Thus indeed, these precincts of Kusumpura now, being seen without him, greatly pain me

सस्कृत व्याख्या—अत्रदेशे अस्मिन् भूभागे शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिल-कविकाप्रग्रहेण शार्ङ्गस्य धनुष या ज्या प्रत्यञ्चा तस्या या आकृष्टि बाणमोक्षाय बलादाकर्षणम् तत्र मुक्तोऽतएव प्रशिथिल कविकाप्रग्रह अश्वरशनाकर्षो यस्य

स तेन तथाभूतेन देवेन नन्देन चलेषु अस्थिरेषु (लक्ष्येषु) प्रजविततुरगम् प्रजवित प्रवृद्धवेग तुरग अश्व यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा चित्र महदाश्चर्यकारि यथा स्यात्तथा बाणमोक्ष अकारि शरत्याग कृत अस्याम् उद्यानराजौ उपवनपक्तौ स्थितम् मृगयाश्रमोपनोदाय विश्रान्तम् इह अस्मिन् स्थाने राजभि नृपै सह कथितम् किमपि किमपि आलपितम् सम्प्रति इदानी तै तदादिभि राजभि विना इत्थमनेन प्रकारेण आलोक्यमाना दृश्यमाना कुसुमपुरभुव पाटलिपुत्रप्रत्यन्त-भागा भूयसा भृशम् दु खयन्ति खेदयन्ति।

टिप्पणी

(१) **अरातिहस्तगतः**—शत्रु के रूप मे पडा हुआ। अराते शत्रो हस्तगत। (२) **असत्यसंधः**—झूठी प्रतिज्ञा वाला। असत्या मिथ्या सधा प्रतिज्ञा यस्य स असत्यसध। (३) **अयशः वरम्**—यह अकीर्ति ठीक है। (४) **शत्रुवञ्चन-परिभूति**—शत्रु की वञ्चना से पराजय। शत्रो वञ्चनेन प्रतारणेन परिभूत पराजय इति। राक्षस के कहने का भाव यह है कि मेरी तो हर तरफ से बदनामी हो रही है। मलयकेतु समझता है कि मैंने अपनी बात छोड कर चन्द्रगुप्त से मेल कर लिया है यह एक बदनामी है, दूसरी बदनामी यह है कि चाणक्य ने मुझे नीति से जीतकर स्ववश कर लिया। इन दोनो प्रकार की अपकीर्तियो मे दूसरी प्रकार की अपकीर्ति ठीक नही है। (५) **पादक्रमणपरिचयपवित्रीकृतरथ्यः**—चलने-फिरने से पवित्र गलियो वाली। पादक्रमण चरणसञ्चार तस्य य परिचय तेन पवित्रीकृता रथ्या यत्र तथाविधा। यह उपकण्ठभूमय का विशेषण है। (६) **शार्ङ्गज्याकृष्टिमुक्तप्रशिथिलकविकाप्रग्रहेण**—धनुष की डोरी के खीचने के कारण लगाम हाथ से छूट गई अत शिथिल पड गई जिसके हाथ से। यह देवेन का विशेषण है। धनुष की डोरी को खीचते समय स्वभावत हाथ से छूटकर लगाम ढीली हो गई। समास के लिए व्याख्या देखिए। (७) **बाणमोक्षः अकारि (चित्रम्)**—आश्चर्यजनक ढग से बाण मारा। इस पद्य मे स्वभावोक्ति, दीपक तथा विनोक्ति अलकारो की ससृष्टि है और स्रग्धरा छन्द है।

तत् क्व खलु गच्छामि मन्दभाग्यः? (विलोक्य) भवतु दृष्टमेतज्जीर्णोद्यानम्, अत्र प्रविश्य कुतश्चिच्चन्दनदासस्य वृत्तान्तमुपलप्स्ये। (परिक्रम्य स्वगतम्) अहो! अलक्षितोप-

निपाताः पुरुषाणां समविषमदशाविभागपरिणतयो भवन्ति कुतः ?——

हिन्दी अनुवाद——तो मैं अभागा अब कहाँ जाऊँ। (देखकर) अच्छा, यह जीर्ण उद्यान दिखाई देता है। इसके अन्दर जाकर किसी प्रकार चन्दनदास का वृत्तान्त जानूँ। (घूमकर मन में) ओह कौन जान सकता है कि सुख-दुःख की अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियाँ कब किस प्रकार आया-जाया करती है। क्योंकि——

Where should I, the ill-starred one, go now ? (*Observing*) Well I see a ruined garden Entering into it I shall from somewhere gather information about Chandandas The changes into smooth and rough stages of men's life are unknown For—

पौरैरङ्गुलिभिर्नवेन्दुवदहं निर्दिश्यमानः शनैः
यो राजेव पुरा पुरान्निरगमं राज्ञां सहस्रैर्वृतः।
भूयः सम्प्रति सोऽहमेव नगरे तत्रैव बन्ध्यश्रमो
जीर्णोद्यानकमेष तस्कर इव त्रासाद् विशामि द्रुतम् ॥१०॥

अन्वय——य अहम् पुरा राज्ञा सहस्रै वृत राजा इव पौरै अगुलिभि नवेन्दुवत् निर्दिश्यमान (सन्) शनै पुरात् निरगम स एव बन्ध्यश्रम अह सम्प्रति भूय तत्रैव नगरे तस्कर इव त्रासात् द्रुत जीर्णोद्यानकम् एव विशामि ॥१०॥

हिन्दी अनुवाद——जो मै पहले सैकडो राजाओ से घिरा हुआ राजा के समान नगर के बाहर निकलता था और मेरे निकलते समय नागरिक लोग नवोदित चन्द्रमा की तरह मेरी ओर उँगलियो से इशारा करते थे वह निष्फल प्रयास वाला मै फिर उसी नगर मे चोर की तरह भय से जल्दी से जीर्ण उपवन मे प्रवेश कर रहा हूँ।

I myself formerly went out of the city leisurely, attended like a king by thousands of princes, and was pointed out (*to one other*) with their fingers by the citizens like the new moon; now, the same self of mine, in the same city, enters with fear, like a thief, into a ruined garden, when all my efforts are rendered unsuccessful

संस्कृत व्याख्या——य अहम् राक्षस पुरा नन्दराज्य तत्रयति सति राज्ञा सहस्रै अनुयायिनाम् राज्ञा नृपतीना सहस्रै वृत परित परिवेष्टित राजा इव नृप इव पौरै पाटलिपुत्रीयै प्रजाजनै अङ्गुलिभि सकेतकारिणीभि नवेन्दुवत्

नवोदितचन्द्र इव निर्दिश्यमान "अयमसौ महामात्य" इति रूपेण सकेतविषयी-कृत सन् शनै पुरात् नगरात् निरगम गतागतमकरवम् स एव अहम् बन्ध्यश्रम बन्ध्य विफलीकृत विफलीभूतो वा श्रम नन्दराज्यप्रतिष्ठापनरूप प्रयत्न यस्य स सम्प्रति इदानी भूय पुन तत्रैव नगरे तस्मिन्नेव पाटलिपुत्रे तस्कर इव चौर इव त्रासात् भयात् द्रुतम् शीघ्रम् धावमान जीर्णोद्यानकम् एव पुराणोपवनम् विशामि प्रविशामि। किमधिक भाविनी भवितव्यतेति भाव ।

टिप्पणी

(१) **अलक्षितोपनिपाता**—जिनका आना दिखाई नही पडता, अर्थात् जो यकायक आ जाते है। उप+नि+पत्+घञ् भावे=उपनिपाता । न लक्षिता उपनिपाता यासा ता अलक्षितोपनिपाता । (२) **समविषमदशाविभागपरिणतय**—अनुकूल और प्रतिकूल दशाओ के विभाग का परिणाम। समाश्च विषमाश्च समविषमा, तादृश्य दशा, तासा विभागा, तेषा परिणतय । राक्षस के कहने का भाव यह है कि दशा (सुख और दु ख का होना) के बदलने को कोई नही जान सकता। सुख से दु ख और दु ख से सुख होता है। (३) **इन्दुवत्**—चन्द्रमा के समान। चन्द्रमा जब नवोदित होता है उस समय लोग उँगली उठाकर दिखाते है कि यह चन्द्रमा निकला है उसी प्रकार जब राक्षस बाहर निकलता था तो लोग इशारा करते थे कि अमात्य राक्षस जा रहे है। (४) **बन्ध्यश्रम**—विफल प्रयत्न होकर। बन्ध्य श्रम यस्य स । (५) **जीर्णोद्यानकम्**—प्राचीन काल मे राजाओ तथा धनाढ्य व्यक्तियो के पास नगर के बाहर जो उद्यान रहता था उसे जीर्णोद्यान कहा जाता था। 'मृच्छकटिक' मे भी ऐसे उद्यान का वर्णन आया है। इसमे उपमा अलकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अथवा, येषां प्रसादादिदमासीत् ते एव न सन्ति। (नाट्येन प्रविश्य विलोक्य च) अहो ! जीर्णोद्यानस्य नाभिरमणीयता । अत्र हि—

विपर्यस्तं सौधं कुलमिव महारम्भरचनं
सरः शुष्कं साधोर्हृदयमिव नाशेन सुहृदः ।
फलैर्हीना वृक्षा विगुणविधियोगादिव नया-
स्तृणैश्छन्ना भूमिर्मतिरिव कुनीत्या ह्यविदुषः ।।११।।

अन्वय—महारम्भरचन सौध कुलमिव विपर्यस्तम्। सर सुहृद नाशेन साधो हृदयमिव शुष्कम्। वृक्षा विगुणविधियोगात् नया इव फलै हीना। भूमि कुनीत्या अविदुष मतिरिव हि तृणै छन्ना ॥११॥

हिन्दी अनुवाद—अथवा जिनकी कृपा से यह सब कुछ था वे ही नही रह गए। (अभिनय पूर्वक प्रवेश कर और देखकर) अहा, जीर्ण उद्यान में सुन्दरता कहाँ, यहाँ तो—महान् प्रयत्न से अथवा महान् वास्तुकला का आदर्शभूत यह भवन उद्यान उसी प्रकार नष्ट-भ्रष्ट दिखाई दे रहा है। जिस प्रकार कभी का समृद्ध किन्तु अब बिगडा हुआ नन्द वंश। सरोवर उसी प्रकार सूख गए हैं जैसे मित्रों के नाश से सज्जन का हृदय सूख जाता है। वृक्ष प्रतिकूल भाग्य के कारण नीतियो के समान फलशून्य हो गए। भूमि तृणो से उसी प्रकार ढक गई है जैसे मूर्ख की बुद्धि कुनीति से भ्रष्ट हो जाती है (ढक जाती है)।

Or they themselves do not exist to whose grace this was due (*Acts entering and seeing*) Alas ! the unpleasingness of the ruined garden The mansion made with great labour is upset like the family (*of Nanda*) The tank has dried up like the heart of an honest man by the loss of friends The trees are bereft of fruits like diplomacy due to ill-luck The ground is overgrown with weeds like the mind of the foolish with bad advice

सस्कृत व्याख्या—महारम्भरचनम् महता प्रचुरेण आरम्भेण वस्तुसभारेण रचना निर्माण यस्य स तादृश सौध हर्म्यम् कुलमिव नन्दकुलमिव सम्प्रति विपर्यस्तम् नष्टभ्रष्टमेव सजातम् सर तदीय सर यद्धि पुरा साधो हृदयमिव निर्मलम् सरसम् सुरुचिरञ्च तदपि सुहृद मित्रस्य नाशेन ध्वसेन साधो महात्मन हृदयमिव शुष्कम् नीरसम् (जातम्)। वृक्षा पादपा विगुणविधियोगात् विगुण प्रतिकूल॰ यो विधि दैवदुर्विपाक तस्य योगात् सयोगात् नया इव नीतय इव फलै हीना रहिता भूमि उपवनस्थली अपि कुनीत्या दुर्नयेन अविदुष मूर्खस्य अविवेकिन॰ वा मलयकेतोर्यथा मति बुद्धि इव तृणै विरुढै कुशकाशादिभि छन्ना आवृता।

टिप्पणी

(१) **येषाम्**—जिनका। यह सर्वनाम नन्द के लिए प्रयुक्त है। (२) **महारम्भरचनम्**—बडे प्रयत्न से बनाया हुआ। यह कुल तथा सौध दोनो का विशेषण है। (३) **विपर्यस्तम्**—नष्ट हो गया है। वि+परि+अस्+क्त। (४) **शुष्कम्**—

शुष्+क्त, तस्य क । (५) **विगुणविधियोगात्**—भाग्य के विपरीत होने के कारण। कही-कही पर 'विगुणनृपयोगात्' भी पाठ है। उस समय अर्थ होगा "मूर्ख राजा के सम्पर्क से"। (६) **अविदुषः**—मूर्ख की। (७) **छन्नाः**—ढक गई। छद्+क्त, तस्य न । यहाँ पूर्णोपमा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

अपि च अत्र--

क्षताङ्गानां तीक्ष्णैः परशुभिरुदग्रैः क्षितिरुहां
रुजा कूजन्तीनामविरतकपोतोपरुदितैः ।
स्वनिर्मोकच्छेदैः परिचितपरिक्लेशकृपया
स्वसन्तः शाखानां व्रणमिव निबध्नन्ति फणिनः ॥१२॥

अन्वय—तीक्ष्णै उदग्रै परशुभि क्षताङ्गाना क्षितिरुहा रुजा अविरत-कपोतोपरुदितै कूजन्तीना शाखाना व्रण फणिन परिचितपरिक्लेशकृपया श्वसन्त स्वनिर्मोकच्छेदै निबध्नन्ति इव ॥१२॥

हिन्दी अनुवाद—यहाँ तो साँपो की केचुले पेड़-पौधो मे ऐसी लटकी हुई है मानो कि लोगो के द्वारा सर्वथा उपेक्षित देखकर, बड़ी-बडी तेज धार वाली कुल्हाडियो से कटे हुए पेडो की निरन्तर कपोतो की करुण कूजित ध्वनि के बहाने करुण क्रन्दन करने वाली कटी हुई टहनियो और उँगलियो के घावो पर ये सर्प अपने पूर्व परिचित इन पेड-पौधो की दयनीय दशा मे सहानुभूति प्रकट करते और आहे भरते हुए मरहम पट्टी कर रहे हो। (कपोतो की कूजन को पेडो की कराह बताई गई है। साँपो की केचुले जो पेड़ो पर या शाखाओ पर लटकी हुई है मरहम पट्टी बताई गई है। कहने का भाव यह है कि अब इन बगीचो के वृक्षो की पूर्ववत् देख-रेख नही हो रही है। यहाँ के वृक्ष काटे जा रहे हैं और यहाँ कबूतरो का तथा सर्पो का वास है न कि मनुष्य का)।

The snakes are, as if out of pity for the acquaintances now in pain, are tying up, with sighs, the wounds of branches of trees with their own sloughs—the branches whose bodies are pierced with sharp axes and which are, due to great pain, growning with the never-ending cooing of pigeons

सस्कृत व्याख्या—तीक्ष्णै निशितनिशितै उदग्रै महता बलेनोत्तोलितै परशुभि कुठारै क्षताङ्गानाम् क्षतानि अङ्गानि यासा तथाविधानाम् क्षितिरुहा वृक्षाणाम् रुजा पीडया अविरतकपोतोपरुदितै अविरत यथा स्यात्तथा कपोतानां पारावताना यानि उपरुदितानि कूजितानि तै कृत्वा तद्व्याजेन वा कूजन्तीना

शब्द कुर्वन्तीनाम् शाखाना व्रण क्षतम् फणिन सर्पा परिचितपरिक्लेशकृपया परिचिताना सहवासिना य परिक्लेश कष्टपात तत्र या कृपा अनुकम्पा तया हेतुभूतया श्वसन्त नि श्वास कुर्वन्त स्वनिर्मोकच्छेदै स्वेषाम् आत्मनाम् निर्मोकच्छेदा कञ्चुकखण्डा तै व्रणबध परैरिव निबध्नन्तीव विरोपणाय वेष्टयन्तीव ।

टिप्पणी

(१) **तीक्ष्णैः उदग्रै. परशुभिः**—तेज और जोर से मारे हुए कुल्हाडो से। (२) **परशुभिः**—कुठारो से । 'द्वयो कुठार स्वधिति परशुश्च परश्वध' इत्यमर । परान् अन्यान् शृणन्ति हिसन्ति इति परशव पर√शॄ+डु, तै । (३) **क्षताङ्गानाम्**—घायल शरीर वाले (वृक्षो) का। (४) **क्षितिरुहा रुजा**—पेडो के घाव से । रुज्+क्विप् भावे=रुक्, तया । (५) **अविरतकपोतोपरुदितै**—कबूतरो के निरन्तर कूजने के व्याज से शब्द करने वाली शाखाओ का । (६) **परिचितपरिक्लेशकृपया**—परिचितो की वेदना से उत्पन्न करुणा के कारण । परिचितस्य य परिक्लेश नत सञ्जाता या कृपा तया । (७) **स्वनिर्मोकच्छेदै.**—अपनी केचुलो से । साँपो की केचुले जो शाखाओ मे लटकी है वे मानो मरहम-पट्टी है। यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

अन्तःशरीरपरिशोषमपाश्रयन्तः
कीटक्षतिस्रुतिभिरस्रमिवोद्वमन्तः ।
छायावियोगमलिना व्यसने निमग्ना
वृक्षाः श्मशानमपगन्तुमिव प्रवृत्ताः ॥१३॥

अन्वय—अन्त शरीरपरिशोषमुपाश्रयन्त कीटक्षतिस्रुतिभि अस्रम् उद्वमन्त इव छायावियोगमलिना व्यसने निमग्ना वृक्षा श्मशानम् उपगन्तुम् प्रवृत्ता इव ।

शरीर के भीतर शुष्कता को प्राप्त करते हुए, कीडो के द्वारा किए गए छेदो से बहने वाले द्रव के रूप मे आँसू बहाते हुए, अपनी पत्रच्छाया की शोभा से सर्वथा बिछुडे दीन-मलीन, शोक मे मग्न ये पेड ऐसे लग रहे है मानो श्मशान जाने की तैयारी कर रहे है।

And these trees, aggravating the drying up of the interior of their trunk, shedding tears, as it were, by the exudation through the holes made by insects, and plunged in distress, withered through the loss of shade, are, as if preparing to go to the cremation ground

संस्कृत व्याख्या—अन्त शरीरपरिशोषम् शरीरस्य अन्त इति अन्त शरीर य परिशोष जीर्णतया सेचनाद्यभावेन वा सजायमान रसहानिरूप शोषणम् तत् उपाश्रयन्त प्राप्नुवन्त कीटक्षतिस्रुतिभि कीटै कृता या क्षतय रन्ध्राणि ताभ्य या स्रुतय रसक्षरणानि ताभि करणै अस्रम् नयनजलम् उद्वमन्त इव मुञ्चन्त इव छायावियोगमलिना छायाया प्रियतमाया इव स्वकान्ते अनातपरूपाया यो वियोग विरहस्तेन मलिना विहतकान्तय व्यसने दारुणे दु खे निमग्ना पतिता वृक्षा श्मशानम् पितृवनम् गन्तुम् इव प्रवृत्ता उद्युक्ता इव आत्मघातायैव समुद्युक्तमानसा इव ।

टिप्पणी

(१) **अन्त शरीरपरिशोषम्**—शरीर के भीतरी भाग को सुखाते हुए। वृक्षो मे पानी देने वाला कोई नही रह गया अत वे सूख रहे है मानो उनकी अन्तरात्मा ही सूख गई है। (२) **कीटक्षतस्रुतिभिः**—कीडो के द्वारा किए गए छिद्रो से निकलता हुआ द्रव उसके द्वारा (या उसके रूप मे)। भाव यह है कि जैसे कोई स्त्री पति के मर जाने पर उसका अनुगमन करती हुई भस्म हो जाती है उसी प्रकार ये वृक्ष भी राजा नन्द के वियोग को न सहन कर सकने के कारण मानो मरने को उद्यत है। (३) **अस्रम्**—आँसू। 'अस्रमश्रुणि शोणिते' इति कोश । यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

यावदस्मिन् विषमदशापरिणामसुलभे भग्नाग्रशिलातले मुहूर्तमुपविशामि। (उपविश्याकर्ण्य च) अये! किमयमाकस्मिकः शङ्खपटहविमिश्रो नान्दीनादः श्रूयते ? य एषः—

प्रकुर्वन् श्रोतॄणां श्रुतिपथमसारं गुरुतया
बहुत्वात् प्रासादैः सपदि परिपीतोज्झित इव ।
असौ नान्दीनादः पटुपटहशङ्खध्वनिमहान्
दिशां दैर्घ्यं द्रष्टुं प्रसरति सकौतूहल इव ।।१४।।

अन्वय—गुरुतया श्रोतॄणा श्रुतिपथम् असार प्रकुर्वन् बहुत्वात् प्रासादै सपदि परिपीतोज्झित इव पटुपटहशङ्खध्वनिमहान् असौ नान्दीनाद सकौतूहल इव दिशा दैर्घ्यं द्रष्टु प्रसरति ।।१४।।

हिन्दी अनुवाद—तो अब क्षण भर टूटे हुए अग्रभाग वाले शिला-खण्ड पर बैठता हूँ जो हमारी इस बुरी दशा के परिणाम योग्य है। (बैठ कर और सुनकर) अरे यह शङ्ख और नगाडे के महानिनाद से भरा हुआ आनन्द का कोलाहल कहाँ से अकस्मात् सुन पडा। ओह ! यह तो सुनने वालो के कर्ण-कुहरों को अपनी गम्भीरता के कारण तुच्छ बनाता हुआ और अधिकता के कारण एक प्रकार से राजभवन से शीघ्र पिया हुआ और बाद मे उगल कर फेका हुआ और बड़े-बड़े नगाडो और शङ्खो के महारव से बराबर बढता ही जाता हुआ यह आनन्द का महानाद ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो दिशाओ की दूरी नापने के लिए फैलता जा रहा है।

Meanwhile I will sit down for a moment on this broken slab of stone, which is easily available in this rough time of mine (*Sitting down and hearing*) Ha what is this sound of music at this hour, in which the deep notes of drums and conches are intermingled The note of music along with the deep notes of drums and conches, which due to its being so loud, is, as it were, bursting the powerless ear-holes of listeners, and (*which*) being drunk and instantly thrown out by the big mansions, proceeds, as it were, with curiosity to measure the expanse of the quarters

संस्कृत व्याख्या—य असौ गुरुतया दुर्धरत्वेन श्रोतृणाम् शृण्वता जनानाम् श्रुतिपथम् कर्णविवरम् असार प्रकुर्वन् श्रवणभारवहनाशक्तमकुर्वन् बहुत्वात् नाद-पूरोत्पीडस्य दुर्धर्षत्वात् सपदि शीघ्रम् प्रासादै हर्म्यै भवनैर्वा परिपीतोज्झित इव आदौ परिपीत निगीर्ण पश्चात् उज्झित उद्वान्त इव पटुपटहशङ्खध्वनिमहान् पटु यथा स्यात्तथा पटहाना रणवाद्याना शङ्खाना च जयघोषकाणा ये ध्वनय निनादा तै महान् अतिप्रवृद्ध असौ नान्दीनाद शत्रुप्रहर्षसूचक ध्वनि सकौतूहल इव कौतुकाक्रान्त इव दिशा दैर्घ्यं परिमाण द्रष्टु ज्ञातु प्रसरति सर्वतोधावतीति भाव ।

टिप्पणी

(१) **विषमदशापरिणामसुलभे**—बुरी दशा के परिणाम मे सुलभ। अथवा बैठने योग्य। विषमा चासौ दशा विषमदशा तस्या परिणाम तस्मिन् सुलभ इति तस्मिन्। कठिनदुरवस्थावशिष्टभागसुकरे। (२) **आकस्मिकः**—यकायक सुनाई पडने वाला। (३) **शङ्खपटहविमिश्रः**—शङ्ख और नगाडे की आवाज से मिला हुआ। कम्बुग्रीवपटहवाद्यशब्दमिलित। (४) **श्रुतिपथम् असारम् कुर्वन्**—कान के छिद्रो को शक्तिहीन करता हुआ। (५) **गुरुतया**—

अधिक जोर का होने के कारण। (६) **परिपीतोज्झित इव**—पूर्व परिपीत· पश्चात् उज्झित इति परिपीतोज्झित 'पूर्वकालैक' —इत्यादि सूत्रेण समास । पीकर फिर वमन किया हुआ। अर्थात् वह शब्द महान् होने के कारण महल मे न समाकर। (७) **नान्दीनादः**—मङ्गल की आवाज। (८) **पटुपटहशङ्ख-ध्वनिमहान्**—नगाडे और शङ्खो की ध्वनि के कारण महान्। **दिशा दैर्घ्यम् द्रष्टुम्**—दिशाओ का विस्तार जानने के लिए। यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार है। छन्द शिखरिणी है।

(विचिन्त्य) आं, ज्ञातम्। एष हि मलयकेतुसंयमन-सञ्जातो राजकुलस्य। (इत्यर्धोक्ते सासूयम्) मौर्यकुलस्याधिकपरितोषं पिशुनयति। (सवाष्पम्) कष्टं भोः! कष्टम्!!

श्रावितोऽस्मि श्रियं शत्रोरभिनीय च दर्शितः।
अनुभावयितुं मन्ये यत्नः सम्प्रति मां विधेः ॥१५॥

अन्वय—शत्रो श्रियम् श्रावित अस्मि, अभिनीय च दर्शित मन्ये सम्प्रति माम् अनुभावयितु विधे यत्न ॥१५॥

हिन्दी अनुवाद—(सोच कर) आह समझ गया। यह मलयकेतु के पकडे जाने से उत्पन्न राजकुल का (ऐसा आधा कह कर ईर्ष्या के साथ) यह मौर्य कुल की अधिक प्रसन्नता को सूचित करता है। (आँसू के साथ) कष्ट, महान् कष्ट। शत्रु की राज्य-लक्ष्मी मुझको सुनाई गई है और समीप लाकर दिखाई भी गई। मै समझता हूँ कि इस समय मुझे अनुभव कराने के लिए भाग्य का यह प्रयत्न है।

(*Thinking*) O, I see This is the noise of the great joy (*of the royal family*) caused by the capture of Malayaketu (*Saying this half only with spite*) of the Maurya family (*With tears*) Hard, Oh, hard I have been told of the fortune of the enemy and have been made to see it by being dragged near it I think that this is the effort of Fate to make me feel it

सस्कृत व्याख्या—शत्रो अमित्रस्य श्रिय लक्ष्मीम् श्रावित आकर्णित अस्मि अभिनीय च मदन्तिक प्रापय्य च ता (श्रियम्) दर्शित साक्षात्कारित मन्ये सम्प्रति अधुना तु विधे दुर्दैवस्य यत्न उद्यम माम् अनुभावयितुम् तामेव श्रिय सर्वात्मना स्वीकारयितुम् विद्यते।

टिप्पणी

(१) **श्रावित**—सुनाया गया। श्रु+णिच्+क्त। (२) **अभिनीय**—समीप मे लाकर। अभि+नी+ल्यप्। (३) **मलयकेतुसंयमनसजातः**—मलयकेतु के पकडे जाने से उत्पन्न। मलयकेतो सयमनात् ग्रहणात् सञ्जात उत्पन्न। (४) **पिशुनयति**—सूचित करता है। (५) **अनुभावयितुम्**—अनुभव कराने के लिए। अनु+भू+णिच्+तुमुन्। राक्षस के कहने का भाव है कि पहले विराधगुप्त तथा करभक आदि के द्वारा सुना था अब देख रहा हूँ। तथा चन्दनदास को छुडाने के लिए शत्रु की लक्ष्मी का अनुभव भी करना पडेगा। इसमे उत्प्रेक्षा अलङ्कार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

पुरुषः—आसीणो अअं। ता जाव अज्जचाणक्कस्स आणत्तिं संपादेमि। (आसीनोऽयम्। तद्यावदार्यचाणक्यस्याज्ञप्तिं सम्पादयामि।) (राक्षसमपश्यन्निव तस्याग्रतो रज्जुपाशेन कण्ठमुद्बध्नाति।)

राक्षसः—(विलोक्य स्वगतम्) अये! कथमयमात्मानमुद्बध्नाति? नन्वयमहमिव दुःखितस्तपस्वी। भवतु, पृच्छाम्येनम्। (उपसृत्य प्रकाशम्) भद्र भद्र! किमिदमनुष्ठीयते?

पुरुषः—(सवाष्पम्) अज्ज! जं प्पिअवअस्सबिणासदुःखिदो अह्मादिसो मन्दभाओ जणो अणुचिट्ठदि। (आर्य! यत् प्रियवयस्यविनाशदुःखितोऽस्मादृशो मन्दभाग्यो जनोऽनुतिष्ठति।)

राक्षसः—(स्वगतम्) प्रथममेव मया ज्ञातं, नूनमहमिवायमार्तस्तपस्वीति। भवतु, पृच्छाम्येनम् (प्रकाशम्) भद्र! व्यसनसब्रह्मचारिन्! यदि न गुह्यं, नातिभारिकं वा, ततः श्रोतुमिच्छामि किं ते प्राणपरित्यागकारणम्?

पुरुषः—(निरूप्य) अज्ज! ण रहस्सं, ण वा अतिगुरुअं, किन्तु ण सक्कणोमि प्पिअवअस्सबिणासदुक्खिदहिअओ एत्तिअमत्तम्पि मरणस्स कालहरणं कादुं। (आर्य! न रहस्यं,

न वाऽतिगुरुकं, किन्तु न शक्नोमि प्रियवयस्यविनाशदुःखितहृदय एतावन्मात्रमपि मरणस्य कालहरणं कर्तुम् ।)

राक्षसः—(निःश्वस्याऽऽत्मगतम्) कष्टमेतेषु सुहृद्व्यसनेषु परवदुदासीनाःप्रत्यादिश्यामहे वयमनेन । (प्रकाशम्) भद्र! यदि न रहस्यं, नाऽतिगुरुकं वा, तत् पुनः श्रोतुमिच्छामि । कथ्यतां का गतिः दुःखस्येति ?

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—अब यह (राक्षस) बैठ गया है। तो अब आर्य चाणक्य की आज्ञा का पालन करूँ। (राक्षस को मानो न देखता हुआ उसी के सामने रस्सी का फन्दा गले मे डाल लेता है।)

राक्षस—(देखकर अपने मन मे) अरे यह तो फाँसी लगाना चाहता है। मेरे समान यह बेचारा भी कोई दुखिया होगा। अच्छा, इससे पूछता हूँ (पास जाकर प्रकट) अरे भले, मानुष! यह क्या कर रहे हो ?

पुरुष—(आँसू के साथ) आर्य, वही कर रहा हूँ जो अपने प्रिय मित्र के विनाश से दुःखी कोई मेरे समान अभागा व्यक्ति कर सकता है।

राक्षस—(मन मे) मै पहले ही समझ गया कि मेरी तरह यह बेचारा भी कोई दु.खी है। अब इससे पूछता हूँ। (प्रकट) क्यो भाई! मेरे व्यसन के भाई! (साथी) अगर बहुत गुप्त न हो अथवा बहुत दु·खमय न हो तो मै सुनना चाहता हूँ कि प्राण त्यागने का तुम्हारा क्या कारण है ?

पुरुष—(देख भाल कर) आर्य, इसमे न तो कुछ गोपनीय है और न दु·खदायी; किन्तु अपने प्रिय मित्र के विनाश से सतप्त हृदय वाला मै मरने के समय को इतना भी गँवाने मे समर्थ नही हूँ।

राक्षस—(आह भर कर मन मे) हाय, मित्र की इन विपत्तियो मे इतर जन की तरह उदासीन हम इसके द्वारा शिक्षा दिए जा रहे है। (प्रकट) भद्र, अगर यह गुप्त बात नही है या अत्यन्त महान् नही है तो मै पुन· सुनना चाहता हूँ। कहो, दु.ख का क्या कारण है ?

Man—He is seated Now I should carry out the orders of Noble Chanakya (He ties up his neck with the noose of the rope in front of Rakshas as if not seeing him)

Rakshas (*Seeing, to himself*)—How so, this man is hanging himself The poor fellow is also distressed like me Well I shall ask him (*Going near and aloud*) Oh good man, what are you doing ?

Man (*With tears*)—I am doing the same what an ill-starved man like myself does, Noble Sir, grieved by the loss of his dear friend

Rakshas (*To himself*)—At the very outset I guessed that this poor fellow was grieved like myself (*Aloud*) O, fellow-student in the school of ill-luck, if not secret or not very painful, then I wish to hear what is the reason of giving up your life..

Man—Noble Sir, it is neither a secret nor very painful but my heart is so much grieved at the loss of my dear friend that I cannot brook even this much loss of time in dying

Rakshas (*Sighing, to himself*)—It is very sorrowful This self of mine, indifferent, like a stranger in the distress of my friend, is being taught a lesson by this man (*Aloud*) Good man, if it is neither a secret nor very painful, I wish to hear it Tell me what is the cause of your grief ?

पुरुषः—अहो ! णिब्बन्धो अज्जस्स, का गदी एसो णिबेदेमि, अत्थि एत्थ णअरे मणिआरसेट्ठी जिष्णुदासो णाम। (अहो ! निर्बन्ध आर्यस्य, का गतिरेष निवेदयामि। अस्त्यत्र नगरे मणिकारश्रेष्ठी जिष्णुदासो नाम।)

राक्षसः—(स्वगतम्) अस्ति जिष्णुदासश्चन्दनदासस्य परं मित्रम्। (प्रकाशम्) किं तस्य ?

पुरुषः—सो मम प्पिअबअस्सो। (स मम प्रियवयस्यः।)

राक्षसः—(सहर्षमात्मगतम्) अये ! प्रियवयस्य इत्याह। अत्यन्तसन्निकृष्टः सम्बन्धः। हन्त ! ! ज्ञास्यति चन्दनदासस्य वृत्तान्तम्। (प्रकाशम्) भद्र ! किं तस्य ?

पुरुषः—(सवाष्पम्) संपदं सो दीणअणदिण्ण बिहबो ज्वलणं प्पविसिदुकामो णअरादो णिक्कन्तो। ता अहं पि जाब तस्स प्पिअबअस्ससस्स असुणिदब्बं ण सुणेमि, ताब अत्ताणं उब्बन्धिअ बाबादेमि त्ति इमं जिष्णुज्जाणं आअदो। (साम्प्रतं स दीनजनदत्तविभवो ज्वलनं प्रवेष्टुकामो नगरान्निष्क्रान्तः। तदहमपि यावत्तस्य प्रियवयस्यास्याश्रोतव्यं न शृणोमि तावदात्मानमुद्बध्य व्यापादयामीतीदं जीर्णोद्यानमागतः।)

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—ओह ! आर्य का ऐसा आग्रह। क्या उपाय है। अब बताता हूँ। इस नगर में जिष्णुदास नामक एक सेठ जौहरी है।

राक्षस—(मन मे) जिष्णुदास चन्दनदास का परम मित्र है। (प्रकट) उसको क्या हुआ ?

पुरुष—वह मेरा प्रिय मित्र है।

राक्षस—(प्रसन्नता से स्वगत) अरे "प्रिय मित्र है" यह कहा। बडा समीप का सम्बन्ध है। हाय, यह तो चन्दनदास का हाल जानता होगा। (प्रकट) भद्र, उसको क्या हुआ ?

पुरुष—(आँसू के साथ) इस समय गरीबो को अपना धन, विभव देकर वह आग मे जलने के लिए नगर से बाहर निकल गया है। इसलिए जब तक मै उस प्रिय मित्र की न सुनने योग्य बात (मृत्यु) नही सुनता हूँ तब तक अपने को फाँसी लगाकर मार डालता हूँ। इस लिए इस जीर्ण उपवन मे आया हूँ।

Man—Oh, the insistence of Noble Sir What alternative I will tell you There is a banker Jeweller in this city named Jishnudas

Rakshas (*To himself*)—There is Jishnudas, the friend of Chandandas (*Aloud*) What has become of him ?

Man—He is my great friend

Rakshas (*Joyfully, to himself*)—Ha ! he says he is his dear friend There is very close relationship He must be knowing the news of Chandandas (*Aloud*) My good man, what has happened to him ?

Man—At this time giving his jewellery and wealth to poor men he has gone out of the city with the intention of entering fire I myself have come to this ruined garden to hang myself to death before I hear any sad news about him

टिप्पणी

(१) **रज्जुपाशेन**—रस्सी के फन्दे से। रज्जुस्थित पाश (मध्यमपद-लोपी स०), तेन। करणे तृतीया। **तपस्वी**—बेचारा। (२) **व्यसनसब्रह्म-चारिन्**—दु ख के साथी। व्यसन रूपी पाठशाला के साथी। समानो ब्रह्मचारी सब्रह्मचारी =सहाध्यायी। व्यसनेन सब्रह्मचारी व्यसनसब्रह्मचारी तत्सम्बोधने व्यसनसब्रह्मचारिन्। (३) **गुरुकम्**—बहुत भारी या अति कष्टदायक। गुरु+ठक्। (४) **प्रियवयस्यविनाशदुःखितहृदयः**—प्रिय मित्र के नाश के कारण दु खी हृदय वाला। प्रियवयस्यनाशेन दु खित हृदय यस्य स (ब० व्री०)। (५) **प्रत्यादिश्यामहे**—शिक्षा दिया जा रहा हूँ (कि तुम भी ऐसा ही करो)। राक्षस अब तक समझ रहा था कि मै ही सबसे बडा मित्रवत्सल हूँ। किन्तु आज उसका एक ऐसे मित्रवत्सल से सामना हो गया है कि उसके निकट वह अपने आपको

लज्जित समझ रहा है। (६) निर्बन्ध—आग्रह। (७) दीनजनदत्तविभवः—गरीबो को धन देकर। दीनजनाय दत्तो विभवो येन स। (८) अश्रोतव्यम्—न सुनने योग्य बात (मृत्यु)।

राक्षसः—भद्र! अथाग्निप्रवेशे तव सुहृदः को हेतुः? किमौषधपथातिगैरुपहतो महाव्याधिभिः?

पुरुषः—अज्ज! णहि णहि। (आर्य! नहि नहि।)

राक्षसः—किमग्निविषकल्पया नरपतेर्निरस्तः क्रुधा?

पुरुषः—अज्ज! सन्तं पावं, सन्तं पावं। चन्दउत्तस्स जणवदेसु अणिसंसा पडिबत्ती। (आर्य! शान्तं पापं, शान्तं पापम्। चन्द्रगुप्तस्य जनपदेष्वनृशंसा प्रतिपत्तिः।)

राक्षसः—अलभ्यमनुरक्तवान् किमयमन्यनारीजनम्?

पुरुषः—(कर्णौ पिधाय) अज्ज! सन्तं पावं, सन्तं पावं। अभूमी क्खु एसो विणअणिधाणस्स सेट्ठिजणस्स, बिसेसदो जिण्हुदासस्स। (आर्य! शान्तं पापं, शान्तं पापम्। अभूमिः खल्वेष विनयनिधानस्य वणिग्जनस्य, विशेषतो जिष्णुदासस्य।)

राक्षसः—किमस्य भवतो यथा सुहृद एव नाशोऽवशः?॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—भद्र, क्या कारण है कि तुम्हारे मित्र आग में जल मरना चाहते है? क्या उन्हे कोई ऐसी बीमारी तो नही लगी है जिसका औषध से उपचार असंभव हो चुका?

पुरुष—आर्य, नही, ऐसी बात नही है।

राक्षस—क्या आग और विष के समान भयंकर राजा के क्रोध के शिकार तो नही है?

पुरुष—आर्य, पाप शान्त हो, पाप शान्त हो (ऐसी बात नही) चन्द्रगुप्त के राज्य मे क्रूर प्रवृत्ति नही है।

राक्षस—तो क्या कही किसी ऐसी पराई स्त्री पर तो आसक्त नही है जो उन्हे न मिल सके?

पुरुष—(कान बन्द करके) आर्य, पाप शान्त हो, पाप शान्त हो। यह अत्यन्त विनीत वणिग् जाति, विशेष करके जिष्णुदास के लिए अयोग्य बात है।

राक्षस—क्या आपकी तरह मित्र का विनाश ही इनके विनाश का कारण है?

Rakshas—Why does your frıend wısh to kıll hımself by enterıng fire ? Is he sufferıng from a dısease that is ıncurable by medıcınes ?

Man—Noble Sır, no, no

Rakshas—Has he become the vıctım of the kıng's wrath whıch ıs all but fire and poıson ?

Man—Noble Sır, begone sın, begone sın There ıs no cruelty ın the kıngdom of Chandragupta

Rakshas—Has he fallen ın love wıth some lady who ıs dıfficult to get ?

Man (*Blockıng the ears*)—Begone sın, thıs humble Banıa class, specıally Jıshnudas ıs no subject for such ındecorum

Rakshas—Has unavoıdable loss of frıend happened to hım as to you ?

टिप्पणी

यह उपरोक्त वार्ता श्लोक मे इस प्रकार है—राक्षस कहता है—

किमौषधपथातिगैरुपहतो महाव्याधिभि
किमग्निविषकल्पया नरपतेर्निरस्त क्रुधा ।
अलभ्यमनुरक्तवान् किमयमन्यनारीजनम्
किमस्य भवतो यथा सुहृद एव नाशोऽवश ।।

अन्वय—किमौषधपथातिगै व्याधिभि उपहत किमग्निविषकल्पया नरपते क्रुधा निरस्त किम् अयम् अलभ्यनारीजनम् अनुरक्तवान् किम् भवतो यथा सुहृद अवश नाश एव ।

(१) **औषधपथातिगै**.—औषध से न अच्छी होने वाली । औषधाना पन्था तम् अतिगच्छन्तीति ये तादृशै असाध्यैरिति भाव । पन्था मे "राजाह सखिभ्यष्टच्" सूत्र से समासान्त अच् प्रत्यय हो जाने से औषधपथ रूप बना । (२) **महाव्याधिभि**·—बडी बीमारी, असाध्यरोग । (३) **उपहतः**—पीडित । उप+हन्+क्त । (४) **अग्निविषकल्पया**—आग और विष के समान । अग्नि च विष च अग्निविषे, ताभ्याम् ईषदूना इति अग्निविष+कल्पप्+टाप्=अग्निविषकल्पा, तया । (५) **नरपतेः क्रुधा**—राजा के क्रोध से । नृपते क्रोधेन निरस्त समाक्षिप्त किम् । येन आत्मान व्यापाद्य राजरोष परिहर्त्तुमिच्छति । (६) **अलभ्यम् अन्यनारीजनम् अनुरक्तवान्**—क्या ऐसी स्त्री से प्रेम कर रहा है जो मिल नही सकती । न लभ्यम् अलभ्यम् दुष्प्राप्य अन्यनारीजनम्—परस्त्रियम् । अनुरक्त-

वान्—प्रणयवान् आसीत्। (७) किमस्य भवतो यथा अवशः सुहृदः नाशः—क्या आपके समान इसके मित्र का भी विनाश हो गया है जिसके कारण यह अपना प्राण दे रहा है। अवश —अप्रतीकार्य्य —जिसका कोई उपाय नही है। वह नाश जो रोका नही जा सकता। इस श्लोक मे रूपक अलकार तथा पृथ्वी छन्द है। छन्द का लक्षण—'जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरु'।

पुरुषः—अज्ज! अध इं? (आर्य! अथ किम्?)

राक्षसः—(सावेगमात्मगतम्) चन्दनदासोऽस्य सुहृदः प्रियसुहृत्, तस्य प्रियसुहृद्विनाश एवाऽग्निप्रवेशहेतुरिति यत् सत्यं समाकुलित एवाऽस्मि सुहृत्स्नेहपक्षपातिना हृदयेन। (प्रकाशम्) भद्र! तस्यापि तव सुहृदः सुचरितं विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि।

पुरुषः—अज्ज! अदो अवरं ण सक्कणोमि मन्दभाओ मरणस्स विग्घमुप्पादेदुं। (आर्य! अतोऽपरं न शक्नोमि मन्दभाग्यो मरणस्य विघ्नमुत्पादयितुम्।)

राक्षसः—श्रवणीयां कथां कथयतु भद्रमुखः।

पुरुषः—का गदी? एसो क्खु णिवेदेमि, णिसामेदु अज्जो। (का गतिः? एष खलु निवेदयामि, निशामयत्वार्यः।)

राक्षसः—भद्र! दत्तावधानोऽस्मि।

पुरुषः—अत्थि, जाणादि अज्जो, एत्थ णअरे मणिआर-सेट्ठी चन्दणदासो णाम। (अस्ति, जानात्यार्यः, इह नगरे मणिकारश्रेष्ठी चन्दनदासो नाम।)

राक्षसः—(सविषादमात्मगतम्) एतत्तदपावृतमस्म-द्विनाशदीक्षाप्रकाशद्वारं दैवेन। हृदय! स्थिरीभव, किमपि ते कष्टतरमाकर्णनीयम्। (प्रकाशम्) भद्र! श्रूयते मित्र-वत्सलः स साधुः। किं तस्य?

पुरुषः—सो एदस्स जिण्णुदासस्स प्पिअवअस्सो होदि। (स एतस्य जिष्णुदासस्य प्रियवयस्यो भवति।)

राक्षसः—(स्वगतम्) अयमभ्यर्णः शोकवज्रपातो हृदयस्य। (प्रकाशम्) ततस्ततः?

पुरुषः—तदो जिण्णुदासेण प्पिअवअस्सस्स सिणेहसरिसं अज्ज बिण्णत्तो चन्दउत्तो। (ततो जिष्णुदासेन प्रियवयस्यस्य स्नेहसदृशमद्य विज्ञप्तश्चन्द्रगुप्तः।)

राक्षसः—कथय किमिति?

पुरुषः—देव! अत्थि मे गेहे कुडुम्बभरणपज्जत्तो अत्थो तस्स बिणिमएण मुञ्चिज्जदु मे प्पिअवअस्सो चन्दणदासो त्ति। (देव! अस्ति मे गृहे कुटुम्बभरणपर्य्याप्तोऽर्थः तस्य विनिमयेन मुच्यतां मे प्रियवयस्यश्चन्दनदास इति।)

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—आर्य, और क्या (अर्थात् यही बात है।)

राक्षस—(आवेग के साथ मन में) चन्दनदास इसके मित्र का प्रिय मित्र है और उसके प्रिय मित्र का विनाश ही इसके अग्नि में प्रवेश करने का कारण है। इसलिए मित्र-स्नेह से मैं व्याकुल हो रहा हूँ (प्रकट) भद्र! तुम्हारे उस मित्र का भी हाल विस्तार से सुनना चाहता हूँ।

पुरुष—आर्य, इसके आगे (कहकर) मैं अपने मरने में विघ्न नही पैदा कर सकता।

राक्षस—भाई, अपने मित्र की बातें बताओ, वे सुनने योग्य होगी।

पुरुष—क्या उपाय है। कहता हूँ। सुनिए।

राक्षस—भद्र, मैं ध्यान दे रहा हूँ।

पुरुष—आर्य जानते होगे कि इस शहर में एक जौहरी सेठ चन्दनदास है।

राक्षस—(विषाद के साथ मन में) अब तो दुर्दैव ने हमारे लिए, हमें विनाश की दीक्षा देने के लिए अपना मुख्य द्वार खोल ही दिया। हृदय, दृढ़ बनो। अभी तो तुमको कोई कष्टतर बात सुननी पडेगी। (प्रकट) भद्र, सुना है कि वह सज्जन मित्र का प्रेमी है। उनका क्या हुआ?

पुरुष—वह इस जिष्णुदास का प्रिय मित्र है।

राक्षस—(मन में) अब तो हृदय पर शोक रूपी वज्रपात हुआ ही चाहता है। (प्रकट) तब?

पुरुष—तब आज उस जिष्णुदास ने प्रिय मित्र के स्नेह के योग्य बात चन्द्रगुप्त से कही।

राक्षस—कहो, क्या है?

पुरुष—महाराज मेरे घर में कुटुम्ब के पालन-पोषण के लिए काफी धन है। उसको लेकर मेरा मित्र चन्दनदास छोड़ दिया जाय।

Man—What else, Noble Sir (Yes)

Rakshas (*With agitation, to himself*)—Chandandas is the dear friend of his friend and his destruction is the cause of his entering into fire, thus really my heart is trembling from partiality caused by affection (*Aloud*) Noble Sir, I wish to hear in detail, the good deeds of your friend.

Man—I, the unlucky one, do not want to create another obstacle to my death after this

Rakshas—Good man, relate the story which is worth listening to

Man—What help Here I relate and let Noble Sir hear it.

Rakshas—Good man, I am attentive

Man—Your Noble Sir knows that there is a banker jeweller in this city named Chandandas

Rakshas (*Sorrowfully, to himself*)—Now ill-fate has opened its door to my death O heart, be steady, there is something more terrible for you to hear (*Aloud*) Good man, it is reported that gentleman is affectionate towards his friends What has befallen him ?

Man—He is a friend of Jishnudas

Rakshas (*To himself*)—Here the stroke of the thunderbolt of the grief of my heart is at hand (*Aloud*) What next ?

Man—Today Jishnudas spoke to Chandragupta as befitting the love of his friend

Rakshas—Say what is it ?

Man—Sir, there is sufficient wealth in my house to support the family, so in exchange for it let my dear friend Chandandas be set free

टिप्पणी

(१) **सुहृत्स्नेहपक्षपातिना**—मित्र के स्नेह का पक्षपाती, मित्र से स्नेह करने वाला। मित्रानुरागासक्तेन। सुहृद स्नेह, तस्मिन् पक्षपातः, स. अस्ति अस्य इति सुहृत्स्नेहपक्षपात+इनि। (२) **विस्तरेण**—वि+स्तृ+अप् भावे= विस्तर। विस्तारशब्दे तु 'प्रथने वावशब्दे' इति सूत्रेण घञ्प्रत्यय। (३) **अतोऽपरम्**—पुरुष यह समझता है कि जब सारी कथा राक्षस को मालूम हो जायगी तो वह चन्दनदास को बचाने के लिए आत्म-समर्पण कर ही देगा और उस समय वह (पुरुष तो ऊपर से प्राण दे रहा था न कि मन से) अपना प्राण न दे सकेगा क्योंकि चन्दनदास के बचने से जिष्णुदास भी बच जायगा। (४) **अभ्यर्णः**—समीप। अभि+अर्द्+क्त कर्तरि=अभ्यर्ण. वा अभ्यर्दित।

(५) स्नेहसदृशम्—प्रेम के उपयुक्त। (६) कुटुम्बभरणपर्याप्तः—कुटुम्ब के पोषण के वास्ते पर्याप्त। यह अर्थ=धन की अधिकतामात्र को दिखलाने के लिए प्रयुक्त हुआ है।

राक्षसः—(स्वगतम्) साधु जिष्णुदास! साधु! अहो! दर्शितो मित्रस्नेहः। कुतः?—

पितॄन् पुत्राः पुत्रान् परवदभिहिंसन्ति पितरो
यदर्थं सौहार्दं सुहृदि च विमुञ्चन्ति सुहृदः।
प्रियं मोक्तुं तद्यो व्यसनमिव सद्यो व्यवसितः
कृतार्थोऽयं सोऽर्थस्तव सति वणिक्त्वेऽपि वणिजः ॥१७॥

अन्वय—यदर्थं पुत्रा पितॄन्, पितर पुत्रान् परवत् अभिहिंसन्ति, सुहृद सुहृदि सौहार्दं विमुञ्चन्ति च। स अयम् अर्थ वणिज तव वणिक्त्वे सति अपि कृतार्थ, य (त्व) तत् प्रिय व्यसनमिव सद्य मोक्तु व्यवसित ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(अपने मन मे) धन्य हो जिष्णुदास! तुमने मित्र का प्रेम दिखा दिया। जिस धन के लिए पिता पुत्रो को, और पुत्र पिता को पराये की तरह मार डालते है, जिसके लिए मित्र अपने मित्रो के प्रति अपनी मित्रता को त्याग देते है उसी धन को तुम बनिया होते हुए भी ऐसे छोडने को तैयार हो जैसे कोई महा संकट से छुटकारा पा रहा हो। वह धन अब कृतार्थ हो गया।

Rakshas (*To himself*)—Bravo of Jishnudas, bravo, you have displayed the love for a friend. For—You, being a trader, are ready to part with the wealth, as if with a calamity for the sake of which, the fathers kill their sons, and the sons kill the fathers like enemies, and friends renounce friendship in their friends Now that wealth has gained its purpose

संस्कृत व्याख्या—यदर्थं यस्य धनस्य कृते पुत्रा आत्मजा पितॄन् जनकान् पितर जनका पुत्रान् आत्मजान् परवत् शत्रुवत् अभिहिंसन्ति घ्नन्ति सुहृद मित्राणि सुहृदि मित्रे सौहार्द्रं स्नेह विमुञ्चन्ति त्यजन्ति स अयम् अर्थ धनम् तव वणिज वणिक्त्वे सत्यपि लोभकार्पण्यादिसम्भावनाभूमिभूतवणिग्जातीयत्वेपि कृतार्थं कृतकार्यं सफल य. त्व तत् प्रिय धनम् व्यसनमिव दारुण दु खमिव सद्य. तत्क्षणम् मोक्तु हातुम् व्यवसित. उद्यत ।

टिप्पणी

(१) **सौहार्दम्**—सुहृदो भाव इति सुहृत्+अण् 'हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च' इत्युभयपदवृद्धि । (२) **वणिक्त्वे सति अपि**—भाव यह है कि बनिया धन के लोलुप होते है और उसे जल्दी खर्च नही करना चाहते पर जिष्णुदास बनिया होने हुए भी उसी धन को ऐसा त्याग रहा है जैसे कोई अपनी व्याधि को त्यागता है। इसमे उपमा अलकार और शिखरिणी छन्द है।

(प्रकाशम्) भद्र ततस्तथाऽभिहितेन सता किं प्रतिपन्नम् मौर्येण ।

पुरुषः—अज्ज तदो एवं भणिदेण चन्दउत्तेण प्पडिभणिदो सेठी जिण्णुदासो—"जिण्णुदास ण मए अत्थस्स कालणेण सेट्ठी चन्दणदासो संजमिदो, किंदु प्पच्छादिदो अणेण अमच्चरक्खसस्स घरअणं समप्पेदि, तदो अत्थि से मोक्खो अण्णधा प्पाणहरो से दण्डो" त्ति भणिअ वज्झट्ठाणं आणीदो चन्दणदासो। तदो जाव प्पिअबअस्ससस्स चन्दणदासस्स असुणिदब्बं ण सुणेमि ताबज्जेव अत्ताणं बाबादेमि' त्ति ज्जलणे प्पबिसिदुकामो सेट्ठी जिण्णुदासो णअरादो णिग्गदो । अहं बि जाव प्पिअबअस्ससस्स जिण्णुदासस्स असुणिदब्बं ण सुणेमि, ताब उब्बन्धिअ अत्ताणं बाबादेमि, त्ति इमं जिण्णुज्जाणं आगदो ह्मि । (आर्य ! तत एवं भणितेन चन्द्रगुप्तेन प्रतिभणितः श्रेष्ठी जिष्णुदासः—'जिष्णुदास ! न मयाऽर्थस्य कारणेन श्रेष्ठी चन्दनदासः संयमितः, किन्तु प्रच्छादितोऽनेनामात्यराक्षसस्य गृहजनः बहुशो याचितेनाऽपि न समर्पित इति । तद्यद्यमात्यराक्षसस्य गृहजनं समर्पयति, ततोऽस्त्यस्य मोक्षः, अन्यथा प्राणहरोऽस्य दण्ड' इति भणित्वा वध्यस्थानमानीतश्चन्दनदासः । ततो 'यावत् प्रियवयस्यस्य चन्दनदासस्याश्रोतव्यं न शृणोमि, तावदेवात्मानं व्यापादयामि' इति ज्वलने प्रवेष्टुकामः श्रेष्ठी जिष्णुदासो नगरान्निर्गतः । अहमपि यावत्

प्रियवयस्यस्य जिष्णुदासस्याश्रोतव्यं न शृणोमि, तावदुद्-बध्यात्मानं व्यापादयामि, इतीदं जीर्णोद्यानमागतोऽस्मि ।)

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(प्रकट) तब ऐसा कहे जाने पर मौर्य्य ने क्या किया ?

पुरुष—आर्य, तब चन्द्रगुप्त इस प्रकार कहे जाने पर सेठ जिष्णुदास से बोला "जिष्णुदास, मैंने धन के लिए चन्दनदास को नही कैद किया है, बल्कि इसने अमात्य राक्षस के परिवार को छिपाया हे और बार-बार माँगने पर भी उन्हे समर्पण नही किया, तो यदि यह अमात्य राक्षस के परिवार को मुझे दे दे तो इसको छोड दूँगा, नही तो इसकी सजा फाँसी होगी"। ऐसा कहकर चन्दनदास को वध्य भूमि में लाया गया है तो "जब तक प्रिय मित्र चन्दनदास की न सुनने योग्य बात (मौत) नही सुन लेता तब तक आत्महत्या कर लेता हूँ" ऐसा सोच कर आग में जल मरने की कामना से सेठ जिष्णुदास नगर से निकल गया है। मै भी जब तक प्रिय मित्र जिष्णुदास की मृत्यु नही सुन पाता तब तक फाँसी लगाकर अपनी हत्या कर लेता हूँ, इसीलिए इस जीर्णोद्यान में आया हूँ।

Rakshas (*Aloud*)—What dıd Maurya say on beıng spoken so ?

Man—Chandragupta beıng told so saıd to Jıshnudas, "O Jıshnudas, I have not arrested Chandandas foı money He has concealed the famıly of mınıster Rakshas and has not surrendered ıt though beıng asked repeatedly Well, ıf he delıvers ıt, there ıs release for hım otherwıse there ıs death sentence for hım", sayıng thıs he ordered Chandandas to be brought to the place of executıon Then Banker Jıshnudas ıesolvıng that "by the tıme I do not hear the unhearable of my frıend, I wıll kıll myself" has gone out of the cıty wıth the ıntentıon of enterıng fire I too have come to thıs dılapıdated garden wıth the ıntentıon of kıllıng myself by hangıng by the tıme I do not hear dısagreeable about my deaı frıend Jıshnudas

सस्कृत व्याख्या—नत तदा एवम् इत्थम भणितेन कथितेन चन्द्रगुप्तेन प्रतिभणित प्रत्युक्त जिष्णुदास न मया अर्थस्य कारणेन धनस्य कृते श्रेष्ठी चन्दनदास सयमित बद्ध किन्तु प्रच्छादित गुप्त अनेन चन्दनदासेन अमात्यराक्षसस्य गृहजन परिवार बहुश मुहु मुहु याचितोऽपि कथितोऽपि न समर्पयति ददाति तत् यदि चेत् अमात्यराक्षसस्य गृहजन परिवार समर्पयति तत तदा अस्ति अस्य मोक्ष मुक्ति अन्यथा नोचेत् प्राणहर अस्य दण्ड अर्थात् तस्य जीवनाश भविष्यति इति भणित्वा कथयित्वा वध्यस्थानम् वध्यभूमिम् आनीत चन्दनदास । तत

यावत् प्रियवयस्यस्य प्रियमित्रस्य चन्दनदासस्य अश्रोतव्यम् मरणमित्यर्थं न शृणोमि तावदेवात्मानं व्यापादयामि विनाशयामि इति विचार्य ज्वलने अग्नौ प्रवेष्टुकामः प्रवेशेच्छुकः श्रेष्ठी चन्दनदासः नगरात् पुरात् निर्गतः बहिर्गतः । अहमपि यावत् प्रियवयस्यस्य प्रियसुहृदः जिष्णुदासस्य अश्रोतव्यम् मरणम् न शृणोमि तावत् उद्बध्य ऊर्ध्वबन्धनं कृत्वा आत्मानं व्यापादयामि प्राणान् त्यजामि इति इदं जीर्णोद्यानम् पुराननोपवनम् आगतोऽस्मि प्राप्तोऽस्मि ।

टिप्पणी

(१) **अभिहितेन**—कथितेन । अभि+धा+क्त, धा इत्यस्य हि आदेश । (२) **प्रतिपन्नम्**—उत्तरितम् । प्रति+पद्+क्त । (३) **प्राणहरः दण्डः**—फाँसी की सजा । प्राणान् हरतीति प्राणहर प्राण+हृ+अच् । कर्त्तरि । (४) **आनीतः**—लाया गया । आ+नी+क्त । कही पर आनायित पाठ है । आ+नी+णिच्+क्त ।

राक्षसः—न खलु व्यापादितश्चन्दनदासः ?

पुरुषः—अज्ज ! ण दाव बाबादीअदि । सो क्खु संप्पदं पुणो पुणो अमच्चरक्खसस्स घरजणं जाचीअदि । ण सो मित्तबच्छलदाए जाचीअन्तो बि तं समप्पेदि । ता एदिणा कालणेण होदि से मरणस्स कालहलणं । (आर्य ! न तावत् व्यापाद्यते । स खलु साम्प्रतं पुनः पुनरमात्यराक्षसस्य गृहजनं याच्यते । न स मित्रवत्सलतया याच्यमानोऽपि तं समर्पयति । तदेतेन कारणेन भवत्यस्य मरणस्य कालहरणम् ।)

राक्षसः—(सहर्षमात्मगतम्) साधु वयस्य चन्दनदास ! साधु साधु !—

शिवेरिव समुद्भूतं शरणागतरक्षया ।
निचीयते त्वया साधो ! यशोऽपि सुहृदा विना ।।१८।।

अन्वय—साधो ! शरणागतरक्षया समुद्भूतं शिवे यश इव त्वया सुहृदा विनाऽपि निचीयते ।।१८।।

राक्षस—चन्दनदास मारा तो नहीं गया ?

पुरुष—आर्य, वह मारा नही गया है । अभी उससे बार-बार अमात्य राक्षस

का परिवार माँगा जा रहा है। वह मित्र स्नेह के कारण माँगने पर भी समर्पण नही कर रहा है। इस प्रकार उसके मरने का समय टलता जा रहा है।

राक्षस--(प्रसन्नता से मन में) मित्र चन्दनदास, शाबाश, शाबाश। हे साधो (महापुरुष), जो यश शिवि को शरणागत की रक्षा करने से मिला था वह (यश) तुमको बिना मित्र के ही मिल गया।

Rakshas—Has not Chandandas been executed ?

Man—Noble Sir, he has not been killed He is repeatedly being demanded to surrender the family of minister Rakshas, but through the love for his friend, he is not giving it up, for this reason his execution is being delayed

Rakshas (*Joyfully, to himself*)—Bravo, friend Chandandas, bravo You have, even without your friend, acquired the same fame which (*king*) Shivi acquired by giving shelter to a refugee

संस्कृत व्याख्या—साधो सज्जन शरणागतरक्षया शरणे आगतस्य कपोतस्य रक्षया त्राणेन समुद्भूतम् प्राप्त शिवे तदाख्यस्य नृपस्य यश कीर्ति इव त्वया भवता चन्दनदासेन सुहृदा मित्रेण मया तवोपकाराणा साक्षिणा विनाऽपि निचीयते सुतरामर्ज्यत इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **स गृहजन याच्यते**—उससे अमात्य राक्षस का परिवार माँगा जा रहा है। त गृहजन याचते का कर्मवाच्य मे स गृहजन याच्यते हुआ। "गौणे कर्मणि दुह्यादे प्रधाने नीहृकृष्वहाम्। विभक्ति प्रथमा ज्ञेया द्वितीया च तदन्यत' इस नियम से याच का गौणकर्म त को कर्मवाच्य मे प्रथमा विभक्ति हुई। (२) **शरणागतरक्षया**—शरणागत मे आये हुए की रक्षा से। शिवि ने एक बार कपोत की रक्षा बाज से की थी। इन्द्र ने बाज का रूप धारण करके कपोत रूप धारण किए हुए अग्नि का एक बार पीछा किया था। शिवि की परीक्षा लेने के लिए कपोत शिवि की शरण मे गया। बाज के बार-बार माँगने पर भी राजा ने वह कबूतर बाज को नही दिया। बल्कि अपने शरीर का मास काटकर बाज को कबूतर के बदले देने को उद्यत हो गया। (३) **सुहृदा विना**—विना मित्र के। तात्पर्य यह है कि शिवि ने तो शरणागत के समक्ष अपना मास दिया पर तुम तो परोक्ष मे मित्र के न रहते हुए भी उसके लिए अपना प्राण त्याग कर रहे हो। यहाँ उपमा तथा व्यतिरेक अलकार की ससृष्टि है और अनुष्टुप् छन्द है।

(प्रकाशम्) भद्र, भद्र? गच्छ शीघ्रमिदानीं जिष्णुदासं ज्वलनप्रवेशान्निवारय। अहमपि चन्दनदासं मरणान्मोचयामि।

पुरुषः—अध केण उण उबाएण अज्जो चन्दणदासं मरणादो मोचेदि? (अथ केन पुनरुपायेनार्यश्चन्दनदासं मरणान्मोचयति।)

राक्षसः—(खड्गमाकृष्य नन्वनेन व्यवसायमहासुहृदा निस्त्रिंशेन। ननु पश्य—

(प्रकट) भद्र, जाओ। इस समय शीघ्र ही जिष्णुदास को आग में प्रवेश करने से रोको। मैं भी चन्दनदास को मौत से बचाता हूँ।

पुरुष—आर्य, आप किस प्रकार चन्दनदास को मृत्यु से बचायेंगे?

राक्षस—(तलवार खीचकर) पुरुषार्थ रूपी मित्र वाले इस तलवार से, देखो—

(*Aloud*) Gentleman, go at once and stop Jishnudas from entering into fire I too, will save Chandandas from death

Man—By what means will you now save Chandandas from death?

Rakshas (*Unsheathing the sword*)—With this sword, the friend in adventures See—

टिप्पणी

(१) ज्वलनप्रवेशात्—आग मे जलने से। यहाँ पर "वारणार्थानामीप्सित" से अपादाने पञ्चमी है। मरणात् मे 'भीत्रार्थाना भयहेतु" से पञ्चमी है। (२) व्यवसायमहासुहृदा—व्यवसाय मे मित्र अथवा पुरुषार्थ रूपी मित्र। व्यवसाय पौरुष महासुहृत् प्रियमित्र यस्य स व्यवसायमहासुहृत् अथवा व्यवसाये महासुहृत्, तेन। वि+अव+सो+घञ्—व्यवसाय। निस्त्रिंशेन—तलवार से निर्गत त्रिंशत अङ्गुलिभ्य इति निस्त्रिंश (ब० व्री०) निर्+त्रिंशत्+डच् (समासान्त प्रत्यय)।

निस्त्रिंशोऽयं विगतजलदव्योमसङ्काशमूर्ति-
र्युद्धश्रद्धापुलकित इव प्राप्तसख्यः करेण
सत्त्वोत्कर्षात् समरनिकषे दृष्टभारः परैर्मे
मित्रस्नेहाद् विवशमधुना साहसे मां नियुङ्क्ते ॥१६॥

अन्वय—विगतजलदव्योमसङ्काशमूर्ति समरनिकषे परै दृष्टसार सत्त्वोत्कर्षात् युद्धश्रद्धापुलकित इव करेण प्राप्तसख्य अय मे निस्त्रिश मित्रस्नेहात् विवश माम् अधुना साहसे नियुङ्क्ते ॥१९॥

हिन्दी अनुवाद—बादल रहित आकाश के समान रूप वाली (चमकीली), युद्ध रूपी कसौटी पर शत्रुओ के द्वारा देखी गई शक्ति वाली बल की अधिकता के कारण मरने और मारने की उत्सुकता से आह्लादित और मेरे हाथ से मित्रता जोडने वाली मेरी यह तलवार मित्र-स्नेह के कारण विवश मुझको साहसिक काम मे नियुक्त कर रही है।

This sword of mine which is shining like a cloudless sky, whose might has been seen by my enemies on the touchstone of battle, which through excessiveness of valour is as if over joyed from its fondness for a fight, and which has secured union with my hand, is now driving me to do daring deeds overpowered as I am through the love of friend

सस्कृत व्याख्या—विगतजलदव्योमसङ्काशमूर्ति विगतजलदेन मेघरहितेन व्योम्ना आकाशेन सङ्काशा सदृशी मूर्ति स्वरूपशोभा यस्यैव भूतो योऽयमसौ मे निस्त्रिश खड्ग समरनिकषे समर सग्राम एव निकष परीक्षणग्रावा तस्मिन् परै. शत्रुभि दृष्टसार दृष्ट ज्ञात सार बलम् यस्य स सत्त्वोत्कर्षात् वीर्यस्याधिक्यात् युद्धश्रद्धापुलकित इव युद्धे सग्रामे या श्रद्धा तया पुलकित इव सजातरोमाच इव करेण हस्तेन प्राप्तसख्य जातानुराग इव मित्रस्नेहात् सुहृत्प्रेम्ण विवश व्यग्र माम् अधुना इदानीम् साहसे साहसिकव्यापारे नियुक्ते प्रेरयति।

टिप्पणी

(१) **विगतजलदव्योमसकाशमूर्ति**.—मेघ रहित आकाश के समान चमकने वाली। (२) **समरनिकषे**—लडाई रूपी कसौटी पर। (३) **सत्त्वोत्कर्षात्**—बल की अधिकता से। (४) **युद्धश्रद्धापुलकित**—युद्ध के लिए श्रद्धा के कारण रोमाचित। यह तलवार ऐसी हो रही है मानो युद्ध से बडी प्रसन्न है। पुलक सञ्जात अस्य इति पुलक+इतच्=पुलकित। (५) **विवशम्**—व्याकुल। विग वतशम् अस्य इति विवश, तम्। साहसे—साहस का काम, मरने मारने का काम। सहसा कृत साहसम् सहस्+अण्। इस श्लोक मे उपमा, उत्प्रेक्षा तथा रूपक अलकार एव मन्दाक्रान्ता छन्द है। छन्द का लक्षण—'मन्दाक्रान्ता जलधिषड्गैर्म्भौ नतौ ताद्गुरू चेत्'।

पुरुषः—अज्ज ! एवं सेट्ठिचन्दणदासजीबिदं होदि त्ति सुणिदं, बिसमदसाबिभाअपरिणामपड़िदो ण सक्कणोमि णिच्चिदपदं पड़िवत्तुं । (विलोक्य पादयोर्निपत्य) अध सुगिहीदणामधेआ अमच्चरक्खसपादा तुह्मे त्ति, ता करेहि मे प्पसादं संदेहणिण्णएण । (आर्य ! एवं श्रेष्ठिचन्दनदासजीवितं भवतीति श्रुतं, विषमदशाविभागपरिणामपतितो न शक्नोमि निश्चितपदं प्रतिपत्तुम् । अथ सुगृहीतनामधेया अमात्यराक्षसपादा यूयमिति, तत् कुरु मे प्रसादं सन्देहनिर्णयेन ।)

राक्षसः—भद्र ! सोऽहमनुभूतभर्तृवंशविनाशः सुहृद्विनाशहेतुरनार्यो दुर्गृहीतनामा यथार्थो राक्षसः ।

पुरुषः—(सहर्ष पुनः पादयोर्निपत्य) प्पसीदध, प्पसीदध । हीमाणहे ! दिट्ठिआ कदत्थोह्मि । (प्रसीदत, प्रसीदत । आश्चर्यम् ! दिष्ट्या कृतार्थोऽस्मि ।)

राक्षसः—भद्र ! उत्तिष्ठोत्तिष्ठ, कृतमिदानीं कालहरणेन, निवेद्यतां जिष्णुदासाय, यथैष राक्षसः चन्दनदासं मरणान्मोचयति । (इति 'निस्त्रिंशोऽयम्' इत्यादि पठन् आकृष्टखड्गः परिक्रामति ।)

हिन्दी अनुवाद—पुरुष—आर्य, यह तो सुन लिया कि सेठ चन्दनदास का प्राण इस प्रकार बच जायगा किन्तु इस दुर्दशाग्रस्त परिस्थिति में यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि आप कौन हैं । (देखकर और पैरों पर गिर कर) क्या प्रातः स्मरणीय अमात्य राक्षस आप ही हैं । तो मेरे सन्देह को दूर करने की कृपा करें ।

राक्षस—भद्र, स्वामी के वंश के नाश का अनुभव करने वाला, मित्रों के विनाश का कारण, नाम न लिए जाने के योग्य यथार्थनामा मैं ही राक्षस हूं ।

पुरुष—(प्रसन्नता से फिर पैरों पर गिर कर) महाराज प्रसन्न हों, प्रसन्न हो । आश्चर्य है । भाग्य से मैं कृतार्थ हो गया ।

राक्षस—भद्र, उठो, उठो, अब समय न बिताओ । जिष्णुदास से कह दो कि यह राक्षस चन्दनदास को मरने से बचायेगा । (ऐसा कह कर "निस्त्रिंशोऽयम्" श्लोक को पढ़ता हुआ तलवार खींचकर घूमता है ।)

Man—Noble Sir, this I have heard that Banker Chandandas will be saved, but fallen into this adverse state of fate, I cannot make out with certainty as to (*who you are*) (*Seeing and falling on his feet*) Are you the revered minister Rakshas of auspicious name, luckily seen by me? If so, be gracious enough to remove my doubt

Rakshas—I am that Rakshas in the true sense, who saw the death of his master, who is the source of troubles to his friends and who is ignoble and of inauspicious name

Man (*Joyfully again falling on his feet*)—Be pleased, be pleased, wonder, luckily I have become successful

Rakshas—Gentleman, get up, get up, do not now lose time, go and inform Jishnudas that Rakshas will save the life of Chandandas (Goes round with the sword drawn repeating the verse निस्त्रिंशोऽयम्)

टिप्पणी

(१) **निश्चितमस्य प्रतिपत्तुम्**—यह ठीक से समझने मे कि आप कौन है। प्रतिपत्तुम्—ज्ञातुम्। (२) **अनुभूतभर्तृवंशविनाश**—स्वामी (नन्द) के वंश के नाश का देखने वाला। भर्तु वंश तस्य विनाश (षष्ठीतत्०), अनुभूत भर्तृवंशविनाशो येन स (बहुव्रीहि स०)। (३) **दुर्गृहीतनामा**—अपुण्यनामधेय। प्रातःकाले यस्य नामस्मरणेन अमङ्गल जायते तादृश।

पुरुषः—(पादयोर्निपत्य) प्पसीदन्तु प्पसीदन्तु अमच्चरक्खसपादा। अत्थि दाव एत्थ णअरे प्पढमं चन्दउत्तहदएण अज्जसअड़दासस्स बधो आणत्तो। सो अ केणावि बज्झट्ठाणादो अबहरिअ, देसन्तरं अबबाहिदो। तदो चन्दउत्तहदएण कीस प्पमादो किदो त्ति अज्जसअड़दासबधबञ्जणाए समुज्जलिदो रोसग्गो घादअजणबधजलेण णिव्वाबिदो। तदो पहुदि घादआ जं कं पि गहीदसत्थं अपुब्बं पुरुसं अग्गदो पच्चादो बा पेक्खन्ति, तदो अद्धबधे ज्जेब अत्तणो जीबिदं परिरक्खन्तो अप्पमत्ता एदे अबाप्तबज्झट्ठाणं बज्झं बाबादेन्ति। ता एब्बं गहीदसत्थेहिं अमच्चपादेहिं तहिं गच्छन्तेहिं सेट्ठिचन्दणदासस्स बहो तुबराइदो होदि। (प्रसीदन्तु प्रसीद-

न्त्वमात्यराक्षसपादाः । अस्ति तावदत्र नगरे प्रथमं चन्द्रगुप्त-हतकेनाऽऽर्यशकटदासस्य वध आज्ञप्तः । स च केनापि वध्य-स्थानादपहृत्य देशान्तरमपवाहितः । ततश्चन्द्रगुप्तहतकेन 'कस्मात् प्रमादः कृतः?' इति आर्यशकटदासवधवञ्चनया समुज्ज्वलितो रोषाग्निर्घातकजनवधजलेन निर्वापितः । ततः प्रभृति घातका यं कमपि गृहीतशस्त्रम् अपूर्वं पुरुषमग्रतः पश्चाद्वा प्रेक्षन्ते, तदार्धपथे एवात्मनो जीवितं परिरक्षन्तोऽ-प्रमत्ता एतेऽप्राप्तवध्यस्थानं वध्यं व्यापादयन्ति । तस्मादेवं गृहीतशस्त्रैरमात्यपादैस्तत्र गच्छद्भिः श्रेष्ठिचन्दनदासस्य वधस्त्वरायितो भवति ।) (इति निष्क्रान्तः ।)

हिन्दी अनुवाद--पुरुष (पैरो पर गिरकर) महामात्य, महा मन्त्रिवर, राक्षस, प्रसन्न हो । अभी कुछ दिन पहले इस नगर में पापी चन्द्रगुप्त के द्वारा आर्य शकटदास का वध करने की आज्ञा दी गई । पर उस शकटदास को वध्य-भूमि से हटा कर किसी ने दूसरे देश मे पहुँचा दिया । इसके बाद उस दुष्ट चन्द्रगुप्त ने "यह असावधानी कैसे हुई" ? यह कह कर पूज्य शकटदास के वध में हुई अपनी वञ्चना से धधकती अपनी क्रोधाग्नि को वधिको की ही हत्या रूपी जल से बुझा डाला । उसी दिन से वधिक लोग शस्त्र धारण किए हुए जब किसी अजनवी व्यक्ति को देख लेते है तो उस समय अपने जीवन की रक्षा करते हुए पूरी सावधानी दिखाते हुए (वधिक लोग) बीच रास्ते में ही (बिना वध्यभूमि मे पहुँचे ही) प्राण दण्डित पुरुष को मार डालते है । इसलिए इस प्रकार शस्त्र धारण करके वहाँ जाते हुये अमात्य चरणो द्वारा चन्दनदास का वध शीघ्र ही कर दिया जायगा । (अर्थात् वैसे तो चाहे चन्दनदास को देर मे मारते पर ज्योही आपको शस्त्र लिये हुए वहाँ वधिक लोग देखेंगे त्यो ही चन्दनदास को समाप्त कर देंगे ।)

(बाहर निकल जाता है)

Man (Falling on his feet)—Oh revered Minister, be pleased. The fact is —Previously, here, order for executing Noble Shakatdas was given by cursed Chandragupta, but he was removed by some one from the execution ground and carried to another country After that saying "how this carelessness was shown" the fire of anger (*of Chandragupta*) caused by the deception in the execution of Noble Shakatdas, was extinguished by the water of execution of the executioners Since then the executioners, saving their own life and showing great alertness, kill the doomed person in the very midway (without reaching

the place of execution) when they see some stranger approaching with arms Thus really the execution of Banker Chandandas will be hastened by revered Minister's going there with arms in hand (i e with a drawn sowrd) (*Exit*)

सस्कृत व्याख्या—पादयो चरणयो निपत्य पतित्वा अर्थात् प्रणाम कृत्वा प्रथमम् प्राक् चन्द्रगुप्तहतकेन पापीयसा चन्द्रगुप्तेन आर्यशकटदासस्य वध हत्या आज्ञप्त स च शकटदास केनापि अज्ञातेन पुरुषेण वध्यस्थानात् मारणभूमे अपहृत्य नीत्वा देशान्तरम् अन्य देशम् अपवाहित प्रापित । तत चन्द्रगुप्तहतकेन "कस्मात् कारणात् प्रमाद असावधानता कृत विहित इति" एतत् कथयित्वा आर्य-शकटदासस्य वञ्चनया प्रतारणया समुज्ज्वलित प्रदीप्त क्रोधाग्नि रोषानल घातकजनवधजलेन घातकपुरुषहत्याजलेन निर्वापित शान्ति नीत । तत प्रभृति तस्मात् दिनात् घातका य कमपि गृहीतशस्त्र शस्त्रयुक्त अपूर्वम् नव पुरुष प्रेक्षन्ते पश्यन्ति तदा अर्धपथे एव आत्मन जीवितम् प्राणान् परिरक्षन्त परित्रायमाणा अप्रमत्ता सावधाना (सन्त) एते अप्राप्तवध्यस्थानम् वध्यस्थानमगत्वैव वध्य पुरुष व्यापादयन्ति घातयन्ति । तस्मात् कारणात् एवम् अनेन प्रकारेण गृहीत-शस्त्रै शस्त्रयुक्तै अमात्यपादै मन्त्रिचरणै तत्र वध्यभूमिम् गच्छद्भि श्रेष्ठिचन्दन-दासस्य वध मरण त्वरायित शीघ्रतया भवति स्यात् ।

टिप्पणी

(१) **चन्द्रगुप्तहतकेन, आर्यशकटदासः**—यहाँ चन्द्रगुप्त को हतक तथा शकटदास को आर्य कहकर वह पुरुष राक्षस को यह दिखलाना चाहता है कि मै नन्दवश के प्रति अनुरक्त हूँ। (२) **जीवितं परिरक्षन्तः**—भाव यह है कि असावधानी होने पर वध्य पुरुष भाग सकता है। उसके भाग जाने पर चन्द्रगुप्त वधिको को मरवा देगा। अत वे वधिक अपने प्राणो की रक्षा करने के लिए वध्य को शीघ्र मार दे सकते हैं।

राक्षसः—(स्वगतम्) अहो ! दुर्बोधश्चाणक्यवटोर्नीति-मार्गः । कुतः ?—

यदि स शकटो नीतः शत्रोर्मतेन ममान्तिकं
किमिति निहतस्तेन क्रोधाद् वधाधिकृतो जनः ? ।
अथ न कृतकं तादृक्कष्टं कथं नु विभावये-
दिति मम मतिस्तर्कारूढा न पश्यति निश्चयम् ।।२०।।

अन्वय—स शकट यदि शत्रो मतेन ममान्तिक नीत (तर्हि) तेन क्रोधात् वधाधिकृत जन किमिति निहत ? अथ कृतक न, तादृक् कष्ट कथ नु विभावयेत् ? इति मम मति तर्कारूढा निश्चय न पश्यति ।।२२।।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) इस दुष्ट चाणक्य के नीति के मार्ग को समझना कठिन है—यदि यह शकटदास शत्रु की अनुमति से ही मेरे पास लाया गया तो फिर वधिको को क्रोध वश क्यो मार डाला गया और यदि यह (शकटदास सम्बन्धी बात) बनावटी नही है तो वैसा कष्ट-पूर्ण कार्य (कूट, लेख, मुद्रा से छापना आदि) क्यो सोचा। इस प्रकार मेरी मति तर्क-वितर्क करती हुई किसी निश्चय पर नही पहुँच रही है।

Rakshas (*To himself*)—Ha, it is difficult to understand the course of the policy of the cunning Chanakya For—if Shakatdas was brought to me by the consent of the enemy why were then the executioners killed by him in wrath? If, on the other hand, this is not showy (i e it is real) how could he (*Shakatdas*) think of such a horrible thing? Thus guessing again and again my mind does not come to a definite conclusion

संस्कृत व्याख्या—स शकट शकटदास यदि शत्रो चाणक्यस्य मतेन अनुज्ञानेन ममान्तिक मत्समीपम् नीत प्रापित तदा तेन शत्रुणा क्रोधात् रोषात् वधाधिकृत वधाय अधिकृत नियुक्तो जन किमिति कस्माद्धेतो निहत व्यापादित । अथ कृतक न असत्य न अपि तु यथार्थमेव तर्हि तादृक् कष्ट तथाविध स्वामिद्रोहरूप पापकर्म कथ नु शकटदासो विभावयेत् चिन्तयेत्। इति एवम् मम मे मति तर्कारुढा पुन पुन तर्कयन्ती निश्चय न पश्यति निर्णय नाभिजानाति इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **शत्रोः मतेन**—चाणक्य की राय से। (२) **तर्कारुढ़ा**—बार-बार तर्क करती हुई। राक्षस उस पुरुष की बात सुनकर आश्चर्य मे पड गया। उस चर ने वधिको को मारने की बात बनाकर कही। इसी से राक्षस यह सब नही समझ पा रहा है कि अगर चाणक्य की ही राय से शकटदास छोडा गया तो फिर वधिको की हत्या क्यो की गई और यह सब बाते यदि झूठी है तो शकटदास ने ऐसा पत्र क्यो लिखा। इन्ही सब कारणो से वह किसी निश्चय पर नही पहुँच पाता और चाणक्य की नीति को दुर्बोध कह रहा है। यहाँ काव्यलिग अलकार तथा शिखरिणी छन्द है।

(विचिन्त्य) तस्मात्—

नायं निस्त्रिंशकालः प्रथममिह कृते घातकानां विघाते
नीतिः कालान्तरेण प्रकटयति फलं किं तया कार्यमत्र ?
औदासीन्यं न युक्तं प्रियसुहृदि गते मत्कृते चातिघोरां
व्यापत्तिं ज्ञातमस्य स्वतनुमहमिमां निष्क्रयं कल्पयामि ॥२१॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे ।) ॥ इति षष्ठोऽङ्कः ॥

अन्वय—इह प्रथम घातकाना विघाते कृते अय निस्त्रिशकाल न । नीति कालान्तरेण फल प्रकटयति, अत्र तया कि कार्यम् ? प्रियसुहृदि मत्कृते अतिघोरा व्यापत्ति गते औदासीन्य च न युक्तम । ज्ञातम्—अहम् इमा स्वतनुम् यस्य निष्क्रय कल्पयामि ॥२१॥

हिन्दी अनुवाद—(सोच कर) इसलिये जब कि वधिक मेरे हाथ में तलवार देखते ही चन्दनदास का वध कर देंगे तो यह समय तलवार उठाने का नहीं है। नीति समय पाकर फल देती है। यहाँ उससे (नीति से) क्या प्रयोजन ? परन्तु जब मेरा प्रिय मित्र मेरे ही लिए अति दारुण विपत्ति मे पड गया है तो उदासीन रहना भी ठीक नही अब समझ गया। मैं चन्दनदास के छुडाने का मूल्य अपना शरीर बनाता हूँ। (अर्थात् उसके बदले मे अपना प्राण त्याग करता हूँ।)

(सभी चले जाते है।) । छठा अङ्क समाप्त ।

(*Thinking*) Therefore —

This is no time for the sword if the executioners will execute him (*Chandandas*) seeing a sword in my hand Diplomacy bears fruit after the lapse of some time, but of what use is it here ? Indifference is not proper when my dear friend has been rendered so miserable for my sake I have known it I will offer my own person as his ransom (Exeunt all) (End of the sixth Act)

संस्कृत व्याख्या—इह अस्मिन् चन्दनदासमोचनकार्ये प्रथमं पूर्वम् प्रथमं चन्दनदासस्य मोचनात् पूर्वम् घातकाना वधिकाना विघाते वधिकजनै चन्दनदासस्य विघाते कृते सम्पन्ने सति अय निस्त्रिशकाल खड्गधारणसमय न। नीति कालान्तरेण बहुकालान्तरम् फल प्रकटयति साधयति इति हेतोरत्राऽस्मिन् सपदि कर्त्तु योग्ये कार्ये नीत्या किम् कार्य न किमपि प्रयोजन सिद्ध्यति। प्रियसुहृदि प्रियमित्रे मम कृते अतिघोराम् अतिदारुणाम् विपत्ति विपद गते प्राप्ते औदासीन्य नैराश्यमपि न युक्तम् नोचितम् आ· ज्ञातम् बुध्यते करणीयम् अहम् इमा

स्वतनुम् स्वशरीरम् अस्य चन्दनदासस्य निष्क्रय मोचनशुल्कं कल्पयामि सम्पादयिष्यामीति भाव । भविष्यत्सामीप्ये लट् प्रयोग ।

टिप्पणी

(१) **घातकानां विघाते कृते**—वधिको के द्वारा (चन्दनदास का) वध कर देने पर। यहाँ "कृद्योगे कर्त्तरि षष्ठी" है। (२) **मत्कृते**—मेरे लिए ही चन्दनदास पर विपत्ति आयी है। यदि वह मेरे परिवार को चाणक्य को सुपुर्द कर देता तो उसका कुछ न होता। (३) **निष्क्रयम्**—मूल्य। निष्क्रीयते अनेन इति निस्+क्री+अच्। (४) **कल्पयामि**—करूँगा। यहाँ भविष्य अर्थ मे लट् का प्रयोग है। (५) **कालान्तरेण**—कुछ समय के बाद। राक्षस का भाव यह है कि यदि नीति से काम लेता हूँ तो उसका फल तो कुछ दिन बाद मिलेगा और चन्दनदास को छुडाने के काम मे शीघ्रता करनी है। (६) **औदासीन्यम्**—चुपचाप रहना। इसमे काव्यलिग अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

(ततः प्रविशति चण्डालः)

चण्डालः—ओसलध अज्जा ! ओसलध, अबेध माणहे ! अबेध—(अपसरत आर्याः ! अपसरत, अपेत मान्याः ! अपेत—)

जइ लक्खिदुं मणद्धं प्पाणे, बिहबे, कुल कलत्ते अ ।
पलिहलध ता बिसं बिअ लाअपत्थं प्पअत्तेण ॥१॥
(यदि रक्षितुं मन्यध्वं प्राणं, विभवं, कुलं, कलत्रं च ।
परिहरत तस्माद् विषमिव राजापथ्यं प्रयत्नेन ॥१॥)

अन्वय—यदि प्राण विभव कुल कलत्र च रक्षितु मन्यध्वम्, तस्मात् प्रयत्नेन विषमिव राजापथ्य परिहरत ॥१॥

सातवाँ अङ्क

हिन्दी अनुवाद—(चण्डाल का प्रवेश) चण्डाल—आर्य लोग हटें, हटें, माननीय सज्जन लोग हट जॉय। यदि प्राण, धन, कुल और स्त्री की रक्षा करना चाहते हो तो विष के समान राजद्रोह को त्याग दो (या यत्नपूर्वक राजद्रोह से बचो)।

ACT VII

(*Then enter a Chandal*) *Chandal*—Away, away gentleman Respected Sirs, away, away If you wish to protect your life, wealth, family and wife, avoid in every way the injury to the king

संस्कृत व्याख्या—यदि प्राण जीवित विभव धन कुल वश कलत्र च दाराश्च रक्षितु परित्रातुम् मन्यध्वम् इच्छत तर्हि तस्मात्—प्रयत्नेन प्रयासेन विषमिव गरलमिव राजापथ्यम् नृपविरोध परिहरत त्यजत।

टिप्पणी

चण्डालः—यह चण्डाल कोई नया व्यक्ति नही है। यह वही सिद्धार्थक है जो राक्षस के यहाँ नौकरी कर चुका है। **यदि रक्षितुम्**—इस श्लोक मे व्यतिरेक अलकार तथा आर्या छन्द है।

अविग्र--(अपि च--)

होदि पुलिसस्स ब्बाही मलणं बा सेबिदे अपत्थेवि ।
लाग्रापत्थे उण सेबिदे सग्रलं बि कुलं मलदि ।।२।।
(भवति पुरुषस्य व्याधिमरणं वा सेविते अपथ्येऽपि ।
राजापथ्ये पुनः सेविते हि सकलमपि कुलं म्रियते ।।२।।)

अन्वय--अपथ्ये अपि सेविते पुरुषस्य व्याधि वा मरण भवति, पुनः राजापथ्ये सेविते हि सकलमपि कुल म्रियते ।।२।।

हिन्दी अनुवाद--और भी--अपथ्य वस्तु का सेवन करने से तो मनुष्य की मौत होती है अथवा उसे बीमारी हो जाती है परन्तु राजा का अहित करने से सारा कुल नष्ट हो जाता है ।

Again—If a man takes what is unwholesome, he dies or falls sick, but if he injures the king, his whole family perishes.

सस्कृत व्याख्या--अपथ्ये अहितकरे कस्मिश्चिद्विषादौ सेविते सति पुरुषस्य जनस्य व्याधिश्शरीरपीडा मरण प्राणप्रीडा वा भवति किन्तु राजापथ्ये राजानिष्टकरे राजविद्रोहरूपे वस्तुनि पुनस्सेविते सकलमपि कुल म्रियते नैकस्य विनाशः अपि तु सर्वकुटुम्बस्य विनाशो निश्चित । अत राजद्रोह परिहरत इति शेष ।

टिप्पणी

भवति पुरुषस्य--इस पद्य मे भी व्यतिरेक अलकार तथा आर्या छन्द है ।

ता जइ ण प्पत्तिआअध, तदा पेक्खध एणं लाग्रापत्थकालिणं सेट्ठिचन्दणदासं बज्झट्ठाणं आणीअमाणं सपुत्तकलत्तं । (आकाशे) अज्जा ! किं भणाध ? अत्थि किं चन्दनदासस्स मोक्खोबाओ त्ति ? कुदो से अधणस्स मोक्खो बाओ ? एद उण अत्थि--सो जइ अमच्चरक्खसस्स घरअणं समप्पेदि । (पुनराकाशे) किं भणाध ? एसे सलणागदबच्छले अत्तणो जीबिदस्स कालणेण ईरिसं अकज्जं ण कलिस्सदि त्ति ? अज्जा । जई एब्वं त्तेण हि अवधाणेध से सुभगदिं किं दाणिं तुह्माणं प्पडीआलविआरेण (तद्यदि न प्रत्यध्वं

तदा प्रेक्षध्वमेनम् राजापथ्यकारिणं श्रेष्ठिचन्दनदासं वध्य-स्थानमानीयमानम् सपुत्रकलत्रम्। आर्याः किं भणथ ? अस्ति किं चन्दनदासस्य मोक्षोपाय इति ? कुतोऽस्याधन्यस्य मोक्षोपायः ? एतत् पुनरस्ति—स यद्यमात्यराक्षसस्य गृहजनं समर्पयति। किं भणथ ? एष शरणागतवत्सल आत्मनो जीवितस्य कारणेनेदृशमकार्यं न करिष्यतीति। आर्याः; यद्येवं तेन ह्यवधत्तास्य शुभगतिं। किमिदानीं युष्माकं प्रतीकारविचारेण ?)

हिन्दी अनुवाद—तो यदि विश्वास नही पड़ रहा है तो इस राजद्रोही चन्दन-दास को देख लो जो स्त्री व पुत्र समेत वध्यभूमि को ले जाया जा रहा है (आकाश की ओर देखकर) क्या कहा ? क्या चन्दनदास के बचने का कोई उपाय है ? इस भाग्यहीन का छुटकारा किस उपाय से हो सकता है ? हाँ, इसका एक उपाय है, वह यह है कि यह (चन्दनदास) अमात्य राक्षस के परिवार को सौंप दे। (फिर आकाश की ओर देखकर) क्या कहा कि यह शरणागतवत्सल (चन्दन-दास) अपने प्राण बचाने के लिए यह नीच काम न करेगा। यदि यह बात है तो चन्दनदास की सद्गति मनाओ, छुटकारा पाने का उपाय पूछने से क्या ?

If you do not believe, come and see this rebel, Chandandas who is being taken to the place of execution with his wife and son (*Looking at the sky*) Gentlemen, do you ask if there is any means of his release ? How can there be any means of the release of this unlucky fellow ? There is a way of his release and that is this—he should deliver the family of Minister Rakshas (*Again in the air*) Do you say that a person, kind to refugees, will not do such mean deed for the sake of his life ? Noble Sirs, if it is so, then pray for pleasant passage (*pleasant death*) and what is the use of your asking the remedy in this matter ?

सस्कृत व्याख्या—तत् मया कथित सर्व यदि चेत् न प्रत्यध्वम् विश्वसित तदा एनम् राजापथ्यकारिणम् भूपतेरनिष्टकारिणम् वध्यस्थानम् प्राणदण्डस्थानम् आनीयमान सपुत्रकलत्रम् तनयपत्नीसहितम् श्रेष्ठिचन्दनदास प्रेक्षध्वम् पश्यत। कि भणथ कथयथ चन्दनदासस्य मोक्षोपाय चन्दनदास कथम् मुक्तो भविष्यति ? अस्य अधन्यस्य भाग्यरहितस्य मोक्षोपाय कुत कस्मात् ? एतत् उपाय पुनः अस्ति यदि चन्दनदास अमात्यराक्षसस्य गृहजन कुटुम्ब समर्पयति ददाति। किं

भणथ किं कथयथ एष अयम् चन्दनदास शरणागतवत्सल शरणागतेषु प्रेम करोति अत आत्मन स्वस्य जीवितस्य जीवनस्य कारणेन हेतुना ईदृशम् अकार्य पाप कुत्सित कर्म वा न करिष्यति। यदि एव यदि स न समर्पयति तेन हि अवधत्त अस्य शुभगति जानीत अस्य चन्दनदासस्य शुभगतिम् मरणम्। तर्हि इदानीम् प्रतीकारविचारेण मोक्षोपायविचारणेन किम् न कोऽपि लाभ ।

टिप्पणी

शुभगतिम्—इसका बाह्य अर्थ है—शरणागत की रक्षा करने के निमित्त उत्तम लोक की प्राप्ति और गूढ अर्थ है—राक्षस के आ जाने से कल्याण की प्राप्ति अर्थात् चन्दनदास बन्धनमुक्त हो जायगा।

(ततः प्रविशति द्वितीयचण्डालानुगतो वध्यवेशधारी शूलं स्कन्धेनादाय कुटुम्बिन्या पुत्रेण चानुगम्यमानश्चन्दनदासः।)

चन्दनदासः—हद्धी ! हद्धी !! अह्मारिसाणं बि कधं णिच्चचारित्तभङ्गभीरुणं चोरजणोचिदं मलणं पत्तं त्ति। णमो किदन्तस्स। अहवा ण णिसंसाणं उदासीणेसु इदरेसु बा बिसेसो अत्थि। तधा हि—(हा धिक्, हा धिक् !! अस्मादृशानामपि कथं नित्यचारित्रभङ्गभीरूणां चौरजनानामिव मरणं प्राप्तमिति। नमः कृतान्तस्य। अथवा न नृशंसानामुदासीनेष्वितरेषु वा विशेषोऽस्ति। तथा हि—)

हिन्दी अनुवाद—(तदनन्तर दूसरे चण्डाल के साथ वध के योग्य वेश धारण किए हुए कंधे पर शूल रख कर स्त्री और पुत्र से अनुगम्यमान चन्दनदास प्रवेश करता है) चन्दनदास—हाय धिक्कार, हाय धिक्कार! हमारे समान निरन्तर चरित्र दोष से डरते रहने वाले की चोर की भाँति मौत। यमराज को नमस्कार है। अथवा नृशंस लोगों को अपराधी तथा निरपराधी में कोई भेद नहीं होता। जैसे कि—

(Now enters Chandandas, accompanied by another Chandal, his son and his wife, wearing the dress of a doomed person and carrying a stake on his shoulder) *Chandandas*—Oh fie, oh fie, salutation to death, people like me, who are always apprehensive of the loss of character, should die a death like that of a thief or to those, who are bad-hearted, there is no distinction between an innocent and guilty person.

टिप्पणी

(१) **नित्यचारित्रभङ्गभीरूणाम्**—चरित्र के भग होने से या चरित्र पर धब्बा लगने से सदा डरने वाले। (२) **कुटुम्बिन्या**—पत्न्या। 'दारा स्यात्तु कुटुम्बिनी' इत्यमर।

मोहूण आमिसाइं मलणभएण तिणेहिं जीवन्तम्।
बाहाणं मुद्धहरिणं हन्तुं को णाम णिब्बन्धो? ॥३॥
(मुक्त्वा आमिषाणि मरणभयेन तृणैर्जीवन्तम्।
व्याधानां मुग्धहरिणं हन्तुं को नाम निर्बन्धः? ॥३॥)

अन्वय—मरणभयेन आमिषाणि मुक्त्वा तृणै जीवन्तम् मुग्धहरिण हन्तु व्याधाना को नाम निर्बन्ध ? ॥३॥

हिन्दी अनुवाद—जीव-हिंसा के भय से मास को छोडकर तिनके से जीवन धारण करने वाले हिरणों को मारने के लिए बहेलियो का यह कैसा हठ है अर्थात् (इतने पर भी जब व्याध हिरनो को मारने के लिए तैयार है तो क्या कहा जाय क्या न कहा जाय)?

What is this persistency of the hunters in killing the innocent deer, which, through fear of killing, lives on grass only, giving up meat ?

सस्कृत व्याख्या—मरणभयेन कश्चित् प्राणी म्रियेतेति भीत्या आमिषाणि मासादीनि मुक्त्वा त्यक्त्वा तृण घासादिभि जीवन्त वृत्ति कल्पयन्त मुग्धहरिण सरलस्वभावम् मृगादिक हन्तु व्याधाना को नाम निर्बन्ध कीदृश दुराग्रह ?

टिप्पणी

(१) **मरणभयेन**—कही जीवहिसा न हो जाय इस डर से। (२) **तृणैः जीवन्तम्**—घास खाकर निर्वाह करने वालो का। (३) **मुग्धहरिणम्**—सीधे साधे हरिणो को (४) **को नाम निर्बन्ध**—कैसा दुराग्रह है। इस पद्य मे दृष्टान्त तथा अतिशयोक्ति अलकार और आर्या छन्द है।

(समन्तादवलोक्य) भो प्पिअबअस्स जिण्णुदास! कधं प्पड़िबअणं बि मे ण प्पड़िबज्जसि त्ति। अधबा दुल्लहा क्खु पुरिसा, जे इमस्सि काले दिट्ठबधे बि चिट्ठन्ति। (सवा-

ष्पम्) एदे अह्म प्पिअवअस्सा अस्सुबादमेत्तकेण किदप्पदीआरा कहं विणिबत्तमाणा परिबढ्ढमाणसोअदीणबदणा प्बाप्फगरुआए दिट्ठीए मं अणुगच्छन्दि। (भो प्रियवयस्य जिष्णुदास! कथं प्रतिवचनमपि मे न प्रतिपद्यसे इति। अथवा दुर्लभाः खल्वेते पुरुषाः येऽस्मिन् काले दृष्टिपथेऽपि तिष्ठन्ति। एतेऽस्मत्प्रियवयस्या अश्रुपातमात्रेण कृतप्रतीकाराः निवर्तमानाः परिवर्धमानशोकदीनवदना बाष्पगुर्व्या दृष्ट्या मामनुगच्छन्ति।) (इति परिक्रामति।)

चण्डालौ——(परिक्रम्यावलोक्य च) अज्ज चन्दणदास! आगदोसि वज्झट्ठाणं। ता बिसज्जेहि पणिअणं। (आर्य चन्दनदास! आगतोऽसि वध्यस्थानं। तत् विसर्जय परिजनम्।)

चन्दनदासः——अज्जे! कुटुम्बिनि! णिबत्तस्स तुमं सपुत्ता। बज्झट्ठाणं क्खु एदं, अदो अबरं अभूमि क्खु अणुगच्छिदुम्। (आर्ये! कुटुम्बिनि! निवर्तस्व त्वं सपुत्रा। वध्यस्थानं खल्वेतत्, अतोऽपरमभूमिः खल्वनुगन्तुम्।)

कुटुम्बिनी——(सवाष्पम्) परलोअं प्पत्थिदो अज्जो, ण उण देसन्तरं ता अज्जोग्गो दाणीं कुलजणस्स णिबत्तिदुं। (परलोकं प्रस्थित आर्यो न पुनर्देशान्तरं, तदयोग्यमिदानीं कुलजनस्य निर्वाततुम्।)

चन्दनदासः——अज्जे! सच्चं, मित्तकज्जेण मम बिणासो, न पुरिसदोसेण। ता किं हरिसट्ठाणे बि रोइसि त्ति? (आर्ये? सत्यं, मित्रकार्येण मम विनाशो, न पुरुषदोषेण; तत् किं हर्षस्थानेऽपि रोदिषि इति?)

कुटुम्बिनी——अज्ज! जइ एब्बं, ता अणुचिदं दाणीं कुलजणेण णिबत्तिदुं। (आर्य! यद्येवं, तदनुचितमिदानीं कुलजनेन निर्वाततुम्।)

हिन्दी अनुवाद——(चारों ओर देखकर) ऐ मित्र जिष्णुदास, मुझे उत्तर भी

नहीं देते हो ! अथवा ऐसे लोग दुर्लभ हैं जो ऐसे मौके पर दिखाई भी दे सकें। (आँसू भरकर) ये हमारे मित्र केवल आँसू गिरा कर प्रतीकार करने वाले तथा बढ़ते हुए शोक से मलिन बदन वाले आँसू भरे नेत्रों से मेरा अनुसरण कर रहे हैं। (यह कह कर घूमता है।)

चण्डाल—(घूम कर और देखकर) आर्य, चन्दनदास, अब आप वध्य स्थान में आ गये हैं इसलिए परिजनों को लौटा दीजिये।

चन्दनदास—अरे घर वाली, तुम पुत्र सहित लौट जाओ। यह फाँसी देने की जगह है। इसके आगे मेरे साथ चलना ठीक नहीं।

कुटुम्बिनी—(आँसू के साथ) आर्य, आप परलोक जा रहे हैं न कि विदेश-यात्रा कर रहे हैं। तो इस समय परिजनों का लौटना उचित नहीं है।

चन्दनदास—आर्ये, सत्य है। मेरा नाश मित्र के कार्य के लिए हो रहा है। न कि मेरे किसी अपराध से। तो अब आनन्द के समय क्यों रोती हो?

कुटुम्बिनी—आर्य, यदि ऐसा है तो कुलजनों का लौटना अनुचित है।

(*Looking on all sides*) Ho, dear friend Jishnudas, How so You do not even respond to me or such people are rare who stand within the range of sight at such occasions (*With tears*) Here my dear friends, who have shed tears and thus offered oblation of water, are following me with pale faces through increasing grief having tears in their eyes

Both the Chandals (*Going round and seeing*)—Noble Chandandas, you have reached the place of execution, hence dismiss your family

Chandandas—Noble lady, return along with your son This is the execution ground It is not proper to follow me beyond this

Wife (*With tears*)—Noble Sir, is going to another world, not to another country So it is not proper to return

Chandandas—Noble wife, it is true My death is due to the cause of my friend and not through any fault of mine So why do you weep at this time of rejoicing ?

Wife—Noble Sir, if it is so, it is not proper for the family to go back

टिप्पणी

(१) **प्रतिवचनम्**—प्रत्युत्तरम्। (२) **प्रतिपद्यसे**—ददासि। (३) **कृत-प्रतीकारा:**—कृत विहित प्रतीकार उपाय यै ते। (४) **बाष्पगुर्व्या**—अश्रुपूर्णया।

चन्दनदासः—अध इं ब्बबसिदं अज्जाए (अथ किं व्यवसितमार्यया ?)

कुटुम्बिनी—(सबाष्पम्) भत्तुणो चलणमणगच्छन्तीए अप्पाणग्गहो होदि त्ति। (भर्तुश्चरणमनुगच्छन्त्या आत्मानुग्रहो भवति इति।)

चन्दनदासः—अज्जे! दुब्बबसिदं एदं दे, ता दाणीं अज्जाए अअं असुणिदलोअब्बबहारो कुमारो अणुगेहि्णदब्बो त्ति। (आर्ये! दुर्व्यवसितमिदं ते, तदिदानीमार्ययाऽयमश्रुतलोकव्यवहारः कुमारोऽनुग्रहीतव्य इति।)

कुटुम्बिनी—अणगेह्लन्तु णं प्पसण्णाओ कुलदेबदाओ। जाद! पुत्तअ! प्पणम अपच्छिमस्स पिदुणो पाएसुं। (अनुगृह्लन्त्वेनं प्रसन्नाः कुलदेवताः। जात! पुत्रक! प्रणम अपश्चिमस्य पितुः पादयोः।)

पुत्रः—(पादयोर्निपत्य) ताद! मए तादबिरहिदेण किं अणुचिट्ठदब्बं (तात! मया तातविरहितेन किमनुष्ठातव्यम् ?)

चन्दनदासः—पुत्त! चाणक्कबिरहिदे देसे बसिदब्बं। (पुत्र! चाणक्यविरहिते देशे वस्तव्यम्।)

चण्डालौ—अज्ज! चन्दणदास! णिखादे शूले, ता दाणीं सज्जो होहि। (आर्य! चन्दनदास! निखातः शूलः, तदिदानीं सज्जो भव।)

कुटुम्बिनी—अज्जा! पलित्ताअध पलित्ताअध। (आर्याः! परित्रायध्वं परित्रायध्वम्।)

चन्दनदासः—भद्दमुह! मुहुअत्तं चिट्ठ। अइ जीबिदबच्छले! किं एत्थ आक्कंदसि ? सग्गं गदा क्खु ते देबा णन्दा, जे दुक्खिदं इत्थीजणं प्पइदिणं अणुकम्पन्ति। (भद्रमुख! मुहूर्तं तिष्ठ। अयि जीवितवत्सले! किमत्राक्रन्दसि स्वर्गं

गताः खलु ते देवाः नन्दाः, ये दुःखितं स्त्रीजनं प्रतिदिन-मनुकम्पन्ते ।)

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास—अरी स्त्री, क्या करना चाहती हो?

कुटुम्बिनी—(अश्रु भरे नेत्रो से) आपके चरण का अनुगमन करने से मैं कृतार्थ हो जाती।

चन्दनदास—आर्ये, यह विचार ठीक नही है। यह तुम्हारे लिए अनुचित है। इस समय इस कुमार के ऊपर दया करो, जो संसार के व्यवहार से अनभिज्ञ है।

कुटुम्बिनी—इसके ऊपर तो प्रसन्न हुए कुल देवता कृपा करें। बेटा, सदा के लिए विदा होने वाले पिता के पैरो पर गिर पडो।

पुत्र—(पिता के दोनो पैरो पर पड़कर) पिता जी, आप से विमुक्त होकर मै क्या करूँ?

चन्दनदास—पुत्र, वहाँ जाकर रहना जहाँ चाणक्य न पहुँच पाए।

दोनो चाण्डाल—आर्य चन्दनदास, सूली गड चुकी, अब तैयार हो जाओ।

कुटुम्बिनी—अरे बचाओ, बचाओ।

चन्दनदास—भद्रमुख! थोडी देर रुक जा। अरी प्राणप्यारी, क्यों रो रही हो? हमारे राजा नन्द अब स्वर्ग चले गये है, जो दुःखी स्त्रियों पर प्रतिदिन कृपा करते थे।

Chandandas—What do you intend to do?

Wife (*With tears in her eyes*)—I shall become blessed by following your footsteps

Chandandas—Noble wife, this resolve of yours is not proper, you have to think of this poor boy who is unexperienced in the ways of the world

Wife—Let the family gods be pleased and help him Oh son, fall at the feet of your father who is to be seen for the last time

Son (*Falling on the father's feet*)—Father, what should be done by me, abandoned by my father?

Chandandas—Son, you have to live in a land where Chanakya may not reach

Both the Chandals—Noble Chandandas, the stake is driven, so be ready

Wife—Noble Sirs, protect, protect

Chandandas—Noble wife, wait for a moment Oh my dear wife, why are you weeping at this time? King Nanda, who used to take pity on the grieved ladies, is gone to heaven.

टिप्पणी

(१) **व्यवसितम्**—इरादा किया है। स्थिरीकृतम्। वि+अव+सो+क्त। (२) **अश्रुतलोकव्यवहार**—जो लोकव्यवहार से अनभिज्ञ है। यह "कुमार" का विशेषण है। अश्रुत अज्ञात लोकव्यवहारो लोकाचार येन स (ब० व्री०)। (३) **अपश्चिमस्य**—जिनका दर्शन आखिरी बार मिल रहा है, जो अब तुम्हे न दिखाई पडेगे। (४) **आर्या**—पूज्या जना इति बाह्यार्थ। गूढार्थस्तु—अस्मद्रक्षणोद्यता अमात्यराक्षसा इति।

प्रथमश्चण्डालः—अले बेणुबेत्तका, गेह्ण इमं चन्दनदासं। घलजणो स्सअं ज्जेव गमिस्सदि। (अरे वेणुवेत्रक, गृहाणेमं चन्दनदासम्। गृहजनः स्वयमेव गमिष्यति।)

द्वितीयश्चण्डालः—अले वज्जलोमआ, एसे गेह्णामि। (अरे वज्रलोमक, एष गृह्णामि।)

चन्दनदासः—भद्दमुह! चिट्ठ मुहुत्तअं, जाव पुत्तअं परिस्सआमि। (इति पुत्रं परिष्वज्य मूर्ध्नि समाघ्राय) जाद! पुत्तअ! अबस्सं भबिदब्बे बि बिणासे मित्तकज्जं समुब्बहमाणो बिणासमणुभवामि। (भद्रमुख तिष्ठ मुहूर्तं, यावत् पुत्रकं परिष्वजे। जात! पुत्रक! अवश्यम्भवितव्येऽपि विनाशे मित्रकार्यं समुद्वहमानो विनाशमनुभवामि।)

पुत्रः—ताद! एदं क्खु भणिदब्बं, कि कुलक्कमो क्खु एसो अह्माणं (तात! इदं खलु भणितव्यं, किं कुलक्रमः खल्वेषोऽस्माकम्?) (इति पादयोः पतति।)

चण्डालः—अले गेह्ण बज्जलोमआ! (अरे गृहाण वज्रलोमक!)

(चण्डालौ गृह्णीतश्चन्दनदासमारोपयितुं शूले।)

कुटुम्बिनी—(सोरस्ताडम्) अज्जा! पलित्ताअध पलित्ताअध। (आर्याः! परित्रायध्वम् परित्रायध्वम्।)

हिन्दी अनुवाद—पहला चाण्डाल—अरे वेणुवेत्रक, इस चन्दनदास को पकड़ लो। घर के लोग स्वयम् लौट जाँयगे।

दूसरा चाण्डाल—अरे वज्रलोमक, लो मैं पकड़ता हूँ।

चन्दनदास—भद्रमुख, क्षण भर ठहरो जब तक मैं पुत्र का आलिङ्गन कर लूँ। (पुत्र का आलिङ्गन करके और मस्तक सूँघकर) बेटा, यद्यपि मृत्यु अवश्य भावी है फिर भी मित्र के कार्य को वहन करता हुआ मैं मृत्यु को प्राप्त हो रहा हूँ।

पुत्र—पिता जी, यह तो बता दीजिए कि क्या हमारी कुल की रीति यही रही है? (पैरों पर गिरता है)।

चाण्डाल—अरे वज्रलोमक, पकड़ ले।

(दोनो चण्डाल शूली पर चढ़ाने के लिए चन्दनदास को पकड़ लेते हैं)

कुटुम्बिनी—(छाती पीटती हुई) आर्यो, बचाओ, बचाओ।

First Chandal—Oh Venuvetraka, catch this Chandandas and the family will itself go back

Second Chandal—Oh Vajralomak, here I catch him

Chandandas—Good man, wait a moment till I embrace my son (Embracing the son and smelling him at his head) Dear child, death being inevitable, I am dying for the cause of my friend

Son—Father, tell me if this is the custom of my family (*Falls at his feet*)

Chandal—Oh Vajralomak, seize him

(Both the Chandals seize Chandandas to put him to gallows)

Wife (*Beating the breast*)—Noble Sirs, protect, protect.

टिप्पणी

(१) **अवश्यंभवितव्ये**—अवश्य होने योग्य। मृत्यु तो सबकी निश्चित है। फिर जो मित्र के लिए मरे वह प्रशसनीय होता है, अत: शोक करना व्यर्थ है।

(२) **सोरस्ताडम्**—छाती पीटकर। यह अव्यय है। उरस ताड उरस्ताड: तेन सहित यथा स्यात्तथा सोरस्ताडम्।

(प्रविश्य पटाक्षेपेण राक्षसः।) भवति! न भेतव्यं न भेतव्यम्। भो भो शूलायतनाः! न खलु व्यापादनीयश्चन्दनदासः। कुतः—

येन स्वामिकुलं रिपोरिव कुलं दृष्टं विनश्यत् पुरा
मित्राणां व्यसने महोत्सव इव स्वस्थेन येन स्थितम्।
आत्मा यस्य वधाय वः परिभवक्षेत्रीकृतोऽपि प्रियैः
तस्येयं मम मृत्युलोकपदवी वध्यस्रगाबध्यताम्॥५॥

अन्वय—येन पुरा रिपो कुलमिव स्वामिकुल विनश्यत् दृष्टम्, येन मित्राणा व्यसने महोत्सवे इव स्वस्थेन स्थितम्, यस्य परिभवक्षेत्रीकृतोऽपि आत्मा व वधाय प्रिय, तस्य मम इय मृत्युलोकपदवी वध्यस्रक् आबध्यताम् ॥५॥

हिन्दी अनुवाद—(पर्दा हटाकर राक्षस का प्रवेश) **अरे डरो मत, डरो मत, अरे शूली देने वालो लोगो, चन्दनदास को न मारो, जिस (मुझ राक्षस के द्वारा) शत्रुकुल के समान नष्ट होता हुआ स्वामी का कुटुम्ब देखा गया। जो मित्रों के कष्ट में ऐसा आनन्दपूर्वक था मानो महान् उत्सव में हो और जिसका शरीर पराभव का क्षेत्र बना दिया जाने पर भी वध करने के लिये तुम लोगो को प्रिय है उस मुझको, मृत्युलोक की पगडण्डी, वध्य लोगो के गले में डाली जाने वाली यह माला पहना दो।**

Rakshas—(*Entering with a toss of the curtain*)—Oh noble lady, do not fear, do not fear, Oh executioners, Chandandas ought not to be killed. For—Let this wreath of the doomed, the foot-path to the land of the God of Death, be fastened on him, this self of mine, by whom the master's family was witnessed perishing like the enemy's family, who stood unmoved in the calamity of friends as if at high festivities, whose body, though made an object of defeats and insults is dear to you for killing

संस्कृत व्याख्या—अये शूलायतना न खलु न खलु व्यापादनीय. चन्दनदास: येन मया राक्षसेन पूर्वम् प्राक् रिपो शत्रो कुलमिव शत्रुवश इव स्वामिकुल नन्दवश विनश्यत् नष्टभ्रष्ट दृष्ट साक्षात् कृत येन मया मित्राणा सुहृदा व्यसने विपत्तौ महोत्सवे इव स्थित महोत्सवारम्भ इवाचरितम् यस्य मम परिभवक्षेत्रीकृतोऽपि तिरस्क्रियापात्रीकृतोऽपि आत्मा शरीरम् व युष्माकम् वधाय हननाय प्रिय· तस्य मम महाधमस्य मम राक्षसस्य इय मृत्युलोकपदवी यमपुर्या पदवी पद्धति वध्यस्रक् वध्यमाला आबध्यताम् पिनह्यताम् गल इति शेष ।

टिप्पणी

(१) **पटाक्षेपेण**—पर्दा हटाकर—आसम्यक् क्षेप अपसारणम् पटस्य आक्षेप इति तेन असूचितस्य सहसा सभ्रमेण प्रवेश पटाक्षेप । नाटक मे बिना किसी पूर्व सूचना के जो सहसा प्रवेश किया जाता है उसे पटाक्षेप कहते है । इसमे रगमच पर आने वाला पात्र अपने आप पर्दे को हटाता है। (२) **शूलायतनाः**—शूली देने वाले। शूलम् आयतन जीवन येषा ते शूलायतना (ब० व्री०)। आ-यत्यते अत्र आ+यत्+ल्युट् अधिकरणे आयतनम्। (३) **परिभवक्षेत्रीकृतः**—

परिभव का (नाश, अपमान का) क्षेत्र बनाया गया हुआ। मित्रो का नाश हो जाने पर राक्षस का शरीर परिभव क्षेत्र हो गया। अर्थात् हर प्रकार से उसकी पराजय हो गई। (४) **वध्यस्रक्**—फाँसी दी जाने वाले लोगो के गले मे डाली जाने वाली (माला) (५) **मृत्युलोकपदवी**—मृत्युलोक की पगडण्डी के समान। जिसके गले मे वध्यमाला पहना दी जाती थी, उसके लिए मानो स्वर्ग का रास्ता तैयार हो जाता था। (६) **आवध्यताम्**—डाल दी जाय। यहाँ पर पूर्णोपमा तथा रूपक अलकार है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

चन्दनदासः—(विलोक्य सबाष्पम्) अमच्च ! किं एदं दे ब्बबसिदं ? (अमात्य ! किमिदं ते व्यवसितम् ?)

राक्षसः—त्वदीयसुचरितैकदेशस्यानुकरणं किल।

चन्दनदासः—अमच्च ! सब्बं बि मे णिप्फलं एदं प्पआसं करन्तेण ण मे प्पिअं अणुचिट्ठिदं अमच्चेण। (अमात्य ! सर्वमपि मे निष्फलमिमं प्रयासं कुर्वता न मे प्रियमनुष्ठित-ममात्येन।)

राक्षसः—सखे चन्दनदास ! कृतमुपालम्भेन, स्वार्थ-प्रधानो हि जीवलोकः। भद्रमुख ! अयमर्थो निवेद्यतां तावद्दुरात्मन चाणक्याय।

चण्डालौ—अध किं त्ति ? (अथ किमिति ?)

हिन्दी अनुवाद—चन्दनदास (देखकर आँसुओ के साथ) अमात्य, आपने यह क्या किया ?

राक्षस—आप के उच्च चरित के एक अंश का अनुकरण है।

चन्दनदास—अमात्य, मेरे इस सब प्रयत्न को निष्फल करके आप ने मेरा प्रिय नही किया।

राक्षस—मित्र चन्दनदास, रहने दो उलाहना देने को। यह संसार स्वार्थ प्रधान है। भद्रमुख, यह बात दुष्ट चाणक्य से कह दो।

दोनो चाण्डाल—क्या ?

Chandandas (Seeing and with tears)—Minister what have you done this ?

Rakshas—This is only an imitation of a part of youi noble character

Chandandas—Minister, you have not done good to me by rendering all my attempts useless

Rakshas—Friend Chandandas, away with this remonstration This world is entirely selfish Good man, let this be communicated to the vice-hearted Chanakya

Both the Chandals—What ?

टिप्पणी

त्वदीयसुचरितैकदेशस्य—आपके सच्चरित्र के एक भाग का। शोभन चरितम् सुचरितम् (प्रा० स०)। एको देश. एकदेश (कर्म० स०)। त्वदीय सुचरितम् (कर्म० स०), तस्य एकदेश (षष्ठीतत०), तस्य।

राक्षसः—

दुष्कालेऽपि कलावसज्जनरुचौ प्राणैः परं रक्षता
नीतं येन यशस्विनातिलघुतामौशीनरीयं यशः।
बुद्धानामपि चेष्टितं सुचरितैः क्लिष्टं विशुद्धात्मना
पूजार्होऽपि स यत्कृते तव गतो वध्यत्वमेषोऽस्मि सः ॥५॥

अन्वय—असज्जनरुचौ दुष्काले कलौ अपि प्राणै पर रक्षता यशस्विना येन औशीनरीय यश अतिलघुता नीतम्, विशुद्धात्मना (येन) सुचरितै बुद्धाना चेष्टितमपि क्लिष्टम्, स पूजार्होऽपि यत्कृते तव वध्यत्व गत स एष अस्मि।

हिन्दी अनुवाद—मैं वह राक्षस हूँ जिसके लिये पूजा के योग्य, दुष्टरुचि वाले पापी कलियुग मे भी अपने प्राणो से दूसरे के प्राण बचाने वाले शरणागत की रक्षा करके महाराज शिवि को भी नीचा दिखाने वाले और अपने शुद्ध आचरण के बल पर निर्मल अन्तःकरण वाले बुद्धों के भी चरित को तिरस्कृत करने वाले चन्दनदास मारा जा रहा है।

Rakshas—Here I am, he (*that Rakshas*) for whose sake even that (*Chandandas*) worthy of being worshipped has become an object worthy of being killed by you—the one who by his fame reduced to insignificance the fame of Aushinara by saving the life of another at the cost of his life, even in this wicked Kaliyuga, the age when people have become of evil taste, who (*Chandandas*) by his being pure-hearted has surpassed even the deeds of Budha with his noble deeds

संस्कृत व्याख्या—असज्जनरुचौ दुष्टजनप्रीतिकरे दुष्काले कलौ महापापे कलियुगे अपि प्राणै जीवितै परम् अन्यम् रक्षता पालयता यशस्विना महाकीर्ति-

मता येन चन्दनदासेन औशीनरीय यश औशीनरस्य महाराजस्य शिवे कीर्तिः अतिलघुता नीतम् अत्यन्ततुच्छताम् प्रापितम् अर्थात् शरणागतरक्षणार्जनयशो नितराम् कदर्थितम् इति भाव. (येन) विशुद्धात्मना निरस्ताहकारममकारेण सुचरितै सुकृतै बुद्धानामपि बोधिसत्त्वानामपि चेष्टितम् चरितम् क्लिष्टम् तिरस्कृतम् स पूजार्होऽपि पूजायोग्योऽपि स चन्दनदास यत्कृते यस्य राक्षसस्य कृते कारणात् वध्यत्व गत त्वया हन्तव्यत्वेन शूलारोहणाय समाज्ञप्त स एषः अहम् राक्षस अस्मि।

टिप्पणी

(१) **असज्जनरुचौ**—दुष्ट रुचि वाले (कलियुग मे) कलौ अपि—अपि शब्द के प्रयोग करने का आशय यह है कि कलि मे सभी पापी होते हैं। सभी स्वार्थी होते है और ऐसे कलि मे भी अपने प्राण देकर दूसरे की रक्षा करने वाले विरले ही होते है। (२) **औशीनरीयं यशः**—उशीनर के पुत्र के यश को। उशीनरस्य अपत्य पुमान् औशीनर । उशीनर+अञ्। औशीनर अर्थात् राजा-शिवि। उशीनर एक पुरुवशी राजा थे। उनकी स्त्री दृषद्वती से राजा शिवि का जन्म हुआ था। औशीनरस्य इदम् औशीनरीयम् "तस्येदम्" से छ प्रत्यय हुआ और छ का ईय हो गया। पूजार्होऽपि—पूजा के योग्य। इस श्लोक मे दीपक, व्यतिरेक तथा परिवृत्ति अलकार एव शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

प्रथमः—अले बेणुबेत्तआ। तुमं दाव सेट्ठिचन्दणदासं गेह्णिअ, इमस्स मसाणपादबस्स छाआए मुहुत्तअं चिट्ठ, जाव अहं अज्जचाणक्कस्स णिवेदेमि, जधा गहीदो अमच्चलक्खसो त्ति। (अरे वेणुवेत्रक! त्वं तावच्छ्रेष्ठिचन्दनदासं गृहीत्वाऽस्य श्मशानपादपस्यच्छायायां मुहूर्तं तिष्ठ, यावदार्यचाणक्यस्य निवेदयामि, यथा गृहीतोऽमात्यराक्षस इति।)

द्वितीयः—अले बज्जलोमआ! एव्बं होदु। (अरे वज्रलोमक! एवं भवतु।)

(इति सपुत्रदारेण चन्दनदासेन सह निष्क्रान्तः।)

प्रथमः—(राक्षसेन सह परिक्रम्य) के के एत्थ दुआलिआणं? णिबेदेध दाब, णन्दकुलसेण्णसञ्चअचुण्णणकुलिस्स

मौलिअकुलपदिट्ठाबिदधम्मसञ्चअस्स अज्जचाणक्कस्स। (कः कोऽत्र दौवारिकाणाम्? निवेदयत तावत्, नन्दकुल-सैन्यसञ्चयचूर्णनकुलिशस्य मौर्यकुलप्रतिष्ठापितधर्मसञ्चय-स्यार्यचाणक्यस्य।)

राक्षसः—(स्वगतम्) एतदपि नाम राक्षसेन श्रोतव्यम्।

चण्डालः—एसो क्खु अज्जणीदिसंजमिदबुद्धिपलिसले गहीदे अमच्चलक्खसे त्ति। (एष खल्वार्यनीतिसंयमितबुद्धि-परिसरो गृहीतोऽमात्यराक्षस इति।)

हिन्दी अनुवाद—पहला चाण्डाल—अरे वेणुवेत्रक, तब तक तुम सेठ चन्दन-दास को पकड़ कर इस श्मशान की वृक्षच्छाया मे मुहूर्त भर बैठो जब तक मै आर्य चाणक्य से निवेदन कर दूं कि अमात्य राक्षस पकड लिये गये है।

दूसरा—अरे वज्रलोमक, ऐसा ही हो।

(पुत्र, पत्नी सहित चन्दनदास के साथ निकल जाता है।)

पहला—(राक्षस के साथ घूमकर) अरे द्वारपालो में यहाँ कौन है? नन्द-कुल के सैन्यसमूह को नाश करने मे वज्र के समान तथा मौर्य कुल में धर्मराशि की प्रतिष्ठा वाले आर्य चाणक्य से कह दो।

राक्षस—(मन मे) यह भी राक्षस को सुनना है।

चाण्डाल—आर्य की नीति से जकड़ कर बाँधी गई नीति वाले अमात्य राक्षस पकड़ लिये गये है।

First Chandal—Oh Venuvetrak, wait a minute taking Chandandas with you in the shade of this tree of the burning ground, while I report to Noble Chanakya that Minister Rakshas has been caught

The second—Oh Vajralomak, let it be so

(Exit with Chandandas, and his wife and son)

The first (*Going round with Rakshas*)—Which of the porters is here ? Tell Noble Chanakya, the thunderbolt to the army of the Nandas and the establisher of religion in Mauiya family

Rakshas (*To himself*)—Even this has to be heard by Rakshas

Chandal—That Minister Rakshas, whose wit was made insignificant by the diplomacy of Noble Chanakya, is caught

टिप्पणी

(१) आर्यनीतिसंयमितबुद्धिपरिसर.—आर्य चाणक्य की नीति से जकड कर बाँधी गई है बुद्धि जिसकी। आर्यस्य चाणक्यस्य नीत्या सयमित कुण्ठित।

बुद्धिपरिसर मतिवैशद्यम् यस्य स (ब० व्री०)। (२) **नन्दकुलसैन्यसंचय-चूर्णनकुलिशस्य**—नन्दकुल की सेना को चूर्ण करने मे वज्र रूप। नन्दकुलस्य सैन्यसचय तस्य चूर्णन तस्य कुलिश तस्य नन्दकुलसैन्यसचयचूर्णकुलिशस्य। (३) **मौर्यकुलप्रतिष्ठापितधर्मसचयस्य**—मौर्यकुल मे धर्म का सचय स्थापित करने वाले। मौर्यकुले प्रतिष्ठापित धर्मसचयो येन स तस्य।

(ततः प्रविशति जवनिकावृतशरीरः मुखमात्रदृश्यः सहर्षश्चाणक्यः)

चाणक्यः—भद्र ! कथय कथय—

केनोत्तुङ्गशिखाकलापकपिलो बद्धः पटान्ते शिखी ?
पाशैः केन सदागतेरगतिता सद्यः समासादिता ?
केनानेकपदानवासितसटः सिंहोऽर्पितः पञ्जरे ?
भीमः केन चलैकनक्रमकरो दोर्भ्यां प्रतीर्णोऽर्णवः ? ॥६॥

अन्वय—उत्तुङ्गशिखाकलापकपिल शिखी केन पटान्ते बद्ध ? सदागते अगतिता केन सद्य पाशै समासादिता ? अनेकपदानवासितसट सिंह केन पञ्जरे अर्पित ? चलैकनक्रमकर भीम अर्णव केन दोर्भ्याम् प्रतीर्ण. ?

हिन्दी अनुवाद—(तदनन्तर पर्दे से ढके हुए शरीर वाला और केवल मुंह बाहर किये हुए प्रसन्न चाणक्य प्रवेश करता है।) चाणक्य—भद्र, बोलो, बोलो—ऊँची धधकती लपटो वाली लाल-लाल आग को कपड़ो में किसने बाँधा ? सदा चलने वाले वायु की गति को रस्सियो से तुरन्त किसने रोक लिया ? हाथियो के मद जल से भीगी सटाओं वाले सिंह को पिजडे मे किसने बन्द किया ? और चचल मगर और घडियालो से निरन्तर विलोडित भयंकर महासागर को हाथो से ही किसने तैर कर पार किया ?

(Now enter Chanakya happily with his body covered by a veil and face alone visible)

Chanakya—Good man, tell me, tell me, by whom the fire red with the mass of its high-soaring flames, has been tied in the skirts of his garments ? Who has caused motionlessness of the wind that is always moving by chaining it ? By whom has the lion, whose manes are scented with the ichor of elephants, has been put into a cage ? And who has crossed, only with his arms, the terrible sea abounding in numerous murderous sharks and alligators

संस्कृत व्याख्या—उत्तुङ्गशिखाकलापकपिल उत्तुङ्गै महोच्छ्रायै शिखाकलापै ज्वालासमूहै कपिल पिङ्गल शिखी अग्नि केन वीरेण पटान्ते वस्त्रान्ते बद्ध सयमित सदागते पवनस्य अगतिता अचलता केन सद्य तत्क्षण पाशै रज्जुभि समासादिता प्रापिता ? राक्षसग्रहण किल वेगेन वहत वायो पाशबन्धनमिव जनैरसम्भाव्यम् किमपि महाकर्म येन कृत सोऽहमस्मीतिभाव. अनेकपदानवासितसट अनेकपाना द्विपाना महागजानाम् दानै मदजलै वासिता. सुरभीकृता सटा केसरा यस्य तादृश सिह मृगराज केन पञ्जरे अर्पित स्थापित । राक्षसस्य ग्रहण दुर्दान्तस्य मृगराजस्य पिञ्जरग्रहणमिव महासाहसकर्म येन कृत स एवाहम् । चलैकनक्रमकर, चला सर्वत्रभ्रममाणाः एके महान्त नक्रा मकरा ग्राहाश्च यत्रैवभूत चञ्चलनक्रमकरबहुल भीम अर्णव समुद्र. केन दोर्भ्यामिव भुजाभ्यामेव प्रतीर्ण पार गत ।

टिप्पणी

इस श्लोक मे चाणक्य कह रहा है कि राक्षस का पकडना वैसा ही कठिन था जैसा कि आग को कपडे मे बाँधना या वायु की गति को रोकना या सिह को पिंजडे मे बन्द करना या महाभयानक सागर को केवल हाथो से तैरना (कठिन और असाध्य है) । यह कठिन काम सम्पादन करने वाला मै हूँ । (१) **उत्तुङ्गशिखाकलापकपिलः**—ऊँची-ऊँची लपटो से पीली या भूरी । यह शिखी (आग) का विशेषण है । (२) **सदागतेः**—सदा चलने वाला (पवन) । (३) **अगतिता**—गतिहीनता, चलने को रोकना । (४) **अनेकपदानवासितसट.**—हाथियो के मद-जल से भीगी सटा (केशर) वाला सिह । (५) **चलैकनक्रमकर.**—अनेक चञ्चल मगर और घडियालो वाला समुद्र (अर्णव) । इसमे अप्रस्तुत प्रशसा, अतिशयोक्ति और मालानिदर्शन अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है ।

चण्डालः—णं णीदिणिउणबुड्ढिणा अज्जेण ज्जेब । (ननु नीतिनिपुणबुद्धिनार्येणैव ।)

चाणक्यः—भद्र ! मा मैवम् । नन्दकुलद्वेषिणा दैवेनेति ब्रूहि ।

राक्षसः—(विलोक्य स्वगतम्) अये ! अयं स दुरात्मा, अथवा अयं स महात्मा कौटिल्यः । यतः—

आकरः सर्वशास्त्राणां रत्नानामिव सागरः ।
गुणैर्न परितुष्यामो यस्य मत्सरिणो वयम् ।।७।।

अन्वय—रत्नाना सागर इव सर्वशास्त्राणाम् आकर । यस्य गुणै मत्सरिण वयम् न परितुष्याम ।।७।।

हिन्दी अनुवाद—चण्डाल—नीति निपुण आप के द्वारा (यह काम हुआ) ।
चाणक्य—भले आदमी, ऐसा न कहो। यह कहो कि नन्दकुल के द्वेषी भाग्य से।
राक्षस—(देखकर मन ही मन) अरे यही वह दुरात्मा अथवा महात्मा कौटिल्य है। रत्नो के आकर समुद्र के समान यह सब शास्त्रो का आकर है, जिसके गुणो से ईर्ष्या करने वाले हम लोग सतुष्ट नही होते है।

Chandal—By Noble Sir, whose wit is well skilled in diplomacy

Chanakya—No, not so, say by Fate, the enemy of the house of Nanda

Rakshas (*Seeing, to himself*)—This is the wicked or say, noble-hearted Kautilya, the store of all knowledge as is the sea of gems, with whose virtues we, whose envy is aroused, are not pleased

संस्कृत व्याख्या—रत्नाना महार्घाणा मणीनाम् आकर उत्पत्तिभूमिसागर इव समुद्र इव सर्वशास्त्राणाम् सर्वशास्त्रसग्रहैकरूपाणा राजनयानाम् आकर निधिरिव मत्सरिण अद्यावधि मत्सराक्रान्तमानसा वयम् यस्य चाणक्यस्य गुणै न परितुष्याम नैव प्रीतिमवाप्ता ।

टिप्पणी

(१) **आकरः**—खजाना। जिस प्रकार सागर रत्नो का खजाना है उसी प्रकार चाणक्य सभी शास्त्रो का खजाना है। यहाँ पर राक्षस भी चाणक्य के गुणो की प्रशसा कर रहा है। वह यह मानता है कि मै मत्सर (डाह) के कारण उससे प्रसन्न नही हूँ पर वह गुणी है। (२) **मत्सरिणाः वयम्**—डाह करने वाला (मै राक्षस)। यहाँ उपमा और रूपक अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

चाणक्यः—(विलोक्य सहर्षम्) अये। अयममात्यराक्षसः येन महात्मना—

गुरुभिः कल्पनाक्लेशैर्दीर्घजागरहेतुभिः ।
चिरमायासिता सेना वृषलस्य मतिश्च मे ॥८॥

अन्वय—(येन महात्मना) दीर्घजागरहेतुभि गुरुभि कल्पनाक्लेशै मे मति वृषलस्य च सेना चिरम् आयासिता ॥८॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—(देखकर प्रसन्नता के साथ) अरे यह अमात्य राक्षस हैं। जिन महापुरुष के द्वारा (कारण) मौर्य सम्राट् की सेना और मेरी (कूटनीति युक्त) बुद्धि दिन-रात जागरण करके बड़ी-बड़ी तैयारियों से और बड़ी-बड़ी चिन्ताओ से अब तक कष्ट झेलती रही।

(*Seeing, to himself with joy*) Ha ! there is that Minister Rakshas due to whom my wit and the army of the Vrishala has long been troubled with the difficult task of devising plans due to which long vigils have been kept

संस्कृत व्याख्या—अये अयम् अमात्यराक्षस येन महात्मना वृषलस्य सम्राज महाबलस्य मौर्यस्य सेना वाहिनी मम मति बुद्धि चिरम् दीर्घकालम् दीर्घजागर-हेतुभि बहुकालात् प्रवर्तमान यो जागर निद्राभावस्तस्य हेतुभि गुरुभि अति-प्रवृद्धै कल्पनाक्लेशै वृषलसेनापक्षे पत्तीनामश्वबलाना हस्तिसेनाना वा या कल्पना तत्तत्सन्नाहविशेषा एव क्लेशा कष्टानि तै चाणक्यमतिपक्षे चोपाय-चतुष्टयस्य या कल्पना एव क्लेशा तै आयासिता भृश कदर्थीकृता ।

टिप्पणी

(१) **दीर्घजागरहेतुभिः**—बहुत दिन तक जागने के कारण। (२) **गुरुभि**—बडे, महान्। (३) **कल्पनाक्लेशै**—(मति पक्ष मे) उपाय सोचने के कारण कष्ट, (सेनापक्ष मे) सदा तैयार रहने के कारण कष्ट। (४) **आयासिता**—दु खित की गई। क्लेश का अनुभव किया। चाणक्य के कहने का भाव यह है कि मेरी बुद्धि तो राक्षस के कारण इसलिए परेशान थी कि मै दिनरात सामदानादि उपायो को सोचता रहता था और चन्द्रगुप्त की सेना इसलिए परेशान थी कि उसे हमेशा चौकन्ना रहना पडता था और इन्ही के कारण मुझे और सेना को जागते ही बीतता था। यहाँ तुल्ययोगिता अलकार और अनुष्टुप् छन्द है।

(जवनिकामपनीयोपसृत्य च) भो भो अमात्यराक्षस ! विष्णुगुप्तोऽभिवादयते ।

राक्षसः—(स्वगतम्) अमात्य इति लज्जाकरमिदानीं विशेषणपदम्। (प्रकाशम्) भो भो विष्णुगुप्त ! न मां श्वपाकस्पर्शदूषितं स्प्रष्टुमर्हसि।

चाणक्यः—अमात्य राक्षस! नायं श्वपाकः। अयं खलु दृष्टपूर्व एव भवता सिद्धार्थकनामा राजपुरुषः, योऽयमसौ द्वितीयः, सोऽपि सुसिद्धार्थकनामा राजपुरुष एव। ताभ्यामेव सह सौहार्दमुत्पाद्य शकटदासोऽपि तपस्वी तं तादृशम-जानन्नेव कपटलेखं मयैव लेखितः।

राक्षसः—(आत्मगतम्) दिष्ट्या शकटदासं प्रत्यपनीतो विकल्पः।

हिन्दी अनुवाद—(पर्दा हटाकर समीप जाकर)

चाणक्य—अये अमात्य राक्षस, विष्णुगुप्त आपका अभिवादन करता है।

राक्षस—(मन में) इस समय "अमात्य" यह विशेषण मेरे लिए लज्जा-जनक है। (प्रकट) अरे विष्णुगुप्त, मै चण्डाल के स्पर्श से अपवित्र हो गया हूँ, इसलिए आप मुझे न छुयें।

चाणक्य—अमात्य राक्षस, यह चण्डाल नही है। इसको आपने पहले देखा है। यह सिद्धार्थक नामक राजपुरुष है। और जो यह दूसरा है वह भी सुसिद्धार्थक नाम का राजपुरुष ही है। इन्ही दोनो के साथ मित्रता पैदा करके मैने ही बेचारे शकटदास से बिना उसके जाने हुए भी वैसा जाली पत्र लिखवाया।

राक्षस—(मन में) भाग्य से शकटदास के ऊपर जो सन्देह था वह दूर हो गया।

Chanakya (*Removing veil and approaching*)—Ho, Minister Rakshas, Vishnugupta salutes you

Rakshas (*To himself*)—At this moment the title "Minister" causes shame to me (*Aloud*) Oh Vishnugupta, I have been defiled by the touch of Chandals, so you do not deserve to touch me.

Chanakya—Oh Minister Rakshas, he is not a Chandal. He is king's man, Siddharthaka by name, seen by you before And this other is also the king's man, Susiddharthaka by name Making friendship with these two, poor Shakatdas was caused by me to write that forged letter without knowing it

Rakshas (*To himself*)—Fortunately my suspicion about Shakatdas is removed.

चाणक्यः—किं बहुना, सङ्क्षेपतः कथयामि—

भृत्या भद्रभटादयः स च तथा लेखः स सिद्धार्थकः
तच्चालङ्करणत्रयं स भवतो मित्रं भदन्तः किल ।
जीर्णोद्यानगतः स चार्तपुरुषः क्लेशः स च श्रेष्ठिनः
सर्वं मे—(इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयति ।)
वृषलस्य वीर ! भवता संयोगमिच्छोर्नयः ।।६।।

तदेष वृषलस्त्वां द्रष्टुमागच्छति पश्यैनम् ।

अन्वय—भद्रभटादय भृत्या स तथा लेखश्च, स सिद्धार्थक तत् अलङ्करणत्रय च, भवत किलमित्र स भदन्त, जीर्णोद्यानगत स आर्तपुरुषश्च, स श्रेष्ठिन· क्लेशश्च—सर्व वृषलस्य भवता सयोगमिच्छो मे नय ।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अधिक कहने से क्या लाभ, संक्षेप मे कहे देता हूँ । भद्रभटादिक अनुचर, उस प्रकार का लेख, वह सिद्धार्थक, वे तीनो आभूषण, आपका मित्र वह बौद्ध संन्यासी, जीर्ण उपवन मे गया हुआ वह दु खी पुरुष और वह सेठ (चन्दनदास) का क्लेश यह सब (ऐसा आधा कहकर लज्जा का अभिनय करता है) मेरी नीति थी जो चन्द्रगुप्त के साथ आपकी मैत्री कराना चाहती है ।

वह वृषल आपसे मिलने आ रहा है (उसे देखिए) ।

Chanakya—What's the use of telling more, I tell you briefly —These people such as Bhadrabhatta etc , the letter of that type, that Siddharthaka, those three ornaments, the mendicant, your friend, the grieved man who was gone to the old garden, and the whole trouble to the banker (*Chandandas*), all is my (*acting shame when half-uttered*) diplomacy, who wanted to unite you with Vrishala That Vrishala comes to see you. Look at him

सस्कृत व्याख्या—वीर! हे शूर! भद्रभटादय भृत्या सेवका स तथा लेखश्च तथाविध तेन प्रकारेण कपटेन लिखित लेख पत्रमपि तत् अलङ्कारत्रय च पर्वतेश्वरभूषणानि अपि भवत तव किल मित्रम् सुहृत् भदन्त बौद्धसन्यासी च जीर्णोद्यानगत प्राचीननष्टभ्रष्टोपवनप्राप्त स आर्तपुरुषश्च दु खी नर च सः श्रेष्ठिन चन्दनदासस्य क्लेशश्च दु ख च सर्वम् इदम् वृषलस्य मौर्यस्य भवता त्वया सह सयोगमिच्छो मैत्रीम् कामयमानस्य मे मम नय नीति· अस्ति ।

टिप्पणी

(१) **श्वपाकस्पर्शदूषितम्**—चण्डाल को छूने से अपवित्र । (२) **श्वपाकः—**

चण्डाल। (३) **कपटलेखः**—जाली पत्र। (४) **शकटदासम् प्रति अपनीत विकल्पः**—शकटदास के प्रति सन्देह दूर हो गया। (५) **वीर**—चाणक्य के द्वारा प्रयुक्त यह सम्बोधन राक्षस के यथार्थ व्यक्तित्व को ध्वनित करता है। इसके साथ ही प्रशसा के द्वारा चाणक्य राक्षस को वशीभूत करना चाहता है। (६) **संयोगमिच्छो**—सयोग चाहने वाले का। इसमे काव्यलिग अलकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

राक्षसः—(स्वगतम्) का गतिः? (प्रकाशम्) एष पश्यामि।

(ततः प्रविशति राजा विभवतश्च परिवारः।)

राजा—(स्वगतम्) विनैव युद्धादार्येण पराजितं दुर्जयं रिपुकुलमिति लज्जित इवास्मि। मम हि—

फलयोगमवाप्य सायकानामनियोगेन विलक्षतां गतानाम्।
न शुचेव भवत्यधोमुखानां निजतूणीशयनव्रतं प्रतुष्ट्यै ॥१०॥

अन्वय—फलयोगम् अवाप्य अनियोगेन विलक्षता गतानाम् शुचेव अधोमुखानाम् (मम) सायकाना निजतूणीशयनव्रत प्रतुष्ट्यै न भवति।

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(मन में) क्या उपाय है (प्रकट) देखता हूँ।

(राजा का अपने अनुचर-परिचरो के साथ प्रवेश)

राजा—(मन में) युद्ध के बिना ही आर्य चाणक्य ने दुर्जय शत्रुकुल को पराजित कर दिया इससे मै लज्जित-सा हो रहा हूँ। मेरे तो इन लोह-कीलित अस्त्रों को कुछ काम न मिलने के कारण (लक्ष्यहीनता को प्राप्त क्योकि बाण चलाने की आवश्यकता ही नहीं पडी और विजय हो गई) लज्जित बने, इन शस्त्रों की अकर्मण्यता के कारण दुःख से मुँह नीचा किए बाणो का अपने तूणीर में निश्चल होकर पडा रहना संतोषजनक नहीं है। (यह अर्थ बाणपक्ष में हुआ) अब चन्द्रगुप्त पक्ष में इसका अर्थ इस प्रकार है। कार्यसिद्धि को प्राप्त करके भी आज्ञा देने योग्य न होने के कारण लज्जा को प्राप्त किए हुए और (अतएव) मानों शोक से नीचा मुँह किए हुए निश्चेष्ट होकर हमारा अपने घर में पड़ा रहना मुझे संतोष नहीं दे रहा है।

Rakshas (*To himself*)—What help (*Aloud*) Here I see him

(Now enter the king surrounded by servants) *King*—(*To himself*) I am surely ashamed that Noble Chanakya has con-

quered the invincible army of the enemy without a fight The arrows have been rendered useless through the operation of Chanakya's expedients, hence their lying down in their own quiver after having been endowed with tips, with the tops turned down as if in grief, does not give me much satisfaction

This verse has two meanings—one is applicable to the arrows, the other is applicable to maurya himself In the case of Chandragupta it means —As Noble Chanakya has conquered the enemy without a fight my aims are achieved, I had to do nothing and so my lying down in my house without any activity is causing shame to me

संस्कृत व्याख्या—मत्सायकाना मद्‌बाणाना फलयोगमवाप्य फलै शल्यै योग सम्बन्ध त प्राप्य अथवा स्वयमेवोपनम्यमान विग्रहरूप फलमधिगम्य आप्य नियोगेन शत्रुवधाख्ये कार्ये व्यापाराभावेन विलक्षता गतानाम् अनवाप्तशरव्यतानामत एव च हेतोरधोमुखाना तूणीर एवावस्थितानाम् अतिलज्जायुक्तानाम् इव यत् शुचा इव शोकेन इव निजतूणीशयनव्रतम् निजतूणीषु स्वेषु इषधिषु यच्छयन तदेव व्रत प्रायश्चित्ताचरणादिरूप तत् प्रतुष्टचै प्रीत्यै नेति ।

टिप्पणी

(१) **फलयोगम् अवाप्य**—(राजा पक्ष मे) फल (शत्रु के ऊपर विजय) पाकर। (बाण पक्ष मे) फल (लोहे की तेज कील जिसे बाण का फल कहते है पाकर)। (२) **अनियोगेन**—(राजा पक्ष मे) शत्रु वध रूपी कार्य मे भाग न लेने के कारण। (बाणपक्ष मे) बिना प्रयोग किए। (३) **विलक्षताम् गतानाम्**—लज्जा को प्राप्त। (बाण पक्ष मे) बाणत्व को न प्राप्त होने के कारण अर्थात् हीनता के कारण। (४) **शुचेव**—शुचा+इव । मानो दुख के कारण। (५) **निजतूणीशयनव्रतम्**—(राजा पक्ष मे) अपने घर मे पडा रहना। (बाण पक्ष मे) अपने तरकश मे पडा रहना। (६) **अधोमुखानाम्**—नीचे मुँह करके अवस्थित। बाणो को तूणीर मे जब रखा जाता है तब उनका मुँह नीचे की ओर रहता है। इस पर कवि ने कल्पना की है कि मानो उन्होने अपना मुख शोक से नीचे कर रखा है। यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार तथा मालभारिणी छन्द है। छन्द का लक्षण—'विषमे ससजा गुरु समे चेत्सभरा येन तु मालभारिणीयम्'।

अथवा-

विगुणीकृतकार्मुकोऽपि जेतुं
भुवि जेतव्यमसौ समर्थ एव ।

स्वपतोऽपि ममेव यस्य तन्त्रे
गुरवो जाग्रति कार्यजागरूकाः ।।११।।

अन्वय—स्वपतोऽपि मम इव यस्य तन्त्रे कार्यजागरूका गुरवो जाग्रति असौ विगुणीकृतकार्मुकोऽपि भुवि जेतव्य जेतु समर्थ एव ।।११।।

हिन्दी अनुवाद—मेरे समान सोते हुए भी जिस (राजा) के गुरु कार्य की चिन्ता के कारण जागते रहते है वह (राजा) प्रत्यचा रहित धनुष वाला होने पर भी पृथ्वी पर शत्रु को जीतने मे समर्थ होता ही है।

That kıng, whose preceptors awake ın affaırs, keep watch, though he (*kıng*) ıs asleep (*not watchful*), can conquer everythıng ın the world, though hıs bow ıs unstrung

सस्कृत व्याख्या—स्वपतोऽपि शयानस्यापि असावधानस्यापीत्यर्थ मम इव यस्य भूपते तत्रे राष्ट्रहितचिन्तने कार्यजागरूका कार्यसावधाना गुरव आचार्या. जाग्रति सावधाना सन्ति असौ राजा विगुणीकृतकार्मुक अपि विगुणीकृत मौर्वीरहितं कृत कार्मुकम् धनु यस्य तथाविधोऽपि भुवि वसुधाया जेतव्य शत्रु जेतु समर्थ एव।

टिप्पणी

(१) **जेतव्यम्**—शत्रु को। जि+तव्य। (२) **जेतुम्**—जीतने के लिए। जि+तुमुन्। इस पद्य मे काव्यलिग, उपमा और विभावना अलकार हैं तथा मालभारिणी छन्द है।

(चाणक्यमुपसृत्य) आर्य! चन्द्रगुप्तः प्रणमति।

चाणक्यः—वृषल! सम्पन्नास्ते सर्वाशिषः। तदभिवादयस्व तत्रभवन्तममात्यराक्षसम्; पैतृकस्तवायममात्यमुख्यः।

राक्षसः—(स्वगतम्) योजितोऽनेन सम्बन्धः।

राजा—(राक्षसमुपसृत्य) आर्य! चन्द्रगुप्तोऽहमभिवादये।

राक्षसः—(विलोक्य स्वगतम्) अये! अयं चन्द्रगुप्तः!! य एषः—

बाल एव हि लोकेऽस्मिन् सम्भावितमहोदयः।
क्रमेणारूढवान् राज्यं यूथैश्वर्यमिव द्विपः ।।१२।।

(प्रकाशम्) राजन् विजयस्व

अन्वय—अस्मिन् लोके सम्भावितमहोदय बाल एव द्विप यूथैश्वर्यमिव क्रमेण राज्य हि आरूढवान् ॥१२॥

हिन्दी अनुवाद—(चाणक्य के पास जाकर) आर्य चन्द्रगुप्त प्रणाम करता है।

चाणक्य—वृषल, मेरे सभी आशीर्वाद पूरे हो गये। अब पूज्य अमात्य राक्षस को प्रणाम करो। यह परम्परागत तुम्हारे महा अमात्य हैं।

राक्षस—(मन में) अरे इसने तो अब नाता जोड दिया।

राजा—(राक्षस के पास जाकर) आर्य, मैं चन्द्रगुप्त अभिवादन करता हूँ।

राक्षस—(देखकर मन में) अरे यही वह चन्द्रगुप्त है जो कि इस संसार में, अपने बचपन से ही अपने महान् अभ्युदय की आशा सब को बँधवाता रहा। इसने तो उसी प्रकार साम्राज्य का सिंहासन पा लिया जैसे छोटेपन से ही होनहार कोई हाथी का बच्चा हाथियो के झुण्ड का आधिपत्य पा ले। (प्रकट) राजन्! विजयी हो।

(*Approaching Chanakya*) Noble Sir, Chandragupta bows unto you

Chanakya—All my blessings for you have matured, so bow down to Minister Rakshas He is your hereditary prime minister

Rakshas (*To himself*)—Connection has been established by him

King (*Approaching Rakshas*)—Noble Sir, Chandragupta bows unto you

Rakshas (*Seeing, to himself*)—He, Chandragupta He, it is, who, with a mighty future in the world, gradually attained sovereignty, though only a child, in the same way as the cub of an elephant attains the leadership of elephants (*Aloud*) O King, be prosperous

संस्कृत व्याख्या—अस्मिन् लोके ससारे सम्भावितमहोदय सम्भावित-अनुमित महोदय. विशिष्टाभ्युदय यस्य स सम्भाव्यमानविपुलाभ्युदय बाल एव अप्ररूढयौवन एव सन् द्विप गज यूथैश्वर्यमिव गजयूथाधिपत्यमिव क्रमेण क्रमश· शनै शनै वा राज्यम् मगधसाम्राज्यम् आरूढवान् समारूढो विराजते इति भाव ।

टिप्पणी

(१) **सम्पन्नाः**—पूरे हो गये। ते सर्वाशिषै—तुम्हारे वास्ते मेरे जितने आशीर्वाद थे सब पूरे हो गये। (२) **सम्भावितमहोदयः**—जिसके अभ्युदय की संभावना की गई। सभावित महोदय यस्य स सम्भावितमहोदय· (ब० व्री०)। व्यक्ति की भावी अवस्था बचपन मे ही परिलक्षित हो जाती है—

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात।' राक्षस ने चन्द्रगुप्त को बचपन मे भी देखा था। उसी समय उसने चन्द्रगुप्त के महान् होने की सभावना कर ली थी। (३) **विजयस्व**—वि+परा पूर्वक जि धातु मे आत्मेनपद होता है "विपराभ्या जे"। अत विजयस्व हुआ। इस पद्य मे उपमा अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

राजा—आर्य!—

जगतः किं न विजितं मयेति प्रविचिन्त्यताम्।
गुरौ षाड्गुण्यचिन्तायामार्ये चार्ये च जाग्रति ॥१३॥

अन्वय—आर्ये गुरौ आर्ये च षाड्गुण्यचिन्तायाम् जाग्रति जगत किं न मया विजितम् इति प्रविचिन्त्यताम् ॥१३॥

हिन्दी अनुवाद—आर्य, गुरु आर्य चाणक्य और आपके (संधि, विग्रह आदि) छः गुणो के चिन्तन में सतत लगे रहने पर संसार की वह कौन सी विजय है जो मेरी न हो जाय। यह सोचिए।

King—Noble Sir, think what worldly things are not attained by me when Noble Sir (*Rakshas*) and Noble Sir (*Chanakya*), my preceptor, are watching over the deliberations on the six expedients

संस्कृत व्याख्या—गुरौ आचार्ये आर्ये च पूज्ये चाणक्ये च आर्ये च माननीये भवति राक्षसे च षाड्गुण्यचिन्तायाम् षाड्गुण्यस्य मत्साम्राज्यस्य सन्धि-विग्रह-यानासन-सश्रय-द्वैधीभावरूपकार्यस्य चिन्ताया जाग्रति जागरूके सति मया जगत ससारस्य किं न विजितम् सकलमेव जगत् स्ववशीकृतमेवेति प्रविचिन्त्यताम् बुद्ध्यतामिति।

टिप्पणी

षाड्गुण्य—षडेव गुणा इति षाड्गुण्यम् षड्गुण+ष्यञ् स्वार्थे। छ गुण ये है—सधि, विग्रह, यान, आसन, सश्रय और द्वैधीभाव। इस श्लोक मे तुल्य-योगिता, समुच्चय, काव्यलिग तथा अर्थापत्ति अलकार और अनुष्टुप् छन्द है।

राक्षसः—(स्वगतम्) स्पृशति मां भृत्यभावेन कौटिल्य-शिष्यः। अथवा विनय एवैष चन्द्रगुप्तस्य। मत्सरस्तु मे विपरीतं कल्पयति। सर्वथा स्थाने यशस्वी चाणक्यः।

कुतः—

द्रव्यं जिगीषुमधिगम्य जडात्मनोऽपि
नेतुर्यशस्विनि पदे नियता प्रतिष्ठा।
अद्रव्यमेत्य भुवि शुद्धनयोऽपि मन्त्री
शीर्णाश्रयः पतति कूलजवृक्षवृत्त्या ॥१४॥

अन्वय—द्रव्य जिगीषुम् अधिगम्य जडात्मनोऽपि नेतु यशस्विनि पदे प्रतिष्ठा नियता (भवति)। अद्रव्यम् एत्य शुद्धनय अपि मन्त्री शीर्णाश्रय (सन्) कूलजवृक्षवृत्त्या भुवि पतति ॥१४॥

हिन्दी अनुवाद—राक्षस—(अपने मन मे) कौटिल्य का शिष्य मुझे सेवक भाव से छू रहा है (अर्थात् व्यवहार कर रहा है) अथवा यह तो चन्द्रगुप्त का विनय ही है। (इसके प्रति) मत्सर के कारण मै उलटा समझता हूँ। चाणक्य हर प्रकार से उचित ही यशस्वी है। क्योंकि :—योग्य और विजय की इच्छा रखने वाले राजा को पाकर मूर्ख मंत्री भी यशस्वी हो जाता है। अयोग्य राजा को पाकर शुद्ध नीति वाला भी मत्री आश्रयहीन होता हुआ किनारे के पेड़ की भाँति गिर पडता है।

Rakshas (*To himself*)—This disciple of Kautilya is really treating me as a servant Or this is really Chandragupta's humility but my jealousy (*for him*) thinks it otherwise Chanakya by all means rightly deserves fame For—Finding an able and ambitious king even a block-head is placed in a renowned position, but coming by an unworthy (*king*) even a minister of unimpeachable diplomacy falls to the ground like a tree growing on the river-bank, devoid of his resort

N. B There is a hint to Rakshas's failure due to the folly of Malayaketu.

संस्कृत व्याख्या—द्रव्य भव्य विजिगीषुम् वृद्धिकाम राजानम् नर वा अधिगम्य प्राप्य नेतु नायकस्य अमात्यस्य वा जडात्मनोऽपि मन्दबुद्धेरपि यशस्विनि पदे लोकप्रतिष्ठाने उच्चस्थाने प्रतिष्ठा स्थिति नियता अवधारिता भवति। अद्रव्यम् अयोग्यम् एत्य प्राप्य शुद्धनय अपि अवगतषाड्गुण्योऽपि मत्री अमात्य शीर्णाश्रय सन् उत्खातमूल सन् कूलजवृक्षवृत्त्या कूलजस्य नदीतटजातस्य वृक्षस्य पादपस्य वृत्त्या व्यवहारेण भुवि पृथिव्या पतति। आचार्यस्य कीर्ति बाहुल्येन शिष्याधीना भवति इति भाव ।

टिप्पणी

स्थाने—उचित। द्रव्यम्—योग्यम्। शीर्णाश्रय —जिसका आश्रय (मूल) उखड गया है। कूलजवृक्षवृत्त्या—नदीतट के वृक्ष के समान। **शुद्धनयः**—शुद्धनीति वाला। यहाँ राक्षस का अपनी ओर सकेत है। वस्तुत उसकी नीतियाँ अप्रतिम थी। अत विजय की सभावना की जा सकती थी, यदि मलयकेतु जैसा अविवेकी व्यक्ति न मिला होता। इस पद्य मे निदर्शना अलकार तथा वसन्त-तिलका छन्द है।

चाणक्यः—अमात्य राक्षस! अपीष्यते चन्दनदासस्य जीवितम्?

राक्षसः—भो विष्णुगुप्त! कुतः सन्देहः?

चाणक्य—अमात्य राक्षस! अगृहीतशस्त्रेण भवताऽनुगृह्यते वृषल इत्यतः सन्देहः। तद्यदि सत्यमेव चन्दनदासस्य जीवितमिष्यते, ततो गृह्यतामिदं शस्त्रम्।

राक्षसः—भो विष्णुगुप्त! मा मैवम्। अयोग्या वयमेतस्य ग्रहणे, विशेषतस्त्वया गृहीतस्य शस्त्रस्य।

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अमात्य राक्षस, क्या आप चन्दनदास का प्राण बचाना चाहते हैं?

राक्षस—हे विष्णुगुप्त, इसमे संदेह कैसे?

चाणक्य—अमात्य राक्षस, सन्देह इसलिये हो रहा है कि आप बिना शस्त्र लिये ही चन्द्रगुप्त पर कृपा कर रहे है, यदि सचमुच आप चन्दनदास का प्राण बचाना चाहते है तो इस हथियार को लें।

राक्षस—हे विष्णुगुप्त, ऐसा मत करो। मै इसको ग्रहण करने योग्य नही हूँ, विशेष करके आप द्वारा ग्रहण किये शस्त्र के (ग्रहण करने में)।

Chanakya—Minister Rakshas, do you really wish to save the life of Chandandas ?

Rakshas—Oh Vishnugupta, whence this doubt ?

Chanakya—Minister Rakshas, you are favouring Vrishala without taking the weapon, hence this doubt So, if you really desire the life of Chandandas, then take up this weapon

Rakshas—Oh Vishnugupta, do not say so I am unworthy of accepting it, specially as it was handled by you

चाणक्यः—अमात्यराक्षस ! योग्योऽहमयोग्यो भवान इति कथमेतत् ? पश्य—

अश्वैःसार्द्धमजस्रदत्तकविकाक्षामैरशून्यासनैः
स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुखैर्वर्जितान्
माहात्म्याददतिपौरुषस्य भवतो दृप्तारिदर्पच्छिदः
पश्यैतान् परिकल्पनाव्यतिकरप्रोच्छूनवंशान् गजान् ॥१५॥

अन्वय—दृप्तारिदर्पच्छिद अतिपौरुषस्य भवत माहात्म्यात् अशून्यासनै· अजस्रदत्तकविकाक्षामै अश्वै सार्धम् स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुखै वर्जितान् परिकल्पनाव्यतिकरप्रोच्छूनवशात् एतान् गजान् पश्य ॥१५॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—आप अयोग्य है और मै योग्य हूँ यह आप कैसे कहते है। देखिये—अभिमानी शत्रु के मद को नाश करने वाले तथा महापराक्रमी आपके प्रभाव से घोडो की पीठ पर से जीन कभी हटाई न जाती थी तथा उनके मुँह में लगाम हमेशा पडी रहती थी अतः वे (घोडे भी) क्षीणवदन हो गये थे और उनके साथ-साथ हमारी सेना के हाथी भी हमेशा तैयार रखे जाते थे। उनकी पीठ पर से हौदा कभी उतरता नही था अतः उनकी पीठ मे सूजन आ गई थी और वे हाथी मनमानी आहार, पान, विहार, शयनादिक सुखो से वंचित रहते थे।

Chanakya—Minister Rakshas, how do you say that I am fit and you are unfit? Look here, look at these elephants (*of our side*) with their spine swollen through contact of their pads, and they were deprived of the pleasure of bathing, eating, moving, drinking and resting according to their will along with the horses which have become lean on account of the bits being constantly inserted and the saddles never being unoccupied This is all due to the greatness of your prowess who are the destroyer of the pride of a haughty enemy

संस्कृत व्याख्या—दृप्तारिदर्पच्छिद दृप्ताना चतुरङ्गबलसघेन प्रगल्भमानाना-मस्मादृशानामरीणा यो दर्प बलाभिमानस्त सर्व छिनत्ति नाशयति इति तथाभूतस्य अर्थात् गर्वहारिण अतिपौरुपस्य महापुरुषकारोपेतस्य भवत तव माहात्म्यात् प्रभावात् अशून्यासनै अशून्यानि अनपनीतानि आसनानि पर्याणानि येषा तादृशै अजस्रदत्तकविकाक्षामै अजस्र निरन्तर दत्ता कविका खलीनादय येषाम् अतएव क्षामा क्षीणक्षीणा तै अश्वै घोटकै सार्धम् स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुखै

स्नान जलासेक आहार भोजनद्रव्याणि विहारो जलक्रीडादि पान तृषावारण शयन निद्रालाभश्च तेषा यत्स्वेच्छासुखम् स्वमनोरथीकृत समुपभोगजात तै सर्वैरेव वर्जितान् विरहितान् परिकल्पनाव्यतिकरप्रोच्छूनवशान् परिकल्पनाना रणसज्जाना यो व्यतिकर नित्यसपर्क तत प्रोच्छना: जातशोफा वशा मेरुदण्ड-भागा पृष्ठास्थिभागा वा येषा तथाभूतान् एतान् अमून् गजान् करिण पश्य अवलोकय। सर्व खलु चतुरङ्गबलमस्माक भवत्पौरुषेण भीतम् अद्यापि सज्जसज्ज-मिति भवानेव अस्मान् सर्वान् अतिशेते इत्यर्थ ।

टिप्पणी

(१) **दृप्तारिदर्पच्छिदः**—अभिमानी शत्रु के दर्प को नष्ट करने वाले (का)। यह भवत का विशेषण है। (२) **अशून्यासनैः**—काठी अथवा पलान से हमेशा युक्त। घोडो की जीन हमेशा उनकी पीठ पर रखी रहती थी। (३) **अजस्रदत्तकविकाक्षामैः**—निरन्तर लगाम धारण करने के कारण क्षीण। यह घोडो का विशेषण है। अजस्र दत्ता कविका येषाम् अत एव क्षामा (४) **स्नानाहारविहारपानशयनस्वेच्छासुखैः वर्जितान्**—नहाने खाने, घूमने पीने और शयन के यथेच्छसुख से वचित। यह गजान का विशेषण है। (५) **परिकल्पनाव्यतिकरप्रोच्छूनवंशान्**—हौदे के सदा कसे रहने के कारण सूजे हुए पृष्ठ भाग वाले। परिकल्पना—हाथी के पीठ पर कसा जाने वाला हौदा। व्यतिकर—प्रतिदिन कसे रहना। वि+अति+कृ+घ करणे वा अप् भावे। प्रोच्छन—सूजे हुए। प्र+उद्+श्वि+क्त कर्तरि। वशान्—पीठ। चाणक्य के कहने का भाव यह है कि राक्षस के डर से हमारी सेना सदा सुसज्जित रहती थी। घोडो के मुँह मे लगाम हमेशा पडी रहती थी अतएव वे दुर्बल हो गये थे। उनके साथ ही साथ हाथी भी सदा तैयार रहते थे। उनकी पीठो पर हौदे हमेशा कसे रहते थे, इससे उनकी पीठे सूज गई थी। यहाँ पर शार्दूलविक्रीडित छन्द है और तुल्ययोगिता अलकार है।

अथवा किमनेन। न खलु भवतः शस्त्रग्रहणमन्तरेण चन्दनदासस्य जीवितमस्ति।

राक्षसः—(स्वगतम्)

नन्दस्नेहकणाः स्पृशन्ति हृदयं भृत्योऽस्मि तद्विद्विषां
ये सिक्ताः स्वयमेव पाणिपयसा च्छेद्यास्त एव द्रुमाः ? ।
शस्त्रं मित्रशरीररक्षणकृते व्यापारणीयं मया
कार्याणां गतयो विधेरपि न यान्त्यालोचनागोचरम् ॥१६॥

अन्वय—नन्दस्नेहकणा हृदय स्पृशन्ति, तद्विद्विषा भृत्योऽस्मि ये द्रुमा: स्वयमेव पाणिपयसा सिक्ता· त एव छेद्या । मया मित्रशरीररक्षणकृते शस्त्रं व्यापारणीयम् । कार्याणा गतय विधेरपि आलोचनागोचरम् न यान्ति ॥१६॥

हिन्दी अनुवाद—अथवा इन बातों से क्या प्रयोजन ? आपके शस्त्र ग्रहण करने के अलावा चन्दनदास के बचने का उपाय नहीं है।

राक्षस—(मन में) (एक ओर तो) नन्द के स्नेह के कण मुझे स्पर्श कर रहे है और (दूसरी ओर) उनके शत्रुओ का सेवक भी हो रहा हूँ। जिन पेड़ों को हाथरूपी जल से सींचा उन्हीं को काटना पड रहा है। मित्र की शरीर-रक्षा के लिये मुझे शस्त्र ग्रहण करना चाहिये। कर्मों की गति ब्रह्मा भी नहीं समझ सकते (विधाता के भी दृष्टि-पथ पर नहीं उतरती)।

Or what is the use of such talks? There is no other remedy of saving the life of Chandandas except your accepting the weapon.

Rakshas (*To himself*)—The particles of the kindness of Nanda touch my heart and I am going to be the servant of enemies The very trees which were watered with the water my hands are to be cut down To save the life of my friend have to accept the weapon The course of one's previous deeds does not come within the range of even the creator himself

संस्कृत व्याख्या—नन्दस्नेहकणा. नन्देषु स्नेह प्रेम तस्य कणा लेशा हृदयं चित्त स्पृशन्ति समावर्जयन्ति (अह) तद्विद्विषा नन्दशत्रूणा भृत्य सेवक अस्मि अभवम् ये द्रुमा पादपा स्वयमेव पाणिपयसा हस्तसलिलेन सिक्ता परिपालिता: ते एव छेद्या विनाश्या कुठारादिभि निपात्या इति मया मित्रशरीररक्षणकृते मित्रस्य चन्दनदासस्य शरीररक्षण प्राणरक्षण तत्कृते तत्करणाय शस्त्र चन्द्रगुप्त-साचिव्यस्वीकारचिह्नभूतम् मौर्यशस्त्रम् व्यापारणीय स्वय ग्राह्यम्। कार्याणा व्यापाराणाम् विलसितानाम् वा गतय. परिणतय विधेरपि विधातुरपि आलोचना-गोचरम् आलोचनाया अगोचर देश न यान्ति न गच्छन्ति। अर्थात् कथमपीद-त्थमिति विवेक्तुम् अपि न पार्यन्ते इति भाव ।

टिप्पणी

कार्याणाम् गतयः—कर्म की गति। **आलोचनागोचरम्**—दृष्टिगोचर। आ+लोच्+णिच्+युच् भावे=आलोचना। कर्मो की गति ब्रह्मा भी नही जान सकते। "कर्मणो गहना गति"। इस श्लोक मे विषम परम्परितरूपक, अप्रस्तुत-प्रशसा तथा काव्यलिग अलकार है और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

(प्रकाशम्) भो विष्णुगुप्त ! उपानय खड्गम्। नमः सर्वकार्यप्रतिपत्तिहेतवे सुहृत्स्नेहाय। का गतिः ? एष सज्जोऽस्मि।

चाणक्यः—(सहर्षं शस्त्रमर्पयित्वा) वृषल ! वृषल ! अमात्यराक्षसेनेदानीं गृहीतशस्त्रेणानुगृहीतः दिष्ट्या वर्धते भवान्।

राजा—आर्यप्रसाद एष चन्द्रगुप्तेनानुभूयते।

(प्रविश्य पुरुषः) जेदु जेदु अज्जो। अज्ज ! एसो क्खु भद्दभटभाउराअणप्पमुहेहिं संजमिअकलचलणो मलअकेदू प्पडिहारभूमिए अवत्थापिदो, ता एब्बं सुणिअ, एत्थ अज्जो प्पमाणं त्ति। (जयतु जयत्वार्यः। आर्य ! एष खलु भद्रभटभागुरायणप्रमुखैः संयमितकरचरणो मलयकेतुः प्रतीहारभूमावुपस्थापितः, तदिदं श्रुत्वाऽत्रार्यः प्रमाणमिति।)

चाणक्यः—आं श्रुतम्। भद्र ! निवेद्यताममात्यराक्षसाय, अयमिदानीं राजकार्यं करिष्यति।

राक्षसः—(स्वगतम्) कथं दासीकृत्येदानीं विज्ञापनाय मां मुखरीकरोति कौटिल्यः !! का गतिः ? (प्रकाशम्) राजन् चन्द्रगुप्त ! विदितमेव यथा वयं मलयकेतौ किञ्चित् कालान्तरमुषिताः तत् परिरक्ष्यन्तामस्य प्राणाः।

राजा—(चाणक्यमुखमवलोकयति)

हिन्दी अनुवाद—(प्रकट) अजी विष्णुगुप्त ! तलवार लाइए। मित्र के स्नेह को नस्मकार है जिसके कारण सभी कार्य स्वीकार करने पड़े। क्या उपाय है ? यह तैयार हूँ।

चाणक्य—(प्रसन्नता से शस्त्र देकर) वृषल, वृषल, अब अमात्य राक्षस ने शस्त्र ग्रहण कर तुम्हें अनुगृहीत किया। भाग्य से तुम बढ रहे हो।

राजा—यह चन्द्रगुप्त आप की कृपा का अनुभव कर रहा है।

(पुरुष प्रवेश करके) आर्य की जय हो। भद्रभट व भागुरायण आदि के द्वारा हाथ-पैर बँधा हुआ मलयकेतु द्वार पर उपस्थित किया गया है। यह सुनकर अब आगे आर्य की जो आज्ञा हो।

चाणक्य—हाँ, सुन लिया। भद्र, अमात्य राक्षस से निवेदन करो, अब यही राज-कार्य करेंगे।

राक्षस—(मन में) कैसे दास बनाकर अब चाणक्य मुझे निवेदन करने के लिए वाचाल बना रहा है (अर्थात् अब वह यह चाहता है कि मैं उससे कुछ माँगू)। क्या उपाय है? (प्रकट) राजन्, चन्द्रगुप्त, आपको मालूम है कि हम मलयकेतु के आश्रय में कुछ दिन रह चुके हैं। इसलिए इनके प्राणो की रक्षा की जाय।

(*Aloud*) Oh Vishnugupta, I bow down to the love of the friend, which is the cause of my accepting every work What help ? Here I am ready

Chanakya (*With joy, giving the weapon*)—Vrishala, Vrishala, you have been favoured by Minister Rakshas by his accepting the weapon Luckily do you prosper

King—This is the grace of Noble Sir, which is being enjoyed by Chandragupta

Attendant (*Entering*)—Victory to the Noble Sir, Malayaketu with his hands nad feet fettered by Bhadrabhatta and Bhagurayan and others has been brought to the gate Hearing this, Noble Sir will decide

Chanakya—Yes, I have heard Let it be reported to Minister Rakshas Now it is he who will manage the state-affairs

Rakshas (*To himself*)—How after making me a servant he causes me to be garrulous for prayer What help ? (*Aloud*) Oh king Chandragupta, it is known to you indeed that I stayed for sometime with Malayaketu, so let his life be spared

टिप्पणी

(१) **सर्वकार्यप्रतिपत्तिहेतवे**—सारे काम को स्वीकार करने का कारण-भूत। प्रतिपत्ति-स्वीकार करना। सर्वाणि च तानि कार्याणि सर्वकार्याणि (कर्म-धारय), तेषा प्रतिपत्ति, तस्या हेतु (षष्ठीतत्०), तस्मै। राक्षस अपने मित्र-स्नेह को नमस्कार करता है क्योंकि मित्र-स्नेह ही के कारण उसे आज चन्द्रगुप्त का सचिव होना स्वीकार करना पड रहा है। (२) **प्रतीहारभूमौ**—दरवाजे पर। फाटक पर। (३) **मुखरीकरोति**—बोलने के लिए प्रेरित करती है। न मुखर अमुखर त मुखर करोति मुखरीकरोति। माघ काव्य मे भी लिखा है। "तथापि कल्याणकरी गिर ते मा श्रोतुमिच्छा मुखरीकरोति"।

चाणक्यः—वृषल ! प्रतिमानयितव्योऽयममात्यराक्षसस्य प्रथमः प्रणयः। (पुरुषमवलोक्य) भद्र ! अस्मद्वचनादुच्यन्तां भद्रभटप्रभृतयः, अमात्यराक्षसविज्ञापितो देवश्चन्द्रगुप्तः प्रयच्छति मलयकेतवे पित्र्यमेव विषयम्। अतो गच्छन्तु भवन्तः सहानेन, प्रतिष्ठिते चास्मिन् पुनरागन्तव्यम्।

पुरुषः—जं अज्जो आणबेदि त्ति। (यदार्य आज्ञापयतीति।)

चाणक्यः—तिष्ठ तावत्, भद्र ! भद्र ! एवमपरमुच्यतां विजयपालो दुर्गपालश्च, अमात्यराक्षसस्य गृहीतशस्त्रस्य प्रीत्या देवश्चन्द्रगुप्तः समाज्ञापयति, एष तावच्छ्रेष्ठी चन्दनदासः पृथिव्यां सर्वेषु नगरेषु श्रेष्ठिपदमारोप्यतामिति।

पुरुषः—जं अज्जो आणबेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्तः।)

चाणक्यः—भो राजन् चन्द्रगुप्त ! किं ते भूयः प्रियमुपकरोमि ?

चाणक्य—वृषल, अमात्यराक्षस की यह प्रथम प्रार्थना स्वीकार कर लेनी चाहिए। (पुरुष को देखकर) भद्र, हमारी ओर से भद्रभट आदि से कह दो कि अमात्य राक्षस के कहने पर महाराज चन्द्रगुप्त मलयकेतु को उसका पैतृक राज्य ही देते है, इसलिये आप लोग उसके साथ जाइये और उसके प्रतिष्ठित हो जाने पर फिर वापस चले आइये।

पुरुष—जैसी आर्य की आज्ञा।

चाणक्य—रुको, भद्र, भद्र ! विजयपाल और दुर्गपाल से इस प्रकार दूसरी बात कहो कि अमात्य राक्षस के शस्त्र ग्रहण करने के कारण प्रसन्न होकर महाराज चन्द्रगुप्त आज्ञा देते हैं कि यह सेठ चन्दनदास पृथिवी में सभी नगरों के सेठ के पद पर नियुक्त कर दिए जाँय।

पुरुष—जैसी आर्य की आज्ञा। (चला जाता है)

चाणक्य—ऐ राजा चन्द्रगुप्त ! तुम्हारा और क्या प्रिय करूँ ?

Chanakya—Vrishala, this first prayer of Minister Rakshas ought to be granted (*Seeing the attendant*) Gentleman, tell Bhadrabhatta and others on my behalf that at the request of Minister Rakshas King Chandragupta is giving to Malayaketu his ancestral domains only So, you all go with him and will come back when he is established

Attendant—As Sire commands (*Exit*)

Chanakya—Stop, good man, stop Let this another message be told to Vijayapal and Durgapal that King Chandragupta, being pleased on account of Rakshas accepting the weapon, commands that this Banker Chandandas be appointed to the office of banker in all towns on earth

Attendant—As Noble Sir commands (*Exit*).

Chanakya—Oh king, what more pleasure shall I bring to you ?

टिप्पणी

(१) **प्रतिमानयितव्यम्**—स्वीकार किया जाना चाहिए। प्रति+मन्+णिच्+तव्य। (२) **अमात्यराक्षसविज्ञापितः**—अमात्य राक्षस के निवेदन करने पर (प्रार्थना पर) (३) **पित्र्यमेव विषयम्**—केवल पैतृक राज्य। पितुरागत इति पितृ+यत्=पित्र्य, तम्। (४) **भो राजन् चन्द्रगुप्त**—अभी तक चन्द्रगुप्त को चाणक्य वृषल ही कहके पुकारता रहा है। पर अब राजन् शब्द से सम्बोधित इसलिए किया है कि अब राक्षस के साथ मेल हो जाने पर इसका राजपद स्थिर हो गया। अभी तक तो संदेहयुक्त था।

राजा—किमतः परं प्रियमस्ति ?
राक्षसेन समं मैत्री राज्ये चारोपिता वयम्।
नन्दाश्चोन्मूलिताः सर्वे किं कर्तव्यमतः परम् ?॥१७॥

अन्वय—राक्षसेन सम मैत्री, वय च राज्ये आरोपिता, सर्वे नन्दा उन्मूलिताश्च, अत पर किं कर्तव्यम् ? ॥१७॥

हिन्दी अनुवाद—राजा—इससे बढ़कर प्रिय अब क्या हो सकता है ? राक्षस के साथ (मेरी) मैत्री हो गई और मुझे राज्य मिल गया तथा नन्दवंशी सभी नष्ट कर दिए गए। अब इसके आगे क्या चाहिए ?

King—What pleasure beyond this remains to be done ? Friendship with Rakshas has been made, I have been placed on the throne, all the Nandas have been uprooted, what else has to be done ?

संस्कृत व्याख्या—राक्षसेन अमात्येन सम सह मैत्री मित्रता जाता वय च राज्ये आरोपिता अहम् राज्यम् प्राप्तवान् इत्यर्थ.। सर्वे नन्दा नन्दवशीयाः उन्मूलिता. उत्खाता. अत. पर किं कर्त्तव्यम् अधिक कि विधेयम्।

टिप्पणी

आरोपिताः—स्थापित कर दिया। इस श्लोक मे सम नामक अलकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

चाणक्यः—विजये! उच्यतां दुर्गपालो विजयपालश्च, अमात्यराक्षसपरिग्रहेण प्रीतो देवश्चन्द्रगुप्तः समाज्ञापयति—विना हस्त्यश्वं क्रियतां सर्वबन्धमोक्ष इति। अथवा अमात्य-राक्षसे नेतरि किं हस्त्यश्वेन प्रयोजनम्? तदिदानीम्—

सह वाहनहस्तिभ्यां मुच्यतां सर्वबन्धनम्।
मया पूर्णप्रतिज्ञेन केवलं बध्यते शिखा ॥१८॥

(इति शिखां बध्नाति)

प्रतीहारी—जं अज्जो आणवेदि। (यदार्य आज्ञापयति।)

(इति निष्क्रान्ता।)

अन्वय—वाहनहस्तिभ्या सह सर्वबन्धनम् मुच्यताम्। पूर्णप्रतिज्ञेन मया केवलं शिखा बध्यते ॥१८॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—विजये, दुर्गपाल और विजयपाल से कह दो कि अमात्य राक्षस के साथ मेल हो जाने के कारण प्रसन्न होकर महाराज चन्द्र-गुप्त ने आज्ञा दी है कि हाथी और घोड़ो को छोडकर सभी बन्धन से मुक्त कर दिए जॉय। अथवा अमात्य राक्षस के नेता होते हुए हाथी और घोड़ो की क्या आवश्यकता है? तो इस समय हाथी और घोड़ों के साथ सब का बन्धन खोल दिया जाय। मेरी प्रतिज्ञा पूरी हो गई है। मै अब शिखा को बॉधता हूँ।

(शिखा को बॉधता है।)

प्रतीहारी—जैसी आर्य की आज्ञा।

(बाहर चली जाती है।)

Chanakya—Vijaya, let Durgapal and Vijayapal be told that King Chandragupta, being pleased at the union with Rakshas commands that all should be released except horses and elephants or what is the use of horses and elephants when Minister Rakshas is our guide So now—Let all fastenings be released along with those of horses and elephants By me only the tuft is being fastened for my vow is fulfilled (Fastens his tuft)

Warder—As Noble Sir commands (*Exit*)

संस्कृत व्याख्या—वाहनहस्तिभ्या सह अश्वद्विपाभ्या साक सर्वबन्धनम् सर्वेषा

जीवानाम् बन्धन सयमन मुच्यताम् दूरीक्रियताम्। पूर्णप्रतिज्ञेन पूर्णा सफला प्रतिज्ञा शपथ यस्य तेन मया कौटिल्येन केवल शिखा बध्यते सयतीक्रियते।

टिप्पणी

(१) **हस्त्यश्वम्**—हाथी और घोडे। हस्तिनश्च अश्वाश्च इति हस्त्यश्वम् (द्वन्द्व स०), 'द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम्' इति सूत्रेण एकवद्भाव। (२) **बध्यते शिखा**—प्रथम अक मे 'तत प्रविशति मुक्ता शिखा परामृशन् कुपितश्चाणक्य यह जो बीज का निक्षेप किया गया था, उसी का निर्वहण यहाँ किया गया है। इस श्लोक मे विषमालकार तथा अनुष्टुप् छन्द है।

चाणक्यः—अमात्यराक्षस! तदुच्यतां, किं ते भूयः प्रियमुपकरोमि?

राक्षसः—किमतः परमपि प्रियमस्ति? यदि न परितोषस्तदिदमस्तु—

(भरतवाक्यम्)

वाराहीमात्मयोनेस्तनुमतनुबलामास्थितस्यानुरूपां
यस्य प्राग्दन्तकोटिं प्रलयपरिगता शिश्रिये भूतधात्री।
म्लेच्छैरुद्वेज्यमाना भुजयुगमधुना संश्रिता राजमूर्तेः
स श्रीमद्बन्धुभृत्यश्चिरमवतु महीं पार्थिवश्चन्द्रगुप्तः॥१९॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे।)

॥इति मुद्राराक्षसे सप्तमोऽङ्कः॥

अन्वय—प्रलयपरिगता भूतधात्री प्राक् अतनुबलाम् अनुरूपा वाराही तनुम् आस्थितस्य यस्य आत्मयोने दन्तकोटि शिश्रिये, अधुना म्लेच्छै उद्वेज्यमाना (सती) राजमूर्ते (यस्य) भुजयुगम् सश्रिता स श्रीमद्बन्धुभृत्य पार्थिव चन्द्रगुप्तः मही चिरम् अवतु॥१९॥

हिन्दी अनुवाद—चाणक्य—अमात्य राक्षस, कहिए, अब आप का और प्रिय क्या करूँ?

राक्षस—क्या इससे भी बढ़कर कोई प्रिय कार्य है? यदि आपको संतोष नहीं है तो ऐसा हो—प्रलय के समय पृथ्वी ने पहले (कल्प के प्रारम्भ में) अधिक बल युक्त तथा रक्षा करने में समर्थ सुअर का शरीर धारण किए हुए जिस विष्णु के दाँतों के अग्रभाग का सहारा लिया था और अब म्लेच्छों से पीडित होने पर राजा

का शरीर धारण किए हुए जिस विष्णुगुप्त चन्द्रगुप्त का आश्रय लिया है वह श्रीसम्पन्न तथा बन्धु और अनुचारो वाला चन्द्रगुप्त बहुत दिन तक पृथिवी की रक्षा करे। (सभी पात्र चले जाते हैं।) ॥ मुद्राराक्षस का सातवाँ अङ्क समाप्त ॥

Chanakya—Minister Rakshas, tell me what more pleasure shall I bring unto you ?

Rakshas—Is there anything more pleasant than this ? If you are not satisfied, let this be—(Benediction)

Formerly the earth overwhelmed by annihilation, clung to the tusk of self-born (*Vishnu*) who had assumed the form of a brave and able boar and now being troubled by Mlechchas, she has clung to the two arms of Chandragupta in the form of king May that, Prince Chandragupta, protect it (*earth*) for long with king and servants in prosperity

संस्कृत व्याख्या—प्रलयपरिगता प्रलयेन परिगता आक्रान्ता भूतधात्री पृथिवी प्राक् कल्पादौ अतनुबलाम् अधिकबलयुक्ताम् अनुरूपाम् योग्या वाराही शूकरस्य तनु शरीरम् आस्थितस्य अधिष्ठितस्य यस्य आत्मयोने स्वयभूतस्य विष्णो दन्तकोटि शिश्रिये दशनाग्रस्य आश्रय स्वीचकार अधुना इदानी म्लेच्छै उद्वेज्यमाना पीड्यमाना सती राजमूर्ते. नृपशरीरे स्थितस्य यस्य भुजयुगम् बाहुयुगलम् सश्रिता समवलम्बिता स श्रीमद्बन्धुभृत्य श्रीमन्त सप्राप्तसर्वेषणा. महैश्वर्यवन्त बन्धव सगोत्रा भृत्या सेवकादय च यस्य एवभूत पार्थिव नृप चन्द्रगुप्त मही वसुधाम् चिर बहुकालम् अवतु रक्षतु।

टिप्पणी

(१) **भरतवाक्य**—नाटक के अन्त मे आशीर्वाद रूप मे गाया जाने वाला पद्य। सस्कृत नाटको का आरम्भ नान्दी से होता है और भरत-वाक्य से अन्त होता है। भरत वाक्य को निर्वहणसधि का वह अङ्ग माना जाता है जिसे प्रशस्ति कहते है। (२) **प्रलयपरिगता**—प्रलय से घिरी हुई अर्थात् प्रलय काल मे। (३) **भूतधात्री**—प्राणियो को जन्म देने वाली। भूताना धात्रीति भूतधात्री (४) **अतनुबलाम्**—अधिक बलशाली। तनु—थोडा। अतनु—ज्यादा। (५) **वाराहीम्**—सुअर का। वराहस्य इयम् वाराही ता वाराहीम्। वराह+अण्+ङीप्। भगवान् के अनेक अवतारो मे "वाराह रूप" भी एक अवतार है। (६) **उद्वेज्यमाना**—पीडित होकर। उद्+विज्+णिच्+शानच्। (७) **अवतु**—रक्षा करे। **'ग्रन्थान्ते च मगलमाचरेत्'** इस शिष्टाचार के अनुसार इस श्लोक को मगलाचरण भी कह सकते है। इसमे अतिशयोक्ति अलकार तथा स्रग्धरा छन्द है।

परिशिष्ट (१)

अकारादिक्रम से श्लोकों की सूची

परिशिष्ट (२)

मुद्राराक्षस मे सुभाषित या सूक्तियाँ

प्रथम अंक

(१) चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषि ।

(२) प्रज्ञाविक्रमभक्तय समुदिता येषा गुणा भूतये ।
ते भृत्या नृपते कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च ।।

(३) नहि सर्व सर्वं जानाति ।

(४) न युक्त प्राकृतमपि रिपुमवज्ञातुम् ।

(५) श्रोत्रियाक्षराणि प्रयत्नलिखितान्यपि नियतमस्फुटानि भवन्ति ।

(६) अनुचित उपचारो हृदयस्य परिभवादपि दु खमुत्पादयति ।

(७) अत्यादर शङ्कनीय ।

(८) कीदृशस्तृणानामग्निना सह विरोध ।

(९) शिरसि भयमतिदूरे तत्प्रतीकार ।

(१०) फलेन सवादितमस्य विकत्थितम् ।

द्वितीय अंक

(११) भगवति कमलालये भृशमगुणज्ञासि ।

(१२) प्रकृत्या वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला ।
पुरन्ध्रीणा प्रज्ञा पुरुषगुणविज्ञानविमुखी ।।

(१३) किं शेषस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मा न क्षिपत्येष यत्
किं वा नास्ति परिश्रमो दिनपतेरास्ते न यन्निश्चल ।
किन्त्वङ्गीकृतमुत्सृजन्कृपणवच्छ्लाघ्यो जनो लज्जते
निर्व्यूढ प्रतिपन्नवस्तुषु सतामेतद्धि गोत्रव्रतम् ।।

(१४) भव्य रक्षति भवितव्यता ।

(१५) सौहार्दात्कृतकृत्यतैव नियत लब्धान्तरा भेत्स्यति ।

तृतीय अंक

(१६) राज्य हि नाम राजधर्मानुवृत्तिपरस्य नृपतेर्महदप्रीतिस्थानम् ।

(१७) परायत्त प्रीते कथमिव रस वेत्ति पुरुष ।

(१८) दुराराध्या हि राजलक्ष्मीरात्मवद्भिरपि राजभि. ।
(१९) श्रीर्लब्धप्रसरेव वेशवनिता दु.खोपचर्या भृशम् ।
(२०) सेवा लाघवकारिणी कृतधिय स्थाने श्ववृत्ति विदु ।
(२१) निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कारविषय ।
(२२) न निष्प्रयोजनमधिकारवन्त. प्रभुभिराहूयन्ते ।
(२३) दैवमविद्वास प्रमाणयन्ति ।
(२४) विद्वासोऽप्यविकत्थना भवन्ति ।

चतुर्थ अंक

(२५) त्वद्भाग्याच्छान्तरितानि सम्प्रति विभो तिष्ठन्ति साध्यानि नः ।
(२६) प्रायोभृत्यास्त्यजन्ति प्रचलितविभव स्वामिन सेवमानाः ।

पञ्चम अंक

(२७) मुण्डितमुण्डो नक्षत्राणि पृच्छसि ।
(२८) तदाज्ञा कुर्वाणो हितमहितमित्येतदधुना,
विचारातिक्रान्त किमिति परतन्त्रो विमृशति ।
(२९) अधिकारपद नाम निर्दोषस्यापि पुरुषस्य महदाशङ्कास्थानम् ।
(३०) गति सोच्छ्रायाणा पतनमनुकूल कलयति ।
(३१) अयमपरो गण्डस्योपरि स्फोट ।

षष्ठ अंक

(३२) तत् किन्निमित्त कुकविकृतनाटकस्येवान्यन्मुखेऽन्यन्निर्वहणे ।
(३३) दैवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा सर्वा विपर्यस्यति ।
(३४) अलक्षितनिपाता पुरुषाणा समविषमदशापरिणतयो भवन्ति ।
(३५) अभूमि खल्वेषोऽविनयस्य ।
(३६) कृतार्थोऽय सोऽर्थस्तव सति वणिक्त्वेऽपि वणिज ।
(३७) सोऽयमभ्यर्ण शोकवज्रपातो हृदयस्य ।

सप्तम अंक

(३८) कार्याणा गतयो विधेरपि न यान्त्यालोचनागोचरम् ।
(३९) कि कर्तव्यमत परम् ।

परिशिष्ट (३)

छन्द-परिचय

(मुद्राराक्षस में प्रयुक्त छन्दो के लक्षण)

सस्कृत की रचना या तो गद्य मे होती है या पद्य मे। किन्तु नाटक मे गद्य और पद्य दोनो का व्यवहार किया जाता है। पद्य या श्लोक मे चार चरण होते है, जिन्हे या तो अक्षरो की सख्या से विनियमित किया जाता है अथवा मात्राओ की गिनती से।

पद्य या तो वृत्त होता है अथवा जाति। वृत्त एक ऐसा श्लोक होता है, जिसका छन्द प्रत्येक चरण मे अक्षरो की गिनती और स्थिति के अनुसार निर्धारित किया जाता है। जाति एक ऐसा श्लोक होता है, जिसका छन्द प्रत्येक चरण मे मात्राओ की गिनती के अनुसार निश्चित किया जाता है।

वृत्त तीन प्रकार के होते है—(१) **समवृत्त**—जिसमे श्लोक के चारो चरण समान हो। (२) **अर्धसमवृत्त**—जिसमे प्रथम तथा तृतीय और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण समान हो। (३) **विषमवृत्त**—जिसके चारो चरण असमान हो।

अक्षर (वर्ण) एक ऐसा शब्द है जो एक सॉस मे बोला जाय अर्थात् एक स्वर, इसके साथ चाहे एक व्यजन हो, चाहे एक से अधिक और चाहे केवल स्वर ही हो।

अक्षर (वर्ण) लघु भी होता है, गुरु भी जैसा कि उसका स्वर हो ह्रस्व या दीर्घ। अ इ उ ऋ और लृ ह्रस्व है, आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ और औ दीर्घ है। परन्तु छन्द शास्त्र मे ह्रस्व स्वर दीर्घ माना जाता है जब कि उसके आगे अनुस्वार या विसर्ग हो, अथवा कोई सयुक्त व्यजन हो, जैसे कि 'गन्ध' का 'अ' या 'ग'। इसी प्रकार पाद का अन्तिम अक्षर भी छन्द की अपेक्षा के अनुरूप लघु या गुरु माना जा सकता है, वह स्वय चाहे कुछ ही हो।

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः सयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा ॥

मात्राओ की सख्या से निर्धारित होने वाले वृत्तो मे ह्रस्व स्वर की एक मात्रा होती है, और दीर्घ स्वर की दो मात्राये।

अक्षरो की सख्या से विनियमित वृत्तो की मापतोल के लिए, छन्द शास्त्र के लेखको ने आठ गणो (अक्षरपाद) की एक युक्ति निकाली है। प्रत्येक गण मे तीन अक्षर होते है, वे तीनो लघु या गुरु होने के कारण एक दूसरे से भिन्न होते है। वे गण नीचे लिखे श्लोक मे बताये गये है—

मस्त्रिगुरुश्च लघुश्च नकारो,
भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः
सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः॥
आदिमध्यावसानेषु यरता यान्ति लाघवम्।
भजसा गौरव यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्॥

प्रतीकाक्षरो मे अभिव्यक्त (गुरु ऽ, लघु।) भिन्न-भिन्न गण निम्न प्रकार से दर्शाये जा सकते है—

ऽऽऽ मगण
।ऽऽ यगण
ऽ।ऽ रगण
।।ऽ सगण
ऽऽ। तगण
।ऽ। जगण
ऽ।। भगण
।।। नगण

इसी प्रकार 'ल' लघु तथा 'ग' गुरु को प्रकट करता है। यदि 'लौ' या 'गौ' हो तो दो लघु या दो गुरु अर्थ होगा।

'यति' का अर्थ है विराम या विश्राम। जहाँ पर एक पद के बीच मे उच्चारण करते समय थोडा रुकना होता है, उसे 'यति' कहते है।

मुद्राराक्षस मे १९ छन्दो का प्रयोग हुआ है। उनके लक्षण आदि अकारादि-क्रम से निरूपित किये जा रहे है—

(१) **अनुष्टुप्—श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।**
द्विचतुः पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥

अनुष्टुप् के प्रत्येक चरण मे ८–८ अक्षर होते है। इनमें पाँचवाँ अक्षर सदा लघु और छठा अक्षर सदा गुरु होता है। सप्तम अक्षर प्रथम तथा तृतीय चरण मे गुरु और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण मे लघु होता है। अन्य अक्षरों मे गुरु या लघु का कोई नियम नही है। वे कुछ भी हो सकते है।

(२) **आर्या—यस्याः पादे प्रथमे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।**
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या ।।

यह मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम पाद मे १२ मात्रायें होती है, द्वितीय मे १८, तृतीय मे १२ और चतुर्थ मे १५ मात्रायें होती हैं।

(३) **इन्द्रवज्रा—स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।**

इसमे प्रत्येक पाद मे ११–११ वर्ण होते है। २ तगण, १ जगण, २ गुरु अक्षर।

(४) **उद्गाथा या गीति—**

यह आर्या छन्द का ही एक भेद है। इसके पूर्वार्ध और उत्तरार्ध मे ३०–३० मात्राएँ होती है। पूरे श्लोक मे ६० मात्रायें होती है। पूर्वार्ध में १२+१८=३० तथा उत्तरार्ध मे १२+१८=३० मात्रायें होती हैं।

(५) **उपजाति—स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौगः।**
उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ ।।
अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ,
पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु
वदन्ति जातिष्विदमेव नाम ।।

उपजाति के प्रत्येक चरण मे ११–११ वर्ण होते है। यह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मिश्रण से बनता है। किसी चरण मे इन्द्रवज्रा छन्द होता है और किसी चरण मे उपेन्द्रवज्रा। इन्द्रवज्रा मे ११ वर्ण होते है—२ तगण, १ जगण, २ गुरु। उपेन्द्रवज्रा मे भी ११ वर्ण होते है—१ जगण, १ तगण, १ जगण, २ गुरु।

(६) **पथ्यावक्त्र—युजोश्चतुर्थतो जेन पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्।**

यह अनुष्टुप् का एक भेद है। अनुष्टुप् के द्वितीय और चतुर्थ पाद मे चतुर्थ अक्षर के बाद जगण आता है तो पथ्यावक्त्र छन्द होता है।

(७) पुष्पिताग्रा—अयुजि नयुगरेफतो यकारो।
युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ॥

पुष्पिताग्रा छन्द के प्रथम और तृतीय चरण मे १२ वर्ण होते है—२ नगण, १ रगण, १ यगण। द्वितीय और चतुर्थ चरण मे १३ वर्ण होते है—१ नगण, २ जगण, १ रगण, १ गुरु। यह अर्धसमवृत्त है।

(८) प्रहर्षिणी—म्याशाभिर्मनजरगाः प्रहर्षिणीयम्।

प्रहर्षिणी छन्द मे प्रत्येक पाद मे १३ वर्ण होते है। १ मगण, १ नगण, १ जगण, १ रगण, १ गुरु। इसमे ३–१० पर यति होती है।

(९) मन्दाक्रान्ता—मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्मम्।

मन्दाक्रान्ता मे प्रत्येक पाद मे १७ वर्ण होते है। १ मगण, १ भगण, १ नगण, २ तगण, २ गुरु। इसमे ४, ६, ७ पर यति होती है।

(१०) मालभारिणी—विषमे ससजा गुरू समे चेत्
सभरा येन तु मालभारिणीयम्।

मालभारिणी मे प्रथम और तृतीय चरण मे ११ वर्ण होते है—२ सगण, १ जगण, २ गुरु। द्वितीय और चतुर्थ चरण मे १२ वर्ण होते है—१ सगण, १ भगण, १ रगण, १ यगण। इसी को औपच्छन्दसिक भी कहते है। यह अर्ध-समवृत्त है।

(११) मालिनी—ननमयययुतेय मालिनी भोगिलोकैः।

मालिनी छन्द मे प्रत्येक पाद मे १५ वर्ण होते है—२ नगण, १ मगण, २ यगण। इसमे ८–७ पर यति होती है।

(१२) रुचिरा—जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः।

रुचिरा मे प्रत्येक पाद मे १३ वर्ण होते है—१ जगण, १ भगण, १ सगण, १ जगण, १ गुरु। इसमे ४–९ पर यति होती है।

(१३) वशस्थ—जतौ तु वशस्थमुदीरित जरौ।

वशस्थ मे प्रत्येक पाद मे १२ वर्ण होते है—१ जगण, १ तगण, १ जगण, १ रगण।

(१४) वसन्ततिलका—उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।

वसन्ततिलका के प्रत्येक चरण मे १४–१४ वर्ण होते है—१ तगण, १ भगण, २ जगण, २ गुरु।

(१५) शार्दूलविक्रीडित—सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।

शार्दूलविक्रीडित छन्द मे प्रत्येक पाद मे १९ वर्ण होते है—१ मगण, १ सगण, १ जगण, १ सगण २ तगण, १ गुरु। इसमे १२–७ पर यति होती है।

(१६) शिखरिणी—रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी।

इसके प्रत्येक चरण मे १७ वर्ण होते है—१ यगण, १ मगण, १ नगण, १ सगण, १ भगण, १ लघु, १ गुरु। इसमे ६–११ पर यति होती है।

(१७) सुवदना—ज्ञेया सप्ताश्वषड्भिर्मरभनययुता म्लौगः सुवदना।

इसके प्रत्येक चरण मे २० वर्ण होते है—२ मगण, १ रगण, १ भगण, १ नगण, १ यगण, १ मगण, २ लघु, १ गुरु। इसमे ७, ७, ६ पर यति होती है।

(१८) स्रग्धरा—स्रम्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।

इस छन्द मे प्रत्येक पाद मे २१ वर्ण होते है—१ मगण, १ रगण, १ भगण, १ नगण, ३ यगण। इसमे ७, ७, ७ पर यति होती है।

(१९) हरिणी—नसमरसला गः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता।

हरिणी छन्द के प्रत्येक चरण मे १७ वर्ण होते है—१ नगण, १ सगण, १ मगण, १ रगण, १ सगण, १ लघु, १ गुरु। इसमे ६, ४, ७ पर यति होती है।

परिशिष्ट (४)

अलकार-परिचय

(मुद्राराक्षस मे प्रयुक्त अलकारो के लक्षण)

'अलक्रियते अनेन इति अलकार अलम्+कृ+घञ् करणे' यह अलकार शब्द की व्युत्पत्ति है। इसके अनुसार शरीर को विभूषित करने वाले अर्थ या तत्त्व का नाम 'अलकार' है। जिस प्रकार कटक, कुडल, हार आदि आभूषण शरीर को विभूषित करते है, इसलिए अलकार कहलाते है उसी प्रकार काव्य मे अनुप्रास,

उपमा आदि काव्य के शरीरभूत शब्द और अर्थ को अलकृत करते है, इसलिए अलकार कहलाते है ।

मुद्राराक्षस मे निम्नलिखित अलकारो का प्रयोग हुआ है, जिनके लक्षण आदि ये है:—

(१) व्याजोक्ति—व्याजोक्तिश्छद्मनोद्भिन्नवस्तुरूपनिगूहनम् ।

जहाँ वस्तु का छिपा हुआ रूप भी किसी प्रकार प्रकट हो जाने पर यदि पुन किसी छल से छिपा दिया जाता है तो वहाँ व्याजोक्ति अलकार होता है।

(२) अतिशयोक्ति—सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते ।

जहाँ उपमान उपमेय को आत्मसात् कर लेता है, वहाँ अतिशयोक्ति अलकार होता है ।

(३) अर्थान्तरन्यास—भवेदर्थान्तरन्यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा ।

मुख्य सम्बद्ध अर्थ का प्रतिपादन करने के लिए जहाँ दूसरे अर्थ को उपस्थित किया जाय, वहाँ अर्थान्तरन्यास अलकार होता है।

(४) स्वभावोक्ति—स्वभावोक्तिः स्वभावस्य जात्यादिषु वर्णनम् ।

जहाँ किसी पदार्थ की जाति आदि मे स्थित स्वभाव का वर्णन किया जाता है, वहाँ स्वभावोक्ति अलकार होता है।

(५) श्लेष—श्लेषः स वाक्ये एकस्मिन् यत्रानेकार्थता भवेत् ।

जहाँ एक वाक्य मे अनेक अर्थ प्रकट होते हो, वहाँ श्लेष अलकार होता है।

(६) रूपक—तद्रूपकभेदो य उपमानोपमेययोः ।

जहाँ उपमान और उपमेय मे अतिशय सादृश्य के कारण अभेद का आरोप किया जाता है, वहाँ रूपक अलकार होता है।

(७) परिसंख्या—परिसंख्या निषिध्यैकमन्यस्मिन् वस्तुयन्त्रणम् ।

किसी वस्तु का एक स्थान मे निषेध कर (वस्तु की स्थिति का अभाव बतला कर) अन्य स्थान पर उस वस्तु की स्थिति का वर्णन जहाँ किया जाता है, वहाँ परिसख्या अलकार होता है।

(८). उपमा—उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः ।

दो पदार्थो मे जहाँ समानता दिखलायी जाती है, वहाँ उपमा होती है । परन्तु समानता ऐसी हो कि चमत्कार की सृष्टि कर सके।

(९) व्यतिरेक—उपमानाद्यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः ।

जहाँ उपमान की अपेक्षा उपमेय के विशेष गुण रूप उत्कर्ष का कथन किया जाता है, वहाँ व्यतिरेक अलकार होता है।

(१०) दीपक—प्रस्तुताप्रस्तुतानां च तुल्यत्वे दीपक मतम्

जहाँ प्रस्तुत और अप्रस्तुत पदार्थो की समता क्रिया या गुण के साथ वर्णित की जाय वहाँ दीपक अलकार होता है।

(११) अप्रस्तुतप्रशंसा—अप्रस्तुतप्रशसा स्यात् सा यत्र प्रस्तुतानुगा ।

अप्रस्तुत वर्णन जहाँ प्रस्तुत का अनुगमन करता हो, वहाँ अप्रस्तुत प्रशसा अलकार होता है।

(१२) दृष्टान्त—चेद्‌बिम्बप्रतिबिम्बत्व दृष्टान्तस्तदलङ्कृतिः ।

यदि बिम्बप्रतिबिम्ब भाव हो तो दृष्टान्त अलकार होता है।

(१३) काव्यलिंग—स्यात् काव्यलिङ्ग वागर्थो नूतनार्थसमर्पकः ।

नवीन अर्थ को बतलाने वाला जहाँ पद अथवा वाक्य हो, वहाँ काव्यलिग अलकार होता है।

(१४) अनुमान—अनुमान च कार्यादेः कारणाद्यवधारणम् ।

जहाँ कार्य से कारण का निश्चय किया जाता है वहाँ अनुमान अलकार होता है।

(१५) अपह्नुति—अतथ्यमारोपयितुं तथ्यापास्तिरपह्नुतिः ।

जहाँ असत्य वस्तु का आरोप करने के लिए सत्य का निषेध किया जाता है, वहाँ अपह्नुति अलकार होता है।

(१६) उत्प्रेक्षा—सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् ।

जहाँ उपमेय की उपमान के साथ एकरूपता की सभावना की जाती है, वहाँ उत्प्रेक्षा अलकार होता है।

(१७) तुल्ययोगिता—क्रियादिभिरनेकस्य तुल्यत्वे तुल्ययोगिता ।

जिस रचना मे अनेक प्रस्तुत पदार्थो अथवा अप्रस्तुत पदार्थो की समता क्रिया या गुण के साथ की जाय वहाँ तुल्ययोगिता अलकार होता है।

(१८) निदर्शना—वाक्यार्थयो. सदृशयोरैक्यारोपो निदर्शना ।

जहाँ दो समान वाक्यार्थों मे एकता का आरोप किया जाता है, वहाँ निदर्शना अलकार होता है ।

(१९) **परिकर—अलंकारः परिकरः साभिप्राये विशेषणे ।**

जिस रचना मे प्रस्तुत अर्थ से सम्बद्ध विशेष अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए किसी विशेषण का उपादान किया जाय, वहाँ परिकर अलकार होता है ।

(२०) **परिणाम—परिणामोऽनयोर्यस्मिन्नभेदः पर्यवस्यति ।**

उपमान और उपमेय का पर्यवसान जहाँ अभेद मे होता है और उसका क्रियापद के साथ उपयोग होता है, वहाँ परिणाम अलकार होता है ।

(२१) **यथासख्य—यथासख्यं द्विधार्थाश्चेत् क्रमादेकैकमन्विताः ।**

जहाँ दो प्रकार के कारक और क्रिया पदार्थों का क्रमश क्रिया और कारक के साथ अन्वय हो, वहाँ यथासख्य अलकार होता है ।

(२२) **विभावना—विभावना विनापि स्यात् कारणं कार्यजन्म चेत् ।**

जिस रचना मे प्रसिद्ध कारण के बिना भी कार्य की उत्पत्ति का वर्णन किया जाय, वहाँ विभावना अलकार होता है ।

(२३) **विषम—विषमं यद्यनौचित्यादनेकान्वयकल्पनम् ।**

जहाँ अनुचित रूप से अनेक भिन्न पदार्थों मे एक सम्बन्ध की कल्पना की जाय, वहाँ विषम अलकार होता है ।

(२४) **समाधि—समाधिः कार्यसौकर्यं कारणान्तरसन्निधेः ।**

जहाँ कार्य-सिद्धि के लिए एक कारण के रहने पर भी अन्य (आकस्मिक) कारण द्वारा कार्य की सिद्धि की शीघ्रता या सुगमता का वर्णन किया जाय, वहाँ समाधि अलकार होता है ।

(२५) **समासोक्ति—समासोक्तिः परिस्फूर्तिः प्रस्तुतेऽप्रस्तुतस्य चेत् ।**

जहाँ प्रस्तुत के वृत्तात-वर्णन से अप्रस्तुत वृत्तात परिस्फुरित हो, वहाँ समासोक्ति अलकार होता है ।

(२६) **समुच्चय—भूयसामेकसम्बन्धभाजां गुम्फः समुच्चयः ।**

जहाँ एक पदार्थ से सम्बद्ध अनेक पदार्थों का एक साथ गुम्फन किया जाय, वहाँ समुच्चय अलकार होता है ।

(२७) **संसृष्टि, संकर—शुद्धिरेकप्रधानत्वं तथा संसृष्टिसंकरौ ।**

जहाँ दो या अनेक अलकारो का सम्मिलन होता है, वहाँ ये दोनो अलकार होते है ।

(२८) **स्मृति, भ्रान्ति, सन्देह—**

स्यात् स्मृतिभ्रान्तिसन्देहैस्तदेवालकृतित्रयम् ।

जिस स्थान मे स्मृति, भ्रान्ति और सन्देह हो, वहाँ तत्तत् अलकार होते है।

(२९) **परिवृत्ति—परिवृत्तिर्विनिमयो न्यूनाभ्यधिकयोर्मिथः ।**

जहाँ सम, न्यून या अधिक पदार्थो मे परस्पर आदान-प्रदान वर्णित किया जाय, वहाँ परिवृत्ति अलकार होता है ।

परिशिष्ट (५)

प्राकृत-परिचय

सस्कृत-नाटको मे स्त्रियाँ, विदूषक तथा निम्न श्रेणी के पात्र प्राकृत-भाषा का प्रयोग करते है । प्राकृत शब्द प्रकृति शब्द से बना है । प्रकृते आगत प्राकृतम् प्रकृति+अण् । इस व्युत्पत्ति के अनुसार इसका अर्थ हुआ—प्रकृति अर्थात् मूल-भाषा सस्कृत से निकली हुई भाषा प्राकृत भाषा है ।

प्राकृत को तीन भागो मे विभक्त किया जा सकता है—(१) प्राचीन प्राकृत या पाली, (२) मध्यकालीन प्राकृत, (३) परकालीन प्राकृत या अपभ्रश । प्राचीन प्राकृत मे इनका सग्रह है—३ य शताब्दी ई० पू० से २ य शताब्दी ई० तक के शिलालेख, पाली, बौद्ध ग्रन्थ—महावश, जातक आदि, प्राचीन जैनसूत्रो की भाषा । मध्यकालीन प्राकृत मे इन प्राकृतो का सग्रह होता है—माहाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, परकालीन जैन ग्रन्थो की भाषा अर्धमागधी, जैन माहाराष्ट्री और जैन शौरसेनी, पैशाची, । परकालीन प्राकृत मे अपभ्रश है ।

इनमे माहाराष्ट्री प्राकृत भाषा सर्वोत्तम मानी गई है। इसका प्रयोग मुख्यत महाराष्ट्र मे होता था । प्राकृत पद्यो की भाषा माहाराष्ट्री ही थी। वर्तमान मथुरा के चारो ओर के स्थान को 'शूरसेन' प्रदेश कहते थे । वहाँ पर प्रयुक्त भाषा को शौरसेनी कहते थे । नाटको मे स्त्रियाँ, विदूषक आदि शौरसेनी का ही प्रयोग करते थे । यह प्राकृत सस्कृत के बहुत निकट है । इसी से वर्तमान हिन्दी निकली है । प्राचीन मगध (गया के आसपास) मे प्रयुक्त भाषा को मागधी कहते थे। नाटको मे निम्न श्रेणी के पात्र इसका प्रयोग करते थे ।

प्राकृत की मुख्य विशेषतायें

(१) प्राकृत मे शब्दो के विभिन्न रूप सक्षिप्त होकर तीन या चार प्रकार के ही रह गए अर्थात् तीन-चार प्रकार के ही शब्द रूप चलने लगे। धातुरूप भी प्राय एक या दो प्रकार से चलने लगे। (२) सभी शब्दो के रूप प्राय अकारान्त शब्द के तुल्य चलने लगे और सभी धातुओ के रूप प्राय भ्वादिगणी धातु के तुल्य चलने लगे। (३) चतुर्थी विभक्ति का अभाव हो गया। प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन प्राय एक हो गए। (४) लङ, लिट् और लुङ लकारो का अभाव हो गया। (५) द्विवचन का अभाव हो गया। (६) आत्मनेपद का भी प्राय अभाव हो गया। (७) सयुक्ताक्षरो मे प्राय परसवर्ण या पूर्वसवर्ण का नियम लगा। कुछ प्राचीन स्वरो और वर्णो का अभाव हो गया। जैसे—ऋ, ऐ, औ, य, श (मागधी मे य और श है, उसमे स नही है), ष और विसर्ग। (८) सस्कृत मे अप्राप्त ह्रस्व ए और ओ दो नये स्वर हो गए। (९) साधारणतया अन्तिम व्यजन का लोप हो जाता है।

ध्वनि-विवेचन

(१) सामान्य नियम यह है कि न, य, श, ष को छोड कर अन्य एकाकी प्रारम्भिक व्यजन उसी रूप मे रहते है। उनमे कोई परिवर्तन नही होता। न को ण होता है, य को ज और श ष को स।

(२) समस्त पद मे उत्तर पद का प्रथमाक्षर मध्यगत शब्द समझा जाता है, अत. प्राय उसका लोप हो जाता है। किन्तु धातु रूप का प्रथमाक्षर प्राय शेष रहता है। जैसे—आर्यपुत्र>अज्जउत्त, किन्तु आगतम्>आगद।

(३) कुछ प्राकृतो मे भू धातु के भ को ह हो जाता है। भवति>होइ।

(४) क और प को क्रमश ख और फ महाप्राण हो जाता है। क्रीड्>खेल, पनस<फणस।

(५) उच्चारणस्थान मे परिवर्तन हो जाता है। दन्त्य को तालव्य, त्>च्। तिष्ठति>चिट्ठदि। दन्त्य को मूर्धन्य, न् को ण्। नयन>णअण, नून>णूण।

(६) श ष स को स हो जाता है। (मागधी मे केवल श रहता है)।

(७) मध्य मे आने पर क ग च ज त द का प्राय लोप हो जाता है। प ब व का कभी-कभी लोप होता है। मध्यगत य का सदा लोप होता है। लोक>लोअ, हृदय>हिअअ, दिवस>दिअह, प्रिय>पिअ।

(८) मध्यगत क त प को क्रमश ग द ब हो जाते है। अतिथि>अदिधि, कृत<किद ।

(९) शौरसेनी और माहाराष्ट्री मे एक मुख्य अन्तर यह है कि सस्कृत का मध्यगत शौरसेनी मे द हो जाता है, पर माहा० मे उसका लोप हो जाता है। जैसे—जानाति>शौर० जाणादि, माहा० जाणाइ, शत>शौ० सद, माहा० सअ । २

(१०) कभी-कभी स्वरो के मध्यगत व्यजन का लोप न होकर द्वित्व हो जाता है। एक>एक्क, यौवन>जोव्वण, प्रेमन्>पेम्म ।

(११) स्वरो के मध्यगत ट ठ को क्रमश ड ढ हो जाते है। कुटुम्ब> कुडुम्ब ।

(१२) मध्यगत प को व हो जाता है। दीप>दीव ।

(१३) ब को व होता है। शबर>सवर ।

(१४) ड को प्राय ल होता है। क्रीडा>कीला ।

(१५) त द को ल होता है। दोहद>दोहल ।

(१६) ११ से १८ सख्याओ मे द को र। एकादश>एक्कारस ।

(१७) दृश्, दृश, दृक्ष के समासो मे द को र होता है। ईदृश>एरिस ।

(१८) म को व होता है। मन्मथ<मा० वम्मह । इसी से ग्राम>गाँव ।

स्वर-विवेचन

(१) प्राकृत मे ऋ लृ स्वर नही है।

(२) ऐ औ के स्थान पर क्रमश ए ओ होते है। कौमुदी>कोमुदी ।

(३) ह्रस्व स्वर को दीर्घ होता है, यदि बाद मे र्+व्यजन हो या ऊष्म य र व या ऊष्म हो। कर्तुम्>कादु, कर्तव्य>कादव्व, अश्व>आस ।

(४) कही पर दीर्घ न करके स्वर को सानुस्वार कर देते है। दर्शन> दसण ।

(५) संस्कृत के ऋ के स्थान पर ये आदेश होते हैं। (क) रि, ऋषि> रिसि। (ख) अ, कृत<कद। (ग) इ, दृष्टि>दिट्ठि। (घ) उ, पृच्छति> पुच्छदि ।

संयुक्ताक्षर-विवेचन

(१) शब्द के प्रारम्भ मे एक ही व्यजन रह सकता है।

(२) शब्द के मध्य मे दो व्यजनो से अधिक नही रह सकते। ये भी वर्ण के द्वित्व के रूप मे होगे। जैसे क्क, क्ख आदि, या अनुनासिक के बाद स्पर्श, जैसे ङ्क, ण्ड।

(३) सयुक्ताक्षरो को पूर्वसवर्ण या परसवर्ण होता है या मध्य मे कोई स्वरभक्ति का स्वर आता है। पूर्वसवर्ण और परसवर्ण का सामान्य नियम यह है कि समबल वाले वर्णो मे परवर्ण प्रबल होता है और असमबल वालो मे अधिक बलवाला। व्यजनो को निम्नलिखित क्रम से रखा जा सकता है। इसमे बाद-वाले कम बलवाले हैं। (१) स्पर्श (क से म तक, पचम वर्ण छोडकर), (२) वर्गो के पचम वर्ण, (३) ल स व य र।

(४) पूर्व नियमानुसार क्+त=त्त, ग्+ध=द्ध, द्+ग=ग्ग, प्+त=त्त। दो स्पर्श वर्णो मे परसवर्ण होगा। युक्त>जुत्त, दुग्ध>दुद्ध, उद्गम>उग्गम, सप्त<सत्त।

(५) स्पर्श के बाद अनुनासिक होगा तो परसवर्ण होगा। वल्कल> वक्कल।

(६) श ष स के बाद स्पर्श (क से म तक) होगा तो परसवर्ण होगा और स्पर्श महाप्राण हो जाएगा। जैसे—स्त>त्थ, श्च>च्छ, पश्चात्>पच्छा। इनके स्थान पर ये होते है—ष्क और ष्ख>क्ख, ष्ट और ष्ठ>ट्ठ, ष्प और ष्फ>प्फ, स्त और स्थ>त्थ, स्प और स्फ>प्फ।

(७) स्पर्श के बाद ऊष्म (श ष स) हो तो च्छ होता है। अक्षि>अच्छि।

(८) क्ष को साधारणतया क्ख होता है। दक्षिण>दक्खिण, अक्षि> अक्खि।

(९) त्श या त्स को स्स होता है या पूर्व स्वर को दीर्घ और स। पर्युत्सुक> पज्जुस्सुअ, उत्सव>ऊसव।

(१०) स्पर्श के बाद व अथवा य हो तो पूर्व सवर्ण। पक्व>पक्क। योग्य>जोग्ग।

(११) यदि दन्त्य और य हो तो दन्त्य को तालव्य और पूर्वसवर्ण। सत्य> सच्च, अद्य>अज्ज, सन्ध्या>सझा।

(१२) र् और स्पर्श हो तो र् को स्पर्श का सवर्ण अक्षर हो जाएगा। चक्र<चक्क, मार्ग>मग्ग, चित्र>चित्त।

(१३) अनुनासिक के बाद ऊष्म हो तो अनुनासिक को अनुस्वार। यदि ऊष्म के बाद अनुनासिक हो तो ऊष्म को ह् होता है और स्थान-परिवर्तन हो जाता है। श्न>ण्ह, श्म>म्ह, ष्ण>ण्ह, स्न>ण्ह, स्म>म्ह। स्नान>ण्हाण, कृष्ण>कण्ह।

(१४) अनुनासिक के बाद अन्त स्थ हो तो अन्त स्थ अनुनासिक का सवर्ण हो जाएगा। पुण्य>पुण्ण, अन्य>अण्ण।

(१५) क ख प फ से पूर्व विसर्ग ऊष्म के तुल्य माना जाता है। दु ख> दुक्ख।

सन्धि-विवेचन

(क) स्वरसन्धि

(१) प्राकृत मे प्रकृतिवद्भाव (सन्धि का अभाव) सामान्यतया होता है, किन्तु समस्त पदो मे पूर्व और उत्तर पद के स्वरो मे सधि होती है। राजर्षि> राएसि, जन्मान्तरे>जम्मन्तरे।

(२) यदि समस्त पद का उत्तर पद इ या उ से प्रारम्भ होता हो और उसके बाद सयुक्ताक्षर हो, या ई ऊ हो तो पूर्व पद के अन्तिम अ या आ का लोप हो जाता है। गजेन्द्र>गइन्द, वसन्तोत्सव>वसन्तूत्सव।

(ख) व्यञ्जनसन्धि

प्राकृत मे अन्तिम व्यजन का लोप हो जाता है, अत व्यजन-सन्धि भी बहुत कम शेष रही है। स्वर से पूर्व कुछ व्यजन पुनर्जीवित हो जाते है। यदस्ति> जदत्थि। दुर् और निर् का र् शेष रहता है। म् भी कुछ स्थलो पर शेष रहता एकैकम्>एक्कमेक्क।

शब्दरूप-विवेचन

प्राकृत-शब्द रूपो मे द्विवचन नही होता है। चतुर्थी का षष्ठी विभक्ति मे ही समावेश हो जाता है। प्राकृत के नियमो के कारण व्यजनान्त शब्द प्राय नही रहे है। अधिकाश शब्दो के रूप निम्नलिखित रूप से चलते है —

१ पुलिग या नपुसक लिग शब्द अकारान्त।

२ पु० या नपु० शब्द इ या उ अन्तवाले।

३ स्त्रीलिंग शब्द आ, इ, ई, उ, ऊ अन्तवाले।

(१) अकारान्त पुलिग पुत्त=पुत्र शब्द के रूप—

शौरसेनी			माहाराष्ट्री	
ए०	ब०		ए०	ब०
पुत्तो	पुत्ता	प्र०	पुत्तो	पुत्ता
पुत्त	पुत्ते	द्वि०	पुत्त	पुत्ता, पुत्ते
पुत्तेण	पुत्तेहि	तृ०	पुत्तेण	पुत्तेहि (हिं)
पुत्तादो	पुत्तेहितो	प०	पुत्ताओ	पुत्तेहि
पुत्तस्स	पुत्ताण	ष०	पुत्तस्स	पुत्ताण (ण)
पुत्ते	पुत्तेसु (सु)	स०	पुत्ते, पुत्तम्मि	पुत्तेसु (सु)

माहाराष्ट्री मे च० ए० मे पुत्ताअ रूप भी मिलता है।

(२) अकारान्त नपुसक फल शब्द। इसके रूप पुत्त के तुल्य चलते है, केवल प्र० द्वि० मे एं० मे फल और प्र० द्वि० के ब० मे फलाइ रूप बनेगा।

(३) इकारान्त पुलिग अग्गि=अग्नि शब्द के रूप—

	ए०	ब०
प्र०	अग्गी	अग्गीओ, अग्गीणो (माहा० अग्गी, अग्गीणो)
द्वि०	अग्गि	अग्गीणो
तृ०	अग्गिणा	अग्गीहि (माहा० अग्गीहि)
ष०	अग्गिणो (माहा० अग्गिस्स)	अग्गीण (मा हा० अग्गीण)
स०	अग्गिम्मि	अग्गीसु (सु)

चतुर्थी और पचमी का साधारणतया प्रयोग नही होता।

(४) इकारान्त नपुसक दहि=दधि शब्द। अग्गि के तुल्य रूप चलेगे, केवल प्र० द्वि० एक मे दहि या दहि और बहु० मे दहीइ।

(५) उकारान्त पु० और न० के रूप इकारान्त के तुल्य ही चलते है। उकारान्त पु० वाउ=वायु शब्द। ए० और ब० मे रूप —प्र० वाऊ, वाउणो (माहा० वाऊ), द्वि० वाउ, वाउणो, तृ वाउणा, वाऊहि (हि), ष० वाउणो (माहा० वाउस्स, वाऊण (ण), स० वाउम्मि, वाउसु (सु)। न० महु=मधु शब्द। प्र० द्वि० ए० महु (हु), ब० महूइ।

(६) स्त्रीलिग शब्दो के रूप। तृ० ष० और स० ए० मे एक ही रूप होता है। आ ई ऊ अन्तवाले शब्दो के रूप समान होते है।

	माला		देवी		वहू=वधू	
	ए०	ब०	ए०	ब०	ए०	ब०
प्र०	माला	मालाओ, माला	देवी	देवीओ	वहू	वहूओ
द्वि०	माल	मालाओ, माला	देवि	देवीओ	वहु	वहूओ
तृ०	मालाए	मालाहि (हिं)	देवीए	देवीहि (हिं)	वहूए	वहूहि (हिं)
प०	मालादो	मालाहितो (माहा० मालाओ)	देवीदो	देवीहितो (माहा० देवीओ)	वहूदो	वहूहितो (माहा० वहूओ)
ष०	मालाए	मालाण (णं)	देवीए	देवीण (णं)	वहूए	वहूण (णं)
स०	मालाए	मालासु (सुं)	देवीए	देवीसु (सुं)	वहूए	वहूसु (सुं)
स०	माले	—	देवि	—	वहु	—

(१) प्राकृत मे व्यजनान्त धातुएँ प्राय समाप्त हो गई है। द्विवचन का अभाव हो गया है। आत्मनेपद प्राय समाप्त हो गया है। सस्कृत के धातुरूपो मे से केवल ये शेष रह गये है—लट्, लोट्, विधिलिङ, लृट्, कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य, कृत् प्रत्यय—क्त, तुम्, क्त्वा, ल्यप्, शतृ, शानच्। १० गणो के स्थान पर दो गण ही शेष रहे है—(१) भ्वादिगण, (२) चुरादिगण। दोनो गणो के रूप समान ही चलते है।

(२) भ्वादिगण (लट्)

शौर० पुच्छदि, माहा० पुच्छइ	पुच्छन्ति	शौर० / माहा०	शौ० / माहा०
पुच्छसि	शौर० पुच्छध	कधेदि कहेइ	कधेन्ति कहेन्ति
पुच्छामि	महा० पुच्छह	कधेसि कहेसि	कधेध कहेह
	पुच्छामो	कधेमि कहेमि	कधेमो कहेमो

(३) भ्वादिगण (लोट्) चुरादिगण (लोट्)

शौर० पुच्छदु, माहा० पुच्छउ	पुच्छन्तु	कहेदु	कहेन्तु
पुच्छ, पुच्छसु	शौर० पुच्छध, माहा० पुच्छह	कहेहि, कहेसु	कहेह
पुच्छामु	पुच्छाम्ह	कहेमु	कहेम्ह

(४) विधिलिङ का प्रयोग अर्धमागधी और जैन माहाराष्ट्री मे अधिक प्रचलित है, अन्य प्राकृतो मे इसका प्रयोग बहुत कम है।

(५) लृट् मे भ्वादिगण और चुरादिगण के रूप समान ही चलेगे।

शौर० पुच्छिस्सदि	माहा० पुच्छिस्सइ	पुच्छिस्सन्ति
शौर० पुच्छिस्ससि	माहा० पुच्छिहिसि	शौर० पुच्छिस्सध, माहा० पुच्छिस्सह
पुच्छिस्स		पुच्छिस्सामो

(५) कर्मवाच्य मे संस्कृत य का ज्ज होता है या य रहता ही नही है।